संरक्षक—श्रीयुत सेठ हरगोविंददास रामजी शाह-मुंबई

भाग (१) २ ई (६०)

खंड २] [अंक १

जैन साहित्य संशोधक

(जैन इतिहास, साहित्य, तत्त्वज्ञान आदि विषयक सचित्र पत्र)

संपादक—

मुनि श्रीजिनविजयजी (एम् आर ए एस)

लेख सूचि

प्रकाशक—

जैन साहित्य संशोधक कार्यालय.

ठि भारत जैन विद्यालय—पूना शहर

ज्येष्ठ, विक्रम स १९७९] महावीर नि स २४४९ [जुलाई १९२२

ग्राहक वर्गने निवेदन

पहेला खंडनो छेल्लो अंक बहार पड्यां पछी आजे लगभग दोढ वर्ष करतां वधारे समय प
आ अंक ग्राहकोना हाथमां मुकतां अमारे ग्राहक वर्गने शुं निवेदन करवुं ते कांई सूझतुं नथी. आ ख
छपाववानी शरूआत संवत् १९७८ ना आसो त्रीजना दिवसे थई हती पण तेनी समाप्ति सं० १९
ना जेठमां थाय छे. आटला बधा विलंबना कारणो आपी देवाथी पण अमने के ग्राहकवर्गने सन्तोष थ
तेम लागतुं नथी तेथी अमे आ संबन्धमां 'मौनं सर्वार्थसाधकं' नी नीतिने अनुसरी भूतकालने भु
लवानी सलाह करीए छीए, अने भविष्य माटे आशा आपीए छीए के, हवे पछी जेम बनशे तेम वे
सर ज ग्राहकोना हाथमां अंक पहोंची जाय तेवी दरेक कोशीश करवामां आवशे.

—मुनि जिनविजय.

जैन साहित्य संशोधकना द्वितीय खण्डमां

केवा केवा विषयो आवशे ते जाणवुं होय

तो आ नीचेनी नोंध ध्यानपूर्वक वांचो

बीजा खण्डमां, जैन धर्मना प्राचीन गौरव उपर अपूर्व प्रकाश पाडनारा अनेक प्राचीन शिलालेखो अने ताम्रपत्रो प्रकट थशे.

बीजा खण्डमां, जैन संघना संरक्षक जुदा जुदा गच्छोनी पट्टावलियो प्रसिद्ध थशे.

बीजा खण्डमां, जैन साहित्यना आभूषणभूत ग्रन्थोना परिचयो अने तेनी प्रशस्तिओ प्रसिद्ध थशे.

बीजा खण्डमां, जैन अने बौद्ध साहित्यना तुलना करनारा प्रौढ अने गंभीर लेखो आवशे

बीजा खण्डमां, भगवान् महावीर देवना निर्वाण समय संबंधी जुदा जुदा विद्वानोए लखेला लेखोना भाषान्तरो तथा स्वतंत्र लेख आवशे

बीजा खण्डमां, प्रो० वेबरनो लखेलो जैन आगमोनी विस्तृत समालोचना आपवामां आवशे.

बीजा खण्डमां, जैन साहित्यमां उल्लिखित प्राचीन स्थळोना वर्णनो आवशे.

बीजा खण्डमां, बौद्ध साहित्यमां जैनधर्मविषये शा शा विचारो लखाएला छे तेना विचित्र अने अज्ञातपूर्व उल्लेखो आवशे.

बीजा खण्डमां, जैन संघमां आजपर्यंत थई गएला प्रसिद्ध पुरुषोना परिचयो आपवामां आवशे

आ सिवाय बीजा पण अनेक नाना मोटा अपूर्व अपूर्व लेखो प्रकट करवामां आवशे अने साथे तेवां ज सुन्दर, मनहर, दर्शनीय अने संग्रहणीय अनेक चित्रो पण यथायोग्य आपवामां आवशे

वळी, आ खण्डमां केटलाक ऐतिहासिक प्राचीन प्रबन्धो, अने पट्टावलिओ पण मूळ रूपे आपवामां आवनार छे उदाहरण तरीके मेरुतुंगाचार्य विरचित विचारश्रेणि, उपकेशगच्छ, तपागच्छ, खरतर-गच्छ, बृहत्पोशालिक गच्छ आदिनी पट्टावली, जुना रासा, चैत्य परिपाटि, तीर्थ माळा. अने विज्ञप्ति इत्यादि. इत्यादि
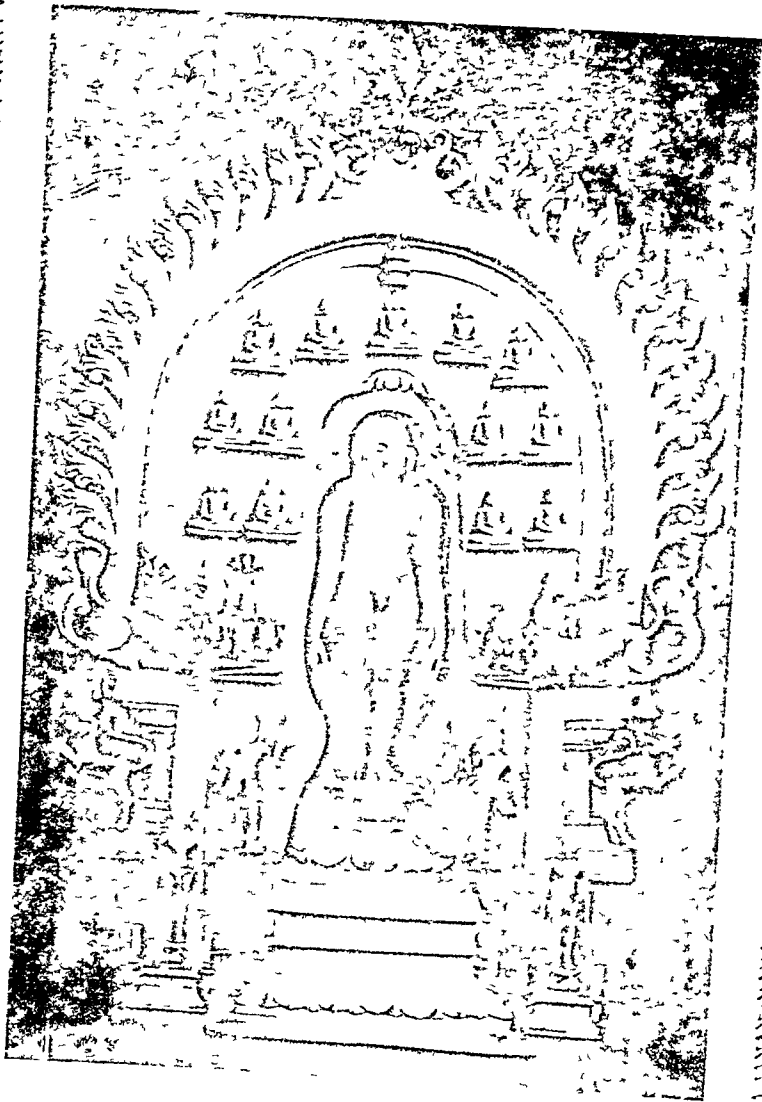
येनूर (दक्षिण कर्णाटक) स्थान स्थित मनुष्याकार दिगम्बर जैन प्रतिमा

॥ ॐ अर्हम् ॥

॥ नमोऽस्तु श्रमणाय भगवते महावीराय ॥

जैन साहित्य संशोधक

'पुरिसा! सच्चमेव समभिजाणाहि। सच्चस्साणाए उवट्ठिए मेहावी मारं तरइ।'

'जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ, जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ।'

'दिट्ठं, सुयं, मयं, विण्णायं जं एत्थ परिकहिज्जइ।'

—निर्ग्रन्थप्रवचन-आचारांगसूत्र।

खंड ३] हिंदी लेख विभाग [अंक १

योगदर्शन

(लेखक—पं. सुखलालजी संघवी)

प्रत्येक मनुष्य व्यक्ति अपरिमित शक्तियोंके तेजका पुञ्ज है, जैसा कि सूर्य। अत एव राष्ट्र तो मानो अनेक सूर्योंका मण्डल है। फिर भी जब कोई व्यक्ति या राष्ट्र असफलता या नैराश्यके भँवरमें पड़ता है तब यह प्रश्न होना सहज है कि इसका कारण क्या है? बहुत विचार कर देखनेसे मालूम पड़ता है कि असफलता व निराशाका कारण योगका (स्थिरताका) अभाव है, क्यों कि योग न होनेसे बुद्धि संदेहशील बनी रहती है और इससे प्रयत्नकी गति अनिश्चित हो जानेके कारण शक्तियाँ इधर उधर टकरा कर आदमीको बरबाद कर देती है। इस कारण सब शक्तियोंको एक केन्द्रगामी बनानेके लिये अर्थात् लक्ष्य तक पहुँचानेके लिये अनिवार्यरूपसे सभीको योगकी जरूरत है। यही कारण है कि प्रस्तुत व्याख्यानमालामें योगका विषय रक्खा गया है।

* गुजरात पुरातत्त्व मंदिरकी ओरसे होनेवाली आर्यविद्याव्याख्यानमालामें यह व्याख्यान पढ़ा गया था।

इस विषयकी शास्त्रीय मीमांसा करनेका उद्देश यह है कि हमें अपने पूर्वजोंकी तथा अपनी सभ्यताकी प्रकृति ठीक मालूम हो, और तद्द्वारा आर्यसंस्कृतिके एक अंशका थोडा, पर निश्चित रहस्य विदित हो।

योगदर्शन यह सामासिक शब्द है। इसमें योग और दर्शन ये दो शब्द मौलिक है।

योग शब्दका अर्थ—योग शब्द युज् धातु और घञ् प्रत्ययसे सिद्ध हुवा है। युज् धातु दो हैं। एकका अर्थ है जोडना[1] और दूसरेका अर्थ है समाधि[2]—मन स्थिरता। सामान्य रीतिसे योगका अर्थ संबन्ध करना तथा मानसिक स्थिरता करना इतना ही है, परंतु प्रसंग व प्रकरणके अनुसार उसके अनेक अर्थ हो जानेसे वह बहुरूपी बन जाता है। इसी बहुरूपिताके कारण लोकमान्यको अपने गीतारहस्यमें गीताका तात्पर्य दिखानेके लिये योगशब्दार्थनिर्णयकी विस्तृत भूमिका रचनी पडी है[3]। परंतु योगदर्शनमें योग शब्दका अर्थ क्या है यह बतलानेके लिये उतनी गहराईमें उतरनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्यों कि योगदर्शनविषयक सभी ग्रन्थोंमें जहां कहीं योग शब्द आया है वहां उसका एक ही अर्थ है, और उस अर्थका स्पष्टीकरण उस उस ग्रन्थमें ग्रन्थकारने स्वयं ही कर दिया है। भगवान् पतंजलिने अपने योगसूत्रमें[4] चित्तवृत्ति निरोधको ही योग कहा है, और उस ग्रन्थमें सर्वत्र योग शब्दका वही एक मात्र अर्थ विवक्षित है। श्रीमान् हरिभद्र सूरिने अपने योग विषयक सभी ग्रन्थोंमें[5] मोक्ष प्राप्त कराने वाले धर्मव्यापारको ही योग कहा है, और उनके उक्त सभी ग्रन्थोंमें योग शब्दका वही एक मात्र अर्थ विवक्षित है। चित्तवृत्तिनिरोध और मोक्षप्रापक धर्मव्यापार इन दो वाक्योंके अर्थमें स्थूल दृष्टिसे देखने पर बडी भिन्नता मालूम होती हैं, पर सूक्ष्म दृष्टिसे देखने पर उनके अर्थकी अभिन्नता स्पष्ट मालूम हो जाती है। क्यों कि 'चित्तवृत्तिनिरोध' इस शब्दसे वही क्रिया या व्यापार विवक्षित है जो मोक्षके लिये अनुकूल हो और जिससे चित्तकी संसाराभिमुख वृत्तियां रुक जाती हो। 'मोक्षप्रापक धर्मव्यापार' इस शब्दसे भी वही क्रिया विवक्षित है। अत एव प्रस्तुत विषयमें योग शब्दका अर्थ स्वाभाविक समस्त आत्मशक्तियोंका पूर्ण विकास करानेवाली क्रिया अर्थात् आत्मोन्मुख चेष्टा इतना ही समजना चाहिये[6]। योगविषयक वैदिक, जैन और बौद्ध ग्रन्थोंमें योग, ध्यान, समाधि ये शब्द बहुधा समानार्थक देखे जाते हैं।

दर्शन शब्दका अर्थ—नेत्रजन्यज्ञान,[7] निर्विकल्प (निराकार) बोध,[8] श्रद्धा,[9] मत[10] आदि अनेक अर्थ दर्शन शब्दके देखे जाते हैं। पर प्रस्तुत विषयमें दर्शन शब्दका अर्थ मत यही एक विवक्षित है।

योगके आविष्कारका श्रेय—जितने देश और जितनी जातियोंके आध्यात्मिक महान् पुरुषोंकी जीवनकथा तथा उनका साहित्य उपलब्ध है उसको देखनेवाला कोई भी यह नहीं कह सकता है कि आध्यात्मिक विकास अमुक देश और अमुक जातिकी ही बपौती है, क्यों कि सभी देश और सभी जातियोंमें न्यूनाधिक रूपसे आध्यात्मिक विकासवाले महात्माओंके पाये जानेके प्रमाण मिलते हैं[11]। योगका संबन्ध आध्यात्मिक विकाससे है। अत एव यह स्पष्ट है कि

---

१ युजूंपी योगे,—७ गण हेमचंद्र धातुपाठ. २ युजिच् समाधौ,—४ गण हेमचंद्र धातुपाठ.

३ देखो पृष्ठ ५५ से ६०। ४ पा १ सू. २—योगश्चित्तवृत्तिनिरोध। ५ योगबिन्दु श्लोक ३१—
अध्यात्म भावनाऽऽध्यान समता वृत्तिसंक्षय। मोक्षेण योजनाद्योग एष श्रेष्ठो यथोत्तरम्॥ योगविंशिका गाथा ॥१॥

६ लोर्ड एवेबरीने जो शिक्षाकी पूर्ण व्याख्या की है वह इसी प्रकारकी है—"Education is the harmonious developement of all our faculties" ७ दृश् प्रेक्षणे—१ गण हेमचन्द्र धातुपाठ. ८ तत्त्वार्थ अध्याय २ सूत्र ९—श्लोक वार्तिक. ९ तत्त्वार्थ अध्याय १ सूत्र २. १० षड्दर्शन समुच्चय—श्लोक २—"दर्शनानि षडेवात्र" इत्यादि. ११ उदाहरणार्थ जरथोस्त, इसु, महम्मद आदि.

योगका अस्तित्व सभी देशों और सभी जातियोंमें रहा है। तथापि कोई भी विचारशील मनुष्य इस बातसे इनकार नहीं कर सकता है कि योगके आविष्कारका या योगको पराकाष्ठा तक पहुचानेका श्रेय भारतवर्ष और आर्यजातिको ही है। इसके सबूतमें मुख्यतया तीन बातें पेश की जा सकती हैं। १ योगी, ज्ञानी, तपस्वी आदि आध्यात्मिक महापुरुषोंकी बहुलता २ साहित्यके आदर्शकी एकरूपता और ३ लोकरुचि।

१ योगी, ज्ञानी, तपस्वी आदि आध्यात्मिक महापुरुषोंकी सख्या भारतवर्षमें पहिलेसे आज तक इतनी बडी रही है कि उसके सामने अन्य सब देश और जातियोंके आध्यात्मिक व्यक्तियोंकी कुल सख्या इतनी अल्प जान पडती है जितनी कि गगाके सामने एक छोटीसी नदी।

२ साहित्यके आदर्शकी एकरूपता—तत्त्वज्ञान, आचार, इतिहास, काव्य, नाटक आदि साहित्यका कोई भी भाग लीजिये उसका अन्तिम आदर्श बहुधा मोक्ष ही होगा। प्राकृतिक दृश्य और कर्मकाण्डके वर्णनने वेदका बहुत बडा भाग रोका है सही, पर इसमें सदेह नहीं कि वह वर्णन वेदका शरीर मात्र है उसकी आत्मा कुछ और ही है—और वह है परमात्मचिंतन या आध्यात्मिक भावोंका आविष्करण। उपनिषदोंका प्रासाद तो ब्रह्मचिन्तनकी बुनियाद पर ही खडा है। प्रमाणविषयक, प्रमेयविषयक कोई भी तत्त्वज्ञान सबधी सूत्रग्रन्थ हो, उसमें भी तत्त्वज्ञानके साध्यरूपसे मोक्षका ही वर्णन मिलेगा[1]। आचारविषयक सूत्र स्मृति आदि सभी ग्रन्थोंमें आचार पालनका मुख्य उद्देश मोक्ष ही माना गया[2] है। रामायण, महाभारत आदिके मुख्य पात्रोंकी महिमा सिर्फ इस लिये नहीं कि वे एक बडे राज्यके स्वामी थे पर वह इस लिये है कि अतमें वे सन्यास या तपस्याके द्वारा मोक्षके अनुष्ठानमें ही लग जाते हैं। रामचन्द्रजी प्रथम ही अवस्थामें वशिष्ठसे योग और मोक्षकी शिक्षा पा लेते[3] हैं। युधिष्ठिर भी युद्ध रस लेकर बाण शय्यापर सोये हुए भीष्मपितामहसे शान्तिका ही पाठ पढते[4] हैं। गीता तो रणागणमें भी मोक्षके एकतम साधन योगका ही उपदेश देती है। कालिदास जैसे शृगारप्रिय कहलानेवाले कवि भी अपने मुख्य पात्रोंकी महत्ता मोक्षकी ओर झुकनेमें ही देखते हैं[5]। जैन आगम और बौद्ध पिटक तो निवृत्तिप्रधान होनेसे मुख्यतया मोक्षके सिवाय अन्य विषयोंका वर्णन करनेमें बहुत ही सकुचाते हैं। शब्दशास्त्रमें

—1 वैशेषिकदर्शन, अ० १ सू० ४ धर्मविशेषप्रसूताद् द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायानां पदार्थानां साधर्म्यवैधर्म्याभ्यां तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसम्। —न्यायदर्शन अ० १ सू० १ प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टान्तसिद्धान्तावयवतर्कनिर्णयवादजल्पवितण्डाहेत्वाभासच्छलजातिनिग्रहस्थानानां तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसम् ॥ सांख्यदर्शन, अ० १ अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थः ॥— वेदान्तदर्शन अ० ४, पा० ४, सू० २२ अनावृत्तिः शब्दादनावृत्तिः शब्दात् ॥ — जैनदर्शन तत्त्वार्थ अ० १ सू० १ सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ 2 याज्ञवल्क्यस्मृति अ० ३ यतिधर्मनिरूपणम् मनुस्मृति अ० १२ श्लोक ८३ 3 देखो योगवासिष्ठ 4 देखो महाभारत—शान्तिपर्व 5 कुमारसंभव—सर्ग ३ तथा ५ तपस्या वर्णनम् शाकुन्तल नाटक अंक ४ कण्वोक्ति

भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी दौष्यन्तिमप्रतिरथं तनयं निवेश्य।

भर्त्रा तदर्पितकुटुम्बभरेण साधं, शान्ते करिष्यसि पदं पुनराश्रमेऽस्मिन् ॥

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानाम् यौवने विषयैषिणाम्। वार्द्धके मुनिवृत्तीनाम् योगेनान्ते तनुत्यजाम् ॥८॥ रघु० १

अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधि सूनवे, नृपतिककुदं दत्त्वा यूने सितातपवारणम्।

मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया सह शिश्रिये, गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिदं हि कुलव्रतम् ॥ ७० ॥ रघुवं० ३

भी शब्दशुद्धिको तत्त्वज्ञानका द्वार मान कर उसका अन्तिम ध्येय परम श्रेय ही माना है¹ । विशेष क्या ? कामशास्त्र तकका भी आखिरी उद्देश मोक्ष है² । इस प्रकार भारतवर्षीय साहित्यका कोई भी स्रोत देखिये उसकी गति समुद्र जैसे अपरिमेय एक चतुर्थ पुरुषार्थकी ओर ही होगी ।

३ लोकरुचि—आध्यात्मिक विषयकी चर्चावाला और खासकर योगविषयक कोई भी ग्रन्थ किसीने भी लिखा कि लोगोंने उसे अपनाया । कंगाल और दीन हीन अवस्थामें भी भारतवर्षीय लोगोंकी उक्त अभिरुचि यह सूचित करती है कि योगका सम्बन्ध उनके देश व उनकी जातिमें पहलेसे ही चला आता है। इसी कारणसे भारतवर्षकी सभ्यता अरण्यमें उत्पन्न हुई कही जाती है 1। इस पैतृक स्वभावके कारण जब कभी भारतीय लोग तीर्थयात्रा या सफरके लिये पहाडों, जंगलों और अन्य तीर्थस्थानोंमें जाते हैं तब वे वहां सब उत्तमोंसे पहले ही योगियोंको, उनके मठोंको और उनके चिन्हतकको भी ढूंढा करते हैं । योगकी श्रद्धाका उद्रेक यहां तक देखा जाता है कि किसी नंगे बावेको गांजेकी चिलम फूंकते या जटा बढाते देखा कि उसके मुंहके धुएंमें या उसकी जटा व भस्मलेपमें योगका गन्ध आने लगता है । भारतवर्षके पहाड, जंगल और तीर्थस्थान भी बिल्कुल योगिशून्य मिलना दुःसंभव है । ऐसी स्थिति अन्य देश और अन्य जातिमें दुर्लभ है । इससे यह अनुमान करना सहज है कि योगको आविष्कृत करनेका तथा पराकाष्ठा तक पहुंचानेका श्रेय बहुधा भारतवर्षको और आर्यजातिको ही है । इस बातकी पुष्टि मेक्षमूलर जैसे विदेशीय और भिन्न संस्कारी विद्वानके कथनसे भी अच्छी तरह होती है।2

आर्यसंस्कृतिकी जड और आर्यजातिका लक्षण—ऊपरके कथनसे आर्यसंस्कृतिका मूल आधार क्या है, यह स्पष्ट मालूम हो जाता है । शाश्वत जीवनकी उपादेयता ही आर्यसंस्कृतिकी भित्ति है । इसी पर आर्यसंस्कृतिके चित्रोंका चित्रण किया गया है । वर्णविभाग जैसा सामाजिक संगठन और आश्रमव्यवस्था जैसा वैयक्तिक जीवनविभाग उस चित्रणका अनुपम उदाहरण है । विद्या, रक्षण, विनिमय और सेवा ये चार जो वर्णविभागके उद्देश्य हैं उनके प्रवाह गार्हस्थ्य जीवनरूप मैदानमें अलग अलग बह कर भी वानप्रस्थके मुहानेमें मिलकर अंतमें संन्यासाश्रमके अपरिमेय समुद्रमें एकरूप हो जाते हैं । सारांश यह है कि सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक आदि सभी संस्कृतियोंका निर्माण, स्थूलजीवनकी परिणामविरसता और आध्यात्मिक-जीवनकी परिणामसुन्दरता ऊपर ही किया गया है । अत एव जो विदेशीय विद्वान् आर्यजातिका लक्षण स्थूलशरीर, उसके डीलडौल, व्यापार-व्यवसाय, भाषा, आदिमें देखते हैं वे एकदेशीय मात्र हैं । खेतीबारी, लडाकूपना, पशुओंको चराना आदि जो जो अर्थ आर्यशब्दसे निकाले गये हैं वे आर्यजातिके असाधारण लक्षण नहीं हैं । आर्यजातिका असाधारण लक्षण तो परलोकमात्रकी कल्पना भी नहीं है, क्यों कि उसकी दृष्टिमें वह लोक भी त्याज्य है । उसका सच्चा और अन्तरंग लक्षण स्थूल जगत्के उसपार वर्तमान परमात्मतत्त्वकी एकाग्रबुद्धिसे उपासना करना यही है । इस सर्वव्यापक उद्देश्यके कारण आर्यजाति अपनेको अन्य सब जातियोंसे श्रेष्ठ समझती आई है ।

---

१ द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परं च यत् । शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥
व्याकरणात्पदसिद्धिः पदसिद्धेरर्थनिर्णयो भवति । अर्थात्तत्त्वज्ञानं तत्त्वज्ञानात्परं श्रेयः ॥
श्रीहैमशब्दानुशासनम् अ. १ पा. १ सू. २ लघुन्यास

२ " स्थविरे धर्मं मोक्षं च " कामसूत्र अ. २ पृ. ११ Bombay Edition

1 देखो कविवर टागोर कृत " साधना " पृष्ठ ४
" Thus in India it was in the forests that our civilization had its birth etc "

2 This concentration of thought (एकाग्रता) or one-pointedness as the Hindus called it, is something to us almost unknown
इत्यादि देखो पृ. २३—वोल्युम १—सेक्रेड बुक्स ओफ दि ईस्ट मेक्षमूलर—प्रस्तावना।

ज्ञान और योगका सम्बन्ध तथा योगका दरजा—व्यवहार हो या परमार्थ, किसी भी विषयका ज्ञान तभी परिपक्व समझा जा सकता है जब कि ज्ञानानुसार आचरण किया जाय। असलमें यह आचरण ही योग है। अत एव ज्ञान योगका कारण है। परन्तु योगके पूर्ववर्ति जो ज्ञान होता है वह अस्पष्ट होता है[1]। और योगके बाद होनेवाला अनुभवात्मक ज्ञान स्पष्ट तथा परिपक्व होता है। इससे यह समझना चाहिये कि स्पष्ट तथा परिपक्व ज्ञानकी एक मात्र कुंजी योग ही है। आधिभौतिक या आध्यात्मिक कोई भी योग हो, पर वह जिस देश या जिस जातिमें जितने प्रमाणमें पुष्ट पाया जाता है उस देश या उस जातिका विकास उतना ही अधिक प्रमाणमें होता है। सच्चा ज्ञानी वही है जो योगी है[2]। जिसमें योग या एकाग्रता नहीं होती वह योगवाशिष्ठकी परिभाषामें ज्ञानबन्धु है[3]। योगके सिवाय किसी भी मनुष्यकी उत्क्रान्ति हो ही नहीं सकती, क्यों कि मानसिक चञ्चलताके कारण उसकी सब शक्तियां एक ओर न रह कर भिन्न भिन्न विषयोंमें टकराती हैं और क्षीण हो कर यों ही नष्ट हो जाती हैं। इसलिये क्या किसान, क्या कारीगर, क्या लेखक, क्या शोधक, क्या त्यागी सभीको अपनी नाना शक्तियोंको केन्द्रस्थ करनेके लिये योग ही परम साधन है।

व्यावहारिक और पारमार्थिक योग—योगका कलेवर एकाग्रता है, उसकी आत्मा अहंत्व ममत्वका त्याग है। जिसमें सिर्फ एकाग्रताका ही सम्बन्ध हो वह व्यावहारिक योग, और जिसमें एकाग्रताके साथ साथ अहंत्व ममत्वके त्यागका भी सम्बन्ध हो वह पारमार्थिक योग है। योगके उक्त आत्मा किसी भी प्रवृत्तिमें—चाहे वह दुनियाकी दृष्टिमें बाह्य ही क्यों न समझी जाती हो—वर्तमान हो तो पारमार्थिक योग ही समझना चाहिये। इसके विपरीत स्थूलदृष्टिवाले जिन प्रवृत्तियोंको आध्यात्मिक समझते हों, उसमें भी यदि योगका उक्त आत्मा न हो तो उसे व्यावहारिक योग ही कहना चाहिये। यही बात गीताके साम्यगर्भित कर्मयोगमें कही गई है[4]।

योगकी दो धाराएँ—व्यवहारमें किसी भी वस्तुको परिपूर्ण स्वरूपमें तैयार करनेके लिये पहले दो बातोंकी आवश्यकता होती है। जिनमें एक ज्ञान और दूसरी क्रिया है। चितेरेको चित्र तैयार करनेसे पहले उसके स्वरूपका, उसके साधनोंका और साधनोंके उपयोगका ज्ञान होता है और फिर वह ज्ञानके अनुसार क्रिया भी करता है। तभी वह चित्र तैयार कर पाता है। वैसे ही आध्यात्मिक क्षेत्रमें भी मोक्षके जिज्ञासुके लिये बन्धमोक्ष, आत्मा और बन्धमोक्षके कारणोंका, तथा उनके परिहार उपादानका ज्ञान होना जरूरी है। एवं ज्ञानानुसार प्रवृत्ति भी आवश्यक है। इसी से संक्षेपमें यह कहा गया है कि "ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्षः"। योग क्रियामार्गका नाम है। इस मार्गमें प्रवृत्त होनेसे पहले अधिकारी, आत्मा आदि आध्यात्मिक विषयोंका आरम्भिक ज्ञान शास्त्रसे, सत्सङ्गसे, या स्वयं प्रतिभा द्वारा कर लेता है। यह तत्त्वविषयक प्राथमिक ज्ञान प्रवर्तक ज्ञान कहलाता है। प्रवर्तक ज्ञान प्राथमिक दशाका ज्ञान होनेसे सबको एकाकार और एकसा नहीं हो सकता। इसीसे योगमार्गमें तथा उसके परिणामस्वरूप मोक्षस्वरूपमें तात्त्विक भिन्नता न होने पर भी योगमा

---

1 इसी अभिप्रायसे गीता योगीको ज्ञानीसे अधिक कहती है। गीता अ. ६ श्लोक ४ —

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

2 गीता अ. ५ श्लोक ५—

यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते। एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति॥

3 योगवाशिष्ठ निर्वाण प्रकरण, उत्तरार्ध, सर्ग २१—

व्याचष्टे यः पठति च शास्त्रं भोगाय शिल्पिवत्। यतते न त्वनुष्ठाने ज्ञानबन्धुः स उच्यते॥

आत्मज्ञानमनासाद्य ज्ञानान्तरलवेन ये। सन्तुष्टाः कष्टचेष्टं ते स्मृता ज्ञानबन्धवः॥ इत्यादि।

4 अ. २ श्लोक ४८—

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय। सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥

र्गके प्रवर्तक प्रारंभिक मानमें कुछ भिन्नता अनिवार्य है । इस प्रारंभ भानका मुख्य विषय आत्माका अस्तित्व है । आत्माका स्वतन्त्र अस्तित्व माननेवालोंमें भी मुख्य दो मत हैं—पहला एकात्मवादी और दूसरा नानात्मवादी । नानात्मवादमें भी आत्माकी व्यापकता, अव्यापकता, परिणामिता अपरिणामिता माननेवाले अनेक पक्ष हैं । पर इन वादोंको एकतरफ रख कर मुख्य जो आत्माकी एकता और अनेकताके दो वाद हैं उनके आधार पर योगमार्गकी दो धारायें हो गई हैं । अत एव योगविषयक साहित्य भी दो मार्गोंमें विभक्त हो जाता है । कुछ उपनिषदें 1 योगवाशिष्ठ, हठयोगप्रदीपिका आदि ग्रन्थ एकात्मवादको लक्ष्यमें रख कर रचे गये हैं । महाभारतगत योग प्रकरण योगसूत्र तथा जैन और बौद्ध योगग्रन्थ नानात्मवादके आधार पर रचे गये हैं ।

यो ग औ र उ स के सा हि त्य के वि का स का दि ग्द र्श न—आर्यसाहित्यका भण्डार मुख्यतया तीन भागोंमें विभक्त है—वैदिक, जैन और बौद्ध । वैदिक साहित्यका प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद है । उसमें आधिभौतिक और आधिदैविक वर्णन ही मुख्य है । तथापि उसमें आध्यात्मिक भाव अर्थात् परमात्मचिन्तनका अभाव नहीं है2 । परमात्मचिंतनका भाग उसमें थोडा है सही, पर वह इतना अधिक स्पष्ट, सुन्दर और भावपूर्ण है कि उसको ध्यानपूर्वक देखनेसे यह साफ मालूम पड जाता है कि तत्कालीन लोगोंकी दृष्टी केवल बाह्य न3 थी

1 ब्रह्मविद्या, क्षुरिका, चूलिका, नादविन्दु, ब्रह्मविन्दु, अमृतविन्दु ध्यानविन्दु, तेजोविन्दु शिखा, योगतत्त्व हंस, इत्यादि ।

2 देखो ' भागवताचा उपसंहार पृष्ठ २५२.

3 उदाहरणार्थ कुछ सूक्त दिये जाते हैं । ऋग्वेद म. १ सू. १६४–४६ -

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् । एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥

भाषांतर —लोग उसे इन्द्र, मित्र, वरुण या अग्नि कहते हैं । वह सुंदर पांखवाला दिव्य पक्षी है । एक ही सत्‌का विद्वान् लोग अनेक प्रकारसे वर्णन करते हैं । कोई उसे अग्नि, यम या वायु भी कहते हैं ।

ऋग्वेद् मण्ड ६ सु ९–

वि मे कर्णा पतयतो वि चक्षुर्वीदं ज्योतिर्हृदय आहितं यत् ।

वि मे मनश्चरति दूर आधीः किंस्विद् वक्ष्यामि किमु नु मनिष्ये ॥ ६ ॥

विश्वे देवा अनमस्यन् भियानास्त्वामग्ने ! तमसि तस्थिवांसम् । वैश्वानरोऽवतूतये नोऽमर्त्योऽवतूतये नः ॥ ७ ॥

भाषांतर —मेरे कान विविध प्रकारकी प्रवृत्ति करते हैं । मेरे नेत्र, मेरे हृदयमें स्थित ज्योति और मेरा दूरवर्ती मन [भी] विविध प्रवृत्ति कर रहा है । मैं क्या कहु और क्या विचार करु ? । ६ । अधकार-स्थित हे अग्नि ! तुजको अधकारसे भय पानेवाले देव नमस्कार करते हैं । वैश्वानर हमारा रक्षण करे । अमर्त्य हमारा रक्षण करे । ७ ।

ऋग्वेद.—पुरुषसूक्त, मण्डल १० सू० ९०

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ १ ॥

पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ २ ॥

एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायांश्च पूरुषः । पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ३ ॥

भाषांतर—(जो) हजार सिरवाला, हजार आंखवाला हजार पॉववाला पुरुष (है) वह भूमिको चारों ओरसे घेर कर (फिर भी) दस अंगुल बढ कर रहा है । १ । पुरुष ही यह सब कुछ है—जो भूत और जो भावि । (वह) अमृतत्वका ईश अन्नसे बढता है । २ । इतनी इसकी महिमा –इससे भी वह पुरुष अधिकतर है । सारे भूत उसके एक पाद मात्र है—इसके अमर तीन पाद स्वर्गमें हैं । ३

इसके सिवा उत्तम ज्ञान1, श्रद्धा2, उदारता3, ब्रह्मचर्य4 आदि आध्यात्मिक उच्च मानसिक भावोंके चित्र भी उन्हीं ऋचाओंमें मिलते हैं। इससे यह अनुमान करना सहज है कि उस जमानेके लोगोंका झुकाव अध्यात्मिक अवश्य था। यद्यपि ऋग्वेदमें योगशब्द अनेक स्थानोंमें आया है5, पर सर्वत्र उसका अर्थ प्रायः जोड़ना इतना ही है, ध्यान या समाधि अर्थ नहीं है। इतना ही नहीं बल्कि पिछले योग विषयक साहित्यमें ध्यान, वैराग्य, प्राणायाम, प्रत्याहार आदि जो योगप्रक्रिया प्रसिद्ध शब्द पाये जाते हैं वे ऋग्वेदमें बिल्कुल नहीं हैं। ऐसा होनेका कारण जो कुछ हो, पर यह निश्चित है कि तत्कालीन लोगोंमें ध्यानकी भी रुचि थी। ऋग्वेदका ब्रह्मस्फुरण जैसे जैसे विकसित होता गया और उपनिषदके जमानेमें उसने जैसे ही विस्तृत रूप धारण किया वैसे वैसे ध्यानमार्ग भी अधिक पुष्ट और साङ्गोपाङ्ग होता चला। यही कारण है कि प्राचीन उपनिषदोंमें भी समाधि अर्थमें योग ध्यान आदि शब्द पाये जाते हैं6। श्वेताश्वतर उपनिषदमें तो स्पष्ट रूपसे योग तथा योगोचित स्थान, प्रत्याहार, धारणा आदि योगाङ्गोंका वर्णन है7। मध्यकालीन और अर्वाचीन अनेक उपनिषदें तो सिर्फ योगविषयक ही

ऋग्वेद— पु० सूक्त म १० सू १२१

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ १ ॥
य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य च्छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ २ ॥

भावार्थ —पहले हिरण्यगर्भ था। वही एक भूत मात्रका पति बना था। उसने पृथ्वी और इस आकाशको धारण किया। किस देवको हम हविसे पूजें? ॥ १ ॥ जो आत्मा और बलको देनेवाला है। जिसका विश्व है। जिसके शासनकी देव उपासना करते हैं। अमृत और मृत्यु जिसकी छाया है। किस देवको हम हविसे पूजें? ॥ २ ॥

ऋग्वेद म १०—१२—६ तथा ७—

को अद्धा वेद क इह प्रवोचत्कुत आ जाता कुत इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आ बभूव॥
इयं विसृष्टिर्यत आ बभूव यदि वा दधे यदि वा न। यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्त्सो अङ्ग वेद यदि वा न वेद॥

भावार्थ —कौन जानता है—कौन कह सकता है कि यह विविध सृष्टि कहाँसे उत्पन्न हुई? देव इसके विविध सर्जनके बाद (हुवे) हैं। कौन जान सकता है कि यह कहाँसे आई? यह विविध सृष्टि कहाँसे आई और स्थिर है या नहीं है? यह बात परम व्योममें जो इसका अध्यक्ष है वही जाने—कदाचित् वह भी न जानता हो।

1 म १ सू ३१। 2 म १ सू १०१। 3 म ११ सू ११७। 4 म १० सू १०

5 मण्डल १ सूक्त ३४ मं० । म १ सू १८ म ७। म १ सू १८ म ३। म १ सू ५ म ३। म २ सू ८ म १। मं ९ सू ८ म ३।

6 (क) तैत्तिरीय २—४। कठ २—६—११। श्वेताश्वतर २—११, ६—३। (ख) छान्दोग्य ७—६—१, ७—६—२, ७—७—१ ७—२६—१। श्वेताश्वतर १—१४। कौषीतकि ३—२, ३—३, ३—४, ३—६।

7 श्वेताश्वतरोपनिषद् अध्याय २—

त्रिरुन्नतं स्थाप्य समं शरीरं हृदीन्द्रियाणि मनसा संनिवेश्य।
ब्रह्मोडुपेन प्रतरेत विद्वान्स्रोतांसि सर्वाणि भयावहानि ॥ ८ ॥
प्राणान्प्रपीड्येह संयुक्तचेष्टः क्षीणे प्राणे नासिकयोच्छ्वसीत।
दुष्टाश्वयुक्तमिव वाहमेनं विद्वान्मनो धारयेताप्रमत्तः ॥ ९ ॥
समे शुचौ शर्करावह्निवालुकाविवर्जिते शब्दजलाश्रयादिभिः।
मनोनुकूले न तु चक्षुपीडने गुहानिवाताश्रयणे प्रयोजयेत् ॥ १० ॥ इत्यादि

हैं. जिनमें योगशास्त्रकी तरह सांगोपांग योगप्रक्रियाका वर्णन है8। अथवा यह कहना चाहिये कि ऋग्वेदमें जो परमात्मचिन्तन अंकुरायमाण था वही उपनिषदोंमें पल्लवित-पुष्पित हो कर नाना शाखा-प्रशाखाओंके साथ फल अवस्थाको प्राप्त हुवा। इससे उपनिषदकालमें योगमार्गका पुष्टरूपमें पाया जाना स्वाभाविक ही है।

उपनिषदोंमें जगत् जीव और परमात्मसम्बन्धी जो तात्त्विक विचार है, उसको भिन्न भिन्न ऋषियोंने अपनी दृष्टिसे सूत्रोंमें ग्रथित किया और इस तरह उस विचारको दर्शनका रूप मिला। सभी दर्शनकारोंका आखिरी उद्देश मोक्ष* ही रहा है इससे उन्होंने अपनी अपनी दृष्टिसे तत्त्वविचार करनेके बाद भी संसारसे छुट कर मोक्ष पानेके साधनाका निर्देश किया है। तत्त्वविचारणामें मतभेद हो सकता है, पर आचरण यानी चारित्र एक ऐसी वस्तु है जिसमें सभी विचारशील एकमत हो जाते हैं। विना चारित्रका तत्त्वज्ञान कोरी बातें हैं। चारित्र यह योगका किंवा योगांगोंका संक्षिप्त नाम है। अत एव सभी दर्शनकारोंने अपने अपने सूत्रग्रंथोंमें साधन रूपसे योगकी उपयोगिता अवश्य बतलाई है। यहां तक कि—न्यायदर्शन जिसमें प्रमाण पद्धतिका ही विचार मुख्य है,उसमें भी महर्षि गौतमने योगको स्थान दिया है1। महर्षि कणादने तो अपने वैशेषिक दर्शनमें यम, नियम, शौच आदि योगांगोंका भी महत्त्व गाया है2। सांख्यसूत्रमें योगप्रक्रियाके वर्णनवाले कई सूत्र हैं3। ब्रह्मसूत्रमें महर्षि बादरायणने तो तीसरे अध्यायका नाम ही साधन अध्याय रक्खा है, और उसमें आसन ध्यान आदि योगांगोंका वर्णन किया है4। योगदर्शन तो मुख्यतया योगविचारका ही ग्रन्थ ठहरा. अत एव उसमें सांगोपांग योगप्रक्रियाकी मीमांसाका पाया जाना सहज ही है। योगके स्वरूपके सम्बन्धमें मतभेद न होनेके कारण और उसके प्रतिपादनका उत्तरदायित्व खासकर योगदर्शनके उपर होनेके कारण अन्य दर्शनकारोंने अपने अपने सूत्र ग्रन्थोंमें थोडासा योगविचार करके विशेष जानकारीके लिये जिज्ञासुओंको योगदर्शन देखनेकी सूचना दे दी है5। पूर्वमीमांसामें महर्षि जैमिनिने योगका निर्देश तक नहीं किया है सो ठीक ही है, क्यों कि उसमें सकाम कर्मकाण्ड अर्थात् धूम—मार्गकी ही मीमांसा है। कर्मकाण्डकी पहुंच

---

8 ब्रह्मविद्योपनिषद् क्षुरिकोपनिषद् चूलिकोपनिषद्, नादबिन्दु ब्रह्मबिन्दु अमृतबिन्दु ध्यानबिन्दु, तेजोबिन्दु योगशिखा, योगतत्त्व, हंस इत्यादि। देखो ड्युसेनकृत—Philosphy of the Upanishads

*—प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टान्तसिद्धान्तावयवतर्कनिर्णयवादजल्पवितण्डाहेत्वाभासच्छलजातिनिग्रहस्थानानां तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसाधिगमः। गौ० सू० १ १. १॥—धर्मविशेषप्रसूताद् द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायानां पदार्थानां साधर्म्यवैधर्म्याभ्यां तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसम्॥ वै० सू० १ १, ४॥—अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थः। सां० द० १ १॥—पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति। यो० सू० ४, ३३॥—अनावृत्तिः शब्दादनावृत्तिः शब्दात्। ब्र सू ४ ४.२२।—सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः। तत्त्वार्थ सू० १—१ जैन० द०।—बौद्ध दर्शनका तीसरा निरोध नामक आर्यसत्य ही मोक्ष है।

1 समाधिविशेषाभ्यासात् ४—२—३८। अरण्यगुहापुलिनादिषु योगाभ्यासोपदेशः ४—२—४२। तदर्थं यमनियमाभ्यासात्मसंस्कारो योगाच्चाध्यात्मविध्युपायैः ४—२—४६॥

2 अभिषेचनोपवासब्रह्मचर्यगुरुकुलवासवानप्रस्थयज्ञदानप्रोक्षणदिङ्नक्षत्रमन्त्रकालनियमाश्चादृष्टाय। ६—२—२। अयतस्य शुचिभोजनादभ्युदयो न विद्यते, नियमाभावाद् विद्यते वाऽर्थान्तरत्वाद् यमस्य। ६—२—८।

3 रागोपहतिर्ध्यानम् ३—३०। वृत्तिनिरोधात् तत्सिद्धिः ३—३१। धारणासनस्वकर्मणा तत्सिद्धिः ३—३२। निरोधश्छर्दिविधारणाभ्याम् ३—३३। स्थिरसुखमासनम् ३—३४।

4 आसीनः संभवात् ४—१—७। ध्यानाच्च ४—१—८। अचलत्वं चापेक्ष्य ४—१—९। स्मरन्ति च ४—१—१०। यत्रैकाग्रता तत्राविशेषात् ४—१—११।

5 योगशास्त्राच्चाध्यात्मविधिः प्रतिपत्तव्यः। न्यायदर्शन ४—२—४६ भाष्य।

वर्णक ही है, मोक्ष उसका साध्य नहीं। और योगका उपयोग तो मोक्षके लिये ही होता है।

जो योग उपनिषदोंमें सूचित और सूत्रोंमें सूत्रित है, उसीकी महिमा गीतामें आकर रूपसे गाई गई है। उसमें योगकी तान कभी कर्मके साथ, कभी भक्तिके साथ और कभी ज्ञानके साथ सुनाई देती है1। उसके छठे और तेरहवें अध्यायमें तो योगके मौलिक सब सिद्धान्त और योगकी सारी प्रक्रिया आ जाती है2। कृष्णके द्वारा अर्जुनको गीताके रूपमें योगशिक्षा दिला कर ही महाभारत सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसके व्यापक स्वरूपको देखते हुए कहना पड़ता है कि ऐसा होना सम्भव भी न था। अत एव शान्तिपर्व और अनुशासनपर्वमें योगविषयक अनेक सर्ग वर्तमान हैं, जिनमें योगकी अर्थात् प्रक्रियाका वर्णन पुनरुक्तिकी परवा न करके किया गया है3। उसमें बाण शय्यापर लेटे हुए भीष्मसे बार बार पूछनेमें न तो युधिष्ठिरको ही कंटाला आता है और न उस सुपात्र धार्मिक राजाको शिक्षा देनेमें भीष्मको ही थकावट मालूम होती है।

योगवासिष्ठका निर्मित महल तो योगकी ही भूमिकापर खड़ा किया गया है। उसके छह प्रकरण मानों उसके सुदीर्घ कमरे हैं, जिनमें योगसे सम्बन्ध रखनेवाले सभी विषय रोचकतापूर्वक वर्णन किये गये हैं। योगकी जो जो बातें योगदर्शनमें संक्षेपमें कही गई हैं उन्हींका विविधरूपमें विस्तार करके ग्रन्थकारने योगवासिष्ठका कलेवर बहुत बढ़ा लिया है जिससे यही कहना पड़ता है कि योगवासिष्ठ योगका ग्रन्थराज है।

पुराणमें सिर्फ पुराणशिरोमणि भागवतको ही देखिये, उसमें योगका सुमधुर पद्योंमें पूरा वर्णन है5।

योगविषयक विविध साहित्यसे लोगोंकी रुचि इतनी परिमार्जित हो गई थी कि तान्त्रिक सम्प्रदायवालोंने भी तन्त्रग्रन्थोंमें योगको जगह दी, यहां तक कि योग तन्त्रोंका एक खासा अंग बन गया। अनेक तान्त्रिक ग्रन्थोंमें योगकी चर्चा है, पर उन सबमें महानिर्वाणतन्त्र षट्चक्रनिरूपण आदि मुख्य हैं6।

---

1 गीताके अठारह अध्यायोंमें पहले छह अध्याय कर्मयोग प्रधान, बीचके छह अध्याय भक्तियोग प्रधान और अंतिम छह अध्याय ज्ञानयोग प्रधान हैं।

2 योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः। एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः ॥ १० ॥
शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः। नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ ११ ॥
तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः। उपविश्यासने युञ्ज्याद् योगमात्मविशुद्धये ॥ १२ ॥
समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः। सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥ १३ ॥
प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः। मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः ॥१४॥ अ० ६

3 शान्तिपर्व १९५, २१७, २४६, २५४, इत्यादि। अनुशासनपर्व ३६, ३४९ इत्यादि।
4 वैराग्य, मुमुक्षुव्यवहार, उत्पत्ति, स्थिति, उपशम और निर्वाण। 5 स्कन्ध ३ अध्याय २८ स्कन्ध ११—अ० १३, १९, २० आदि। 6 देखो महानिर्वाणतन्त्र ५ अध्याय। देखो षट्चक्रनिरूपण—

एवं नीरामनोराद्यैर्योगे षामविशारदः। शिवागमानानाद्येन प्रतिपार्शे परे विदुः ॥ पृष्ठ ८

Tantrik Texts में छपा हुआ।

समाधिभावना नित्यं जीवात्मपरमात्मनो। समाधिमाहुर्मुनयः प्रोक्तमष्टाङ्गलक्षणम् ॥ पृ० १,,
यदत्र नात्र निर्भासः स्तिमितोदधिवत् स्मृतम्। स्वरूपशून्यं यद् ध्यानं तत्समाधिर्विधीयते ॥ पृ० ,,
त्रिकोणं तस्यान्तः स्फुरति च सततं विद्युदाकाररूपं।
तदन्तः शून्यं तत् सकलसुरगणैः सेवितं चातिगुप्तम् ॥ पृ० ६ ,,
"आहारनिर्हारविहारयोगाः सुसंवृता धर्मविदा तु कार्याः। पृ० ६१ ,,
ध्यैश्चिन्तायाम् स्मृता धातुश्चिन्ता तत्त्वेन निश्चला। एतद् ध्यानमिह प्रोक्तं सगुणं निर्गुणं द्विधा।
सगुणं वर्णभेदेन निर्गुणं केवलं तथा ॥ पृ० १३४ ,,

जब नदीमें बाढ आती है तब वह चारों ओरसे बहने लगती है। योगका यही हाल हुवा, और वह आसन, मुद्रा, प्राणायाम आदि बाह्य अगोंमे प्रवाहित होने लगा। बाह्य अगोंका भेद प्रभेद पूर्वक इतना अधिक वर्णन किया गया और उसपर इतना अधिक जोर दिया गया कि जिससे यह योगकी एक शाखा ही अलग बन गई, जो हठयोगके नामसे प्रसिद्ध है।

हठयोगके अनेक ग्रंथोंमे हठयोगप्रदीपिका, शिवसंहिता, घेरण्डसंहिता, गोरक्षपद्धति गोरक्षशतक आदि ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं, जिनमें आसन, बन्ध, मुद्रा, षट्कर्म, कुभक, रेचक, पूरक आदि बाह्य योगांगोंका पेट भर भरके वर्णन किया है. और घेरण्डने तो चौरासी आसनको चौरासी लाख तक पहुचा दिया है।

उक्त हठयोगप्रधान ग्रन्थोंमें हठयोगप्रदीपिका ही मुख्य है क्यों कि उसीका विषय अन्य ग्रन्थोंमें विस्तार रूपसे वर्णन किया गया है। योगविषयक साहित्यके जिज्ञासुओंको योगतारावली, बिन्दुयोग, योगबीज और योगकल्पद्रुमका नाम भी भूलना न चाहिये। विक्रमकी सत्रहवी शताब्दीमें मैथिल पण्डित भवदेवद्वारा रचित योगनिबन्ध नामक हस्तलिखित ग्रन्थ भी देखनेमे आया हैं. जिसमें विष्णुपुराण आदि अनेक ग्रन्थोंके हवाले देकर योगसम्बन्धी प्रत्येक विषय पर विस्तृत चर्चा की गई हैं।

संस्कृत भाषामें योगका वर्णन होनेसे सर्व साधारणकी जिज्ञासाको शान्त न देखकर लोकभाषाके योगियोंने भी अपनी जबानमें योगका आलाप करना शुरु कर दिया।

महाराष्ट्रीय भाषामे गीताकी ज्ञानदेवकृत ज्ञानेश्वरी टीका प्रसिद्ध है, जिसके छट्ठे अध्यायका भाग बड़ा ही हृदयहारी है। निःसन्देह ज्ञानेश्वरी द्वारा ज्ञानदेवने अपने अनुभव और वाणीको अवन्ध्य कर दिया है। मुहंगेचा अविये रचित नाथसम्प्रदायानुसारी सिद्धान्तसंहिता भी योगके जिज्ञासुओंके लिये देखनेकी वस्तु है।

कबीरका बीजक ग्रन्थ योगसम्बन्धी भाषासाहित्यका एक सुन्दर मणका है।

अन्य योगी सन्तोंने भी भाषामें अपने अपने योगानुभवकी प्रसादी लोगोंको चखाई है, जिससे जनताका बहुत बडा भाग योगके नाम मात्रसे मुग्ध बन जाता है।

अत एव हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगला आदि प्रसिद्ध प्रत्येक प्रान्तीय भाषामें पातञ्जल योगशास्त्रका अनुवाद तथा विवेचन आदि अनेक छोटे बडे ग्रन्थ बन गये हैं। अंग्रेजी आदि विदेशीय भाषामें भी योगशास्त्रका अनुवाद आदि बहुत कुछ बन गया है[1] जिसमें वूडका भाष्यटीका सहित मूल पातञ्जल योगशास्त्रका अनुवाद विशेष उल्लेख योग्य है।

जैन सम्प्रदाय निवृत्ति-प्रधान है। उसके प्रवर्तक भगवान् महावीरने बारह सालसे आधिक समय तक मौन धारण करके सिर्फ आत्मचिन्तनद्वारा योगाभ्यासमें ही मुख्यतया जीवन बिताया। उनके हजारो शिष्य[2] तो ऐसे थे जिन्होंने घरबार छोड कर योगाभ्यासद्वारा साधुजीवन बिताना ही पसंद किया था।

जैन सम्प्रदायके मौलिक ग्रन्थ आगम कहलाते हैं। उनमे साधुचर्याका जो वर्णन है, उसको देखनेसे यह स्पष्ट जान पडता है कि पाच यम, तप, स्वाध्याय आदि नियम, इन्द्रिय-जय-रूप प्रत्याहार इत्यादि जो योगके खास अङ्ग हैं, उन्हींको साधुजीवनका एक मात्र प्राण माना[3] है।

---

1 प्रो० राजेन्द्रलाल मित्र, स्वामी विवेकानद, श्रीयुत रामप्रसाद आदि कृत।

2 "चउद्दसहिं समणसाहस्सीहिं छत्तीसाहिं अज्जिआसाहस्सीहिं" उववाइसूत्र।

3 देखो आचाराङ्ग, सूत्रकृताङ्ग, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, मूलाचार आदि।

जैनशास्त्रमें योगपर यहाँ तक भार दिया गया है कि पहले तो वह मुमुक्षुओंको आत्मचिंतनके सिवाय दूसरे कार्योंमें प्रवृत्ति करनेकी सम्मति ही नहीं देता, और अनिवार्य रूपसे प्रवृत्ति करनी आवश्यक हो तो वह निवृत्तिमय प्रवृत्ति करनेको कहता है। इसी निवृत्तिमय प्रवृत्तिका नाम उसमें अष्टप्रवचनमाता[1] है। साधुजीवनकी दैनिक और रात्रिक चर्यामें तीसरे प्रहरके सिवाय अन्य तीनों प्रहरोंमें मुख्यतया स्वाध्याय और ध्यान करनेको ही कहा गया है[2]।

यह बात भूलनी न चाहिये कि जैन आगमोंमें योग अर्थमें प्रधानतया ध्यानशब्द प्रयुक्त है। ध्यानके लक्षण, भेद प्रभेद, आलम्बन आदिका विस्तृत वर्णन अनेक जैन आगमोंमें है[3]। आगमके बाद नियुक्तिका नंबर है[4]। उसमें भी आगमगत ध्यानका ही स्पष्टीकरण है। वाचक उमास्वाति कृत तत्त्वार्थसूत्रमें[5] भी ध्यानका वर्णन है, पर उसमें आगम और नियुक्तिकी अपेक्षा कोई अधिक बात नहीं है। जिनभद्रगणी क्षमाश्रमणका ध्यानशतक[6] आगमादि उक्त ग्रन्थोंमें वर्णित ध्यानका स्पष्टीकरण मात्र है। यहाँ तकके योगविषयक जैन विचारोंमें आगमोक्त वर्णनकी शैली ही प्रधान रही है। पर इस शैलीको श्रीमान् हरिभद्रसूरिने एकदम बदलकर तत्कालीन परिस्थिति व लोकरुचिके अनुसार नवीन परिभाषा देकर और वर्णनशैली अपूर्वसी बनाकर जैन योग-साहित्यमें नया युग उपस्थित किया। इसके सबूतमें उनके बनाये हुए योगबिन्दु, योगदृष्टिसमुच्चय, योगविंशिका, योगशतक[7], षोडशक ये ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। इन ग्रन्थोंमें उन्होंने सिर्फ जैन-मार्गानुसार योगका वर्णन करके ही संतोष नहीं माना है, किन्तु पातञ्जल योगसूत्रमें वर्णित योगप्रक्रिया और उसकी खास परिभाषाओंके साथ जैन संकेतोंका मिलान भी किया है[8]। योगदृष्टिसमुच्चयमें योगकी आठ दृष्टियोंका[9] जो वर्णन है वह सारे योगसाहित्यमें एक नवीन दिशा है।

श्रीमान् हरिभद्रसूरिके योगविषयक ग्रन्थ उनकी योगाभिरुचि और योगविषयक व्यापक बुद्धिके खासे नमूने हैं।

इसके बाद श्रीमान् हेमचन्द्रसूरिकृत योगशास्त्रका नंबर आता है। उसमें पातञ्जल योगशास्त्र निर्दिष्ट आठ योगांगोंके क्रमसे साधु और गृहस्थजीवनकी आचार प्रक्रियाका जैन शैलीके अनुसार वर्णन है, जिसमें आसन तथा

---

1 देखो उत्तराध्ययन अ० २४।

2 दिवसस्स चउरो भाए, कुज्जा भिक्खु वियक्खणो। तओ उत्तरगुणे कुज्जा, दिणभागेसु चउसु वि ॥ ११॥
पढमं पोरिसि सज्झायं, बिइअं झाणं झियायई। तइआए गोयरकालं, पुणो चउत्थिए सज्झायं ॥ १२॥
रत्तिं पि चउरो भाए, भिक्खु कुज्जा वियक्खणो। तओ उत्तरगुणे कुज्जा, राइभागेसु चउसु वि ॥ १७॥
पढमं पोरिसि सज्झायं, बिइअं झाणं झियायई।
तइआए निद्दमोक्खं तु, चउत्थिए भुज्जो वि सज्झायं ॥ १८ ॥—उत्तराध्ययन अ० २६।

3 देखो स्थानाङ्ग अ० ४ उद्देश १। समवायाङ्ग स० ४। भगवती शतक २५ उद्देश ७। उत्तराध्ययन अ० ३० गा० ३५। 4 देखो आवश्यकनियुक्ति कायोत्सर्ग अध्ययन गा० १४६२-१४८६।

5 देखो अ० ९ सू० २७ से आगे। 6 देखो हारिभद्रीय आवश्यक वृत्ति प्रतिक्रमणाध्ययन पृ० ५८१।

7 यह ग्रन्थ जैन ग्रन्थावलीमें उल्लिखित है, पृ० ११३।

8 समाधिरेष एवान्यैः संप्रज्ञातोऽभिधीयते। सम्यक्प्रकर्षरूपेण वृत्त्यर्थज्ञानतस्तथा ॥ ४१८ ॥
असंप्रज्ञात एषोऽपि समाधिर्गीयते परैः। निरुद्धाशेषवृत्त्यादितत्स्वरूपानुवेधतः ॥ ४२० ॥ इत्यादि, योगबिन्दु।

9 मित्रा तारा बला दीप्रा स्थिरा कान्ता प्रभा परा। नामानि योगदृष्टीनां लक्षणं च निबोधत ॥ १३॥

इन आठ दृष्टियोंका स्वरूप, दृष्टान्त आदि विषय, योगदृष्टिसमुच्चयसे ही देखने योग्य है। इसी विषयपर यशोविजयजीने २१, २२, २३, २४ ये चार द्वात्रिंशिकायें लिखी हैं। साथ ही उन्होंने संस्कृत न जाननेवालोंके हितार्थ आठ दृष्टियोंकी सज्झाय भी गुजराती भाषामें बनाई है।

प्राणायामसे संबन्ध रखनेवाली अनेक बातोंका विस्तृत स्वरूप है, जिसको देखनेसे यह जान पडता है कि तत्कालीन लोगोंमें हठयोग प्रक्रियाका कितना अधिक प्रचार था। हेमचन्द्राचार्यने अपने योगशास्त्रमें हरिभद्रसूरिके योगविषयक ग्रन्थोंकी नवीन परिभाषा और रोचक शैलीका कहीं भी उल्लेख नहीं किया है पर शुभचन्द्राचार्यके ज्ञानार्णवगत पदस्थ, पिण्डस्थ, रूपस्थ, और रूपातीत ध्यानका विस्तृत व स्पष्ट वर्णन किया है1। अन्तमें उन्होंने स्वानुभवसे विक्षिप्त, यातायात, श्लिष्ट और सुलीन ऐसे मनके चार भेदोंका वर्णन करके नवीनता लानेका भी खास कौशल दिखाया है2। निस्सन्देह उनका योगशास्त्र जैन तत्त्वज्ञान और जैन आचारका एक पाठ्य ग्रन्थ है।

इसके बाद उपाध्याय-श्रीयशोविजयकृत योगग्रन्थोंपर नजर ठहरती है। उपाध्यायजीका शास्त्रज्ञान तर्ककौशल और योगानुभव बहुत गम्भीर था। इससे उन्होंने अध्यात्मसार अध्यात्मोपनिषद तथा सटीक बत्तीस बत्तीसियाँ योग सबन्धी विषयोंपर लिखी हैं, जिनमें जैन मन्तव्योंकी सूक्ष्म और रोचक मीमांसा करनेके उपरांत अन्य दर्शन और जैनदर्शनका मिलान भी किया है3। इसके सिवा उन्होंने हरिभद्रसूरिकृत योगविंशिका तथा षोडशकपर टीका लिख कर प्राचीन गूढ तत्त्वोंका स्पष्ट उद्घाटन भी किया है। इतना ही करके वे सन्तुष्ट नहीं हुए, उन्होंने महर्षि पतञ्जलिकृत योगसूत्रोंके उपर एक छोटीसी वृत्ति भी लिखी है। यह वृत्ति जैन प्रक्रियाके अनुसार लिखी हुई है इसलिये उसमें यथासंभव योगदर्शनकी भित्ति-स्वरूप सांख्य-प्रक्रियाका जैन-प्रक्रियाके साथ मिलान भी किया है और अनेक स्थलोंमें उसका सयुक्तिक प्रतिवाद भी किया है। उपाध्यायजीने अपनी विवेचनामें जो मध्यस्थता, गुणग्राहकता, सूक्ष्म समन्वयशक्ति और स्पष्टभाषिता दिखाई है4 ऐसी दूसरे आचार्योंमें बहुत कम नजर आती है5।

एक योगसार नामक ग्रन्थ भी श्वेताम्बर साहित्यमें है। कर्ताका उल्लेख उसमें नहीं है, पर उसके दृष्टान्त आदि वर्णनसे जान पडता है कि हेमचन्द्राचार्यके योगशास्त्रके आधारपर किसी श्वेताम्बर आचार्यके द्वारा वह रचा गया है। दिगम्बर साहित्यमें ज्ञानार्णव तो प्रसिद्ध ही है पर ध्यानसार और योगप्रदीप ये दो हस्तलिखित ग्रन्थ भी हमारे देखनेमें आये हैं, जो पद्यबन्ध और प्रमाणमें छोटे हैं। इसके सिवाय श्वेताम्बर दिगम्बर सम्प्रदायके योगविषयक ग्रन्थोंका कुछ विशेष परिचय जैन ग्रन्थावलि पृ० १०६ से भी मिल सकता है। बस यहां तकहीमें जैन योगसाहित्य समाप्त हो जाता है।

बौद्ध सम्प्रदाय भी जैन सम्प्रदायकी तरह निवृत्तिप्रधान है। भगवान् गौतम बुद्धने बुद्धत्व प्राप्त होनेसे पहले छह वर्षतक मुख्यतया ध्यानद्वारा योगाभ्यास ही किया। उनके हजारों शिष्य भी उसी मार्ग पर चले। मौलिक बौद्धग्रन्थोंमें जैन आगमोंके समान योग अर्थमें बहुधा ध्यान शब्द ही मिलता है, और उनमें ध्यानके

---

1 देखो प्रकाश ७–१० तक। 2 १२ वाँ प्रकाश श्लोक २–३–४। 3 अध्यात्मसारके योगाधिकार और ध्यानाधिकारमें प्रधानतया भगवद्गीता तथा पातञ्जलसूत्रका उपयोग करके अनेक जैनप्रक्रियाप्रसिद्ध ध्यानविषयोंका उक्त दोनों ग्रन्थोंके साथ समन्वय किया है जो बहुत ध्यानपूर्वक देखने योग्य है। अध्यात्मोपनिषद्के शास्त्र, ज्ञान क्रिया और साम्य इन चारों योगोंमें प्रधानतया योगवाशिष्ठ तथा तैत्तिरीय उपनिषदके वाक्योंका अवतरण दे कर तात्त्विक ऐक्य बतलाया है। योगावतार बत्तीसीमें खास कर पातञ्जल योगके पदार्थोंका जैन प्रक्रियाके अनुसार स्पष्टीकरण किया है।

4 इसके लिये उनका ज्ञानसार ग्रन्थ जो उन्होंने अंतिम जीवनमें लिखा मालुम होता है वह ध्यानपूर्वक देखना चाहिए। शास्त्रवार्तासमुच्चयकी उनकी टीका (पृ० १०) भी देखनी आवश्यक है।

5 इसके लिए उनके शास्त्रवार्तासमुच्चयादि ग्रन्थ ध्यानपूर्वक देखने चाहिए, और खास कर उनकी पातञ्जल सूत्रवृत्ति मननपूर्वक देखनेसे हमारा कथन अक्षरशः विश्वसनीय मालूम पडेगा।

चार भेद नजर आते हैं। उक्त चार भेदक नाम तथा भाव प्राय वही हैं, जो जैनदर्शन तथा योगदर्शनकी प्रक्रियाम हैं[1]। बौद्ध सम्प्रदायमें समाधि राज नामक ग्रन्थ भी है। वैदिक, जैन और बौद्ध सम्प्रदायके योगविषयक साहित्यका हमने यहुत सक्षपमें अत्यावश्यक परिचय कराया है, पर इसके विशेष परिचयके लिये–कॅटलोगस् कॅटलॅगॉरम्[2], भा० १ पृ ४७७ स ४८१ पर जो योगविषयक ग्रन्थोंकी नामावलि है वह देखने योग्य है।

यहा एक बात खास ध्यान देनेके योग्य है, वह यह कि यद्यपि वैदिक साहित्यम अनेक जगह हठयोगकी प्रथाको अग्राह्य कहा है[3], तथापि उसम हठयोगकी प्रधानतावाले अनेक ग्रन्थाका और मार्गोंका निमाण हुआ है। इसके विपरीत जैन और बौद्ध साहित्यमें हठयोगने स्थान नहीं पाया है, इतना ही नहीं, बल्कि उसम हठयोगका स्पष्ट निषध भी किया है[4]।

---

1 सो खो अह ब्राह्मण विविच्चेव कामहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्क सविचार विवेकज पीतिसुख पठमज्झान उपसपज्ज विहासि, वितक्कविचारान वूपसमा अज्झत्त सपसादन चेतसो एकोदिभाव अवितक्क अविचार समाधिज पीतिसुख दुतियज्झान उपसपज्ज विहासि, पीतिया च विरागा उपेक्खको च विहासिं, सतो च सपजानो सुख च कायेन पटिसवदेसिं, य त अरिया आचिक्खन्ति–उपेक्खको सतिमा सुखविहारीऽति ततियज्झान उपसपज्ज विहासिं सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेऽव सोमनस्स दोमनस्सान अत्थगमा अदुक्खमसुख उपेक्खासति पारिसुद्धिं चतुत्थज्झान उपसपज्ज मज्झिमनिकाय भयभेरवसुत्त विहासिं।

इन्हीं चार ध्यानोंका वणन दीघनिकाय सामञ्ञफलसुत्तमें है। देखो प्रो सि वि राजवाड कृत मराठी अनुवाद पृ ७२।

यही विचार प्रो धर्मानद कौशाम्बी लिखित बुद्धलीलासारसग्रहमें है। देखो पृ १२८।

जैनशास्त्रम शुक्लध्यानके भेदोंका विचार है, उसमें उक्त सवितर्क आदि चार ध्यान जैसा ही वणन है। देखो तत्त्वार्थ अ ९ सू० ४१—४४।

योगशास्त्रम सम्प्रज्ञात समाधि तथा समापत्तिओंका वणन है। उसमें भी उक्त सवितर्क निर्वितर्क आदि ध्यान जैसा ही विचार है। पा सू. पा १–१७ ४२, ४३, ४४।

2 थिआडोर आउफ्रेक्टकृत, लिप्झिगमें प्रकाशित १८९१ की आवृत्ति।

3 उदाहरणार्थ —

सतीषु युक्तिष्वेतासु हठान्नियमयन्ति ये। चेतस्ते दीपमुत्सृज्य विनिघ्नन्ति तमोऽञ्जनै ॥ ३७॥

विमूढा कर्तुमुद्युक्ता ये हठाच्चेतसो जयम्। ते निबध्नन्ति नागेन्द्रमुन्मत्त बिसतन्तुभि ॥ ३८॥

चित्त चित्तस्य वाऽदूर सस्थित स्वशरीरकम्। साधयन्ति समुत्सृज्य युक्तिं ये तान्हतान् विदु ॥ ३९॥

योगवासिष्ठ–उपशम प्र सर्ग ९२

4 इसके उदाहरणमें बौद्ध धर्ममें बुद्ध भगवान्ने तो शुरुम कष्टप्रधान तपस्याका आरम्भ करके अतमें मध्यमप्रतिपदा मार्गका स्वीकार किया है–देखो बुद्धलीलासारसग्रह

जैनशास्त्रमें श्रीभद्रबाहुस्वामिने आवश्यकनिर्युक्तिमें " ऊसास ण णिरुभइ " १५२ इत्यादि उक्तिसे हठयोगका ही निराकरण किया है। श्रीहेमचन्द्राचार्यने भी अपने योगशास्त्रमें

" तन्नाप्नोति मन स्वास्थ्य प्राणायामै कदर्थित। प्राणस्यायमने पीडा तस्या स्यात् चित्तविप्लव ॥ "

इत्यादि उक्तिसे उसी बातको दोहराया है। श्रीयशोविजयजीने भी पातञ्जलयोगसूत्रकी अपनी वृत्तिमें (१–३४) प्राणायामको योगका अनिश्चित साधन कह कर हठयोगका ही निरसन किया है।

योगशास्त्र—ऊपरके वर्णनसे मालूम हो जाता है कि—योगप्रक्रियाका वर्णन करनेवाले छोटे बड़े अनेक ग्रन्थ हैं। इन सब उपलब्ध ग्रन्थोंमें महर्षि—पतञ्जलिकृत योगशास्त्रका आसन ऊंचा है। इसके तीन कारण हैं—१ ग्रन्थकी संक्षिप्तता तथा सरलता २ विषयकी स्पष्टता तथा पूर्णता, ३ और मध्यस्थभाव तथा अनुभवसिद्धता यही कारण है कि योगदर्शन यह नाम सुनते ही सहसा पातञ्जल योगसूत्रका स्मरण हो आता है। श्रीशंकराचार्यने अपने ब्रह्मसूत्रभाष्यमें योगदर्शनका प्रतिवाद करते हुए जो "अथ सम्यग्दर्शनाभ्युपायो योग" ऐसा उल्लेख किया है[1], उससे इस बातमें कोई संदेह नहीं रहता कि उनके सामने पातञ्जल योगशास्त्रसे भिन्न दूसरा कोई योगशास्त्र रहा है। क्यों कि पातञ्जल योगशास्त्रका आरम्भ "अथ योगानुशासनम्" इस सूत्रसे होता है और उक्त भाष्योल्लिखित वाक्यमें भी ग्रन्थारम्भसूचक अथ शब्द है, यद्यपि उक्त भाष्यमें अन्यत्र और भी योगसम्बन्धी दो उल्लेख हैं[2] जिनमें एक तो पातञ्जल योगशास्त्रका सम्पूर्ण सूत्र ही है[3] और दूसरा उसका अविकल सूत्र नहीं किन्तु उसके सूत्रसे मिलता जुलता है[4]। तथापि "अथ सम्यग्दर्शनाभ्युपायो योग" इस उल्लेखकी शब्दरचना और स्वतन्त्रताकी ओर ध्यान देनेसे यही कहना पड़ता है कि पिछले दो उल्लेख भी उसी भिन्न योगशास्त्रके होने चाहिये, जिसका अंश 'अथ सम्यग्दर्शनाभ्युपायो योग' यह वाक्य माना जाय। अस्तु, जो कुछ हो आज हमारे सामने तो पतञ्जलिका ही योगशास्त्र उपस्थित है, और वह सर्वप्रिय है इसलिये बहुत संक्षेपमें भी उसका बाह्य तथा आन्तरिक परिचय कराना अनुपयुक्त न होगा।

इस योगशास्त्रके चार पद और कुल १९५ सूत्र हैं। पहले पादका नाम समाधि, दूसरेका साधन, तीसरेका विभूति, और चौथेका कैवल्यपाद है। प्रथमपादमें मुख्यतया योगका स्वरूप, उसके उपाय और चित्त- स्थिरताके उपायोंका वर्णन है। दूसरे पादमें क्रियायोग आठ योगाङ्ग, उनके फल तथा चतुर्व्यूहका[5] मुख्य वर्णन है॥

तीसरे पादमें योगजन्य विभूतियोंके वर्णनकी प्रधानता है। और चौथे पादमें परिणामवादके स्थापन, विज्ञानवादके निराकरण तथा कैवल्य अवस्थाके स्वरूपका वर्णन मुख्य है। महर्षि पतञ्जलिने अपने योगशास्त्रकी नींव सांख्यसिद्धान्तपर डाली है। इसलिये उसके प्रत्येक पादके अन्तमें "योगशास्त्रे सांख्यप्रवचने" इत्यादि उल्लेख मिलता है। "सांख्यप्रवचने" इस विशेषणसे यह स्पष्ट ध्वनित होता है कि सांख्यके सिवाय अन्यदर्शनके सिद्धांतोंके आधारपर भी रचे हुए योगशास्त्र उस समय

---

1 ब्रह्मसूत्र २—१—३ भाष्यगत।

2 "स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोग." ब्रह्मसूत्र १—३—३३ भाष्यगत। योगशास्त्रप्रसिद्धाः मनसः पञ्च वृत्तयः परिगृह्यन्ते "प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतय." नाम २—४—१२ भाष्यगत।

प. वासुदेव शास्त्री अभ्यंकरने अपने ब्रह्मसूत्रके मराठी अनुवादके परिशिष्टमें उक्त दो उल्लेखोंका योगसूत्ररूपसे निर्देश किया है पर अथ सम्यग्दर्शनाभ्युपायो योग इस उल्लेखके संबंधमें कहीं भी ऊहापोह नहीं किया है।

3 मिलाओ पा. २ सू. ४४। 4 मिलाओ पा. १ सू. ६।

5 हेय, हेयहेतु हान हानोपाय ये चतुर्व्यूह कहलाते हैं। इनका वर्णन सूत्र १६—२६ तकमें है।

मौजूद थे या रचे जाते थे। इस योगशास्त्रके ऊपर अनेक छोटे बड़े टीका ग्रन्थ[1] हैं, पर व्यासकृत भाष्य और वाचस्पतिकृत टीकासे उसकी उपादेयता बहुत बढ़ गई है।

सब दर्शनोंके अन्तिम साध्यके सम्बन्धमें विचार किया जाय तो उसके दो पक्ष दृष्टिगोचर होते हैं। प्रथम पक्षका अन्तिम साध्य शाश्वत सुख नहीं है। उसका मानना है कि मुक्तिमें शाश्वत सुख नामक कोई स्वतन्त्र वस्तु नहीं है, उसमें जो कुछ है वह दुःखकी आत्यन्तिक निवृत्ति ही। दूसरा पक्ष शाश्वतिक सुखलाभको ही मोक्ष कहता है। ऐसा मोक्ष हो जानेपर दुःखकी आत्यन्तिक निवृत्ति आप ही आप हो जाती है। वैशेषिक नैयायिक[2], सांख्य[3], योग[4], और बौद्धदर्शन[5] प्रथम पक्षके अनुगामी हैं। वेदान्त[6] और जैनदर्शन[7], दूसरे पक्षके अनुगामी हैं।

योगशास्त्रका विषय-विभाग उसके अन्तिमसाध्यानुसार ही है। उसमें गौण मुख्य रूपसे अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित हैं, पर उन सबका संक्षेपमें वर्गीकरण किया जाय तो उसके चार विभाग हो जाते हैं। १ हेय २ हेय-हेतु, ३ हान, ४ हानोपाय। यह वर्गीकरण स्वयं सूत्रकारने किया है और इसीसे भाष्यकारने योगशास्त्र को चतुर्व्यूहात्मक कहा है[8]। सांख्यसूत्रमें भी यही वर्गीकरण है। बुद्ध भगवान्ने इसी चतुर्व्यूहको आर्य-सत्य नामसे प्रसिद्ध किया है और योगशास्त्रके आठ योगांगोंकी तरह उन्होंने चौथे आर्य-सत्यके साधनरूपसे आर्य अष्टाङ्गमार्गका[9] उपदेश किया है।

दुःख हेय है[10], अविद्या हेयका कारण है[11], दुःखका आत्यन्तिक नाश हान है[12], और विवेक-ख्याति हानका उपाय है[13]।

उक्त वर्गीकरणकी अपेक्षा दूसरी रीतिसे भी योगशास्त्रका विषय-विभाग किया जा सकता है। जिससे कि उसके मन्तव्योंका ज्ञान विशेष स्पष्ट हो। यह विभाग इस प्रकार है—१ ज्ञाता, २ ईश्वर, ३ जगत्, ४ संसार-मोक्षका स्वरूप, और उसके कारण।

१ ज्ञाता दुःखसे छुटकारा पानेवाले द्रष्टा अर्थात् चेतनका नाम है। योग-शास्त्रमें सांख्य[14]

---

1 व्यास कृत भाष्य, वाचस्पतिकृत तत्त्ववैशारदी टीका, भोजदेवकृत राजमार्तंड, नागोजीभट्ट कृत वृत्ति, विज्ञानभिक्षु कृत वार्तिक, योगचन्द्रिका, मणिप्रभा, भावागणेशीय वृत्ति, बालरामोदासीन कृत टिप्पण आदि।

2 " तदत्यन्तविमोक्षोऽपवर्ग " न्यायदर्शन १-१-२२। 3 ईश्वरकृष्णकारिका १। 4 उसमें हानतत्त्व मान कर दुःखके आत्यन्तिक नाशको ही हान कहा है। 5 बुद्ध भगवान्के तीसरे निरोध नामक आर्यसत्यका मतलब दुःख नाशसे है। 6 वेदान्त दर्शनमें ब्रह्मको सच्चिदानन्दस्वरूप माना है, इसीलिये उसमें नित्यसुखकी अभिव्यक्तिका नाम हि मोक्ष है। 7 जैन दर्शनमें भी आत्माको सुखस्वरूप माना है, इसलिये मोक्षमें स्वाभाविक सुखकी अभिव्यक्ति ही उस दर्शनको मान्य है।

8 यथा चिकित्साशास्त्रं चतुर्व्यूहम्-रोगो रोगहेतुरारोग्यं भैषज्यमिति एवमिदमपि शास्त्रं चतुर्व्यूहमेव। तद्यथा-संसार संसारहेतुर्मोक्षो मोक्षोपाय इति। तत्र दुःखबहुलः संसारो हेयः। प्रधानपुरुषयोः संयोगो हेयहेतुः। संयोगस्यात्यन्तिकी निवृत्तिर्हानम्। हानोपायः सम्यग्दर्शनम्। पा० २ सू० १५ भाष्य।

9 सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाचा, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीव, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि। बुद्धलीलासार संग्रह पृ० १८। 10 " दुःखं हेयमनागतम् " २-१६ यो० सू०। 11 " द्रष्टृदृश्ययोः संयोगो हेयहेतुः २-१७। तस्य हेतुरविद्या " २-२४ यो० सू०।

12 " तदभावात् संयोगाभावो हानं तद् दृशेः कैवल्यम् " २-२५ यो० सू०। 13 ' विवेकख्यातिरविप्लवा हानोपायः ' २-२६ यो० सू०। 14 " पुरुषबहुत्वं सिद्धं " ईश्वरकृष्णकारिका- १८।

वैशेषिक[1]-नैयायिक बौद्ध, जैन[2] और पूर्णप्रज्ञ (मध्व[3]) दर्शनके समान द्वैतवाद अर्थात् अनेक चेतन माने गये हैं[4]।

योगशास्त्र चेतनको जैन दर्शनकी तरह[5] देहप्रमाण अर्थात् मध्यमपरिमाणवाला नहीं मानता, और मध्वसम्प्रदायकी तरह अणुप्रमाण भी नहीं मानता[6] किन्तु सांख्य[7] वैशेषिक[8]-नैयायिक और शांकरवेदान्तकी[9] तरह वह उसको व्यापक मानता है[10]।

इसी प्रकार वह चेतनको जैनदर्शनकी तरह[11] परिणामि नित्य नहीं मानता, और न बौद्ध दर्शनकी तरह उसको क्षणिक–अनित्य ही मानता है, किन्तु सांख्य आदि उक्त शेष दर्शनोंकी तरह[12] वह उसे कूटस्थ–नित्य मानता[13] है।

२. ईश्वरके सम्बन्धमें योगशास्त्रका मत सांख्य दर्शनसे भिन्न है। सांख्य दर्शन नाना चेतनोंके अतिरिक्त ईश्वरको नहीं मानता[14], पर योगशास्त्र–सम्मत ईश्वरका स्वरूप नैयायिक–वैशेषिक आदि दर्शनोंमें माने गये ईश्वरस्वरूपसे कुछ भिन्न है। योगशास्त्रने ईश्वरको एक अलग व्यक्ति तथा शास्त्रोपदेशक माना है सही, पर उसने नैयायिक आदिकी तरह ईश्वरमें नित्यज्ञान, नित्यइच्छा और नित्यकृतिका सम्बन्ध न मान कर इसके स्थानमें

---

1 "व्यवस्थातो नाना" ३-२-२० वैशेषिकदर्शन। 2 "पुद्गलजीवास्त्वनेकद्रव्याणि" ५-५ तत्त्वार्थसूत्र–भाष्य।

3 जीवेश्वरभिदा चैव जडेश्वरभिदा तथा। जीवभेदो मिथश्चैव जडजीवभिदा तथा॥
मिथश्च जडभेदो यः प्रपञ्चो भेदपञ्चकः। सोऽयं सत्योऽप्यनादिश्च सादिश्चेन्नाशमाप्नुयात्॥
—सर्वदर्शनसंग्रह पूर्णप्रज्ञदर्शन।

4 "कृतार्थं प्रति नष्टमप्यनष्टं तदन्यसाधारणत्वात्" २–२२ यो. सू.। 5 असंख्येयभागादिषु जीवानाम्"। १५। "प्रदेशसंहारविसर्गाभ्यां प्रदीपवत्" १६–तत्त्वार्थसूत्र अ० ५।

6 देखो "उत्क्रान्तिगत्यागतीनाम्"। ब्रह्मसूत्र २–३–१८ पूर्णप्रज्ञ भाष्य। तथा मिलान करो अभ्यंकरशास्त्री कृत मराठी शांकरभाष्य अनुवाद भा ४ पृ १५३ टिप्पण ४६।

7 "निष्क्रियस्य तदसम्भवात्" सा. सू १–४९, निष्क्रियस्य–विभोः पुरुषस्य गत्यसम्भवात्–भाष्य विज्ञानभिक्षु।

8 विभवान्महानाकाशस्तथा चात्मा।" ७–१–२२–वै. द.। 9 देखो ब्र. सू. २–३–२९· भाष्य।

10 इसलिये कि योगशास्त्र आत्मस्वरूपके विषयमें सांख्यसिद्धान्तानुसारी है।

11 "नित्यावस्थितान्यरूपाणि" ३। "उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्"। २९। "तद्भावाव्ययं नित्यम्" ३०। तत्त्वार्थसूत्र अ० ५ भाष्य सहित

12 देखो ई० कृ० कारिका ६३ सांख्यतत्त्वकौमुदी। देखो न्यायदर्शन ४–१–१०। देखो ब्रह्मसूत्र २–१–१४। २–१–२७, शांकरभाष्य सहित।

13 देखो योगसूत्र "सदाज्ञाताश्चित्तवृत्तयस्तत्प्रभोः पुरुषस्य अपरिणामित्वात्" ४–१८। "चितेरप्रतिसंक्रमायास्तदाऽऽकारापत्तौ स्वबुद्धिसंवेदनम्" ४–२२। तथा 'द्वयी चेयं नित्यता, कूटस्थनित्यता, परिणामिनित्यता च। तत्र कूटस्थनित्यता पुरुषस्य, परिणामिनित्यता गुणानाम्" इत्यादि ४–३३ भाष्य।

14 देखो सांख्यसूत्र १–९२ आदि।

सत्त्वगुणका परमप्रकर्ष मान कर तद्द्वारा जगत्उद्धारादिकी सब व्यवस्था घटा[1] दी है।

३ योगशास्त्र दृश्य जगत्‌को न तो जैन वैशेषिक, नैयायिक दर्शनोंकी तरह परमाणुका परिणाम मानता है, न शांकरवेदान्तदर्शनकी तरह ब्रह्मका विवर्त या ब्रह्मका परिणाम ही मानता है, और न बौद्धदर्शनकी तरह शून्य या विज्ञानात्मक ही मानता है किन्तु सांख्य दर्शनकी तरह वह उसको प्रकृतिका परिणाम तथा अनादि—अनन्त–प्रवाहस्वरूप मानता है।

४ योगशास्त्रमें वासना क्लेश और कर्मका नाम ही संसार है, तथा वासनादिका अभाव अर्थात् चेतनके स्वरूपावस्थानका नाम मोक्ष[2] है। उसमें संसारका मूल कारण अविद्या और मोक्षका मुख्य हेतु सम्यग्दर्शन अर्थात् योगजन्य विवेकख्याति माना गया है।

महर्षि पतञ्जलिकी दृष्टिविशालता—यह पहले कहा जा चुका है कि सांख्य सिद्धान्त और उसकी प्रक्रियाको ले कर पतञ्जलिने अपना योगशास्त्र रचा है, तथापि उनमें एक ऐसी विशेषता अर्थात् दृष्टिविशालता नजर आती है जो अन्य दार्शनिक विद्वानोंमें बहुत कम पाई जाती है। इसी विशेषताके कारण उनका योगशास्त्र मानों सर्वदर्शनसमन्वय बन गया है। उदाहरणार्थ सांख्यका निरीश्वरवाद जब वैशेषिक, नैयायिक आदि दर्शनोंके द्वारा अच्छी तरह निरस्त हो गया और साधारण लोकस्वभावका झुकाव भी ईश्वरोपासनाकी ओर विशेष मालूम पड़ा, तब अधिकारिभेद तथा रुचिविचित्रताका विचार करके पतञ्जलिने अपने योगमार्गमें ईश्वरोपासनाको भी स्थान[3] दिया, और ईश्वरके स्वरूपका उन्होंने निष्पक्ष भावसे ऐसा निरूपण[4] किया है जो सबको मान्य हो सके।

पतञ्जलिने सोचा कि उपासना करनेवाले सभी लोगोंका साध्य एक ही है, फिर भी वे उपासनाकी भिन्नता और उपासनामें उपयोगी होनेवाली प्रतीकोंकी भिन्नताके व्यामोहमें अज्ञानवश आपस आपसमें लड़ मरते हैं, और इस धार्मिक कलहमें अपने साध्यको लोक भूल जाते हैं। लोगोंको इस अज्ञानसे हटा कर सत्पथपर लानेके लिये उन्होंने कह दिया कि तुम्हारा मन जिसमें लगे उसीका ध्यान करो। जैसी प्रतीक तुम्हें पसंद आवे वैसी प्रतीककी[5] ही उपासना करो, पर किसी भी तरह अपना मन एकाग्र व स्थिर करो और तद्द्वारा परमात्म चिन्तनके सच्चे पात्र बनो। इस उदारताकी मूर्तिस्वरूप मतभेदसहिष्णु आदेशके द्वारा पतञ्जलिने सभी उपासकोंको योग मार्गमें स्थान दिया, और ऐसा करके धर्मके नामसे होनेवाले कलहको कम कर

---

1 यद्यपि यह व्यवस्था मूल योगसूत्रमें नहीं है, परन्तु भाष्यकार तथा टीकाकारने इसका उपपादन किया है। देखो पातञ्जल यो पा १ सू. २४ भाष्य तथा टीका।

2 तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्। १–३ योगसूत्र।

3 "ईश्वरप्रणिधानाद्वा" १–२३।

4 'क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः' 'तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्'। 'पूर्वेषामपि गुरुः कालेनाऽनवच्छेदात्'। (१–२४, २५, २६)

5 'यथाऽभिमतध्यानाद्वा' १–३९ इसी भावकी सूचक महाभारतमें—

ध्यानमुत्पादयत्यत्र, संहिताबलसंश्रयात्। यथाभिमतमन्त्रेण, प्रणवाद्यं जपेत्कृती॥

(शान्तिपर्व अ. १९४ श्लो. २०) यह उक्ति है। और योगवासिष्ठमें—

यथाभिवाञ्छितध्यानाच्चिरमेकतयोदितात्। एकतत्त्वघनाभ्यासात्प्राणस्पन्दो निरुध्यते॥

(उपशम प्रकरण सर्ग ७८ श्लो. १६।) यह उक्ति है।

नेका उन्होंने सच्चा मार्ग लोगोंको बतलाया। उनकी इस दृष्टिविशालताका असर अन्य गुण ग्राही आचार्यों-पर भी पडा1 और वे उस मतभेदसहिष्णुताके तत्त्वका मर्म समझ गये।

वैशेषिक नैयायिक आदिकी ईश्वरविषयक मान्यताका तथा साधारण लोगोंकी ईश्वरविषयक श्रद्धाका योगमार्गमें उपयोग करके ही पतञ्जलि चुप न रहे पर उन्होंने वैदिकेतर दर्शनोंके सिद्धान्त तथा प्रक्रिया जो योगमार्गके लिये सर्वथा उपयोगी जान पडी उसका भी अपने योगशास्त्रमें बडी उदारतासे संग्रह किया। यद्यपि बौद्ध विद्वान् नागार्जुनके विज्ञानवाद तथा आत्मपरिणामित्ववादको युक्तिहीन समझ कर या योगमार्गमें अनुपयोगी समझ कर उसका निरसन चौथे पादमें किया2 है तथापि उन्होंने बुद्धभगवानके परमप्रिय चार आर्यसत्योंका3 हेय, हेयहेतु, हान और हानोपाय रूपसे स्वीकार निःसंकोच भावसे अपने योगशास्त्रमें किया है।

---

1 पुष्पैश्च बलिना चैव वस्त्रैः स्तोत्रैश्च शोभनैः। देवानां पूजनं ज्ञेयं शौचश्रद्धासमन्वितम् ॥
अविशेषेण सर्वेषामधिमुक्तिवशेन वा। गृहिणां माननीया यत्सर्वे देवा महात्मनाम् ॥
सर्वान्देवान्नमस्यन्ति नैकं देवं समाश्रिताः। जितेन्द्रिया जितक्रोधा दुर्गाण्यतितरन्ति ते ॥
चारिसंजीवनीचारन्याय एष सतां मतः। नान्यथात्रेष्टसिद्धिः स्याद्विशेषेणादिकर्मणाम् ॥
गुणाधिक्यपरिज्ञानाद्विशेषेऽप्येतदिष्यते। अद्वेषेण तदन्येषां वृत्ताधिक्ये तथात्मनः ॥
योगबिन्दु श्लो १६–२०

जो विशेषदर्शी होते हैं, वे तो किसी प्रतीक विशेष या उपासना विशेषको स्वीकार करते हुए भी अन्य प्रकारकी प्रतीक माननेवाले या अन्य प्रकारकी उपासना करनेवालोंसे द्वेष नहीं रखते. पर जो धर्माभिमानी प्रथमाधिकारी होते हैं वे प्रतीकभेद या उपासनाभेदके व्यामोहसे ही आपसमें लड मरते हैं। इस अनिष्ट तत्त्वको दूर करनेके लिये ही श्रीमान् हरिभद्रसूरिने उक्त पद्योंमें प्रथमाधिकारीके लिये सब देवोंकी उपासनाको लाभदायक बतलानेका उदार प्रयत्न किया है। इस प्रयत्नका अनुकरण श्रीयशोविजयजीने भी अपनी "पूर्व सेवाद्वात्रिंशिका' 'आठदृष्टियोंकी सज्झाय' आदि ग्रन्थोंमें किया है। एकदेशीय सम्प्रदायाभिनिवेशी लोगोंको समजानेके लिये 'चारिसंजीवनीचार' न्यायका उपयोग उक्त दोनों आचार्योंने किया है। यह न्याय बडा मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद है।

इस समभावसूचक दृष्टान्तका उपनय श्रीज्ञानविमलने आठदृष्टिकी सज्झाय पर किये हुए अपने गूजराती टबेमें बहुत अच्छी तरह घटाया है जो देखने योग्य है। इसका भाव संक्षेपमें इस प्रकार है। किसी स्त्रीने अपनी सखीसे कहा कि मेरा पति मेरे अधीन न होनेसे मुझे बडा कष्ट है। यह सुन कर उस आगन्तुक सखीने कोई जडी खिला कर उस पुरुषको बैल बना दिया, और वह अपने स्थानको चली गई। पतिके बैल बन जानेसे उसकी पत्नी दुःखित हुई, पर फिर वह पुरुषरूप बनानेका उपाय न जाननेके कारण उस बैलरूप पतिको चराया करती थी, और उसकी सेवा किया करती थी। किसी समय अचानक एक विद्याधरके मुखसे ऐसा सुना कि अगर बैलरूप पुरुषको संजीवनी नामक जडी चराई जाय तो वह फिर असली रूप धारण कर सकता है। विद्याधरसे यह भी सुना कि वह जडी अमुक वृक्षके नीचे है। पर उस वृक्षके नीचे अनेक प्रकारकी वनस्पति होनेके कारण वह स्त्री संजीवनीको पहचाननेमें असमर्थ थी। इससे उस दुःखित स्त्रीने अपने बैलरूपधारि पतिको सब वनस्पतियाँ चरा दीं। जिनमें संजीवनीको भी वह बैल चर गया। जैसे विशेष परीक्षा न होनेके कारण उस स्त्रीने सब वनस्पतियोंके साथ संजीवनी खिला कर अपने पतिका कृत्रिम बैलरूप छुडाया, और असली मनुष्यत्वको प्राप्त कराया वैसे ही विशेष परीक्षाविकल प्रथमाधिकारी भी सब देवोंकी समभावसे उपासना करते करते योगमार्गमें विकास करके इष्ट लाभ कर सकता है।

2 देखो सू० १५. १८। 3 दुःख, समुदय निरोध और मार्ग।

२ प्रसुप्त, तनु आदिक्लेशावस्था[1], पाँच यम,[2] योगजन्य विभूति,[3] सोपक्रम निरुपक्रम[4] कर्मका स्वरूप, तथा उसके दृष्टान्त, अनेक कायोंका[5] निर्माण आदि।

---

1 प्रसुप्त, तनु, विच्छिन्न और उदार इन चार अवस्थाओंका योगसूत्र २—४ मे वर्णन है। जैन-शास्त्रमे वही भाव मोहनीयकर्मकी सत्ता, उपशमक्षयोपशम विरोधिप्रकृतिके उदयादिकृत व्यवधान और उदयावस्थाके वर्णनरूपसे वर्तमान है। देखो योगसूत्र २—४ की यशोविजयकृत वृत्ति।

2 पॉच यमोका वर्णन महाभारत आदि ग्रन्थोंमे है सही, पर उसकी परिपूर्णता 'जातिदेशकाल-समयाऽनवच्छिन्ना' सार्वभौमा महाव्रतम्" योगसूत्र २—३१ मे तथा दशवैकालिक अध्ययन ४ आदि जैनशास्त्रप्रतिपादित महाव्रतोमे देखनेमे आती है।

3 योगसूत्रके तीसरे पादमे विभूतियोका वर्णन है, वे विभूतियाँ दो प्रकारकी हैं। १ वैज्ञानिक २ शारीरिक। अतीताऽनागतज्ञान सर्वभूतरुतज्ञान पूर्वजातिज्ञान, परचित्तज्ञान, भुवनज्ञान, ताराव्यूहज्ञान आदि ज्ञानविभूतियाँ हैं। अन्तर्धान, हस्तिबल, परकायप्रवेश अणिमादि ऐश्वर्य तथा रूपलावण्यादि कायसपत् इत्यादि शारीरिक विभूतियाँ हैं। जैनशास्त्रमे भी अवधिज्ञान मन पर्यायज्ञान जातिस्मरणज्ञान, पूर्वज्ञान आदि ज्ञानलब्धियाँ हैं, और आमौषधि, विप्रुडौषधि, श्लेष्मौषधि, सर्वौषधि, जघाचारण-विद्याचारण, वैक्रिय आहारक आदि शारीरिक लब्धियाँ हैं। देखो गा० ६९ ७० आवश्यकनिर्युक्ति लब्धि यह विभूतिका नामान्तर है।

4 योगभाष्य और जैनग्रन्थोंमे सोपक्रम निरुपक्रम आयुष्कर्मका स्वरूप बिल्कुल एकसा है, इतना ही नहीं बल्कि उस स्वरूपको दिखाते हुए भाष्यकारने यो. सू ३—२२ के भाष्यमे आर्द्र वस्त्र और तृणराशिके जो दो दृष्टान्त लिखे हैं, वे आवश्यकनिर्युक्ति (गाथा—९५६) तथा विशेषावश्यक भाष्य (गाथा—३० ६१) आदि जैनशास्त्रमे सर्वत्र प्रसिद्ध हैं, पर तत्त्वार्थ (अ० —२५२) के भाष्यमे उक्त दो दृष्टान्तोके उपरान्त एक तीसरा गणितविषयक दृष्टान्त भी लिखा है। इस विषयमे उक्त व्यासभाष्य और तत्त्वार्थभाष्यका शाब्दिक सादृश्य भी बहुत अधिक और अर्थसूचक है।

'यथाऽऽर्द्रवस्त्र वितानित लघीयसा कालेन शुष्येत् तथा सोपक्रमम्। यथा च तदेव सपिण्डित चिरेण सशुष्येद् एवं निरुपक्रमम्। यथा चाग्निः शुष्के कक्षे मुक्तो वातेन वा समन्ततो युक्त' क्षेपीयसा कालेन दहेत् तथा सोपक्रमम्। यथा वा स एवाऽग्निस्तृणराशौ क्रमशोऽवयवेषु न्यस्तश्चिरेण दहेत् तथा निरुपक्रमम्" योग ३—२२ भाष्य। यथाहि सहतस्य शुष्कस्यापि तृणराशेरवयवश क्रमेण दह्यमानस्य चिरेण दाहो भवति, तस्यैव शिथिलप्रकीर्णोपचितस्य सर्वतो युगपदादीपितस्य पवनोपक्रमाभिहतस्याशु दाहो भवति, तद्वत्। यथा वा सख्यानाचार्य करणलाघवार्थ गुणकारभागहाराभ्या राशिं छेदादेवापवर्तयति न च सख्येयस्यार्थस्याभावो भवति, तद्वदुपक्रमाभिहतो मरणसमुद्घातदु'खार्त्त' कर्मप्रत्ययमनाभोगयोगपूर्वक करणविशेषमुत्पाद्य फलोपभोगलाघवार्थं कर्मापवर्तयति न चास्य फलाभाव इति॥ किं चान्यत्। यथा वा धौतपटो जलार्द्र एव सहतश्चिरेण शोषमुपयाति। स एव च वितानित सूर्यरश्मिवाय्वभिहत क्षिप्र शोषमुपयाति।" तत्त्वा० अ० २—५२ भाष्य।

5 योगबलसे योगी जो अनेक शरीरोंका निर्माण करता है, उसका वर्णन योगसूत्र ४—४ में है, यही विषय वैक्रिय—आहारक—लब्धिरूपसे जैनग्रन्थोमे वर्णित है।

३ परिणामि-नित्यता अर्थात् उत्पाद, व्यय, ध्रौव्यरूपसे त्रिरूप वस्तु मान कर तदनुसार धर्मधर्मीका विचार[1] इत्यादि।

इसी विचारसमताके कारण श्रीमान् हरिभद्र जैसे जैनाचार्योंने महर्षि पतञ्जलिके प्रति अपना हार्दिक आदर प्रकट करके अपने योगविषयक ग्रन्थोंमें गुणग्राहकताका निर्भीक परिचय पूरे तौरसे दिया है[2], और जगह जगह पतञ्जलिके योगशास्त्रगत खास सांकेतिक शब्दोंका जैन संकेतोंके साथ मिलान करके संकीर्ण दृष्टिवालोंके लिये एकताका मार्ग खोल दिया है[3]। जैन विद्वान् यशोविजयवाचकने हरिभद्रसूरिसूचित एकताके मार्गको विशेष विशाल बनाकर पतञ्जलिके योगसूत्रको जैन प्रक्रियाके अनुसार समझानेका थोड़ा किन्तु मार्मिक प्रयास किया है[4]। इतना ही नहीं बल्कि अपनी बत्तीसियोंमें उन्होंने पतञ्जलिके योगसूत्रगत कुछ विषयोंपर खास बत्तीसियाँ भी रची हैं[5]। इन सब बातोंको संक्षेपमें बतलानेका उद्देश्य यही है कि महर्षि पतञ्जलिकी दृष्टिविशालता इतनी अधिक थी कि सभी दार्शनिक व साम्प्रदायिक विद्वान् योगशास्त्रके पास आते ही अपना साम्प्रदायिक अभिनिवेश भूल गये और एकरूपताका अनुभव करने लगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि महर्षि पतञ्जलिकी दृष्टि-विशालता उनके विशिष्ट योगानुभवका ही फल है, क्योंकि-जब कोई भी मनुष्य शब्दज्ञानकी प्राथमिक भूमिकासे आगे बढ़ता है तब वह शब्दकी पूंछ न खींचकर चिन्ताज्ञान तथा भावनाज्ञानके[6] उत्तरोत्तर अधिकाधिक एकतावाले प्रदेशमें अभेद आनंदका अनुभव करता है।

आचार्य हरिभद्रकी योगमार्गमें नवीन दिशा-श्रीहरिभद्र प्रसिद्ध जैनाचार्योंमें एक हुए। उनकी बहुश्रुतता, सर्वतोमुखी प्रतिभा, मध्यस्थता और समन्वयशक्तिका पूरा परिचय करानेका यहाँ प्रसंग नहीं है। इसके लिए

---

1 जैनशास्त्रमें वस्तुको द्रव्यपर्यायस्वरूप माना है। इसीलिये उसका लक्षण तत्त्वार्थ (अ० ५-२९) में "उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्" ऐसा किया है। योगसूत्र (३-१३, १४) में जो धर्मधर्मीका विचार है वह उक्त द्रव्यपर्यायउभयरूपता किंवा उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य इस त्रिरूपताका ही चित्रण है। भिन्नता सिर्फ दोनोंमें इतनी ही है कि-योगसूत्र सांख्यसिद्धान्तानुसारी होनेसे "ऋते चितिशक्तेः परिणामिनो भावाः" यह सिद्धान्त मानकर परिणामवादका अर्थात् धर्मलक्षणावस्था परिणामका उपयोग सिर्फ जड़भागमें अर्थात् प्रकृतिमें करता है, चेतनमें नहीं। और जैनदर्शन तो "सर्वे भावाः परिणामिनः" ऐसा सिद्धान्त मानकर परिणामवाद अर्थात् उत्पादव्ययरूप पर्यायका उपयोग जड़ चेतन दोनोंमें करता है। इतनी भिन्नता होनेपर भी परिणामवादकी प्रक्रिया दोनोंमें एक सी है।

2 उक्तं च योगमार्गज्ञैस्तपोनिर्धूतकल्मषैः। भावियोगिहितायोच्चैर्मोहदीपसमं वचः ॥
(योगबिं० श्लो ६) टीका 'उक्तं च निरूपितं पुनः योगमार्गज्ञैरध्यात्मविद्भिः पतञ्जलिप्रभृतिभिः ॥
"एतत्प्रधानः सच्छ्राद्धः शीलवान् योगतत्परः। जानात्यतीन्द्रियानर्थांस्तथा चाह महामतिः" ॥ (योगदृष्टिसमुच्चय श्लो १००) टीका 'तथा चाह महामतिः पतञ्जलिः'। ऐसा ही भाव गुणग्राही श्रीयशोविजयजीने अपनी योगावतारद्वात्रिंशिकामें प्रकाशित किया है। देखो-श्लो० २० टीका।

3 देखो योगबिन्दु श्लोक ४१८, ४२ । 4 देखो उनकी बनाई हुई पातञ्जलसूत्रवृत्ति।

5 देखो पातञ्जलयोगलक्षणविचार, ईशानुग्रहविचार, योगावतार क्लेशहानोपाय और योगमाहात्म्य द्वात्रिंशिका।

6 शब्द, चिन्ता तथा भावनाज्ञानका स्वरूप श्रीयशोविजयजीने अध्यात्मोपनिषद्में लिखा है, जो आध्यात्मिक लोगोंको देखने योग्य है। अध्यात्मोपनिषद् श्लो० ६५, ७४।

जिज्ञासु महाशय उनकी कृतियोंको देख लेवें। हरिभद्रसूरिकी शतमुखी प्रतिभाके स्रोत उनके बनाये हुए चार अनुयोगविषयक[1] ग्रन्थोंमें ही नहीं बल्कि जैन न्याय तथा भारतवर्षीय तत्कालीन समग्र दार्शनिक सिद्धांतोंकी चर्चावाले[2] ग्रन्थोंमें भी बहे हुए हैं। इतना करके ही उनकी प्रतिभा मौन न हुई उसने योगमार्गमें एक ऐसी दिशा दिखाई जो केवल जैन योगसाहित्यमें ही नहीं बल्कि आर्यजातीय संपूर्ण योगविषयक साहित्यमें एक नई वस्तु है। जैनशास्त्रमें आध्यात्मिक विकासके क्रमका प्राचीन वर्णन चौदह गुणस्थानरूपसे, चार ध्यान रूपसे और बहिरात्म आदि तीन अवस्थाओंके रूपसे मिलता है। हरिभद्रसूरिने उसी आध्यात्मिक विकासके क्रमका योगरूपसे वर्णन किया है। पर उसमें उन्होंने जो शैली रक्खी है वह अभीतक उपलब्ध योगविषयक साहित्यमेंसे किसी भी ग्रंथमें कमसे कम हमारे देखनेमें तो नहीं आई है। हरिभद्रसूरि अपने ग्रन्थोंमें अनेक योगियोंका नामनिर्देश करते हैं[3], एवं योगविषयक[4] ग्रन्थोंका उल्लेख करते हैं जो अभी प्राप्त भी नहीं हैं। संभव है उन अप्राप्य ग्रन्थोंमें उनके वर्णनकीसी शैली रही हो, पर हमारे लिये तो यह वर्णनशैली और योग विषयक वस्तु बिल्कुल अपूर्व है। इस समय हरिभद्रसूरिके योगविषयक चार ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं जो हमारे देखनेमें आये हैं। उनमेंसे षोडशक और योगविंशिकाके योगवर्णनकी शैली और योगवस्तु एक ही है। योगबिंदुकी विचारसरणी और वस्तु योगविंशिकासे जुदा है। योगदृष्टिसमुच्चयकी विचारधारा और वस्तु योगबिंदुसे भी जुदा है। इस प्रकार देखनेसे यह कहना पडता है कि हरिभद्रसूरिने एक ही आध्यात्मिक विकासके क्रमका चित्र भिन्न भिन्न ग्रन्थोंमें भिन्न भिन्न वस्तुका उपयोग करके तीन प्रकारसे खींचा है।

कालकी अपरिमित लंबी नदीमें वासनारूप संसारका गहरा प्रवाह बहता है, जिसका पहला छोर [मूल] तो अनादि है, पर दूसरा [उत्तर] छोर सान्त है। इसलिये मुमुक्षुओंके वास्ते सबसे पहले यह प्रश्न बडे महत्त्वका है कि उक्त अनादि प्रवाहमें आध्यात्मिक विकासका आरंभ कबसे होता है? और उस आरंभके समय आत्माके लक्षण कैसे हो जाते हैं? जिनसे कि आरंभिक आध्यात्मिक विकास जाना जा सके। इस प्रश्नका उत्तर आचार्यने योगबिंदुमें दिया है। वे कहते हैं कि–" जब आत्माके ऊपर मोहका प्रभाव घटनेका आरंभ होता है तभीसे आध्यात्मिक विकासका सूत्रपात हो जाता है। इस सूत्रपातका पूर्ववर्ती समय जो आध्यात्मिकविकासरहित होता है, वह जैनशास्त्रमें अचरमपुद्गलपरावर्तके नामसे प्रसिद्ध है। और उत्तरवर्ती समय जो आध्यात्मिक विकासके क्रमवाला होता है, वह चरमपुद्गलपरावर्तके नामसे प्रसिद्ध है। अचरमपुद्गलपरावर्तन और चरमपुद्गलपरावर्तनकालके परिमाणके बीच सिंधु[5] और बिंदुका सा अंतर होता है। जिस आत्माका संसारप्रवाह चरमपुद्गलपरावर्तपरिमाण शेष रहता है, उसको जैन परिभाषामें 'अपुनर्बंधक' और सांख्यपरिभाषामें 'निवृत्ताधिकार प्रकृति' कहते हैं[6]। अपुनर्बन्धक या निवृत्ताधिकारप्रकृति आत्माका आंतरिक परिचय इतना ही है कि उसके ऊपर मोहका दबाव कम होकर उलटे मोहके ऊपर उस आत्माका दबाव शुरू होता है। यही आध्यात्मिक विका-

---

1 द्रव्यानुयोगविषयक–धर्मसंग्रहणी आदि १ गणितानुयोगविषयक–क्षेत्रसमास टीका आदि २, चरणकरणानुयोगविषयक–पञ्चवस्तु, धर्मबिंदु आदि ३, धर्मकथानुयोगविषयक–समराइच्चकहा आदि ४ ग्रन्थ मुख्य हैं।

2 अनेकान्तजयपताका, षड्दर्शनसमुच्चय, शास्त्रवार्तासमुच्चय आदि।

3 गोपेन्द्र (योगबिन्दु श्लोक २००) कालातीत (योगबिन्दु श्लोक ३००)। पतञ्जलि, भदन्तभास्करबन्धु भगवदन्त (त्त) वादी (योगदृष्टि० श्लोक १६ टीका)।

4 योग–निर्णय आदि (योगदृष्टि० श्लोक १ टीका)

5 देखो मुक्त्यद्वेषद्वात्रिंशिका २८। 6 देखो योगबिंदु १७८, २०१।

सका बीजारोपण है। यहींसे योगमार्गका आरंभ हो जानेके कारण उस आत्माकी प्रत्येक प्रवृत्तिमें सरलता नम्रता, उदारता, परोपकारपरायणता आदि सदाचार वास्तविक रूपमें दिखाई देते हैं जो उस विकासोन्मुख आत्माका बाह्य परिचय है'। इतना उत्तर देकर आचार्यने योगके आरंभसे लेकर योगकी पराकाष्ठा तकके आध्यात्मिक विकासकी क्रमिक वृद्धिको स्पष्ट समझानेके लिये उसको पाँच भूमिकाओंमें विभक्त करके हर एक भूमिकाके लक्षण बहुत स्पष्ट दिखाये हैं1, और जगह जगह जैन परिभाषाके साथ बौद्ध तथा योगदर्शनकी परिभाषाका मिलान करके2 परिभाषाभेदकी दिवारको तोड़कर उसकी ओटमें छिपी हुई योगवस्तुकी भिन्नभिन्न शास्त्रसम्मत एकरूपताका स्फुट प्रदर्शन कराया है। अध्यात्म, भावना, ध्यान, समता और वृत्तिसंक्षय ये योगमार्गकी पाँच भूमिकायें हैं। इनमेंसे पहली चारको पतञ्जलि संप्रज्ञात और अन्तिम भूमिकाको असंप्रज्ञात कहते हैं3। यही संक्षेपमें योगबिन्दुकी वस्तु है।

योगदृष्टिसमुच्चयमें आध्यात्मिक विकासके क्रमका वर्णन योगबिन्दुकी अपेक्षा दूसरे ढंगसे है। उसमें आध्यात्मिक विकासके प्रारंभके पहलेकी स्थितिको अर्थात् अचरमपुद्गलपरावर्तपरिमाण संसारकालीन आत्माकी स्थितिको ओघदृष्टि कहकर उसके तरतम भावको अनेक दृष्टान्त द्वारा समझाया है4, और पीछे आध्यात्मिक विकासके आरंभसे लेकर उसके अन्ततकमें पाई जानेवाली योगावस्थाको योगदृष्टि कहा है। इस योगावस्थाकी क्रमिक वृद्धिको समझानेके लिये संक्षेपमें उसे आठ भूमिकाओंमें बाँट दिया है। वे आठ भूमिकायें उस ग्रन्थमें आठ योगदृष्टिके नामसे प्रसिद्ध हैं5। इन आठ दृष्टियोंका विभाग पातञ्जलयोगदर्शनप्रसिद्ध यम, नियम, आसन, प्राणायाम आदि आठ योगाङ्गोंके आधार पर किया गया है, अर्थात् एक एक दृष्टिमें एक एक योगाङ्गका सम्बन्ध मुख्यतया बतलाया है। पहली चार दृष्टियाँ योगकी प्रारंभिक अवस्थारूप होनेसे उनमें अविद्याका अल्प अंश रहता है। जिसको प्रस्तुत ग्रन्थमें अवेद्यसंवेद्यपद कहा है6। अगली चार दृष्टियोंमें अविद्याका अंश बिलकुल नहीं रहता। इस भावको आचार्यने वेद्यसंवेद्यपद शब्दसे जनाया7 है। इसके सिवाय प्रस्तुत ग्रन्थमें पिछली चार दृष्टियोंके समय पाये जानेवाले विशिष्ट आध्यात्मिक विकासको इच्छायोग, शास्त्रयोग और सामर्थ्ययोग ऐसी तीन योग भूमिकाओंमें विभाजित करके उन तीनों योगभूमिकाओंका बहुत रोचक वर्णन किया है8।

आचार्यने अन्तमें चार प्रकारके योगियोंका वर्णन करके योगशास्त्रके अधिकारी कौन हो सकते हैं, यह भी बतला दिया है। यही योगदृष्टिसमुच्चयकी बहुत संक्षिप्त वस्तु है।

योगविंशिकामें आध्यात्मिक विकासकी प्रारंभिक अवस्थाका वर्णन नहीं है, किन्तु उसकी पुष्ट अवस्थाओंका ही वर्णन है। इसीसे उसमें मुख्यतया योगके अधिकारी त्यागी ही माने गये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थमें त्यागी गृहस्थ और साधुकी आवश्यक क्रियाको ही योगरूप बतलाकर उसके द्वारा आध्यात्मिक विकासकी क्रमिक वृद्धिका वर्णन किया है। और उस आवश्यक क्रियाके द्वारा योगको पाँच भूमिकाओंमें विभाजित किया है। ये पाँच भूमिकायें उसमें स्थान, ऊर्ण, अर्थ, आलम्बन और निरालम्बन नामसे प्रसिद्ध हैं। इन पाँच भूमिकाओंमें कर्मयोग और ज्ञानयोगकी घटना करते हुए आचार्यने पहली दो भूमिकाओंको कर्मयोग और पिछली तीन भूमिकाओंको ज्ञानयोग कहा है। इसके सिवाय प्रत्येक भूमिकामें इच्छा, प्रवृत्ति, स्थैर्य और सिद्धिरूपसे आध्यात्मिक विकासके तरतम भावका प्रदर्शन कराया है और उस प्रत्येक भूमिका तथा

---

1 योगबिंदु, ३१, ३५७, ३५८, ३६१, ३६३, ३६५।

2 "यत्सम्यग्दर्शनं बोधिस्तत्प्रधानो महोदयः। सत्त्वोऽस्तु बोधिसत्त्वस्तद्धन्तैषोऽन्वर्थतोऽपि हि ॥ २७३॥ वरबोधिसमेतो वा तीर्थकृद्यो भविष्यति। तथाभव्यत्वतोऽसौ वा बोधिसत्त्वः सतां मतः" ॥ २७४॥ योगबिन्दु।

3 देखो योगबिंदु ४१८, ४२०।

4 देखो, योगदृष्टिसमुच्चय १४। 5 १३। 6 ७५। 7 ७३। 8 २–१२।

इच्छा प्रवृत्ति आदि अवान्तर स्थितिका लक्षण बहुत स्पष्टतासे वर्णन किया है[1]। इस प्रकार इन पाँच भूमिकाओंकी अन्तर्गत भिन्न भिन्न स्थितियोंका वर्णन करके योगके अस्सी भेद किये हैं, और उन सबके लक्षण बतलाये हैं, जिनको ध्यानपूर्वक देखनेवाला यह जान सकता है कि मैं विकासकी किस सीढ़ीपर खड़ा हूँ। यही योगविंशिकाकी संक्षिप्त वस्तु है।

उपसंहार—विषयकी गहराई और अपनी अपूर्णताका खयाल होते हुए भी यह प्रयास इस लिये किया गया है कि अबतकका अवलोकन और स्मरण संक्षेपमें भी लिपिबद्ध हो जाय, जिससे भविष्यत्‌में विशेष प्रगति करना हो तो इस विषयका प्रथम सोपान तैयार रहे। इस प्रवृत्तिमें कई मित्र मेरे सहायक हुए हैं जिनके नामोल्लेख मात्रसे मैं कृतज्ञता प्रकाशित करना नहीं चाहता। उनकी आदरणीय स्मृति मेरे हृदयमें अखंड रहेगी।

पाठकोंके प्रति एक मेरी सूचना है। वह यह कि इस निबंधमें अनेक शास्त्रीय पारिभाषिक शब्द आये हैं। खासकर अन्तिम भागमें जैन-पारिभाषिक शब्द अधिक हैं, जो बहुतोंको कम विदित होंगे। उनका मैंने विशेष खुलासा नहीं किया है, पर खुलासावाले उस उस ग्रन्थके उपयोगी स्थलोंका निर्देश कर दिया है जिससे विशेष जिज्ञासु मूलग्रन्थद्वारा ही ऐसे कठिन शब्दोंका खुलासा कर सकेंगे। अगर यह संक्षिप्त निबंध न हो कर स्वतंत्र पुस्तक होती तो इसमें विशेष खुलासाका भी अवकाश रहता।

इस प्रवृत्तिके लिये मुझको उत्साहित करनेवाले गुजरात पुरातत्त्व संशोधन मंदिरके मंत्री परीख रसिकलाल छोटालाल हैं जिनके विद्याप्रेमको मैं नहीं भूल सकता।

संवत् १९७८ पौष
वदि ९
भावनगर

लेखक—
सुखलाल संघजी.

1 योगविंशिका गा० ५, ६।

कुरपाल सोणपाल प्रशस्ति

(लेखक—बनारसी दास जैन, एम० ए०, ओरियन्टल कालेज, लाहौर)

१ सन १९२० में एस० एम० जैन कानफ्रेन्स की तरफ से इन्दौर वासी सेठ केसरी चन्द भण्डारी ने मुझे लिखा कि उक्त कान्फ्रेन्स का जो प्राकृत कोश बन रहा है आप उसे देख कर उस के विषय में अपनी तथा अन्य प्राकृत विद्वानों की सम्मति लेकर लिखें। इस सम्बन्ध में मुझे उस साल कई नगरों में जाना पड़ा। जब मैं आगरे में था तो मेरा समागम प० सुखलालजी से हुआ उन्हों ने मुझे बतलाया कि यहां के मन्दिर में एक नया शिला लेख निकला है [1] जिसको अभी किसी ने नहीं देखा। मैं मुनि प्रतापविजयजी को साथ लेकर उसे देखने गया। परन्तु उस समय छाप उतारने की सामग्री विद्यमान न थी इस लिये उस समय मै वहां अधिक ठहरा भी नहीं क्योंकि लेख को देखने के दो तीन घंटे पीछे मैं वहां से चल पड़ा था।

२ फिर अप्रैल सन १९२१ में मैं पंजाब यूनिवर्सिटी के एम ए तथा बी ए क्लासों के संस्कृत विद्यार्थियों को लेकर कलकत्ता, पटना, लखनऊ आदि बड़े बड़े नगरों के अजायब घर (Museums) देखने जा रहा था, तब आगरे में भी ठहरा और उपरोक्त शिलालेख की छाप तय्यार की, परन्तु अब वहां न तो प सुखलालजी थे न ही मुनि प्रतापविजयजी थे। बाबू दयालचन्दजी भी कारण वश बाहिर गए हुए थे। इन के अतिरिक्त और कोई श्रावक मुझ से परिचित न थे इसलिये उस वक्त वह छाप मुझ को न मिल सकी। अब कलकत्ता निवासी श्रीयुत बाबू पूरणचन्द नाहर द्वारा मैं ने वह छाप प्राप्त की है और उसी के आधारपर पाठकों को इस शिलालेख का परिचय दे रहा हूं।

३ यह लेख लाल पत्थर की शिला पर खुदा हुआ है जो लग भग दो फुट लम्बी और डेढ़ फुट चौड़ी है। लेख खोदने से पहिले शिला के चारों ओर दो दो इंच का हाशिया (margin) छोड़ कर रेखा डाल दी गई है। रेखा के बाहिर ऊपर की तरफ "पातसाहि श्री जहांगीर" उभरे हुए अक्षरों में खुदा हुआहै। बाकी का सारा लेख गहिरे अक्षरों में खुदा हुआ है। रेखाओं के अन्दर लेख की ३३ पंक्तियां हैं मगर उन में लेख समाप्त न हो सका इस लिये रेखाओं के बाहिर नीचे दो पंक्तियां (न ३४ और ३८) दाईं ओर एक पंक्ति (नं० ३९) और बाईं ओर दो पंक्तियां [नं० ३६—३७] और खोदी गई हैं। शिला के दाईं ओर नीचे का कुछ भाग टूट गया है जिस से लेख की पंक्ति २८—३४ और ३८ के अन्त के आठ नौ अक्षर और पंक्ति ३९ के आदि के १४, १५ अक्षर टूट गए हैं। इस से कुँवरपाल सोनपाल के उस समय वर्तमान परिवार के प्राय सब नाम नष्ट हो गए हैं। पंक्ति ३६—३७ के भी कुछ अक्षर दब नहीं गए।

---

1 मन्दिर की एक कोठड़ी में बहुत से पत्थर पड़े थे। जब अप्रैल मई सन् १९२० में उन पत्थरों को निकालने लगे तो उन में से यह लेख भी निकला। अब यह शिला लेख मन्दिर में ही पड़ा है॥

४. लेख के अक्षर शुद्ध जैन लिपि के है जो कि हस्त लिखित पुस्तकों (Mss.) में पाए जाते है। पुस्तकों की भाति लेख की आदि में 'ई०' यह चिन्ह है जो शायद 'ओम्' शब्द का द्योतक है, क्योंकि प्राचीन शिलालेख तथा ताम्रशासनों में 'ओम्' के लिये कुछ ऐसा ही चिन्ह हुआ करता था। 'च' और 'व' की आकृति बहुत कुछ मिलती जुलती है। पक्ति ६ और ८ में मार्ग और वर्ग शब्दों में 'म' के लिये 'ग्र' 1 चिन्ह आया है जो जैन लिपि का खास चिन्ह है।

५. वर्णविन्यास (Spelling) में विशेपता यह है कि "परसवर्ण" कहीं नहीं किया गया अर्थात् स्पर्शीय अक्षरों के पूर्व नासिक्य के स्थान में सर्वदा अनुस्वार लिखा गया है जैसे पक्ति २ में पङ्कज, विम्व, चन्द्र के स्थान में पंकज, विंव, चंद्र लिखे है। इसी प्रकार श्लोकार्ध वा श्लोक के अन्त में म् के स्थान में अनुस्वार ही लिखा है जैसे पंक्ति १६ में अठारहवें अर्धश्लोक के अन्त में 'श्रुत्वा कल्याणदेशना।' पंक्ति २० अर्धश्लोक २१ 'वित्तवीजमनुत्तर।' पंक्ति २२ श्लोकान्त २३ 'चित्तरजक।' पंक्ति २६ श्लोकान्त २८ 'कारित।' इत्यादि। पक्ति ५ में षट्त्रिंशत् के स्थान में षड्त्रिंशत् लिखा है। विराम का चिन्ह '।' श्लोकपादों के अन्त में भी लगाया है, कहीं कहीं पक्ति के अन्त में अक्षर के लिये पूरा स्थान न होने से विराम लिख दिया है जैसे पक्ति ७, ९, १२, १९ आदि में।

६. पट्टावलि को छोड़ कर बाकी तमाम लेख श्लोकबद्ध है। इसकी भाषा शुद्ध संस्कृत है परन्तु पंक्ति १९ में पति शब्द का सप्तमी एक वचन 'पतौ' लिखा है जो व्याकरण की रीति से 'पत्यौ' होना चाहिये था। यद्यपि पंक्ति १६ में 'कारिता' और पक्ति २६ में 'कारितं' शब्द आए है तथापि पक्ति ३२ में कारिता के लिये 'कारापिता' लिखा है। यह शब्द जैन लेखकों के संस्कृत ग्रन्थो में बहुधा पाया जाता है और प्राकृत से सस्कृत प्रयोग बना है। पंक्ति १७ में प्राकृत शैली से आनन्द श्रावक का नाम 'आणद' लिखा है और पंक्ति ११ में 'उत्सुकौ' के स्थान में 'उच्छुकौ' शब्द प्रतीत होता है।

७. यह प्रशस्ति जहागीर बादशाह के समय की है। विक्रम सं० १६७१ में आगरा निवासी कुरपाल सोनपाल नाम के दो भाइयो ने वहा श्री श्रेयांस नाथ जी का मन्दिर बनवाया था जिस की प्रतिष्ठा अचल गच्छ के आचार्य श्री कल्याणसागर जी ने कराई थी। उस समय यह प्रशस्ति लिखी गई। मन्दिर की प्रतिष्ठा के साथ ४५० अन्य प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा भी हुई थी जिन में से ६, ७ प्रतिमाओं के लेख बाबू पूर्णचन्द नाहर ने अपने "जैन लेख संग्रह" में दिये है। (देखिये उक्त पुस्तक, लेख नं० ३०७–३१२. ४३३)। इन लेखों से कुंरपाल सोनपाल के पूर्वजो का कुछ हाल मालूम नहीं होता लेकिन प्रशस्ति में उन की वंशावलि इस प्रकार दी है।

1 डाक्टर वेबर (Weber) इसको ग्र (ग्‌र) पढते है जैसा कि वर्लिन नगर के जैन पुस्तको की सूचि के पृष्ट ५७६ पर आए pograla शद्ब से स्पष्ट प्रतीत होता है, वास्तव मे यह शद्ब पोग्गल (Poggla.) है। इसी प्रकार पृष्ठ ५२५ पर मियग्गाम को miyagrama (मियग्राम) लिखा है। Weber's datalogue of-Crakrit Mss in the Royal Lidrary at Berlin.

१२ अत में मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि इस प्रशस्ति के सबध में दो बातों की अधिक खोज आवश्यक है एक तो यह कि मुगल बादशाहों के इतिहास म कु[व]रपाल और सोनपाल या उन के पिता का नाम ढूंढना चाहिये, और दूसरी यह कि वैसाख सुदि ३ को बृहस्पति और शनि क्योंकर हो सक्ते हैं, इस का समाधान करना चाहिये ॥

[--१३ मूर्तियों के लेख जैन लेख सग्रह पृष्ठ ७८, ७९, १०९

न० ३०७ सम्वत १६७१ आगरावास्तव्य ओसवाल ज्ञातीय लोढा गोत्रे गाणी वसे स० ऋषभदास भार्या सु रेष श्री तत्पुत्र सघराज स० रूपचन्द चतुर्भुज स० धनपालादि युते श्री मदचल गच्छे पूज्य श्री ५ धर्ममूर्ति सूरि त(त् पट्टे पूज्य श्री कल्याणसागर सूरीणामुपदेशेन विद्यमान श्री विसाल जिनबिंब प्रति

न० ३०८ सवत १६७१ वर्ष ओसवाल ज्ञातीय लोढा गोत्रे गाणी वसे साह कुरपाल[1] स० सोनपाल प्रति० अचलगच्छे श्री कल्याणसागर सूरीणामुपदेशेन वासुपूज्यबिंब प्रतिष्ठापित ॥

न० ३०९ ॥ श्रीमत्सवत १६७१ वर्ष वैशाष सुदि ३ शनौ आगरा वास्तव्योसवाल ज्ञातीय लोढा गोत्रे गावमे सघपति ऋषभदास भा० रेषश्री पुत्र स० कुरपाल स० सोनपाल प्रवरौ स्वपितृ ऋषभदास पुन्यार्थं श्रीमदचलगच्छे पूज्य श्री ५ कल्याणसागरसूरीणामुपदेशेन श्री पद्म प्रभु जिनबिंब प्रतिष्ठापित स० भागाष्टन ॥

न० ३१० श्रीमत्सवत १६७१ वर्षे वैशाष सुदि ३ शनौ श्री आगरावास्तव्य उपकेस ज्ञातीय लोढा गोत्र सा० प्रेमन भार्या शक्तादे पुत्र सा० षेतसी लघुभ्राता सा० नेतसी[2] सुतेन श्री मदचलगच्छे पूज्य श्री ५ कल्याणसागरसूरीणामुपदेशेन श्री वासपूज्यबिंब प्रतिष्ठापित स० कुर पाल स० सोनपाल प्रतिष्ठित।

व्यूलर—उक्त (Epig Ind) Jaina inscriptions from Satrunjaya, Nos XXI XXVII, और CX

XXI यह लेख स० १६७५ का है—

श्रीसिंहप्रभसूरीणा सूरयोऽजितसिंहका । श्रीमद्देवेन्द्रसूरीशा श्रीधर्मप्रभसूरय ॥ ८ ॥
श्रीसिंहतिलकाह्वाश्च श्रीमहेन्द्रप्रभाभिधा । श्रीमन्तो मेरुतुङ्गाख्या बभूवु सूरयस्तत ॥ ९ ॥

XXVII यह लेख स १६८३ का है—

तेभ्य क्रमेण गुरवो जिनसिंहगोत्रा बभूवुरथ पूज्यतमा गणेशा ॥
देवेन्द्रसिंहगुरवोऽखिललोकमान्या धर्मप्रभा मुनिवरा विधिपक्षनाथा ॥ ९ ॥
पूज्याश्च सिंहतिलकास्तदनु प्रभूत-भाग्या महेन्द्रविभवा गुरवो बभूवु ॥
चक्रेश्वरी भगवती विहितप्रसादा श्रीमेरुतुङ्गगुरो नरदेववन्द्या ॥ १० ॥

CX यह लेख स १९२१ का है। इस में आचार्य कल्याणसागर तक लेख न XXVII के ही श्लोक उद्धृत किए हैं। इन लेखों की भाषा जैन सस्कृत है।

1 सिवाय लेख ४३३ के और सब जगह कुर को कर या कुर पढ़ा है।

2 प्रशस्ति में तथा मूर्ति के अन्य लेखों मे नेतसी।

नं० ३११. श्रीमत्संवत् १६७१ वैशाष सुदि ३ शनौ श्री आगरानगरे ओसवाल ज्ञाती लोढा गोत्रे—गावसे सा० पेमन भार्या श्री शक्तादे पुत्र सा० पेतसी भा० भक्तादे पुत्र सा०—सांग—श्रा अंचलगच्छे पूज्य श्री ५ कल्याणसागरसूरीणामुपदेशेन श्री विमलनाथ बिंबं प्रतिष्ठापित सा० कुंरपाल.... ।

नं० ३१२ [सं० १६७१] ॥ संघपति श्री कुंरपाल स० सोनपालै स्वमातृपुन्यार्थं श्री अंचलगच्छे पूज्य श्री ५ श्री धर्ममूर्तिसूरि पट्टाम्बुजहस श्री ५ श्री कल्याणसागरसरीणामुपदेशेन श्रीपार्श्वनाथबिंबं प्रतिष्ठापितं पूज्यमानं चिरं नंदतु ॥

नं० ४३३. श्रीमत्संवत १६७१ वर्षे वैशाष सुदि ३ शनौ श्री आगरावास्तव्योसवाल ज्ञातीय लोढा गोत्रे गाव—ञा स० ऋषभदास भार्या रेषश्री तत्पुत्र श्री कुंरपाल सोनपाल संघाधिपे स्वानुजवर दुनीचंदस्य पुण्यार्थं उपकाराय श्री अंचलगच्छे पूज्य श्री ५ कल्याणसागरसूरीणामुपदेशेन श्री आदिनाथबिंबं प्रतिष्ठापितं ॥]

प्रशस्ति की नकल

(नोट·— [ ] इन चिन्हों मे दिये अक्षर टूट गए हैं या साफ नहीं पढे जाते)

॥ पातसाहि श्री जहांगी[र] ॥

१. ॥ ॐ ॥ श्री सिद्धेभ्यो नम ॥ स्वस्ति श्री विष्णुपुत्रो निखिलगुणयुत· पारगो वीत-राग । पायाद् व· क्षीणकर्म्मा सुरशिखरिसम क [ल्प]—

२. तीर्थप्रदाने ॥ श्री श्रेयान् धर्म्ममूर्तिर्भविकजनमन·पंकजे विम्व[1]भानु । कल्याणाम्भोधिचन्द्रः सुरनरनिकरैः सेव्य [मा]—

३. न कृपालु ॥ १ ॥ ऋषभप्रमुखा. सार्वा[2] । गौतमाद्या मुनीश्वरा । पापकर्म्मविनिर्मुक्ता. क्षेमं कुर्व्वन्तु सर्वदा ॥ २ ॥ कुंर—

४. पालस्वर्ण्णपालौ । धर्मकृत्यपरायणौ । स्ववंशकुजमार्त्तण्डौ । प्रशस्तिर्लिख्यते तयो· ॥ ३ ॥ श्रीमति हायने रम्ये चन्द्रर्षिरस—

५. भूमिते १६७१ । षड्[3]त्रिंशत्तिथिशाके १५३६ विक्रमादित्यभूपते ॥ ४ ॥ राधमासे वस-न्तर्त्तौ शुक्लाया तृतीयातिथौ । युक्ते तु

६. रोहिणीभेन निर्दोषे गुरुवासरे ॥ ५ ॥ श्री मदञ्चल[4]गच्छाख्ये । सर्वगच्छावतंसके । सिद्धान्ताख्यातमार्ग्गेण । राजिते विश्वविस्तृते । ६ । उग्रसे—

---

1 लेख में विंव

2 विसर्ग खोदकर काटी गई है जिस से विराम सा प्रतीत होता है ।

3 षट्० चाहिये ।

4 " ल " खोदने से रह गया था । पीछे च ग के नीचे खोदा गया है ।

5 ग्ग के लिये ग्र चिन्ह लिखा गया है ।

७ मपुरे रम्ये निरातङ्करसाश्रये । प्रासादमन्दिराकीर्ण्णे । सञ्जातौ ह्युपकेशवे । ७ । लोग
गोत्रे विरम्वौंस्त्रिजगति सुयशा ब्रह्मच–
८ र्योग्युक्त । श्रीश्रङ्गख्यातनामा गुरुवचनयुत कामदेवादितुल्य । जीवाजीवादितत्वे पर
रुचिरमतिर्लोक्वर्मेपु याव–। जीया–
९ श्चन्द्रार्कबिम्ब परिकरभृतकै सेवितस्त्व मुदा हि । ८ । लोग सतानविज्ञातो । ९नराजे।
गुणान्वित । द्वादशव्रतधारी च । शुभ–
१० कर्म्मणि तत्पर । ९ । तत्पुत्रो वेसराजश्च । दयावान् सुजनप्रिय । तूर्यव्रतधर श्रीमान्
चातुर्यादिगुणैर्युत । १० । तत्पुत्रौ द्वा–
११ वभूता च । सुरागावर्धितौ सदा । जेठू श्रीरङ्गगोलौ च । जिनाज्ञापालनोच्छुकौ[1] । ११ ।
तौ जीणासीहमल्लाख्यौ जेठ्वात्मजौ बभूवतु–
१२ । धर्म्मविदौ च दक्षौ च । महापूज्यौ यशोधनौ । १२ । आसीच्छ्री[2]रङ्गजो नून जिन
पादार्चने रत । मनीषी सुमना भव्यो राजपा–
१३ ल उदारधी । १३ । आर्या । धनदौ चर्षभदास । पेमाख्यौ विविधसाग्यधनयुक्तौ ।
आस्ता प्राज्ञौ दौ च तत्त्वज्ञौ तौ तु तत्पु–
१४ त्रौ । १४ । रेपाभिधस्तयोर्ज्येष्ठ । कल्पद्रुरिव सर्वद । राजमान्य कुलाधारो ।
दयालुर्धर्म्मकर्म्मठ । १५ । रेपश्रीस्तत्प्रिया
१५ भार्या । शीलालङ्कारधारिणी । पतिव्रता पतौ[3] रक्ता । सुलशारेवतीनिभा । १६ । श्री
पद्मप्रभविम्वस्य नवीनस्य जिनाल–
१६ ये । प्रतिष्ठा कारिता येन सत्श्राद्धगुणशालिना[4] । १७ । लब्धौ तूर्यव्रत यस्तु । श्रुत्वा
कल्याणदेशना । राजश्रीनन्दन
१७ श्रेष्ठ । आनन्द[5]श्रावकोपम । १८ । तत्सुनु कुरपाल । किल विमलमति स्वर्णपालो
द्वितीय–। श्चातुर्यौदार्यधैर्यप्रमु–
१८ खगुणनिधिर्भाग्यसौभाग्यशाली । तौ द्वौ रूपाभिरामौ । विविधजिनवृषध्यानकृत्यैकनिष्ठौ ।
त्यागे कर्ण्णावतारौ निज–
१९ कुलतिलकौ वस्तुपालोपमार्हौ । १९ । श्री जहागीरभूपालामात्यौ धर्म्मधुरन्धरौ । धनिनौ
पुण्यकर्त्तारौ । विख्यातौ भ्रा–
२० तरौ भुवि । २० । याम्यामुप्त नवक्षेत्रे । वित्तबीजमनुत्तरम् । तौ धन्यौ कामदौ लोके ।
लोढागोत्रावतसकौ । २१ । अवा–

---

1 च्छ के लिये जैन लिपि का चिन्ह ।
2 लेख में आसीच्छ्रीरग० लिखा है ।
3 पत्यौ होना चाहिये था ।
4 सच्छ्राद्ध या सच्छ्राद्ध० होना चाहिये था ।
5 लेख में आणद० लिखा है ।

२१. प्य शासन चारु । जहागीरपतेर्नेनु । कारयामासतुर्धर्म्म । क्रियासर्वं सहोदरौ । २२ । शाला पोपधपूर्वा वै यकाभ्या सा[1]

२२. विनिर्मिता । अधित्यकात्रिकं यत्र राजते चित्तरञ्जकम् । २३ । समेताशिखरे भव्ये शत्रुञ्जयेर्वुदाचले । अन्येष्वपि च तीर्थेषु गि–

२३. रिनारिगिरौ[2] तथा । २४ । सङ्घाधिपत्यमासाद्य । ताभ्या यात्रा कृता मुदा । महर्द्ध्या सर्वसामग्र्या । शुद्धसम्यक्त्वहेतवे । २५ । तुरङ्गा–

२४. णा शत कान्त । पञ्चविंशतिपूर्वकम् । दत्त तु तीर्थयात्रायै । गजाना पञ्चविंशति. । २६ । अन्यदपि धनं वित्तं । प्रत्तं सख्यातिगं खलु

२५. अर्जयामासतु. कीर्ति-। मित्थं तौ वसुधातले । २७ । उत्तुङ्ग गगनालम्बि । सच्चित्रं सध्वजं परम् । नेत्रासेचनकं ताभ्या । युग्म चैत्य–

२६ स्य[3] कारितम् । २८ । अथ गद्यम् । श्री अञ्चलगच्छे । श्री वीरादष्टचत्वारिंशत्तमे पट्टे । श्रीपावकगिरौ श्रीसीमन्धरजिनवचसा श्रीचक्रे [श्वरीद]–

२७. त्तवरा. । सिद्धान्तोक्तमार्गप्ररूपका । श्रीविधिपक्षगच्छसंस्थापका: । श्रीआर्यरक्षित सूरय-१ । स्तत्पदे श्रीजयसिंहसूरि [२ श्री धर्म घो]–

२८ पसूरि ३ श्रीमहेन्द्रसूरि ४ श्रीसिंहप्रभसूरि ५ श्री जिनसिंहसूरि ६ श्रीदेवेन्द्रसिंहसूरि ७ श्रीधर्मप्रभसूरि ८ श्री[सिंहतिलकसू]—

२९. रि ९ श्रीमहेन्द्रप्रभसूरि १० श्रीमेरुतुङ्गसूरि ११ श्रीजयकीर्त्तिसूरि १२ । श्रीजयकेशरिसूरि १३ श्रीसिद्धान्तसागर [सूरि १४ श्री भावसा]

३०. गरसूरि १५ श्रीगुणनिधानसूरि १६ श्रीधर्म्ममूर्तिसूरय १७ स्तत्पट्टे सम्प्रति विराजमाना । श्रीभट्टारक पुरवरा [– – – – – – – – –][4]

३१ णय श्रीयुगप्रधाना । पूज्य भट्टारक श्री ५ श्री कल्याणसागर सूरय १८ स्तेषामुपदेशेन श्रीश्रेयासजिनबिम्बा [दीना – – – – – – –][5]

३२. कुरपालसोनपालाभ्या प्रतिष्ठा कारापिता । पुन. श्लोका: । श्रीश्रेयासजिनेशस्य बिम्ब स्थापितमुत्तम प्रति [ि – – – – – – – – –•]

३३. णामुपदेशत· । २९ । चत्वारि शतमानानि । सार्धान्युपरि[6] तत्क्षणे । प्रतिष्ठितानि बिम्बानि जिनाना सौख्यकारि [णाम् । ३० । – – – –]

---

1 सा शब्द का I चिन्ह २२ वी पक्ति मे है ।

2 गिरिनार० चाहिये था क्यो कि यह शब्द गिरिनगर का अपभ्रश है ।

3 चैत्ययो चाहिये था ।

4 यहा से सात आठ अक्षर टूट गए हैं ।

5 यहा से पाच अक्षर टूट गए हैं ।

6 सार्द्धा० लिखा है ।

३४ तु लेभाते । प्राज्यपुण्यप्रभावत देवगुर्व्वा सदा भक्तौ । शश्वत्तौ नन्दतां चिरम् । ३१ । अथ तयो परिवार । संघराज [- - - - । - -1

३५ - - - - - - । - - - - - - - - - । - - - - - - - - - । ३२ । सुनव स्वर्णपाल - । - - - - [चतुर्भुज] - - - - - - - - - [पुत्री] युगळमुत्तमम् । ४३ । प्रेमनस्य त्रय पु [त्रा - - -]

३६ पेतसी तथा । नेतसी विद्यमानस्तु सच्छीलेन सुदर्शन । ३४ । धीमत संघराजस्य । तेजस्विनो यशस्विन । चत्वारस्तनुज मान - - - - - - - मता ।३५कुरपालस्य स—

३७ द्भार्या । - - - - - - - - - । - - - - - - - - - । - - - - पतिप्रिया । ३६ । तदङ्गजास्ति गम्भीरा जादो नाम्नी [स] - - - । - - - - - - - - - ज्येष्ठमल्लो गुणाश्रय । ३७ ।

३८ संघश्रीसुलतश्रीर्दो । दुर्गश्रीप्रमुखैर्निजै । वधूजनैर्युतौ भातां । रेषश्री न दनौ सदा । ३८ । भूमण्डलसमारङ्ग । सिध्दर्केयुक्त [- - - । - - - - - - - - - । - - - - - - - - - - । ३८] 2

लेख का सारांश

(लेख की भाषा सरल होने के कारण पूरा अनुवाद नहीं दिया)

पंक्ति १–३ मंगलाचरण ।

" ४–५ प्रशस्ति का रचना काल । विक्रम संवत् चन्द्र मुनि रस भू अथात् १६७१,शाक सवत् १५१६ राध (वैशाख) मास, वसत ऋतु, शुक्ल पक्ष, तृतीया तिथी, गुरुवार रोहिणी नक्षत्र ।

" ६ अंचल गच्छ का प्रशसा ।

" ७ उग्रसेनपुर (आगरा नगर) की शोभा का वर्णन ।

" ८–९ उपकेश (ओसवाल) ज्ञातीय लोढा गोत्रीय, श्रीरंग की स्तुति ।

१० उस के पुत्र वेसराज के गुणों का वर्णन ।

११ वेसराज के पुत्र जेठू और श्रीरंग का वर्णन ।

" ११–१२ जेठू के पुत्र जीणागाह और मह्[गीह्] का वर्णन ।

" १२ श्रीरंग का पुत्र राजपाल, तिस का वर्णन ।

, १३ राजपाल की राज दरबार में बड़ी प्रतिष्ठा थी, और उस के ऋषभदास और प्रेमन दो पुत्र थे ।

" १४ उन में ऋषभदास (अपरनाम रेषा) बड़ा था । इस का भार्या रेषश्री ।

" १५–१६ ऋषभदास ने मंदिर में श्रीपद्मप्रभ के नये बिंब का प्रतिष्ठा कराई थी । और

१ यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सका कि पंक्ति ३४ के अन्त और पंक्ति ३५ के आदि में कितने अक्षर टूटे हैं ।

२ प्रतीत होता है कि प्रशस्ति यहां समाप्त हो गई ।

,, किसी आचार्य की कल्याणकारी देशना को सुनकर राजश्री के पुत्रने[1] ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया।

,, १७–१८ ऋषभदास के पुत्र कुरपाल स्वर्णपाल (सोनपाल)। तिन के गुणो का वर्णन। दान देने में उन की कर्ण से उपमा।

,, १९–२० ये जहांगीर बादशहा के अमात्य (मत्री) थे; बडे धनवान थे; सदा शुभकाम करते और पुण्य क्षेत्रों मे धन लगाते थे।

,, २१ जहांगीर की आज्ञा से दोनो भाई धर्म का काम करते थे।

,, २२-२३ उन्हों ने तीन भवन वाली एक पौषधशाला बनवाई। संघाधिपति बनकर समेतशिखर, शत्रुंजय, आबू, गिरनार तथा अन्य तीर्थों की यात्रा की।

,, २४ १२५ घोडे, २५ हाथी यात्रा के लिये जुदा कर छोडे थे।

,, २५ उन्हो ने दो चैत्य बनवाए जो बहुत ही ऊंचे, चित्रों और ध्वजों से सजे हुये थे।

,, २६ अंचल गच्छ की उत्पत्ति। भगवान महावीर से ४८ वें पट्ट पर श्री आर्य रक्षित सूरि हुए। उन्हो ने श्री सीमधर[3] स्वामी की आज्ञा पूर्वक चक्रेश्वरी देवी से वर प्राप्त करके विधिपक्ष अर्थात् अचलगच्छ चलाया[1]।

,, २७–३० पट्टावलि।

,, ३१–३२ कुंरपाल सोनपालने श्री कल्याणसागरके उपदेश से श्रेयांस नाथजी का मदिर बनवाया।

,, ३३–३४ और उसी समय ४५० अन्य प्रतिमाओं[4] की प्रतिष्ठा हुई। इस से उन की बडी कीर्ती हुई।

,, ३५ संघराजॅ बेटे सोनपाल . चतुर्भुज...दो बेटियां। प्रेमन के तीन पुत्र...

,, ३६ पेतसी और नेतसी जो शीलपालने से मानो सुदर्शन ही विद्यमान था। बुद्धिमान, तेजस्वी और यशस्वी संघराज के चार बेटे थे।

,, ३७ कुंरपाल की भार्या. . .उस की पुत्री का नाम जादो था। जेष्ठमल्ल गुणों का धाम ....

,, ३८ रेपश्री के दोनो पुत्र (कुरपाल सोनपाल) अपनी पुत्रवधुओं सघश्री, सुलसश्री, दुर्गश्री आदि के गुणों से शोभा पाते रहें। आशीर्वाद (जिस के बहुत से अक्षर टूट गए हैं)॥

---

१ कल्याणदेशना से शायद श्रीकल्याणसागर जी के उपदेश का आशय हो।

२ शायद ऋषभदास की माता का नाम राजश्री था।

३ महाविदेह क्षेत्र में वर्तमान तीर्थंकर।

४ इन प्रतिमाओं का पता लगाना चाहिये।

५ यहां से लेख का सम्बंध ठीक नहीं बैठता।

[टिप्पणी—कुंवरपाल सोनपालकी प्रशस्तिमें किसीएक कविने हिन्दी भाषामें एक कविता लिखी है जो पाटणके किसीएक भण्डारमें हमारे देखनेमें आई थी और जिसकी नकल हमने अपनी नोटबुकमें कर ली थी। इसका संबंध इस लेखके साथ होनेसे हम यहां उसे प्रकट किये देते हैं।—संपादक।]

कोरपाल सोनपाल लोढा गुणप्रशंसा

कवित्त

सगर भरथ जति, जगडु जावड भय। पामराय सारंग, सुजश नाम धरणी ॥ १
मेत्रुंजे संघ चलाया सुधर सुगत थाया। संघपतिपद पायो, कवि कोटि किर्ति करणी ॥ २
लाहनि करांहि ठाम ठाम द्रुग मान कहि। आनंद मंगल घरि घरि गावे घरणी ॥ ३
मंतपाल तेजपाल, हुये रेखचंद नंद। कोरपाल सोनपाल, कीना भली करणी ॥ ४
कहि लखमण लोढा, दूजीनु दिखाइ देस। लछिको प्रमान जोपे एमा लाह लीजिये ॥ ५
आन संघपति काउ, संघ जोवे कीयो चाह। कोरपाल सोनपाल,—को सो संघ कीजिये ॥ ६
सबल राय बिभार, निफल थापना चार। बाधा राइ धरि छोर, अरि डर साजको ॥ ७
कछराय अवठंभ सितापती रायखंभ। मनाराय आरंभ, भगत सुभ साजको ॥ ८
कवि कहि रूप भूप, राइन मुकटमनि। त्यागी राइ विलय, बिरद गज बाजको ॥ ९
हय गय हेमदान, मान नदका समान। हिंदु सुरताण, सोनपाल रेखराजको ॥ १०
सैन घर आसनके, पैजपर पासनक। निजदल रंजन, भंजन पर दलको ॥ ११
मदमतवारे, विकरारे अति भारे भारे। कारे कारे बादरसे, बासव सुजलके ॥ १२
कवि कहि रूप, नृप भुपतिनिके सिंगार। अति बड्वार एरापति समबलके ॥ १३
रेखराजनंदकोर पाल सोनपालचंद। हेतवनि दत एस हाथिनिके दलक ॥ १४

सोमदेवसूरिकृत नीतिवाक्यामृत।

(ग्रन्थ परिचय)

[लेखक—श्रीयुत पं० नाथूरामजी प्रेमी.]

[श्रीयुत पं० नाथूरामजी प्रेमीकी देखरेखमें बम्बईसे जो माणिकचन्द्र-दिगम्बर जैनग्रन्थ-माला प्रकट होती है, उसमें अभी हाल ही सोमदेवसूरिकृत नीतिवाक्यामृत नामका एक अमूल्य ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थके कर्ता और विषय आदिका विस्तृत परिचय करानेके लिए प्रेमीजीने ग्रन्थके प्रारंभमें एक पाण्डित्यपूर्ण और अनेक ज्ञातव्य बातोंसे भरपूर सुन्दर प्रस्तावना लिखी है जो प्रत्येक साहित्य और इतिहास प्रेमीके लिए अवश्य पठनीय और मननीय है। इस लिए हम लेखक महाशयकी अनुमति लेकर, जैनसाहित्यसंशोधकके पाठकोंके ज्ञानार्थ, उस प्रस्तावनाको अविकलतया यहाँ पर प्रकट करते हैं—संपादक।]

श्रीमत्सोमदेवसूरिका यह 'नीतिवाक्यामृत' संस्कृत साहित्य-सागरका एक अमूल्य और अनुपम रत्न है। इसका प्रधान विषय राजनीति है। राजा और उसके राज्यशासनसे सम्बन्ध रखनेवाली प्रायः सभी आवश्यक बातोंका इसमें विवेचन किया गया है। यह सारा ग्रन्थ गद्यमें है और सूत्रपद्धतिसे लिखा गया है। इसकी प्रतिपादनशैली बहुत ही सुन्दर, प्रभावशालिनी और गंभीरतापूर्ण है। बहुत बड़ी बातको एक छोटेसे वाक्यमें कह देनेकी कलामें इसके कर्ता सिद्धहस्त हैं। जैसा कि ग्रन्थके नामसे ही प्रकट होता है, इसमें विशाल नीतिसमुद्रका मन्थन करके सारभूत अमृत संग्रह किया गया है और इसका प्रत्येक वाक्य इस बातकी साक्षी देता है। नीतिशास्त्रके विद्यार्थी इस अमृतका पान करके अवश्य ही सन्तृप्त होंगे।

यह ग्रन्थ ३२ समुद्देशोंमें × विभक्त है और प्रत्येक समुद्देशमें उसके नामके अनुसार विषय प्रतिपादित है।

प्राचीन राजनीतिक साहित्य।

राजनीति, चार पुरुषार्थोंमेंसे दूसरे अर्थपुरुषार्थके अन्तर्गत है। जो लोग यह समझते हैं कि प्राचीन भारतवासियोंने 'धर्म' और 'मोक्ष' को छोड़कर अन्य पुरुषार्थोंकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया, वे इस देशके प्राचीन साहित्यसे अपरिचित हैं। यह सच है कि पिछले समयमें इन विषयोंकी ओरसे लोग उदासीन होते गये, इनका पठन पाठन बन्द होता गया और इस कारण इनके सम्बन्धका जो साहित्य था वह धीरे धीरे नष्टप्राय होता गया। फिर भी इस बातके प्रमाण मिलते हैं कि राजनीति आदि विद्याओंकी भी यहाँ खूब उन्नति हुई थी और इनपर अनेकानेक ग्रन्थ लिखे गये थे।

वात्स्यायनके कामसूत्रमें लिखा है कि प्रजापतिने प्रजाके स्थितिप्रबन्धके लिए त्रिवर्गशासन—(धर्म-अर्थ-काम विषयक महाशास्त्र) बनाया जिसमें एक लाख अध्याय थे। उसमेंके एक एक भागको लेकर मनुने धर्माधिकार, बृहस्पतिने अर्थाधिकार, और नन्दीने कामसूत्र, इस प्रकार तीन अधिकार बनाये *। इसके बाद इन तीनों विषयोंपर उत्तरोत्तर

× "समुद्देशश्च संक्षेपाभिधानम्"—कामसूत्रटीका, अ० ३।

* "प्रजापतिर्हि प्रजाः सृष्ट्वा तासां स्थितिनिबन्धनं त्रिवर्गस्य साधनमध्यायानां शतसहस्रेणाग्रे प्रोवाच। तस्यैकदेशिकं मनुः स्वायम्भुवो धर्माधिकारकं पृथक् चकार। बृहस्पतिरर्थाधिकारम्। नन्दी सहस्रेणाध्यायानां पृथक्कामसूत्रं चकार।"—कामसूत्र अ० १।

शास्त्रीजीने उक्त परीक्षा बारीकीसे या अच्छी तरह विचार करके नहीं की है। यह हम मानते हैं कि नीतिवाक्यामृतकी रचनामें अर्थशास्त्रकी सहायता अवश्य ली गई है जैसा कि आगे दिये हुए दोनोंके अवतरणोंसे मालूम होगा। पाठक देखेंगे कि दोनोंमें विलक्षण समता है, कहीं कहीं तो दोनोंके पाठ बिलकुल एकसे मिल गये हैं। परन्तु इससे यह सिद्ध नहीं होता कि नीतिवाक्यामृत अर्थशास्त्रका ही शोधित सार है। अर्थशास्त्रका अनुधावन करनेवाला होकर भी वह अनेक अंशोंमें बहुत कुछ स्वतन्त्र है। अर्थशास्त्रके अतिरिक्त अन्यान्य नीतिशास्त्रोंके अभिप्राय भी उसमें अपने ढंगसे समावेशित किये गये हैं। इसके सिवाय ग्रन्थकर्ताने अपने देश काल पर दृष्टि रखते हुए बहुत सी पुरानी बातोंको—जिनकी उस समय जरूरत नहीं रही थी या जो उनकी समझमें अनुचित थीं—छोड़ दिया है या परिवर्तित कर दिया है। साथ ही बहुतसी समयोपयोगी बातें शामिल भी कर दी हैं।

यहाँ हम अर्थशास्त्र और नीतिवाक्यामृतके ऐसे अवतरण देते हैं जिनसे दोनोंकी समानता प्रकट होती है —

१—दुष्प्रणीतः कामक्रोधाभ्यामज्ञानाद्वानप्रस्थपरिव्राजकानपि कोपयति, किमङ्ग पुनर्गृहस्थान्। अप्रणीतो हि मात्स्यन्यायमुद्भावयति। बलीयानबलं ग्रसते दण्डधराभावे। —अर्थशास्त्र पृ १।

दुष्प्रणीतो हि दण्डः कामक्रोधाभ्यामज्ञानाद्वा सर्वजनविद्वेषं करोति। अप्रणीतो हि दण्डो मात्स्यन्यायमुद्भावयति। बलीयानबलं ग्रसते (इति मात्स्यन्यायः)। —नीतिवा पृ० १४–१५।

२—ब्रह्मचर्यं चाषोडशाद्वर्षात्। अतो गोदानं दारकर्म च। —अर्थ पृ ११।

ब्रह्मचर्यमाषोडशाद्वर्षात्ततो गोदानपूर्वकं दारकर्म चास्य। —नी १६७।

३—पुरोहितमुदितोदितकुलशीलं षडङ्गे वेदे दैवे निमित्ते दण्डनीत्यां च अभिविनीतमापदां दैवमानुषीणां अथर्वभिरुपायैश्च प्रतिकर्तारं कुर्वीत। —अर्थ० पृ १५–१६।

पुरोहितमुदितकुलशीलं षडङ्गवेदे दैवे निमित्ते दण्डनीत्यामभिविनीतमापदां दैवानां मानुषीणां च प्रतिकर्तारं कुर्वीत। —नीति पृ १५९।

४ परमर्मज्ञः प्रगल्भः छात्रः कापटिकः।—अर्थ पृ १८।

परमर्मज्ञः प्रगल्भः छात्रः कापटिकः।— नी पृ १७३।

५—श्रूयते हि शुकसारिकाभिर्मन्त्रो भिन्नः श्वभिरन्यैश्च तिर्यग्योनिभिः। तस्मान्मन्त्रोद्देशमनायुक्तो नोपगच्छेत्। —अर्थ पृ २९।

अनायुक्तो न मन्त्रकाले तिष्ठेत्। श्रूयते हि शुकसारिकाभ्यामन्यैश्च तिर्यग्भिर्मन्त्रभेदः कृतः। —नीति पृ ११८।

६—द्वादशवर्षा स्त्री प्राप्तव्यवहारा भवति। षोडशवर्षः पुमान्। —अर्थ १५४।

द्वादशवर्षा स्त्री षोडशवर्षः पुमान् प्राप्तव्यवहारौ भवतः। —नीति २७३।

इस तरहके और भी अनेक अवतरण दिये जा सकते हैं।

यहाँपर पाठकोंको यह भी ध्यानमें रखना चाहिए कि चाणक्यने भी तो अपने पूर्ववर्ती विशालाक्ष, भारद्वाज, बृहस्पति आदिके ग्रन्थोंका संग्रह करके अपना ग्रन्थ लिखा है*। ऐसी दशामें यदि सोमदेवकी रचना अर्थशास्त्रसे मिलती जुलती हो, तो क्या आश्चर्य है। क्योंकि उन्होंने भी उन्हीं ग्रन्थोंका मन्थन करके अपना नीतिवाक्यामृत लिखा है। यह दूसरी बात है कि नीतिवाक्यामृतकी रचनाके समय ग्रन्थकर्ताके सामने अर्थशास्त्र भी उपस्थित था।

परन्तु पाठक इससे नीतिवाक्यामृतके महत्त्वको कम न समझ लें। ऐसे विषयोंके ग्रन्थोंका अधिकांश भाग संग्रहरूप ही होता है। क्योंकि उनमें उन सब तत्त्वोंका समावेश तो नितान्त आवश्यक ही होता है जो ग्रन्थकर्ताके पूर्ववर्तियों द्वारा उस शास्त्रके सम्बन्धमें निश्चित हो चुकते हैं। उनके सिवाय जो नये अनुभव और नये तत्त्व उपलब्ध होते हैं उन्हें ही वह विशेषतासे अपने ग्रन्थमें निबिवद्ध करता है। और हमारी समझमें नीतिवाक्यामृत ऐसी बातोंसे खाली नहीं है। ग्रन्थकर्ताकी स्वतन्त्र प्रतिभा और मौलिकता उसमें जगह जगह प्रस्फुटित हो रही है।

---

*देखो पृष्ठ ५ की टिप्पणी। पृथिव्या लाभे आदि।

ग्रन्थकर्ताका परिचय।

गुरुपरम्परा।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है नीतिवाक्यामृतके कर्ता श्रीसोमदेवसूरि हैं। ये देवसंघके आचार्य थे। दिगम्बर-सम्प्रदायके सुप्रसिद्ध चार संघोंमेंसे यह एक है। भंगराज कविके कथनानुसार यह संघ सुप्रसिद्ध तार्किक **भट्टाकलंक-देवके** बाद स्थापित हुआ था। अकलंकदेवका समय विक्रमकी ९ वीं शताब्दिका प्रथम पाद है। *

सोमदेवके गुरुका नाम **नेमिदेव** और दादागुरुका नाम **यशोदेव** था। यथा.—

> **श्रीमानस्ति स देवसंघतिलको देवो यशःपूर्वकः,**
> **शिष्यस्तस्य बभूव सद्गुणनिधिः श्रीनेमिदेवाह्वयः।**
> **तस्याश्चर्यतपःस्थितेस्त्रिनवतेर्जेतुर्महावादिनां,**
> **शिष्योऽभूदिह सोमदेव इति यस्तस्यैष काव्यक्रमः॥** —यशस्तिलकचम्पू।

नीतिवाक्यामृतकी गद्यप्रशस्तिसे भी यह मालूम होता है कि वे नेमिदेवके शिष्य थे। साथ ही उसमें यह भी लिखा है कि वे **महेन्द्रदेव** भट्टारकके अनुज थे। इन तीनों महात्माओं—**यशोदेव नेमिदेव** और **महेन्द्रदेवके** सम्बन्धमें हमें और कोई भी बात मालूम नहीं है। न तो इनकी कोई रचना ही उपलब्ध है और न अन्य किसी ग्रन्थादिमें इनका कोई उल्लेख ही मिला है। इनके पूर्वके आचार्योंके विषयमें भी कुछ ज्ञात नहीं है। सोमदेवसूरिकी शिष्यपरम्परा भी अज्ञात है। यशस्तिलकके टीकाकार श्रीश्रुतसागरसूरिने एक जगह लिखा है कि वादिराज और वादीभसिंह, दोनों ही सोमदेवके शिष्य थे ×, परन्तु इसके लिए उन्होंने जो प्रमाण दिया है वह किस ग्रन्थका है, इसके जाननेका कोई साधन नहीं है। यशस्तिलककी रचना शकसंवत् ८८१ (विक्रम १०१६) में समाप्त हुई है और वादिराजने अपना पार्श्वनाथचरित शकसंवत् ९४७ (वि० १०८२) में पूर्ण किया है; अर्थात् दोनोंके बीचमें ६६ वर्षका अन्तर है। ऐसी दशामें उनका गुरु शिष्यका नाता होना दुर्घट है। इसके सिवाय वादिराजके गुरुका नाम मतिसागर था और वे द्रविड संघके आचार्य थे। अब रहे वादीभसिंह, सो उनके गुरुका नाम पुष्पषेण था और पुष्पषेण अकलंकदेवके गुरुभाई थे, इसलिए उनका समय सोमदेवसे बहुत पहले जा पडता है। ऐसी अवस्थामें वादिराज और वादीभसिंहको सोमदेवका शिष्य नहीं माना जा सकता। ग्रन्थकर्त्ताके गुरु बड़े भारी तार्किक थे। उन्होंने ९३ वादियोंको पराजित करके विजयकीर्ति प्राप्त की थी +।

इसी तरह महेन्द्रदेव भट्टारक भी दिग्विजयी विद्वान् थे। उनका 'वादीन्द्रकालानल' उपपद ही इस बातकी घोषणा करता है।

तार्किक सोमदेव।

श्रीसोमदेवसूरि भी अपने गुरु और अनुजके सदृश बडे भारी तार्किक विद्वान् थे। वे इस ग्रन्थकी प्रशस्तिमें कहते हैं:—

अल्पेऽनुग्रहधीः समे सुजनता मान्ये महानादरः, सिद्धान्तोऽयमुदात्तचित्रचरिते श्रीसोमदेवे मयि।
यः स्पर्धेत तथापि दर्पदृढताप्रौढिप्रगाढाग्रह—स्तस्याखर्वितगर्वपर्वतपविर्मद्वाक्कृतान्तायते॥

सारांश यह कि मैं छोटोंके साथ अनुग्रह, बराबरीवालोंके साथ सुजनता और बडोंके साथ महान् आदरका बर्ताव करता हूँ। इस विषयमें मेरा चरित्र बहुत ही उदार है। परन्तु जो मुझे ऐंठ दिखाता है, उसके लिए, गर्वरूपी पर्वतको विध्वंस करनेवाले मेरे वज्र-वचन कालस्वरूप हो जाते हैं।

---

* देखो जैनहितैषी भाग ११, अंक ७—८।

× "उक्तं च वादिराजेन महाकविना— . . . . . स वादिराजोऽपि श्रीसोमदेवाचार्यस्य शिष्यः— **वादीभसिंहोऽपि मदीयशिष्यः श्रीवादिराजोऽपि मदीयशिष्यः** इत्युक्तत्वाच्च।" —यशस्तिलकटीका आ० २, पृ० २६५।

\+ यशस्तिलकके ऊपर उद्धृत हुए श्लोकमें उन महावादियोंकी संख्या—जिनको श्रीनेमिदेवने पराजित किया था—तिरानवे बतलाई है, परन्तु नीतिवाक्यामृतकी गद्यप्रशस्तिमें पचपन है। मालूम नहीं, इसका क्या कारण है।

दर्पान्धबोधबुधसिन्धुरसिंहनादे, वादिद्विपोद्दलनदुर्धरवाग्विवादे।
श्रीसोमदेवमुनिपे वचनारसाले, वागीश्वरोऽपि पुरतोऽस्ति न वादकाले॥

भाव यह कि अभिमानी पण्डित गजोंके लिए सिंहके समान ललकारनेवाले और वादिगजोंको दलित करनेवाला दुर्धर विवाद करनेवाले श्रीसोमदेव मुनिके सामने वादके समय वागीश्वर या देवगुरु बृहस्पति भी नहीं ठहर सकते हैं।

इसी तरहके और भी कई पद्य हैं जिनमें उनका प्रखर और प्रचण्ड तर्कपाण्डित्य प्रकट होता है।

यशस्तिलक चम्पूकी उत्थानिकामें कहा है —

आजन्मसमभ्यासाच्छुष्कात्तर्कात्तृणादिव ममास्याः।
मतिसुरभेरभवदिदं सूक्तपयः सुकृतिनां पुण्यैः॥ १७

अर्थात् मेरी जिस बुद्धिरूपी गौने जीवन भर तर्करूपी सूखा घास खाया उसीसे अब यह काव्यरूपी दुग्ध उत्पन्न हो रहा है। इस उक्तिसे अच्छी तरह प्रकट होता है कि श्रीसोमदेवसूरिने अपने जीवनका बहुत बड़ा भाग तर्कशास्त्रके अभ्यासमें ही व्यतीत किया था। उनके स्याद्वादाचलसिंह, वादीभपंचानन और तार्किकचक्रवर्ती पद भी इसी बातके द्योतक हैं।

परन्तु वे केवल तार्किक ही नहीं थे—काव्य व्याकरण, धर्मशास्त्र और राजनीति आदिके भी धुरंधर विद्वान् थे।

महाकवि सोमदेव।

उनका यशस्तिलकचम्पू महाकाव्य—जो निर्णयसागरके काव्यमालामें प्रकाशित हो चुका है—इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि वे महाकवि थे और काव्यकला पर भी उनका असाधारण अधिकार था। इसे संस्कृत साहित्यमें यशस्तिलक एक अद्भुत काव्य है और कवित्वके साथ उसमें ज्ञानका विशाल खजाना संग्रहीत है। उसका गद्य भी कादम्बरी तिलकमञ्जरी आदिकी टक्करका है। सुभाषितोंका तो उसे आकर ही कहना चाहिए। उसकी प्रशंसामें स्वयं ग्रन्थकर्त्ताने यत्रतत्र जो सुन्दर पद्य कहे हैं वे सुनने योग्य हैं —

असहायमनादर्शं रत्नं रत्नाकरादिव।
मत्तः काव्यमिदं जातं सतां हृदयमण्डनम्॥ १४ —प्रथम आश्वास।

समुद्रसे निकले हुए असहाय अनादर्श और सज्जनोंके हृदयकी शोभा बढ़ानेवाले रत्नकी तरह मुझसे भी यह असहाय (मौलिक) अनादर्श (बेजोड़) और हृदयमण्डन काव्यरत्न उत्पन्न हुआ।

कर्णाञ्जलिपुटैः पातुं चेतः सूक्तामृते यदि।
श्रूयतां सोमदेवस्य नव्याः काव्योक्तियुक्तयः॥ २४६॥ —द्वितीय आ०।

यदि आपका चित्त कानोंकी अँजुलीसे सूक्तामृतका पान करना चाहता है, तो सोमदेवकी नई नई काव्योक्तियाँ सुनिए।

लोकवित्त्वे कवित्वे वा यदि चातुर्यचञ्चवः।
सोमदेवकवेः सूक्तिं समभ्यस्यन्तु साधवः॥ ५१३॥ —तृतीय आ०।

यदि सज्जनोंकी यह इच्छा हो कि वे लोकव्यवहार और कवित्वमें चातुर्य प्राप्त करें तो उन्हें सोमदेव कविकी सूक्तियोंका अभ्यास करना चाहिए।

मया वागर्थसंभारे भुक्ते सारस्वते रसे।
कवयोऽन्ये भविष्यन्ति नूनमुच्छिष्टभोजनाः॥ —चतुर्थ आ० पृ० १६५।

मैं शब्द और अर्थपूर्ण सारे सारस्वत रस (साहित्य रस) का स्वाद ले चुका हूँ; अतएव अब जितने दूसरे कवि होंगे, वे निश्चयसे उच्छिष्टभोजी या जूठा खानेवाले होंगे—वे कोई नई बात न कह सकेंगे।

अरालकाल्व्यालेन ये लीढाः साम्प्रतं तु ते।
शब्दाः श्रीसोमदेवेन प्रोत्थाप्यन्ते किमद्भुतम्॥ —पंचम आ० पृ० २६६।

समयरूपी कुटिल काले सर्पने जिन शब्दोंको निगल लिया था, अतएव जो मृत हो गए थे, यदि उन्हें श्रीसोम कविने उगल दिया, जिला दिया—तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। (इसमें 'सोमदेव' शब्द श्लिष्ट है। सोम चन्द्रमाको कहते हैं और चन्द्रकी अमृत-किरणोंसे विषमूर्छित जीव सचेत हो जाते हैं।)

उद्धृत्य शास्त्रजलधेर्नितले निमग्नैः
पर्यागतैरिव चिरादभिधानरत्नैः ।
या सोमदेवविदुषा विहिता विभूषा
वाग्देवता वहतु सम्प्रति तामनर्घ्याम् ॥ —य० आ०, पृ० २९९ ।

चिरकालसे शास्त्रसमुद्रके बिल्कुल नीचे डूबे हुए शब्द-रत्नोंका उद्धार करके सोमदेव पण्डितने जो यह बहुमूल्य आभूषण (काव्य) बनाया है, उसे श्रीसरस्वती देवी धारण करें ।

इन उक्तियोंसे इस बातका आभास मिलता है कि आचार्य सोमदेव किस श्रेणीके कवि थे और उनका उक्त महाकाव्य कितना महत्त्वपूर्ण है । पूर्वोक्त उक्तियोंमें अभिमानकी मात्रा विशेष रहने पर भी वे अनेक अंशोंमें सत्य जान पड़ती हैं । सचमुच ही यशस्तिलक शब्दरत्नोंका बड़ा भारी खजाना है और यदि माघकाव्यके समान कहा जाय कि इस काव्यको पढ़ लेने पर फिर कोई नया शब्द नहीं रह जाता, तो कुछ अत्युक्ति न होगी । इसी तरह इसके द्वारा सभी विषयोंकी व्युत्पत्ति हो सकती है । व्यवहारदक्षता बढ़ानेकी तो इसमें ढेर सामग्री है ।

महाकवि सोमदेवके वाक्कल्लोलपयोनिधि, कविराजकुंजर और गद्यपद्यविद्याधरचक्रवर्ती विशेषण, उनके श्रेष्ठकवित्वके ही परिचायक हैं ।

धर्माचार्य सोमदेव ।

यद्यपि अभीतक सोमदेवसूरिका कोई स्वतन्त्र धार्मिक ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है, परन्तु यशस्तिलकके अन्तिम दो आश्वास—जिनमें उपासकाध्ययन या श्रावकोंके आचारका निरूपण किया गया है—इस बातके साक्षी हैं कि वे धर्मके कैसे मर्मज्ञ विद्वान् थे । स्वामी समन्तभद्रके रत्नकरण्डके बाद श्रावकोंका आचारशास्त्र ऐसी उत्तमता, स्वाधीनता और मार्मिकताके साथ इतने विस्तृतरूपमें आजतक किसी भी विद्वान्की कलमसे नहीं लिखा गया है । जो लोग यह समझते हैं कि धर्मग्रन्थ तो परम्परासे चले आये हुए ग्रन्थोंके अनुवादमात्र होते हैं—उनमें ग्रन्थकर्त्ता विशेष क्या कहेगा, उन्हें यह उपासकाध्ययन अवश्य पढ़ना चाहिए और देखना चाहिए कि धर्मशास्त्रोंमें भी मौलिकता और प्रतिभाके लिए कितना विस्तृत क्षेत्र है । खेद है कि जैनसमाजमें इस महत्त्वपूर्ण ग्रन्थके पठन पाठनका प्रचार बहुत ही कम है और अब तक इसका कोई हिन्दी अनुवाद भी नहीं हुआ है । नीतिवाक्यामृतकी प्रशस्तिमें लिखा है —

सकलसमयतर्के नाकलंकोऽसि वादिन् न भवसि समयोक्तौ हंससिद्धान्तदेवः ।
न च वचनविलासे पूज्यपादोऽसि तत्त्वं वदसि कथमिदानीं सोमदेवेन सार्धम् ॥

अर्थात् हे वादी, न तो तू समस्तदर्शन शास्त्रों पर तर्क करनेके लिए अकलंकदेवके तुल्य है, न जैनसिद्धान्तको कहनेके लिए हंससिद्धान्तदेव है और न व्याकरणमें पूज्यपाद है फिर इस समय सोमदेवके साथ किस बिरते पर बात करने चला है ? *

इस उक्तिसे स्पष्ट है कि सोमदेवसूरि तर्क और सिद्धान्तके समान व्याकरणशास्त्रके भी पण्डित थे ।

राजनीतिज्ञ सोमदेव ।

सोमदेवके राजनीतिज्ञ होनेका प्रमाण यह नीतिवाक्यामृत तो है ही, इसके सिवाय उनके यशस्तिलकमें भी यशोधर महाराजका चरित्रचित्रण करते समय राजनीतिकी बहुत ही विशद और विस्तृत चर्चा की गई है । पाठकोंको चाहिए कि वे इसके लिए यशस्तिलकका तृतीय आश्वास अवश्य पढ़ें ।

यह आश्वास राजनीतिके तत्त्वोंसे भरा हुआ है । इस विषयमें वह अद्वितीय है । वर्णन करनेकी शैली बड़ी ही सुन्दर है । कवित्वकी कमनीयता और सरसतासे राजनीतिकी नीरसता मालूम नहीं कहाँ चली गई है । नीतिवाक्यामृतके

* अकलंकदेव—अष्टशती, राजवार्तिक आदि ग्रन्थोंके रचयिता । **हंससिद्धान्तदेव**—ये कोई सैद्धान्तिक आचार्य जान पड़ते हैं । इनका अब तक और कहीं कोई उल्लेख देखनेमें नहीं आया । **पूज्यपाद**—देवनन्दि, जैनेन्द्र व्याकरणके कर्त्ता ।

अनेक शब्दोंका अभिप्राय उसमें किसी न किसी रूपमें अन्तर्निहित जान पड़ता है +।

जहाँ तक हम जानते हैं जैनविद्वानों और आचार्योंमें—दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनोंमें—एक सोमदेवने ही 'राजनीतिशास्त्र' पर कलम उठाई है। अतएव जैनसाहित्यमें उनका नीतिवाक्यामृत अद्वितीय है। कमसे कम अब तक तो इस विषयका कोई दूसरा जैनग्रन्थ उपलब्ध नहीं हुआ है।

ग्रन्थ-रचना।

इस समय सोमदेवसूरिके केवल दो ही ग्रन्थ उपलब्ध हैं—**नीतिवाक्यामृत** और **यशस्तिलकचम्पू**। इनके सिवाय—जैसा कि नीतिवाक्यामृतकी प्रशस्तिसे मालूम होता है—तीन ग्रन्थ और भी हैं—१ **युक्तिचिन्तामणि**, २ **त्रिवर्गमहेन्द्रमातलिसंजल्प** और ३ **षण्णवतिप्रकरण**। परन्तु अभीतक वे कहीं प्राप्त नहीं हुए हैं। उक्त ग्रन्थोंमें **युक्तिचिन्तामणि** तो अपने नामसे ही तर्कग्रन्थ मालूम होता है और दूसरा शायद नीतिविषयक होगा। महेन्द्र और उसके सारथी मातलिके संवादरूपमें उसमें त्रिवर्ग अर्थात् धर्म अर्थ और कामकी चर्चा की गई होगी। तीसरेके नामसे सिवाय इसके कि उसमें ९६ प्रकरण या अध्याय हैं विषयका कुछ भी अनुमान नहीं हो सकता है।

इन सब ग्रन्थोंमें नीतिवाक्यामृत ही सबसे पिछला ग्रन्थ है। यशोधरमहाराजचरित या यशस्तिलक इसके पहलेका है। क्योंकि नीतिवाक्यामृतमें उसका उल्लेख है। बहुत संभव है कि नीतिवाक्यामृतके बाद भी उन्होंने ग्रन्थरचना की हो और उक्त तीन ग्रन्थोंके समान वे भी किसी जगह दीमक या चूहोंके खाद्य बन रहे हों या सर्वथा नष्ट ही हो चुके हों।

विशाल अध्ययन।

यशस्तिलक और नीतिवाक्यामृतके पढ़नेसे मालूम होता है कि सोमदेवसूरिका अध्ययन बहुत ही विशाल था। ऐसा जान पड़ता है कि उनके समयमें जितना साहित्य— न्याय व्याकरण काव्य नीति दर्शन आदि सम्बन्धी—उपलब्ध था उस सबसे उनका परिचय था। केवल जैन ही नहीं जैनेतर साहित्यसे भी वे अच्छी तरह परिचित थे। यशस्तिलकके चौथे आश्वासमें (पृ. ११३ में) उन्होंने लिखा है कि इन महाकवियोंके काव्योंमें नग्न क्षपणक या दिगम्बर साधुओंका उल्लेख क्यों आता है? उनकी इतनी अधिक प्रसिद्धि क्यों है?—**उर्व, भारवि, भवभूति, भर्तृहरि, भर्तृमेण्ठ, कण्ठ, गुणाढ्य, व्यास, भास, वोस, कालिदास×, बाण+, मयूर, नारायण, कुमार, माघ और राजशेखर।**

इससे मालूम होता है कि वे पूर्वोक्त कवियोंके काव्योंसे अवश्य परिचित होंगे। प्रथम आश्वासके ९० वें पृष्ठमें उन्होंने **इन्द्र, चन्द्र, जैनेन्द्र, आपिशल** और **पाणिनिके** व्याकरणोंका जिकर किया है। पूज्यपाद

+ नीतिवाक्यामृत और यशस्तिलकके कुछ समानार्थक वचनोंका मिलान कीजिए —

१—बुभुक्षाकालो भोजनकालः —नी. वा. पृ. २५३।

चारायणो निशि तिमिः पुनरस्तकाले, मध्ये दिनस्य धिषणश्चरकः प्रभाते।
भुक्तिं जगाद नृपते मम चैष सर्गस्तस्याः स एव समयः क्षुधितो यदैव ॥३२८॥ —यशस्तिलक आ. ३।

(पूर्वोक्त पद्यमें चारायण तिमि धिषण और चरक इन चार आचार्योंके मतोंका उल्लेख किया गया है।)

२—आत्मपरिखेदाय निशि भुक्तिं। चकोरवदन्धकाम दिवापयवम्।—नी. वा. पृ. २५७।

अन्य दिग्माहु —

य दोषवद्दिवायाम स नक्तं भोक्तुमर्हति।
स भोक्ता वासरे यश्च रात्रौ रक्ता चकारवत्॥ ३३०॥ —यशस्तिलक आ. ३

भास महाकविका 'पेया सुरा प्रियतमामुखमीक्षणीया' आदि पद्य भी पाँचवें आश्वास (पृ. २५) में उद्धृत है। × रघुवंशका भी एक जगह (आ. ४ पृ. १५४) उल्लेख है। + बाण महाकविका एक जगह श्लोक भी (आ. ४ पृ. ११) उद्धृत है और लिखा है कि उन्होंने शिकारकी निन्दा की है।

(जैनेन्द्रके कर्ता) और पाणिनिका उल्लेख और भी एक दो जगह हुआ है । गुरु, शुक्र, विशालाक्ष, परीक्षित, पराशर, भीम, भीष्म, भारद्वाज आदि नीतिशास्त्रप्रणेताओंका भी वे कई जगह स्मरण करते हैं । कौटिलीय अर्थशास्त्रसे तो वे अच्छी तरह परिचित थे । हमारे एक पण्डित मित्रके कथनानुसार नीतिवाक्यामृतमें भी सवा सौके लगभग ऐसे शब्द हैं जिनका अर्थ वर्तमान कोशोंमें नहीं मिलता । अर्थशास्त्रका अध्येता ही उन्हें समझ सकता है । अश्वविद्या, गजविद्या, रत्नपरीक्षा, कामशास्त्र, वैद्यक आदि विद्याओंके आचार्योंका भी उन्होंने कई प्रसंगोंमें जिकर किया है । प्रजापतिप्रोक्त चित्रकर्म, वराहमिहिरकृत प्रतिष्ठाकाण्ड, आदित्यमत, निमित्ताध्याय, महाभारत, रत्नपरीक्षा, पतंजलिका योगशास्त्र और वररुचि, व्यास, हरप्रबोध, कुमारिलकी उक्तियोंके उद्धरण दिये हैं । सैद्धान्तवैशेषिक, तार्किक वैशेषिक, पाशुपत, कुलाचार्य, सांख्य, दशबलशासन, जैमिनीय, बार्हस्पत्य, वेदान्तवादि, काणाद, ताथागत, कापिल, ब्रह्माद्वैतवादि, अवधूत आदि दर्शनोंके सिद्धान्तोंपर विचार किया है । इनके सिवाय मतङ्ग, भृगु, भर्ग, भरत, गौतम, गर्ग, पिंगल, पुलह, पुलोम, पुलस्ति, पराशर, मरीचि, विरोचन, धूमध्वज, नीलपट, अहिल, आदि अनेक प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध आचार्योंका नामोल्लेख किया है । बहुतसे ऐतिहासिक दृष्टान्तोंका भी उल्लेख किया गया है । जैसे यवनदेश (यूनान?) में मणिकुण्डला रानीने अपने पुत्रके राज्यके लिए विषदूषित शराबके कुरलेसे अजराजाको, सूरसेन (मथुरा) में वसन्तमतिने विषमय आलतेसे रंगे हुए अधरोंसे सुरतविलास नामक राजाको, दशार्ण (भिलसा) में वृकोदरीने विषलिप्त करधनीसे मदनार्णव राजाको, मगध देशमें मदिराक्षीने तीखे दर्पणसे मन्मथविनोदको, पाण्ड्य देशमें चण्डरसा रानीने कबरीमें छुपी हुई छुरीसे मुण्डीर नामक राजाको मार डाला * । इत्यादि । पौराणिक आख्यान भी बहुतसे आये हैं । जैसे प्रजापति ब्रह्माका चित्त अपनी लड़की पर चलायमान हो गया, वररुचि या कात्यायनने एक दासीपर रीझकर उसके कहनेसे मद्यका घड़ा उठाया, आदि × । इन सब बातोंसे पाठक जान सकेंगे कि आचार्य सोमदेवका ज्ञान कितना विस्तृत और व्यापक था ।

उदार विचारशीलता ।

यशस्तिलकके प्रारंभके २० वें श्लोकमें सोमदेवसूरि कहते हैं—

> लोको युक्तिः कलाश्छन्दोऽलंकाराः समयागमाः ।
> सर्वसाधारणाः सद्भिस्तीर्थमार्ग इव स्मृताः ॥

अर्थात् सज्जनोंका कथन है कि व्याकरण, प्रमाणशास्त्र (न्याय), कलायें, छन्दःशास्त्र, अलंकारशास्त्र और (आर्हत, जैमिनि, कपिल, चार्वाक, कणाद, बौद्धादिके) दर्शनशास्त्र तीर्थमार्गके समान सर्वसाधारण हैं । अर्थात् जिस तरह गंगादिके मार्ग पर ब्राह्मण भी चल सकते हैं और चाण्डाल भी, उसी तरह इनपर भी सबका अधिकार है । +

१—" पूज्यपाद इव शब्देतिह्येषु पाणिपुत्र इव पदप्रयोगेषु " यश० आ० २, पृ० २३६ । —२, ३, ४, ५, ६—" रोमपाद इव गजविद्यासु रैवत इव हयनयेषु शुक्रनाश इव रत्नपरीक्षासु, दत्तक इव कन्तुसिद्धान्तेषु "—आ० ४, पृ० २३६–२३७ । 'दत्तक' कामशास्त्रके प्राचीन आचार्य हैं । वात्स्यायनने इनका उल्लेख किया है । 'चारायण' भी कामशास्त्रके आचार्य हैं । इनका मत यशस्तिलकके तीसरे आश्वासके ५०९ पृष्ठमें चरकके साथ प्रकट किया गया है ।

१, २, ३, ४, ५—उक्त पांचों ग्रन्थोंके उद्धरण यश० के चौथे आश्वासके पृ० ११२–१३ और ११९ में उद्धृत हैं । महाभारतका नाम नहीं है, परन्तु—'पुराणं मानवो धर्मः साङ्गो वेदश्चिकित्सितम्' आदि श्लोक महाभारतमें ही उद्धृत किया गया है ।

६—तदुक्तं रत्नपरीक्षायाम्—'न केवलं' आदि, आश्वास ५, पृ० २५६ ।

७—यशस्तिलक आ० ६, पृ० २७६–७७ । ८—९–आ० ४, पृ० ९९ ।१०,११–आ० ५, पृ०२५१–५४ ।

१२–इन सब दर्शनोंका विचार पाँचवें आश्वासके पृ० २६९ से २७७ तक किया गया है ।

१३—देखो आश्वास ५, पृ० २५२–५५ और २९९ ।

* यशस्तिलक आ० ४, पृ० १५३ । इन्हीं आख्यानोंका उल्लेख नीतिवाक्यामृत (पृ० २३२) में भी किया गया है । आश्वास ३ पृ० ४३१ और ५५० में भी ऐसे ही कई ऐतिहासिक दृष्टान्त दिये गये हैं ।

× यश० आ० ४ पृ० १३८—३९ ।

+ " लोको व्याकरणशास्त्रम्, युक्तिः प्रमाणशास्त्रम्, समयागमाः जिनजैमिनिकपिलकणचरचार्वाकशाक्यानां सिद्धान्ताः । सर्वसाधारणाः सद्भिः कथिताः, प्रतिपादिताः । क इव तीर्थं मार्ग इव । यथा तीर्थमार्गे ब्राह्मणाश्चलन्ति, चाण्डाला अपि गच्छन्ति, नास्ति तत्र दोषः । "—श्रुतसागरी टीका ।

इस उक्तिसे पाठक जान सकते हैं कि उनके विचार ज्ञानके सम्बन्धमें कितने उदार थे। वे उसे सर्वसाधारणकी चीज समझते थे और यही कारण है जो उन्होंने धर्माचार्य होकर भी अपने धर्मसे इतर धर्मके माननेवालोंके साहित्यका भी अच्छी तरहसे अध्ययन किया था, यही कारण है जो वे पूज्यपाद और भट्ट अकलङ्कदेवके साथ पाणिनि आदिका भी आदरके साथ उल्लेख करते हैं और यही कारण है जो उन्होंने अपना यह राजनीतिशास्त्र बीसों जैनेतर आचार्योंके विचारोंका सार खींचकर बनाया है। यह सच है कि उनका जैन सिद्धान्तों पर अचल विश्वास है और इसीलिए यशस्तिलकमें उन्होंने अन्य सिद्धान्तोंका खण्डन करके जैनसिद्धान्तोंकी उपादेयता प्रतिपादन की है, परन्तु इसके साथ ही वे इस सिद्धान्तके पक्के अनुयायी हैं कि 'युक्तिमद्वचनं यस्य तस्य कार्यः परिग्रहः।' उनकी यह नीति नहीं थी कि ज्ञानके मार्गको भी संकीर्ण कर दिया जाय और संसारके विशाल ज्ञान-भाण्डारका उपयोग करना छोड़ दिया जाय।"

समय और स्थान।

नीतिवाक्यामृतके अन्तकी प्रशस्तिमें इस बातका कोई जिकर नहीं है कि यह कब और किस स्थानमें रचा गया था; परन्तु यशस्तिलकचम्पूके अन्तमें इन दोनों बातोंका उल्लेख है —

"शकनृपकालातीतसंवत्सरशतेष्वष्टस्वेकाशीत्यधिकेषु गतेषु अङ्कतः (८८१) सिद्धार्थसंवत्सरान्तर्गतचैत्रमासमदनत्रयोदश्यां पाण्ड्य-सिंहल-चोल-चेरमप्रभृतीन्[1] महीपतीन्प्रसाध्य मेलपाटी[2]प्रवर्धमानराज्यप्रभावे श्रीकृष्णराजदेवे सति तत्पादपद्मोपजीविनः समधिगतपञ्चमहाशब्दमहासामन्ताधिपतेश्चालुक्यकुलजन्मनः सामन्तचूडामणेः श्रीमदरिकेसरिणः प्रथमपुत्रस्य श्रीमद्वद्यगराजस्य[3] लक्ष्मीप्रवर्धमानवसुधारायां गङ्गाधारायां विनिर्मापितमिदं काव्यमिति।'

अर्थात् चैत्र सुदी १३ शकसंवत् ८८१ (विक्रम संवत् १०१६) को जिस समय श्रीकृष्णराजदेव पाण्ड्य, सिंहल, चोल, चेर आदि राजाओं पर विजय प्राप्त करके मेल्पाटी नामक राजधानीमें राज्य करते थे और उनके चरणकमलोपजीवी सामन्त वद्दिग—जो चालुक्यवंशीय अरिकेसरीके प्रथम पुत्र थे—गंगाधाराका शासन करते थे, यह काव्य समाप्त हुआ।

दक्षिणके इतिहाससे पता चलता है कि ये कृष्णराजदेव राष्ट्रकूट या राठौर वंशके महाराजा थे और इनका दूसरा नाम अकालवर्ष था। यह वही वंश है जिसमें भगवज्जिनसेनके परमभक्त महाराज अमोघवर्ष (प्रथम) उत्पन्न हुए थे। अमोघवर्षके पुत्र अकालवर्ष (द्वितीय कृष्ण) और अकालवर्षके जगत्तुंग हुए[4]। इन जगत्तुंगके दो पुत्रों—इन्द्र या नित्यवर्ष और वद्दिग या अमोघवर्ष (तृतीय) मेंसे—अमोघवर्ष तृतीयके पुत्र कृष्णराजदेव या तृतीय कृष्ण थे। इनके समयके शक संवत् ८६७, ८७३, ८७६ और ८८१ के चार शिलालेख मिले हैं, इससे इनका राज्यकाल कमसे कम ८६७ से ८८१ तक सुनिश्चित है। ये दक्षिणके सार्वभौम राजा थे और बड़े प्रतापी थे। इनके अधीन अनेक माण्डलिक या करद राज्य थे। कृष्णराजने—जैसा कि सोमदेवसूरिने लिखा है—सिंहल, चोल, पाण्ड्य और चेर राजाओंको युद्धमें पराजित किया था। इनके समयमें कनड़ी भाषाका सुप्रसिद्ध कवि पोन्न हुआ है जो जैन था और जिसने

---

१ पाण्ड्य=वर्तमानमें मद्रासका 'तिनेवली' जिला। सिंहल=सिलोन या लंका। चोल=मद्रासका कारोमण्डल। चेर=केरल, वर्तमान त्रावणकोर। २ मुद्रित ग्रन्थमें 'मेल्पाटी' पाठ है। ३ मुद्रित पुस्तकमें 'श्रीमद्वागराजप्रवर्धमान—' पाठ है।

४ जगत्तुंग गद्दीपर नहीं बैठे। अकालवर्षके बाद जगत्तुंगके पुत्र तृतीय इन्द्रको गद्दी मिली। इन्द्रके दो पुत्र थे—अमोघवर्ष (द्वितीय) और गोविन्द (चतुर्थ)। इनमेंसे द्वितीय अमोघवर्ष पहले सिंहासनारूढ़ हुए परन्तु थोड़े ही समयके बाद गोविन्दने उन्हें गद्दीसे उतार दिया और स्वयं राजा बन बैठे। गोविन्दके बाद उनके चाचा अर्थात् जगत्तुंगके दूसरे पुत्र अमोघवर्ष (तृतीय) गद्दीपर बैठे। अमोघवर्षके बाद ही कृष्णराजदेव सिंहासनारूढ़ हुए। इन सबके विषयमें विस्तारसे जाननेके लिए डा० भाण्डारकरकृत 'हिस्ट्री आफ दी डक्कन' नामका मराठी अनुवाद पढ़िए।

शान्तिपुराण नामक श्रेष्ठ ग्रन्थकी रचना की है। महाराज कृष्णराज देवके दरबारमें इसे ' उभयभाषाकविचक्रवर्ती ' की उपाधि मिली थी।

निजामके राज्यमें मलखेड नामका एक ग्राम है जिसका प्राचीन नाम 'मान्यखेट' है। यह मान्यखेट ही अमोघवर्ष आदि राष्ट्रकूट राजाओंकी राजधानी थी × और उस समय बहुत ही समृद्ध थी। संभव है कि सोमदेवने इसीको मेलपाटी या मेल्पाटी लिखा हो। 'हिस्टरी आफ कनारी लिटरेचर' के लेखकने लिखा है कि पोन्न कविको उभयभाषाकविचक्रवर्तीकी उपाधि देनेवाले राष्ट्रकूट राजा कृष्णराजने मान्यखेटमें सन् ९३९ से ९६८ तक राज्य किया है। इससे भी मालूम होता है कि मान्यखेटका ही नाम मेलपाटी होगा परन्तु यदि यह मेलपाटी कोई दूसरा स्थान है तो समझना होगा कि कृष्णराज देवके समयमें मान्यखेटसे राजधानी उठकर उक्त दूसरे स्थानमें चली गई थी। इस बातका पता नहीं लगता कि मान्यखेटमें राष्ट्रकूटोंकी राजधानी कब तक रही।

राष्ट्रकूटोंके समयमें दक्षिणका चालुक्यवंश (सोलंकी) हतप्रभ हो गया था। क्योंकि इस वंशका सार्वभौमत्व राष्ट्रकूटोंने ही छीन लिया था। अतएव जब तक राष्ट्रकूट सार्वभौम रहे तब तक चालुक्य उनके आज्ञाकारी सामन्त या माण्डलिक राजा बनकर ही रहे। जान पड़ता है कि **अरिकेसरिका पुत्र वद्दिग** ऐसा ही एक सामन्तराजा था। जिसकी गंगाधारा नामक राजधानीमें यशस्तिलककी रचना समाप्त हुई है।

चालुक्योंकी एक शाखा ' जोल ' नामक प्रान्तपर राज्य करती थी जिसका एक भाग इस समयके धारवाड़ जिलेमें आता है और श्रीयुक्त आर. नरसिंहाचार्यके मतसे चालुक्य अरिकेसरीकी राजधानी 'पुलगेरी' में थी जो कि इस समय ' लक्ष्मेश्वर'के नामसे प्रसिद्ध है।

इस अरिकेसरीके ही समयमें कनड़ी भाषाका सर्वश्रेष्ठ कवि **पम्प** हो गया है जिसकी रचना पर मुग्ध होकर अरिकेसरीने धर्मपुर नामका एक ग्राम पारितोषिकमें दिया था। पम्प जैन था। उसके बनाये हुए दो ग्रन्थ ही इस समय उपलब्ध हैं—एक **आदिपुराण चम्पू** और दूसरा **भारत** या **विक्रमार्जुनविजय**। पिछले ग्रन्थमें उसने अरिकेसरीकी वंशावली इस प्रकार दी है—**युद्धमल्ल—अरिकेसरी—नारसिंह—युद्धमल्ल - वद्दिग – युद्धमल्ल– नारसिंह और अरिकेसरी**। उक्त ग्रन्थ शक संवत ८६३ (वि० ९९८ में) समाप्त हुआ है, अर्थात् वह यशस्तिलकसे कोई १८ वर्ष पहले बन चुका था। इसकी रचनाके समय अरिकेसरी राज्य करता था, तब उसके १८ वर्ष बाद—यशस्तिलककी रचनाके समय—उसका पुत्र राज्य करता होगा, यह सर्वथा ठीक जँचता है।

काव्यमाला द्वारा प्रकाशित यशस्तिलकमें अरिकेसरीके पुत्रका नाम '**श्रीमद्वागराज**' मुद्रित हुआ है, परन्तु हमारी समझमें वह अशुद्ध है। उसकी जगह '**श्रीमद्वद्दिगराज**' पाठ होना चाहिए। दानवीर सेठ माणिकचंदजीके सरस्वतीभंडारकी वि० सं० १४६४ की लिखी हुई प्रतिमें ' श्रीमद्वयगराजस्य ' पाठ है और उससे हमें अपने कल्पना किये हुए पाठकी शुद्धतामें और भी अधिक विश्वास होता है। ऊपर जो हमने **पम्पकवि-लिखित अरिकेसरीकी** वंशावली दी है, उस पर पाठकोंको जरा बारीकीसे विचार करना चाहिए। उसमें **युद्धमल्ल** नामके तीन, **अरिकेसरी** नामके दो और **नारसिंह** नामके दो राजा हैं। अनेक राजवंशोंमें प्रायः यही परिपाटी देखी जाती है कि पितामह और पौत्र या प्रपितामह और प्रपौत्रके नाम एकसे रक्खे जाते थे, जैसा कि उक्त वंशावलीसे प्रकट होता है *। अतएव हमारा अनुमान है कि इस वंशावलीके अन्तिम राजा **अरिकेसरी** (पम्पके आश्रयदाता) के पुत्रका नाम **वद्दिग** × ही होगा जो कि लेखकोंके प्रमादसे 'वयग' या 'वाग' बन गया है।

× महाराजा अमोघवर्ष (प्रथम) के पहले शायद राष्ट्रकूटोंकी राजधानी मयूरखण्डी थी जो इस समय नासिक जिलेमें मोरखण्ड किलेके नामसे प्रसिद्ध है।

* दाक्षिणके राष्ट्रकूटोंकी वंशावलीमें भी देखिए कि अमोघवर्ष नामके चार, कृष्ण या अकालवर्ष नामके तीन, गोविन्द नामके चार, इन्द्र नामके तीन और कर्क नामके तीन राजा लगभग २५० वर्षके बीचमें ही हुए हैं।

× श्रद्धेय प० गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझाने अपने ' सोलंकियोंके इतिहास ' (प्रथम भाग) में लिखा है कि सोमदेवसूरीने अरिकेसरीके प्रथम पुत्रका नाम नहीं दिया है, परन्तु ऐसा उन्होंने यशस्तिलककी प्रशस्तिके अशुद्ध पाठके कारण समझ लिया है, वास्तवमें नाम दिया है और वह ' वद्दिग ' ही है।

गंगाधारा स्थानके विषयमें हम पता नहीं लगा सके जो कि अरिकेसरीकी राजधानी थी और जहाँ यशस्तिलककी रचना समाप्त हुई है। संभवतः यह स्थान धारवाड़के ही आसपास कहीं होगा।

श्रीसोमदेवसूरिने नीतिवाक्यामृतकी रचना कब और कहाँ पर की थी इस बातका विचार करते हुए हमारी दृष्टि उसकी संस्कृत टीकाके निम्नलिखित वाक्यों पर जाती है।

' अत्र तावदखिलभूपालमौलिलालितचरणयुगलेन रघुवंशावस्थायिपराक्रमपालितकर्ण(कन्य)कुब्जेन महाराजश्रीमहेन्द्रदेवेन पूर्वाचार्यकृतार्थशास्त्रदुरवबोधग्रन्थगौरवखिन्नमानसेन सुबोधललितलघुनीतिवाक्यामृतरचनासु प्रवर्तितः सकलतार्किकचक्रचूडामणिचुम्बितचरणस्य पंचपंचाशन्महावादिविजयोपार्जितकीर्तिमन्दाकिनीपवित्रितत्रिभुवनस्य परमतपश्चरणरत्नोदन्वतः श्रीमन्नेमिदेवभगवतः प्रियशिष्येण वादीन्द्रकालानलश्रीमन्महेन्द्रदेवभट्टारकानुजेन स्याद्वादाचलसिंहतार्किकचक्रवर्तिवादीभपंचाननवाक्कल्लोलपयोनिधिकविकुलराजकुंजरप्रभृतिप्रशस्तिप्रशस्तालंकारेण षण्णवतिप्रकरणयुक्तिचिन्तामणिसूत्रमहेन्द्रमातलिसंजल्पयशोधरमहाराजचरितमहाशास्त्रवेधसा श्रीसोमदेवसूरिणा नीतिवाक्यामृतकर्ता निजमभिमतेष्टदेवताविशेषं नमस्कर्तुमिदमुच्यते— पृष्ठ २

इसका अभिप्राय यह है कि कान्यकुब्जनरेश्वर महाराजा महेन्द्रदेवने पूर्वाचार्यकृत अर्थशास्त्र (कौटिलीय अर्थशास्त्र ?) की दुर्बोधता और गुरुतासे खिन्न होकर ग्रन्थकर्त्ताको इस सुबोध सुन्दर और लघु नीतिवाक्यामृतकी रचना करनेमें प्रवृत्त किया।

कन्नौजके राजा महेन्द्रपालदेवका समय वि० संवत् ९६ से ९६४ तक निश्चित हुआ है। कर्पूरमंजरी और काव्यमीमांसा आदिके कर्ता सुप्रसिद्ध कवि राजशेखर इन्हीं महेन्द्रपालदेवके उपाध्याय थे। परन्तु हम देखते हैं कि यशस्तिलक वि० संवत् १०१६ में समाप्त हुआ है और नीतिवाक्यामृत उससे भी पीछे बना है, क्योंकि नीतिवाक्यामृतकी प्रशस्तिमें ग्रन्थकर्त्ताने अपनेको यशोधरमहाराजचरित या यशस्तिलक महाकाव्यका कर्ता प्रकट किया है और इससे प्रकट होता है कि उक्त प्रशस्ति लिखते समय वे यशस्तिलकको समाप्त कर चुके थे। ऐसी अवस्थामें महेन्द्रपालदेवसे कमसे कम ५०-५१ वर्ष बाद नीतिवाक्यामृतका रचनाकाल ठहरता है। तब समझमें नहीं आता कि टीकाकारने सोमदेवको महेन्द्रपालदेवका सामयिक कैसे ठहराया है। आश्चर्य नहीं जो उन्होंने किसी सुनी सुनाई किंवदन्तीके आधारसे पूर्वोक्त बात लिख दी हो।

नीतिवाक्यामृतके टीकाकारका समय अज्ञात है; परन्तु यह निश्चित है कि वे मूलग्रन्थकर्त्तासे बहुत पीछे हुए हैं क्योंकि आप ग्रन्थकर्त्ता और उनके नामसे भी अच्छी तरह परिचित नहीं हैं। यदि ऐसा न होता तो मंगलाचरणके श्लोककी टीकामें जो ऊपर उद्धृत हो चुकी है वे ग्रन्थकर्त्ताका नाम 'मुनिचन्द्र' और उनके गुरुका नाम 'सोमदेव' न लिखते। इससे भी मालूम होता है कि उन्होंने ग्रन्थकर्त्ता और महेन्द्रदेवका समकालिकत्व किंवदन्तीके आधारसे ही लिखा है।

सोमदेवसूरिने यशस्तिलकमें एक जगह जो प्राचीन महाकवियोंकी नामावली दी है उसमें सबसे अन्तिम नाम राजशेखरका है ×। इससे मालूम होता है कि राजशेखरका नाम सोमदेवके समयमें प्रसिद्ध हो चुका था, अत एव राजशेखर उनसे अधिक नहीं तो ५० वर्ष पहले अवश्य हुए होंगे और महेन्द्रदेवके वे उपाध्याय थे। इससे भी नीतिवाक्यामृतका उनके समयमें या उनके कहनेसे बनना कम संभव जान पड़ता है।

और यदि कान्यकुब्जनरेशके कहनेसे सचमुच ही नीतिवाक्यामृत बनाया गया होता, तो इस बातका उल्लेख ग्रन्थकर्त्ता अवश्य करते बल्कि महाराजा महेन्द्रपालदेव इसका उल्लेख करनेके लिए स्वयं उनसे आग्रह करते।

पहले बतलाया जा चुका है कि सोमदेवसूरि देवसंघके आचार्य थे और जहाँ तक हम जानते हैं यह संघ दक्षिणमें ही रहा है। अब भी उत्तरमें जो भट्टारकोंकी गद्दियाँ हैं उनमेंसे कोई भी देवसंघकी नहीं है। यशस्तिलक भी दक्षिणमें ही बना है और उसकी रचनासे भी अनुमान होता है कि उसके कर्ता दाक्षिणात्य हैं। ऐसी अवस्थामें उनका

देखो नागरीप्रचारिणी पत्रिका (नवीन संस्करण) भाग २ अंक १ में स्वर्गीय पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरीका 'अवन्तिसुन्दरी' शीर्षक लेख।

× तथा—उरु भारवि भवभूति भर्तृहरि भर्तृमेण्ठ गुणाढ्य-व्यास भास-व्यास-कालिदास-बाण मयूर-नारायण-कुमार माघ-राजशेखरादिमहाकविकाव्येषु तत्र तत्रावसरे भरतप्रणीते काव्याध्याये सर्वजनप्रसिद्धेषु तेषु तेषूपाख्यानेषु च कथं तद्विषया महती प्रसिद्धिः।

—यशस्तिलक आ० ४, पृ० ११३।

निर्ग्रन्थ होकर भी कान्यकुब्जके राजाकी सभामें रहना और उनके कहनेसे नीतिवाक्यामृतकी रचना करना असम्भव नहीं तो बिलकुल असंगत जान पड़ता है।

मूलग्रन्थ और उसके कर्ताके विषयमें जितनी बातें मालूम हो सकीं, उन्हें लिखकर अब हम टीका और टीकाकारका परिचय देनेकी ओर प्रवृत्त होते हैं —

टीकाकार।

जिस एक प्रतिके आधारसे यह टीका मुद्रित हुई है, उसमें कहीं भी टीकाकारका नाम नहीं दिया है। सम्भव है कि टीकाकारकी भी कोई प्रशस्ति रही हो और वह लेखकोंके प्रमादसे छूट गई हो। परन्तु टीकाकारने ग्रन्थके आरम्भमें जो मंगलाचरणका श्लोक लिखा है, उससे अनुमान होता है कि उनका नाम शायद '**हरिबल**' होगा।

हरिं हरिबलं नत्वा हरिवर्णं हरिप्रभम्।
हरीज्यं च ब्रुवे टीकां नीतिवाक्यामृतोपरि॥

यह श्लोक मूल नीतिवाक्यामृतके निम्नलिखित मंगलाचरणका बिलकुल अनुकरण है'—

सोमं सोमसमाकारं सोमाभं सोमसम्भवम्।
सोमदेवं मुनिं नत्वा नीतिवाक्यामृतं ब्रुवे॥

जब टीकाकारका मंगलाचरण मूलका अनुकरण है और मूलकर्ताने अपने मंगलाचरणमें अपना नाम भी पर्यायान्तरसे व्यक्त किया है, तब बहुत सम्भव है कि टीकाकारने भी अपने मंगलाचरणमें अपना नाम व्यक्त करनेका प्रयत्न किया हो और ऐसा नाम उसमें **हरिबल** ही हो सकता है जिसके आगे मूलके सोमदेवके समान 'नत्वा' पद पड़ा हुआ है। यह भी सम्भव है कि हरिबल टीकाकारके गुरुका नाम हो और यह इसलिए कि सोमदेवको उन्होंने मूलग्रन्थकर्ताके गुरुका नाम समझा है। यद्यपि यह केवल अनुमान ही है, परन्तु यदि उनका या उनके गुरुका नाम **हरिबल** हो, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है।

टीकाकारने मंगलाचरणमें हरि या वासुदेवको नमस्कार किया है। इससे मालूम होता है कि वे वैष्णव धर्मके उपासक होंगे।

वे कहाँके रहनेवाले थे और किस समयमें उन्होंने यह टीका लिखी है, इसके जाननेका कोई साधन नहीं है। परन्तु यह बात निःसंशय होकर कही जा सकती है कि वे बहुश्रुत विद्वान् थे और एक राजनीतिके ग्रन्थपर टीका लिखनेकी उनमें यथेष्ट योग्यता थी। इस विषयके उपलब्ध साहित्यका उनके पास काफी संग्रह था और टीकामें उसका पूरा पूरा उपयोग किया गया है। नीतिवाक्यामृतके अधिकांश वाक्योंकी टीकामें उन वाक्योंसे मिलते जुलते अभिप्रायवाले उद्धरण देकर उन्होंने मूल अभिप्रायको स्पष्ट करनेका भरसक प्रयत्न किया है। विद्वान् पाठक समझ सकते हैं कि यह काम कितना कठिन है और इसके लिए उन्हें कितने ग्रन्थोंका अध्ययन करना पड़ा होगा; स्मरणशक्ति भी उनकी कितनी प्रखर होगी।

यह टीका पचासों ग्रन्थकारोंके उद्धरणोंसे भरी हुई है। इसमें किन किन कवियों, आचार्यों या ऋषियोंके श्लोक उद्धृत किये गये हैं, यह जाननेके लिए ग्रन्थके अन्तमें उनके नामोंकी और उनके पद्योंकी एक सूची वर्णानुक्रमसे लगा दी गई है, इसलिए यहाँ पर उन नामोंका पृथक् उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है। पाठक देखेंगे कि उसमें अनेक नाम बिल्कुल अपरिचित हैं और अनेक ऐसे हैं जिनके नाम तो प्रसिद्ध हैं, परन्तु रचनायें इस समय अनुपलब्ध हैं। इस दृष्टिसे यह टीका और भी बड़े महत्त्वकी है कि इससे राजनीति या सामान्यनीतिसम्बन्धी प्राचीन ग्रन्थकारोंकी रचनाके सम्बन्धमें अनेक नई नई बातें मालूम होंगी।

संशोधकके आक्षेप।

इस ग्रन्थकी प्रेसकापी और प्रुफ संशोधनका काम श्रीयुत पं० पन्नालालजी सोनीने किया है। आपने केवल अपने उत्तरदायित्व पर, मेरी अनुपस्थितिमें, कई टिप्पणियाँ ऐसी लगा दी हैं जिनसे टीकाकारके और उनकी टीकाके विषयमें एक बड़ा भारी भ्रम फैल सकता है अतएव यहाँ पर यह आवश्यक प्रतीत होता है कि उन टिप्पणियों पर भी एक नजर डाल ली जाय। सोनीजीकी टिप्पणियोंके आक्षेप दो प्रकारके हैं —

१—टीकाकारने जो मनु, शुक्र और याज्ञवल्क्यके श्लोक उद्धृत किये हैं, वे मनुस्मृति शुक्रनीति और याज्ञवल्क्यस्मृतिमें, नहीं हैं। यथा पृष्ठ १६५ की टिप्पणी— श्लोकोऽयं मनुस्मृतौ तु नास्ति। टीकाकर्त्रा स्वदौष्ट्येन ग्रन्थकर्तुःपराभवाभिप्रायेण बहव श्लोका स्वयं विरचय्य तत्र तत्र स्थलेषु विनिवेशिता। अर्थात् यह श्लोक मनुस्मृतिमें तो नहीं है, टीकाकारने अपनी दुष्टतावश मूलकर्त्ताको नीचा दिखानेके अभिप्रायसे स्वयं ही बहुतसे श्लोक बनाकर जगह जगह घुसेड़ दिये हैं।

२—इस टीकाकारने-जो कि निश्चयपूर्वक अजैन है-बहुतसे सूत्र अपने मनके अनुसार स्वयं बनाकर जोड़ दिये हैं। यथा पृष्ठ ४९ की टिप्पणी— अस्य ग्रन्थस्य कर्त्ता कश्चिदजैनविद्वानस्तीति निश्चितं। अतस्तेन स्वमतानुसारेण बहूनि सूत्राणि विरचय्य संयोजितानि। तानि च तत्र तत्र निवेदयिष्याम।"

पहले आक्षेपके सम्बन्धमें हमारा निवेदन है कि सोनीजी वैदिक धर्मके साहित्य और उसके इतिहाससे सर्वथा अनभिज्ञ हैं, फिर भी उनके साहसकी प्रशंसा करनी चाहिए कि उन्होंने मनु या शुक्रके नामके किसी ग्रन्थके किसी एक संस्करणको देखकर ही अपनी अद्भुत राय दे डाली है। खेद है कि उन्हें एक प्राचीन विद्वानके विषयमें-केवल इतने कारणसे कि वह जैन नहीं है इतनी बड़ी एकतरफा डिक्री जारी कर देनेमें जरा भी झिझक नहीं हुई!

सोनीजीने सारी टीकामें मनुके नामके पाँच श्लोकोंपर, याज्ञवल्क्यके एक श्लोकपर और शुक्रके दो श्लोकोंपर अपने नोट दिये हैं कि ये श्लोक उक्त आचार्योंके ग्रन्थोंमें नहीं हैं। सचमुच ही उपलब्ध मनुस्मृति याज्ञवल्क्यस्मृति और शुक्रनीतिमें उद्धृत श्लोकोंका पता नहीं चलता। परन्तु जैसा कि सोनीजी समझते हैं इसका कारण टीकाकारकी दुष्टता या मूलकर्त्ताको नीचा दिखानेकी प्रवृत्ति नहीं है।

सोनीजीको जानना चाहिए कि हिन्दुओंके धर्मशास्त्रोंमें समय समय पर बहुत कुछ परिवर्तन होते रहे हैं। अपने निर्माणसमयमें वे जिस रूपमें थे इस समय उस रूपमें नहीं मिलते हैं। उनके संक्षिप्त संस्करण भी हुए हैं और प्राचीन ग्रन्थोंके नष्ट हो जानेसे उनके नामसे दूसरोंने भी उसी नामके ग्रन्थ बना दिये हैं। इसके सिवाय एक स्थानकी प्रतिके पाठोंसे दूसरे स्थानोंकी प्रतियोंके पाठ नहीं मिलते। इस विषयमें प्राचीन साहित्यके खोजियोंने बहुत कुछ छानबीन की है और इस विषय पर बहुत कुछ प्रकाश डाला है। कौटिलीय अर्थशास्त्रकी भूमिकामें उसके सुप्रसिद्ध सम्पादक प आर. शामशास्त्री लिखते हैं —

'अनेन चाणक्यकालिकं धर्मशास्त्रमधुना लभ्याद्याज्ञवल्क्यधर्मशास्त्रादन्यदेवासीदिति प्रतिभाति। एवमेव ये पुनर्मनु-बार्हस्पत्यौशनसा मिश्राभिप्रायास्तत्र तत्र कौटिल्येन परामृष्टा न तेऽधुनोपलभ्यमानेषु तत्तद्धर्मशास्त्रेषु दृश्यन्त इति कौटिल्यपरामृष्टानि तानि शास्त्राण्यन्यान्येवेति बाढं सुवचम्।

अर्थात् इससे मालूम होता है कि चाणक्यके समयका याज्ञवल्क्य धर्मशास्त्र वर्तमान याज्ञवल्क्य शास्त्र (स्मृति) से कोई जुदा ही था। इसी तरह कौटिल्यने अपने अर्थशास्त्रमें जगह जगह बार्हस्पत्य औशनस आदिके जो अपने मिश्र अभिप्राय प्रकट किये हैं वे अभिप्राय इस समय मिलनेवाले उन धर्मशास्त्रोंमें नहीं दिखलाई देते। अतएव यह अच्छी तरह सिद्ध होता है कि कौटिल्यने जिन शास्त्रोंका उल्लेख किया है वे इनके सिवाय दूसरे ही थे।

स्वर्गीय बाबू रमेशचन्द्र दत्तने अपने 'प्राचीन सभ्यताके इतिहास' में लिखा है कि प्राचीन धर्मसूत्रोंको सुधार कर उत्तरकालमें स्मृतियाँ बनाई गई हैं—जैसे कि मनु और याज्ञवल्क्यकी स्मृतियाँ। जो धर्मसूत्र खोजे गये हैं उनमें एक मनुका सूत्र भी है जिससे कि पीछेके समयमें मनुस्मृति बनाई गई है।⊗

याज्ञवल्क्य स्मृतिके सुप्रसिद्ध टीकाकार विज्ञानेश्वर लिखते हैं — 'याज्ञवल्क्यशिष्य कश्चन प्रश्नोत्तररूपं याज्ञवल्क्यप्रणीतं धर्मशास्त्रं संक्षिप्य कथयामास, यथा मनुप्रोक्तं भृगुः।' अर्थात् याज्ञवल्क्यके किसी शिष्यने याज्ञवल्क्यप्रणीत धर्मशास्त्रको संक्षिप्त करके कहा-जिस तरह कि भृगुने मनुप्रणीत धर्मशास्त्रको संक्षिप्त करके मनुस्मृति लिखी है। इससे मालूम होता है कि उक्त दोनों स्मृतियाँ, मनु और याज्ञवल्क्यके प्राचीन शास्त्रोंके उनके

⊗ रमेशबाबूने अपने इतिहासके चौथे भागमें इस समय मिलनेवाली पृथक् पृथक् बीसों स्मृतियों पर अपने विचार प्रकट किये हैं और उसमें बतलाया है कि अधिकांश स्मृतियाँ बहुत पीछेकी बनी हुई हैं और बहुतोंमें-जो प्राचीन भी हैं-बहुत पीछे तक नई नई बातें शामिल की जाती रही हैं।

३—" कुटीरकबह्वोदक-हंस-परमहंसा यतयः " ॥ २५

इसका कारण आपने यह बतलाया है कि मुद्रित पुस्तकमें और हस्तलिखित मूलपुस्तकमें ये सूत्र नहीं हैं। परन्तु इस कारणमें कोई तथ्य नहीं दिखलाई देता। क्योंकि—

१—जब तक दश पाँच हस्तलिखित प्रतियाँ प्रमाणमें पेश न की जायँ तब तक यह नहीं माना जा सकता कि मुद्रित और मूलपुस्तकमें जो पाठ नहीं हैं वे मूलकर्त्ताके नहीं हैं—ऊपरसे जोड़ दिये गये हैं। इस तरहके हीन अधिक पाठ जुदा जुदा प्रतियोंमें अक्सर मिलते हैं।

२—मूलकर्त्ताने पहले वर्णोंके भेद बतलाकर फिर आश्रमोंके भेद बतलाये हैं—ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और यति। फिर ब्रह्मचारियोंके उपकुर्वाण, नैष्ठिक, और कृतुप्रद ये तीन भेद बतलाकर उनके लक्षण दिये हैं। इसके आगे गृहस्थ, वानप्रस्थ और यतियोंके लक्षण क्रमसे दिये हैं। तब यह स्वाभाविक और क्रमप्राप्त है कि ब्रह्मचारियोंके समान गृहस्थों वानप्रस्थों और यतियोंके भी भेद बतलाये जायँ और वे ही उक्त तीन सूत्रोंमें बतलाये गये हैं। तब यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि प्रकरणके अनुसार उक्त तीनों सूत्र अवश्य रहने चाहिए और मूलकर्त्ताने ही उन्हें रचा होगा। जिन प्रतियोंमें उक्त सूत्र नहीं हैं उनमें उन्हें भूलसे ही छूटे हुए समझना चाहिए।

३—यदि इस कारणसे ये मूलकर्त्ताके नहीं हैं कि इनमें बतलाये हुए भेद जैनमतसम्मत नहीं हैं, तो हमारा प्रश्न है कि उपकुर्वाण कृतुप्रद आदि ब्रह्मचारियोंके भेद भी किस जैनग्रन्थमें नहीं लिखे हैं तब उनके सम्बन्धक जितने सूत्र हैं उन्हें भी मूलकर्त्ताके नहीं मानने चाहिए। यदि सूत्रोंके मूलकर्तृकृत होनेकी यही कसौटी मानी जाय ठहरा दी, तब तो इस ग्रन्थका आधेस भी अधिक भाग टीकाकारकृत ठहर जायगा। क्योंकि इसमें सैकड़ों ही सूत्र ऐसे हैं जिनका जैनधर्मके साथ कुछ भी सम्बन्ध नहीं है और कोई भी विद्वान् उन्हें जैनसम्मत सिद्ध नहीं कर सकता।

४—जिसतरह टीकापुस्तकमें अनेक सूत्र अधिक हैं और जिन्हें सोनीजी टीकाकारकी गलती समझते हैं, उसी प्रकार मुद्रित और मूलपुस्तकमें भी कुछ सूत्र अधिक हैं (जो टीकापुस्तकमें नहीं हैं) तब उन्हें किसकी गलती समझना चाहिए? विद्यावृद्धसमुद्देशके ५९ वें सूत्रके आगे निम्नलिखित पाठ छूटा हुआ है जो मुद्रित और मूलपुस्तकमें मौजूद है —

"सांख्य योगो लोकायतं चान्वीक्षिकी। बौद्धार्हतोः श्रुतेः प्रतिपक्षत्वात् (नान्वीक्षिकीत्व) प्रकृतिपुरुषज्ञो हि राजा सत्त्वमवलम्बते। रज: फलं चापलं च परिहरति तमोभिनाभिभूयते।"

भला इन सूत्रोंको टीकाकारने क्यों छोड़ दिया? इसमें कही हुई बात तो उसके प्रतिकूल नहीं थी? और मुद्रित तथा मूलपुस्तक दोनों ही यदि जैनोंके लिए विशेष प्रामाणिक माना जावें तो उनमें यह अधिक पाठ नहीं होना चाहिए था। क्योंकि इसमें वेदविरोधी होनेके कारण जैन और बौद्धदर्शनको आन्वीक्षिकीसे बाहर कर दिया है। और मुद्रित पुस्तकमें तो मूलकर्त्ताके मंगलाचरण तकका अभाव है। वास्तविक बात यह है कि न इसमें टीकाकारका दोष है और न मुद्रित करानेवालेका। जिसे जैसी प्रति मिली है उसने उसीके अनुसार टीका लिखी है और पाठ छपाया है। एक प्रतिसे दूसरी और दूसरीसे तीसरी इस तरह प्रतियाँ होते होते लेखकोंके प्रमादसे अक्सर पाठ छूट जाते हैं और टिप्पण आदि मूलमें शामिल हो जाते हैं।

हम समझते हैं कि इन बातोंसे पाठकोंका यह भ्रम दूर हो जायगा कि टीकाकारने कुछ सूत्र स्वयं रचकर मूलमें जोड़ दिये हैं। यह केवल सोनीजीके मस्तककी उपज है और निस्सार है। खेद है कि हमें उनकी भ्रमपूर्ण टिप्पणियोंके कारण भूमिकाको इतना अधिक स्थान रोकना पड़ा।

एक विचारणीय प्रश्न।

इस आशासे अधिक बढ़ी हुई भूमिकाको समाप्त करनेके पहले हम अपने पाठकोंका ध्यान इस ओर विशेषरूपसे आकर्षित करना चाहते हैं कि वे इस ग्रन्थका जरा गहराईके साथ अध्ययन करें और देखें कि इसका जैनधर्मके साथ क्या सम्बन्ध है। हमारी समझमें तो इसका जैनधर्मसे बहुत ही कम मेल खाता है। राजनीति भी धर्मनिरपेक्ष है अर्थात् वह किसी विशेष धर्मका पक्ष नहीं करती तो फिर इसका जिस प्रकार जैनधर्मसे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है

उसी प्रकार और धर्मोंमें भी नहीं रहना चाहिए था। परंतु हम देखते हैं कि इसका वर्णाचार और आश्रमाचारकी व्यवस्थाके लिए वैदिक साहित्यकी ओर बहुत अधिक झुकाव है। इस ग्रन्थके विद्यावृद्ध, आन्वीक्षिकी और त्रयी समुद्देशोंको अच्छी तरह पढ़नेसे पाठक हमारे अभिप्रायको अच्छी तरह समझ जावेंगे। जैनधर्मके मर्मज्ञ विद्वानोंको चाहिए कि वे इस प्रश्नका विचारपूर्वक समाधान करें कि एक जैनाचार्यकी कृतिमें आन्वीक्षिकी और त्रयीको इतनी अधिक प्रधानता क्यों दी गई है।

यशस्तिलकके नीचे लिखे पद्योंको भी इस प्रश्नका उत्तर सोचते समय सामने रख लेना चाहिए'—

द्वौ हि धर्मौ गृहस्थानां लौकिकः पारलौकिकः।
लोकाश्रयो भवेदाद्यः परस्यादागमाश्रयः॥
जातयोऽनादयः सर्वास्तत्क्रियापि तथाविधा।
श्रुतिः शास्त्रान्तरं वास्तु प्रमाणं कात्र नः क्षतिः॥
स्वजात्यैव विशुद्धानां वर्णानामिह रत्नवत्।
तत्क्रियाविनियोगाय जैनागमविधिः परम्॥
यद्भवभ्रान्तिनिर्मुक्तिहेतुधीस्तत्र दुर्लभा।
संसारव्यवहारे तु स्वतःसिद्धे वृथागमः॥

तथा च— सर्व एव हि जैनानां प्रमाणं लौकिको विधिः।
यत्र सम्यक्त्वहानिर्न यत्र न व्रतदूषणम्॥

क्या श्रीसोमदेवसूरि वर्णाश्रमव्यवस्था और तत्सम्बन्धी वैदिक साहित्यको लौकिक धर्म तो नहीं समझते हैं? और इसी लिए तो यह नहीं कहते हैं कि यदि इस विषय में श्रुति (वेद) और शास्त्रान्तर (स्मृतियाँ) प्रमाण माने जायँ तो हमारी क्या हानि है? राजनीति भी तो लौकिक शास्त्र ही है।

हमको आशा है कि विद्वज्जन इस प्रश्नको ऐसा ही न पड़ा रहने देंगे।

मुद्रण-परिचय।

अबसे कोई २५ वर्ष पहले बम्बईकी मेसर्स गोपाल नारायण कम्पनीने इस ग्रन्थको एक सोसन व्याख्याके साथ प्रकाशित किया था और लगभग उसी समय विद्याविलासी बड़ोदानरेशने इसके मराठी और गुजराती अनुवाद प्रकाशित कराये थे। उक्त तीनों संस्करणोंको देखकर—जिन दिनों मैं स्वर्गीय स्याद्वादवारिधि प० गोपालदासजीकी अधीनतामें जैनमित्रका सम्पादन करता था—मेरी इच्छा इसका हिन्दी अनुवाद करनेकी हुई और तदनुसार मैंने इसके कई समुद्देशोंका अनुवाद जैनमित्रमें प्रकाशित भी किया, परन्तु इसके आन्वीक्षिकी और त्रयी आदि समुद्देशोंका जैनधर्मके साथ कोई सामञ्जस्य न कर सकनेके कारण मैं अनुवादकार्यको अधूरा ही छोड़ कर इसकी संस्कृत टीकाकी खोज करने लगा।

तबसे, इतने दिनोंके बाद, यह टीका प्राप्त हुई और अब यह माणिकचन्द्रग्रन्थमालाके द्वारा प्रकाशित की जा रही है। खेद है कि इसके मध्यके २५–२६ पत्र गायब हैं और वे खोज करनेपर भी नहीं मिले। इसके सिवाय इसकी कोई दूसरी प्रति भी न मिल सकी और इस कारण इसका संशोधन जैसा चाहिए वैसा न कराया जा सका। दृष्टिदोष और अनवधानतासे भी बहुतसी अशुद्धियाँ रह गई हैं। फिर भी हमें आशा है कि मूलग्रन्थके समझनेमें इस टीकासे काफी सहायता मिलेगी और इस दृष्टिसे इस अपूर्ण और अशुद्धरूपमें भी इसका प्रकाशित करना सार्थक होगा।

हस्तलिखित प्रतिका इतिहास।

पहले जैनसमाजमें शास्त्रदान करनेकी प्रथा विशेषतासे प्रचलित थी। अनेक धनी मानी गृहस्थ ग्रन्थ लिखा लिखाकर जैनसाधुओं और विद्वानोंको दान किया करते थे और इस पुण्यफलसे अपने ज्ञानावरणीय कर्मका निवारण करते थे। बहुतोंने तो इस कार्यके लिए लेखनशालायें ही खोल रक्खी थीं जिनमें निरन्तर प्राचीन अर्वाचीन ग्रन्थोंकी प्रतियाँ होती रहती थीं। यही कारण है जो उस समय मुद्रणकला न रहने पर भी ग्रन्थोंका यथेष्ट प्रचार रहता था और ज्ञानका प्रकाश मन्द नहीं होने पाता था। स्त्रियोंका इस ओर और भी अधिक लक्ष्य था। हमने ऐसे पचासों हस्तलिखित ग्रन्थ देखे हैं जो धर्मप्राणा स्त्रियोंके द्वारा ही दान किये गये हैं।

इस शास्त्रदान प्रथाको उत्तेजित करनेके लिए उस समयके विद्वान् प्रायः प्रत्येक दान किये हुए ग्रन्थके अन्तमें दाताकी प्रशस्ति लिख दिया करते थे जिसमें उसका और उसके कुटुम्बका गुणकीर्तन रहा करता था। हमारे प्राचीन पुस्तक-भण्डारोंके ग्रन्थोंमेंसे इस तरहकी हजारों प्रशस्तियाँ संग्रह की जा सकती हैं जिनसे इतिहास-सम्पादनके कार्यमें बहुत कुछ सहायता मिल सकती है।

नीतिवाक्यामृतटीकाकी यह प्रति भी जिसके आधारसे यह ग्रन्थ मुद्रित हुआ है, इसी प्रकार एक धर्मप्राण गृहस्थकी धर्मप्राणा स्त्रीके द्वारा दान की गई थी। ग्रन्थके अन्तमें जो प्रशस्ति दी हुई है उससे मालूम होता है कि कार्तिक सुदी ५ विक्रमसंवत् १५४१ को हिसार नगरके चन्द्रप्रभचैत्यालयमें सुलतान बहलोल (लोदी) के राज्यकालमें यह प्रति दान की गई थी।

नागपुर या नागौरके रहनेवाले खण्डेलवालवंशीय छाबड़ागोत्रीय संघपति कामाकी भार्या साध्वी कमलश्रीने हिसार निवासी पं० मेहा या मीहाको इसे भक्तिभावपूर्वक भेंट किया था।

कल्हू नामक संघपतिकी भार्याका नाम राणा था। उसके चार पुत्र थे—दया, धारा, कामा और सुरपति। इनमेंसे तीसरे पुत्र संघपति कामाकी भार्या उक्त साध्वी कमलश्री थी जिसने ग्रन्थ दान किया था। कमलश्रीके भीखा और धर्मदास नामके दो पुत्र थे। इनमेंसे भीखाकी भार्या भिउसिरिके गुरुदास नामक पुत्र था जिसकी गुणश्री भार्याके गभरू, रणमल्ल और अट्टू नामके दो पुत्र थे। दूसरे धर्मदासकी भार्या धउसिरिके रायमदास पुत्र था जिसकी स्त्रीका नाम सरस्वती था। पाठक देखें कि यह परिवार कितना बड़ा और कितना हरा-भरा था। कमलश्रीके सामने उसके प्रपौत्र तक मौजूद थे।

पण्डित मेहा या मीहाका दूसरा नाम पं० मेधावी था। ये वही मेधावी हैं जिन्होंने धर्मसंग्रहश्रावकाचार नामका ग्रन्थ बनाया है और जो मुद्रित हो चुका है। पं० मीहा अपनी गुरुपरम्पराके विषयमें कहते हैं कि नन्दिसंघ बलात्कारगण और सरस्वतीगच्छके भट्टारक पद्मनन्दिके शिष्य भ० शुभचन्द्र और उनके शिष्य भ० जिनचन्द्र मेरे गुरु थे। जिनचन्द्रके दो शिष्य और थे—एक रत्ननन्दि और दूसरे विमलकीर्ति।

यह पुस्तकदानकी प्रशस्ति पं० मेधावीकी ही लिखी हुई मालूम होती है। उन्होंने त्रैलोक्यप्रज्ञप्ति, मूलाचारकी वसुनन्दिवृत्ति आदि ग्रन्थोंमें और भी कई ऐसी प्रशस्तियाँ लिखी हैं। वसुनन्दि वृत्तिकी प्रशस्ति वि० सं० १५१६ की और त्रैलोक्यप्रज्ञप्ति की १५१९ की लिखी हुई है *। धर्मसंग्रहश्रावकाचार उन्होंने कार्तिक वदी १३ सं० १५४१ को समाप्त किया है। नीतिवाक्यामृतटीकाकी यह प्रशस्ति धर्मसंग्रहके समाप्त होनेके कोई आठ दिन बाद ही लिखी गई है।

धर्मसंग्रहमें पं० मेधावीने अपने पिताका नाम उद्धरण, माताका भीषुही और पुत्रका जिनदास लिखा है। वे अग्रवाल जातिके थे और अपने समयके एक प्रसिद्ध विद्वान् थे। उन्होंने दक्षिणके पुस्तकगच्छके आचार्य श्रुतमुनिसे अन्य कई विद्वानोंके साथ अष्टसहस्री (विद्यानन्दस्वामीकृत) पढ़ी थी। जान पड़ता है कि उस समय हिसारमें जैन विद्वानोंका अच्छा समूह था। भट्टारकोंकी गद्दी भी शायद वहीं पर थी।

यह टीकापुस्तक हिसारसे आमेरके पुस्तक भण्डारमें कब और कैसे पहुँची इसका कोई पता नहीं है। आमेरके भण्डारमेंसे सं० १९६४ में भट्टारक महेन्द्रकीर्ति द्वारा यह बाहर निकाली गई और उसके बाद जयपुर निवासी पं० इन्द्रलालजी शास्त्रीके प्रयत्नसे हमको इसकी प्राप्ति हुई। इसके लिए हम भट्टारकजी और शास्त्रीजी दोनोंके कृतज्ञ हैं।

इस प्रतिमें १११ पत्र हैं और प्रत्येक पृष्ठमें प्रायः २ पंक्तियाँ हैं। प्रत्येक पत्रकी लम्बाई ११॥ इंच और चौड़ाई ५॥ इंचसे कुछ कम है। ५१ से ७१ तकके पृष्ठ मौजूद नहीं हैं।

बम्बई।　　　　　　　　　　　　　　निवेदक—
चन्द्रग्रहण पूर्णिमा १९७९ वि०।　　　नाथूराम प्रेमी।

---

* देखो जैनहितैषी भाग १५ अंक ३-४।

[नोटः—' भारतीय वाङ्मय ' का जर्मन भाषामें विस्तृत और परिपूर्ण इतिहास लिखनेवाले प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् डॉ० विण्टरनित्स्, जो वर्तमानमें बङ्गीय साहित्य सम्राट् कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर सस्थापित शांतिनिकेतनकी विश्व-भारती सस्थाको अपने ज्ञानका दान कर रहे हैं, उनके पास ' नीतिवाक्यामृत ' की १ प्रति अभिप्रायार्थ भेट की गई थी। इस भेटके स्वीकाररूपमें डॉ० महाशयने ग्रन्थमालाके मंत्री और इस प्रस्तावनाके लेखक श्रीयुत प्रेमीजीके पास जो एक पत्र भेजा है वह यहांपर मुद्रित किया जाता है। इससे, सोमदेवसूरिके नीतिवाक्यामृतके बारेमें डॉ० महाशयका कैसा अभिप्राय है वह थोडेमें ज्ञात हो जाता है। इस ग्रन्थके बारेमें, जैसा कि डॉ० महाशयने अपने इस पत्रमें सूचित किया है, विशेष उल्लेख, उन्होंने अपने भारतीय वाङ्मयके इतिहासके तीसरे भाग, (जो हालहीमें प्रकाशित हुआ है) पृ० ५०२७–५३० में किया है। —संपादक।

(Santiniketana, Birbhum, Bengal)
Srinagar (Kashmir) 25-4-23.

To Nathurama Premi, Mantri,
Manikachanda-Jaina Granthamala,
Bombay.

Dear Sir,

I beg to acknowledge the receipt of one copy of Nitivakyamritam Satikam, published in the Jaina Granthamala. As I have pointed out in the third volume of my 'History of Indian Literature,' the work is of the greatest importance both on account of its contents and especially as the date of its author is well known. Though quoting largely from the Kautilya Arthasastra, Somadeva is yet quite on original writer and treats his subject from a different point of view. The late Jainacharya Vijaya Dharma Suri had lent me a copy of the old edition of the book which is very rare. I often urged upon him the necessity of a new edition of this important work. I am very glad that the work is now accessible in such a handy and excelent edition, and I am very much obliged to you for sending me a copy.

It is a pity that the introduction is not in English or in Sanskrit, as few Europeans read the Vernacular.

Yours truly,
M. WINTERNITZ.

(शान्तिनिकेतन, वीरभूम वंगाल)
श्रीनगर (काश्मीर) ता २५–४–२१

नाथूराम प्रेमी, मंत्री
माणिकचन्द्र जैन ग्रंथमाला मुंबई.

प्रिय महाशय,

आपकी जैन ग्रथमाळामें प्रकाशितक सटीक नीतिवाक्यामृतकी पुस्तक मुझे मिली। जैसा कि मैंने अपने ' भारतीय वाङ्मयका इतिहास ' नामक ग्रन्थके तीसरे भागमें लिखा है, यह ग्रन्थ, अन्दरके विषय और इसके कर्ताके समयकी दृष्टिसे बहुत महत्वका है। यद्यपि कौटिल्यके ग्रन्थका इसमें अनुसरण किया गया है तथापि सोमदेवसूरि स्वतन्त्र लेखक हो कर विषय प्रतिपादनकी शैली उनकी निराली ही है। जैनाचार्य विजयधर्मसूरिने इस ग्रन्थकी अत्यत दुर्लभ्य ऐसी एक प्रति मुझे दी थी और इस महत्त्वके ग्रन्थकी दूसरी आवृत्ति प्रकट करनी चाहिए ऐसा मैंने आग्रह भी उनसे किया था। अब इस ग्रन्थकी सुन्दर आकारमें उत्तम रीतीसे प्रकट की हुई इस आवृत्तिको देख कर मुझे आनंद होता है और आपने जो इसकी एक प्रति मुझे भेजी इस लिए मैं आपका बहुत ही उपकृत हू।

इसकी प्रस्तावना इंग्रेजी या सस्कृतमें नहीं लिखी गई इस लिए मुझे खेद होता है, क्यों कि देशभाषा जानने वाला युरपियन क्वचित् ही होता है।

आपका,
एम्. विंटरनित्स

कीर ग्रामनो जैन शिलालेख

[पजाब प्रातना कागडा जिल्लामा कीरग्राम करीने एक स्थान छे अने त्या शिव-वैद्यनाथनु प्राच न अने प्रख्यात धाम छे ए वैद्यनाथना मदिरमा कोइ जैन प्रतिमानु पाषाणनु सिंहासन क्याएथी आवी गएलु छे जेना उपर नीचे आपलो लेख कोतरेलो छे ए लेख एपिग्राफिआ इडिकाना, १ ला भागना, ११८ पान उपर डॉ० जी बुल्हरे स क्षिप्त विवेचन साथे प्रकट करेलो छे ए विवेचन अने लेख आ प्रमाणे छे — सपादक]

नीचे आपेलो लेख कागडाना कीरग्राममा आवेला शिव-वैद्यनाथना देवालयमाथी मळी आवेलो छे ए लेख जैन नागरी अक्षरोमा बे लीटिओमा लखेलो छे आ लीटिओ महावीरनी प्रतिमानी बेठकनी त्रण बाजुए चार मोटा अने बे नाना भागमा वहेंचाएली छे लेख लगभग सारी स्थितिमा छे एमा दोल्हण अने आल्हण नामना बे व्यापारिओए आ प्रतिमा बनाव्या विषे तथा देवभद्रसूरिए एनी प्रतिष्ठा कर्या विषे उल्लेख करेलो छे वळी कीरग्राममा आ बने भाईओए महावीरनु एक मदिर बधाव्यानी नोंध पण एमा करेली छे वर्तमानमा, कीरग्राममा कोई पण जूना जैन मदिरनी हयाती जणाती नथी तेथी एम लागे छे के ए मदिर नष्ट थई गयु छे अने आ बेसणी कोईए त्याथी उपाडी लावी शिवना देवालयमा मूकी दीधी छे ए देवालयना अधिकारिओनी अजाणताने लीधे आ लेख सही सलामत रहेवा पाम्यो होय एम लागे छे

मूर्ति अने मदिर बनावनारा गुजराती होवा जोईए, पजाबी नहीं प्रतिष्ठा करनार सूरि पण गुजरातना हता कारण के दोल्हण अने आल्हण ब्रह्मक्षत्र गोत्र अगर ज्ञातिना हता के जे ज्ञाति गुजरातमा वधारे छे १८८१ ना सेन्सस रीपोर्ट प्रमाणे पजाबमा ते ज्ञाति जणाती नथी सूरी देवभद्रनो गुजरात साथे सबध तेमना गुरु अभयदेवना लीधे छे आ अभयदेवने 'रुद्र पल्लीय' कहेवामा आवे छे, अने ते जिनवल्लभ सूरिना शिष्यसततिमाना हता आ जिनवल्लभ ते खरतर गच्छनी पट्टावलीमा कहेला जे ४३ मा पट्टधर अने युगप्रधान पदधारी छे त ज छे' तेओ एक नवो सप्रदाय जेने अहीं सतान' ना विशेषणथी उल्लेखेलो छे ते चलाव्या पछी वि स ११६७ मा स्वर्गस्थ थया हता तेमना पछी थएला आचार्य जिनदत्तना वखतमा खरतर गच्छनी रुद्रपल्लीय शाखानी स्थापना जिनशेखराचार्ये वि स १२०४ मा करी हती तेथी आ लेखमा जणावेला देवभद्रसूरि श्वेताबर मतना खरतर गच्छनी एक शाखाना हता जूनी परपरा प्रमाणे खरतर गच्छनी स्थापना गुजरातना अणहिलवाड पाटणमा थई हती लेखनी मिति 'सवत एटले वि स १२९६ फाल्गुण वदि ५, रविवार' ते डॉक्टर स्क्रेम (Dr Schram) नी गणना प्रमाणे ई स १२४० नी १५ जान्यूआरी बराबर थाय छ जनरल सर कनिंगहाम जेणे आ लेख प्रथम शोधी काढ्यो हतो तेमणे पोताना आर्किओलॉजिकल रीपोर्टस् (पु ५ पान १८३) मां ए लखनी जे नकल आपी छे, त अधूरी छे कारण क तेमां 'सेव्रगोत्रे' ने 'पुत्राभ्यां' अने 'मति

१ अहीं आपेली लेखनी नकल पंजाब आर्किआर्लोजिकल सर्वे तरफथी मळेली एक छापी छ प रथी घडेली छे
२ जुओ-क्लैट (klata) ई ए, पु ११, पा २४८ अने २५४

ष्ठितं ' थी ' संतानीय ' सूधीनी बे लीटिओ मूकी दीधेली छे. आने लीधे तेम ज केटलाक खोटा-पाठोने लीधे तेमनी नकल उपरथी भाषांतर करवुं केवळ अशक्य छे[३].

मूळ लेख

१. ओं० संवत् १२९६ वर्षे फाल्गुण वदि ५ रवौ कीरग्रामे ब्रह्मक्षत्र गोत्रोत्पन्न व्यव० मानू पुत्राभ्यां व्य० दोल्हण आल्हणाभ्यां स्वकारित श्रीमन्महावीर देव चैत्ये[४] ॥

२. श्रीमहावीर जिन मूल बिंबं आत्मश्रेयो [र्थं] कारित । प्रतिष्ठितं च श्रीजिनवल्लभ सूरि-संतानीय रुद्रपल्लीय श्रीमदभयदेवसूरि शिष्यै. श्रीदेवभद्र सूरिभिः ॥[५]

भाषांतर

ॐ. (लौकिक)[६] वर्ष १२९६ ना फाल्गुण[७] वदि पंचमीने [दिवसे]—कीरग्राममां ब्रह्मक्षत्र ज्ञातिना व्यापारी मानूना बे पुत्रो व्यापारी दोल्हण अने आल्हणे पोते बंधावेला श्रीमन्महावीर देवना मन्दिरमां श्री महावीर जिननी मुख्य प्रतिमा,[८] पोताना कल्याणमाटे करावी. तेनी प्रतिष्ठा श्रीजिनवल्लभ सूरिना ' संतानीय ' रुद्रपल्लीय श्रीमत्सूरि अभयदेवना शिष्य श्रीसूरि देवभद्रे करी[९].

---

३. जनरल कनिंगहाम कहे छे के शिववैद्यनाथना देवालयना इतिहास साथे आ लेखनो कांई संबध नथी.

४. पंक्ति १ ली—ओं वांचवुं, कीरग्रामे ना र तथा ग्र जोडेला छे ते मूल छे, ब्रह्म वांचवु, ह्म नी उपर एक भूलथी करेल मात्र काढी नाखेल छे, कदाच 'मातृपुत्राभ्यां' खरो पाठ होय. कारण के त तथा न ओळखाय तेवा नथी. [पण ते बराबर नथी, ' मानू ' शब्द ज बराबर छे. कारण के तेनी पहेलां व्य०=व्यवहारी शब्द पडेलो छे जे मातृपुत्रा० पाठ लेतां निरर्थक अने असंबद्ध थई जाय छे—संपादक.]

५. पंक्ति २ जी—श्रेयोर्थे नो थ जतो रह्यो छे, संतानीय नो ता स्पष्ट नथी.

६ वर्षेनुं भाषांतर लौकिक वर्ष करूं छुं, कारण के विक्रम संवत् पछी वर्षेने बदले घणीवार लौकिक वर्ष वापरवामां आवे छे. पश्चिम तथा उत्तर पश्चिम हिंदुस्थानमां विक्रम संवत्नां वर्षोने लौकिक वर्षो कहे छे अने शक संवत्ने शास्त्रिय वर्षो कहे छे कारण के ते ज्योतिष विगेरे विषयोमां आवे छे.

७. लेखमां जे फागुण लख्यु छे ते अर्ध प्राकृत अने अर्ध संस्कृत रूप छे.

८. मूल बिंब शब्दने भाषांतर कर्या शिवाय ज हु रहेवा दऊं छु. तेनो खास अर्थ शो छे तेनी खबर नथी हु धारुं छुं के बीजी नानी मोटी प्रतिमाओथी तेने खास ओळखावा माटे तेनु नाम आवुं पाडयुं हशे एनो अर्थ कदाच ' मुख्य प्रतिमा ' थई शके. [ए ज अर्थ थाय छे. सं०]

९. प्रतिष्ठितं च ए संस्कृतना नियम प्रमाणे शुद्ध नथी पण जैन पुस्तकोमां ए घणां ठेकाणे जोवामां आवे छे. खरी रीते प्रतिष्ठापित च अगर प्रतिष्ठा कृता च एवो पाठ जोईए.

महाकवि पुष्पदन्त और उनका महापुराण।

[अपभ्रंश भाषा का एक महाकवि और महान् ग्रन्थ।]

(लेखक—श्रीयुत पं० नाथूरामजी प्रेमी।)

भारत में अनेक शताब्दियों तक जो आर्य भाषायें प्रचलित रही हैं, वे सब प्राकृत कहलाती हैं। प्राकृत शब्द का अर्थ है स्वाभाविक—कृत्रिमता के दोष से रहित और संस्कृत का अर्थ है संस्कार की हुई मार्जित भाषा। वैदिक सूक्त जिस सरल और प्रचलित भाषा में लिखे गये थे, उस भाषा को प्राकृत ही कहना चाहिए। इस आदि प्राकृत भाषा से जिन सब आर्य भाषाओं का विकास हुआ है, उनकी गणना दूसरी श्रेणी की प्राकृत में होती है। यह द्वितीय श्रेणी की प्राकृत अशोक के शिलालेखों में मिलता है। बौद्धशास्त्रों की प्रधान भाषा पाली भी इसी दूसरी श्रेणी की प्राकृतों में से है। इस समय प्राकृत कहने से पाली की अपेक्षा उन्नत भाषा का बोध होता है।

अशोक के समय की आर्य भाषा की दो प्रधान शाखायें थीं, एक पश्चिमी प्राकृत और दूसरी पूर्वीय प्राकृत। पश्चिमी प्राकृत को सौरसेनी या सूरसेन (मथुरा) की भाषा कहते थे और पूर्वीय को मागधी या मगध की भाषा। इन दोनों पूर्वीय और पश्चिमी भाषाओं के बीचों बीच एक और भाषा बोली जाती थी जो अर्ध मागधी के नाम से प्रसिद्ध थी। कहा जाता है कि भगवान् महावीर ने इसी भाषा के द्वारा अपने सिद्धांतों का प्रचार किया था। प्राचीन जैन ग्रन्थ इसी भाषा में लिखे गये थे। प्राचीन मराठी के साथ इस भाषा का बहुत ही निकट सम्बन्ध है। प्राचीन प्राकृत काव्य इसी प्राचीन मराठी में लिखे गये हैं।

उक्त दूसरी श्रेणी की प्राकृत भाषाओं के बाद की भाषा अपभ्रंश कहलाती है। जो दूसरी श्रेणी की प्राकृत का पिछला और विशेष विकसित रूप है। यों अपभ्रंश का साधारण अर्थ दूषित या विकृत होता है; परन्तु भाषा के सम्बन्ध में प्रयुक्त होने पर इस का अर्थ उन्नत या विकसित होता है। वर्तमान प्रचलित आर्य भाषायें जिन भाषाओं से निकली हैं उनकी गणना अपभ्रंश में होती है। इन अपभ्रंश भाषाओं में भी एक समय अनेकानेक ग्रन्थ लिखे गये थे जिनमें से बहुत से इस समय भी मिलते हैं। जान पड़ता है, इन भाषाओं का साहित्य बहुत प्रौढ़ हो गया था और सर्वसाधारण में बहुत ही आदर की दृष्टि से देखा जाता था। इस साहित्य में हम उस समय की बोलचाल की भाषाओं की अस्पष्ट छाया पा सकते हैं। विक्रम की सातवीं शताब्दि तक के अपभ्रंश साहित्य का पता लगा है। इसके बाद जान पड़ता है कि इस भाषा का प्रचार नहीं रहा। अपभ्रंश के पहले की प्राकृत भाषाओं का प्रचार दूसरी शताब्दि के बाद नहीं रहा।

उक्त अपभ्रंश भाषाओं की गणना दूसरी श्रेणी की ही प्राकृत में की जाती है। उनके बाद आधुनिक भाषाओं का काल आता है जिन्हें हम तीसरी श्रेणी की प्राकृत में गिनते हैं। इन भाषाओं का निदर्शन हम तेरहवीं शताब्दि के लगभग पाते हैं। अतएव मोटे हिसाब से कहा जा सकता है कि दसवीं शताब्दि से आधुनिक आर्य भाषाओं का प्रचलन आरम्भ हुआ है और अपभ्रंश से ही इन सब का विकास हुआ है। संक्षेप में प्राकृत भाषाओं का यही इतिहास है।

इस लेख में हम जिस महाकवि का परिचय देना चाहते हैं, उसकी रचना इन्हीं अपभ्रंश भाषाओं में की एक भाषा में हुई है जिसे हम दक्षिण महाराष्ट्र की अपभ्रंश कह सकते हैं। दक्षिण की होने पर भी पाठक देखेंगे कि इसकी प्रकृति हमारी हिन्दी, गुजराती और राजस्थानी भाषाओं से कितनी मिलती जुलती हुई है।

हमें पुष्पदन्त से भी पहले के अपभ्रंश साहित्य के कुछ ग्रन्थ मिले हैं जिन का परिचय हम आगे के किसी अंक में देना चाहते हैं।

महाकवि पुष्पदन्त कहां के रहनेवाले थे, इसका पता नहीं लगता। उनके ग्रन्थों में जो कुछ लिखा है उसके अनुसार हम उन्हें सब से पहले मेलाटि नगर में जो संभवत. मान्यखेट का ही दूसरा नाम है, पाते हैं। वहां वे पृथ्वी पर भ्रमण करते हुए आ पहुंचते हैं और वहीं से उनके कवि-जीवन का प्रारम्भ होता है।

वे काश्यपगोत्रीय ब्राह्मण थे। उनके पिता का नाम केशव और माता का मुग्धादेवी था। एक जगह उन्होंने अपने पिता का नाम कन्हड लिखा है* जो केशव के ही पर्यायवाची शब्द कृष्ण का अपभ्रंश रूप है। 'खण्ड' यह शायद उनका प्रचलित नाम था जो उनके ग्रन्थों में जगह २ व्यवहृत हुआ है। अभिमानमेरु, काव्यरत्नाकर, कव्वपिसल्ल (काव्यपिशाच) या काव्यराक्षस, कविकुलतिलक, सरस्वतीनिलय आदि उनके उपनाम थे।

वे शरीर से कृश थे, कृष्णवर्ण थे, कुरूप थे परन्तु सदा प्रसन्नमुख रहते थे। उन्होंने आपको स्त्रीपुत्र हीन लिखा है, परन्तु संभव है यह उस समय की ही अवस्था का द्योतक हो जब वे मान्यखेटपुर में थे और अपने (उपलब्ध) ग्रन्थों की रचना कर रहे थे। इसके पहले जहां के वे रहनेवाले थे वहां शायद वे गृहस्थ रहे हों और विवाह आदि भी हुआ हो। यद्यपि अपने ग्रन्थों में उन्होंने अपना बहुत कुछ परिचय दिया है, परन्तु उससे यह नहीं मालूम होता है कि मान्य-खेट में आने के पहले उनकी क्या अवस्था थी और न यही स्पष्ट होता है कि वास्तव में उन्होंने अपनी जन्मभूमि क्यों छोडी थी। केवल यही मालूम होता है कि दुष्टों ने उनको अपमानित किया था और उन्हीं से संत्रस्त होकर वे भटकते भटकते बडे ही दुर्गम और लम्बे रास्ते को तय करके मान्यखेट तक आये थे। उनके हृदय पर कोई बडी ही गहरी ठेस लगी थी और इस से उन्हें सारी पृथ्वी दुर्जनो से ही भरी हुई दिखलाई देती थी। लोगों की इस दुर्जनता का और संसार की नीरसता का उन्होंने अपने ग्रन्थों की उत्थानिकाओं में वार वार और बहुत अधिक वर्णन किया है। अपने समय को भी उन्होंने खूब ही कोसा है, उसे कलिमलमलिन, निर्दय, निर्गुण, दुर्नीतिपूर्ण और विपरीत विशेषण दिये है और कहा है कि "जो जो दीसइ सो सो दुज्जणु, णिप्फलु नीरसु ण सुक्कड वणु।" अर्थात् जो जो दिखते हैं वे सब दुर्जन हैं, सूखे हुए वन के समान निष्फल और नीरस हैं।

ऐसा जान पड़ता है कि वे किसी राजा के द्वारा सताये हुए थे और उसी के कारण उन्हें अपनी जन्मभूमि छोडनी पडी थी। इसी कारण उन्होंने कई जगह राजाओं पर गहरे कटाक्ष किये हैं। उनके भ्रकुटित नेत्रों और प्रभुवचनों को देखने सुनने की अपेक्षा मर जाना अच्छा बतलाया है। वे भरत मंत्री से कहते हैं कि—"वह लक्ष्मी किस काम की जिसने ढुरते हुए चँवरों की हवा से सारे गुणों को उडा दिया है, अभिषेक के जल से सुजनता को धो डाला है, और जो विद्वानों से विरक्त रहती है। ×× इस समय लोग नीरस और निर्विशेष हो गये हैं, वे गुणीजनों से द्वेष करते हैं, इसी लिए मुझे इस वन की शरण लेनी पडी है।"

---

* गयधव्वेकण्हडणं दणेण आयइ भवाइ किय थिर मणेण।—यशोधरचरित्र।

जिस राजासे सम्बन्ध छोड़कर पुष्पदन्तकवि मान्यखेट में आये वह शायद घोरराय था। आदिपुराण के प्रभाचन्द्रकृत टिप्पण में इस शब्द पर 'शूद्रक' और 'कांचीपति' टिप्पण दिया है और हमारी समझ में 'कांची' की जगह कांचा लिपिकर्ता के दोष से लिखा गया है ×। इस से मालूम होता है कि घोरराय कांची (कांजीवरम्) का राजा होगा और शूद्रक उसका नामान्तर होगा। यह संभवतः पल्लववंशका था। आदिपुराणकी उत्थानिका के 'णिय सिरि विसेस और परमगणइ' आदि दो पदों का अभिप्राय अच्छी तरह स्पष्ट नहीं होता है फिर भी ऐसा भास होता है कि पुष्पदन्त का उक्त घोरराय से पहले सम्बन्ध था और उस के सम्बन्ध में उस ने कुछ काव्य रचना भी की थी। शायद इसी कारण भरतमंत्री ने पुष्पदन्त से कहा है कि घोरराय का वर्णन करने से जो मिथ्यात्व भाव उत्पन्न हुआ है उस के प्रायश्चित्तस्वरूप यदि तुम आदिनाथ के चरित की रचना करो तो तुम्हारा परलोक सुधर जाय *। जान पड़ता है कि घोरराय कोई दुष्ट और जैनधर्म का द्वेषी राजा था।

पुष्पदन्त भ्रमण करते करते मान्यखेट के बाहर किसी उद्यान में पड़े हुए थे। वहां अम्मइय और इन्द्र नामक दो पुरुषों ने आकर उनसे कहा कि आप इस निर्जन स्थान में क्यों पड़े हुए हैं, पास ही यह बड़ा नगर है वहां चलिए। वहां शुभतुंगराजा के महामात्य भरत बड़े विद्याप्रेमी और कवियों के लिए कामधेनु हैं। भरत की लोकोत्तर प्रशंसा सुन कर पुष्पदन्त नगर में गये। वहां भरतमंत्री ने उनका बहुत ही सत्कार किया और उन्हें अपने पास रक्खा। कुछ दिनों के बाद भरत ने उन से काव्यरचना करने के लिए कहा। इस पर कवि ने कहा कि यह समय बहुत बुरा है। संसार दुर्जनों से भरा हुआ है। जहां तहां छिद्रान्वेषी ही दिखलाई देते हैं। प्रवरसेन के सेतुबन्ध जैसे उत्कृष्ट काव्य की भी जब लोग निन्दा करते हैं तब मुझे इस कार्य में कीर्ति कैसे मिलेगी? इस पर भरत ने कहा कि दुर्जनों का तो यह स्वभाव ही है उल्लू को सूर्य भी अच्छा नहीं लगता। उनकी आप को परवा न करनी चाहिए। इस के उत्तर में कवि ने अपनी लघुता प्रकट की और कहा कि मैं दर्शन, व्याकरण, काव्य, छन्दशास्त्र आदि के ज्ञान से कोरा हूं, ऐसी दशा में मुझ से महापुराण की रचना कैसे होगी? यह तो समुद्र को एक कूड़े में भरने जैसा अशक्य कार्य है, फिर भी आप के आग्रह से और जिन भक्ति वश मैं इस की रचना में प्रवृत्त होता हूं, मधुकर जैसा क्षुद्र प्राणी भी विशाल आकाश में भ्रमण कर सकता है।

उक्त सब बातें आदिपुराण की उत्थानिका से ली गई हैं। इस के बाद उत्तरपुराण का प्रारंभ होता है। उस समय कविराज का चित्त उद्विग्न हो उठा। रचना से उन का जी उचट गया। तब एक दिन सरस्वती देवी ने उन्हें स्वप्न में दर्शन दिया और कहा कि अरिहंत भगवान् को नमस्कार करो। यह सुनते ही कविराज जाग उठे। उन्हों ने चारों ओर देखा, परन्तु वहां कोई भी दिखलाई न दिया। बड़ा आश्चर्य हुआ। इस के बाद भरतमंत्री उन से मिले। उन्हों ने कहा कि, क्या आप सचमुच ही पागल हो गये हैं? आप का मुख उतरा हुआ है चित्त ठिकाने नहीं है। ग्रन्थरचना क्यों नहीं करते? क्या मुझसे आप का कोई अपराध बन पड़ा? क्या बात है? मैं हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूं। मैं आपकी आज्ञा हुआ सब कुछ देने के लिए तैयार हूं। यह जीवन अस्थिर और असार है। जब आप को सरस्वती कामधेनु सिद्ध है तब आप उसका नवरसरूप दूध क्यों नहीं दोहते? इस पर कविराज ने फिर कहा समय

× पुरानी लिपि में 'च' और 'व' लगभग एक से लिखे जाते हैं और इस कारण बहुत से लेखकों ने इन दोनों के भेद को अच्छी तरह न समझने के कारण अशुद्ध 'च' को 'व' लिखा है।

* वई मण्णिउं वण्णिउं वीरराउ उप्पण्णउ जो मिच्छत्तभाउ।
पच्छित्तु तासु जइ करहि अज्जु, ता घडइ तुज्झ परलोयकज्जु॥

की और दुर्जनों की शिकायत की और कहा कि इस कारण मुझ से एक पद भी नहीं लिखा जाता है। अन्त में उन्हों ने कहा कि फिर भी मै तुम्हारी प्रार्थना को नहीं टाल सकता। तुम मेरे मित्र हो और शालिवाहन तथा श्रीहर्ष से भी वढकर विद्वानो का आदर करनेवाले हो। तुमने मुझे सदा प्रसन्न रक्खा है। परन्तु जो यह कहा कि मै सब कुछ देने के लिए तैयार हूँ, सो मैं तुम से अकृत्रिम धर्मानुराग के सिवाय और कुछ भी नहीं चाहता हूँ। धन को मैं तिनके के समान गिनता हूँ। मेरा कवित्व केवल जिनचरणों की भक्ति से ही प्रस्फुटित होता है— जीविका की मुझे जरा भी परवा नही है। ये सब बातें कविने उत्तरपुराणकी उत्थानिका में प्रकट की है।

पुष्पदन्त दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के अनुयायी थे, परन्तु वे अपने किसी गुरु का कहीं कोई उल्लेख नहीं करते हैं। इसका कारण यही हो सकता है कि वे गृहत्यागी साधु नहीं थे। यह भी सभव है कि पहले वे वेदानुयायी रहे हों और पीछे किसी कारण से जैनधर्म पर उनकी श्रद्धा हो गई हो, अथवा भरतमत्री के संसर्गसे ही वे जैनधर्म के उपासक बन गये हों, किसी जैन साधु या मुनिसे उनका परिचय न हुआ हो। उन्होंने अपने को जगह जगह जिनपदभक्त, धर्मासक्त, व्रतसंयुक्त (व्रतीश्रावक) और विगलितशंक (शंका रहित सम्यग्दृष्टी) आदि विशेषण दिये है, इस लिए उनके दृढ़ जैन होने में कोई सन्देह नहीं हो सकता। अपने ग्रन्थों में जैनधर्म के तत्त्वों का भी उन्होंने वडी योग्यतासे प्रतिपादन किया है।

पुष्पदन्त का स्वभाव एक विचित्र ही प्रकार का मालूम होता है। उनका 'अभिमानमेरु' नाम उनके स्वभाव को और भी विशेषता से स्पष्ट करता है। 'मान' के सिवाय वे और किसी चीज के भूखे नहीं जान पड़ते। एक वडे भारी राजा के वैभवशाली मन्त्री का आश्रय पाकर भी वे धन वैभव से अलिप्त ही रहे जान पडते हैं। महापुराण के अन्त में उन्होंने अपने लिये जो विशेषण दिये हैं, वे ध्यान देने योग्य हैं—शून्यभवन और देवकुलिकाओ में रहनेवाले, विना घर-द्वार के, स्त्री-पुत्र रहित, नदी वापी और तालावों में स्नान करनेवाले, फटे कपडे और वल्कल पहिननेवाले, धूलिधूसरित, जमीन पर सोनेवाले तथा अपने हाथों को ही ओढना वनानेवाले, और समाधि मरण की आकांक्षा रखनेवाले। ये विशेषण इस अकिञ्चन महाकवि के चित्र को आँखों के सामने खडा कर देते है।

सचमुच ही पुष्पदन्त अद्भुत कवि थे। वे अपने हृदय के आवेगों को रोक नहीं सकते हैं। वे जिसे हृदय से चाहते हैं उसकी प्रशसा के पुल बांध देते हैं और जिससे घृणा करते हैं उस की निन्दा करने में भी कुछ उठा नही रखते। अपनी प्रशंसा करने मे भी उनकी कविता का प्रवाह स्वच्छन्द गति से प्रवाहित हुआ है। इस प्रशंसा के औचित्य अनौचित्य का विचार भी उनका स्वेच्छाचारी कविहृदय नहीं कर सका है। जी खोलकर उन्होंने अपनी प्रशंसा की है। संभव है, इस समय की दृष्टि से वह ठीक मालूम न हो, परन्तु उन की सरस और सुन्दर रचना को देखते हुए तो उस में कोई अत्युक्ति नही जान पड़ती।

पुष्पदन्तने अपना आदिपुराण सिद्धार्थसंवत्सर में लिखना शुरू किया था जिस समय तुडिगु नाम के राजा राज्य करते थे और उन्होंने किसी चोल राजा का मस्तक काटा था। इस 'तुडिगु' शब्द पर इस ग्रन्थ की प्रायः सभी प्रतियों में 'कृष्णराजः' टिप्पणी दी हुई है। इसी ग्रन्थ में उक्त राजा का एक जगह 'शुभतुंगदेव' और दूसरी जगह 'भैरवनरेन्द्र' नाम से उल्लेख किया गया है और दोनों जगह उक्त नामों पर टिप्पणी दे कर 'कृष्णराजः' लिखा है। इसी तरह यशोधर चरित्र में 'वल्लभनरेन्द्र' नाम से उल्लेख किया है और वहां भी टिप्पणी में 'कृष्णराजः' लिखा है। अर्थात् तुडिगु, शुभतुंगदेव, भैरवनरेन्द्र, वल्लभनरेन्द्र और कृष्णराज ये पाँचों एक ही

राजा के नाम हैं और इन्हीं के समय में पुष्पदन्तने अपने ग्रन्थों की रचना की है। एक जगह तुडिग का 'शुभतुंगदेव' विशेषण दिया है जो कि उसकी एक विरुद थी। इसके सिवाय उसे 'राजाधिराज' लिखा है। आदिपुराण के २७ वें परिच्छेद के प्रारंभ में भरतमंत्री की प्रशंसा करते हुए उसे 'भारत' (महाभारत) की उपमा दी है —" गुरु धर्मोद्भवपावनमभिनन्दित कृष्णार्जुनगुणोपेत। भीमपराक्रमसारं भारतमिव भरत तव चरितम्॥" इसका 'अभिनन्दित कृष्णार्जुनगुणोपेतम्' विशेषण निश्चय से कृष्णराज को लक्ष्य करके ही लिखा गया है।

उत्तरपुराण के अन्त में ग्रन्थ के समाप्त होने का समय संवत् ६०६ आसाढ सुदी १०, क्रोधनसंवत्सर लिखा है। क्रोधनसंवत्सर से ६ वर्ष पहले सिद्धार्थसंवत्सर आता है अत आदिपुराण की रचना का समय संवत् ६०० होना चाहिए। दक्षिण में शक संवत् का ही प्रचार अधिक रहा है, अतएव उक्त ६०० और ६०६ को शक संवत् ही मानना चाहिए।

उत्तरपुराण की प्रशस्ति से मालूम होता है कि उक्त ग्रन्थ मान्यखेट नगर में बनाया गया था जो इस समय मालखेड नाम से प्रसिद्ध है और निज़ाम के राज्य में है। उत्तरपुराण के ५० वें परिच्छेद के प्रारंभ में लिखा है —

> दीनानाथधनं सदाबहुजनं प्रोत्फुल्लवल्लीवनं
> मान्याखेटपुरं पुरंदरपुरीलीलाहरं सुन्दरम्।
> धारानाथनरेन्द्रकोपशिखिना दग्धं विदग्धप्रियम्
> क्वेदानीं वसतिं करिष्यति पुनः श्रीपुष्पदन्तः कविः॥

इससे मालूम होता है, शक संवत् ६०० और ६०६ के बीच में किसी समय धारानगरी के किसी राजा ने इस बड़े भारी वैभवशाली नगर को बरबाद किया था।

पुष्पदन्तने अपना महापुराण पूर्वोक्त शुभतुंग या कृष्णराज के महामात्य भरत के आग्रह से और यशोधर चरित भरतमंत्री के पुत्र णण्ण या णण्णराज के लिए कर्णाभरणस्वरूप बनाया है। णण्ण भी अपने पिता के सदृश वल्लभनरेन्द्र या कृष्णराज का महामात्य हो गया था। भरत और णण्ण की पुष्पदन्तने बहुत ही प्रशंसा की है और उन के लोकोत्तर गुणों का वर्णन किया है। महापुराण के सब मिलाकर १०२ परिच्छेद हैं, जिन में से कोई ४० परिच्छेदों के प्रारंभ में पुष्पदन्त ने भरतमंत्री की प्रशंसा के सूचक सुन्दर संस्कृत पद्य दिए हैं जिन्हें हमने इस लेख के अन्त में उद्धृत कर दिया है। उन्हें पढ़ने से पाठकों को भरत की महिमा का बहुत कुछ परिचय हो जायगा। इसी तरह यशोधर चरित के चार परिच्छेदों में णण्णराज की प्रशंसा के जो पद्य हैं वे भी उद्धृत कर दिए गए हैं।

उक्त प्रशस्ति-पद्यों के सिवाय पुष्पदन्तने आदि और उत्तरपुराण की उत्थानिकाओं में भरत मंत्री को लिखा कलावैज्ञानकुशल, प्राकृतकविकाव्यरसावलुब्ध, अमत्सर, सत्यप्रतिज्ञ, याचा परत्रापराङ्मुख, त्यागभोगभाषाङ्गमर्यादायुक्त, कविकल्पवृक्ष आदि अनेक विशेषण दिए हैं।

यशोधरचरित में भरत के पुत्र णण्ण का गोत्र कौडिण्य बतलाया है। अतः संभवतः वे ब्राह्मण हो होंगे, परन्तु जैनधर्म के प्रगाढ़ भक्त थे। भरत के पिता का नाम ऐयण या अण्णय और माता का श्रीदेवी था। उन के सात पुत्र थे—१ देवल, २ भोगल, ३ णण्ण, ४ सोहण, ५ गुणवम, ६ दंगइय और ७ संतइय। इन में तीसरा पुत्र णण्ण था, और भरत के बाद, इसी ने महामात्य या प्रधान मंत्री के पद को सुशोभित किया था। आदिपुराण के ३४ वें परिच्छेद के प्रारंभ में नीचे लिखा हुआ एक संस्कृत पद्य दिया है —

तीव्रापद्दिवसेषु बन्धुरहितेनैकेन तेजस्विना
सन्तानक्रमतो गतापि हि रमाऽऽकृष्टा प्रभोः सेवया ।
यस्याचारपदं वदन्ति कवयः सौजन्यसत्यास्पदं
सोऽयं श्रीभरतो जयत्यनुपमः काले कलौ साम्प्रतम् ॥

अर्थात् बडी ही विपत्ति के दिनों में जिस अकेले और बन्धुरहित तेजस्वी ने सन्तानक्रम से चली गई हुई भी लक्ष्मी को अपने प्रभु की सेवा से फिर आकृष्ट कर ली और कविगण जिस के चरित्र को सौजन्य और सत्य का स्थान बतलाते हैं, वह भरत इस कलिकाल में अपनी जोड़ नहीं रखता।

इससे जान पडता है कि भरत के पूर्वजों के हाथ से उक्त मन्त्रीपद चला गया था और उसे भरत ने ही अपनी योग्यता से फिर से प्राप्त किया था। अपनी पूर्वावस्था में उन्होंने बडी विपत्ति भोगी थी और उस समय उन का कोई बन्धु या सहायक नहीं था।

यशोधरचरित की रचना महापुराण के कितने समय बाद हुई, इस के जानने का कोई साधन नहीं है। यशोधरचरित में समय सम्बन्धी कोई उल्लेख नहीं है; परन्तु यह निश्चय है कि उस समय राजसिंहासन को वल्लभनरन्द्र या कृष्णराज ही सुशोभित करते थे। हाँ, मन्त्री का पद भरत के पुत्र णण्ण को मिल गया था। णण्ण के उस समय कई पुत्र भी मौजूद थे जिन को यशोधरचरित्र के दूसरे परिच्छेद के प्रारंभ में आशीर्वाद दिया गया है। मालूम नहीं उस समय भरत जीते थे या नहीं। महापुराण जिस समय बनाया गया है उस समय पुष्पदन्त—भरत के ही घर रहते थे—" देवीसुअ सुदणिहि तेण हउ णिलए तुहारए अच्छमि।" ६७ वें परिच्छेद के प्रारभ में कहा है:—

इह पठितमुदारं वाचकैर्गीयमानं इह लिखितमजस्रं लेखकैश्चारुकाव्यम् ।
गतवति कविमित्रे मित्रतां पुष्पदन्ते भरत तव गृहेऽस्मिन्भाति विद्याविनोदः ॥

इस से भी आभास मिलता है कि कविराज भरत के ही गृह में रहते थे और उन का काव्य वहीं पढा, गाया और लिखा जाता था।

इस के बाद यशोधरचरित जब लिखा गया है, तब वे णण्ण के ही घर रहते थे—" णण्णहु मंदिरणिवसंतु संतु, अहिमाणमेरु कविपुप्फयंतु।" परन्तु इसी ग्रन्थ के अन्त में लिखा है कि गन्धर्व (नगर?) में कन्हड (केशव) के पुत्र ने पूर्वभवों का वर्णन स्थिर मन होकर किया—" गंधव्वे कण्हडणंदणेण" इत्यादि। तब क्या यह गन्धर्व नगर कोई दूसरा स्थान है? संभव है, यह मान्यखेटका ही दूसरा नाम हो अथवा कोई दूसरा स्थान हो जहाँ कुछ समय टिककर कविने ग्रन्थ का उक्त अंश लिखा हो। यह भी सभव है कि णण्ण के महल का ही नाम गन्धर्व या गन्धर्वभवन हो।

यशोधरचरित जिस समय समाप्त हुआ है उस समय कोई बडा भारी दुर्भिक्ष पडा था जिस का वर्णन कविने इन शब्दों में किया है—' जगह जगह मनुष्यों की खोपडियां और ठठरियां पड़ी थीं, रंक ही रंक दिखलाई पडते थे। बडा भारी दुष्काल था। ऐसे समय में भी णण्णने मुझे रहने को अच्छा स्थान, खाने को सरस आहार, पहिनने को स्वच्छ वस्त्र देकर उपकृत किया।" जान पडता है यह घटना उस समय की होगी, जब धारानरेशने मान्यखेट को लूट कर बरबाद कर दिया था। ऐसी सैनिक लूटों के बाद अक्सर दुर्भिक्ष पडा करते है।

महापुराण में कविने नीचे लिखे ग्रन्थकारों और ग्रन्थों का उल्लेख किया है। कवि के समय निरूपण में इन नामों से बहुत सहायता मिल सकती है—

१ अकलंक २ कपिल ३ कणचर या कणाद, ४ द्विज (ब्राह्मण) ५ सुगत (बौद्ध) ६ पुरन्दर (चार्वाक) ७ दंतिल, ८ विशाख, ९ लुद्धाचार्य, १० भरत (नाट्य शास्त्र कर्त्ता), ११ पतंजलि (व्याकरण भाष्यकार), १२ इतिहासपुराण, १३ व्यास, १४ कालिदास, १५ चेतुर्मुख स्वयंभू १६ श्रीहर्ष, १७ द्रोण १८ कवि ईशान बाण १९ धवल जय धवल सिद्धान्त २० रुद्रट २१ न्यासकार, और २२ जसचिन्ह (प्राकृत लक्षण कर्त्ता) २३ जिनसेन २४ वीरसेन।

यशोधर चरित के अन्त में केवल एक ही ग्रन्थकार कवि 'वच्छराय' (वत्सराज) का उल्लेख किया गया है जिस के कथासूत्र के आधार पर उक्त चरित की रचना की गई है— 'महु दोसु ण दिज्जइ पुव्व कइइ कइवच्छराय त सुत्तु लइइ।' यह तो कहने की आवश्यकता नहीं कि ये वच्छराय कोई जैनकवि ही थे। क्योंकि यशोधर की कथा जैनसाहित्य की ही चीज है।

उत्तरपुराण के अन्त में महावीर भगवान् के निर्वाण के बाद की गुरुपरम्परा दी गई है। उसमें लोहाचार्य तक की परम्परा त्रिलोकप्रज्ञप्ति जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति गुणभद्रकृत उत्तरपुराण, इन्द्र नन्दिकृत श्रुतावतार के ही समान है। जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में जहां जसबाहु नाम है, वहां इसमें भद्रबाहु है। एक बड़ा भारी अन्तर यह है कि इसमें गोवर्धन के बाद भद्रबाहु का नाम ही नहीं है साथ उसके बदले कोई दूसरा नाम भी नहीं दिया है। इतिहासज्ञों के लिए यह बात खास ध्यान देने योग्य है। सब के बाद इसमें जिनसेन और वीरसेन का नाम दिया हुआ है जो आचारांग के एकदेश के ज्ञाता थे। जान पड़ता है ये जिनसेन संस्कृत आदिपुराण के कर्त्ता से भिन्न हैं।

आदिपुराण (पुष्पदन्तकृत) के पांचवें परिच्छेद में नीचे लिखे देशों के नाम दिये हैं जिन्हें भगवान् ऋषभदेव ने बसाया था—

पल्लव सैन्धव (सिन्ध), कोंकण, कौशल, टक्क, आभीर, कीर, खस, केरल, अंग, कलिंग, बंग जालंधर, वत्स यवन, कुरु गुर्जर, बर्बर द्रविड गौड़, कर्णाट, वराडिय (वैराट?) पारस पारियात्र, पुन्नाट, सूर सोरठ विदेह लाड कोंग वेंगि, मालव पांचाल, मगध, भट्ट भोट (भूटान) नेपाल आण्ड्र पौण्ड्र हरि कुरु भगाल।

पुष्पदन्त के बनाये हुए दो ग्रन्थ हमें प्राप्त हुए हैं एक तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकार जिस का दूसरा नाम महापुराण है और जिसके आदिपुराण और उत्तरपुराण ये दो भाग हैं। इसकी श्लोकसंख्या १३ हजार के लगभग है और इसमें सब मिलाकर १०२ परिच्छेद हैं। आदिपुराण में प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ का और उत्तरपुराण में शेष २३ तीर्थंकरों का और अन्य शलाका पुरुषों का चरित्र है। उत्तरपुराण में पद्मपुराण और हरिवंशपुराण भी शामिल हैं और ये पृथक् रूप में भी अनेक पुस्तकभण्डारों में मिलते हैं। पुष्पदन्त का दूसरा ग्रन्थ यशोधर चरित है जिस के चार परिच्छेद हैं और छोटा है। इसमें यशोधर नामक राजा का चरित्र वर्णित है जो कोई पुराण पुरुष था।

उक्त दो ग्रन्थों के सिवाय नागकुमार चरित नाम का एक ग्रन्थ है जो कारंजा (बरार) के पुस्तकभण्डार में है और जिस के प्राप्त करने के लिए हम प्रयत्न कर रहे हैं।

---

१ यह एक जैन कवि है। इस के बनाये हुए दो ग्रन्थ हमें प्राप्त हुए हैं— पउमचरिय या रामायण जिसके पिछले कुछ सर्ग उस के पुत्र त्रिभुवन स्वयंभु ने पूरे किए हैं और दूसरा हरिवंशपुराण जिस का उद्धार विक्रम की १६ वीं शताब्दि के एक दूसरे विद्वान् ने किया है। शायद इसका अधिकांश नष्ट हो गया था। ये दोनों ग्रन्थ अपभ्रंश भाषा में ही हैं। इनका विस्तृत परिचय शीघ्र ही दिया जायगा।

हमें सब से पहले बंबई के सुप्रसिद्ध सेठ सुखानन्दजी की कृपा से पुष्पदन्त का आदिपुराण देखने को मिला और उसी को देखकर हमें इस कवि का परिचय लिखने का उत्साह हुआ। सेठजी इस ग्रन्थ को फतेहपुर (जयपुर) के सरस्वतीभण्डार से लाये थे। उक्त सरस्वतीभण्डार का यह ८६ वें नम्बर का ग्रन्थ है और बहुत ही शुद्ध है। उसमें कहीं कहीं टिप्पणी भी दी है, वि० संवत्१५२८ का लिखा हुआ है उसमें प्रति करानेवाले की एक विस्तृत प्रशस्ति दी हुई है जो उपयोगी समझ कर इस लेख के परिशिष्ट में दे दी गई है।

इस ग्रन्थ की दो प्रतियां हमें पूने के भाण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टिटयूट में मिलीं जिनमें से एक वि० सं० १६२५ की लिखी हुई है* और दूसरी वि० सं० १८८३ की लिखी हुई है×। इस ग्रन्थ का एक टिप्पण भी हमें उक्त संस्था में मिला जो प्रभाचन्द्र कृत है और जिसकी श्लोकसंख्या १६५० है÷। इसमें प्रति लिखने का और टिप्पणकार का समय आदि नहीं दिया है।

इसके बाद उक्त इन्स्टि० में हमें उत्तरपुराण की भी एक शुद्धप्रति मिल गई जो बहुत ही शुद्ध है और सं० १६३० की लिखी हुई है। इस पर यत्र तत्र टिप्पणियां भी दी हुई हैं× ।

यशोधर चरित की एक प्रति हमें बंबई के तेरहपन्थी मन्दिर के पुस्तकभण्डार से प्राप्त हुई जो बहुत ही पुरानी है अर्थात् १३६० की लिखी हुई है और प्रायः शुद्ध है, और दूसरी भाण्डारकर इन्स्टि० से, जो वि० संवत् १६१५ की लिखी हुई है†।

इस इन्स्टिटयूट में हरिवंशपुराण की भी एक बहुत ही शुद्ध, टिप्पणयुक्त, और प्राचीन प्रति है, मिलान करने से मालूम हुआ कि यह उत्तरपुराण का ही एक अंश है। –

पुष्पदन्त के ग्रन्थ पूर्वकाल में बहुत प्रसिद्ध रहे हैं और इस कारण उनकी प्रतियां अनेक भण्डारों में मिलती हैं। उन पर टिप्पणपंजिकायें और टिप्पणग्रन्थ भी लिखे गये हैं और तलाश करने से अब भी प्राप्त हो सकते हैं। जयपुर के पाटोदी के मन्दिर में उत्तरपुराण का एक टिप्पण ग्रन्थ है जिसके कर्त्ता श्रीचन्द्र (?) मुनि मालूम होते हैं और जो विक्रम संवत् १०८०में भोजदेव के राज्य में बनाया गया है।० जयपुर के बाबा दुलीचन्दजी के भण्डार में पुष्पदन्त के प्रायः सभी ग्रन्थों की पंजिकायें हैं; आगरे के मोतीकटरे के मन्दिर में उत्तरपुराण की पंजिका है। प्रयत्न करने पर भी हम इन्हें प्राप्त नहीं कर सके।

इस समय हम पुष्पदन्त के नागकुमार चारित और उनके ग्रन्थों की पंजिकाओं को प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं। उनके मिल जाने पर आगामी अंक में पुष्पदन्त का समय निर्णय किया जायगा और उनके ग्रन्थों में जिन जिन व्यक्तियों का उल्लेख हुआ है उन सब के समय पर विचार करके निश्चित किया जायगा कि वास्तव में पुष्पदन्त के ग्रन्थ कब बने हैं।

आगामी अंक में पुष्पदन्त की भाषा और उनके कवित्व की भी आलोचना करने का विचार है।

परिशिष्ट में पुष्पदन्त के ग्रन्थों के वे सब अंश दे दिये गये हैं जो महत्त्वपूर्ण हैं और जिनके आधार से यह लेख लिखा गया है। अधिक प्रयोजनीय अंशों का अनुवाद भी टिप्पणी में दे दिया है।

इस लेख के तैयार करने में श्रीमान् मुनिमहोदय जिनविजयजी से बहुत अधिक सहायता मिली है। इसकी बहुत कुछ सामग्री भी उन्हीं की कृपा से प्राप्त हुई है, अतएव मैं उनका बहुत ही कृतज्ञ हूं।

---

* नं ११३९ आफ १८९१–९५। × नं. १०५० आफ १८८७–९१।

÷ नं ५६३ आफ १८७५–७६। × नं ११०६ आफ १८८४–८७। † नं ११६३ आफ १८९३–९५। – ११३५ आफ १८८४-८७। ० देखो जैनमित्र, गुरुवार, आश्विन सुदी ५ वीर सं २४४७ में श्रीयुत पं पन्नालालजी बाकलीवाल का "सं वि १०८० के प्रभाचन्द्र" शीर्षक लेख।

परिशिष्ट नं० १

(आदिपुराण के प्रारंभ का कुछ अंश ।)

ओं नमो वीतरागाय ।

सिद्धिवहूमणरंजणु परमनिरंजणु भुअणकमलसरणेसरु ।
पणवेवि विग्घविणासणु निरुवमसासणु रिसहणाहपरमेसरु ॥ ध्रुवकम् ॥

× × ×

त कहमि पुराणु पसिद्धणामु, सिद्धत्थवरिसे भुवणाहिरामु ।
उवद्धजूडु भूभंगभीसु ताडेप्पिणु चोडहो तणउ सीसु ॥ १ ॥
भुवणेक्करामु रायाहिराउ जहिं अच्छइ तुडिगु महाणुभाउ ।
त (स?) दीण दिण्ण घणकणयपयरु, महिपरिभमत मेगाडिणयरु ॥ २ ॥
अवहेरिय खलयणु गुणमहंतु, दियहेहिं पराइउ पुप्फयतु ।
दुग्गमदीहरपथरीणु णव इदु जेम देहेण खीणु ॥ ३ ॥
तरुकुसुमरेणुरंजियसमीर, मायदगुंछ गुदलियकीर ।
णंदणवणे किर वीसमइ जाम, तहिं विण्णि पुरिस संपत्त ताम ॥ ४ ॥
पणवेप्पिणु तेहिं पवुत्त एव भो खंडइँ गलिय पावावलेव ।
परिभमिरभमररवगुमुगुमंत, किं किर णिवसहि णिज्जणवणंत ॥ ५ ॥
करिसरवहिरिय दिक्चक्कवाल पइसरहि ण किं पुरवरविसाले ।
त सुणेवि भणइ अहिमाणमेरु वरि खज्जउ गिरिकंदरकसेरु ॥ ६ ॥
णउ दुज्जणभउहा वंकियाइ, दीसंतु कलुसभावंकियाइ ॥

घत्ता ।

वरु णरवरु धवलच्छिहे होउ म कुच्छिहे, मरउ सोणिमुहणिग्गमे ।
खलकुच्छियपहुवयणइ भिउडियणयणइ, म णिहालउ सूरुग्गमे ॥ ७ ॥
चमराणिलउड्डावियगुणाए अहिसेयधोयसुयणत्तणाए ।

भावार्थ—इस प्रसिद्ध पुराणको मैं सिद्धार्थ संवत्सर में कहता हूं जब राजाधिराज भुवनैकराम तुडिगुने चोड राजा का सुन्दर जटायुक्त और भ्रुकुटि भंगिम भीषण मस्तक काटा ॥ १ ॥ उन्होंने दीन दुखियों को प्रचुर धन दिया । इसी समय पृथ्वी पर भ्रमण करते हुए और खलजनों द्वारा अपमानित हुए पुष्पदन्त कवि मेपाटि या मेलाटी नगरी में आये । दुर्गम और लम्बा रास्ता तय करते करते उनका शरीर नवीन चन्द्रमा के समान क्षीण हो गया था । २–३ ॥ वे नन्दन वन नामक उद्यान में विश्राम ले रहे थे जहां की वायु पुष्पों के पराग से महक रही थी और आम्रवृक्षों पर शुकों के झुण्ड क्रीड़ा कर रहे थे । इतने में ही वहां दो पुरुष पहुंचे ॥ ४ ॥ उन्होंने प्रणाम करके कहा कि हे निष्पाप खण्डकवि आप इस निर्जन वन में जो भ्रमरों के गुंजार से गूंज रहा है क्यों ठहरे हैं ? हाथियों के शब्दों से दिशाओं को बधिर करनेवाले इस विशाल नगर में क्यों नहीं चलते । यह सुन कर अभिमानमेरु पुष्पदन्तने कहा कि गिरिकन्दराओं की जंगली फल खा लेना अच्छा परन्तु दुर्जनों की कलुषित टेढ़ी भौंहें देखना अच्छा नहीं ॥ ५–६ ॥ उज्ज्वल नेत्रोंवाली माता की कूख से जन्म लेते ही मर जाना अच्छा परन्तु प्रभु के दुष्ट वचन और भ्रुकुटिल नयन सबेरे सबेरे देखना अच्छा नहीं ॥ ७ ॥

यह लक्ष्मी जिस मनुष्य को जिसने डुरते हुए चँवरों की हवा से सारे गुणों को उड़ा दिया है अभिषेक के जल

---

१ सिद्धार्थ संवत्सरे । २ विरुद । ३ कृष्णराज । ४ दुर्गमदीर्घतराध्वमार्गेणागत । ५ मन्दतेजः । ६ मिलित ७ पुष्पदन्त । ८ हस्तिशब्दान् । ९ दिक्चक्रवाले ।

दुव्वसण सीहसघायसरहु, णवि याणहि किं णामेण भरहु ।

घत्ता ।

आउ जाहुतहो मंदिरु णायणाणविरु सुकइकइत्तणु जाणइ ।
सो गुणगणतत्तिल्लउ तिहुअणिभल्लउ णिच्छउ पइ सम्माणइ ॥ १८ ॥
जो विहिणा णिम्मिउ कव्वपिंडु त णिसुणेवि सो सचलिउ खडु ।
आयउ दिट्ठु भरहेण केम थाइसरिसरिकल्लोलु जेम ॥ १९ ॥
पुणु तासु तेण विरइउ पयाणु, घर आयहो अब्भागयविहाणु ।
समासणु पियवयणेहिं रम्मु णिम्मुकइमु ण परमधम्मु ॥ २० ॥
तुहुं आयउ ण गुणमणि णिहाणु, तुहुं आयउ ण पडयहो भाणु ।
पुणु एम भणेप्पिणु मणहराइं, पहखीणरीणतणु सुहयराइं ॥ २१ ॥
वर गहाणविलेपणभूसणाइं, दिण्णइं देवगइणिवसणाइं ।
अइरत रसालइं भोयणाइं, गलियाइं जाम कइवय दिणाइं ॥ २२ ॥
देवीसुपण कइ भणिउ ताम, भो पुप्फयंत ससिलिहियणाम ।
णियसिरिविसेसणिज्जियसुरिंदु गिरिधीरु वीरु भइरव णरिंदु ॥ २३ ॥
पइ मणिणउ वण्णिउ वीरराउ, उप्पण्णउ जो मिच्छत्तभाउ ।
पच्छित्तु तासु जइ करहि अज्ज, ता घडइ तुज्झु परलोयकज्जु ॥ २४ ॥
तुहुं देउ कोवि भव्वयणबधु, पुरुएवचरियभारस्स खधु ।
अब्भत्थिओसि देवहिं तेम, णिव्विग्घें लहु णिव्वहइ जेम ॥ २५ ॥

घत्ता ।

आललियए गभीरए सालकारए वायए सा किं किज्जइ ।
जइ कुसुमसरवियारउ अरहु भडारउ सब्भावें ण थुणिज्जइ ॥ २६ ॥

को आनन्द देनेवाले मन्दिर में चलिए। वह सुकवियों के कवित्वका मर्मज्ञ है, गुणगणों से तृप्त है और तीनों भुवनों के लिए भला है, वह निश्चय से आप का सम्मान करेगा ॥ १८ ॥

यह सुन कर वह खण्ड कवि—जिस के शरीर को मानों विधाताने काव्य का मूर्तिमान पिण्ड ही बनाया है—उस ओर को चल दिया। उस समय भरत मन्त्रीने उस को इस तरह आते देखा जिस तरह सरस्वतीरूपी सरिता की एक तरंग ही आ रही है ॥ १९ ॥ तब उस ने अभ्यागत विधान के अनुसार उस का सब प्रकार से अतिथिसत्कार किया और बहुत ही प्रिय दम्भरहित धर्मवचनों से संभाषण किया ॥ २ ॥ कहा—हे गुणमणिनिधान आप भले पधारे, कमल के लिए जैसे सूर्य प्रसन्नता का कारण है उसी तरह आप मेरे लिए हैं। ऐसा कहकर उस के मार्ग श्रम से क्षीण हुए शरीर को सुख देनेवाले मनोहर स्नान विलेपन और आभूषणों से उस का सत्कार किया और देवों के निवास करने योग्य स्थान में ठहराया। इसके बाद अत्यन्त रसाल भोजन से उसे तृप्त किया। इस तरह कुछ दिन बीत गये ॥ २१–२२ ॥ देवी सुत (भरत) ने कहा—हे श्लाघनीय नामधारी पुष्पदन्त, भैरव नरेन्द्र (कृष्णराज) अपने वैभव से सुरेन्द्र को भी जीतनेवाले और पर्वत के समान धीर वीर हैं ॥ २३ ॥ तुमने वीर नरेश वीरराज शूद्रक (?) का वर्णन किया है, और उसे माना है अतः इस से जो मिथ्यात्वभाव उत्पन्न हुआ है उस का यदि तुम आज प्रायश्चित्त कर डालो तो इस से तुम्हारा परलोक का कार्य बन जाय ॥ २४ ॥ भव्यजनों के लिए बन्धुतुल्य तुम्हें पुरुदेव (आदिनाथ) चरित्र की रचना करनी चाहिए। मैं तुम्हारी अभ्यर्थना करता हूं। इस काव्यरचना से तुम निर्विघ्नता पूर्वक निवृति प्राप्त करोगे ॥ २५ ॥ वह अतिशय ललित गंभीर और अलंकारयुक्त रचना भी किस काम की जिस में कामवाणों को व्यर्थ करनेवाले अर्हंत भगवान् की सद्भावपूर्वक स्तुति न की गई हो ? ॥ २६ ॥

---

१ भइरव—कृष्णराज ।

सियदतपंतिधवलीकयासु, ता जपइ वरवायाविलासु ।
भो देवीणंदण जयसिरीह, किं किज्जइ कव्वु सुपुरिससीह ॥ २७ ॥
गोवज्जिएहिं ण घणदिणेहिं, सुरवरचावेहिं वणिग्गुणेहिं ।
मइलियचित्तहिं णं जरघरेहिं, छिद्दण्णेसिहिं णं विसहरेहिं ॥ २८ ॥
जडवाइएहिं णं गयरसेहिं, दोसायरेहिं ण रक्खसेहिं ।
आचक्खिय परपुट्ठीपलेहिं, वर कइ णिंदिज्जइ हयखलेहिं ॥ २९ ॥
जो बाल वुड्ढ संतोसहेउ, रामाहिरामु लक्खणसमेउ ।
जो सुम्मइ कइवइ विहियसेउ, तासु वि दुज्जणु किं परे म होउ ॥ ३० ॥

घत्ता ।

णउ महु बुद्धिपरिग्गहु, णउ सुयसंगहु, णउ कासुवि केरउ बलु ।
भणु किह करमि कइत्तणु, ण लहमि कित्तणु, जगु जे पिसुणसयसकुलु ॥ ३१ ॥
तं णिसुणेवि भरहें वुत्तु ताव, भो कइकुलतिलय विमुक्कताव ।
सिमिसिमिसिमंतकिमि भरियरंधु, मेल्लेवि कलेवरु कुणिमगंधु ॥ ३२ ॥
ववगयविवेउ मसिकसणकाउ, सुंदरपएसे किं रमइं काउ ।
णिक्कारणु दारुणु बद्धरोसु, दुज्जणु ससहावें लेइ दोसु ॥ ३३ ॥
हयतिमिरणियरु वरकरणिहाणु, ण सुहाइ उलयहो उइउ भाणु ।
जइ ता किं सो मंडियसराहं, णउ रुच्चइ वियासियसिरिहराहं ॥ ३४ ॥
को गणइ पिसुणु अविसाहियतेउ, भुक्कउ छणयंदहो सारमेउ ।
जिण चलणकमल भत्तिल्लएण, ता जंपिउ कव्वपिसल्लएण ॥ ३५ ॥

घत्ता ।

णउ हउं होमि वियक्खणु, ण मुणमि लक्खणु, छंदु देसि णवि याणमि ।

तब उस वाणी विलास कवि ने अपनी श्वेत दन्तावली से दिशाओं को उज्ज्वल करते कहा—हे देवीनन्दन (भरत) हे सुपुरुषसिंह, मैं काव्य क्या करूं ? श्रेष्ठ कवियों की खलजन निन्दा करते हैं । वे मेघों से घिरे हुए दिन के समान गोवर्जित (प्रकाशरहित और वाणीरहित), इन्द्रधनुष के समान निर्गुण, जीर्ण गृह के समान मलिनचित्त (चित्र), सर्प के समान छिद्रान्वेषी, गत रस के समान जडवादी, राक्षसों के समान दोषायर (दोषाचर और दोषाकर) और पीठ पीछे निन्दा करनेवाले होते हैं । कविपति प्रवरसेन के सेतुबन्ध (काव्य) की भी जब इन दुर्जनों ने निन्दा की तब फिर औरों की तो बातही क्या है ? ॥ २९–३० ॥

फिर न तो मुझ में बुद्धि है, न शास्त्रज्ञान है और न और किसी का बल है, तब बतलाइए कि मैं कैसे काव्य-रचना करूं ? मुझे इस कार्य में यश कैसे मिलेगा ? यह संसार दुर्जनों से भरा हुआ है ॥ ३१ ॥

यह सुनकर भरत ने कहा—हे कविकुलतिलक और हे विमुक्तताप, जिस में कीडे बिलबिला रहे हैं और बहुत ही घृणित दुर्गन्ध निकल रही है, ऐसी लाशको छोड कर विवेकरहित काले कौए क्या और किसी सुन्दर स्थान में क्रीडा कर सकते हैं । अकारण ही अतिशय रुष्ट रहनेवाले दुर्जन स्वभाव से ही दोषों को ग्रहण करते हैं ॥ ३२–३३ ॥ उल्लुओं को यदि अन्धकार का नाश करनेवाला और तेजस्वी किरणोंवाला ऊगा हुआ सूर्य नहीं सुहाता तो क्या सरोवरों की शोभा बढानेवाले विकसित कमलों को भी न सुहायेगा ? ॥ ३४ ॥ इन खलजनों की परवा कौन करता है ? हाथी के पीछे कुत्ते भौंकते ही रहते हैं ।

यह सुनकर जिन भगवान के चरणकमलों की भक्ति में लीन रहनेवाले काव्यराक्षस (पुष्पदन्त) ने कहा ॥ ३५ ॥ आप का यह कथन ठीक है, परन्तु न तो मैं विचक्षण हूं और न व्याकरण, छन्द आदि जानता

१ परपृष्ठिमांसै परोक्षवादैश्च । २ बाला अंगदादय , वृद्धा जांबवदादय अन्यत्र श्रुतहीना श्रुताढ्याश्च । ३ हनुमान । ४ छनसमुद्रवध अन्यत्र छनसेतुवध नाम काव्य । ५ पद्मशा । ६ काव्यराक्षसेन । ७ कुक्कुरः ।

जा विरइय जयदर्दाहें आसिमुणिंदर्दाहें सा कह केम समाणमि ॥ ३६ ॥
अकलंक कविल कणयर मयाइं, दिय सुगय पुरंदर णय सयाइं।
दंतिलविसाहिं लुद्धारियाइं णउ णायइं भरह वियारियाइं ॥ ३७ ॥
णउ पीयइं पायंजलिजलाइं, अइहास पुराणइं णिम्मलाइं।
भावाहिउ भारह-भासि वासु कोहलु कोमलगिरु कालिदासु ॥ ३८ ॥
चउमुहु सयंभु सिरिहरिसु दोणु, णालोइउ कइ ईसाणु बाणु।
णउ धाउ ण लिंगु ण गुणसमासु णउ कम्मु करणु किरिया विसेसु ॥ ३९ ॥
णउ संधि ण कारउ पयसमत्ति, णउ जाणिय मइ एक्कवि विहत्ति।
णउ बुज्झिउ आयम सद्दधामु, सिद्धंतु धवल जयधवल णामु ॥ ४० ॥
पडुरुद्दडु जड णिरुणासयारु, परियंच्छिउ णालंकारसारु।
पिंगल पत्थारु समुद्दे पडिउ, ण कयाइ महारइ चित्ते चडिउ ॥ ४१ ॥
जैसइधु सिंधु कल्लोलसित्तु, ण कलाकोसले हियवउ णिहित्तु।
हउ वप्प निरक्खरु कुक्खिमुक्खु णरवेसें हिंडमि चम्मरुक्खु ॥ ४२ ॥
अइ दुग्गमु होइ महापुराणु कुडएण मवइ को जलविहाणु।
अमरासुरगुरुयणमणहरोहिं, जं आसि कयउ मुणिगणहरेहिं ॥ ४३ ॥
तं हउ कहमि भत्तीभरेण, किं गयणे ण भमिज्जइ महुअरेण।
एहु विणउ पयासिउ सज्जणाहं, मुहे मसि कुच्चउ कउ दुज्जणाहं ॥ ४४ ॥

हूं, ऐसी दशा में जिस चरित को बड़े बड़े अग्रदूत्य मुनियों ने रचा है उसे मैं कैसे बना सकूंगा ? ॥ ३६ ॥ मैं अकलंक (जैन दार्शनिक), कपिल (सांख्यकार) कणचर (कणाद) के मतों का ज्ञाता नहीं हूं, द्विज (ब्राह्मण) सुगत (बौद्ध), पुरन्दर (चार्वाक), आदि सैकड़ों नयों को दन्तिल विशाख लुब्ध (प्राकृतलक्षणकर्त्ता) आदि को नहीं जानता। भरत के नाट्यशास्त्र से मैं परिचित नहीं ॥ ३७ ॥ पतंजलि (भाष्यकार) के और इतिहास पुराणों के निर्मल जल को मैंने पिया नहीं, भावों के अधिकारी भारतभाषी व्यास कोमलवाणीवाले कालिदास चतुर्मुख स्वयंभु कवि, श्रीहर्ष द्रोण, कवीश्वर बाण का अवलोकन नहीं किया। धातु, लिंग गुण समास कर्म करण क्रिया विशेषण संधि, पदसमास विभक्ति इन सब में से मैं कुछ भी नहीं जानता। आगम ग्रन्थों के स्थानभूत धवल और जयधवल सिद्धान्त भी मैंने नहीं पढ़ ॥ ३८-४० ॥ चतुर रुद्रट का अलंकार शास्त्र भी मुझ परिज्ञात नहीं पिंगल प्रस्तार आदि भी कभी मेरे चित्तपर नहीं चढ़ ॥ ४१ ॥ यश चिह्नकवि के काव्यसिंधु की कल्लोलों से मैं कभी सिक्त नहीं हुआ। कलाकौशल से भी मैं कोरा हूं। इस तरह मैं बेचारा निरक्षर मूर्ख हूं मनुष्य के वेष में पशु के तुल्य घूमता फिरता हूं ॥ ४२ ॥ महापुराण बहुत ही दुर्गम है। समुद्र कहीं एक कूंडे में भरा जा सकता है ? फिर भी जिसे सुर असुरों के मनको हरनेवाले मुनि गणधरों ने कहा था, उसे अब मैं भक्ति भाववश करता हूं। भौंरा छोटा होनेपर भी क्या विशाल आकाश में भ्रमण नहीं करता है ? अब मैं सज्जनों से यही विनती करता हूं कि आप दुर्जनों के मुंह पर स्याही की कूंची फेर दें ॥ ४४ ॥

---

८ सांख्यमतके मूलकार। ९ वैशेषिकमतके मूलकार। १० चार्वाकमतके मन्त्रकार। ११ पाणिनिव्याकरणभाष्य (पतंजलि)। १२ एवंपुरवाश्रित कथा। १३ भारतभाषी व्यास। १४ श्रीहर्ष। १५ कवि ईशान बाण। १६ परिज्ञात। १७ प्राकृत लक्षण कर्ता।

परिशिष्ट नं० २

(उत्तर पुराण के मंगलाचरण के बाद का अंश ।)

मणे जाएण किं पि अमणोज्जे, कइवय दिअहेँ केण विकज्जें ।
णिव्विण्णउ थिउ जाम महाकइ, ता सिविणंतरि पत्त सरासइ ॥ १ ॥
भणइ भडारी सुहयरुमेहं, पणवह अरुहं सुहयरमेहं ।
इय णिसुणेवि विउद्धउ कइवरु, सयलकलायरु णं छणससहरु ॥ २ ॥
दिसउ णिहालइ किं पि ण पेच्छइ, जा विम्भियमइ णियघरे अच्छइ ।
ताम पराइएण णयवंतें, मउलिय, करयलेण पणवंतें ॥ ३ ॥
दस दिस पसरिय जसतरुकंदें, वरमहमत्तवंसणहचंदें ।
छणससिमंडल सण्णिह वयणें, णव कुवलयदलदीहरणयणें ॥ ४ ॥

घत्ता ।

खल संकुले काले कुसीलमइ विणउ करेप्पिणु संवरिय ।
वच्चंति विसुण्णहसुण्णवहे जेणसरासइ उद्धरिय ॥ ५ ॥
ऐयणु देवियव्वतणुजाएं, जयदुंदुहिसरगहिरणिणाएं ।
जिणवरसमयणिहेलणखंभें, दुत्थियमित्ते ववगयडंभें ॥ ६ ॥
परउवयारहारणिव्वहणें, विउसविहुर सयभय णिम्महणें ।
ते ओहामिय पवरक्खरेंहें, तेण विगैव्वें भव्वें भरहें ॥ ७ ॥
बोल्लाविउ कइ कव्वपिसल्लउ, किं तुहुं सच्चउ वापगेहिल्लउ ।
किं दीसहि विच्छायउ दुम्मणु, गंथकरणे किं ण करहि णियमणु ॥ ८ ॥
किं किउ काइं वि मइं अवराहउ, अवरु कोवि किं वि रसुम्माहउ ।

कुछ दिनों के बाद मन में कुछ बुरा मालूम हुआ । जब महाकवि निर्विण्ण हो उठा तब सरस्वती देवी ने स्वप्न में दर्शन दिया ॥ १ ॥ भट्टरिका सरस्वती बोली कि पुण्यवृक्ष के लिए मेघतुल्य और जन्ममरणरूप रोगों के नाशक अरहंत भगवान को प्रणाम करो । यह सुनकर तत्काल ही सकलकलाओं के आकर कविवर जाग उठे और चारों ओर देखने लगे परन्तु कुछ भी दिखलाई नहीं दिया । उन्हें बडा विस्मय हुआ । वे अपने घर ही थे कि इतने मे नयदन्त भरत मत्री प्रणाम करते हुए वहा आये, जिन का यश दशोंदिशाओं में फैल रहा है, जो श्रेष्ठ महामात्यवशरूप आकाश के चन्द्रमा है, जिन का मुख चन्द्रमण्डल के समान और नेत्र नवीन कमलदलों के समान हैं, ॥ २–४ ॥ जिन्हों ने इस खलजन सकुल काल में विनय करके शून्यपथ में जाती हुई सरस्वती को रोक रक्खा और उस का उद्धार किया ॥ ५ ॥ जो ऐयण पिता और देवी माता के पुत्र हैं, जो जिनशासनरूप महल के खभ हैं, दुस्थितों के मित्र हैं, दभरहित हैं, परोपकार के भार को उठानेवाले हैं, विद्वानों को कष्ट पहुँचानेवाले सैकडों भयों को दूर करनेवाले हैं, तेज के धाम हैं, गर्वरहित हे और भव्य हैं ॥ ६–७ ॥ उन्हों ने काव्यराक्षस पुष्पदन्त से कहा कि भैया, क्या तुम सचमुच ही पागल हो गये हो ? तुम उन्मना और छायाहीनसे क्यों दिखते हो ? ग्रन्थरचना करने में तुम्हारा मन क्यों नहीं लगता ? ॥ ८ ॥ क्या मुझ से तुम्हारा

---

१ सरस्वती । २ सुष्ठु हतो रुजा रोगाणामोघः संघातो येन स तं । ३ पुण्यतरुमेघ । ४ गतनिद्रो जागरति । ५आकार । ६ पश्यति । ७ भरतमंत्रिणेति सम्बन्ध श्रीपुष्पदन्तः आलापित । ८ चन्दो मेघ । ९ महामात्र–महत्तर । १० चन्द्रेण ११ सवृता रक्षिता सरस्वती । १२ एयण पिता देवी माता तयो पुत्रेण भरतेन । १३ प्रासाद । १४ मयि पुष्पदन्ते उपकार-भावनिर्वाहकेन । १५ निर्मथकेन । १६ रयेन विमानेन । १७ गर्व रहितेन । १८ कोमलालापे । १९ अपराध । २०, अन्यकाव्यकरणवाछ· किं त्वं ।

भणु भणु भणियउ सयलु पडिच्छमि, हउ कयपंजलियरु अच्छमि" ॥ ९ ॥

घत्ता ।

अथिरेण असारें जीवियएण किं अप्पउ सम्मोहहिं ।
तुहु सिद्धहें वाणीधेणुअहें, णवरसखीरु ण दोहहिं ॥ १० ॥
त णिसुणेप्पिणु दर विहसंतें मित्तमुहारविंदु जोयंतें ।
कसणसरीरें सुद्धकुरूवें, मुद्धाएविगब्भि सभूवें ॥ ११ ॥
कासव गोत्तें केसव पुत्तें कइकुलतिलए सरसइणिलए ।
उत्तमसत्तें जिणपयभत्तें ॥ १२ ॥ (?)
पुप्फयत कइणा पडिउत्तउ, भो भो भरह णिसुणि णित्तक्खुत्त ।
कलिमलमलिणु कालु विवरेरउँ, णिग्घिणु णिग्गुणु दुण्णयगारउ ॥ १३ ॥
जो जो दीसइ सो सो दुज्जणु णिप्फलु णीरसु ण सुक्कउ वणु ।
राउ राउ ण सझहें केरउ, अत्थे पयट्टइ मणु ण महार उ ।
उव्वेउ ज वित्थरइ णिरारिउ, एकु वि पैउ विरयवउ भारिउ ॥ १४ ॥

घत्ता ।

दोसेण होउ त णउ भणमि चोज्ज अवरुमण धक्कउ ।
जगुपउ चडावियउ चाउजिह तिह गुणेण सहयवक्कउ ॥
जयवि तो वि जिणगुणगणु धणणमि, किं ह पइ अब्भत्थिउ अवगण्णमि ।

कोई अपराध बन पड़ा है अथवा और किसी रस का उन्माद हुआ है अर्थात् कोई दूसरा काव्य बनाने की इच्छा हुई है ? बोलो, बोलो, मैं हाथ जोड़ कर तुम्हारे सामने खड़ा हूँ तुम जो कुछ कहोगे मैं सब कुछ देने के लिए तैयार हूँ ॥ ९ ॥

इस अस्थिर और असार जीवन से तुम क्यों आप को सम्मोहित कर रहे हो ? तुम्हें वाणीरूप कामधेनु सिद्ध हो गई है उस से तुम नवरसरूप दूध क्यों नहीं दोहते ? ॥ १० ॥

यह सुनकर मुसकराते हुए और अपने मित्र के मुखकमल की, ओर निहारते हुए कृशशरीर, अतिशय कुरूप, मुग्धादेवी और केशव ब्राह्मण के पुत्र काश्यपगोत्रीय कविकुलतिलक, सरस्वतीनिलय सज्जन और जिनपदभक्त पुष्पदन्त कवि ने प्रत्युत्तर दिया कि, हे भरत, यह निश्चय है कि इस कलिमलमलिन निर्दय, निर्गुण और दुर्नीतिपूर्ण विपरीत काल में जो जो दिखता है सो सब दुर्जन है, सब सूखे हुए वन के समान निष्फल और नीरस है। राजा लोग सन्ध्याकाल की लालिमा के सदृश हैं। इस लिए मेरा मन अर्थ में अर्थात् काव्य रचना में प्रवृत्त नहीं होता है। इस समय मुझे जो उद्वेग हो गया है उस से एक पद बनाना भी मेरे लिए भारी हो गया है ॥ ११-१४ ॥

यह जगत यदि दोष से वक्र होता तो मेरे मन में आश्चर्य नहीं होता किन्तु यह तो चढ़ाये हुए चाप (धनुष) सदृश गुण से भी वक्र होता है (धनुष की डोरी गुण कहलाती है। धनुष गुण या डोरी चढ़ाने से टेढ़ा होता है) ॥ १५ ॥

यद्यपि जगत की यह दशा है तो भी मैं जिन गुणवर्णन करूँगा। तुम मेरी अभ्यर्थना करते हो तब मैं तुम्हारी अवगणना कैसे कर सकता हूँ ? तुम त्याग भोग और भावोत्तम शक्ति से और निरन्तर की जानेवाली कविमैत्री से

---

२१ सर्वं प्रतीच्छामि । २२ एष तिष्ठामि । २३ रस सिद्धाया ।

१ भरतस्य । २ मुग्ध कुरूपेण । ३ मुग्धादेवी । ४ वाणीनिलयेन मन्दिरेण । ५ सत्वेन सज्जनेन । ६ निश्चितं । ७ विपरीत । ८ शुष्कवनमिव जन । राजा सन्ध्यारागसदृश । १० ध्वस्यार्थे न प्रवर्तते । ११ एकमपि पद रचितुं भारो महान् । १२ लक्षण गह अन्य भार वक्र भवति तदाश्चर्यं न किन्तु गुणेनापि यह वक्र तदाश्चर्यमस्ति । १३ चाप ।

चार्ये भोय भाउग्गमसात्तिए, पइं अणवरय रइय कइमित्तिए ॥ १६ ॥
राउ सालिवाहणु वि विसेसिउ, पइं णियजसु भुवणयले पयासिउ ।
कालिदासु जें खंधें णीयउ, तहो सिरिहरिसहो तुहुं जगि वीयउं ॥ १७ ॥
तुहुं कइकामधेणु कइवच्छलु, तुहुं कइकप्परुक्खु ढोइयफलु ।
तुहु कइ सुरवरकीलागिरिवरु, तुहुं कइ रायहंसमाणससरु ॥ १८ ॥
मेंदु मयालसु मयणुम्मत्तउ, लोउ असेसुवि तिहए भुत्तउ ।
केण वि कव्वपिसल्लउ मणिणओ, केण वि थट्ठु भणेवि अवगणिणउ ॥
णिच्चमेव सब्भाव पउंजिउं, पइं पुणु विणउं करे वि हउं रंजिउं ॥ १९ ॥

घत्ता ।

धणु तणुसमु मज्झु ण तं गहणु णेहु णिकारिमु इच्छमि ।
देवीसुअ सुदणिहि तेण हउं णिलए तुहारए अच्छमि ॥ २० ॥
महु समयागमे जायहें ललियहें, वोल्लइ कोइल अंवयकलियहें ।
काणणे चंचरीउ रुणुरुंटइ, कीरु किएण हरिसेण विसट्टइ ॥ २१ ॥
मज्झु कइत्तणु जिणपयभत्तिहें, पसरइ णउ णियजीवियवित्तिहें ।
विमलगुणाहरणंकियदेहउ, एह भरह णिसुणइ पइं जेहउं ॥ २२ ॥
कमलगंधु घिप्पइ सारंगें, णउ सालूरें णीसारंगें ।
गमणलील जा कयसारंगें सा किं णासिज्जइ सारंगे ॥ २३ ॥
वड्ढियसज्जण दूसणवसणें, सुकइ कित्ति किं हम्मइ पिसुणें ।
कहमि कव्वु वम्महसंहारणु, अजियपुराणु भवण्णवतारणु ॥ २४ ॥

शालिवाहन राजा से भी बढ़ गये हो और अपने यश को तुमने पृथ्वीतलपर प्रकाशित कर दिया है। इस समय जगत में तुम दूसरे श्रीहर्ष हो जिसने कविकालिदास को अपने कन्धे पर चढ़ा लिया था। ६– ७ ॥ तुम कविकामधेनु, कविवत्सल, कविकल्पवृक्ष, कविनन्दनवन और कविराजहस समान सरोवर हो ॥१८॥ ये सारे लोग मूर्ख, मदालस, और मदोन्मत्त बने रहे, (इन से मुझे कुछ प्रयोजन नहीं)। किसी ने मुझे काव्यराक्षस कह कर माना और किसी ने ठूंठ कह कर मेरी अवमानना की। परन्तु तुमने सदा ही सद्भावों का प्रयोग करके और विनय करके मुझे प्रसन्न रक्खा है ॥ १९ ॥

मैं धन को तिन के के समान गिनता हूं और उसे नहीं चाहता हूं। हे देवीसुत श्रुतनिधि भरत, मैं अकारण प्रेम का भूखा हू और इसी से तुम्हारे महल में रहता हूं ॥ २० ॥

वसन्त का आगमन होनेपर जब आमों में सुन्दर मौर आते हैं तब कोयल बोलती है और बगीचों में भौंरें गुंजारव करते हैं, ऐसे समय में क्या तोते भी हर्ष से नहीं बोलने लगते हैं ? ॥ २१ ॥ जिन भगवान के चरणों की भक्ति से ही मेरी कविता स्फुरायमान होती है अपने जीवित की वृत्ति से या जीविकानिर्वाह के खयाल से नहीं। हे विमलगुणभरणांकित हे भरत, अब मेरी यह रचना सुन ॥ २२ ॥ कमलों की सुगन्ध भ्रमरगण ग्रहण करते हैं, नि सार शरीर मेंढक नहीं। हाथी या हस जिस चाल से चलते हैं, उस से क्या हरिण चल सकते हैं? इसी तरह से जिन्हें सज्जनों को दोष लगाने की आदत पड गई है, ऐसे दुर्जन क्या सुकवियों की कीर्ति को मिटा सकते हैं ? अब मैं मन्मथसहारक और भवसमुद्रतारक अजितपुराण नामक काव्य को कहता हू।

---

१४ त्याग । १५ स्कन्धे धृतो येन श्रीहर्षेण । १६ तेन सदृशो महान् त्वं । १७ मूर्खो लोकः । १८ सद्भाव । १९ अकृत्रिम धर्मानुरागं ।

१ वसन्तसमागमे । २ जानाया सहकारकलिकायाः । ३ आम्र कलिकानिमित्त । ४ गृह्यते । ५ भ्रमरेण । ६ भेकेन । ७ नि सारांगेण निकृष्ट शरीरेण । ८ हस्तिना हसेन वा । ९ मृगेण । १० हन्यते । ११ कथयामि । १२ मन्मथ ।

परिशिष्ट नं० ३

(उत्तरपुराण के अंत का कुछ अंश ।)

णिव्वुए वीरे गलियमयरायउ इदभूइ गणि केवलि जायउ ।
सो विउलइरिहे गउ णिव्वाणहो कम्मविमुक्कओ सासयठाणहो ॥ १ ॥
ताहिं वासरे उप्पण्णउ केवलु मुणि हे सुहम्महो पक्खालियमलु ।
तं णिव्वाणए जंबू णामहो पंचमु दिव्वणाणु हयकामहो ॥ २ ॥
णंदि सुणंदिमित्तु अवराजिव मुणि गोवद्धणु चउत्थु जलहरझुणि ।
ए पच्छए समत्थ सुयपारय णिरसियमिच्छामयमयणीरय ॥ ३ ॥
पुणु वि विसहु जइ पोट्ठिलु खत्तिउ जयणाउ वि सिद्धत्थु पवित्तिउ ।
दिहिसेणकउ विजउ बुद्धिलउ गगु धम्मसेणु वि णीसल्लउ ॥ ४ ॥
पुणु णक्खत्तु पुणु जसवालउ पडु णामु धुवसेणु गुणालउ ।

घत्ता ।

अण्णु कसउ अप्पउ जिणे वि थिउ पुणु सुहद्दु जणसुहयरु ।
जसभद्दु अनुदद्दु अमदमइ णाणें णायरु गणहरु ॥ ५ ॥
भद्दवाहु लोहकु भडारउ आयारंगधारि जससारउ ।
एयहिं सत्थु सत्थु मणे माणिउ, सेसहिं एक्कु देसु परियाणिउ ॥ ६ ॥
जिणसेणेण वीरसेणेण वि जिणसासणु सेविउ मयगिरिपवि ।
पुव्वयाले णिसुणिउ सइ भरहें, राए रिवु पहुदावियविरहें ॥ ७ ॥
× × ×
एय रायपणियाडिए णिसुणिउ धम्मु महामुणिणाहहिं पिसुणिउ ।
सेणियराउ धम्म सोयारह पच्छिल्लउ चिक्रियभयमारह ॥ ८ ॥
ताहमि पच्छए बहुरसणडिए, भरहे कारारिउ पद्धडिए ।
पढेवि सुणेवि आयण्णेवि हयकले, पयडिउ मग्ग ए इय माहियले ॥ ९ ॥
कम्मक्खयकारणु गणे दिट्ठउ एम महापुराणु मइ सिट्ठउ ।
एत्थु जिणिंद मग्ग ओणाहिउ, बुद्धिविहीणें जं मइ साहिउ । १० ॥
तं मज्झु खमहो तिलोयहो सारी, अरुहमुहयय सुअएवि भडारी ।
चउवीस वि महु कलुस खयंकर, देंतु समाहि बोहि तित्थंकर ॥ ११ ॥

घत्ता ।

दुहु छिंदउ णंदउ भुयणयलु णिरुवम कण्णरसायणु ।
आयण्णउ भण्णउ ताम जणु जाम चंदु तारायणु ॥ १२ ॥
वरिसउ मेहजालु वसुहारहिं, महि पिच्चउ बहु धण्णपयारहिं ।
णंदउ सासणु वीर जिणेसहो, सेणिउ णिमाउ णरयणिवासहो ॥ १३ ॥
लग्गउ ण्हवणारमहो सुरवइ णंदउ पय सुद्धु णंदउ णरवइ ।
णंदउ देसु सुहिक्खु थियमउ जणु मिच्छत्तु दुचित्तु णिसुमउ ॥ १४ ॥

दुःखों का नाश हो और यह कर्णरसायन काव्य पृथ्वीतल पर विस्तार लाभ करे । जब तक चन्द्रमा और तारे हैं, तब तक लोग इसे सुनें और इसका आदर करें ॥ १२ ॥

पृथ्वी पर मेघ खूब बरसें और तरह तरह के धान्य पकें, वीरभगवान का शासन बढ़े राजा श्रेणिक नरक निवास से बाहर निकले और (तीर्थंकर होने पर) इन्द्र उन का जन्माभिषेक करें । प्रजा का सुख बढ़े और राजा आनन्दित हो । देश में सुभिक्ष (सुकाल) हो और लोगों का मिथ्यात्व भाव नष्ट हो ॥ १३-१४ ॥ अर्थांकन

पडिवयणए पडिपालए सूरहो, होउ संति भरहहो गिरिधीरहो।
होउ संति बहु गुणगुणवंतह, संतहं दयवंतहं भयवंतहं ॥ १५ ॥
होउ सति बहु गुणहि महल्लहो, तासु जे पुत्तहो सिरि देवल्लहो।
पउ महापुराणु रयणुज्जले, जे पयडेवउ सयले धरायले ॥ १६ ॥
चउविह दाणुज्जय कयचित्तहो, भरह परमसब्भाव सुमित्तहो।
भोगल्लहो जयजसविच्छुरियहो, होउ संति णिरु णिरुवमचरियहो ॥ १७ ॥
होउ सति णण्णहो गुणवंतहो, कुलवच्छल सामत्थ महंतहो।
णिच्चमेव पालियजिणधम्महं, होउ संति सोहण गुणवम्मह ॥ १८ ॥
होउ सति सुअणहो दंगइयहो, होउ संति संतहो संतइयहो।
जिणपयपणमण वियलियगव्वह, होउ सति णीसेसह भव्वहं ॥ १९ ॥

घत्ता।

इय दिव्वहो कव्वहो तणउं फलु लहु जिणणाहु-पयच्छउ।
सिरि भरहहो अरुहहो जहिं गमणु पुप्फयंतु तहिं गच्छउ ॥ २० ॥
सिद्धिविलासिणि मणहरदूएं, मुद्धाएवी तणुसंभूएं।
णिद्धणसधणलोयसमचित्तें, सव्वजीवणिक्कारणमित्तें ॥ २१ ॥
सद्दसलिल परिवड्ढियसोत्तें, केसवपुत्तें कासवगुत्तें।
विमल सरासइ जणियविलासें, सुण्णभवण-देवउलणिवासें ॥ २२ ॥
कलिमल पवल पडल परिचत्तें, णिग्घरेण णिप्पुत्तकलत्तें।
णइवावीतलाय सरण्हाणे, जर चीवरवक्कल परिहाणे ॥ २३ ॥
धीरें धूलीधूसरियंगें, दूरयरुज्झिय दुज्जणसंगें।
महि सयणयलें करपंगुरणें, मग्गिय पंडियपंडियमरणें ॥ २४ ॥
मण्णखेडपुरवरे णिवसंतें, मणे अरहंतु देउ झायंतें।
भरहमणणिज्जें णयणिलएं, कव्वपबंधजणियजणपुलएं ॥ २५ ॥
पुप्फयंतकयणा धुयपंकें, जइ अहिमाणमेरुणामंकें।

पालन में शूर और पर्वत के समान धीर भरत (मत्री) को शान्ति प्राप्त हो। गुणवन्त, दयावन्त, ज्ञानवन्त सज्ज-नों को शान्ति प्राप्त हो ॥ १५ ॥ उस के (भरत के ?) पुत्र अतिशय गुणवन्त श्री **देवल्ल** को शान्ति मिले जिस ने कि इस महापुराण को रत्नोज्ज्वल धरातल पर फैलाया और जिस का चित्त चारों प्रकार के दान करने में उद्यत रहता है तथा जो भरत के लिए परम सद्भावयुक्त मित्र के तुल्य है। जिस का यश संसार में फैल रहा है और जिस का चरित्र उपमा-रहित है, उस **भोगल्ल** को शान्ति प्राप्त हो ॥ १६–१७ ॥ कुलवत्सल, समर्थ, गुणवन्त और महन्त **णण्ण** को शान्ति प्राप्त हो। निरन्तर जैन धर्म का पालन करनेवाले **सोहण** और **गुणवर्म** को शान्ति मिले ॥ १८ ॥ सुजन **दंगइय** और सन्त **संतइय** को शान्ति प्राप्त हो। जिनभगवान के चरणों में मस्तक झुकानेवाले और गर्वरहित अन्य सब भव्यजनों को भी शान्ति मिले ॥ १९ ॥

इस दिव्य काव्य की रचना का फल जिननाथ की कृपा से मैं यह चाहता हू कि श्री भरत और अर्हंत का गमन जहां हो पुष्पदन्त भी वहाँ जावे ॥ २० ॥ सिद्धिरूपी विलासिनी के मनोहर दूत, मुग्धादेवी के पुत्र, निर्धनों और सधनों को बराबर समझनेवाले, सर्वजीवों के निष्कारण मित्र, शब्द सलिल से बढा है काव्य स्रोत जिन का, केशवके पुत्र, काश्यप गोत्रीय, विमल सरस्वती से उत्पन्न विलासोंवाले, शून्य भवन और देव कुलों में रहनेवाले, कलिकाल के मत के प्रबल पटलों से रहित, विना घरद्वार के, पुत्रकलत्रहीन, नदी, वापिका और सरोवर में स्नान करनेवाले, फटे कपडे और वल्कल पहननेवाले, धूलिधूसरित अग, दुर्जनो के सग से दूर रहनेवाले, जमीन पर सोनेवाले, अपने हाथों को ही ओढनेवाले, पाण्डितपाण्डितमरण की प्रतीक्षा करनेवाले, मान्यखेट पुर में निवास करनेवाले, मन में अरहन्त देवका ध्यान करनेवाले, भरतमत्रीद्वारा सम्मानित, नीति के निलय, अपने काव्यरचनासे लोगों को पुलकित करनेवाले, पापरूप कीचड जिन क

कयउ कव्वु भत्तिए परमत्थें, छसय छडोत्तर कयसामत्थें ॥ २६ ॥
कोहण संवच्छरे आसाढए, दहमए दियहे चंदरुइरूढए ॥
घत्ता ।
सिरि भरहहो भरहहो बहुगुणहो कइकुलतिलए भासिउ ।
सुपहाणु पुराणु तिसट्ठिहिमि पुरिसहं चरिउ समासिउ ॥ २७ ॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकइपुप्फयंत विरइए महाकव्वे दुरसरलंभो परिच्छेओ समत्तो ॥ १०२ ॥

(प्राचीन पत्र) संवत् १६३० वर्षे भाद्रपदमासे शुक्लपक्ष पूर्णिमातिथौ कविवासरे उत्तरा भाद्रपद नक्षत्रे नेमिनाथचैत्यालय श्रीमूलसंघ बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्यान्वये भ० श्रीपद्मनंदिदेवास्तत्पट्टे भ० श्रीशु [भचन्द्रदेवास्त] त्पट्टे भ० श्रीजिनचन्द्रदेवास्तत्पट्टे भ० श्रीप्रभाचन्द्रदेवास्तत्शिष्य भ० श्रीध स्तत्शिष्य भ० श्री ललितकीर्ति स्तास्तत्शिष्य भ० श्री चन्द्रकीर्ति देवास्तद (खंडेल) वालान्वय सावडा गोत्रे सा० धन्ना तद्भार्या धिल्हसरिस्तत्पुत्रा द्वौ प्र० सा छायलदे तत्पुत्र सा० थारम तद्भार्या थारमदे तत्पुत्र सा० नाथू तद्भार्या ताय जिनपूजापुरंदर सा० श्री धणराज तद्भार्ये द्वे प्र० सती सीताफ

परिशिष्ट नं० ४

(महापुराण के परिच्छेदों के प्रारंभिक पद्य)

१ आदित्योदयपर्वताद्गुरुतराच्चन्द्राक्रचूडामणे-
गर्द्देमाचलत कुशशनिलयादासेतुबन्धाद्दृढात् ।
आपातालतलादहीन्द्रभवनादास्वर्गमार्गं गता
कीर्तिर्यस्य न वेत्ति भद्र भरतस्याभाति खण्डस्य च ॥

३ बलिजीमूतदधीचिषु सर्वेषु स्वर्गतामुपगतेषु ।
सम्प्रत्यनवगतिकस्त्यागगुणो भरतमावसति ॥

४ आश्रयवशेन भवति प्रायः सर्वस्य वस्तुनोऽतिशयः ।
भरताश्रयेण सम्प्रति पश्य गुणा मुख्यतां प्राप्ताः ॥

५ मूलीलां त्यज मुंच सगतकुचद्वन्द्वादिगव्यात्मना,
मा त्वं दर्शय चारुमध्यलतिका तन्वंगि कामाहता ।
मुग्धे श्रीमदनिंद्यखंडसुकवेर्बंधुर्गुणैकान्त
स्वप्नेऽप्येष परांगना न भरतः शौचाम्बुधिर्वाञ्छति ॥

६ श्रीरास्ते यैः कुप्यति यान्हेया द्वेष्टि सततं लक्ष्म्यै ।
भरतमनुगम्य साम्प्रतमनयोरात्यातिक प्रेम ॥

७ हंहो भद्र प्रचंडावनिपतिभवने त्यागसंख्यातकर्ता
कोयं श्यामप्रधानः प्रवरकरिकराकारबाहुः प्रसन्नः ।
धन्यः प्रालेयपिण्डोपमधवलयशा धौतधात्रीतलान्त-
ख्याता बन्धुः कवीनां भरत इति कथं पांथ जानासि नो त्वं ॥

धो गया है और अभिमानमेरु जिन का चिन्ह या उपनाम है उन पुष्पदन्त कवि ने यह काव्य भक्ति के वश हो कर ९०६ के कोधन नामक संवत्सर में आसाढ के दसवें दिन सोमवार को बनाया ॥ २५ २६ ॥ कविकुल तिलक ने पुराणप्र सिद्ध त्रसठ पुरुषों का चरित्र संक्षेप से वर्णन किया ॥ २७ ॥

८ मातर्वसुंधरि कुतूहलिनो ममैतदापृच्छतः कथय सत्यमपास्य साल्यं।
त्यागी गुणी प्रियतमः सुभगोऽभिमानी किं वास्ति नास्ति सदृशो भरतार्यतुल्य ॥

९ एको दिव्यकथाविचारचतुरः श्रोता बुधोऽन्यः प्रिय
एकः काव्यपदार्थसंगतमतिश्चान्यः परार्थोद्यतः।
एक सत्कविरन्य एक महतामाधारभूतो वुधा
द्वावेतौ सखि पुष्पदन्त-भरतौ भद्रे भुवो भूषणौ ॥

१० जेणं हम्मं रम्मं दीवओ चंदाविंवं धरत्ती पल्लको दो वि हत्था सुवत्थं।
पिया णिद्दा णिच्च कव्वकीलाविणोओ अदीणत्तं वित्तं ईसरो पुप्फयंतो ॥

११ सूर्यात्तेज गभीरिमा जलनिधेः स्थैर्यं सुराद्रेर्विधो·
सौम्यत्वं कुसुमायुधात्तु सुभगं त्यागं वले· संभ्रमात्।
एकीकृत्य विनिर्मितोऽतिचतुरो धात्रा सखे सांप्रतं
भरतार्यो गुणवान् सुलब्धयशस· खण्डः कवेर्वल्लभः ॥

१४ केलासुब्भासिकंदा धवलदिसिगओगिण्णदंतांकुरोहा,
सेसाही वद्धमूला जलहिजलसमुब्भूयडिंडीरवत्ता।
वंभंडे वित्थरंती अमयरसमयं चंदविव फलंती,
फुल्लंती तारओहं जयइ णवलया तुज्झ भरहेसकित्ती ॥

१५ त्यागो यस्य करोति याचकमनस्तृष्णांकुरोच्छेदनं,
कीर्तिर्यस्य मनीषिणां वितनुते रोमांचचर्च्च वपुः।
सौजन्यं सुजनेषु यस्य कुरुते प्रेमांतरां निर्वृतिं,
श्लाघ्योऽसौ भरतः प्रभुर्वत भवेऽत्कार्भिर्गिरां सूक्तिभिः ॥

१६ प्रतिगृहमटति यथेष्टं वंदिजनैः स्वैरसंगमावसति।
भरतस्य वल्लभाऽसौ कीर्तिस्तदपीह चित्रतरं ॥

१७ [1]वलिभंगकंपिततनु भरतयशः सकलपाण्डुरितकेशम्।
अत्यंतवृद्धिगतमपि भुवनं संभ्रमति तच्चित्रम् ॥

१८ [2]शशधरविम्बात्कान्तिस्तेजस्तपनाद्गभीरतामुदधेः।
इति गुणसमुच्चयेन प्रायो भरतः कृतो विधिना ॥

१९ श्यामरुचिनयनसुभगं लावण्यप्रायमंगमादाय।
भरतच्छलेन सप्रति कामः कामाकृतिमुपेतः ॥

२१ यस्य जनप्रसिद्धमत्सरभरमनवमपास्य चारुणि,
प्रतिहतपक्षपातदानश्रीरुरसि सदा विराजते।
वसति सरस्वती च सानन्दमनाविलवदनपंकजे,
स जयति जयतु जगति भरहेश्वर सुखमयममलमंगलः ॥

२२ मदकरदलितकुम्भमुक्ताफलकरभरभासुरानना,
मृगपतिनादरेण यस्योऽद्धृतमनघमनर्घमासनम्।
निर्मलतरपवित्रभूषणगणभूषितवपुरदारुणा,
भारतमल्ल सास्तु देवी तव बहुविधमंबिका मुदे ॥

२३ अंगुलिदलकलापमसमद्युति नखनिकुरंबकर्णिकं

---

१ यही पद्य ५० वें परिच्छेद के प्रारम में भी दिया है। २ यह पद्य ९५ वें परिच्छेद के प्रारम में भी है। ३ यह १०२ वें परिच्छेद मे भी है। ४ यह ३९ वें परि० में भी है

सुरपतिमुकुटकोटिमाणिक्यमयुन्नतचक्रचुम्बितम् ।
विलसदगुप्रतापनिर्मलजलज माविलासकोमल
घटयतु मंगलानि भरतेश्वर तव जिनपादपङ्कजम् ॥
२४ हिमगिरिशिखरनिकरपरिपुरधवलियगगनमण्डल
पुलकमिवातनोति केतकनवरतकुसमसकटे ।
विकसितपणिकणासु सुरसरितामणिरुचिगतमध -
क्षितेरिदमतिचित्रकारि भरतेश्वर जगतस्तायक यशः ॥
२५ उन्नतातिमधुमात्रपात्रता भाति भद्र भरतस्य भूतले ।
काव्यकीर्तिघटारवो गृहे यस्य पुष्पदतो दिशागजः ॥
२६ घनधवलताश्रयाणामचलस्थितिकराणां मुहुर्भ्रमताम् ।
गगनैव नास्ति लोके भरतगुणानामरीणां च ॥
२७ गुरुधर्मोद्भवपायनमभिनन्दितकृष्णार्जुनगुणोपेतम् ।
भीमपराक्रमसारं भारतमिव भरत तव चरितं ॥
२८ मुखमलिनोदरसद्मनि गुणहृतहृदये सदैव यद्वसति ।
चित्रमिदमत्र भरते शुक्लापि सरस्वती रक्ता ॥
२९ तर्थीनार्थैर्नैयैरर्थविरचितैर्गद्यपद्यैरनेकैः,
यात कुदावदात दिशि दिशि च यशो यस्य गीतं सुरौघैः ।
काले कृष्णाकराले कलिमलकलितेप्यत्र विद्याविनोदो
सोयं संसारसारं प्रियसखि भरतो भाति भूमण्डलेऽस्मिन् ॥
३ धमहाहड्डलग्गोणिमइलुच्छुलियधिक्खिपसरस्स ।
खंडस्स सम समसीसियाए कइणो ण लज्जति ॥
३३ विनयाङ्कुरसातवाहनादौ नृपचक्रे दिवमीयुषि क्रमेण ।
भरत तव योग्यसज्जनानामुपकार्ये भवति प्रसक्त पद्ये ॥
३४ तीव्रापद्दिवसेषु बन्धुरहितेनैकेन तेजस्विना
सन्तानक्रमतो गतापि हि रमाकृष्टा प्रभो सयया ।
यस्याचारपदं वदति कवयः सौजन्यसत्यास्पदं
सोऽयं श्रीभरतो जयत्यनुपम काले कलौ साम्प्रतम् ॥
३५ इति भरतस्य जिनेश्वरसामायिकशिरोमणगुणान्वक्तुम् ।
मातुं च वार्द्धितोयं चतुर्के कस्यास्ति सामर्थ्यम् ॥
५१ अत्र प्राकृतलक्षणानि सकला नीतिः स्थितिश्छन्दसा-
मर्थालङ्कृतयो रसाश्च विविधास्तत्त्वार्थनिर्णीतयः ।
किंचान्यद्यदिहास्ति जैनचरिते नान्यत्र तद्विद्यते
द्वय तौ भरतेश-पुष्पदसनौ सिद्धं ययोरीदृशम् ॥
६३ वपु भोजन्यवार्ड कविसलधिवणाभ्यानपिण्यसमानु
मौदाम्बकारसारामगतनुविमया भारती यस्य नित्यम् ।
पकत्रामोजानुरागक्रमोनिहितपदा राजहंसीव भाति
प्राक्रमीरमाया स जयति भरते धार्मिके पुष्पदन्तः ॥
६४ आग्रहाकृमराफचडमकव चढीशमाश्रित्य य
कृपकाममकाडताड्यविधि डिंडीरपिंडच्छवि ।
रसाडवरमुडमडलनसद्भागीरथीनायक

१ यही पद्य २७ वें परिच्छेद में भी दिया है। २ यही पद्य ८८ वें परिच्छेद में भी है। ३ यही पद्य ४ वें परिच्छेद में भी है। ४ पूने की प्रति में यह पद्य तेरहवें परिच्छेद में भी लिखा है।

वांछन्नित्यमह कुतूहलवती खंडस्य कीर्तिः कृतेः।

६५ आजन्मं कवितारसैकधिपणा सौभाग्यभाजो गिरां
दृश्यन्ते कवयो विशालसकलग्रन्थानुगा बोधत.।
किंतु प्रौढनिरूढगूढमतिना श्रीपुष्पदंतेन भोः
साम्यं बिभ्रति नैव जातु कविना शीघ्रं त्वत. प्राकृतेः॥

६६ यस्येह कुंदामलचन्द्ररोचिः समानकीर्तिं ककुभां मुखानि।
प्रसाधयंती ननु बभ्रमीति जयत्वसौ श्रीभरतो नितान्तम्॥
पीयूषसूतिकिरणा हरहासहारकुंदप्रसूनसुरनीरधिशक्रनागाः।
क्षीरोदशेषबलसत्तमहंस चैव किं खंडकाव्यधवला भरतस्तु यूयम्॥

६७ इह पठितमुदारं वाचकैर्गीयमानं इह लिखितमजस्रं लेखकैश्चारुकाव्यम्।
गतवति कविमित्रे मित्रतां पुष्पदन्ते भरत तव गृहेस्मिन्भाति विद्याविनोद.॥

६८ चंचच्चन्द्रमरीचिचंचुरंचुरीचातुर्यचर्कोर्चिता
चंचती[1] विचटच्चमत्कृतिकविः प्रोद्दामकाव्यक्रियाम्।
अर्चंती त्रिजगत्सुकोमलतया वांधुर्यधुर्या रसैः
खण्डस्यैव महाकवेः सभरताश्रित्य कृतिः शोभते॥

८० लोके दुर्जनसंकुले हतकुले तृष्णावसे नीरसे
सालंकारवचोविचारचतुरे लालित्यलीलाधरे।
भद्रे देवि सरस्वति प्रियतमे काले कलौ सांप्रत
कं यास्यस्यभिमानरत्ननिलयं श्रीपुष्पदंतं विना॥

परिशिष्ट न० ५

(यशोधरचरित के कुछ अंश।)

तिहुयणसिरिकंतहो अइसयवंतहो अरहंतो वम्महहो।
पणविवि परमेट्ठिहिं पविमलदिट्ठिहिं चरणजुयलु णयसयमहहो॥ ध्रुवकम्।
कुंडिल्लगुत्तणहदिणयरासु, वल्लहनरिंदघरमहयरासु।
णण्णहु मंदिरणिवसंतु संतु, अहिमाणमेरु कइ पुप्फयंतु॥
चिंतइ हो वण नारीकहाए, पज्जत्तउ कय दुक्खयपहाए।
कय धम्मणिबद्धी कावि कहवि, कहियाइ जाइ सिव सोक्खलहमि॥

× × ×

अग्गइ कइराउ पुप्फयंत सरसइणिलओ।
देवियहं सरूओ वण्णइ कइयणकुलतिलओ॥[9]

× × ×

इय जसहरमहारायचरिए महामहल्ल णण्णकण्णाहरणे महाकइ पुप्फयंतविरइए महाकव्वे जसहररायपहवंधो नाम पढमो परिच्छेओ सम्मत्तो॥ १॥

नित्य यो हि पदारविन्दयुगल भक्त्या नमत्यर्हता-
मर्थ चिंतयति त्रिवर्गकुशलो जैनश्रुतानां भृशम्।
साधुभ्यश्च चतुर्विधं चतुरधीर्दानं ददाति त्रिधा
स श्रीमानिह भूतले सह सुतैर्नन्नाभिधो नंदतात्॥

× × ×

---

१ शोभमान। २ चपल। ३ चौर्य। ४ समूह। ५ शोभमाना। ६ विद्युतत् चमत्कृत्या कवयो यया। ७ अर्च्छंती ८ मनोहरता। ९ यह पद्य बम्बई की प्रति में नहीं है।

नक्षत्राधीशरोचिप्रचयशुचियशोद्दामकीर्त्या निकेतो,
निर्णीताशेषशास्त्राखिलविद्वापतिनुताशेषधित्पादभक्तः ।
भ्राता भव्यप्रजानां सततमिह भवाम्भोधिसंसारभीरु-
र्नीतिज्ञो निर्जिताक्षः प्रणयविनयताभ्रदताम्रनामा ॥[1]

× × ×

आशान्तदानपरितोषितवन्धवृन्दो दारिद्र्यरौद्रकरिकुम्भविभेददक्षः ।
श्रीपुष्पदन्तकविकाव्यरसाभितृप्तः श्रीमान्सदा जगति नदतु नन्ननामा ॥[2]

× ×

गधव्वें कण्हडणंदणेण आयइं भवाइं किय थिरमणेण ।
महु दोसु ण दिज्जइ पुर्वे कइउ कइवच्छराय त सुत्तु लइई ॥[3]

× ×

पावनिसुमणि मुहावभणि, उवअप्पार्पिण सामलवणिए ।
वासवगुत्ति केसवपुत्ति, जिणपयभत्ति धम्मासत्ति ॥
ववसजुत्त उत्तमसत्त, वियलियसंक अह्विमाणेंक ।
पहसियतुंड कयणा खंड ‡जियखुद्दसद्द कयजमद्दरक्ख ॥
जो आयण्णइ चणउ मण्णइ लिहइ लिहावइ पढइ पढावइ ।
जो मणसावइ सो नर पावइ विहुणियघणरय सासयसपय ॥
जणणयनीरसि दुरियमलीमसि, कयनिंदायरि दूसहि दुहयरि ।
पडियकयालए नरककानए बहुरकालए अइदुक्कालए ॥
पवरागारि सरसाहारि सन्हइ चेलइ वरतंबोलइ ।
महु उवयारिउ पुण्णिप्पेरिउ, गुणभत्तिल्लउ णण्णमहल्लउ ॥
हाउ चिराउसु वरिसउ पाउसु, तिप्पउ मेइणि धणकणदाइणि ।
विलसउ गोविणि णच्चउ कामिणि, घुम्मउ मद्दलु पसरउ मंगलु ॥
संति विवभउ दुक्ख निसुंभउ, धम्मु आहि सहुनरनारिहि ।
सुह नंदउ पय जय परमप्पय, जय जय जिणवर जय भवभयहर ॥
विमलु सुकेवलणाणसमुज्जलु, मह उप्पज्जउ इच्छिउ दिज्जउ ।
मइ अमुणंतइ कव्वु कुणंतइ, ज हीणाहिउ काइंवि साहिउ ॥

घत्ता—त माइ महासइ दयि सरासइ निहयसयलसदेह दुह ।
महु खमहु भडारी तिहुयणसारी पुप्फयत जिणवयणरुह ॥ २३ ॥

इयजसहरमहारायचरिए ... चउत्थो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ छ ॥ मंगलमस्तु ।
संवत् १३९० वर्षे आषाढ सुदि १३ शनौ अद्येह श्रीमहाराजाधिराज श्रीसुरत्राण महमदराज्ये दुर्गमहस पडिगनायाग वगडी नामनि प्राग्वाग्वंशीय सा० माधहसतान सा० मण्डी पुत्र रामा भ्रातृ देल्हाकेन ग्राम्या जसोधरपुस्तिका लेखिता । सा चिर नंदतु ॥ छ ॥ शुभमस्तु ॥

परिशिष्ट नं० ६

(आदिपुराण की प्रति लिखानेवाले की प्रशस्ति ।)

पणविवि रिसहसरु विणिहयपणसरु लायलोय पयासणु ।
वग्गुसिरमणुवरु जम्ममरणहरु कम्ममहारि विणासणु ॥
भियनयणाणुसरवरामिवसु सयच्छदसु पच्छर गयसु ।
विक्कमरायहो सुरसयपक्क णयमी बुहवार सचियसरिकम ॥
गव्वगिरिणयारे थिउ दुग्गदु हुउ पयपाडियसामन्तविंदु ।

---

१ यह पद्य तीसरे परिच्छेद के प्रारंभ में है । २ यह पद्य चौथे परिच्छेद के प्रारंभ का है, परन्तु बम्बई और पूना की दोनों प्रतियों में नहीं है। छपी हुई ग्रन्थावली प्रति में है । ३ यह पद्य बम्बई की प्रति में नहीं है।
४ मन—नयन—बाण—हताशन मिलेनु अर्थात् वि संवत् १५२१ । ५ भाद्रपद—गोनाचल । ६ डूंगर सिंहराजा ।

प्रो ल्युमन अने आवश्यक सूत्र

जर्मनीना प्रसिद्ध प्रोफेसर ल्युमन जैन आगमोना घणा ऊंडा अभ्यासी छे लगभग अर्धा सैका जटला लांबा समयथी तेओ जैन साहित्यनु अवगाहन करता आव्या छे अने अनेक जैन सूत्रो-ग्रन्थोना मूल, निर्युक्ति, भाष्य, टीका, टिप्पणी आदिने अर्वाचीन शास्त्रीय पद्धतिए संशोधित-अनुवादित करी तेमणे प्रकाशमा आण्या छे ए बधामा आवश्यकसूत्र अने तेने लगता साहित्य उपर जे तेमणे अथाग परिश्रम उठाव्यो छे अने ते विषयमा जे निबन्धो मार्ई लख्या छे ते तो खरेखर तेमनी जैन साहित्य विषयक सूक्ष्म-प्रवीणतानी आश्चर्य-कारक साक्षी आपे छे

जर्मनीना लीपझीक शहेरमाथी प्रकट थती ओरिएन्टल सोसायटीनी ग्रन्थमाला (Abhandlungen fur die Kunde des Morgenlandes) मा आवश्यक-कथा (Die Avashyaka Erzahlungen) नामे एक ग्रन्थ छपाववानी तेमणे शुरुआत करी हती, जेमा आवश्यक सूत्रनी चूर्णि अने टीकामा आवती बधी कथाओ मूळ रूप आपी, जुदी जुदा ग्रन्थोमा मळी आवता तेमना पाठान्तरो तथा बीजा बीजा ग्रन्थोमा मळी आवता रूपान्तरोनी घणी विस्तृत रूपरेखा आलेखवानी तेमनी इच्छा हता परन्तु ते माटे जोईतां बधां साधनो-भाष्य, चूर्णि, टीका आदिनी जुदी जुदी प्रतो विगेरे-न मळी शकवाथी, पचासेक पाना छापी तेमने ए कार्य बन्ध करवु पड्यु हतु ते दरम्यान सने १८९४ मा जिनेवा (Geneve) मा भरायेली इन्टर नेशनल ओरिएन्टल कोंग्रेसमा वाचवा माटे आवश्यकसूत्र साहित्य उपर जर्मन भाषामा एक विस्तृत निबंध तेमणे तैयार कर्यो हतो जेमा आवश्यक सूत्रने लगतु जेटलु साहित्य मळी आवे छे तेनु अतिसूक्ष्मरीते विवेचन कर्युं हतु ए निबन्ध (Uebersicht uber die Avashyaka-Litteratur) ना नामे तेमणे स्वतन्त्ररीते प्रकट कर्यो छे, जेना डेमी साइझना आखा कागळ जेवडा ५० उपर पाना छे एमा प्रथम श्वेताम्बर अने दिगंबर बन्ने जैन सम्प्रदायोमा आवश्यकने शु स्थान छे ते बताव्यु छे, अने पछी आवश्यक सूत्रनी भद्रबाहुकृत नियुक्तिमा आवता बधा विषयोनो बहु खूबी भरेलो सार आप्यो छे ए सारमा साथे साथ निर्युक्तिमा आवता विषयवार बीजा बीजा सूत्रो अने भाष्यो विगेरमा आवता तेना विषयो साथे, कोष्टको करी करी गाथाओवार सरखाव्या छे आवश्यकचूर्णि अने हरिभद्रकृत टीकामा परस्पर जे जे विशेष छे ते सघळा मूल पाठो साथे समजाव्या छे पछी जिनभद्र क्षमाश्रमणकृत विशेषावश्यक भाष्यनु लक्षणथी विवेचन कर्यु छे एमा पण पहेला, विशेषावश्यक ए शु छे, तेनी टीका विगेरे कोणे करेली छे ए बताव्यु छे, अने त्यार बाद नियुक्तिनी गाथाओना भाष्यना विवरण साथे विषयवार समजावी छे अने ए उपरांत पछी आखा भाष्यनो सार आप्यो छे परन्तु कदाच पण ए प्रशंसनीय गीतार्थने संतोष न थयो तेथी ए निबन्धनी एक जुदी पूर्ति करी छे, जेमा विशेषावश्यक भाष्यनी कोट्याचार्यकृत प्राचीन अने दुर्लभ्य टीकामां जे जे विशेष विचार जण्या छे ते बधा सूत्ररूप गाथावार छपावी दीधा छे अने छेवटे ए टीकानी सौथी जूनी ताडपत्रनी प्रति जे हालमा पूनाना भांडारकर

ओरिएन्टल रीसर्च इन्स्टीट्युटमां सुरक्षित छे. तेना अतिजीर्ण शीर्ण थएलां केटलाक पानाना फोटोग्राफस् आप्या छे [1]

प्रो० ल्युमनना अथाग परिश्रम भरेला ए जर्मन निबन्धनो अविकल गुजराती अनुवाद करावावानो अमारो विचार चाली रह्यो छे, पण कमनसीबे हजी अमने ए निबन्धनी पूरी नकल मळी नथी. पूनाना भांडारकर ओ० री० इन्स्टीट्युटमांना सरकारी ग्रन्थसंग्रहना पुस्तकसंग्रहमांथी फक्त एना केटलाक प्रुफसीटस् ज अमने जोवा मळ्या छे, जे प्रो० ल्युमने प्रो० भांडारकरने, ए निबन्ध छपातो हतो ते वखते, पूनानी प्रतो साथे सरखाववा माटे मोकल्या होय एम जणाय छे. ए संबन्धमां हुं प्रो० ल्युमनसाथे ज अमारो पत्रव्यवहार चालु छे तेथी सत्वर पुस्तकनी नकल मेळवी भाषांतरनी व्यवस्था करवामां आवशे. ते दरम्यान, जैन साहित्य संशोधकना वाचकोने ए अमूल्य निबन्धनो थोडोक परिचय थाय तेटला माटे मजकुर प्रोफेसरे ए निबन्धमां आवश्यक निर्युक्ति अने विशेषावश्यक भाष्यमां आवता गणधरवाद नामे विषयना उपर जे एक प्रकरण लख्युं छे तेनो अनुवाद आपीए छीए. ए अनुवाद कार्यमां, मि. आर. डी. वाडेकर, बी. ए. नामना सज्जने जर्मन भाषा समजाववा माटे जे सहायता अर्पी छे तेनी आभार साथे अमारे अहीं खास नोंध लेवी जोईए.

भारत जैन विद्यालय; पूना } —मुनि जिन विजय
वैशाख, संवत् १९७९ } —केशवलाल, प्रे. मोदी

विशेषावश्यकभाष्य अने तेनी टीकामां मळी आवतां वैदिक अने दार्शनिक अवतरणो.

आवश्यक निर्युक्तिना छट्ठा भागनी १ थी ६४ मी सुधीनी गाथाओमां गणधरवाद नामे विषय आवेलो छे. एमां केवी रीते महावीरे ११ ब्राह्मणोना तत्त्वज्ञान विषयक संशयो दूर करी, शिष्यो साथे तेमने पोताना शिष्यो बनाव्या एनुं टूंकुं अने एक ज प्रकारनुं वर्णन आपेलुं छे. ए अग्यारे ब्राह्मणो महावीरना मुख्य शिष्य होई गणधरो कहेवाय छे. शरुआतना २ थी ५ सुधी गाथामां सङ्क्षेपमां गणधरोनो टूंक परिचय अने संशयात्मक विषयनी नोंध आपी छे अने पछी ८ थी ६४ सुधी गाथामां तेनो ज विस्तार आपेलो छे गाथावार हकीकत आ प्रमाणे:—

२. उन्नत अने विशालकुळमां उत्पन्न थएला अग्यारे ब्राह्मण पावानामक स्थानमां सोमिल ब्राह्मणे आरंभेला यज्ञपाटकमां आवेला हता.

३—४. तेमनां नाम—

१ इन्दभूइ
२ अग्गिभूइ
३ वाउभूइ
४ वियत्त
५ सुहम्म
६ मण्डिय
७ मोरियपुत्त
८ अकंपिय
९ अयलभाय
१० मेयज्ज
११ पहास

५. आ अग्यारेमांथी फक्त एक सुधर्म (५मा गणधर) नीज शिष्य परंपरा आगळ चाली. बाकीना कोईनो शिष्य समुदाय रह्यो नहीं.

---

[1] ए आखा पुस्तकना अमे पण फोटोग्राफस् पडाव्या छे. खरेखर ए प्रति एक दर्शनीय प्रति छे अने एना ए फोटोग्राफसूनी नकल दरेक पुस्तक भंडारमां मुकवामां आवे एवी अमारी खास भलामण छे.

६ छट्ठा गाथामा प्रथम ए अग्यारना गणधरो जे जे बाबतना संशय हतो तेनी नोंध छे अने ते आ प्रमाण छे —

जीव[1] कम्म[2] तज्जीव[3] भूय[4] तारिसय[5] बंध-मोक्ख[6] य ।
देवा[7] नरइया[8] वा पुण्ण[9] परलोग[10] निव्वाण[11] ॥ ६ (५९६)

७ पहेला पांच गणधरोने ५००-५०० शिष्यो हता, ६-७ ने ३५०-३५० अने छेल्ला ४ ने ३००-३०० शिष्यो हता

महावीर दरेकने नाम गोत्र पूर्वक बोलावे छे अने पछी तेना मनना संशयनु नाम लई, 'तु वेदना पदोना अर्थ जाणतो नथी, तेनो अर्थ आ प्रमाणे छे' एम एक ज प्रकारनो जवाब आपे छे गाथावार गणधरोना उल्लेख आ प्रमाणे—

१७	पहेलो	गणधर,	जीव विषयक	संशय
२५	बीजो	,,	कर्म विषयक	,,
३१	त्रीजो	,,	तज्जीव तच्छरीर वि०	,
३५	चोथो	,,	पञ्च भूत वि०	,,
३९	पांचमा	,,	सदृशोत्पत्ति वि०	,,
४३	छट्ठा	,,	बंध मोक्ष वि०	,
४७	सातमा	,,	देवसृष्टि वि०	,,
५१	आठमा	,,	नरकसृष्टि वि०	,,
५५	नवमा	,,	पुण्य विषयक	,,
५९	दशमा	,,	परलोक वि०	,,
६३	अग्यारमा	,,	निर्वाण वि०	,,

आ अग्यार गणधरोना मनना संशयनो महावीरे ज खुलासो कर्यो हतो तेनो उल्लेख मूळ निर्युक्तिमां करवामां आव्यो नथी निह्नवोना हकीकतना पेठ ज ए हकीकत पण निर्णय वगर ज आपवामां आवेल छे चूर्णिमां फक्त पहेला गणधरना संशयनो खुलासो करवानो थोडोक प्रयत्न करवामां आव्यो छे पण जिनभद्र आ बाबतनो घणो उत्तम विस्तार करे छे ए विषय माटे तेमणे ४०० उपरांत गाथाओ लखी छे अने तेना विवरणमां घणो विशेष वातो आपी छे हरिभद्रसूरि आ विवरणमांथी घणाक अवतरणो पोतानी टीकामां ले छे अने ए ज अवतरणो विशेषावश्यक भाष्यमांना गणधरवादना टीकाओना आधारभूत बने छे घणा हरिभद्रना लखाण उपरथी विविधगणधरवाद नामनो पण एक ग्रन्थ लखायो छे, जेमां केटलाक वधारे विस्तार करवामां आवेल छे वेदना घणा खरा अवतरणो उपरांत छट्ठी अने ते पछी आवती गाथामांनी हकीकतनु पण निरूपण करेलु छे आवां वाक्य संख्या लगभग २५० जेटला छे अने पूनाना पुस्तकभंडारमां नं० १६, २९१ वाळा प्रतना २० था २३ मा सुधाना पानाओमां ए लखेला छे दशवैकालिकनी लघुवृत्तिमां पण मक्षपर्यी आ विषय चर्चेलो छे

आ विषयने लगता जे केटलाक वैदिक अने दार्शनिक अवतरणो जिनभद्र आपे छे अने तेमनो जे अर्थ जैन मतानुसार करे छे ते जाणवा जेवा छे आमांना घणा खरा अवतरणो तो तेमणे फक्त

पोतानी टीकामां ज आपेलां छे; पण ते स्वोपज्ञ टीका उपलब्ध नथी, तेथी हरिभद्र, शीलांक अने हेमचन्द्र–के जेमणे ए स्वोपज्ञ टीकानो पोतानी टीकाओमां उपयोग कर्यो छे–तेमणे ए अवतरणो लीधेलां होवाथी आपणे ए टीकाओमांथी ज ते लेवानां छे. भाष्यना मूळमां ज जे अवतरणो आपेलां छे ते खास काळा अक्षरोमां आपवामां आव्यां छे. वार्कीनां क्या टीकाकारे कयां अवतरणो लीधां छे ते जुदी जुदी रीते बतावबामां आव्या छे. ए अवतरणो कया ग्रन्थोमांथी लेवामां आवेलां छे तेनो कांई उल्लेख टीकाकारो करता नथी. तेथी जेकबना उपनिषद्वाक्यकोश अने बीजां तेवां वेदसंबंधी पुस्तको उपरथी घणांकनां स्थळो खोळी काढवानो प्रयत्न कर्यो छे. ए तो चोक्कस छे के जे अवतरणो जिनभद्रे लीधां छे ते घणां प्रमाणभूत छे अने तेमना वखतना ब्राह्मणो वादविवादमां ए वाक्योनी खूब चर्चा करता होवा जोईए. ब्राह्मणोनां दर्शनशास्त्रोमां परस्पर विरुद्ध विचार दर्शावनारां ए वाक्यो उपरथी दरेक गणधरनो संशय उभो करवामां आव्यो छे. प्रसिद्ध उपनिषदोना मूळ पाठो साथे सरखावतां ए वाक्योमां जे केटलीक भूलो नजरे पडे छे तेनुं कारण बिनकाळजीपूर्वक एओनो उपयोग करवामां आवेलो होवु जोईए.

×२, ५ (१५५३).

†१[3]

ॐ(यदाहुर्नास्तिकाः)[4]

एतावानेव पुरुषोऽयं यावानिन्द्रियगोचरः ।

भद्रे, वृकपदं पश्य यद् वदन्ति बहुश्रुताः[6] ॥ *

I पिब खाद च साधु शोभने यदतीतं वरगात्रि तन्न ते ।

न हि भीरु गतं निवर्तते, समुदयमात्रमिदं कलेवरम् ॥ *

(भद्रोऽप्याह)

× आ अंक ते प्रो० ल्युमने पोताना मूळ निबन्धमां विशेषावश्यकभाष्यना जे ५ विभागो पाडया छे तेना सूचक छे. एमां पहेलो अंक प्रकरणने अने बीजो गाथानंबरने सूचवे छे. आ पछी जे कौंसमां आंकडा आपेल छे ते काशीनी यशोविजय जैनग्रन्थमाळामां प्रकट थएल सटीक विशेषावश्यकभाष्यमांनी चालु गाथासंख्या सूचवे छे. मुद्रित प्रतमां १५४८ मी गाथा ज्यां पूरी थाय छे त्यां उक्त प्रो० ना वर्गीकरण प्रमाणे प्रथम विभाग पूरो थाय छे अने १५४९ मी गाथाथी बीजो विभाग शरू थाय छे ते २०२४ मी गाथाए पूरो थाय छे. ए विभागमां गणधरवाद नामनो विषय आवे छे अने तेनी कुल ४७६ गाथा छे

ॐ–( ) आवा गोळ कौंसमां आपेला पाठो आवश्यकसूत्रनी हारिभद्री टीकामां आपवामां आवेला नथी, तेम ज [ ] आवा चोखुणा कौंसमां आपेला पाठो विशेषावश्यक भाष्यनी शीलांकाचार्यकृत टीकामां आपेला नथी, एम समजवु

† आ अंको आवश्यकनी हारिभद्री टीकामां दरेक गणधरना माटे जे शंका-समाधानात्मक अवतरणो आपवामां आवेला छे तेनो क्रमनिर्देश सूचवे छे. एमानो मोटो अक्षर ए गणधरनी संख्या बतावे छे अने तेनी आगळ जे नानो अक्षर छे ते अवतरणनी संख्या जणावे छे

I आ चिन्हवाळां अवतरणो फक्त आवश्यक चूर्णिमां ज मळी आवे छे

* आ बन्ने श्लोको हरिभद्रकृत षड्दर्शनसमुच्चयना छेवटना लोकायत प्रकरणमां, श्लोक ८१–८२, छे (मुद्रित पृ० ३०१, ३०४, कलकत्ता) त्यां बीजा श्लोकनो प्रथम पाद ' पिब खाद च चारुलोचने ' आ प्रमाणे छे

२. शीलांकाचार्यनी टीकामां 'यथाहु' पाठ छे ३ शी. टी 'एके.' ४. चूर्णिमां 'एके आहुः' एटलो ज पाठ छे

५ विशेषावश्यकनी हेमचन्द्रकृत टीकानी केटलीक प्रतोमां आना ठेकाणे ' लोकोऽयं ' पाठ छे ६ चू० शी० ह. हे० नी केटलीक प्रतोमां ' वदन्त्यबहुश्रुता ' पण पाठ छे

१७ [नीलविज्ञानं मे उत्पन्नमासीत्] सरखावो— सर्वदर्शनसंग्रह पृ. १९,७-१०

(एक एव हि भूतात्मा भूते भूते प्रतिष्ठितः ।
२,२३ (१५८०). एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत् ॥[१०]
—ब्रह्मबिन्दु-उपनिषत् १२. यशस्तिलक चम्पू, आश्वास ६, कल्प १. (पृ.२७३ निर्णयसागर)

यथाविशुद्धमाकाशं तिमिरोपप्लुतो जन ।
सङ्कीर्णमिव मात्राभिर्भिन्नाभिरभिमन्यते ॥
तथेदममलं ब्रह्म निर्विकल्पमविद्यया ।
कलुषत्वमिवापन्नं भेदरूपं प्रकाशते ॥
"ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥"
—भगवद्गीता १५-१; (महाभारत ६-१३८३.)

२१९१ पुरुष एवेदं ग्नि ‡ सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यं ।[११]
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥
—वाजसनेयी संहिता ३१, २ ; श्वेताश्वतरोपनिषद् ३-१५

अकर्ता निर्गुणो भोक्ता आत्मा सांख्यनिदर्शने ।
स्याद्वादमञ्जरी, श्लोक १५ मां मल्लिषेण आखो श्लोक आ प्रमाणे आपे छे.—
अमूर्तश्चेतनो भोगी नित्यः सर्वगतोऽक्रिय ।
अकर्ता निर्गुणः सूक्ष्म आत्मा कापिलदर्शने ॥ (बनारस, यशोविजय जैन ग्रन्थमाला, पृ ११३ षड्दर्शनसमुच्चयनी टीकामां गुणरत्न पण आ श्लोक उध्दृत करे छे (जुओ कलकत्ता आवृत्ति, पृ १०५) वळी सरखावो—षड्दर्शनसमुच्चय, मूळ श्लोक ४१.

१० ब्रह्मबिन्दूपनिषद् (आनन्दाश्रम मुद्रित, पृ ३३८) मा बीजो पाठ 'भूते भूते व्यवस्थित' आ प्रमाणे छे, अने यशस्तिलक चम्पू (निर्णयसागर—मुद्रित, पृ २७३—उत्तर भाग) मा बीजा अने त्रीजा पादनो पाठ—'देहे देहे व्यवस्थित । एकधानेकधा चापि—' आ प्रमाणे छे. वळी, शीलाकाचार्यनी आचारांगसूत्र टीका (आगमोदय समिति मुद्रित, पृ १८) अने सूत्रकृतांग सूत्र टीका (आ स मु पृ १९) मां पण आ श्लोक उध्दृत छे

११. उपनिषद्मा 'भव्य' पाठ उपलब्ध थाय छे

‡ प्रो ल्यूमन आ शब्द उपर एक नीचे प्रमाणेनी खास नोंध करे छे "केटलाक प्रसिद्ध उपनिषदोमाथी जैन विद्वानोए लीधेलां आ अवतरणो सैकाओ सुधी बहु ध्यान खेंचाया वगर ज लखातां आवता हता अने तेथी जैनोए करेली तेमनी नोंधमा स्वभाविकरीते ज केटलीक भूलो थएली छे. उदाहरण तरीके—२१ मानु ग्नि तथा ७२ नु अवतरण."—आमाना प्रथम ग्नि शब्द ऊपरनी नोटमा ते लखे छे के—"वर्तमानमां वैदिक वाङ्मयना हस्तलिखित ग्रन्थोमा अनुस्वार माटे जे चिन्ह वपराय छे, ते ८ मा सैका अगर तेनी पहेला ग्नि अक्षर जेवुं देखातु हशे अने तेथी वैदिक चिन्हथी अजाण एवा जैन ग्रन्थकारोए तेने एक खास शब्द मानी लीधेलो लागे छे. अने तेथी तेमणे 'पुरुष एवेद सर्व' ए असल वाक्यमा ग्नि शब्द वधारी 'इद' ना 'द' उपर बीजो अनुस्वार चटावी दीधो होय एम जणाय छे"—प्रो ल्युमननी आ नोंध अमने जरा विचारणीय लागे छे लिपिभेदना ज्ञानना अभावे एवी भूलो थवी जो के घणी संभवित मात्र ज नथी पण सुज्ञात छे दाखला तरीके जैन लिपिमां 'ग' अक्षरने

एप वः प्रथमो यज्ञो योऽग्निष्टोमः, योऽनेनानिष्ट्वाऽन्येन यजते, स गर्तमभ्यपतत् ।

—ताण्ड्यमहाब्राह्मण १६, १, २.

द्वादश मासा. संवत्सरो—[१]

—तै० स० ५, २, ५. ५.

अग्निरुष्णो—

अग्निर्हिमस्य भेपज—[१७]

— वा० स० स० २३, १०=तै० सं० ७,४,१८,२.

२,१०१ (१६४९). ३२

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येप
ब्रह्मचर्येण नित्यस् ।
ज्योतिर्मयो हि शुद्धो
यं पश्यन्ति धीरा यतयः संयतात्मानः ॥ [१८]

—मुण्ड० उ० ३, १, ५ हेमचन्द्र वळी २, १३७ मी गाथानी टीकामां पण आ अवतरण टांके छे.

२, १२६ (१६७४).

(एक विज्ञानसन्ततय. सत्त्वाः ।
[यत् सत् तत् सर्वं क्षणिकम्])[१९]
([क्षणिकाः सर्वसंस्कारा.])[२०]—आ वाक्य अभयदेवसूरिए भगवती सूत्रनी टीका ३०, १ मा तथा मलयगिरिए नन्दिसूत्रनी टीकामां पण टांकेलु छे. वळी जुओ षड्दर्शनसमुच्चयनी गुणरत्नकृत टीका १.

२, १४१ (१६८९). ४१

स्वप्नोपमं वै सकलमित्येष ब्रह्मविधिरञ्जसा विज्ञेयः ।

४२

द्यावा पृथिवी ।

४३

पृथिवी देवता [आपो देवता]—शीलाकाचार्य आ अवतरण आ पछीनी गाथामां आपे छे.

२,२२४ (१७७२) ५१

पुरुषो वै पुरुषत्वमश्नुते, पशवः पशुत्वम् । —हेमचद्र आ अवतरण

यो दीक्षामतिरेचयति । सप्ताह प्रचरन्ति । सप्त वैशीर्षण्या. प्राणा. । प्राणा दीक्षा । प्राणैरेव प्राणा दीक्षामवरुन्धे। पूर्णाहुतिमुत्तमां जुहोति । सर्वं वै पूर्णाहुतिः । सर्वमेवाप्नोति । अथो इय वै पूर्णाहुति' । अस्यामेव प्रतितिष्ठति ।

१६. आखुं वाक्य आ प्रमाणे छे'—' द्वादश मासा. सवत्सर' सवत्सरेणेवास्या अन्न पचति यदग्निचित् । '

१७. पूरु अवतरण आ प्रमाणे–' सूर्य एकाकी चरति चन्द्रमा जायते पुन. । अग्निर्हिमस्य भेपज भूमिरावपन महत्॥

१७ उपनिषद्मा उपलब्ध पाठ आ प्रमाणे छे—

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येप आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम् ।
अन्त. शरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो य पश्यन्ति यतय क्षीणदोषाः ॥

१९ द्रष्टव्य—चन्द्रप्रभसूरिकृत प्रमेयरत्नकोप ८, पृ. ३० । —महापण्डित रत्नकीर्तिकृत क्षणभङ्गसिद्धिप्रकरण (बिब्लिओथिका इण्डिका) पृ० ५४, मां आ वाक्य 'यत् सत् तत् क्षणिकम् ' आ प्रमाणे छे वळी, जुओ रत्नप्रभकृत रत्नाकरावतारिका परिच्छेद ५ (यशोविजय जैनग्रन्थमाला मुद्रित, पृ० ७६)

२० ए आखो श्लोक आ प्रमाणे छे–

क्षणिकाः सर्वे संस्कारा अस्थितानां कुतः क्रिया । भूतिर्येषां क्रिया सैव कारकं सैव चोच्यते ॥

८[२] न ह वै प्रेत्य नरक नारकाः सन्ति ॥]

२, ३६० (१९०८). (केनाञ्जितानि नयनानि मृगाङ्गनानां
को वा करोति विविधाङ्गरुहान् मयूरान् ।
कश्चोत्पलेषु दलसन्निचयं करोति
को वा दधाति विनयं कुलजेषु पुंस्सु ॥) [२३]
सरखावो, अश्वघोषकृत बुद्ध चरित, कॉवेलसपादित पृ. ७७.

२[३] पुण्यः पुण्येन [(कर्मणा) पापः पापेन कर्मणा]
—बृह ० आ०उप०४, ४, ५.हेमचंद्रसूरि आ अवतरण २,९५—चालु गाथा १६४३—नी टीकामां ले छे.

२, ४०३ (१९५१). १[२]१०[२] स वै अयमात्मा ज्ञानमयः ।—बृ० आ० उ० ४, ४, ५.

२, ४२६ (१९७४) ११[१] जरामर्यं वा एतत्सर्वं यदग्निहोत्रम् ।
तै० आ० १०,६४.महा. ना. उप० २५ वळी हेमचन्द्र गाथा २,४७५–चालू गा० २०२३—नी टीकामा पण आ अवतरण ले छे.

११[२] द्वे ब्रह्मणी [वेदितव्ये] परमपरं च [तत्र परं सत्यम्, ज्ञानमनन्तरं ब्रह्म] –सरखावो, मैत्र्युपनिषद् ६, २२;=ब्रह्मबिन्दूपनिषद् १७.
(सैषा गुहा दुरवगाहा)

२, ४२७ (१९७५). (यथाहुः [सौगतविशेषाः केचित् तद् यथा]
दीपो यथा निर्वृतिमभ्युपेतो नैवावनिं गच्छति नान्तरिक्षम् ।

---

२३ हेमचन्द्रसूरि,गाथा१६४३नी टीकामा, आ पद्यगत भावने जणावनारा नीचे प्रमाणेना त्रण श्लोको आपे छे—

सर्वहेतुनिराशंस भावानां जन्म वर्ण्यते । स्वभावादिभिस्ते हि नाहुः स्वमपि कारणम् ॥
राजीवकण्टकादीनां वैचित्र्य कः करोति हि । मयूरचन्द्रिकादिर्वा विचित्रः केन निर्मितः ॥
कादाचित्क यदत्रास्ति निःशेष तदहेतुकम् । यथा कण्टकतैक्ष्ण्यादि तथा चैते सुखादयः ॥

—सूत्रकृताङ्गसूत्रनी टीकामा शीलाकाचार्य (मुद्रित पृ० २१ आ. स) आवी ज मतलबवाळो एक अन्य श्लोक आपे छे—

कण्टकस्य च तीक्ष्णत्वं, मयूरस्य विचित्रता । वर्णाश्च ताम्रचूडानां, स्वभावेन भवन्ति हि ॥

२४. आचाराङ्गसूत्रनी टीकामा शीलाकाचार्य (आ. स. मु. पृ. १७) आ उपरना पद्यनी साथे अश्वघोषवाळु पद्य तथा एक त्रीजु पण अन्य पद्य आपे छे यथा—

'क कण्टकाना प्रकरोति तैक्ष्ण्य विचित्रभावं मृगपक्षिणां च ।
स्वभावतः सर्वमिद प्रवृत्त, न कामचारोऽस्ति कुत. प्रयत्नः ॥ ' —(बुद्धचरित. ९–५२)

स्वभावतः प्रवृत्तानां निवृत्ताना स्वभावतः । नाहं कर्तेति भूतानां, य. पश्यति स पश्यति ॥

—शान्त्याचार्ये उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन२५ मानी टीकामां आ अने बाजा केटलाक अवतरणो (उदाहरणार्थे भगवद्गीता १८,४२) उध्धृत करेला छे,तेम ज आवी ज जातना बीजां पण केटलांक अवतरणो (उदाहरणार्थ—महानारायणोपनिषद् १०, ५,=कैवल्य उ० २, अने वाजसनेयी संहिता ३१, १८=श्वेताश्वतरोपनिषद् ३, ८) तेमणे अध्ययन १२, गाथा ११–१५ नी टीकामा आपेलां छे

दिश न काञ्चिद् विदिशं न काञ्चित् स्नेहक्षयात् केवलमेति शान्तिम् ।
जीवस्तथा निर्वृतिमभ्युपेतो नैवावनिं गच्छति नान्तरिक्षम् ।
दिशं न काञ्चिद् विदिशं न काञ्चित् क्लेशक्षयात् केवलमेति शान्तिम् ॥
— यशस्तिलक चम्पू ६, १ मां पण आ श्लोको आपेला छे पण त्य
चरणव्यतिक्रम थएलो नजरे पडे छे

एक अवतरण वळी आवेलुं छे जे ऊपरना १' वाळा अवतरण साथे सम्बन्ध धरावतुं होय तेम जणाय छे, अने हेमचन्द्रना लखवा उपरथी ते कोइ उपनिषद्नी टीकामांनु (उदा० बृहदारण्यक उपनिषद्) होय तेम मालुम पडे छे जिनभद्र गुरुना ते आ प्रमाणे नोंधे छे

४० गोयम, घेय-पयाण इमाणमत्थं च त न याणासि ।
ज विन्नाणघणो च्चिय भूएहिंतो समुट्ठ य ॥
४१ मन्नासि मज्जंगेसु व मयभावो भूय समुदय-ब्भूओ ।
विन्नाणमेत्त आया भूएऽणु विणस्सइ स भूओ ॥
४२ अत्थि न य पेच्चसण्णा ज पुव्वभवेऽभिहाण ' अमुगो' त्ति ।
ज भणियं न भवाओ भवन्तर जाइ जीवो त्ति ॥

छेवटनी गाथामाना वाक्य उपर हेमचन्द्र आ प्रमाणे टीका करे छे—' किमिह वाक्ये तात्पर्य-वृत्त्या प्रोक्त भवति—इत्याह—सर्वात्मना समुत्पन्न विनष्टत्वात् न भवान्तर कोऽपि यातायुक्त भवति ।' ज्यारे शीलाक पोतानी हमेशनी विरल—व्याख्यापद्धति प्रमाणे एटलु ज लखे छे के—' एव न भवाद् भवा-न्तरमस्तात्युक्त भवति '

विशेषावश्यक २, २२६ मा वनस्पति अने प्राणी विषे सबधी अन्धविश्वास सूचवनारा एक —बे अवतरणो आवे छे, ते पण हु आनी पूरवणी रूपे अहीं नोंधी लेवा इच्छु छु ए अवतरणोनो विषय, सदृशमांथी सदृशनी ज उत्पत्ति थई शके, एवो कोई नियम नथी, ए छे एना उपर टीका-कारे खूब विवेचना करी छे ए अवतरण वाळी गाथाओ आ प्रमाणे छ —

२२६ जाइ सरो सगाओ भूतणओ सासवाणुलित्ताओ ।
संजायइ गोलोमाविलोम-संजोगओ दुव्वा ॥
२२७ इति रुक्खाउव्वेदे, जोणिविहाणे य विसरिसेहिंतो ।
दीसइ जम्हा जम्म, सुघम्म, त नायमेग तो ॥

सरस्वती, पचतन्त्र श्लोक १, १०७ ए ठेकाणे कविसप्रदायनी पद्धति याद करवा ऊपरना अन्धविश्वासवाळा अवतरणमानी बीजी हकीकतनो उल्लेख करेलो छ —जेमके 'दुवा पि गोलोमत' । आ अवतरणमानी पहेली हकीकत के ' शृगमांथी शर उत्पन्न थाय छे ' तेनो उल्लेख वार्तोना रूपमा एक प्रत्येकबुद्धनी कथामा आवे छे त्या जणाव्या प्रमाणे एक शरनी खोपरी, आख अने मोढामांथी घासना त्रण फणगा नीकळ्या हता आ गाथामा जे योनिविधान नाम आवेलो छे तेनो अर्थ टीका-कारे लख्या प्रमाणे ' योनिप्राभृत ' छे अने ए नाम एक ग्रन्थनु छे जे पूनाना केटॉलागमा न० १६, २६६, तथा २१, १२४२ मा नोंधेलो छे

स्वाध्याय–समालोचन

आगरे के श्रीआत्मानन्द पुस्तक प्रचारक मंडलने एक महत्त्वके ग्रन्थका प्रकाशन किया है। इसका नाम है पातञ्जल योगदर्शन। यो तो पातञ्जल योगदर्शन के अनेक संस्करण, अनेक स्थानोंसे, अनेक रीतिसे और अनेक भाषाओमे प्रकट हो चुके हैं लेकिन हम जो इस संस्करणको महत्त्वका कहते हैं उसका खास कारण यह है कि इस संस्करणमे जो व्याख्या प्रकट हुई है वह संस्कृतसाहित्यके ज्ञाताओंके लिये एक विशेष वस्तु है। पातञ्जल योगदर्शन एक वैदिक संप्रदाय है। ब्राह्मण संप्रदायके जो छ दर्शन गिने जाते हैं उनमे इसका विशिष्ट स्थान है। सांख्य और योग ये दोनो दर्शन युगलरूपसे व्यवहृत होते है और सब दर्शनोंसे प्राचीन है। असलमे सांख्य दर्शनका ही एक विशेषरूप योग दर्शन है। सांख्य दर्शनमे ईश्वरस्वरूप किसी व्यक्ति या तत्त्वका अस्तित्व नहीं माना जाता और योगदर्शनमें उसको आश्रय दिया गया है–इतना ही इनमे मुख्य भेद है। जैन और बौद्ध दर्शनमे ऐसे अनेक तत्त्व और सिद्धान्त हैं जो साख्य और योग दर्शनके तत्त्व और सिद्धान्तोंके साथ समता रखते हैं। इस लिये बहुत प्राचीन कालसे जैन और बौद्ध विद्वानोको सांख्य और योग दर्शनके अध्ययन और मननका परिचय रहा है। इसी परिचयका उदाहरण स्वरूप यह प्रस्तुत ग्रन्थ है। इस ग्रन्थमे पातञ्जल योगदर्शनके सूत्रों पर जैन धर्मके एक अति प्रसिद्ध और महाविद्वान् पुरुषने व्याख्या लिखी है वह प्रकट की गई है। व्याख्याकार है न्यायाचार्य महोपाध्याय श्रीयशोविजय गणी। इस व्याख्यामें महोपाध्यायजीने पातञ्जल योगसूत्रोंका जैन प्रक्रियाके अनुसार अर्थ किया है। व्यासकृत मूळ भाष्यके विचारोंके साथ जहां जहां अपना मतभेद मालूम दिया वहां उपाध्यायजीने बडी गंभीर भाषामें अपने विचारका समर्थन और भाष्यकारके विचारोका निरसन किया है और यही इस व्याख्याकी खास विशिष्टता है।

इस ग्रन्थका संपादन विद्वद्वर्य पं सुखलालजीने किया है। जहां तक हम जानते हैं, जैन साहित्यमे अभी तक कोई तात्त्विक ग्रंथ ऐसी उत्तम रीतिसे संपादित हो कर प्रकट नही हुआ। ग्रन्थके महत्त्व और रहस्यको समझानेके लिये पंडितजीने परिचय, प्रस्तावना और सार इस प्रकारके तीन निबन्ध हिन्दी भाषामें लिखकर इसके साथ लगाये हैं जिनके पढनेसे, एक ग्रन्थके पूर्ण अभ्यासके लिये जितने अंतरंग और बाह्य प्रश्नोत्तरोकी आवश्यकता होती है, उन सबका ज्ञान पूरी तरहसे हो जाता है। परिचय नामक निबन्धमें, पंडितजीने योगसूत्र, योगवृत्ति, योगविंशिका आदिका परिचय कराया है और प्रस्तावनामे जैन और योगदर्शनकी तुलना तथा तद्विषयक साहित्यका विवेचन किया है। यह प्रस्तावना कैसी महत्त्वकी और कितने पांडित्यसे भरी हुई है इसका खयाल तो पाठकोंको इसके पढने ही से आ सकता है और इसी लिये हमने इस सारी प्रस्तावनाको इसी अंककी आदिमे उध्दृत की है।

इस पुस्तकमे योगदर्शनके सिवा एक योगविंशिका नामका ग्रन्थ भी सम्मिलित है जो मूल हरिभद्रसूरिका बनाया हुआ है और उस पर टीका महन्हीं यशोविजयजीने की है। जैन दर्शनमे 'योग' को क्या स्थान है और उसकी क्या प्रक्रिया है यह जानने के लिये यह योगविंशिका बहुत ही उपयोगी है।

पुस्तके अंतमे योगसूत्रवृत्ति और योग विंशिकावृत्ति का हिन्दी सार दिया है जिससे संस्कृत न जानने वाले भी इन ग्रन्थगत पदार्थोंको सरलतासे समझ सकते हैं। इस पुस्तकका ऐसा उपयुक्त संस्करण निकालनेके लिये संपादक महाशय पं सुखलालजी तथा मंडलके उत्साही संचालक श्रीयुत बाबू दयालचंदजी–दोनों सज्जन विद्वानोंके विशेष धन्यवादके पात्र हैं।

जैन साहित्य संशोधक ग्रंथमाळा

अध्यापक कॉवेल लिखित

प्राकृत व्याकरण–संक्षिप्त परिचय

संपादक

मुनि जिनविजयजी

एम् आर् ए एम्

(आचार्य–गुजरात पुरातत्त्व मंदिर–अमदाबाद)

(जैन साहित्य संशोधक–खण्ड २, अंक १–परिशिष्ट)

प्रकाशक

जैन साहित्य संशोधक कार्यालय

भारत जैन विद्यालय-पूना शहर

निवेदन

આ પ્રાકૃત વ્યાકરણ સંક્ષિપ્ત-પરિચય, કેંબ્રીજ યુનિવર્સિટીના એક વખતના સંસ્કૃતના અધ્યાપક અને એડીનબર્ગ યુનિવર્સિટીના ઑનરરી એલ્એલ્. ડી. શ્રી ઈ. બી. કૉવેલે લખેલા A SHORT INTRODUCTION TO THE ORDINARY PRAKARIT OF THE SANSKRIT DRAMAS નામના નિબંધનો અવિકલ ગુજરાતી અનુવાદ છે જેમને સંસ્કૃત ભાષાનો સાધારણ અભ્યાસ હોય અને જેઓ પ્રાકૃત ભાષાનો ટુંક પરિચય કરવા માંગતા હોય તેમને આ નિબંધ ઘણો મદત કર્તા થઈ પડે એવો જણાયાથી, આ રૂપમાં પ્રકટ કરવામાં આવે છે આ નિબંધ મૂળ સન્ ૧૮૫૪ માં મજકુર પ્રોફેસરે वररुचिकृत प्राकृत प्रकाश ની જ્યારે પ્રથમ આવૃત્તિ બ્હાર પાડી હતી તેની પ્રસ્તાવના રૂપે લખ્યો હતો. અને પછી ૧૮૭૫ માં કેટલાક સુધારા-વધારા સાથે, લંડનની TRUBNER and Co. એ એક પુસ્તિકાના રૂપમાં એને જૂદો છપાવ્યો હતો એ પુસ્તિકા આજે દુર્લભ્ય હોઈ બુકસેલરો તેની ૩-૪ રૂપિઆ જેટલી કિંમત લે છે. તેથી ગુજરાતી ભાષાભિજ્ઞ વિદ્યાર્થીઓને આ નિબંધ સુલભ થઈ પડે તેવા હેતુથી આ પત્રના પરિશિષ્ટ રૂપે પ્રકટ કરવામા આવે છે. આશા છે કે સંશોધકના વાંચનારાઓને તેમજ અન્ય તેવા અભ્યાસિઓને આ પ્રયાસ ઉપયોગી થઈ પડશે.

જ્યેષ્ઠ પૂર્ણિમા, ૧૯૭૯. —સંપાદક

अध्यापक कॉवेल लिखित

प्राकृत व्याकरण—संक्षिप्त परिचय

ઈ સ પૂર્વેના સૈકાઓમા ભારતવર્ષમા સસ્કૃત ભાષામાથી અપભ્રષ્ટ થઈને કેટલીક ભાષાઓ (બોલીઓ) ઉત્પન્ન થઈ જેને સાધારણ રીતે પ્રાકૃત કહેવામા આવે છે આ ભાષાઓની શોધ ખોળનો વિષય ભાષાશાસ્ત્રીને તેમજ ઇતિહાસ લખકને ઘણો રસ આપી શકે તેમ છે હાલની પ્રચલિત ભાષાઓ અને મહા સસ્કૃત વચ્ચે સબધ જોડી શૃખલાનુ કામ બનાવનાર આ પ્રાકૃત ભાષાઓનુ (અને ખાસકરીને પ્રાકૃત નામક ભાષાનુ) જ્ઞાન હાલમા વપરાતા કેટલાક રૂપો સમજવાને ઉપયોગી છે એટલુ જ નહિ પરતુ તેઓ ભાષાસઘની એક ઇંડો–યુરોપીઅન શાખાના ઇતિહાસમા પ્રકાશ પાડે છે તથા લૅટીનમાથી ઉત્પન્ન થએલી આધુનિક ઇંગ્લીઅન અને ફ્રેંચ ભાષાઓ સરખાવતા જે સ્વરમાધુર્યનુ આપણને ભાન થાય છે તે માધુર્યના નિયમોના અનુપમ દ્રષ્ટાતો પૂરા પાડે છે તદુપરાન્ત બીજા ઘણા રસોત્પાદક ઐતિહાસિક પ્રશ્નો સાથે પ્રાકૃત ભાષાનો નિકટનો સબધ છે સીલોનના બૌદ્ધોના તથા ભારતવર્ષના જૈનોના ધર્મપુસ્તકોની ભાષાઓ પ્રાકૃતના ભિન્ન ભિન્ન રૂપો છે, અને ખરખર બ્રાહ્મણોની સસ્કૃતનો વિરોધ દર્શાવીને જનસમાજના હૃદય ઉપર સચોટ અસર કરવા માટે બૌદ્ધ ગ્રથોમા પાલિ ભાષાનો ઉપયોગ કરવામા આવ્યો છે જ્યારે અલેક્ઝાન્ડરના આધિપત્ય તળે ગ્રીક લોકો ભારતવર્ષના સબધમા આવ્યા ત્યારે પ્રાકૃત ભાષા જનસમાજમા પ્રચલિત હશે જેમા ઈ સ પૂ લગભગ ૨૫૦ વર્ષના ઍંટીઑકસ અને બીજા ગ્રીક રાજાઓના નામો આવે છે એવા અશોક રાજાના શિલાલેખોની ભાષા પણ એક જાતની પ્રાકૃતજ છે, તે જ પ્રમાણે બેકટ્રીયાના ગ્રીક રાજાના દ્વૈભાષિક સિક્કાઓ ઉપર પણ પ્રાકૃત ભાષા લખેલી જોવામા આવે છે જુના હિંદુ નાટકોમા પણ આ ભાષાઓનો હિસ્સો ઓછો નથી, કારણ કે તેમા મુખ્ય નાયકો સસ્કૃતનો ઉપયોગ કરે છે પણ સ્ત્રીઓ અને સેવકો જુદી જુદી જાતની પ્રાકૃત ભાષા વાપરે છે, જેમાના પરસ્પર ફેરફારો બોલનારની કક્ષાપ્રમાણે સ્વરમાધુર્યના નિયમનુ અનુસરણ કરે છે

વૈય્યાકરણો પ્રાકૃત શબ્દને प्रकृते भव प्राकृत એમ જણાવી प्रकृति એટલે સસ્કૃત સાથે સબધ જોડે છે આ વિષયમા હેમચદ્રે નીચેપ્રમાણે જણાવ્યુ છે प्रकृति संस्कृतं तत्र भवं तत आगत वा प्राकृतम् । પણ મૂળ તેના અર્થ સાધારણ અગર અસસ્કારી એવો હશે, કારણ કે મહાભારતમા એક સ્થળે બ્રાહ્મણોનો ધિક્કાર કરવો નહિ એમ જણાવી લખ્યુ છે કે—

दुर्वेदा वा सुवेदा वा प्राकृता संस्कृतास्तथा ॥

લગભગ આધુનિક વૈય્યાકરણો 'પ્રાકૃત' નામ તળે ઘણી ભાષાઓનો સમાવેશ કરે છે પરતુ તેમાની ઘણી ખરી પાછળથી થયેલા ક્ષુલ્લક રૂપાતરો માત્ર છે જેમ જુનો વય્યાકરણ તેમ તેના ગ્રથમા થોડી પ્રાકૃત ભાષાઓ તેજ પ્રમાણે ઘણા પુરાણા વૈય્યાકરણ વરરૂચિએ ફક્ત ચાર જ પ્રાકૃત ભાષાઓનુ વિવેચન કર્યું છે જેવી કે મહારાષ્ટ્રી, પૈશાચી[1] માગધી અને શૌરસેની આમાથી પહેલી એટલે મહારાષ્ટ્રી ભાષાને તેણે વિશેષ મહત્ત્વની ગણી છે, તથા લૅસન સાહેબે પણ પોતાના

---

[1] પૈશાચી ભાષા ખાસ ઉપયોગી છે કારણકે बृहत्कथा તે ભાષામા લખાયની છે

'ઇન્સ્ટીટ્યુશન્સ' નામના લેખમાં તેને જ મુખ્ય ગણી છે. વરરૂચિના પ્રાકૃત પ્રકાશમા પ્રથમ નવ પ્રકરણોમા તેનું વ્યાકરણ આપવામાં આવ્યુ છે. અને બાકીનાં ત્રણ પ્રકરણોમાં બાકીની ત્રણ ભાષાઓની વિશિષ્ટતા જણાવી છે

મૃચ્છકટિક નાટકમાં પ્રાકૃત ભાષાઓનું એક વિચિત્ર ભ ડોળ ભેગુ કરવામાં આવેલું છે જેથી કરીને તે નાટક ઉપયોગી પ્રાકૃત રૂપોની ખાણ બન્યું છે. વળી, વિક્રમોર્વશીના ચોથા અ કમા પુરુરવ રાજાના આત્મપ્રલાપની ભાષા તદ્દન ભિન્ન જ છે, અને એક જાતની કાવ્યમાં વપરાતી અપભ્રંશ ભાષા છે, જેને આધુનિક વૈયાકરણો મૂળ પ્રાકૃતથી, ઘણીજ જુદી ગણે છે આ અપવાદો સિવાય સંસ્કૃત નાટકોમા—ગદ્યમાં શૌરસેની, અને પદ્યમા મહારાષ્ટ્રી,—સાધારણ પ્રાકૃત જ વપરાય છે.[1] આ બન્ને માટેના નિયમો સરખાજ છે, પરંતુ ગદ્યમાં વપરાતી ભાષા કેવળ વ્યંજનો ઉડાડી દેવામાં થોડી છૂટ લે છે, તથા ધાતુ અને પ્રાતિપદિકનાં કેટલાંક રૂપો તેનાં પોતાનાં ખાસ હોય છે, જે નીચે જણાવવામાં આવશે. તો પણ નાટકોની ભાષા, ખાસ કરીને ગદ્યમાં, વરરૂચિના નિયમોથી ઘણી વાર વિરૂદ્ધ જાય છે

આ લઘુ વ્યાકરણ નાટકમાં વપરાતી સાધારણ પ્રાકૃત માટે ખાસ કરીને બનાવવામાં આવ્યું છે. ખરેખર, અત્યાર સુધી પદ્યાત્મક પ્રાકૃતનાં ઘણાં ઉદાહરણો જાણવામા ન હતા; ફક્ત નાટકોમાં તથા અલંકારના ગ્રંથોમાં આવેલા પ્રાકૃત પદ્યોનાં થે ડાંક નમુનાઓ જણાયા હતા પણ પ્રો. વેબરે હાલકવિના સપ્તશતકનો કેટલોક ભાગ છપાવ્યો છે જેને લીધે મહારાષ્ટ્રી ભાષાનું મોટું ક્ષેત્ર ખુલ્લું થયું છે. તે કાવ્યમાં પ્રાકૃતના અભ્યાસને માટે ઘણી ઉપયોગી એવી આર્યાઓ છે પરંતુ મારા પ્રસ્તુત કાર્ય માટે તે બહુ ઉપયોગી નહિ હોવાથી મેં આ લેખમાં તેમને ઉપયોગ બહુજ થોડો કર્યો છે. તો પણ પરિશિષ્ટમાં હાલકવિની દશેક આર્યાઓ મેં આપી છે.

વિભાગ ૧.

લગભગ સર્વથા સંસ્કૃત શબ્દોમાં કેટલાક ફેરફારો કરીને અને કેટલાક અક્ષરો ઉડાડીને પ્રાકૃત રૂપો સિદ્ધ થયાં છે. સંસ્કૃતના અણીશુદ્ધ ઉચ્ચારોને બદલે પ્રાકૃતમાં અસ્પષ્ટ અને અર્ધ ઉચ્ચાર કરવામાં આવે છે, તથા સ સ્કૃત ભાષાના સ્વભાવની વિરૂદ્ધ જઈને વારંવાર સ્વરસમૂહનો બાધ કરવામાં આવે છે. નીચેના પ્રકરણમાં, પ્રથમ તો શબ્દોના અક્ષરોમા થતા ફેરફાર વિષે અને, પછીથી, પ્રાતિપદિક અને ધાતુઓનાં રૂપોમાં થતા ફેરફાર વિષે વિવેચન કરીશું.

સ્વર પ્રકરણ.

પ્રાકૃતમાં ऋ, ॠ, ऌ, ऐ, औ સિવાયના બધા સ્વરો સંસ્કૃત પ્રમાણે છે.

કોઈ શબ્દમા પ્રથમ અક્ષર ऋ હોય તો તેનો रि થાય છે. જેમ કે ऋण ને બદલે रिण; કેટલીક વાર ऋ ની પહેલા વ્યંજન હોય તો તે વ્યંજનનો લોપ કરવામા આવે છે, જેમ કે सदृश—सरिस. જો ऋ ની પહેલાં વ્યંજન આવ્યો હોય તો ऋ નો अ અથવા इ થાય છે, અને જો તે વ્યંજન ઓષ્ઠસ્થાનીય હોય તો ऋ નો उ થાય છે; જેમ કે तृण—तण, कृत—कअ, दृष्टि—दिट्ठि, भृंग—भिंग, पृथवी—पुहवी, प्रवृत्ति—पउत्ति પરંતુ આવા ફેરફાર શબ્દના પ્રથમાક્ષર ऋ મા ભાગ્યે જ થાય છે, તો પણ इसि (ऋषि), उज्जुअ (ऋजु), उदु (ऋतु).

---

૧. शाकुन्तल ના ચોથા અંકમાં ધીવર માગધી ભાષાનો ઉપયોગ કરે છે, તેમજ मुद्राराक्षस માં કેટલાંક પાત્રો નિકૃષ્ટ ભાષા વાપરે છે.

૨ ડૉ૦ પીશ્ચેલે શૌરસેનીવિષે કુન્હના બીટ્રેજ પુ૦ ૮ માં વિવેચન કર્યું છે. પરંતુ તેમના કેટલાક નિર્ણયો અનિશ્ચિત છે.

પ્રાકૃત શબ્દમા ऋ આવી શકતો નથી, તેથી ऋ અ તવાળા મ સ્કૃત શબ્દોનુ ષષ્ઠી બહુવચનનુ રૂપ અકારાન્ત અથવા ઉકારાન્ત શબ્દો નમાણે થાય છે

क्लृप्त નુ किलित्त થાય છે

ऐ નુ ए અગર अ इ (ક્વચિત્ इ અથવા ई) થાય છે જેમ કે सेल (शैल) दइच (दैत्य)

औ નુ ओ અગર अ उ (ક્વચિત્ उ) થાય છે જેમ કે कोमुइ (कौमुदी), पउर (पौर), सुदेर (सौंदय)

બાકી રહેલા સ્વરોમાથી ए અને ओ મ ધ્યક્ષર હોતા નથી, અને યથાનિયમાનુસાર હ્રસ્વ યા દીર્ઘ હોઈ શકે

પ્રાકૃતનો એક મુખ્ય નિયમ નીચે પ્રમાણે છે —

મળ શબ્દમા જોડાક્ષરની પહેલા દીર્ઘ સ્વર આવ્યો હોય તો પ્રાકૃતમા તે સ્વર હ્રસ્વ થાય છે, જેમ કે आ, ई, ऊ નુ અનુક્રમે अ, इ, उ થાય છે; (ए અને ओ એમ જ રહી શકે છે) જેમ કે मार्ग—मग्ग, दीर्घ—दिग्घ, पूर्व—पुव्व તેમા બે પેટા નિયમો નીચે પ્રમાણે છે (अ) જો પ્રાકૃતમા પણ દીર્ઘ સ્વર રાખવામા આવે તો જોડાક્ષરમાથી એક વ્ય જનનો લોપ થાય છે જેમ કે ईश्वर—ईसर અથવા इस्सर विश्वास—वासासो અથવા विस्सासो। (ब) જોડાક્ષરની પહેલા આવેલો હ્રસ્વ સ્વર દીર્ઘ થાય છે અને એક વ્ય જનનો લોપ થાય છે જેમ કે जिह्वा—जीहा કોઈકવાર જોડાક્ષરની પહેલાના इ ને उ ને બદલે ए અને ओ થાય છે, જેમ કે पिण्ड—पेण्ड तुण्ड—तोण्ड ઘણી વાર य ની પહેલાના अ ને બદલે ए થાય છે, જેમ કે पर्यन्त—परन्त, सौंदय—सुंदर, आश्चय—अच्छेर કેટલાક શબ્દોમા પહેલા અક્ષરમા उ નુ अ થાય છે જેમ કે मुकुट—मउड, पुरुष અને मात्र નુ અનિયમિત રૂપ पुरिस અને मेत्त થાય છે

આ નિયમિત ફેરફારો ઉપરાત વ્યાકરણોમા અને પ્રાકૃત લેખોમા તથા ખાસ કરીને સપ્ત શતકમા કેટલાક સ્વરોના ફેરફારો અનિયમિત રીતે થાય છે જેમ કે समृद्धि—समिद्धि અથવા सामिद्धि उत्खात—उक्खअ અથવા उक्खाअ पटह—पडह વિગેરે સામાસિક શબ્દો કે જેમા વાર વાર સ્વરો હ્રસ્વ દીર્ઘ થયા કરે છે તથા કેટલીક વાર આખા અક્ષરો લુપ્ત કરવામા આવે છે તેમા આવી અનિયમિતતા વાર વાર જોવામાં આવે છે જેમ કે यमुनातट—जउणअड અને जउणा अड; सुकुमार—सुउमार અને सामार राजकुल—राअउल અને राउल, गिर (સરખાવો-વર રુ૦ ૪, ૧ વેબર સત્તશ૦ પા૦ ૩૨ ૩૩)

૨ કેવળ વ્ય જન પ્રકરણ

(अ) સામાન્ય પ્રાકૃતમા श અને ष નથી અને તેમને બદલે स વપરાય છે न ની પછી દ ત્યાક્ષર ન આવ્યો હોય તો સાધારણ રીતે તેનો ण थाय છે શબ્દના આર ભમા આવેલા य નો ज થાય છે સામાન્ય રીતે આટલા નિયમો અપવાદ રૂપે આવે છે [તો પણ નાટકોમા કેટલીકવાર उण (पुन) ज (च) થાય છે પર તુ આવા ફેરફારો વરરૂચિએ સ્વીકાર્યા નથી વળી વરરુ૦ ૨ ૩૨-૪૧ મા આવેલા શબ્દો જે આ પુસ્તકને અ તે આપવામા આવ્યા છે તે જુઓ] सु अ એવા શબ્દો જ્યારે કેટલાક શબ્દોના આર ભમા લગાડવામા આવે છે ત્યારે તેવા શબ્દોનો પહેલો વ્ય જન લુપ્ત થાય છે જેમ કે आर्यपुत्र—अज्जउत्त सुकुमार—सुउमार

(ब) છેવટના म અને न જે અનુસ્વારના રૂપમા પરિણત થાય છે તે સિવાયના ખોડા વ્ય જ નોનો લોપ થાય છે ઘણી વાર છેવટના અનુસ્વારનો લોપ થાય છે કેટલાક નામોના અ ત્ય વ્ય જનોને अ અગર आ લગાડવામા આવે છે, જેમ કે प्रावृष्—पाउस सरित्—सरिआ

(ग) વચમાં આવેલા ખોડા અક્ષરો—

क्, ग्, च्, ज्, त्, द्, प्, य्, व નો વિકલ્પે લોપ થાય છે. પરંતુ ग् અને प् નો જ્યારે લોપ ન થાય ત્યારે તેમને બદલે ઘણી વાર ह् અને व्[1] અગર य् થાય છે. આવી રીતે થતો લોપ ગદ્ય કરતાં પદ્યમાં વિશેષ જોવામાં આવે છે. प्रति ઉપસર્ગને બદલે પ્રાકૃતમાં पडि લખવામાં આવે છે.

य નો ઘણી વાર લોપ થાય છે, જેમ કે वायु—वाउ, नयन—णअण.

न् નો ण् થાય છે, અને ट् નો ड्[2] થાય છે, અને કેટલીક વાર ड् નો ल् થાય છે.

ख्, घ्, थ्, ध्, भ् એમ જ રહે છે, અગર તો તેમનો ह् થાય છે (જ્યારે थ् નો ह ન થાય ત્યારે, અને ખાસ કરીને ગદ્યમાં, ध् થાય છે) छ्, झ्, અને ढ માં ફેરફાર થતો નથી. ठ् નો હંમેશા ढ् થાય છે, फ સાધારણ રીતે અવિકૃત રહે છે, અને કદાચ તેનો भ् પણ થાય (वर० ૨, ૨૬, સરખાવો લેસન સાહેબનું વ્યાકરણ, પાન ૨૦૮)

र ને બદલે ઘણી વાર ल् થાય છે, અને આ પ્રમાણે માગધી અને બીજી કેટલીક હલકી ભાષાઓમાં નિયમિતપણે થાય છે. न्, म्, ल्, स्, ह् અવિકૃત રહે છે. श અને ष् ને બદલે स् થાય છે, પરંતુ दस અને તેના ઉપરથી થતા શબ્દોમાં તથા दिवस માં, स નો ह् થાય છે, જેમ કે एकादश—एआरह, दिवस—दिअह, તેમજ, ईदृश—एहह.

શબ્દની મધ્યમાંના ખોડા વ્યંજનોને કેટલીકવાર બેવડાવવામાં આવે છે, જેમ કે एक—एक्क અથવા एअ, अशिव—असिव्व અથવા असिव (वर० ૩, ૫૨, ૫૮).

૩. જોડાક્ષર પ્રકરણ.

પ્રાકૃત ભાષાના ખાસ ફેરફારો જોડાક્ષરોમાં થાય છે. જ્યારે વધારે સંસ્કૃત જોડાક્ષરો મળી જઈને એકાદ પ્રાકૃત રૂપ સિદ્ધ થાય છે ત્યારે તે રૂપ એકાએક ઓળખી શકાતું નથી. પ્રાકૃતમાં જુદા જુદા વર્ગના બે વ્યંજનોનું જોડાણ રહી શકતું નથી, તેથી તે વ્યંજનોમાંથી એકનો લોપ કરી, અને બીજાને બેવડાવી એક વર્ગના કરવા પડે છે. સામાન્ય નિયમ તરીકે, જોડાક્ષરોમાંના પહેલા વ્યંજનનો લોપ થાય છે, પરંતુ न्, म्, य् પહેલા ન હોય તો પણ તેમનો લોપ થાય છે, અને र, ल, અને व् નો સર્વત્ર લોપ થાય છે. આ ઉપરાંત કેટલાક અપવાદો પણ છે. એક નિયમ ખાસ યાદ રાખવો જોઈએ કે—જ્યારે કોઈ જોડાક્ષરમાં ઊષ્માક્ષર આવ્યો હોય, ત્યારે તેનો લોપ કરી તેને બદલે તેની સાથે જોડાયલા વ્યંજન પછીનો મહાપ્રાણ વ્યંજન મૂકવામાં આવે છે. જેમ કે स्क, ष्क અથવા क्ष ને બદલે क्ख થાય; અગર તો, ઊષ્માક્ષરની સાથે જોડાયલા વ્યંજનની પછીનો મહાપ્રાણ વ્યંજન ન હોય તો ઊષ્માક્ષરને બદલે ह મૂકવામાં આવે છે, જેમ કે स्न અથવા ष्ण ને બદલે ण्ह. પરંતુ જ્યારે આવી પરિસ્થિતિ સામાસિક શબ્દના પદોમાં આવી હોય ત્યારે ઉપર્યુક્ત નિયમ જળવાતો નથી. જેમ કે तिरस्कारो—तिरक्कारो. (तिरक्खारो એમ ન થાય.) र् અને ह् કદી પણ બેવડાતા નથી. જોડાક્ષરમાં ह् આવ્યો હોય તો છેવટે લખાય છે, જેમ કે ब्राह्मण—बम्हण. જોડાક્ષરમાં र् આવ્યો હોય તેનું અનુસ્વાર થાય છે. આ નિયમ व् અને ઊષ્માક્ષરમાં પણ કોઈક વખતે લાગુ પડે છે. જેમ કે दर्शन—दंसन, वक्र—वंक, अश्व—अंस, अश्रु—अंसु, (જુઓ वर० ૪, ૧૫) કેટલીક વાર જોડાક્ષરની વચમાં એક નવો સ્વર મૂકવામાં આવે છે,

---

૧. व પ્રાકૃત અક્ષર હશે કે નહિ તે શંકાસ્પદ છે, કારણ કે પ્રતોમાં હંમેશાં व લખેલો હોય છે.

૨. ड् અને र् વાર વાર એક બીજાને બદલે વપરાય છે, જેમકે वेणीसं० પા. ૧૯, ૧-૨, માં पडिहरिस्सामो (परिहरिष्याम), તથા शाकु०, પા. ૫૬, ૧-૧૨, (બૉથલીંગ), मलअतरुम्मूलिआ [मलअतर्-(ड्)]

જેમ કે हर्ष—हरिस (જુઓ વર૦ ૩ ૫૯-૬૬); ઘણી વાર च મા આવેલા य् નો इ થાય છે, જેમ કે चौर्य—चोरिअ

પ્રાકૃત જોડાક્ષરોની તાલિકા

નીચેની તાલિકામા સંસ્કૃત જોડાક્ષરોના પ્રાકૃત રૂપો આપ્યા છે જેમાના ફેરફાર શબ્દના મધ્યમા થાય છે એમ સમજવુ; પણ તે પ્રાકૃત જોડાક્ષરોમાના પહેલા અક્ષરનો લોપ કરવાથી તે રૂપો શબ્દના આરંભમા પણ ઉપયોગમા આવે; જેમ કે यक्ष—जक्ख; પણ क्षत—खद; તેજ પ્રમાણે શબ્દની વચમા હોય તો प्र નો प्प થાય છે અને આરંભમા હોય તો प्र નો प थाय છે

क्क=त्क, क्त (?),[1] क्य, क्र, क, ल्क, ष्क, ह्क; જેમ કે उत्कण्ठा, मुक्त, चाणक्य, शक्र, अर्क, विक्लव, उल्का, पक्व ને બદલે અનુક્રમે उक्कण्ठा, मुक्क, चाणक्क, सक्क, अक्क, उक्का, विक्कव पिक्क થાય છે

क्ख=त्ख, क्ष्य क्ष ष्क, (ह्य) ष्क स्क (ष्ख), स्ख, ख; જેમ કે उत्खण्डित, आख्या यक्ष उत्क्षिप्त शुष्क स्कन्ध स्खलित दुःख ને બદલે उक्खण्डिद, अक्खा, जक्ख उक्खित्त सुक्ख खन्द खलिअ दुक्ख થાય છે

ग्ग=ङ्ग द्ग, ग्न ग्म ग्य ग्र ग ल्ग; જેમ કે खड्ग मुद्ग नग्न युग्म योग्य, समग्र वर्ग, वल्गित ને બદલે खग्ग मुग्ग णग्ग, जुग्ग जोग्ग समग्ग वग्ग वग्गिद થાય છે

ग्घ=(द्घ) द्घ, घ्न घ्र, घ; જેમ કે उद्घाटित, विघ्न, शीघ्र, निघृण ને બદલે उग्घाडिद, विग्घ, सिग्घ णिग्घिण થાય છે

ङ्ख=ङ्ख; જેમ કે सङ्क्षोभ—सङ्खोह (અથવા सङ्क्खोह ?)

च्च=च्य, त्य, च; अच्युत, नित्य चचरिका ને બદલે अच्चुद, णिच्च चच्चरिआ થાય છે[3]

च्छ=थ्य, छ, ह्म श्च, त्स क्ष त्स त्स्य प्स ध्य; જેમ કે मिथ्या मूर्च्छा पृच्छाणक वत्स उत्क्षिप्त लक्ष्मी वत्स मत्स्य, लिप्सा, आश्चर्य ને બદલે मिच्छा, मुच्छा पुच्छणाअ, वच्छ, उच्छित्त, लच्छी, वच्छ मच्छ, लिच्छा, अच्छेर થાય છે

ज्ज=ज्ज ह्य (કોઈક વખત) ज्ञ, ज, ज्य, द्य र्य, र्ज्य (ભાગ્યેજ); જેમ કે कुब्ज सवज्ञ, पद्म, गर्जित, प्रज्वलित विद्या, कार्य, शय्या ને બદલે कुज्ज सव्वज्ज पज्ज गज्जिद, पज्जलिद विज्जा कज्ज सेज्जा થાય છે

ज्झ=ध्य ह्य; જેમ કે मध्य, बाह्य ने બદલે मज्झ, बज्झम થાય છે

ट्ट=त; જેમ કે नर्तकी नु णट्टइ થાય છે

ट्ठ=ष्ट ष्ठ;[4] જેમ કે दृष्टि, गोष्ठी नु दिट्ठि, गोट्ठी થાય છે

ड्ड=त, द (ભાગ્યેજ) જેમ કે गत, गर्दभ नु गड्ड गड्डह થાય છે

---

૧ क्क=क्त ઘણા નાટકોમા જેવામા આવેછે જુઓ मृच्छ પા. ૨૮ ૧૨૦ ઉપર સ્ટેન્ઝરની નોટ.

૨ ખ સકરીને સમાસમા क्ख=ष्क ह्क વપરાય છે જેમકે निष्कम्प=निक्कम्प બાકી અન્ય સ્થળે क्ख થાય છે તેજ પ્રમાણે क्ख=ष्क અને प्फ=ष्प અગર प्प

૩ ક્વચિત્ ब ને બદલે व જેવામા આવે છે પણ ખાસ કરીને निव्वअ (निषय) જેવા શબ્દોમાં જ જેમા निर् ઉપસર્ગ व થી શરૂ થતા શબ્દ સાથે જોગએલો છે

૪ अट्टि (अस्थि=હાડકુ) તથા पिट्ठ (स्थित) મા ट्ठ એ स्थ ને માટે વપરાય છે

ड्ढ=ढ्य; જેમ કે आढ्य नुं अड्ढ થાય છે.

ण्ण=ग्न (?), ज्ञ, म्न, ञ्न, ण्य, न्य, र्ण, ण्व, न्व, જેમ કે रुग्ण, यज्ञ, प्रद्युम्न, प्रसन्न, पुण्य, अन्योन्य, वर्ण, कण्व. अन्वेषणा, ને બદલે रुण्ण जण्ण, पज्जुण्ण, पसण्ण, पुण्ण, अण्णोण्ण, वण्ण, कण्ण, अण्णेसणा થાય છે.

ण्ह=क्ष्ण श्न. ष्ण, स्न, ह्ण, ह्न; જેમ કે तीक्ष्ण, प्रश्न, विष्णु, प्रस्नुत, पूर्वाह्ण, वह्नि ने બદલે तिण्ह, पण्ह, विण्हु, पण्हुद, पुव्वण्ह, वण्हि થાય છે.

त्त=क्त, प्त, त्न, त्म, त्र, त्व, र्त. જેમ કે भक्त, सुप्त, पत्नी, आत्मा, शत्रु, सत्त्व, मुहूर्त ने બદલે भत्त, सुत्त, पत्ती, अत्ता, सत्तु, सत्त, मुहुत्त થાય છે.

त्थ=क्थ, त्र,[1] र्थ, स्त, स्थ, જેમ કે सिक्थक, तत्र, पार्थ, हस्त, अवस्था ने બદલે सित्थअ, तत्थ, पत्थ, हत्थ, अवत्था થાય છે

द्द=ब्द, (द्म ?), द्र, र्द, द्व; જેમ કે शब्द, भद्र, शार्दूल, अद्वैत ने બદલે सद्द, भद्द, सद्दूल, अद्दइअ થાય છે

द्ध=ग्ध, ब्ध, र्ध, ध्व; જેમ કે स्निग्ध, लब्ध, अर्ध, अध्वन्, ने બદલે सिणिद्ध, लद्ध, अद्ध, अद्धा થાય છે

न्द=न्त (શૌરસેનીમાં કદાચ થાય છે) જેમ કે किन्तु, प्रभावान् ने બદલે किन्दु. पहाव-वन्दो થાય છે.[2]

प्प=त्प, प्य, प्र, र्प ल्प, प्ल, क्म.[3] જેમ કે उत्पल, विज्ञप्य, अप्रिय, सर्पणीय, अल्प, विप्लव, रुक्म ને બદલે उप्पल, विण्णप्प, अप्पिअ, सप्पणीय, अप्प, विप्पव, रुप्प થાય છે.

प्फ=त्फ, ष्फ, (:फ), स्फ, ष्प, स्प; જેમ કે उत्फुल्ल, निष्फल, स्फुट, पुष्प, शरीरस्पर्श ने બદલે उप्फुल्ल, णिप्फल्ल, फुड, पुप्फ, सरीरप्फस થાય છે.

ब्ब=द्व, र्व, व्र. જેમ કે उद्वन्ध्य, अब्राह्मण्य ને બદલે उव्वन्धिय, अव्वम्हणम्.

ब्भ=ग्भ, द्भ, भ्य, भ्र, र्भ,[4] જેમ કે प्राग्भार, सद्भाव, अभ्यर्थना, अभ्र, गर्भ ને બદલે पब्भार, सब्भाव, अब्भत्थणा अब्भ, गब्भ થાય છે.

म्म=ग्म, ण्म, न्म, म्य, र्म, ल्म;[5] જેમ કે दिङ्मुख, षण्मुख, जन्म, सौम्य, वर्मन्, गुल्म ने બદલે दिम्मुह, छम्मुह, जम्म, सोम्म, वम्म, गुम्म થાય છે

म्ह=ष्म, क्ष्म, स्म, ह्म, જેમ કે ग्रीष्म, पक्ष्मन्, विस्मय, ब्राह्मण ने બદલે गिम्ह, पम्ह, विम्हअ, वम्हण થાય છે

य्य=र्य, र्ज, (માગધી), જેમ કે कार्य, दुर्जनः ने બદલે कय्य, दुय्यणे થાય છે

रि=र्द, र्य (કદાચ), જેમ કે तादृश, चौर्य ने બદલે तारिस, चोरिअ થાય છે.

---

૧. त्र નેબદલે त्थ એકેલા અવ્યયોમાજ વપરાય છે, જેમકે एत्थ (अत्र), तत्थ (तत्र)

૨. જુઓ બોથલિંગનું शाकुं०, પા. ૧૫૫ નોટ

૩. आत्मा નું પ્રાકૃત अप्पा તથા अत्ता બેઉ છે ष्प=स्प, स्फ, ફક્ત સમાસમાંજ, જેમકે चउ-प्पहो=चतुष्पथ

૪ ब्भ=ह्व, જેમકે विब्भल=विह्वल

૫, मिल्=म्ल्, જેમકે मिलाण=म्लान જુઓ લેસન, પા. ૨૫૮. વળી, व=द्व, જેમકે वारह=द्वादश.

ल्ह=ल्य, ल (ल्व) य (શાગ્યેજ) જેમ કે शल्य निलज्ज पयाण ને બદલે सल्ह णिल्लज्ज, पल्लाण થાય છે

ल्ह=ह्ल; જેમ કે कह्लार નું कल्हार થાય છે

न्त=[1] व्य, (म्र), र्व, જેમ કે काव्य, पूर्व ને બદલે कव्व, पुव्व થાય છે

स=श, श्र, श्व, स्व; જેમ કે दर्शन, अश्रु अश्व, मनस्विनी ને બદલે दसण, असु, असो, मणासिणी થાય છે

स्स=ष, श्म, श्य, ३, श्व ष्म, ष्य, ष्व, स्य स्र, स्व જેમ કે ईर्षा रश्मि राजश्यालक विश्रान्त अश्व नुष्म पुष्य परिष्वजामि तस्य सहस्र तपस्विन् ने બદલે इस्सा रस्सि राज स्साल्अ विस्सन्त अस्स सोस्स, पुस्स परिस्सआमि तस्स सहस्स तवस्सी થાય છે

તા. ક.—જો સંસ્કૃત શબ્દોમાં ત્રણ વ્યંજનો જોડાયલા હોય તો તેમાંના અર્ધસ્વરનો પ્રાકૃત કરતી વખતે લોપ કરવામાં આવે છે અને ત્યાર પછી બાકી રહેલા વ્યંજનો માટે ઉપર્યુક્ત નિયમો લાગુ પાડવામાં આવે છે, જેમ કે मत्स्य=मच्छ; પરંતુ આવા (અર્ધસ્વર વાળા) જોડાક્ષરની પહેલાં અનુનાસિક વ્યંજન આવ્યો હોય તો બાકી રહેલા જોડાક્ષરોની બાબતમાં સામાન્ય નિયમો લાગી શકે છે, માત્ર અનુનાસિક પછી તેઓ બેવડાતા નથી; (વર૦ ૩ ૫૬) જેમ કે विन्ध्य=विञ्झ [ध्य નો झ (वर० ३ २८) પ્રમાણે થાય છે]

ઉપર્યુક્ત નિયમો ઉપરાંત હાલ કવિના સપ્તશતકની જેમ બીજા પદ્યોમાં ઘણી અનિયમિતતા જોવામાં આવે છે; જેમ કે त्रैलोक्य નું પ્રાકૃત રૂપ વરરુચિએ तेलोअ તથા तेल्लोक्क આપ્યું છે તેજ પ્રમાણે नभस्तल નું પ્રાકૃત રૂપ णहअल (उत्तररामं० પા ૧૦૫ તથા સપ્તશ૦ ૭૮) તથા णह त्थल (मालती० પા ૯૦) વિગેરે જોવામાં આવે છે

વિભાગ ૨

પ્રાકૃત નામો પાંચ જાતનાં હોઈ શકે ૧ अકારાંત તથા आકારાંત, ૨ इકારાંત તથા ईકારાંત; ૩ उકારાંત તથા ऊકારાંત; ૪ મૂળરૂપે ऋકારાંત; ૫ વ્યંજનાંત

છેલ્લા બે વિભાગમાં પડે એવાં નામો ઘણાં થોડાં છે ऋકારાંત પુલ્લિંગ શબ્દોને अर અથવા आर અંતવાળા બનાવવામાં આવે છે, જેમ કે पिता-पिअरो; पित्रा-पिअरेण भर्ता-भत्तारो भर्ता-भत्तारेण પ્રથમા તથા દ્વિતીયા બહુવચનમાં તૃતીયા અને ષષ્ઠી એકવચનમાં તેમજ સપ્તમી બહુવચનમાં છેવટના ऋ ને બદલે उ મૂકવામાં આવે છે, અને પછી उકારાંત શબ્દોની માફક તેનાં રૂપો ચાલે છે; જેમ કે भर्तृणा-भत्तुणा भर्तु-भत्तुणो આવું રૂપ વપરાયેલું પણ જોવામાં આવે છે જેમ કે भर्तृकुल-भत्तुकुल સંબંધદર્શક નામોનું પ્રથમા એકવચન आ અંતવાળું પણ હોય છે, જેમ કે पिता-पिआ; मातृ-माआ અને ત્યાર પછી आकारांत સ્ત્રીલિંગ નામોની માફક તેનાં રૂપો ચાલે છે भर्तृ નું સંબોધનરૂપ भट्टा થાય છે અને તેનું સ્ત્રીલિંગરૂપ भट्टिनी અથવા भट्टिणी થાય છે

વ્યંજનાંત નામોની દ્વિવિધ ગતિ થાય છે (૧) તેમનો અંત્ય વ્યંજન ઉડી જાય છે અને ત્યાર બાદ ઉપર બતાવેલી પહેલી ત્રણ રીતે તેમનાં રૂપ ચાલે છે (નપુંસકલિંગ નામ પુલ્લિંગ બની જાય છે) જેમ કે सर (सरस्) નું પ્રથમાનું રૂપ सरो कम्म (कर्मन्) નું कम्मो થાય છે, અથવા (૨) મૂળ શબ્દને अ કે आ લગાડવામાં આવે છે જેમ કે शरद् નું सरदो; आशिस् નું आसिसा જે વિભક્તિઓના પ્રત્યયો વ્યંજનથી શરૂ થતા હોય તેમને માટે સાધારણ રીતે આ નિયમો લાગે છે આ ઉપરથી જણાશે કે આ યુક્તિઓ વાપરવાનું કારણ વ્યંજનથી શરૂ થતા

૧ ष्व=ह, જેમકે उद्वेष्टन=उव्वेढने (वर० ८ ४१), જેમાં उद् ની પછી व આવે છે

પ્રત્યયો વ્યંજનાંત શબ્દો સાથે જોડાતા જે નવા જોડાક્ષરો ઉત્પન્ન થાય તથા જે નવા ફેરફારો કરવા પડે તે દૂર કરવાનું હોવું જોઈએ. પરંતુ સ્વરથી શરૂ થતા વિભક્તિના પ્રત્યયો આગળ ઘણું ખરૂં સંસ્કૃત રૂપજ રાખવામાં આવે છે, અલબત, તેમા પ્રાકૃત નિયમોપ્રમાણે ફેરફાર થાય છે, જેમ કે भवदा (भवत् નુ તૃતીયાનું રૂપ), आउसा (आयुषा, आयुस् નું તૃતીયાનું રૂપ)

પ્રાકૃતમાં દ્વિવચન નથી તેમજ ચતુર્થી વિભક્તિ નથી (ચતુર્થીને બદલે ષષ્ઠી વપરાય છે), પંચમી બહુવચનના બે પ્રત્યયો છે હિંતો 'માંથી' ના અર્થમાં પ્રેરકમાં વપરાય છે, અને सुंतो 'માંથી' ના અર્થમા સાધારણ રીતે વપરાય છે. ખાસ ઉપયોગી એવાં પહેલા ત્રણ પ્રકારનાં રૂપો નીચે-પ્રમાણે છે. उકારાંત શબ્દોના રૂપ इકારાત પ્રમાણે ચાલતાં હોવાથી ખાસ અહીં આપવામાં આવ્યા નથી.

નામનાં રૂપાખ્યાન.

वच्छ=वृक्ष (नपुंस० वण=वन)

	એક વચન.	બહુવચન
प्र०	वच्छो (नपुं० वणं)	वच्छा (नपुं. वणाइं,-इ, वणा; वणानि ગદ્યમા વપરાય છે).
द्वि०	वच्छं - ,,	वच्छे, वच्छा (नपुं०=प्रथमा०)
तृ०	वच्छेण,-णं	वच्छेहिं,-हि
पं०	वच्छादो,—दु—[1] वच्छाहि, वच्छा	वच्छेहिं,-हि वच्छासुंतो, वच्छेसुंतो
ष०	वच्छस्स	वच्छाणं-ण
स०	वच्छे, वच्छम्मि	वच्छेसु-सुं
सं०	वच्छ, वच्छा (नपुं० वण)	वच्छा (नपुं० वणाइं-इ).

अग्गि=अग्नि (पुल्लिंग) दहि=दधि (नपुंस०).

	એક વચન.	બહુવચન
प्र०	अग्गी (नपुं० दहिं)	अग्गीओ, अग्गिणो (नपुं. दहीइं,-)
द्वि०	अग्गिं - ,,	अग्गिणो अग्गी (?).- ,,
तृ०	अग्गिणा	अग्गीहिं,-हि
पं०	अग्गीदो,-दु,-हि	अग्गीहितो,-सुंतो.
ष०	अग्गिणो, अग्गिस्स	अग्गीणं,-ण.
स०	अग्गिम्मि	अग्गीसु,-सुं
सं०	अग्गि (नपुं. दहि)	अग्गीओ, अग्गिणो (नपुं. दहीइं,-इ)

माला (स्त्रीलिंग)

	એક વચન	બહુવચન
प्र०	माला	मालाओ,-उ, माला[2]
द्वि०	मालं	,, ,,
पं.	मालदो,-दु,-हि.	मालाहितो,-सुंतो

૧. ગદ્યમાં સામાન્ય રીતે दो વાળુંજ રૂપ વપરાય છે.

૨. माला સાટે જુઓ વર૦ ૫, ૨૦,, તથા શાકુ૦માં પા૦ ૧૫ ઉપર, दअमाणा શબ્દપર આપેલી પ્રથ્વીંગની ટીકા.

तृ० प० स० मालाए,-इ	मालाहिं,-हि
	मालाणं,-ण
	मालासु,-सुं
सं० माले	मालाओ-उ

પ્રાકૃતમાં સ્ત્રીલીંગી ઇકારાંત અને ઈકારાત તથા ઉકારાંત અને ઊકારાત નામોના રૂપોમા ફેર ફાર હોતો નથી

णइ=नदी (स्त्रीलिंग)

એક વચન.	બહુવચન
प्र० णइ	णईओ -उ (द्वितीया० णइ ? जुओ लेसन પા ૩૦૭ નોટ ૨)
द्वि० णई	
पं० णइदो,-दु,-हि	णइहिंतो -सुंतो
तृ० प० स० णइअ,-आ णइइ,-ए	णईहिं,-हि
	णईणं,-ण
	णइसु,-सुं
सं० णइ	णइओ,-उ

ता तथा त्व છેડાવાળા ભાવવાચક નામો પ્રાકૃતમા दा અને त्तण છેડાવાળા બની જાય છે જેમ કે पीणदा पीणत्तण मत् અને वत् પ્રત્યયોના પ્રાકૃતમા જુદાં જુદા રૂપો થાય છે, જેમ કે उल्ल इल्ल आल वत इत (ગદ્યમા वंद इद) જેમ કે विआरुल्ल (विकारवत्) તાચ્છી યાર્થે इर પ્રત્યય વપરાય છે જેમ કે हसिर સ્વાર્થે क (अ) પ્રત્યય જોડવામા આવે છે જેમ કે भ्रमर—भमरअ सखी—सहिआ तृ (तृच) પ્રત્યયને બદલે त्तअ થાય છે જેમ કે उन्मादयितृ—उम्माद इत्तअ आयासयित्री—आआसइत्तिआ (સ્ત્રીલિંગ)

વિભાગ ૩.

સર્વનામ પ્રકરણ

પ્રાકૃતમા સર્વનામના રૂપો નામપ્રમાણે ચાલે છે અને તે ઉપરાંત કેટલાક નવા રૂપો પણ ઉમેરાય છે નીચે આપેલા ज=य ના રૂપો ઉપરથી બીજા ખાસ ઉપયોગી રૂપો સમજાઇ જશે.

પ્રાકૃતમા વ્યંજનાંત શબ્દ રાખવામા આવતો નથી તેથી સંસ્કૃતના કેટલાક સર્વનામોને પ્રાકૃતમાં વિભક્તિના પ્રત્યયો લગાડતા કેટલાક ફેરફાર કરવા પડે છે જેમ કે किम् यद् तद् ને બદલે क ज त થાય છે एतद् નુ एद અને કોઇકવાર ए થાય છે (તેથી एत्तो=एतस्मात्) इदम् नु इम थाय છે; अदस् नु अमु थाय છે किम्, यद्, तद् નુ બીજુ રૂપ कि, जि, ति પણ થાય છે; જોકે આ પાછળના રૂપો સ્ત્રીલિંગમા વપરાય છે તો પણ પુલ્લિંગની અને નપુંસકલિંગની તૃતીયા અને ષષ્ઠીમા તેમના કેટલાક રૂપો આવે છે इदम् નુ પણ તૃતીયાનુ इमिना રૂપ થાય છે ખરી રીતે પ્રાકૃતમા સર્વનામના રૂપોમા બહુ નિયમિતતા જોવામા આવતી નથી; તેથી इमस्सिं ખરી રીતે પુલ્લિંગ સપ્તમીનુ રૂપ હોવા છતાં ઘણી વાર સ્ત્રીલિંગમા વપરાયુ છે જેમ કે शाकु तल (મોનીયર વીલીયમ) પા૦ ૩૬ ૨ ૧૧૫ ૩.

વરરૂચિએ ખાસ આપેલા કેટલાક રૂપો હુ નીચે આપુ છું तस्मात् અને एतस्मात् ને બદલે तो અને एत्ता (૬, ૧૦ ૨૦) तस्य અને तस्या ને બદલે स (૬ ૧૧) तेषा અને तासा ને

બદલે સિ. अदस् પ્રથમા એકવચન ત્રણે લિંગમાં अह. જો કે વરરૂચિએ જણાવ્યું નથી તો પણ एनम् અને एनाम् ને બદલે નાટકોમાં णं વપરાયેલું જોવામાં આવે છે. कियत्, तावत् વિગેરેને બદલે केद्दह, केत्तिय, तेद्दह, तेत्तिअ વિગેરે આપેલાં છે (૪, ૨૫); પરંતુ ખરી રીતે केद्दह વિગેરે कीदृश વિ. ને માટે હોવાં જોઈએ.

जन्य (પુલ્લિંગ) કોણ.

	એક વચન.	બહુવચન.
प्र०	जो (जं नपुं० किं=किम्)	जे (जाइं,–इ नपुं०)
द्वि०	जं —	जे —
तृ०	जेण, जिणा	जेहिं, जेहि
पं०	जत्तो,–त्तु, जदो,–दु	जाहिंतो, जासुंतो
ष०	जस्स, जास[1]	जाणं,–ण, जेसिं
स०	जस्सि,–स्सि जम्मि,–म्मि जहिं, जहि, जत्थ	जेसु,–सुं

સ્ત્રીલિંગ.

	એક વચન.	બહુવચન.
प्र०	जा	} जाओ–उ, जीओ,–उ
द्वि०	जं	
पं०	जादो,–दु, जीदो (?)	जाहिंतो,–सुंतो, जीहिंतो,–सुंतो
तृ०	} जाए,– इ,	जाहिं, जीहिं
ष०	जस्सा जासे (?) जिस्सा, जीसे } जीए,–इ,	जासिं, जाणं,–ण, जीणं,–ण, जीसिं, (जासां, जेसिं)
स०	} जीआ,–अ	जासु,–सुं, जीसु,–सुं

વરરૂચિએ (૬, ૨૫–૫૩) મા પુરૂષ સર્વનામો આપ્યા છે. જે રૂપો નાટકોમાં કદી પણ આવતાં નથી તેમને મેં બ્રૅકેટમા મૂકયા છે. બહુવચનનાં રૂપો તદ્દન જુદીજ રીતે થાય છે, જેમ કે तुज्झ, तुम्ह, तुम्म, अम्ह, તથા मज्झ.

अस्मद् ' હું '

	એક વચન.	બહુવચન
प्र०	अहं (हं, अहअं, अहम्मि)	अम्हे (वअं ગદ્યમા વપરાય, वर० २०, २५)
द्वि०	मं, ममं (अहम्मि)	अम्हे, णो (णे)
तृ०	मे, मए (मइ, ममाइ)	अम्हेहिं,–हि
पं०	मत्तो (मइत्तो, ममादो,–दु ममाहि)	अम्हाहिंतो,–सुंतो
ष०	मे, मम, मज्झ, मह[2]	णो, अम्ह, अम्हाणं, अम्हे[3] (मज्झ ?).
स०	मइ (मए, ममम्मि)	अम्हेसु

૧. વળી, નાટકોમાં નપુંસકલિંગ ષષ્ઠીમાં कीस ' શામાટે ' એવા અર્થમાં વપરાયલું જણાય છે.
૨ આ રૂપો ઉપરાંત सप्तश० માં मम અને महं રૂપો વપરાયેલાં જણાય છે.
૩. આ રૂપો ઉપરાંત सप्तश० માં अम्हं, अम्मं, म्ह, अम्हि, अम्हाण રૂપો વપરાયેલાં જણાય છે.

युष्मद् 'तु'

प्र०	तुम, तु (तं)	तुज्झे, तुम्हे
द्वि०	(त, तु) तुम	तुज्झे, तुम्हे, वो
तृ०	तइ तए, तुमए, तुमे, (तुमाइ) ते, दे	तुज्झेहिं, तुम्भेहिं, तुम्हेहिं
पं०	तत्तो (तइत्तो, तुमादो,-दु, तुमाहि)	तुम्हाहिंतो,-सुतो
ष०	(तुमो) तुह, तुज्झ, तुम्ह, तुम्म, तुव, तुम, ते, दे	वो, (भे) तुज्झाणं, तुम्हाणं
स०	तइ, तुइ, तए, (तुमए, तुमे तुमम्मि	तुज्झेसु, तुम्हेसु

પ્રથમના ત્રણ સંખ્યાવાચક શબ્દોના પ્રાકૃતરૂપ ત્ર્ય અગર एक दो (प्रथ० અને द्विती०-दो दुवे, दोणि, षष्ठी-दोण्हं), ति (प्रथ०-तिण्णि, षष्ठी-तिण्हं) થાય છે षट् ને બદલે छ થાય છે

વિભાગ ૪

ક્રિયાપદ પ્રકરણ

ખરી રીતે જોતા પ્રાકૃતમા એકજ ગણ (=સંસ્કૃતનો પહેલો અને છઠ્ઠો) છે સામાન્ય રીતે બધા ધાતુઓને આજ ગણમા લાવવાનો પ્રયત્ન કરવામા આવે છે તો પણ અન્યાન્ય ગણના કેટલાક રૂપો નાટકોમા જોવામા આવે છે

નામ પ્રક્રિયામા જણાવ્યા પ્રમાણે ક્રિયાપદમા પણ દ્વિવચનરૂપ થતા નથી.

કર્તરિ પ્રયોગમાં ફક્ત વર્તમાનકાળ સામાન્ય ભવિષ્યકાળ તથા આજ્ઞાર્થ જોવામા આવે છે

વર્તમાનકાળના રૂપો

	એક વચન.	બહુવચન
प्र० पु०	हसामि, हसमि हसम्हि	हसामो,-मु,-म, हसिमो,-मु,-म हसमो,-मु,-म, हसम्हो,-म्ह
द्वि० पु०	हससि	हसह (ગદ્યમા हसध,-धं) हसित्था (हसत्थ ?)
तृ० पु०	हसदि[1] हसइ	हसंति[2]

મધ્યમ પ્રયોગમા ત્રણે પુરૂષના એકવચનના રૂપો થાય છે જેમ કે ૧ मणे ૨ सहसे ૩ सहदे, અથવા सहए

આજ્ઞાર્થ

	એક વચન	બહુવચન
૧	हसमु (वर० ७ १८)	हसामो,-म हसमो,-म, हसम्ह
૨	हससु, हस, हसाहि, हसस्स	हसह, हसध,-धं
૩	हसदु[1], हसउ	हसंतु

૧ આ ગદ્યમાં વપરાતુ રૂપ છે તેજ પ્રમાણે दु વાળા સામાન્યરૂપ તથા द વાળા ભૂત કૃદંત પણ ગદ્યમા વપરાતા રૂપો છે

૨ अस् થવું ના રૂપો નીચે પ્રમાણે છે એક વચન ૧ मम्हि ૨ असि ૩ अत्थि બહુવ० अम्हो अम्ह ३ सन्ति તેજ પ્રમાણે એન્કલીટીકમા એક વ० ૧ म्हि, ૨ सि ३ त्थि બહુવ० ૧ म्हो, म्ह, ૨ त्थ અનદ્યતનભૂતમા એકવ० ૧ आसि, आसि, ૨ ३ आसि

થાય છે, તથા र् ને બદલે ल् થાય છે; ज ને બદલે य् તેમજ र्य=र्ज ને બદલે य्य થાય છે, अ કારાંત નામના પ્રથમા એક વચનમાં છેવટે ए અગર इ આવે છે, જેમ કે माहो (माणः).

ઉપરના નિબંધમાં, ધરવાપ્રમાણે, સાધારણ વિદ્યાર્થીઓને કાળિદાસ અગર ભાવભૂતિનાં નાટકોમાંનું પ્રાકૃત સમજવા માટે જોઈએ તેટલું જ્ઞાન આપવામાં આવ્યું છે. અલબત, મૃચ્છકટિક અગર વિક્રમોર્વશીયનું પ્રાકૃત સમજવાને કેટલાક વિશેષ જ્ઞાનની જરૂર છે

---

૧. જેને પ્રાકૃતનો અભ્યાસ વધારવો હોય તેમણે નીચેના ગ્રંથોનું અવલોકન કરવું:—

1 Lassen's Institutiones Linguae Pracritical. 1837. 2. Weber's सप्तशतक of हाल with his excellent introduction, 1870 3. वररुचि નો प्राकृतप्रकाश, ૧૮૫૪. 4. प्राकृत बालभापा-(मागधी)-व्याकरण of Hemchandra, Bombay, 1873; આ ગ્રંથની વિવેચનાત્મક આવૃત્તિ ડૉ૦ પીશ્વલે તૈયાર કરે છે. તે ગ્રંથ ખાસ કરીને જૈન પ્રાકૃત માટે ઉપયોગી છે.

परिशिष्ट—જર્મન ઓરિએન્ટલ સોસાયટીના 'અભન્ડ્લુંગેન' ના પાંચમા પુસ્તકમાં પ્રો. વેબરે પ્રકટ કરેલા હાલકવિના સપ્ત શતકમાંથી આર્યાવૃત્તની દસ ગાથાઓ નીચે આપી છે.

१. पाअपडिअस्स पइणो पुट्ठिं पुत्ते समारुहंतम्मि ।
दढमण्णुदूमिआए वि हासो घरिणीए निक्कन्तो ॥ (११.)

२. अज्ज मए तेण विणा अणुहूअसुहाइ संभरन्तीए ।
अहिणवमेहाण रवो णिसामिओ वज्झपडुहो व्व ॥ (२९)

३. तुज्झ वसइ त्ति हिअअं इमेहि दिट्ठो तुमं ति अच्छीइं ।
तुह विरहे किसिआइ ति तीए अंगाइ वि पिआइं ॥ (४०)

४. कल्लं किर खरहिअओ पवसइ पिओ त्ति सुणीअइ जणम्मि ।
तह वड्ढ भअवइ णिसे जह से कल्लं विअ ण होइ ॥ (४५)

५. अदंसणेण पेम्मं अवेइ अइदंसणेण वि अवेइ ।
पिसुणजणजम्पिएण वि अवेइ, एमेअ वि अवेइ ॥ (८०.)

६. दक्खिण्णेण वि एन्तो सुहअ सुहावेसि अम्ह हिअआइं ।
णिक्कइअवेण जाणं गओ सि, का णिव्वुदी ताण ॥ (८४.)

७. तइआ कअग्घ महुअर ण रमसि अण्णासु पुप्फजाईसु ।
बद्धफलभारगरुइं मालइमेण्हिं परिच्चअसि ॥ (९१)

८. उप्पण्णत्थे कज्जे अइचिन्तन्तो गुणागुणे तम्मि ।
अइसुइरसणहपेच्छि-त्तणेण पुरिसो हरइ कज्जं ॥ (२१८).

९. कलहंतरे वि अविणि-ग्गआइ हिअअम्मि जरमुवगआइं ।
सुअणकआइ रहस्सा-इ डहइ आउक्खए अग्गी ॥ (३२८).

१०. वोलीणोलच्छिअरू-अजोव्वणा पुत्ति किण्ण दूमेसि ।
दिट्ठप्पणट्ठपोरा-णजणवआ जम्मभूमि व्व ॥ (३४२.)

अ अर्हन्,अ स्यादर्हति सिद्ध चेत्युक्ते । प्रस्तावादिह अ इति शब्देन श्रीवर्धमानस्वामी प्रोच्यते । तत अस्य ओको गृहं चैत्यमिति यावत, ओक श्रीवर्धमानस्वामिचैत्यमित्यर्थ । तस्मादीश, ऐश्वर्यं यस्य स ओकेश यतोय गण श्रीमहावीरतीर्थकरसान्निध्यत स्फातिमवापेति पञ्चमोऽर्थ ॥ ५ ॥ एवमस्य पदस्यानेकेप्यर्था सन्तोभुवति परं कि बहुश्रमेणेति ॥

अथ उपकेशशब्दस्य कियतोऽर्था लिख्यते । उप समीपे केशा शिरोरूहा सत्यस्येति उपकेश । श्रीपार्श्वापत्यीयकेशिकुमारानगार । एतदुत्पत्तिवृत्तातस्तु श्रीस्थानागवृत्त्यादौ सप्रपच प्रतीत एवास्ति । तत एवावगतव्य । तत उपकेश श्रीकेशिकुमारानगार पूर्वजो गुरुर्विद्यते यस्मिन् गणे स उपकेश । अभ्रादित्वाद प्रत्यय, । अस्मिन्गच्छे हि श्री केशिकुमारानगार प्राचीनो गुरुरासीत् । ततो यथार्थमुपकेश इति नाम जातमिति प्रथमोऽर्थ ॥ १ ॥

उपवर्जितास्त्यक्ता, केशा यत्र स उपकेश ओसिकानगरी तस्या हि सात्यिका देव्याश्चैत्यमस्ति । तदग्रे च सर्वैर्जनै प्रथमजातबालकाना सुदिने दिने मुडन कार्यते तत उपकेश इति यथार्थ नाम ओसिकानगर्या प्रख्यात जात । तत्र भवो यो गच्छ स उपकेश प्रोच्यते सद्भिर्विद्वद्भिः । अत्र हि भवे इत्यनेन सूत्रेण अणि प्रत्यये सज्ञापूर्वकस्य विधेरनित्यत्वाद्वृद्धेरभाव । श्रीरत्नप्रभसूरितो अनेकश्रावक प्रतिबोधविधानानतर लोके गच्छस्य उपकेशेति नाम प्रसिद्ध जातमिति द्वितीयोऽर्थ ॥ २ ॥

को ब्रह्मा, अ, कृष्ण., अ शंकर ततो द्वद्वे का । तैरीष्टे ऐश्वर्यमनुभवति य स, केशकानां ईशः ऐश्वर्यं यस्माद्वा केश पारतीर्थिकधर्म्म स उपवर्जितस्त्यक्तो यस्मात्स उपकेश तीर्थकृदुक्तविशुद्धधर्म्म स विद्यते यस्मिन् गच्छे स उपकेश । अत्रापि अभ्रादित्वादप्रत्यय । इति तृतीयोऽर्थ ॥ ३ ॥

क च सुख इ च लक्ष्मी कयौ ते ईशे स्वायत्ते यत्र यस्माद्वा स केश —अर्थात् जैनो धर्म । स उपसमीपे अधिको वाऽस्माद्गच्छात्स उपकेश इति चतुर्थोऽर्थ ॥ ४ ॥

कश्च अश्च ईशश्च केशा,—ब्रह्मविष्णुमहेशा । तद्धर्म्मनिराकरणात्ते उपहता येन स उपकेश । प्रकरणादत्र श्रीरत्नप्रभसूरि गुरु तस्याय उपकेश । अत्रापि तस्येदमित्याणि प्रत्यये पूर्ववद्वृद्धे अभावो न दोषपोषायेति पचमोऽर्थ ॥ ५ ॥

इत्थमन्येऽप्यनेके अर्था ग्रन्थानुसारेण विधीयते परमलं बहुश्रमेणेति । एवमुक्तव्यक्तयुक्तिव्यक्तिशक्त्या ओकेशोपलक्षणे उभे अपि नाम्नी यथार्थे बुधा प्राच्त ॥ इति ओकेशोपकेशपदद्वयदशार्थी समाप्ता ॥

सवत् १६५५ वर्षे ॥ श्रीमद्विक्रमनगरे मकलवादिवृंदकदकुद्दालश्रीकक्कुदाचार्यसतानीयश्रीमछ्रीसिद्धसूरीणा आग्रहत श्रीमद्बृहत्खरतरगच्छीयवाचनाचार्यश्रीज्ञानविमलगणिशिष्यपंडितश्रीवल्लभगणीविरचिता चेयम् । श्रीरस्तु ॥

ग्रीष्महेमतिकान् मासान्, अष्टौ भिक्षु प्रचक्रमे ।
रक्षार्थं सर्वजतूना वर्षास्वेकत्र सवसेत् ॥ १ ॥

मनुष्याणा सर्व्वेषु पदार्थेषु सारो धर्म्म एव । मनुष्यत्व धर्म्मेणैव वर्ण्यते ॥ स धर्म्मो वर्षासु मुनिपार्श्वात श्रोतव्य । यतयो वर्षास्वेकत्र तिष्ठन्ति किमर्थ सर्व जतूना रक्षार्थं । धर्म्मस्य सारं सर्व्व

श्रीकल्पो गुरुतरः यथा पर्वतानां मध्ये मेरु तीर्थे माहि शत्रुंजय दानमध्ये अभयदान अक्षरमध्ये ॐकार देवेष्विन्द्र. ज्योतिषीषु चन्द्र गजेन्द्रेऽवैरावण समुद्रेषु स्वयंभूरमण· तुरंगमेषु रेवत ऋतुषु वसंत मृतिकया तृगी मृगनाभीषु कस्तुरी धातुषु पीत मोहनेषु गीतं ओष्ठेषु नटन इंद्रियेषु नेत्र स्पर्शेषु पवन दीपालिका धर्मशास्त्रेषु कल्प सर्व पापहर नरो दुष्कलनयकर । यथा जनमेजय राजा अष्टादश पर्व श्रवणात् १८ विप्र हत्यात्याग धर्मनिका श्यामतां जातं । यथा एकस्मिन् दिवसे जनमेजय राजाग्रे पुरोहितेन कथित पूर्वं त्रेतायुगे पाण्डवैः गंगे कृत्वा अष्टादशाक्षौहिणीभृता महाभारतो जात । राजा प्रोक्तं को नाभवत यत्तेषा निवारयति पुरोहितेन कथित त्वा न निवारयामि । यतः अत्र दिवसात् षष्ठे मासे त्वं आखेटके न गन्तव्य यदा गमिष्यति तदा मृगरूप तेषा वेटके अश्वो न क्षेपणीय यदा अश्वो क्षेपयति तदा सगर्भा मृगी तस्या बाण न मोचनीय यदा मुंचति तदा तस्या उदर मध्ये पुत्रिका भविष्यति सा न गृहीतव्या यदा आहयति तदा तस्या पाणिग्रहण न करणीयं यदा पाणिग्रहणं करोति तदा तस्या पट्टराज्ञीपद न दातव्य तस्या कथित न मान्य । इत्यादि भविष्यति वचनानि मया तव कथिता स्यु परं त्वं न तिष्ठसि । अथ षट् मासा त्रिंशद्दिवसोना गतः तदा माखाकारेणागत्य राजा कथितं भो राजन् तव वनो मृगैः भग्न । राजा अश्व सज्जीकृत्य तेषा पृष्ठे गत । ते पूर्वोक्तानि वचनानि सर्वे कृता गत्वा बालस्य पुत्रिका दत्ता एषा त्वं पालय तेन पालिता परं स्वरूपा । अन्यदा राजा दृष्टा सा परिणीता पूर्ववचनानि सर्वे विस्मृत्य राजा पट्टराज्ञी कृता। अन्यदा राज्ञा यज्ञो मंडित. अष्टादशपुराणवेत्तारः अष्टादश ब्राह्मणा आकारिता यज्ञ यजमान कश्चिद्दूरेतन देशान्तरादागतेन नृपो आहृत राजा विप्राणा कथितं अहं उत्तिष्ठामि ते कथितं नहि यजस्य विधानो भवति पर तव शरीरस्पर्शमाना पट्टराज्ञी अस्ति राजा उत्थित तत कटके किंचिच्छ्राबस्य रहस्यो आगत ते ब्राह्मणा हसिता राज्ञी ज्ञात एते मम हसिता क्रुद्धा राज्ञ कथित एते विनष्टा मा हसति तत यदि एते मारयिष्यति तदा तव मम सत्यं । राज्ञा ते मारिता अष्टादशणा कुष्ट जात । तत पूर्वपुरोहितेन कथित वर त्वया न कृत राज्ञा कथित अधुना कथय किं करोमि तेन कथित अष्टादश पुराणानि निर्मदहानि श्रृणु । ते चामि- आदि पर्व १ सभा पर्व २ विराट पर्व ३ आरण्यक पर्व४ उद्यान पर्व५ भीष्म पर्व६ द्रोण पर्व ७ कर्ण पर्व८ शल्य पर्व९ सौप्तिक पर्व१० गर्भ-पाल पर्व ११ शान्ति पर्व१२ शासन पर्व१३ आयुमास्य पर्व१४ मेषक पर्व१५ मृशल पर्व१६ यज्ञ पर्व१७ स्वर्गारोहण पर्व१८ ॥ एभिरष्टादशविप्रहत्याक्षयकृतात्मतनिकाश्यामत्व जाता । तथा अयमपि अधुना ये मुनय उपवासत्रयेण वाचयति चतुर्विधसघो अष्टमेन श्रृणोति तदा तस्मिन्नेव भवे मोक्ष । यदि द्रव्यक्षेत्रकालसद्भावो भवति । न चेत्तदा तृतीयभवे पचमे भवे सप्तमे भवे अवश्य मोक्ष· । पूर्वं मुनय पाक्षिकसूत्रवत्उर्द्धस्था कथयति चतुर्विध सघ उर्द्धवेसन्नेव श्रृणोति पर श्रीवीरनिर्वाणात् ९९३ वर्षे गते आनंदपुरे ध्रुवसेनराज सभाया पुत्रशोकापनोदाय देवर्द्धिमुनिना सभासमक्ष वाचित श्रावका ताम्बूलदाना-दिप्रभावना कृता । तद्दिनादारम्य सा रीति । पर त्वस्य कालस्य वाचनैवोच्यते न तु व्याख्या । पूर्वं ये पाद-लिप्ताचार्य—सिद्धसेनदिवाकरप्रभृतयो अभूवन् तैरपि वाचनैवोक्ता अन्येषा का वार्ता । यत सिद्धान्ते इत्युक्तमस्ति सव्वनईणं जहइ वालुआ इत्यादि । एवंविधस्य कल्पस्य यदहं वाचनामनोरथ करोमि स बाहुभ्या समुद्रतरणमभिलषामि । यथा कुब्ज उच्चफल लातुमिच्छति तथाऽहं यदिच्छामि वाचना· कर्तुं तत् संबन्ध स्तानिरं पुन गुरूणा प्रसाद । यद्वर्षाकाले मयूरो नृत्य करोति तज्जलधरगर्जितप्रमाणं । दृषदूपश्चंद्र-

कातमणिर्यदमृत स्रुते तच्चन्द्रस्य प्रमाण । सूर्यमारथी रवि आरूण पगोपि यदाकाशमुल्लघयति तत्सूर्यस्य प्रमाण । पुत्तालिका नृत्य करोति तद्विदजालिकस्य प्रमाण । तथाऽह मदबुद्धि मूर्खशिरोमणि प्रमाणे सप्र माणता नास्ति, लक्षणे सल्लक्षणता न, अलकारस्याऽलकरण नहि, साहित्ये साहित्य नास्ति, छदसि सुछदता न, एवविधो पि वाचनाय साहस करोमि तत् सद्गुरूणा प्रसाद । पुरातनैर्याख्या कृता। ममापि युक्ति । कथ

म देवो सायरो लहरिगज्जतनीरपडिपुन्नो । ता किं गामतलाओ जलभरिओ लहरिगा देऊ ॥ १ ॥
जइ मरह भावछंदे नच्चइ नवरग चगमा तरूणी । ता किं गामगहिल्ली तालिछदेन नच्चेइ ॥ २ ॥
जइ दुद्धधवलखीरी तडफडइ विविहभगेहिं । ता कुक्कमकणमहिया खल्लिया मा तडफडइ ॥ ३ ॥
अह यद्वेद्मि तद्गुरूणा प्रसाद ।
दोलो रोगी रूलतो अहिय विनाण नाण परिहीणो । त्रिभुव वण्णिज्जो विहिओ गुरमुत्तहाणेण ॥४॥
ते गुरव श्रीपार्श्वनाथसतानीया ।

१ श्रीपार्श्वनाथशिष्य प्रथमो गणधर श्रीशुभदत्त । २ तत्पट्टे श्रीहरिदत्त । ३ तत्पट्टे श्रीआयसमुद्र । ४ तत्पट्टे श्रीकेशीगणधर तेन परदेशीनृप प्रतिबोधित । राजप्रश्नीयउपागे प्रसिद्ध ।

५ तत्पट्टेश्रीस्वयप्रभसूरि । (स्वयप्रभसूरिशिष्य बुद्धकीर्तिसु बौधमत नीकस्यो, आचाराग टीकासु जाणनो) अन्यदा स्वयप्रभसूरि देशना ददता उपरि रत्नचूडविद्याधरो नदीश्वरे गच्छन् तत्र विमान स्तभित । तेन चिंतित मदीयो विमान केन स्तभित । यावत् पश्यति तावदधो गुरु देशानाददत पश्यति । स चिंतयते मयाऽविनय कृत यत जगमतीर्थस्य उल्लघन कृत । स आगत गुरु वदति धर्म श्रुत्वा प्रतिबुद्ध । स गुरु विज्ञपयति मम परपरागता श्रीपार्श्वजिनस्य प्रतिमास्ति तस्या वदने मम नियमोऽस्ति सा रावणलकेश्वरस्य चैत्यालये अभवत् । यावत् रामेण लका विध्वासिता तावद् मणिचूडपूर्वजेन चद्रचूडनरनाथेन वैताढ्ये आनीता । सा प्रतिमा मम पार्श्वेस्ति । तया सह अह चारित्र ग्रहीष्यामि । गुरुणा लाभ ज्ञात्वा तस्मै दीक्षा दत्ता । क्रमेण द्वादशागी चतुर्दश पूर्वी बभूव गुरुणा स्वपदे स्थापित । श्रीमद्वीरजिनेश्वरात् द्विपचाशतवर्ष (५२) आचार्य पदे स्थापित । पचाशतमायुभिमह धरा विचरति । श्रीलक्ष्मीमहास्थान तस्याभिधान १ पूर्व नाम गुजरातिमध्ये कृतयुगे रयणमाल २ त्रेतायुगे रयणमाला ३ द्वापरे श्रीवीरनयरी ४ कलियुगे भानमाल ५ तत्र श्रीराजाभीमसेन तत्पुत्रश्रीपुज तत्पुत्र उत्पलकुमार अपरनाम श्रीकुमार तस्य बाधव श्रीसुरसुन्दर युवराज राज्यभारधुरधर । तयोरमात्य चाद्रवशीय द्वौ भ्राता तत्र निवासी सा० ऊहड १ उद्धरण २ लघु भ्राता गृहे सुवर्ण मध्या आष्टादश कोटय सति । वृद्धभ्रातृगृहे ९९ नवनवति लक्षा सति । ये कोटी श्वरास्ते दुर्गमध्ये वसति ये लक्षेश्वरास्ते बाह्ये वसति । तत ऊहडेन एकलक्ष भ्रातु पार्श्व उद्धारणं याचित । ततो बाधवेन एव कथित भवते विना नगर उद्वसमस्ति, भवता समागमे वासो भविष्यति । एव ज्ञात्वा राजकुमार ऊहडेन आलोचितवान् नूतन नगर वसेय ततो मम वचन अग्रे आयात । ढीलीपुरे राजा श्री साधु तस्य ऊहडेन ९५ तुरगमा भेटिकृता उवएसा सतुष्टो दत्ती । ततो भीनमालात् अष्टादश १८ सहस्र कुटुब अगात् । द्वादश योजना नगरी जाता । तत्र श्रीमद्रत्नप्रभसूरिपचमयासीष्य समेत लूणद्रही समायाति । मासकल्प अरण्ये स्थिता । गोचर्यां मुनी श्वरा व्रजति पर भिक्षा न लभते । लोका मिथ्यात्व वासिता यादृशा गता तादृशा आगता मुनीश्वरा । पात्राणि प्रतिलेख्य मास यावत् सतोषेण स्थिता पश्चात् विहार कृत । पुन कदाचित् तत्रायात । शासनदेव्या कथित भो आचार्य अत्र चतुर्मासक कुरु ।

तव महालाभो भविष्यति । गुरुः पच त्रिंशत् मुनिभि मह स्थित. । मासी द्विमासी तृमासी चतुर्मासी उ-प्पोसित कारिका । अथ मंत्रीश्वर उहड सुतं भुजंगेन दष्ट· । अनेक मत्रआदिन. आहूता. परं न कोपि समर्थस्तै. कथित अयं मृत दावो दीयतां । तस्य स्त्री काष्टभक्षणे स्मशाने आयाता । श्रेष्टस्य महान् दु.खो जात. । वादित्रान् आकर्ण्य लघुशिष्य तत्रागत ।झंपाणो दृष्ट्वा एव कथापयति भो ! जीवितं कथ ज्वाल्यत तै· श्रेष्टिने कथित एप मुनीश्वर एव कथयति ।श्रेष्टिना झंपाणो वालित क्षुल्लक. प्रनष्ट गुरु पृष्टे स्थित.। मृतकामानीय गुरु अग्रे मुचति श्रेष्टि गुरु चरणे शिर निवेश्य एव कथयति भो दयालु मम देवो रुष्ट. मम ग्रहो शून्यो भवति । तेन कारणेन मम पुत्रभिक्षा देहि । गुरुणा प्रासु जलमानीय चरणौ प्रक्षा-ल्य तस्य छटित। सहसात्कारेण सज्जो बभूव हर्ष वादित्राणि वभूव । लोकै· कथित श्रेष्टि सुत नूतन जन्मो आगत । श्रेष्टिना गुरूणा अग्रे अनेकमणि मुक्ताफल सुवर्ण वस्त्रादि आनीय भगवान् गृह्यता । गुरुणा कथितं मम न कार्य पर भवद्भि जिन धर्म्मो गृह्यता । सपाद लक्ष श्रावकानां प्रति बोधि कारक । पूर्वं श्रेष्ठिना नारायण प्रासादं कारयितुमारब्धं । स दिवसे करोति रात्रौ पतति सर्वे दर्शनिन पृष्टा न कोपि उपायो कथितं तेन रत्नप्रभाचार्यो प्रष्ट·—भगवान् मम प्रासादो रात्रौ पतति । गुरुणा प्रोक्त कस्य नामेन कारयत । नारायण नामेन । एवं नहि महावीर नामेन कुरु मगल भविष्यति । प्रासाद-स्य विघ्न न भविष्यति श्रेष्टिना तथैव प्रतिपन्नं । अथ शासनदेव्या गुरूणा कथितं हे भगवन् अन्य प्रासाद योग्य मया देव गृहात् उत्तरस्यां दिशी लूणद्रहाभिधान डुंगरिकायां श्री महावीर बिंब कारयितुमारब्ध । तत्र तेन श्रेष्टिना गोपाल वचनात् गोदुग्ध स्त्रावकारणं ज्ञात्वा सर्वेपि दर्शनिन पृष्टा तै. पृथक् पृथक् भाषया अन्यदन्यदुक्त । तत· श्रेष्टिना स आचार्योऽभिवंद्य पृष्ट तत· शासन देव्या वाक्यात् आचार्यो ज्ञात्वा एवं कथयति तत्र त्वत्प्रासाद योग्य बिंबो भविष्यति परं षट् मासै. सार्द्ध सप्त दिनै निष्कासनीयं । श्रेष्टि उत्सुक संजात । किंचिदूर्नदिनै निष्कासित. निंबु फल प्रमाण हृदयस्य ग्रन्थी द्वय सहितं । आचार्यै. प्रोक्तं अद्यापि किंचित् असंपूर्ण बिंब विलंबस्व श्रेष्टिना प्रोक्तं गुरूणां कर प्रासादात् संपूर्णं भविष्यति। तेनावसरे कोरटकस्य श्राद्धाना आव्हान आगतं । भगवन् प्रतिष्ठार्थमा-गच्छ । गुरुणा कथितं मुहूर्त वेलाया आगच्छामि ।

> सप्तत्या ७० वत्सराणा चरम–जिनपतेर्मुक्तजातस्य वर्षे
> पचम्या शुक्लपक्षे सुरगुरुदिवसे ब्रह्मण. सन्मूहुर्त्ते ।
> रत्नाचार्यै सकलगुणयुते सर्वसंघानुज्ञाते
> श्रीमद्वीरस्य बिंबे भवशतमथने निर्मितेयं प्रतिष्ठा ॥ १ ॥
> उपकेशे च कोरटे तुल्यं श्री वीरबिंबयो
> प्रतिष्ठा निर्मिता शक्त्या श्रीरत्नप्रभसूरिभि ॥ २ ॥

निजरूपेण उपकेसे प्रतिष्टा कृता वैक्रिय रूपेण कोरटके प्रतिष्टा कृता श्राद्धै द्रव्यव्यय· कृत । ततस्तेन श्रेष्ठिना श्रीऔपकेश पुरस्य श्रीमहावीर बिंब पूजा आरात्रिका स्नात्रकरण देव वंदनादिविधि श्रीरत्नप्र-भाचार्यात् शिक्षिता । तदनतर मिथ्यात्वाभावात् श्रावकत्व केषाचित् श्रेष्टिसबंधिना सजातं। तत आचा-र्येण ते सम्यक्त्वधारी कृता। एकदा प्रोक्त भो युयं श्राध्दा तेषा देवीना निर्दयचित्ताया महिष बोत्कटादि

जीवचधास्थि भगशब्द श्रवण कुतुहलप्रियया अविरताया रक्ताक्तिभूमितले आर्द्रचर्म्मबद्धघदनमाले निष्ठुरजनसेवित धर्म्मध्यानविध्यापने महाबीभत्सरौद्रे श्री सच्चिकादेवि गृहे गन्तु न बुध्यते । इति आचार्यवच श्रुत्वा ते प्रोचु प्रमो युक्तमेतत् पर रौद्रा देवी यदि छलिष्याम तदा सा कुटुम्बान् मारयति। पुनराचार्यै प्रोक्त अह रक्षा करिष्यामि । इत्याचार्यवाक्य श्रुत्वा ते देवीगृहे गमनात् स्थिता । आचार्याणा प्रत्यक्षीभूय देव्या सकोपमित्युक्त आचार्य मम सेवकान् मम देवगृहे आगच्छमानान् निवारणाय त्व न भविष्यति। इत्युक्त्वा गता देवी पर सातिशय कालभावात् महाप्रभावात् अनेकसुररक्षितप्रातिहार्ये आचार्ये देवी न प्रभव ति । एकदा छद्म लब्ध्वा देव्या आचार्यस्य वामनेत्रे काचिव्यथा किंचित् स्वाध्यायादि रहितस्य वामनेत्र भूराधिष्ठिता । वेदना जाता । आचार्यै यावत् सावधानीभूय पीडाया कारण चिंतित तावत् देवी प्रत्यक्षीभूय इति प्रोक्त मया पीडा कृता । अह स्वशक्त्या त्वा स्फेटयिष्यामि इति सावष्टम आचार्योक्त श्रुत्वा सभयाकृत सा विनय प्रोक्त भवादृशाना कृपणा विग्रह विवादो न युक्त । यदि त्व कडडमड्ड ददासि तदाह वेदना अपहरामि। आचद्रार्क त्वत्किंकरी भवामि इति श्रुत्वा आचार्य प्रोक्त कडडमडड दापयिष्यामि। इत्युक्त्वा गता देवी। प्रभाते श्रावकानामाकार्य ते पक्वान्न खज्जकादि सुडकद्वय कर्पूरकुकुमादिभोगश्च आनीय श्रीसच्चिकादेवी देवगृहे श्रीरत्नप्रभाचार्य श्रावकै सार्ध गत । तत श्रावकै पार्श्वात् पूजा कराप्य वामदक्षिणहस्ताभ्या पक्वान्नसुडकादि चूर्णयद्भि आचार्यै प्रोक्त देवी कडडमन्ड दत्तमस्ति । अत पर ममोपासिका त्व इति वचनानतर एव समीपस्थकुमारिका शरीरे आवेश कृत । तत प्रोक्त प्रभो मया अन्य कडडमडड याचित अन्य दत्त । आचार्यै प्रोक्त त्वया वधो याचित स धुलाधु दाधु न बुध्यते इत्यादिसिद्धान्तवाक्य कुमारी शरीरस्था श्रीसच्चिकादेवी सर्वलोक प्रत्यक्ष श्रीरत्नप्रभाचार्य प्रतिबोधिता । श्रीउपकेशपुरस्था श्रीमहावीरभक्ता कृता सम्यक्त्वधारिणी सजाता । आम्ता मांस कुसुममपि रक्त नेच्छति । कुमारिका शरीरे अवतीर्णा सती इति वक्ति भो मम सेवका यत्र उपकेशपुरस्थ स्वयभू महावीरबिंब पूजयति श्रीरत्नप्रभाचार्य उपसेवति भगवन् शिष्य प्रशिष्य वा सेवति तस्याह तोष गच्छामि। तस्य दुरित दलयामि यस्य पूजा चित्ते धारयामि। एतानि शरीरे अवत्तीणा सा कुमारी कथ्यता । श्रीसच्चिकादेव्या वचनात् क्रमेण श्रुत्वा प्रचुरा जना श्रावकत्व प्रतिपन्ना । क्रमेण श्रीरत्नप्रभाचार्य ८४ वर्षे स्वर्ग गत ।

८ तत्पट्टे यक्षदेवाचार्य माणभद्र यक्ष प्रतिबोध कर्त्ता सजम्य विघ्नो निवारित ।

९ तत्पट्टे कक्कसूरि । १० तत्पट्टे देवगुप्तसूरि ।

११ तत्पट्टे सिद्ध सूरि । १२ तत्पट्टे रत्नप्रभ सूरि । १३ तत्पट्टे यक्षदेव सूरि ।

१४ तत्पट्टे कक्क सूरि। स्वयभू श्रीमहावीर स्नात्र विधि काले, कोसौ विधि कथ किमर्थ सजात इत्युच्यते—तस्मिन्नेव देव गृहे अष्टाह्निकास्निकमहोत्सव कुर्वतास्तेषां मध्ये अपरिणतवयसा केषाचित् चित्ते इयदुर्बुद्धि सजाता । यदुत भगवत् महावीरस्य हृदये ग्रन्थी द्वय पूजा कुर्वता कुशोभा करोति अन मशकरोगवत् छेदयिता को दोष । वृद्धै कथित अय अघटित टंकिना घातो न अर्ह । विशेषतो अस्मिन् स्वयभू श्री महावीर बिंबे । वृद्धवाक्यमवगण्य प्रच्छन्न सूत्रधारस्य द्रव्य दत्वा ग्रन्थिद्वय छेदित तत् क्षणादेव सूत्रधारो मृत । ग्रन्थिच्छेदप्रदेशे च रक्त धारा छुटिता । तत उपद्रवो जात । तदा उपकेश-गच्छाधिपति श्रीकक्क सूरिभि पायम्दि चतुर्विधसघेनाहूता वृत्तात कथित । आचार्यै चतुर्विधसघ स-

हिनेन उपवास त्रयं कृत । तृतीय उपवास प्रान्ते गात्रिसमये शासनदेवी प्रत्यक्षी भूय आचार्याय प्रोक्त–हे प्रभो न युक्त कृत बालश्रावकै मद् घटितं बिंब आशातितं । कलानीशक्तं अतोनंतर उपकेशनगर शनै २ उपद्रव भविष्यति । गच्छे विरोधो भविष्यति । श्रावकाणां कलहो भविष्यति । गोष्टिका नगरात् दिशोदिश यास्यंति । आचार्ये प्रोक्तं परमेश्वरि भवितव्यं भवत्येव परं त्व श्रवनु नथिं निवारय । देव्या प्रोक्तं घृत घटेन दधि घटेन इक्षुरस घटेन दुग्ध घटेन जल घटेन कृतोपवासत्रय यदा भविष्यति तदा अष्टादशा गोत्र मेलं कुरु. तेसीं १ तातहड गोत्र । २ बापणा गोत्रं । ३ कर्णाट गोत्रं । ४ बल्ह गोत्र । ५ मोराक्ष गोत्रं । ६ कुल हट गोत्रं । ७ विरिहट गोत्र । ८ श्री श्रीमाल गोत्र । ९ श्रेष्टिगोत्रं । एते दक्षिण बाहु । १ सुचंती गोत्रं । २ आइचणा गोत्र । ३ चारवेडीया गोत्र । ४ भाद्र गोत्र । ५ चींचट गोत्रं (देशलहरशाखा) । ६ कुंभट गोत्रं । ७ कनउजया गोत्रं । ८ डिंड्म गोत्र । ९ लघु श्रेष्टि गोत्रं । एते वाम बाहु स्नात्रं कर्तव्य नान्यथाऽशिवो शान्तिर्भविष्यति । मूल प्रतिष्ठानंतर वीर प्रतिष्ठा दिवमानीत शतत्रये ३०३ अनेहसि त्रयियुगस्य वीरेरस्यत्य भेदोऽजनि दैव योगात् इत्युक्त श्रीमदुपकेशगच्छचरित्र मूत्रे श्लोक–१७३

१५ तत्पट्टे श्रीदेवगुप्तसुरि। १६ तत्पट्टे सिद्ध सूरि। १७ तत्पट्टे रत्नप्रभ सूरि।

१८ एव अनुक्रमेण श्रीवीरात् वर्षे ५८५ श्रीयक्षदेवसूरिर्बभूव महाप्रभावकर्ता द्वादशवर्षे दुर्भिक्षमध्ये वज्र स्वामी शिष्य वज्रसेनस्य गुरो परलोकप्राप्ते यक्षदेवसूरिणा चत्वारि शाखा स्थापिता –

१९ तत्पट्टे कक्कसूरि । २० तत्पट्टे देवगुप्तसूरि । २१ तत्पट्टे सिद्ध सूरि ।

२२ तत्पट्टे रत्नप्रभसूरि । २३ तत्पट्टे यक्षदेव सूरि । २४ तत्पट्टे कक्क सूरि ।

२५ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि । २६ तत्पट्टे सिद्ध सूरि । २७ तत्पट्टे रत्नप्रभसूरि ।

२८ तत्पट्टे यक्षदेव सूरि । २९ तत्पट्टे कक्कसूरि । ३० तत्पट्टे देवगुप्त सूरि ।

३१ तत्पट्टे सिद्धसूरि । ३२ तत्पट्टे रत्नप्रभ सूरि । ३३ तत्पट्टे यक्षदेव सूरि ।

३४ तत्पट्टे ककुदाचार्य । तत्पट्टे देवगुप्ताचार्य । तत्पट्टे सिद्धाचार्य । एतानि पंच उपकेशगच्छाधिपाचार्याणा मूलनामानि । तत्पट्टे कक्कसूरि द्वादश वर्षयावत् षष्ट तपं आचाम्लसहितं कृतवान् । तस्य स्मरणस्तोत्रेण मरोटकोटे सोमकश्रेष्टिस्य शृंखला त्रुटिता । तेन चिंतितं यस्य गुरो नामस्मरणेन बंधनरहितो जात एकवार तस्य पादौ वंदामि । स भरुकच्छे आगत । अटणवेलाया सर्वे मुनीश्वरा अटनार्थ गतास्ति । सच्चिका गुरो अग्रे स्थितास्ति । द्वारे दत्तोस्ति तेन विकल्प कृतं । शच्यका शिक्षा दत्ता मुखे रुधिरो वमति । मुनीश्वरा आगता । वृद्धगणेशेन ज्ञातं भगवन् द्वारे सोमकश्रेष्टी पतितोस्ति । आचार्ये ज्ञात अय सच्चिकाकृत । सच्चिका आहूता कथितं त्वया किं कृत । भगवन् मया योग्य कृतं । रे पापिष्ट यस्य गुरुनामग्रहणे बंधनानि शृंखलानि त्रुटितानि सति स अणाचारे रतो न भविष्यति । परं एतेन आत्मकृतं लब्ध । गुरुणा प्रोक्त कोपं त्यज शांतिं कुरु । तया कथित यदि असौ शान्तिर्भविष्यति तदा अस्माकं आगमन न भविष्यति प्रत्यक्षं । गुरुणा चिंतित भवितव्यं भवत्येव स सज्जाकृत । सच्चिकावचनात् द्वयोर्नाम भंडारे कृता श्रीरत्नप्रभसूरि अपरश्री यक्षदेवसूरि एते सप्रभावा एतदनेहसि अस्य उपकेशगणस्य द्वाविंशति शाखा नामानि दत्तानि—

१ नागेन्द्र २ चन्द्र ३ निर्वृत्ति ४ विद्याधराणा स्थाने १ सुन्दर २ प्रभ ३ कनक ४ मेरु ५ सार ६ चन्द्र ७ सागर ८ हस ९ तिलक १० कलश ११ रत्न १२ समुद्र १३ कल्लोल १४ रग १५ शेखर १६ विशाल १७ राज १८ कुमार १९ देव २० आनन्द २१ आदित्य २२ कुभ इति । तत तेनैव कक्कसूरिणा अबुदाचलमेखलाया तृषार्तस्य सघस्य डट स्थापनेन जल प्रगटि कृत। तेनैव सार्धार्मिक वात्सल्ये जेसलपुरात् भरकच्छे घृतो आनीत ।

३५ तत्पट्टे श्रीदेवगुप्तसूरि । तत्पदमहोत्सवे पाठका पच स्थापिता जयतिलकादि। तेन जयति— लकेन श्रीशान्तिनाथचरित्र निर्मित ।

३६ तत्पट्टे सिद्ध सूरि। ३७ तत्पट्टे कक्क सूरि। ३८ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि।

३९ तत्पट्टे सिद्धसूरि। ४० तत्पट्टे कक्क सूरि। ४१ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि। स० ९९५ वर्ष बभूव।

४२ क्षत्रीयवशोत्पन्नत्वात् वीणावाद्ये तत्पर क्रियाविषय शिथिल । तत चतुर्विधसघेन तत्पट्टे वीस विस्वोपकारक स्थापित श्रीसिद्धसूरि ।

४३ तत्पट्टे कक्कसूरि पचप्रमाणग्रन्थकर्ता। ४४ तत्पट्टे सवत् १०७२ वर्ष श्रीदेवगुप्तसूरि।

४५ तत्पट्टे नवपद प्रकरण—स्वोपज्ञटीकाकर्ता सिद्धसूरि। ४६ तत्पट्टे कक्क सूरि।

४७ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि। ४८ तत्पट्टे सिद्ध सूरि। ४९ तत्पट्टे कक्कसूरि।

५० तत्पट्टे सवत् ११०८ वर्षे देवगुप्त सूरिर्बभूव। भीनमाल नगरे साह भईसाभेन पद महो त्सवे सपादलक्ष धन व्ययो कृत । ततो गुरुणा पादप्रक्षालनेन जले विषापहार दर्शी येन भइसाख श्रेष्ठिना श्री देवगुप्त सूरे पद महोत्सव कृत । स पूर्वं डिडुवाण पूरे भइसा भार्या छगणाणि स्थाप्यते ततो गुरूपदे शेन ज्वालितानि छगणानि रूप्यमयानि भवति ततो तेन रूप्येन गद्दहिया मुद्रा पातिता । भइसाख माता श्री शत्रुजय यात्रागता सरल वुच्यते पत्तन मध्ये इश्वरश्रेष्ठिन पार्श्वे स्वरचो याचिता । तेन पृष्ट भवती कस्य माता तेन कथित अह भइसाख माता । तेन हसित अस्माक गृहे पानीयमानयति तेषा माता इति वित र्किन। ततोऽनन्तर पश्चात् धन गृहीत्वा यात्रा कृत्वा सघभक्ति कृत्वा गृहे जगाम। पुत्रेण पृष्ट मान मम क्रियत्भूमौ नाम वर्तते । माता कथित भवता प्रतोली द्वार यावन्नाममस्ति । तेन वचनेन असतोषो जात । श्रेष्टि हास्यवचन कथित । तद्वचन वालयिष्यामि तदा द्वितीय वेला भोजयिष्यामि । एव प्रतिज्ञा कृत्वा पत्तने सामान्यरूपे द्वार हट्टे गत । भो श्रेष्टि रूप्य ग्रहिष्यामि । तेन कथित रोपभरेण वर्लिनिदानयिष्यामि तत्सर्वं गृह्णामि । सचरारो यानित तेन युष्माभिर्नीयते सवालक्ष मुद्रिका दत्ता । ततो गद्दभशतानि भारयरवा पत्तने जगाम। पृष्ट एतावद्धि रूप्य वर्तते एव श्रुत्वा श्रेष्टिन चमत्कृता स श्रेष्टि समग्र पत्तनश्रेष्टि मेल यित्वा चरणे पपात । भइसाभस्तेव कथित गुर्जरधरीत्रीमध्ये महिषेण पानीयमानयेतु तदा मोचयामि । तद्धन देशे सप्तक्षेत्रे व्ययो कृत । ततो गाल्हिया इति शाखा जाता ।

५१ तत्पट्टे श्री सिद्धसूरि । ५२ तत्पट्टे श्री कक्कसूरि सवत् ११५४ वर्ष बभूव । येन हेमसूरि कुमारपाल वचसा श्वपादीना मुनिवरा निष्कासिता ।

५३ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि येन रूप द्रव्य त्यजित । ५४ तत्पट्टे श्री सिद्धसूरि ।

५५ तत्पट्टे सवत् १२५२ श्री कक्कसूरिर्बभूव येन मरोट कोट प्रगटी कृत ।

॥ श्रीरत्नप्रभसूरिस्तोत्रम् ॥
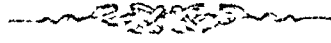
॥ श्रीमद्रत्नप्रभसूरिसद्गुरुभ्यो नमः ॥

वामेयपट्टे शुभदत्तनामा तच्छिष्यजातो हरदत्तमुख्यः ॥
आर्याम्बुधि केशी स्वयंप्रभोपि सूरीशरत्नप्रभलब्धिपात्र ॥ १ ॥
भव्यावलीकमलकाननराजभृंग श्रियं प्रवृत्तिमुनिमानसराजहंस ॥
श्रीपार्श्वनाथपदपंकजचंचरीक रत्नप्रभं गणधरं सततं स्तवीमि ॥ २ ॥
विद्याधरेन्द्रपदवीकलितोपि काम श्रीमत्स्वयंप्रभगिर. परिपीय योत्र ।
दीक्षावधूमुदवहन्मुदमादधानो रत्नप्रभस्स दिशतात्कमलाविलास ॥ ३ ॥
मंत्रीश्वरोहडसुतो भुजगेन दृष्ट सज्जीवित सकललोकसभासमक्ष ।
यस्याङ्घ्रिवारिरुहपुष्करसिंचनेन रत्नप्रभस्स दिशतात्कमलाविलास ॥ ४ ॥
मिथ्यात्वमोहतिमिराणि विधूय येन भव्यात्मना मनसि निरस्तेव विश्वे ।
सद्गीत सकलदर्शनतत्त्वरूप रत्नप्रभस्स दिशतात्कमलाविलासं ॥ ५ ॥
येनोपकेशनगरे गुरुदिव्यशक्त्या कोरटके च विदधे महती प्रतिष्ठा ।
श्रीवीरबिम्बयुगलस्य वरस्य येन रत्नप्रभस्स दिशतात्कमलाविलास ॥ ६ ॥
श्रीसत्यिकाभगवती समभूत्प्रसन्ना सर्वज्ञशासनसमुन्नतिवृद्धिकर्त्री ।
यद्देशनारसरहस्यमवाप्य सम्यक् रत्नप्रभस्स दिशतात्कमलाविलासं ॥ ७ ॥
गृह्णति यस्य सुगुरोर्गुरुनाममन्त्रं सम्यक्त्वतत्त्वगुणगौरवगर्भितं ये ।
तेषा गृहे प्रतिदिन विलसति पद्मा रत्नप्रभस्स दिशतात्कमलाविलास ॥ ८ ॥
कल्पद्रुम करतले सुरकामधेनु–श्चिंतामणि· स्फुरति राज्यरमाभिरामा ।
यस्योल्लसत्क्रमयुगाम्बुजपूजनेन रत्नप्रभस्स दिशतात्कमलाविलासं ॥ ९ ॥

इत्थं भक्तिभरेण देवतिलकश्चातुर्यलीलागुरो
श्रीरत्नप्रभसूरिराजसुगुरो· स्तोत्रं करोति स्म च ।
प्रात काव्यमिद पठत्यविरतं तस्यालये सर्वदा ।
सानंद प्रमदेव दीव्यतितरा साम्राज्यलक्ष्मी· स्वयं ॥ १० ॥

इति ओएसनगरे सपालक्षश्रावका. प्रतिबोधिता ओएसवालज्ञाति स्थापिता तस्य स्तोत्रमिद प्रातर्व्याख्यान पद्धतौ प्रत्यह पठनीय ॥ संपूर्ण ॥ ग्रथाग्रंथ ॥ २१९ ॥ श्रीरस्तु ॥

जैन साहित्य संशोधक समिति

पेट्रन

श्रीयुत हीरालाल अमृतलाल शाह बी ए मुंबई

वाइस पेट्रन

श्रीयुत केशवलाल प्रेमचन्द मोदी बी ए एलएल बी वकील अमदावाद

श्रीयुत अमरचंद घेलाभाई गांधी, मुंबई

सहायक

शेठ परमानन्ददास रतनजी, मुंबई

श्रीयुत मनसुखलाल रवजीभाई मेहता, मुंबई

शेठ कान्तिलाल मगलभाई हाथीभाई पूना

शेठ रूपचन्द मणीलाल शाह, पूना

शेठ बाबूलाल ज्ञानचंद भगवानदास झवेरी, पूना

सभासद

श्रीयुत बाबू राजकुमार सिंहजी बद्रीदासजी, कलकत्ता

श्रीयुत बाबू पूरणचन्दजी नाहार एम् ए एलएल बी कलकत्ता

शेठ लालभाई कल्याणभाई झवेरी, बडोदरा (मुंबई)

शेठ नरोत्तमदास भाणजी, मुंबई

शेठ माणेकदास, त्रिभुवनदास भाणजी, मुंबई

शेठ त्रिभुवनदास भाणजी जैन कन्याशाला, भावनगर

शेठ देवकरणभाई मूलजीभाई, मुंबई

शाह मोतीचंद नथुभाई मूलजीभाई, मुंबई

शेठ गुलाबचंद देवचंद, मुंबई

श्रीयुत मोतीचंद गिरधरलाल कापडिया, बी ए एलएल बी सालिसीटर, मुंबई

श्रीयुत केशरीचंदजी भंडारी, इन्दौर

शाह अमृतलाल एण्ड भगवानदास कं० मुंबई

शाह चतुलाल वीरचंद कृष्णाजी, पूना

शेठ आधारजी मोतीलाल, पूना

शाह धनजीभाई बलवन्त साणंदवाळा (अमदावाद)

शाह बाळुभाई नानचंद, शेगाम (उमरेड)

शाह चुनिलाल झवेरचंद, मुंबई

शाह भायीलाल चुनिलाल, सोलापुरबझार, पूना कैंप

पाली, प्राकृत, संस्कृत, गुजराती. हिन्दी भाषानां

केटलांक उत्तम पुस्तको

१ प्राकृत कथासंग्रह. स० मुनि जिनविजय (पुरातत्त्वमन्दिर ग्रंथावली) ०—१४—०
२. पाली पाठावली. " " " ०—१२—०
३. कुमारपाल प्रतिबोध (प्राकृत ऐतिहासिक ग्रंथ; गायकवाड सीरीझ) ७—८—०
४. हरिभद्राचार्यस्य समयनिर्णय (जै. सा. स. ग्रंथमाळा) ०—४—०
५ प्राकृत व्याकरण संक्षिप्त परिचय " " ०—४—०
६. सुपासनाह चरिय (प्राकृत भाषानो महान चरित्रग्रंथ) ७—८—०
७. सुरसुन्दरी चरिय (प्राकृत भाषामां एक सुंदर कथा) २—८—०
८. उपकेश गच्छीय पट्टावली (संस्कृत) ०—४—०
९. गुणस्थानक्रमारोह (हिन्दी भाषान्तर—विस्तृत विवेचन) १—४—०
१०. परिशिष्ट पर्व (हिन्दी भाषामां उत्तम भाषांतर) १—४—०
११. छेदसूत्राणि (आचार कल्प—व्यवहार—निशीथ सानना त्रण छेदसूत्रो बहु शुद्ध अने उत्तम पद्धतीए छपावेलां छे.जे अत्यंत दुर्लभ छे घणी थोडी नकलो छपावेली छे) २—८—०
१२. मातृशिक्षा (सुन्दर हिन्दी भाषांतर) ०—८—०
१३. जैन धर्मनुं अहिंसातत्त्व (तात्त्विक विवेचन) ०—४—०
१४. सुखी जीवन (वांचवालायक शान्तिप्रद सुंदर गुजराती पुस्तक) १—०—०
१५. नयकर्णिका (उत्तम गुजराती विवेचन) ०—६—०

ए सिवाय, आत्म तिलक ग्रन्थ माळामां छपाएला नाना मोटां पुस्तको जे प्रभावना करवा लायक होई नासर्ना किंमते ज वेचवामां आवे छे ते पण नीचेनां ठेकाणे मळे छे.

गुजरात पुरातत्त्वमंदिर,
एलीस ब्रीज,
अहमदाबाद (गुजरात)

भारत जैन विद्यालय,
पूना सिटी (दक्षिण)

मुद्रक—पृष्ठ १–३२ जैन साहित्य मुद्रणालय. पृ० ५७–८० चित्रशाला प्रेस; और बाकी सब—हनुमान प्रेस, सदाशिव पेठ, पूना सीटी.—प्रकाशक चिमनलाल एल् शाहा, भारत जैन विद्यालय, पूना शहर.

मुद्रक— श्रीयुत [illegible] हरगोविन्ददास रामजी शाह सुरत

खंड २) जैन (अंक २

साहित्य संशोधक

(जैन इतिहास साहित्य तत्त्वज्ञान आदि विषयक सामयिक पत्र)

संपादक—

मुनि श्रीजिनविजयजी M R A S

विषयानुक्रमणिका

परिशिष्ट

प्रकाशक—

जैन साहित्य संशोधक कार्यालय.

स्थान–भारत जैन विद्यालय–पूना शहर

ज्येष्ठ विक्रम सं. [illegible]] महावीर नि. सं. [illegible] [जून ई. स. [illegible]

ग्राहक वर्गने नम्र निवेदन.

जैन साहित्य संशोधनना अंको नियमित समये ग्राहकोने नथी मळी शकता तेथी अनेक सज्जनो अकळाय छे अने केटलाकने तो संपादक सुधीने ठपकाना पत्रो लखवा जेटली तस्दी लेवी पडे छे. आ स्थिति जिज्ञासु अने ज्ञानपिपासु सज्जनोने जेटली असह्य लागे छे ते करता मने पोताने अनेक गणी दुःखभरी लागे छे. परंतु ए स्थितिमा परिवर्तन करवानी बनती कोशीशो करवा हु केटलो उत्सुक छु एनी कल्पना ग्राहकोने शीरीते करावी शकु? आ खंडनो १ लो अंक गया वर्षना जेठमासमा प्रकट थयो हतो. ते पछी आजे पाछो. आ वर्षना जेठ मासमा, आ बीजो अंक प्रकट थाय छे एटले वर्षमा एक अंक बहार पड्यो. बारबार महिना सुधी ग्राहकोने अंक न मळे अने ते बदल जो ग्राहक योग्य फर्याद करे तो तेमा तेमनो जराए दोष हु काढी न शकु उलटु, हु तो एवा सज्जनोनो आभार ज मानु. जैनसाहित्य संशोधकना ग्राहक वर्गमा ५-७ पण सज्जनो एवा ज्ञानपिपासु छे के जेओ एना अंकनी कागने डोळे वाट जोया करे. ते जोई-जाणीने मने तो एक प्रकारे संतोष ज थाय छे.

हवे, आ पत्रनी आटली बधी अव्यवस्था केम छे. ते संबंधमा बे वातो ग्राहकोने कही दउ आ पत्रनु कार्यालय जे छे ते फक्त आ अक्षरो लखनार माणसनु एक फुट पहोळु अने छ फुट लांबु दुर्बळ शरीर छे ते ज मात्र छे. ए करता वधारे साधन-संपत्ति हजी सुधी मेळवी थई नथी. अने तेमा वळी आ शरीर जेम आ पत्रनु कार्यालय बनी रह्यु छे तेवी ज रीते बीजा पण एवा केटलाए कार्योनु कार्यालय थई रहेलु छे लेखो तैयार करवानी शुरुआतथी लई अंकने ठेठ पोष्टमा नाखवाजवा सुधीनी सघळी क्रियाओ ज्या एक ज शरीरने करवानी होय त्या बार-महिने पण एक अंक प्रकट थई जाय छे ते माटे जो हु मारी जातने शाबाशी आपवानी ग्राहको पासे मागणी करू तो तेमणे ते खुशीथी आपवी जोईए.

आम छता, हु पत्रने जेमबनेतेम वधारे नियमित करवानी कोशीश तो कर्या ज करू छु. पण तेनी सफळतानो आधार ग्राहकोनी ज्ञानरुचि उपर रहेलो छे जो ग्राहक संख्या संतोषजनक प्रमाणमा होय तो एकाद व्यवस्थाकरनार मनुष्यनी गोठवण कार्यालय करी शके अने ते द्वारा उपरनी केटलीक व्यवस्था नियमित थई शके. ग्राहकसंख्या अत्यारे तो नामनी ज छे, अने पत्र पाछळ थता खर्चनो चोथो भाग पण पूरो ग्राहकोना लवाजमथी कार्यालयने मळतो नथी. आवा खोटना मार्गे कोई पण पत्र चाली शकतु नथी ए सौ कोई जाणे छे. वधारे नहि तो पांचसो ग्राहक पण जो पूरा मळी रहे तो पत्रनो कारभार ठीकठीक नभी शके. आवडा मोटा अने सुसंपन्न जैन-समाजमाथी आवा पत्रने एटला पण ग्राहको न मळे ते समाजने लज्जाकारक छे ए बाबतमा ग्राहकवर्ग जो सहज प्रयत्न करे अने दरेकजण अकेक बब्बे बीजा नवा ग्राहको मेळवी आपे तो सहेजे एटली ग्राहक संख्या पूरी थई रहे तेम छे. शु सज्जन ग्राहको आनो उत्तर आपवानी उदारता अने पोतानी साहित्यप्रियता बताववा कमर कसशे?

—संपादक

त्रीजो अंक तैयार थाय छे.

त्रीजो अंक लगभग अडधा उपर छपाई गयो छे. एमा खासकरीने खरतर गच्छनी अनेक पट्टावलियो अने महत्त्वना लेखो आवशे. खरतरगच्छनो उज्ज्वल इतिहास जाणवानी इच्छावाळाए आ अंक अवश्य जोवो जोईए.

—व्यवस्थापक

॥ ॐ अर्हम् ॥

॥ नमोऽस्तु श्रमणाय भगवते महावीराय ॥

जैन साहित्य संशोधक

'पुरिसा! सच्चमेव समभिजाणाहि । सच्चस्साणाए उवट्ठिए मेहावी मारं तरइ ।'

' जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ, जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ ।'

' दिट्ठं, सुयं, मयं विण्णायं, जं एत्थ परिकहिज्जइ ।'

—निर्ग्रन्थप्रवचन- आचारांगसूत्र ।

खंड २] [अंक २

श्री महावीर-निर्वाण समय-निर्णय

[इन्डियन एन्टीक्वेरी, भाग ४३ मां, प्रकाशित, जार्ल चार्पेन्टीअर, पीएच. डी., उप्सला, ना इंग्रेजी लेखनो अविकल अनुवाद]

'केम्ब्रीज हिस्टरी ऑफ इन्डिआ' पु १ मां जैनोना इतिहास विषेनुं प्रकरण लखती वखते महावीरना निर्वाणनो समय नक्की करवानी मने खास जरूर पडी हती. परन्तु आ महत्त्वना प्रश्न उपरनां अनेक प्रमाणोनो ऊहापोह करवानो तेमां पूरतो अवकाश नहि मळवाथी प्रवर्तित जैन धर्मना संस्थापकना समय विषे में जे अभिप्राय बांध्यो छे तेना मूळभूत तत्त्व विचारोने अहीं दर्शाववानुं मने अनुकूल लाग्युं छे. वळी प्रो. जेकोबीए जैनधर्मना अभ्यासमां अगत्यनां पुस्तको—कल्पसूत्र तथा सैक्रेड बुक्स ऑफ धी ईस्ट पु २२—नी प्रस्तावनामां महावीरना समय माटे[1] सबळ प्रमाणोथी पण संक्षेपमां, जे संकुचित नयथी थोडा भाग पडी आ विषय उपर कोई पण पूरेपूरी चर्चा करवामां आवी नथी तेथी ए विषयने अन्य कोईथी उपाडवो अस्थाने नहि गणाय. प्रो. जेकोबीनी पासे जे प्रमाणो हतां लगभग तेवां ज प्रमाणो मारी पासे छे तो पण मारा आ लेखमां घणे भागे तेमनां कथननुं पुनरावर्तन थशे अने पछी तेमना

[1] महावीरना समय विषे मारा पहेलांना विद्वानोना अभिप्रायो माटे जुओ—लास्सन ... पु ३ पा १४७ इ. थॉमस पु ८ पा ३ पाटक पु १२ पा १ प्रोफेसर जेकोबीना लखवा प्रमाणे आ बधा ... छे तेथी मारा लेखमां ए जूना लखाणो विषे हुं उल्लेख करवानो नथी.

विकास करवामां आवशे घणा वर्षे उपर एमणे महावीरना समय विषे जे अभिप्राय बांध्यो हतो, परंतु जेने आ विषयना अभ्यासी विद्वानोए उपाडी लीधो नथी, ते ज अभिप्राय आ तपासना अंते मारो पण थशे एम सर्वने मालुम पडशे.

जैन धर्म विषेना उपयोगी निबंधोमां. एटले के-हॉर्नेल, प्रोसी० ए० एस्० बी० १८९८, पृष्ठ ३९ अथवा गुरीनॉट, बीब्लीऑग्राफी जैन, पृ० ८ मां. महावीरना अवसाननी तिथि इ. स. पूर्वे ५२७ कही छे. पोताना आ धर्मगुरुनुं निर्वाण विक्रम पहेलां ४७० वर्षे थयुं एम श्वेताम्बरो माने छे, तथा विक्रम पहेलां ६०५ मां थयुं एम दिगंबरो माने छे आ वात सर्वने सुविदित छे आ बे तिथिनी वच्चे जे १३५ वर्षनो तफावत छे ते विक्रम संवत् (इ स पूर्वे ५७) अने शक संवत् (इ स ७८) वच्चेना तफावत जेटलो छे, तेथी प्रो जेकोबी जणावे छे ते प्रमाणे, [2] एटलुं स्पष्ट थाय छे के दिगंबरोए शालिवाहन अने विक्रम ए बे नामनो मांहोमांहे गुंचवाडो कर्यो छे,—अने आवी भूल घणी वार थती जोवामां आवे छे उपलक नजरे जोतां आपणने आ वात एकाएक खरी लागे छे परंतु जेकोबी अने बीजा विद्वानोना कहेवा प्रमाणे ज्यारे आपणे बारीक तपास करीए छीए त्यारे मालुम पडे छे के आ कथनने सबळ प्रमाणोनो आधार नथी इ स. पूर्वे ५२७. नी तिथि विषे बे मुद्दाओ विचारवा योग्य छे:-

(१) महावीरना निर्वाणनो समय अने विक्रमना इ स पूर्वे ५७ मां राज्यारूढ थयानो समय, आ बेनी वच्चेनां ४७० वर्षना संबंधमां जैनोनां कथनो. अने

(२) बुद्ध जे मारा मत प्रमाणे (के जे हुं आगळ समजावीश) इ स पूर्वे ४७७ मां अवसान पाम्या तेमना समकालीन महावीर हता एवुं सप्रमाण साबित थएलुं छे, ते उपरथी महावीरना निर्वाण माटे इ स पूर्वे ५२७ नी मीति खरी होवानो संभव छे या असंभव

अंते मारा लेखना छेल्ला (३) भागमां, हेमचंद्रे दर्शावेली सांप्रदायिक हकीकत विषे चर्चा करी तेमांथी शुं परिणामो आवे छे तेनो विचार करीश

१. जैन कालगणना अने तेनो आधार.

प्रख्यात जैन लेखक मेरुतुंगे वि सं १३६१=इ स १३०४ मां प्रबन्धचिंतामणि नामक ग्रंथ रच्यो अने त्यारपछी लगभग बे वर्षे विचारश्रेणि नामे ग्रथ रच्यो जे भाउ दाजीना [3] कहेवा प्रमाणे तेना थेरावली ग्रंथनी टीका रूपे छे आ ग्रंथमां वीर संवत् अने विक्रम संवत्ना समन्वय माटेना आधार रूपे ते प्रसिद्ध गाथाओ आपेली छे जेनुं प्रथम अवतरण बुल्हरे [4] आप्युं हतुं अने त्यारपछी जेनी चर्चा जेकोबीए करी हती गाथाओ आ प्रमाणे छे:-

जं रयणि कालगओ अरिहा तित्थंकरो महावीर ।
तं रयणि अवंति-वई अहिसित्तो पालगो राया ॥ १ ॥
सट्ठी पालग-रण्णो पणवण्णसयं तु होइ नन्दाण ।
अट्ठसयं मुरियाणं तीसं चिय पूसमित्तस्स ॥ २ ॥

---

2 कल्पसूत्र, पा. ७. ८ जुओ—जर्नल, बॉ० ब्रॅ. रॉ ए. सो. पु. ९, पा. १४७ मेरुतुंगना बीजा ग्रंथो, अने अर्वाचीन लखाणोमा आवेला तेना विषेना उल्लेखो विषे जुओ वेबरनुं कॅटेलॉग, पु २, पा १०२४.

4 इंडि० एन्टी० पु २, पा ३६२

आवा बीजा मौनि विषेनां जैनोनां कथनो संबंधी एक बाबत उपर खास भार मुकवानो छे, अने ते ए के सर्व ग्रंथकारो विक्रम संवतनी स्थापना उज्जयिनीना राजा विक्रमादित्ये करी एम माने छे पण कीलहॉर्ने [9] घणा वखत थयां सिद्ध कर्यु छे के इ. स पूर्वे ५७ थी शरु थता संवत्साथे. उज्जयिनीना राजा विक्रमादित्य, के जे कदाचित जगत्मां थयो पण नहि होय, तेनो संबंध घणो पाछळ थी स्थापित थयो छे अने ए विक्रम संवतनो सौथी प्रथम उल्लेख, संवत् ८९८=इ स ८४२ ना धोळपुरना एक लेखमां करवामां आव्यो छे तथा ते संवतनी साथे विक्रमना नामनुं जे जूनामां जूना साहित्यमां कथन थएलुं छे ते धनपाळना पाइयलच्छी (वि सं १०२९ इ. स ९७२) अने अमितगतिना सुभाषितरत्नसंदोह (वि. सं १०५० इ. स. ९९४) ग्रंथमा छे [10] आ प्रमाणे जो आपणे गणना करिए तो आपणने जणाशे के विद्यमान रूपमां तो आ श्लोको घणा जूना होई शके नहि, एटले के कदाच इ. स ना ८मा अगर ९ मा सैकाना हशे पण आ तो मात्र सूचना ज छे अने आ श्लोकोमां आपेली. महावीरना अवसान अने इ. स. पूर्वे ५७ मां शरु थएला संवत्नी वच्चेना काळमां थएला राजाओनी गणतरी, आ संवत्नो उज्जयिनीना काल्पनिक राजा विक्रमादित्य साथे कोई पण रीतिए संबंध थयो, तेना घणा वखत पहेलां हयात हशे.

ए गाथाओमां करेलां कथनो जरा गूढ लागे छे अहीं अवंतीना राजा पालकने नंद अने मौर्य वंशो साथे, मगधना पुष्यमित्र साथे तथा गर्दभिल्ल, जेने अन्य स्थळे विक्रमादित्यना पिता तरीके वर्णववामां आव्यो छे तेनी साथे, तेम ज पश्चिम हिंदना केटलाक राजाओ साथे अने हिंदना उत्तर-पश्चिम खुणाना अनार्य राजवंशोना शकनी साथे एकत्रित करवामां आव्यो छे जेकोबीए [11] जणाव्युं छे के आ यादी के जे प्रथमथी ज मगधराजाओनां नाम आपवा माटे रचाई हशे, कारण के महावीर तेज देशना हता, तेमां अवन्तीना राजा पालकनुं नाम आवे ए वात शंकास्पद छे त्यारे आ पालक ते कोण? खरेखर आ पालक बीजो कोई नहि पण ते अवन्तीना प्रद्योतराजानो पुत्र अने वारस तथा वत्सना प्रसिद्ध राजा उदयननी [12] राणी वासवदत्तानो भाई, जे पालक नामे ओळखाय छे ते ज छे आ उदयन महावीर तथा बुद्धनो समकालीन हतो तेथी तेनो साळो पालक लगभग महावीरना निर्वाण समयमां राज्यारूढ थयो होय ए संभवित छे परंतु महावीरना समयमा के त्यारपछी मगधमा शासन करता शिशुनागना वंश साथे ए पालकने कोई पण जातनो संबंध नथी. पण आ यादीमां तेनुं नाम आववाथी आपणने गाथाना मूळविषयक प्रश्नना निराकरण माटे एक अमूल्य कुंची मळे छे कारण के उपर जणाव्या प्रमाणे हालना रूपमां तेओ आधुनिक छे, अने तेथी ज्यारे मगधना राज्य साथे जैन लेखकोनो संबंध रह्यो न हतो ते वखतमां रचाएली छे पण तेमा जणावेला ४७० वर्षमांथी २९३

---

9 इन्डि एन्टी० पु २०, पा ३९७

10 समय निर्णयना जरा तफावत माटे (इ स ९९३ अगर ९९४), सरखावो स्मीट (Schmidt) अने हर्टल (Hertel), Z D M G 59, 297

11 कल्पसूत्र, पा ८

12 भाऊ दाजीना कहेवा प्रमाणे मेरुतुंगे स्पष्ट जणाव्यु छे के जे रात्रे महावीरनु निर्वाण थयु ते ज रात्रे प्रद्योतनु मरण थयु, जर्नल बो ब्रॅ रॉ ए सो पु ९, पा १४७ मृच्छकटिकमा जे नाम आवे छे ते एनु छे के नहि ते कही शकाय तेम नथी पण ते नाटकमा तेना अने उदयनना सबंध विषे कोई सावति न होवाथी हु ए वात संभवित धारतो नथी परन्तु त्रिवेन्द्रम् ग्रंथमाळामा छपातु चारुदत्तनु मूळ मळशे त्यारे कदाच आ प्रश्न उपर काइक अजवाळु पाडी शकाशे

जटला वष सुधाना ता मगधना खरा ऐतिहासिक राज्यकर्ताओने गणाव्या छ, तेथी एम चोक्कस अनुमान थइ शके के मगधराजाओना खरा नाम अपनारी जूनी तवारीखोमाथी आ नामो लीधा हशे आ यादीमा छेल्ला नामो उज्जयिनाना राजाओना आवे छे गर्दभिल्ल पण उज्जयिनीनो राजा हतो, तेनो पुत्र विक्रमादित्य तेओमा घणो प्रख्यात हतो तथा जैन लोकोए इस्वी सनना पहेलाना सैकाओमा हिंदना पश्चिम भागमा घणो अगत्यनो भाग भजव्यो हतो, तेम ज तेमने उज्जयिनी साथे घणो सबध हतो,एटला माटे तेमने उज्जयिनीना राजाना नामथी आ यादी शरु करवी तथा तेना ज नामथी इति करवी ए अनुकूळ लाग्यु हशे विशेषमा एम पण एक अनुमान थइ शके के मौर्यराजाओनी पडतीथी ज जैनोना मगध अने पूर्वहिंद साथेनो सबध तूटी गया हतो यादीनी गुजवाडा भरेली वातो उपर थी तथा बीजा वधारे निश्चित प्रमाणो13 उपरथी आपण एम धारी शकीए के पुष्यमित्र घणो ज धर्मद्वेषी हतो अ यना तो एना धराजोथी तेमने घणु सहन करवु पडयु हतु ते समय पछी खरा रीते मगधराज्य विषे तेओ कशु जाणता न हता 14 मगध देशना आ राजाओना यादीमा पालकनु नाम कम आव्यु तेना विषे प्रो जकोबीए 15 एक गुचवण भरेलो तर्क बाध्यो हतो ते एवो के प्रथमताए अजातशत्रुना पुत्र अने वारस उदायिनने बदले भूलथी पालकना बनेवा उदयनने गण्यो अने तेथी उज्जयिनीना पालकनु नाम आ प्रमाणे ए यादीमा आवी गयु मे उपर समजाव्यु छे ते प्रमाणे हु धारतो नथी के पालक मूळ यादीमा होय पण जो तेमा तेना नामनी ह्याती माटे काइ कारण आपवु होय तो हु सरळ रीते ग्राह्य थाय तेवी बीजी सूचना करू छु कल्प सूत्र १४७ (जकोबी—संपादित पा ६७) मा एम कहेवामा आव्यु छ के महावीर ज्यारे छेल्ला पावा (अगर पापा) मा रह्या हता त्यारे हस्तिपालकनी लेखकोवाळी सभामा (रज्जुसभा) निर्वाण पाम्या आ राजानु नाम कल्पसूत्र १२३ मा पण आवे छे ज्या तेने हथिपाल कहेलो छ, अने जकोबीए से० बु० इ०, पु० २२, पा० २६४, २६० ए बन्ने ठेकाणे हस्तिपाल एम नाम वापर्यु छ पण हस्तलिखितग्रथ बन्ने फकराओमा हत्थिपाल अने हात्थपालग एम रूप आपे छे, अने पाछलु रूप जकोबीए कल्प० १४७मा आपेलु छे आ उपरथी एम स्पष्ट थाय छे के तेनु नाम हस्तिपाल अगर हस्तिपालक हतु आ बाबत उपर काइ भार मूकवानी जरूर नथी, कारण के तेमाथी वधारे जाणवानु आपणने काइ कारण नथी हवे हस्तिपाल (क) ने घरगतु भाषामा पालक पण कहेता होय ता ते सभवित छे अने मानी शकाय तेम छे; तेम ज आ राजा महावीरना निर्वाण साथे घणा निकटनो सबध धरावनारा होवाथी आपणे एम सूचवी शकिए के महावीरना निर्वाणनी रात्रिए तेने अभिषेक करवामा आव्यो हतो एम पाछळथी कहेवामा आव्यु हशे मारा अभिप्राय प्रमाणे, कोइक पालक जेने पश्चिम हिंदमा जैनोमा प्रसिद्ध थएला ए ज नामना अवन्तीना राजाने बदले पाछळथी भूलथी गण्यो हशे, तेनो आ यादीमा अस्तित्व भोगववानु आवा पुरतु कारण मळी शके 16 परतु उपर जणावेला केटलाक कारणोने लीधे

13 सरखावो वी ए स्मीथ अर्ली हिस्टरी ऑफ इडीआ पा १८८

14 पूर्वहिंदमा कलिंगना राजा खारवेल जैनोनो रक्षक हतो परतु आ रक्षक पशु थाने यवन राजा हता जेना पोताना ए आ स्वयभूत राजाना नामोल्लेख पण करता नथी तेम ज तेनी मीति पण अनिश्चित छ

15 कल्पसूत्र पा ८

16 पावानो हस्तिपाल (क) राजा कपिलवस्तुना शुद्धोदननी माफक अगर कुण्डग्रामना सिद्धार्थनी माफक एक नाना ठाकोर हशे तेथी हु धारु छु के प्रमाण कोइ पण इतर जैन अगर ब्राह्मण ग्रथोमा तेनु नाम मळी आवतु नथी आ उपरथी एम जणाय छे के एनु नाम याद रहेवानु कारण ए ज के एना राज्यमा महावीर निर्वाण पाम्या अने तेथी ए पण स्पष्ट थाय छे के आवा नानो राजा तेना नामना मोटा राजाने बदले भूलथी गणवामा आवी जाय

आ पालक राजा महावीरनो समय नक्की करवामां, अने महावीर निर्वाण तथा विक्रम संवत्नो प्रारंभ ए बेनी वच्चेनो समय पूरो करवामां, उपयोगी थाय तेम नथी

हाल तुरत आपणे आ श्लोकोमां आपेलो नंदोनो समय (१५५ वर्ष), मौर्योनो समय (१०८ वर्ष) तथा पुष्यमित्रनो समय (३० वर्ष) तपासमां लेता नथी तेनो विचार आगळ उपर करीशुं हमणां विक्रमसंवत् पहेलां ११७ वर्ष सुधीना, एटले के लगभग इ० स० पूर्वे १७४-५७ सुधीना राजाओ विषे हुं बोलवा मागुं छुं. आ राजाओ नीचे प्रमाणेः

बलमित्र अने भानुमित्र, ६० वर्ष राज्य
नहवहण (नभोवाहन), ४० " "
गर्दभिल्ल १३ " "
अने शक ४ वर्ष राज्य

आ राजाओनी विचित्र यादी विषे कांई पण निश्चित रीते कहेवातुं नथी नहवहण जेने बदले बुल्हर अने जेकोबी नभोवहन लखे छे तेनुं नाम बीलकुल जाण्यामां नथी 17 तेने माटे एक ज सूचना थई शके के मौर्य राज्यनी पडतीनो समय अने विक्रमसंवत्ना आरंभनो समय ए बेउनी वच्चमां पश्चिम हिंदमां ए कोई नानो राजा थयो हशे. वळी, जो के बलमित्र अने भानुमित्रना नाम बीजे स्थळे जोवामां आवे छे तो पण एमने माटे पण उपरोक्त कथन ज कहेवुं योग्य थशे. जेकोबीए प्रसिद्ध करेली, जरा गुंचवाडा भरेली कालकाचार्यनी वार्तामां, पा० २६८ उपर आपणे वांचीए छीए के आ राजाओ जे कालकना भत्रिजा थता हता तेओनुं राज्य भरुकच्छ (भरुच) मां हतुं, तथा तेओ जैनधर्म प्रत्ये मित्राचारीथी वर्तता हता ए वार्तामां कह्या-प्रमाणे कालके रोषे भराईने, पोताना शत्रु उज्जयिनीना राजा गर्दभिल्लने मारवाने, शक लोकोने हिंदमां बोलाव्या हता ते उपरथी आ बे राजा विक्रमना समयथी जरा ज आगळ थया हता एम कही शकाय. एक अगर त्रण 18 कालकोनी वार्तानो वधारे गुंचवाडो करवानुं मूकी दईने हुं एटलुं ज कहुं छुं के कालक एक ज थयो हतो जे महावीर पछीनो २३ मो 'स्थविर' हतो. तथा कल्पद्रुमनी 19 पूरवणीमां कह्या प्रमाणे निर्वाण पछी ३७६ मा वर्षमां विद्यमान हतो, एटले के इ. स पूर्वे ५२७ थी गणीए तो इ स पूर्वे १५१ मुं वर्ष आवे. तपागच्छनी 20 पट्टावलीमां कहेलुं छे के आ कालक महावीर पछी ३७६ अगर ३८६ वर्षे, एटले के इ स पूर्वे १५१ अगर १४१ मा पंचत्वने पाम्यो, अने आ समय उपरोक्त श्लोकोमां बलमित्र अने भानुमित्र विषे निर्णीत करेला समय साथे बराबर मळतो आवे छे, कारण के तेओ बंनेए ६० वर्ष सुधी एटले इ. स. पूर्वे १७४-१७२ अने ११४-११२ नी वच्चमां राज्य करेलुं मानवामां आवे छे. परंतु हुं तो आ वातने, तेम ज उपरोक्त श्लोकोने जरा पण अगत्यता आपी शकतो नथी.

---

17 जो आ **नहवाण** नाम कांई पण उपयोगनु होय अने ते सत्रप राजा **नहपान** जे इ स ८०—१२५ मा थयो हतो एम मानवामा आवे छे, ते ज ए होय, तो आ यादी पाछला भागमाथी नकामी नीवडे पण वस्तुस्थिति आ प्रमाणे नथी एम मानवाने मने कारणो मळे छे (१) गमे तेवा गुंचवाडा भरेली वंशावळी होय तो पण **नहपान** ने विक्रम पहेला मूकवो ए असंभव छे, अने (२) जो, ते **नहपान** ज होय, तो चोक्स रीते तेनु नाम कालकाचार्यनी वार्तामा आववु ज जोईए, के जे वार्तानो विषय विक्रमनी पहेला हिंदमा सीथीयन सत्तानो उदय ए छे, पण ए प्रमाणे जोवामा आवतु नथी

18 सरखावो जेकोबी, पा २५०

19 जेणे उत्तराध्ययन सूत्र उपर टीका लखी हती ते लक्ष्मीवल्लभनी बनावेला कल्पसूत्र उपर आ एक टीका छे

20 क्लाट, इन्डि एन्टी० पु ११, पा २५१

आधार हशे ज तथा वार्तानुं 26 सघळुं रूप जोईने हुं धारूं छुं के, ओएमा कडफीसे करेली हिंदना उत्तरपश्चिम भागनी जीत विषे ते कहे छे, ए असंभवित छे कारण के ते वार्तामां शकसत्रपो अने केटिक ग्रीक (?) राजा (गर्दभिल्ल) वच्चेनी लडाई जे पाछळथी उज्जयिनीनी सामान्य लौकिक वार्ता थई तेनी आछी स्मृति ज हशे एम लागे छे इ स पूर्वे प्रथम सैकामां जे शक राजाओ थया तेनो पूर्ण अहेवाल डफ साहेबनी क्रॉनोलॉजी ऑफ इंडिआ, पा १७ मा आपलो छे, अने ते अहेवालथी मारी सूचना निर्बळ थती नथी. चढाई करनारा अरबस्तानी हता तथा साहाणुसाहिनो अर्थ 'राजाधिराज' थाय ए कल्पनाने टेको अपाय तेम नथी कारण के ते एम स्पष्टताथी कहेलुं छे के चढाई करनारा शक हता, नहि के आरबी अगर बॅक्टेरीअन 'शाओनानो शाओ' पद जे आ वार्तानां 'साहाणु साहि' मां हुं जोऊं छुं तेना विषे मारे कहेवुं जोईए के ते कनिष्क पहेलांना सिक्काओ उपर नथी परंतु आ खास महत्वनुं नथी, कारण के एम जणाय छे के ए वार्ता घणा अर्वाचीन समयमां उत्पन्न थई अने ते समयमां पहेलांना शको अने कुशानो वच्चे गुंचवाडो थई शके ते सहज छे. परंतु ए वार्तामां शक वंशनां झीणां झीणां स्मरणो जाळवी राखवामां आव्यां छे, ते उपरथी एम सिद्ध थाय छे के ए वार्ता तद्दन नकामी नथी

आ चर्चाथी हुं बताववा मागुं छुं के उपरोक्त श्लोकोमां आपेली वंशवार यादी जेना उपर जैन लोको महावीरना मरण अने विक्रमसंवत्ना आरंभनी वच्चेनां ४७० वर्षना समयनो आधार राखे छे ते लगभग तद्दन नकामी छे आ समय भरवा माटे क्रमवार करेली राजाओनी श्रेणी तद्दन बिन ऐतिहासिक छे, अने तेथी तेना उपर आधार राखी शकाय तेम नथी. कारण के तेमां निर्वाण पछीनां ६० वर्षोमां उज्जैननो एक राजा थयो, एम कहेलुं छे, पण ते राजाने महावीरनी साथे कोई पण संबंध नथी उपरोक्त यादीमां तेनुं नाम केम दाखल थयुं ते माटे में उपर प्रमाणे कारणो शोधवा प्रयत्न कर्यो छे बाकीनां २९३ वर्षोमां मगधना वंशोनो समावेश करेलो छे, जेनी ऐतिहासिकता विषे कोई पण जातनो शक नथी आ उपरथी एम स्पष्ट जणाय छे के प्रथम आ यादीमां मगधना राजाओने ज मूकवाना हशे, के जे वात स्वाभाविक रीते आपणने पण इष्ट छे कारण के महावीरे लगभग पोतानी आखी जींदगी ए ज देशमां तथा बिंबिसार अने अजातशत्रु राजाओना गाढ संबंधमां गाळी हती विक्रम पहेलांनां ११७ वर्षमां जे जूदा जूदा भागना राजाओनां नामो भर्यां छे, तेना विषे आपणे एटलुं ज कही शकीए छीए के ते राजाओनो मगध साथे कांई पण संबंध हतो नहि

उपरोक्त विवेचनथी जणाशे के जैनोना जे कथन प्रमाणे महावीर विक्रम पहेलां ४७० वर्षे, अगर इ स पूर्वे ५२७ मां थया ते कथनने मात्र कल्पनामय ज आधार छे, अने तेथी अविश्वसनीय छे हवे हुं मारी तपासना बीजा भाग उपर आवीश अने एमां बतावीश के उपरोक्त कथन निश्चित करेली बौद्ध मीतिओ साथे पण असंबद्ध छे, अने तेथी सर्वथा तेनो त्याग करवो जोईए

२. महावीर अने जैनो साथे बौद्धोनो संबंध—बुद्धनो निर्वाण-समय.

जेकोबी अने बुल्हरे ऊहापोह करीने स्पष्ट कर्युं छे के बौद्ध अने जैन आगमोमां घणाखरा एकना एक ज माणसोनां नामो आवे छे-मात्र केटलीक जग्याए ज तेमने माटे जुदां जुदां नामो वापरवामां आव्यां छे आ उपरथी उपरोक्त विद्वान् महाशयो ए निर्णय उपर आव्या छे के बुद्ध

26 कालकनी वार्तामा स्साहाणुसाहि हिंद उपर चढाइ करतो नथी पण तेना साहिओ तेना क्रोधथी नासी छुटवाने चढाइ करे छे

तशत्रु) ए लीधेली महावीरनी मुलाकात विषे कथन करेलुं छे तेथी जो के दीर्घनिकायमां[31] जेनो उल्लेख करेलो छे ते ज आ मुलाकात हशे, एम कहेवाने प्रमाणो नथी, तो पण अजातशत्रु महावीरनी मुलाकात लेतो तेनी कल्पना जैन लेखकोने तद्दन अज्ञात न हती ए सिद्ध करवाने पूरता दाखला मळी शके तेम छे.

मज्झिमनिकाय १, पा० ९२ मां. बुद्धे पोताना सगा शाक्यकुमार महानामन्ने राजगृहनी नजीकमां केटलाक निर्ग्रन्थ साधुओ साथे थएली पोतानी वातचीत विषे कहेलुं छे महावीरना ते शिष्योए पोताना गुरु सर्वज्ञ, सर्वद्रष्टा वगेरे छे एम कही तेमनां वखाण कर्या हता, आमां कांई खास विशेष नथी, कारण के सर्वज्ञता ए महावीर तेम ज गोसाल. बुद्ध तेमज देवदत्त सर्वेनुं सामान्य लक्षण थई पडयुं हतुं. वळी, पाली आगमोमां बीजा घणा दाखला छे के ज्यां उपर प्रमाणे ज महावीरना शिष्योए पोताना गुरुना सर्वज्ञ तरीके वखाण करेलां छे तेवी ज रीते मज्झिमनि० २, ३१ मा राजगृहमां सुकुलदायि तेमां ज २, २१४ मां केटलाक निर्ग्रन्थ साधुओ, अने अंगुत्तर १, २२० मां लिच्छवी कुमार अभय वेसालीमां आनंदनी साथे वातचीतमां नातपुत्तनां वखाण करे छे. परंतु आ सर्व फकराओमां नातपुत्त, तेनी धर्मभावनाओ तथा तेना अनुयायिओ विषे घणी ज्ञाततापूर्वक कहेलुं छे, तेथी एम सिद्ध थाय छे के बौद्ध आगमोने यथास्थित रूप आपनाराओने गौतम अने महावीरना जीवनसमयना बौद्धो अने जैनो वच्चेना संबंधनुं चोक्कस ज्ञान हतुं.

वेसालीमां[32] रहेतो सेनापति सीह जे पाछळथी बौद्ध थयो हतो तेना नातपुत्त साथेना समागम बाबतना महावग्ग ६, ३१,१ ना फकरा विषे, तथा मज्झिम नि० (१, पा० ३७१) ना प्रसिद्ध उपालिसुत्त विषे प्रो जेकोबीए से० बु० इ० पु० ४५, पा० १६ मां चर्चा करी छे. एमां विस्तार पूर्वक कहेलुं छे के उपाली जे नातपुत्तनो अनुयायी हतो, ते ज्यारे नालन्दामां[33] आ बन्ने गुरुओ मळया हता त्यारे धार्मिक विचारोमां बुद्धने हरावबाने त्यां गयो हतो. परंतु आ प्रयत्ननुं परिणाम उलटुं ज आव्युं, कारण के बुद्धे तेने ज (उपालिने) पोतानो शिष्य बनाव्यो. त्यार बाद उपालि पोताने घेर राजगृहमां गयो अने द्वारपालने कह्युं के हवे निर्ग्रन्थोने पेसवा देवा नहि. ज्यारे पाछळथी पोताना शिष्यमंडळ सहित महावीर तेने मळवा आव्या त्यारे उपालिए पोतानो धर्म बदलवानुं कारण कह्युं अने बुद्धनां वखाण कर्या. तेमां अंते आ शब्दो आवे छेः—

अथ खो निगण्ठस्स नातपुत्तस्स भगवतो सक्कारं असहमानस्स तत्थ एव उण्हं लोहितं मुखतो उग्गञ्छीति ।

' पण भगवान बुद्धनां वखाण सहन नहि करी शकवाथी निगंठ नातपुत्तना मुखमांथी उष्ण लोही नीकळी पडयुं. '

---

31 औपपातिकसूत्रमां कह्युं छे के कूणिय चम्पामां रहेतो हतो. दीघनिकायमां कह्युं छे के उपरोक्त समागम राजगृहमां थयो हतो. उवास० १, ७ मां उद्धकित अजातशत्रुनी मुलाकात (वी ए स्मीथ पोताना हिंदुस्ताननना प्राचीन इतिहास, पा ४१ मां तेनुं अवतरण लीधुं छे) चपानो पण उल्लेख करे छे आ विषे हुं आगळ उपर कहीश

32 उपरोक्त फकरो अंगु०निकाय, ४, पा १८० मां पण आवे छे

33 उपर आपेला कल्पसू० १२२ ना अवतरणमां महावीरे राजगृहमां तथा नालन्दाना परा (बहिरिका) मां १४ चोमासा गाळ्या आ स्थळने जैनो पण प्रख्यात मानता हता, सरखावो सूत्रकृतांग २,७–से० बु० इ०, पु० ४५, पृ० ४१९

आ फकरा उपर घणो भार मूकवामां आव्यो छे, कारण के घणा विद्वानोए आ वातने दी० नि० ३ पृ० ११७ अने २०९, म० नि० २, पृ० २४३ वाळी हकीकत साथे जोडीने [34] कह्युं छे के नातपुत्त ज्यारे पावामां मरी गया त्यारे बुद्ध शाक्योनी भूमि उपरना सामगाममां हता आ उपरथी एम अनुमान करवामां आव्युं छे के उपालीनी मुलाकात पछी थोडा ज वखतमां महावीरनुं अवसान थयुं [35] अहीं, महावीरना अवसान विषेना बाद्ध उल्लेखना विषयमां हुं नहि बोलुं; आगळ उपर तेनी चर्चा करीश; परंतु उपालिनी आ वार्ता तथा तेना प्रथम गुरुना अवसान संबंधमां, बे बाबतो उपर हुं भार मूकवा मागुं छुं प्रथम वात ए छे के–हालमां मनातुं महावीरना निर्वाणनुं स्थान पावापुरी पटणा प्रांतना बिहार भागना गिरियेक गामथी लगभग त्रण माइल दूर आवेलुं छे [36] ज्यारे दी० नि० ३, पृ० ११७ विगेरे उपरथी ए स्पष्ट थाय छे के बौद्धो पावा ते स्थळने मानता हता के ज्यां कुसिनाराथी आवता बुद्ध चुन्दना घरमां रह्या हता अने ते शाक्योना प्रदेशमां आवेलुं कहेवाय छे राजगृहमां उपालिसाथे विवाद थया पछी जो महावीर थोडा ज वखतमां अवसान पामवाना होत तो तेवा आजारी माटे आ स्थान घणुं दूर कहेवाय; तथा कल्पसू० १२२ प्रमाणे महावीरे पोतानुं छेल्लुं चोमासुं पावामां 'राजा हस्तिपालनी लेखकोनी सभा मां गाळ्युं हतुं तेथी उपालिने लीधे तेमनुं मरण थयुं एम जो मानीए तो पण उपालिनी मुलाकात पछी तेओ लगभग अधा वर्ष सुधी जीव्या हशे बीजी बाबत ए छे के चु० व० ७,४,३ मां ज्यारे देवदत्तने पण महावीरना जेवुं कारण थयुं त्यारे तेना मुखमांथी पण उष्ण लोही नीकळ्युं एम एज वात कहेली छे जो के केटलीक पाछळनी विगतो उपरथी स्पेन्स हार्डी अने बीग डेट [37] एम माने छे के उपालिना विरोधना परिणामे तेमनुं मरण थयुं परंतु जूना लेखोमां कांई पण स्थळे ए प्रमाणे कहेलुं नथी पण आ उपरथी हुं ए निर्णय उपर आवुं छुं के महावीरना मरणने उपालिना विरोध साथे कार्यकारणनो अगर अन्य कोई पण प्रकारनो संबंध नथी

अभयकुमारसुत्त (म० नि० १ ३९२) मां कहेलुं छे के राजगृहमां निगन्थनाथपुत्ते अभयने कह्युं के तमे बुद्ध पासे जई अप्रिय शब्दो बोलवा ए ठीक के नहि ते विषे प्रश्न पूछो आ प्रमाणे बुद्धने पकडवाने जाळ पाथरवामां आवी, कारण के जो ते ना कहे तो पोते खोटा पडे, अने हा' कहे तो देवदत्तने तेणे शा माटे कठोर शब्दोथी धिक्कार्यो हतो एम अभय पूछे हुं कबुल करुं छुं के आ फकराने अगत्यता आपवानी जरुर नथी कारण के पाली आगममां [38]

[34] सरखावो जामन J R A S 1895 p 665

[35] उपालिना विरोध पछी नातपुत्त थोडा ज वखते मरी गया ए वात स्पेन्स हार्डीए, मेन्युअल ऑफ बुद्धिज्म् पा ४ मां कहेली छे पण सरखावो जेकोबी कल्पसू पा ६

[36] सरखावो इम्पीरीयल गेझेटीअर आफ इन्डिया पु १०, पा २८१

[37] सरखावो स बु इ, पु १३ प २ ९ आ ज बाबत सिद्ध करनारो बीजो प्रसंग सारिपुत्त अने मोगल्लानना गुरु संजयना हाहालमां आवे छे ज्यारे तेना शिष्याए तेनो त्याग कर्यो त्यारे तेणे लोही आक्युं हतुं एम कहेलुं छे पण तेना मरण विषे कांई कहेलुं नथी, जो ते वखत थयुं नहि होय, कारण के मारा धारवा प्रमाणे ते ज वखते बुद्ध पुत्त नामे पागली हता पण बील अने बीगन्डेट कहे छे के ते त्यारपछी तरत ज मरी गयो जे बाबत स्पेन्स हार्डीना कथनथी विरुद्ध छे Manual p 205 सरखावो स बु इ, पु १३ पृ १४९

[38] संयुत्त० नि० ४ ३२२ मां जणाववामां आव्युं छे के एक वखत दुष्काळना समये बुद्ध अने नातपुत्त बन्ने एक साथ नालन्दामां रह्या हता ते समये नातपुत्त पोताना धर्मानुयायी एक गृहस्थ जेनुं नाम असिबन्धक पुत्त (सरखावो उपरोक्त पुस्तक पृ ३१७) हतुं अने ते गामना ग्रामणी हता तेने बुद्धनी पासे जई एक प्रश्न पूछवा कह्युं के 'आ (दुकाळना) वखते तमारा बधा श्रमणोने अहीं राखी गरीब लोकोना खोराकने नुकसान करावी देवा ए शुं तमने योग्य लागे छे ?'

उल्लेख होय तेम संभव छे, कारण तेना नाम उपरथी जणाय छे के तेमां अन्यमतना 45 ज समयमा ऊहापोह करेलो हतो।

(२) वर्तमानकालीन सिद्धान्त तद्दन कृत्रिम छे के तेमा जोडता हकीकतो साथी कालथी असमर्थित छे कारण के ते सब खंडित रूपे छे—जो के केटलेक स्थळे केटलाक भागोने कटाळाभरेली भाषाशैलीमा विस्तृत करेला छे,—तेम ज ते (सिद्धान्त) उपरोक्त स्मारक गाथाओनी मारफत तारवी काढी संघेला या तो जना सिद्धान्तमाना सामान्य रीते साचवी राखेला भागो जेवा छे

आ विषय उपर हवे वधु चर्चा न करता हु जैनोना समयमा काई खास हकीकतो आपता बाद्ध केटलाक बौद्ध ग्रंथोमाना उदाहरणो आपीश कारण उपर चर्चेलो विषय हु अन्य स्थळे 46 चर्चवा मागु छु आवी जातना घणा फकराओ जेमा मतोनी गिनती जणावेली छे ते प्रा जेकोबीए संगृहीत कर्या छे आ स्थळे साधारण महत्त्वनी वातोना विषयना केटलाक फकराओ आपीश अने ते, जरूर होय ता, प्रमाणरूपे बताबी शकाश के बाद्धो अने जैनो, पोताना सम्प्रदायोना आरंभ काळमा—तेओना संस्थापकोना जीवनकालमा—परस्पर घणा ज निकट समयमा रहेता हता जैनो पोताना धर्मप्रवर्तकोने अर्हत् नु पद आपे छे ए सुविख्यात छे अने आ पद खारवेलनी शिलालिपिमा आवेला—समणो या ब्राह्मणो वा अरहा (खारवेल ५ ८, १) 47, आ एक वाक्यमा जोतामा आवबाथी मारा धारवा प्रमाणे तेना अर्थ 'जैन' होवो जोइए बीजी पण एक बाबत ध्यानमा राखवा जेवी छे के पाली ग्रंथोमा नातपुत्त अने बीजा पाच पाखंडी मताचार्यो माटे 'गणिन्', 'गणाचरिय', गणस्स सत्था', (संयुत्त नि० १, ६६) अने 'तित्थकर' एवा इल्काब जणावेला छे मारा मत प्रमाणे आ इल्काबो बुद्ध ने 48 कदापि लगाडवामा आवता नथी, पण जैन तीर्थंकर माटे ते बराबर बंध बेसता लाग छे, कारण के 'गण' शब्द प्राचीन समयमा जैन संघनो एक विभागसूचक हतो; जैनो अवा चीन कालना 'गच्छ' प्रतिशब्द छे अने तीर्थंकर पद ता महावीरना अत्यंत सामान्य इल्काब छ जेना एक गोशाले पण कर्यो हतो आ समयमा कोइने शंका थाय तेम छे के आ बाबत काइ विशेष साबीत करी शके तेम नथी कारण के आ इल्काबो बधा तीर्थिको माटे सरखी रीते वापरवामा आव्या छे पण आपणे याद राखवुं जोईए के जे गोशाल महावीर पछी साथी वधारे महत्त्वनो मनाता हतो ते शरूआतमा महावीरनो मात्र शिष्य ज हतो, अने तेणे पोताना गुरु महावीरथी व वर्ष पहेला ज तीर्थंकरपद प्राप्त कर्यानो दावो कर्या हता बीजी गाथामा आ वर्षनी साथे पशुधनस्थापन अने पूरणकस्सपनो उल्लेख थयेलो छे आ गाथा खरेखर जूनी छ अने ते संयुत्त नि० २ ३, १०, ९ मा आवेली होवा थी विशेष प्रामाणिक गणावी जोइए अने सु

40 प्रा जेकोबीने (स बु इ पु २२ पृ ४) दृष्टिवादना एक विशिष्ट भाग तरीके मतानो याद पूर्वो नष्ट थयानु प्रधान कारण तेमां महावीरना विरोधीओना सिद्धान्तोनु वर्णन आपेलु हतु त लाग छ परंतु आ अनु मान मत बील्कुल स्वीकारवा लायक लागतु नथी एनाथी विषय अविश्वासपात्र कारण वगर ग्रथ्यु छ Ind Stud XVI 248; Cf al o Leumann Actes du VIe congres des Orient III 559

46 उत्तराध्ययनसूत्रनी आवृत्ति ज तयार थाय छे तेनी प्रस्तावनामा

47 बाद्ध धर्मग्रथोमा अर्हत् ए इल्काब पाखंडी मताचार्योना नाम तरीके वपराएला भाग्य ज गाथामा आवे छे सरखावो राइस डेविड्स Hastings' Encyclopaedia 1 774

48 सामञ्ञफलसुत्त (दी नि १, ४७) मा बुद्ध आ तना विरोधी मताचार्यो पथार्थी ए बहु नवीकना सबधमां भाषामां आव छे तमना भिन्न भिन्न बनावना गुणा या प्रमाणे जुआ

एटले इ स. पूर्वे ५२७ मां थयानुं जणावीए तो आपणने आ अनुमानना संबंधमा शक उठे खरो कारण के बुद्ध निर्वाणनी, जनरल कनिंगहाम अने प्रो. मेक्समुल्लरे पहेली ज वखेत अने मारा अभिप्राय प्रमाणे बराबर रीते निर्णीत करेली मिति इ स पूर्वे ४७७ मां आवे छे अने सघळा मूळ लेखो एकमते निर्वाण समये तेमनी ऊंमर ८० वर्षनी बनावे छे, ते उपरथी ते इ स. पूर्वे ५५७ मां जन्म्या होवा जोईए आ उपरथी ए स्पष्ट छे के जो महावीर इ. स. पूर्वे ५२७ मां निर्वाण पाम्या होय तो बुद्ध ते समये ३० वर्षनी वयना होवा जोईए परंतु बुद्धे पोतानी ३६ वर्षनी वय पहेलां लगभग इ स.पूर्वे ५२१ मां बुद्धत्व प्राप्त नहि करेलुं होवाथी अने अनुयायिओ पण नहि मेळवेला होवाथी,ते समयमां महावीरने कदापि मळी शके ए तद्दन असंभवित छे.आ उपरांत वळी बन्ने अजातशत्रुना राज्यकाल दरम्यान विद्यमान हता एम पण आपणे जाणीए छीए. आ राजा बुद्धनिर्वाण पहेलां ८ वर्षे अभिषिक्त थयो हतो अने तेणे ३२ वर्ष राज्य कर्युं हतुं तेथी पण उपरोक्त मितिओ बिल्कुल अविश्वसनीय बने छे आटला माटे, महावीरना निर्वाणनी मिति कांतो इ स. नी शरुआतनी वधारे नजदिक लाववी जोईए, अगर तो बुद्धना निर्वाणनी तारीख आगळ खसेडवी जोईए. परंतु इ स पूर्वे ५२७ वाळी महावीरनिर्वाणनी तारीख परंपरागत होवाथी अने बुद्ध निर्वाणनी इ स पूर्वे ४७७ नी मिति मात्र संशोधित होवाथी कदाचित् कोईने बीजी मितिने माटे—बुद्धनी निर्वाणमितिनी सत्यताना संबंधमां शंका उठे आ उपरांत मि विन्सेन्ट स्मिथ आदि विद्वानोनी नवीन शोधमां बुद्धनिर्वाणनो समय इ. स. पूर्वे ४८६ अगर ४८७ वर्षे स्थापित करवामां आव्यो छे अने डॉ० फ्लीटनी शोध अनुसार इ. स. पूर्वे ४८२-८३ मां स्थापित थाय छे उपर निर्दिष्ट शोधो जो खरेखर साची नीवडे तो महावीरनिर्वाणना इ स पूर्वे ५२७ ना समयनी सत्यताना संबंधमां संभावना उपस्थित थाय. परंतु हुं उपरोक्त फेरफारोमां कांई तथ्य समाएलुं मानतो नथी, अने विशेषमां मानुं छुं के जनरल कनिंगहामे अने प्रो मेक्समुल्लरे जे बुध्द निर्वाणनुं वर्ष इ स पूर्वे ४७७ मुं नक्की कर्युं छे ते प्रामाणिक छे, अने तेथी मारा आ मतने साबीत करवा ते समयना निर्णय योग्य वधी महत्वनी बाबतोनो एकवार फरीथी अहीं विचार करवो उचित धारुं छुं

हिंदुस्थाननी साची कालगणना, अलेकझेन्डरना हुमलाबाद, चंद्रगुप्तथी शरु थाय छे परंतु हजी सुधी चंद्रगुप्तना अभिषेकना काळनो संपूर्ण रीते निर्णय थयो नथी, कारण के विद्वानोना मतान्तरो अनुसार अभिषेकनो समय इ स पूर्वे ३२५ थी ३१२ वच्चे होवानुं मनाय छे वळी बुद्ध अने चंद्रगुप्तनी वच्चेना समयना संबंधमां, जूना ग्रंथोमां आपेली गणत्री वजनवाळी लागती नथी तेथी करीने मॉ सेनार्ट (इ० ए० २०, २२९) अने मि बी गोपाल ऐय्यर (पु० ३७, पृ० ३४१) अने अन्य विद्वानोना मानवा प्रमाणे मारुं पण एम मानवुं छे के कालगणनानी शरुआत मात्र अशोकना शिलालेखोथी ज थई शके तेम छे. डॉ बुलरे, इ० ए० पु० ६, पृ० १४९, पु० २२, पृ० २९९, ए० इ० पु ३, पृ० १३४ उपर. अने डॉ० फ्लीटे ज० रा० ए० सो० १९०४, पा० १ मां जे सूचना करेली छे के सिद्दापुर, सहसाराम अने रूपनाथनी आज्ञाओना अंतमां २५६ नो अंक छे, ते बुद्धना निर्वाण पछी व्यतीत थएली वर्षसंख्या सूचवे छे ते सूचनानुं डॉ एफ् डबल्यु टोमसे (J A 1910, p 507) संपूर्ण रीते निराकरण कर्युं छे. ते जे अनिषेध्य प्रमाणथी आ बाबत साबीत करे छे तेनो अर्थ एम समजवानो छे के आ आज्ञा प्रसिद्ध थई त्यारे २५६ रात्रिओ सुधी अशोक घर छोडीने चाल्यो गयो हतो. 57 आ लेख जोवामां आव्यो त्यार पहेलां आ सूचना अश्रद्धेय लागती न हती.

57 डॉ थोमसना पाठने स्वीकारीने डॉ फ्लीटे (J. R A S 1910, p 1301) तेना आधारे जे अनुमान कर्युं हतुं ते कोईपण रीते टके तेम नथी मॉ लेवीए (J. A. 1911, p. 119) २५६ दिवसोनुं जे अनुमान कर्युं छे, ते मात्र शक्य छे

कारण के अशोक पोताना आध्यात्मिक गुरुने व्युथ ना नामथी दर्शावे ते असंभवित लागे छे वळी, आ विशेषण तेणे अन्य कोइ स्थळे वापर्यु नथी; लुंबिनी स्तंभ उपर त बुद्ध, शाक्यमुनि अने भगवान एवा गुणनामो वापरे छे आथी कालगणनाना दृष्टि ते सूचनानु बिल्कुल महत्त्व रह्यु नथी मॉ० सनार्टे घणा वखत पहेला जणाव्यु हतु के कालगणनानी दृष्टिए अतिनु केन्द्र १३ मी खडक उपरनी आज्ञामा छे, कारण के ते स्थळे अशोक अंतियोक[58] नामना योन राजा अने तेना राज्यनी पार तुरमय, अंतिकिन, मक अने अलिकसुंदरनो उल्लेख करे छे आ मतने हु अनुसरु छु लॅसने (Ind Alt II 254) अगाउ ज सूचवी दीधु हतु के आ राजाओ अनुक्रमे नीचेना राजाओ छे -सीरीआनो राजा थीओस एन्टिओकोस वाजो (इ० स० २६१ ई स पूर्वे), इजीप्तनो वाजो टॉलेमेइओस (मृत्यु २४७ ई स पूर्वे), मेसिडोनिआनो आन्टिगोनोस गोनटस (मृत्यु, ई स पूर्वे २३९), सिरीननो मगस (मृत्यु २५८ ई स पूर्वे) अने एपिरसनो अलेक्झाण्डर (मृत्यु २ ८ ई स पूर्वे) हवे खडक उपरनी आज्ञाओ अशोकना अभिषेकने १२ वर्ष थया हता त्यारे एटले के तेना अभिषेकना १३ मा वर्षमा प्रसिद्ध थई हती ए विषयमा हजी सुधी कोइने पण शंका थई नथी तेम ज थाय तेम पण नथी के, ए १३ मी आज्ञामा जे पाच राजाओनो निर्देश करेलो छे ते सघळा, ते वखते हयात न हता कारण के अशोके दरेक राजा पासे पोताना धर्मप्रवर्तकोने मोकल्या हता अने आ उपरथी ए सहज समजी शकाय तेम छे के तेओनी साथे ते गाढ सबध धरावतो होयो जोईए अने तेथी करीने ई स पूर्वे २५८ वर्ष पछी एक या बे वर्षो बाद जे तेमांमाना बे राजा गुजरी गया हता ते वखते जाणमा न आवे एम मानवु अशक्य छे कारण के आ बेमानो एक तो (मगस) टॉलेमेइओस (Ptolemaios) नो एक निकटनो सगो हतो अने टॉलेमेइओस ए अशोकना वखतनो एक घणा ज बळवान राजा हतो जेणे बिंदुसारना दरबारमा अने वळी अशोकना दरबारमा पण पोतानो दिओनिसीओस (Dionysios) नामनो एल्ची मोकल्यो हतो[59] आटला माटे वधारे तो आपणे एम मानवु जोईए के एन्टिओकस थीओस (Antiochos Theos) ना राज्यधिरोहणना ई स पूर्वे २६१ मा वर्ष पछी अने मगसना अवसान तथा प्राय अलेक्झाण्डरना मरणनी पूर्वे—जो आ छेल्लो राजा ए वखते वधारे वहेलो न गुजरी गयो होय- एटले ई स पूर्वे २५८ मा वर्ष पहेला आववु जोईए जो ए प्रमाणे आ तेरमु वर्ष ई स पूर्वे २६०-२५८ नी वचमा आवे तो तेनो अभिषेकना समय ई स पूर्वे २७२-२७० मा पडे अने सघळी बौद्ध परंपरा तेना एक मते अशोक पोताना अभिषेक पहेला चार वर्षे राजा थयो हतो ते उपरथी तेना पिता बिंदुसार ई स पूर्वे २७६ अने २७८ नी वचमा गुजरी गयो हशे

उपरोक्त गणत्री तत्कालीन स्मरणस्तंभादिना असंदिग्ध आधार उपर तैयार करवामा आवी छे परंतु पाछ इतिहास ग्रथो एम जणावे छे के बुद्ध पछी २१८ मा वर्षमा अशोक पोताना ९९ भाइओने[60] मारी मागधीय राज्यासिंहासने थयो हतो आ कथन जो विश्वासपात्र लेखाय तो बुद्धनु निर्वाण ई स पूर्वे ४८९-४८७ नी वचमा नक्की थयु मानवु जोइए पण आ कथन

58 सरखावो गिरनार उपरनी आज्ञा बीजी अहीयां पण तेज राजाओनो मतलब छे

59 सरखावो स्मीथ ए र्ली Early History P 139

60 आ हकीकत सहस-आज्ञा मे थी मळी पड छ कारण के था आज्ञामा अशोक पोताना भाइ तेमो निर्देश कर्या छ आ बाबत सेनार्टे शोधी काढी हता (Ind Ant XX 230)

विरुद्ध ने ज इतिहासोमां 61 वीजुं कथन मळतुं होवाथी तेओनी गणत्रीमां क्यां भूल छे ते हुं आ स्थळे समजावीश.

राजगृहनो राजा विंबिसार अने तेनो पुत्र तथा उत्तराधिकारी अजातशत्रु-जेने जैनो कूणिय अथवा कोणिय नामे ओळखे छे-तेमना संबंधमां ब्राह्मण, बौद्ध अने जैन आ त्रणे धर्मोमां परंपराओ जोवामां आवे छे. बौद्धोना पुरातन लेखो जणावे छे के विंबिसार बुद्धनो समकालीन हतो अने बुद्ध निर्वाणथी आठ वर्ष पहेलां ते पोताना पुत्रना हाथे मरण पाम्यो हतो पुराणोनी हकीकत अनुसार आ विंबिसार शैशुनाग वंशनो पांचमो राजा हतो अने तेणे २८ वर्ष राज्य कर्युं हतुं. परंतु दीपवंश ३, ५६-६१, अने महावंश २, २५ मां एम जणावेलुं छे के ते बुद्ध पछी पांचमे वर्षे जन्म्यो हतो, पंदर वर्षनी उम्मरे राज्यासन पर आव्यो हतो अने ५२ वर्ष सुधी तेणे राज्य कर्युं हतुं. जो के आ हेवाल मां कांई तथ्यांश नथी. कारण के विंबिसार बुद्ध अने महावीर बन्नेनी पहेलां गुजरी गयो हतो विंबिसार पछी अजातशत्रु (उर्फे कूणिक) गादिए आव्यो अने तेणे पुराण अनुसार २५ वर्ष, अने सिलोनना इतिहास प्रमाणे ३२ वर्ष राज्य कर्युं तेने गादी उपर आव्याने आठ वर्ष थयां त्यारे बुद्धनुं अवसान थयुं पण आ पछी पौराणिक अने बौद्ध हेवालो नामोमां मळता आवता नथी. कारण के पुराण जणावे छे के अजातशत्रुनी पछी हर्षक अथवा दर्शक नामनो राजा थयो अने तेणे २५ वर्ष राज्य कर्युं त्यारपछी उदय राजा बन्यो जेणे ३३ वर्ष राज्य कर्युं बौद्धो एम कहे छे के अजातशत्रु पछी उदायिभद्द (दीघनिकाय) अथवा उदयभद्दक62 (दीपवंश, महावंश) राजा बन्यो अने तेणे १६ वर्ष राज्य कर्युं. जैनो आने उदायिन् कहे छे अने तेना शासननो समय लांबो बतावे छे 63

हवे आ हकीकत ने शरुआतनुं केन्द्र मानीने विविध कालगणना विषयक लेखोनो एक पछी एक लई विचार करवो जोईए अने तेथी हुं पहेल वहेलां वायुपुराणमांथ मळी आवती ब्राह्मणपरंपराथी शरुआत करीश

आ ग्रंथनी अनुसार, दर्शक (अथवा हर्षक) 64 ना २५ वर्ष पर्यंत राज्य करी रह्या पछी उदय (अथवा उदयाश्व) राजा बन्यो अने तेणे ३३ वर्ष राज्य कर्युं. आना पछी अनुक्रमे नन्दिवर्धन अने महानन्दिन् आव्या जेओ बंनेए ८५ वर्ष राज्य कर्युं महानन्दिन् शैशुनाग वंशनो छेल्लो राजा हतो अने तेनी पछी नव नन्दो, महापद्म इत्यादि राजाओए वे पेढी सुधी कुल १०० वर्ष राज्य कर्युं छेल्ला नंदनी पछी मौर्य राजाओ गादीए आव्या तेमांना चन्द्रगुप्ते २५ वर्ष, बिन्दुसारे २५ वर्ष अने अशोके ३६ वर्ष राज्य कर्युं जो हवे आपणे अजातशत्रुथी मांडीने अशोकना अभिषेक सुधीनां बधां राजाओनो सरवाळो करीए तो ते सरवाळो ३१७ वर्षनो थाय छे अने जो आपणे सिद्धरूपे मानी लईए के अजातशत्रुना अभिषेक पछी ८ वर्षे बुद्ध निर्वाण पाम्या तो अशोकनो समय बुद्धनिर्वाण पछी ३०९ मां आवे, ए अशक्य छे कारण के सिलोननो सन्-जेना आधारे बुद्ध इ. स पूर्वे ५४४ वर्षे निर्वाण पाम्या हता तेनी-अनुसार उपरोक्त समय इ. स पूर्वे २३४ वर्षे आवे छे अने आपने जाणीए छीए के इ स पूर्वे २६० अने २५८ वच्चेना वर्षथी १२ वर्ष पहेलां अशोकने राज्याभिषेक थयो हतो. इ स. पूर्वे

61 उत्तरीय बौद्धोना कथनने हु बिलकुल महत्त्वनु मानतो नथी, ते एम कहे छे के अशोक बुद्धनिर्वाण पछी १०० वर्षे जन्म्यो हतो.

62 आ कदाच तेनु खरु नाम हशे कारण के बौद्धोनी तेम ज जैनोनी जूनामा जूनी परपरा आ नाम जणावे छे

63 आ विषय हु आगळ उपर चर्चीश

64 विष्णुपुराणमा तेनु नाम दर्भक आपेलु छे सरखावो, मॅकडॉनल्ड, Ancient Skt Lit P 296

४७७ ने निर्वाणना वर्ष तरीके स्वीकारीए तो तेनी अनुसार अशोकनो अभिषेक ई स पूर्व १६८ वर्षे आवी पडे परंतु आ परिणाम तो विशेष असगत बने छे

आ हिसाबे जोता पुराणोमा भूल थई होय तेम जणाय छे अने ते सहेलाईथी शोधी शकाय तेवी छे पिता अने नव पुत्रो मळी नन्दोनी बे पेढीओ हती एम ब्राह्मणोना, जैनोना अने केटलेक अंशे बौद्धोना ग्रंथोमा पण वर्णन जोवमा आवे छे वळी हेमचन्द्र अने अन्य जैन ग्रंथकारो तो स्पष्ट रीते ज कहे छे के उदय अथवा उदायि ते शैशुनाग वंशनो छेल्लो राजा हतो आ उपरथी स्पष्ट थाय छे के महानन्दिन् अने नन्दिवर्धन जेवा नामोनु शैशुनाग नामो साथे काई सादृश्य नथी परंतु ते नंद अने महानंदिन् महापद्मनन्दनु 65 जाण टुकु रूप होय एम शका उत्पन्न करे छे आ उपरथी तेमज वर्षोनी अतिशयोक्ति भरेली सख्या उपरथी हु एवी कल्पना करु छु के पुराणोमा बे वखत नन्दोनी गणत्री थई छे अने आम थयु ते, नंदोना इतिहासना सबधमा ते ग्रंथोमा थएलो मोटो गोटाळो जोता, तद्दन शक्य लागे छे वळी पिता अने पुत्रोना राज्यना मळी ज एकदर १०० वर्षो आपवामा आव्या छे ते घणा शकास्पद लागे छे कारण के आजे प्रत्येकने बराबर १० वर्ष फाळे आवे छे, आ दाखलाओ उपरथी हु अनुमान करु छु के महानन्दिन् अने नन्दिवर्धन आ बे पुरुषो असलमा नन्दो के जेमणे कुल मळीने ८ वर्ष राज्य कर्यु हतु तेमना बे पेढीओना प्रतिनिधिओ हता 66 अने नन्दोना जे सो वर्ष बतावबामा आव्या छे ते पाछळथी साची हकीकतोना विस्मरण अने गेरसमजुतिने लईने उमेरो थएलो छे तेथी करीने जो आपणे नंदोना १०० वर्ष उडावी दईए तो बुद्धनिर्वाण अने अशोकना अभिषेक वच्चेनो काल २०९ वर्षोने बदले २०९ वर्षोनो थाय अने पछी निर्णीत कालगणनानुसार तेनो समय ई स पूर्वे २६८ मा पडे परंतु बौद्धो जेमने अशोक परत्वेनी उमत्त माहिती छे तेओ कहे छे के तेणे पोताना अभिषेक पहेला चार वर्ष अने अभिषेक पछी ३७ वर्ष राज्य कर्यु हतु जे हकीकत पुराणमा जणावेली ३६ नी सख्याने साधारण निकट थाय छे जो आम होय तो आपणे ३६ मा ५ उमेरवा जोईए अने तेम कर्याथी तेना राज्याधिरोहणना काल ई स पूर्वे २७३ मा वर्षमा आवशे आ मिति शिलालेखो उपरथी तारवी काढेली मिति अर्थात् ई स पूर्वे २७८-२७४ साथे लगभग मळती आवे छे

आटलु विवेचन ब्राह्मणग्रंथना सबधमा कर्यु जैन हेवाल के जे उपर टाकेली स्मारक गाथाओमा मळी आवे छे ते हेमचन्द्रना परिशिष्ट पर्वमा अंतर्गत थएली परंपरारूप ज छे पण आनो विचार अंतमा ज करवो घटे छे तेथी करीने हालमा बौद्धोनी हकीकत, के जे सिलोनना

65 खारवेलना शिलालेखमा तेम ज कालिंगना पृ ४२९ उपर नन्दराजनो बे वखत निर्देश थएलो छे नन्दनु मूळ रीत Justin XV 4, 1 मांना अलेक्झ डुस माट सुधारणा छ (जुओ Gut chmid) Diodoras XVII 93 अने Curtins IX, 2 मा चन्द्रगुप्तनी पहेलाना मगधना देश राजाना नाम बताव्यु Xandramas अथवा Aprainmes नु संस्कृत रूप शु थाय ते हु चोक्कस समजी शकतो नथी Xandramas मां संस्कृत शब्द चन्द्र अथवा तो चण्डना भाम थाय छ खरा पण नदोमा आवु नाम नहि मळी शकतु होवाथी आ उपरथी कांई अनुमान करी शकाय नहि

66 बे पेढीओए मळीने कुल ८५ वर्ष राज्य कर्यु होय ते बाबत जो के धार्मिक अने अतर्नीय लाग खरी परंतु मि विन्सन्ट स्मीथे पोतानी Early History of India मा अंग्रेजी इतिहासमाथी लाबा राज्यकाल लाग वलो ज उदाहरणो आप्या छे ते जोता आ वात पण अशक्य होय एम लागती नथी वाचक नीचेनी हकीकत उपर ध्यान आपशे के आठमो हेनरी अने तेना पुत्रोए मळीने ९४ वर्ष (१५ ९-१६ ३) राज्य कर्यु हतु अने ते हेनरी इलिझाबेथना मरण पूर्वे ११२ वर्षे जन्म्यो हतो

इतिहासामां मळी आवे छे ते उपर चर्चा करीश. शरूआतमां महावंश ग्रंथ लईशुं. कारण के एमां आपेली हकीकतो तद्दन स्पष्ट छे, ज्यारे दीपवंशमां आपेली बधी हकीकतो घणी गोटाळा भरेली छे. 67

महावंश २, २५, अने ४, १, ५, १४ मां जणावेलुं छे के बिंबिसारे ५२ वर्ष राज्य कर्युं हतुं अने तेनी पछी तेनी हत्या करनार तेनो पुत्र अजातशत्रु आव्यो तेणे बुद्ध निर्वाण पहेलां आठ वर्ष अने त्यारपछी २४ वर्ष एम कुल ३२ वर्ष राज्य कर्युं हतुं. अजातशत्रु पछी आवेला राजाओ बुद्धधर्मना सारा आश्रयदाता थया होय तेम लागतुं नथी, कारण के महावंश ४, १ मां पछीना राजाओने 'पितुघातवंश' एटले पितानी हत्या करनाराओनो वंश, एवुं नाम आपेलुं छे. अने वधारेमां जणाव्युं छे के ते वंशना सघळा राजाओ अनुक्रमे पोताना पिताने अगर पूर्वजने मारीने ज पोते गादी उपर आव्या हता आ राजाओ ते अनुक्रमे--उदयभद्दक जेणे १६ वर्ष 68 राज्य कर्युं अनुरुद्धक अने मुण्ड बन्ने मळीने ८ वर्ष राज्य कर्युं अने छेल्लो नागदासक जेणे २४ वर्ष राज्य कर्युं हतुं आ राक्षसो--जेमांना छेल्लाने आवेशमां आवी गएला लोकोए ठारमारी नाख्यो हतो तेमनी-पछी एक धर्मात्मा मंत्री शुशुनागे १८ वर्ष राज्य कर्युं अने तेनी पछी तेनो पुत्र कालासोक राजा थयो अने तेणे २८ वर्ष राज्य कर्युं. तेना शासनना ११ मां वर्षमां (अतीते दसमे वस्से, ४, ८) वेसालीमां बीजी सभा मळी जेनी मिति बुद्धनिर्वाण पछी १०० वर्ष आपेली छे कालासोकनी पछी तेना दश पुत्रो गादिए आव्या अने तेमणे २२वर्ष राज्य कर्युं. तेओनी पछी नव नंदो थया जेओए बीजां २२ वर्ष राज्य कर्युं. 69 छेल्ला नंदने चाणक्ये गादी उपरथी उठावी दीधा पछी चंद्रगुप्त राजा थयो जेणे २८ वर्ष राज्य कर्युं. तेना पुत्र बिन्दुसारे ५८ वर्ष राज्य कर्युं अने तेनी पछी अशोक गादीए बेठो. ते पोताना ९९ भाईओने मारी नाखीने निर्वाण बाद २१८ वर्षे राज्याभिषिक्त थयो आ सघळी तारीखो एक बीजा साथे साधारण रीते ठीक बेसती आवे छे परंतु उपरोक्त समन्तपासादिकामांनी 'भूल' निःशंकपणे बतावे छे के आ परंपरा सघळी बाबतोमां विश्वास राखवा लायक नथी अने तेथी आपणे बुद्धनिर्वाण पछी २१८ वर्षे अशोकनो अभिषेक थयो हतो ए जणावती नोंधने बहु महत्व

67 बुद्ध पछी सो वर्षे अशोक राजा थयो हतो ए प्रकारनु दिव्यावदाननु कथन हु अहिं विचारमा लई शकतो नथी. (pp 368, 379 etc) अने ए ग्रंथना, पृ ३६९, ४३० उपर एक तद्दन अविश्वसनीय एवी राजाओनी यादी आपेली छे जे यादी कोई पण अन्य नोंध साथे मळती आवती नथी बल्के अन्य सर्व नोंधथी विरुद्ध पडे छे आ यादीमा नीचे प्रमाणे मगधराजाओनी यादी आपेली छे बिंबिसार, अजातशत्रु, उदायिन् (उदयिभद्र),मुण्ड काकवर्णिन्, सहालि, तुलकुचि, महामण्डल, प्रसेनजित्, नन्द, बिन्दुसार, अशोक, सम्प्रति (अशोकनो पौत्र अने कुणालनो पुत्र), बृहस्पति, बृहसेन (?) पुष्यधर्मन् अने पुष्यरथ. आ स्थळे एटलु सूचववा मागुं छुं के आ यादीमां चन्द्रगुप्त ने सर्वथा छोडी देवामा आव्यो छे अने ए ज एक बाबत उपरथी तेनी किमत आकी शकाशे

68. बुद्धघोषनी समन्तपासादिकाना ३२१३ पृ मा, आ राजाओमाना प्रत्येकना ८ वर्षोने बदले १८ वर्ष बतावेला छे आ परंपरा घणी अजायबी भरेली लागे छे, अने ते बुद्ध अने अशोकनी वच्चेनी कुल वर्ष सख्या साथे मोटो विरोध दर्शावे छे आ उपरथी एटलु ज अनुमान काढी शकाय छे के सीलोननी परपरा गभीर रीते अचोक्स छे

69 मारा जाणवा प्रमाणे, आ पहेला, ए कोईनी जाणमा नथी आव्यु के जैनपरपरामा पण कालासोक अने तेना उत्तराधिकारीओनु झाखु स्मरण बच्युं छे. उपाग ८ अने ९ मा(निरयावली) कालराज अने तेना नव भाईओ, जेओने परपरागत कथन अजातशत्रुना ओरमान भाईओ होवानु बतावे छे, तेओ सबधी उल्लेख मळी आवे छे अने आगळ ऊपर तेना दश पुत्रो जेमाना बे नामे महापद्म अने नन्दन हता तेमनो पण उल्लेख थएलो छे आ उपरथी नंदोना बीज पण सगाओना सबधमा तद्दन अस्तव्यस्त रूपमा केटलुक मळतापणु जोवाय छे-

आपवु जोईए नहि तेम छता उपरोक्त मितिओमा एक पनी मिति छे जेने बौद्धो साधारण रीते बराबर जाणता होया जोईए अने ते अन्य कोइ नहि पण ते बीजी सभानी तारीख छे आ सभा बुद्ध पछी १०० वर्षे मळी तेम बु० घ० १२-११ मा जणावेलु छे त तारीख साची हो या न हो, अथवा सभा पण मळी हो या न हो तेनी साथे आपणने आ स्थळे काम नथी 70 आपणो मुख्य मुद्दो जे छे, ते ए छे के आ वर्ष सिलोननी कालगणनामा एक महत्वनु प्रारभ केन्द्र हतु अने मारी दृढ मान्यता छे के सिलोनना भिक्षुओ प्राचीन परपराओ द्वारा जाणता हता के आ सैकु कालासोकना शासनना बराबर १० मा वर्ष पछी आवतु हतु आ विषयमा एक वार फरीथी हु मात्र बुद्धघोषनी एक जरा विषयान्तर बतावती हकीकत उपर भार मूकवा मागु छु कारण के तेने लईने कदाच आपणे कोइ रीते कालासोकना पहेलाना राजाओनी यादीमा काइ फेरफार करवो पडे परतु तेना समय पुर्वेनी यादीओ, महान् अशोकनी मितिने असर करती नथी, कारण के ते वखते तेना अभिषेकना समयमा एवी चोक्कस परपरा प्रचलित हती के तेनो अभिषेक बीजा सघमिलन पछी ११८ वर्ष बाद अने बुद्ध पछी २१८ वर्ष थयो हतो हवे निर्णीत कालगणनाना आधारे गणत्री करता अभिषेकनी आ मिति इ स पूर्वे २६०-९ मा आवे खरी पण शिलालेखो साथे तेनो मेळ मेळवा शकाय तेम नथी

ए तो नि सदेह छे के अशोकनी समय-गणना, सघळा तारीखवाळा शिलालेखोमा स्पष्ट जोवामा आवे छे ते प्रमाणे अभिषेकना वर्षथी थाय छे 71 परतु आपणे उपर गणत्री करी छे के तेनो अभिषेक इ स पूर्वे २७२-२७० नी वच्चे थयो हशे आ उपरथी बुद्धनिर्वाण स्पष्ट रीते इ स पूर्वे ४९०-४८८ नी वचमा आवे छे, जे साल जनरल कनिंगहाम अने प्रा मेक्समूलरनी गणत्री साथे एक थती नथी पण अहीं एक बीजी बाबत पण विचारणीय छे

बौद्ध अहेवालो अनुसार अशोक तेना राज्यकाळना प्रथम भागमा अथवा शरुआतमा नास्तिक हतो अने अभिषेक बाद त्रण वर्षे ते बौद्धधर्ममा दाखल थयो 72 हतो आ बाबत घणी महत्वनी छे कारण के प्राय करीने अशोकना पोताना कथनो साथे ए समत थाय छे खडक उपरनी आज्ञा न १३ नी सुप्रसिद्ध उपोद्घातमा जणाव्यु छे के

अ[ठव]स अभिसित [स द] वन प्रिअस प्रिअद्रशिस रजो क [लिग विजित] 73

आथी कलिंगनी जीत इ स पूर्वे २६४-२६२ वर्षोनी वचमा थइ हशे अने आ पछी तरत राजाए वधला नरसहार अने रक्तपात नो पश्चात्ताप करवा माडयो अने केटलाक प्रमाण मा ते नवीन धर्ममार्गी बन्यो आगळ उपर ते सहसाराम वगेरे आज्ञाओमा जणावे छे के हु अढी वर्ष करता वधारे वखत सुधी मन्दोत्साही (उपासक) हतो परतु त्यार बाद एक वर्षथी हु उत्साही थई सघनो सभ्य बन्यो छु

अधिकान् (नि) अढातियानि वसानि य हक (उपासके) नो तु खो बाढ पकते हुस एक स (म्)वछर सातिरेके तु खो स (म्) वछर् [अ] म् य मये सघे उपयीते बाढ च मे पकते

70 आ मत मारो नथी कारण के आ सबधमा बौद्धपरपराने मुख्य पणे निर्मूळ ठरावनाना हेतुथी R O Franke ए बतावेली सघळी दलीलोथी पण हजी मन खात्री थइ नथी

71 खडक उपर कोतरेली आज्ञा न १३ मा ८ मा वर्ष (कालिंगनी जीत) थी ते २६ मा वर्ष (स्तभ-आज्ञा १ ४ अने ५) अने २७ मा वर्ष (स्तभ—आज्ञा ७) सुधीनी तारीखो

72 दीपवश ६ १८ वळी प्रमित गाथा ६ २४ मा अभिषेक बाद त्रण वर्षे धर्मपरिवर्तन जणावेलु छे

73 शाहबाझगढी एपि इन्डि २ ४६२

आनो तात्पर्य ए छे के, अशोक बुद्धधर्मनो साचो अने विश्वासु अनुयायी बन्यो ते वखते तेना अभिषेकने, साडा दश करतां वधारे, आशरे अगीआर वर्ष; थयां. अने ते प्रमाणे गादी उपर आव्याने लगभग पंदर वर्ष थयां हता. खडक आज्ञा नं. ८ मां तेणे जणाव्युं छे के ते पोताना अगीआरमा वर्षमां 'संबोधि प्राप्त करवा नीकल्यो' हतो (अयाय संबोधिं), आ हकीकत सहसाराम आज्ञामां 74 लखेली बाबत साथे ठीक मळती आवे छे हवे आपणे दीपवंशमां कह्या प्रमाणे अभिषेक पछीना त्रण वर्षोने, जो, सहसाराम आज्ञामां जणावेलां 'अढी वर्षोथी अधिक' काळ साथे सरखावीशुं तो आपणे कबुल करवुं पडशे के ते बन्नेनी वच्चे असरकारक साम्य दृष्टिए पडे छे, अने ते उपरथी एवुं अनुमान थाय छे के वस्तुत ते बन्ने उल्लेखो एकज बीनाने उद्देशीने करवामां आवेला छे 75 आ उपरथी बीजुं पण एक अनुमान नीकळे छे के सिलोनना आ हेवालो—अथवा तेमनी मूळभूत प्राचीन अट्ठकथा—नी, अशोकना अभिषेक अने निर्वाण वच्चेना अंतरालने २१८ वर्षोनुं बताववामां गेरसमजुति थएली छे आ २१८ वर्षो मूळमां अभिषेकने उद्देशीने नहि हतां परंतु कलिंगनी विजयसमाप्ति अगर प्रथम धर्मप्रवर्तन, अथवा आ बन्ने बीनाओनी साथे संबंध धरावतां हतां. एटलुं तो आपणे कबुल करवुं जोईए के बौद्धोना माटे अशोकना अभिषेक करतां तेनुं बुद्धधर्ममां प्रवर्तन अति महत्त्वनुं हतुं अने आटला माटे अशोकना आ बनावने एक केन्द्र मानी बौद्धोए त्यांथी तेना संबंधनी तेमनी कालगणनात्मक तेमज ऐतिहासिक नोंधोनी शरुआत करी होय. कलिंगनी जीत कालगणनात्मक गणत्रीओमां घणुं करीने वधारे अगत्यनी न होती, परंतु तेनुं महत्त्व तेना धर्मप्रवर्तनने अंगे ज छे कारण के मारा पोताना अभिप्राय प्रमाणे, कलिंगनी अंदर, अगर कोई अन्य स्थळमां, अशोकना राज्य साथे कलिंगना मिश्रण थया उपर कोईपण संवत्नी स्थापना थई होय एवो एक पण पुरावो नथी. 76

त्यारे सिलोनना अहेवालोमां जणावेलां २१८ वर्षो असलमां अशोकना अभिषेकनी साथे

74. अहीआ में डॉ. एफ् डब्ल्यु थोमसनी J. A 1910, p 507 मा आपेली स्पष्ट अने विश्वासजनक हकीकतोनो संपूर्ण उपयोग करेलो छे

75. बौद्धशास्त्रो अने आज्ञाओना परस्पर सरखापणाना टेकामा घणा प्रमाणो छे, जेनो कोई पण निषेध करी शके तेम नथी उदाहरण तरीके, दिव्यावदानमा, धार्मिक आज्ञाओना अस्तित्वना संबधमा उल्लेख थएलो छे, अने ते स्थळे तेमनी संख्या ८४००० नी बताववामा आवी छे आ संख्या हास्यजनक—कल्पनामय—लागे छे परतु तेमा आ आज्ञाओना संबंधमा (पृ० ४१९, ४२९ इत्यादि) पञ्चवार्षिक नामनी संस्थानो निर्देश करे छे आ संस्था ते धर्मयात्रा ज होवी जोईए, जे प्रस्तर–आज्ञा (Rock–Ed.) ३ अने ४ मा बताव्या प्रमाणे पाच पाच वर्षे थती हती. वळी दिव्यावदान पृ० ४०७ मा जणावेलु छे के कुणालने तेना पिताए तक्षशिलाना सुबा तरीके मोकल्यो हतो (हेम. परिशिष्ट, ९, १४ मा जणावेलुं छे क तेने उज्जयिनी मोकलवामा आव्यो हतो) आ उपरथी धौली अने जौगडनी आज्ञा १ ली मा आवता 'उजेनि (ते) कुमाले' अने 'ताखसिलाते (कुमाले)' शब्दोनु स्मरण थई आवे छे दिव्यावदान पृ० ३९० अने रुम्मिन्देई शिलालेखनी वच्चे जे मेळ Barth, Journal des Savants, 1897, p 73 अने बुल्हर, Ep Ind. V, p 5 बतावे छे, तेनो पिशल S B Pr A W 1903, p 731, अस्वीकार करे छे, अने ते वास्तविक रीते लागे छे पण अवोक्रम परंतु, दिव्यावदानमा अशोकनी तीर्थयात्रा सबधी जे उल्लेख मळे छे ते वास्तविक छे

76 डॉ. फ्लीट J R A. S. 1910, p p 242 ff, 824 ff, जे कहे छे के खारवेलना शिलालेख उपरथी मौर्यवंशना अस्तित्वना संबधमा कोई पण तर्क बाधवानो आपणने हक्क मळतो नथी, तेने हु समत छु जो के ते लेखनी १७ मी लीटीना तेणे करेला अर्थने हु सर्वथा अस्वीकारणीय मानु छु. डॉ. फ्लीटनु भाषातर आ प्रमाणे

संबंध धरावना नहि परंतु धर्मपरिवर्तनने उद्देशीने रचेला होय तो आ बनाव, बुद्धनिर्वाणनी मिति इ. स. पूर्वे ४७७ नी स्वीकारता इ. स. पूर्वे २५९ मा थयो होय, अने छेवटनु धर्मपरिवर्तन आशरे त्रण वर्ष पछी एटले इ. स. पूर्वे २५६ थयु हशे परंतु आ मितिमा केटलाक वर्षो वधारे गणावला लागे छे कारण के कलिंगनी जीत मोडामा मोडी इ. स. पूर्वे २६२ मा परिसमाप्त थइ होवी जोईए तेम छता आपणे नीचेनी बे बाबतो ध्यानमा राखवी जोइए कारण के ते द्वारा घणु करीने बधी मितिओ संपूर्ण रीते संगत थाय तेम छे (१)उपर जणाव्या प्रमाणे बुद्धघोष अने अहेवालो वच्चेनो विरोध केटलोक अगत्यनो छे, अने (२) महावंशमा ज्यारे बिंदुसारे २८ वर्ष राज्य कर्यानु जणावेलु छे त्यारे ब्राह्मणग्रंथो के जे ए बाबतमा वधारे सत्य होइ शके तेमा २५ वर्ष अर्थात् त्रण वर्ष ओछा दर्शावेला छे आ सूक्ष्म भेदोने भेगा करवाथी एवु अनुमान नीकळे छे के उपरोक्त २१८ वस्तुत अतिशयोक्ति भरेला छे, अने तेथी इ. स. पूर्वे ४७७ वर्षे नक्की करेली बुद्धनिर्वाणनी मितिमा आ अतिशयोक्ति काइ बाधो करती होय तेम मने लागतु नथी, एटलु ज नहि पण तेने वधारे दृढ करे छे

महावंशना केटलाक कथनो जो के अविश्वसनीय छे खरा छता पण दीपवंशमा आपेला, राजाओ तथा तेमना राज्यो संबंधी वर्णनो एवा गोटाळा भरेला जोवामा आवे छे के तेने मुकाबले महावंशना वर्णनो वधारे स्पष्ट लागे छे आ गुचवाडावाळा वर्णनोमा पण हु काइक जे माग शोधी शक्यो छु तेमा मने मगधना राजाओना संबंधमा बे मुख्य परंपराओ जणाई आवे छे आमानी पहेली तो घणी ज गुंचवणी भरेली छे अने बीजी सिलोनना राजाओनी कारकीर्दीनी गणत्रीओ साथे विचित्र रीते भेळसेळ थएली छे शरूआतमा कहेवु जोईए के दीपवंशमा अने महावंशमा जे बे मुख्य बाबतो स्पष्ट जोवामा आवे छे तेमानी एक तो द्वितीय संघसम्मेलन संबंधे छे के जे सम्मेलन बुद्ध पछी १०० वर्षे थयु हतु आ वखते शिशुनागना[77] पुत्र अशोकना राज्यना १५ वर्ष अने १० दिवसो व्यतीत थया हता अने बीजी बाबत ए छे के अशोक बुद्ध पछी २१८ वर्षे अभिषिक्त थयो हतो [78] बीजी जे हकीकतो दीपवंशमा ३ ५६ थी मांडीने ६ १ ज्या अशोकना अमलनी शरुआत थाय छे त्या, सुधीमा जणावेली छे, ते ए छे के बिंबिसारे ५२ वर्ष राज्य कर्यु हतु अजातशत्रुए ८ वर्ष बुद्धना जीवता अने २४ वर्ष निर्वाण

छे — सात अंगोना समूहना ६४ मा अध्ययनने (अथवा अन्य विभागने त उल्लेख करे छे बहार आववा प्रेरणा करे छे(अर्थात् ताजु करे छे) आनो अर्थ शु' मारा जाणवा प्रमाण पहेला सात अंगो कदापि एक भाव धारण करता होय तेम शास्त्रमा मानवामा आव्यु नथी अने तेम बराबर रीते करी शके पण नहि कारण के उवासगदसाओ रचनाशैलीमा छठ्ठा अंगनी अपेक्षाए आठमा अने नवमा अंगनी साथ वधारे समान छे अने आपणे कदाचित मानी लइए के धर्मशास्त्र–आगम–जे रूपमा अत्यारे विद्यमान छे ते ज रूपमा ते वखते हता–जो के आ वात तद्दन आर्दश सपात्र छे तो ६४ मु अध्ययन ते भगवतीना ५ मा ' संघ साथे बंध बेसे जेने सारवेले करीथी ताजा कर्यो होय परंतु आम मानवु ते मूर्खता भरेलु छे वळी १–११ अंगोमा कुल ६४ अध्ययनो नथी परंतु ३३+१ +२० एटले ६३ ज छे परंतु आ विषय हु अन्य स्थळ चर्चीश कलियुग कोइ पण मायायुग स्थाप्यो न हतो ते बात तो खुल्ली छे कारण के अशोक तेनो उपयोग करतो नथी अने ए उपरान्त प्लाइनी (Pliny) ६, १७ (२१) मा जे मेगेस्थिनीसनु कथन आपेलु छे के बेक्कसपिता (Father Bacchus) थी माडीने ते अलेक्झान्डर सुधी एटले ६४ ५१ वर्षोमा हिंदुओ १५३ राजाओनी गणत्री करे छे ते मने तो कलियुग अगर अन्य कोइ लौकिक युगनी गणतरीनी कदी नोंध होय तेम लागतु नथी सरखावो वळी Arrian Ind ch 8

77 दीपवंश ४, ४४ ५ ३५ 78 दीपवंश ,, १

बाद एटले कुल ३२ वर्ष अने उदय-(भद्द) १६ वर्ष. 79 परंतु महावंशमां जे जणावेलुं छे के अनुरुद्धक अने मुंडे ८ वर्ष राज्य कर्युं हतुं. ते बाबत दीपवंशमां तद्दन छोडी ज दीधी छे अने ५, ७८ थी तो चोक्कस अनुमान थाय छे के उदयनो उत्तराधिकारी नागदास हतो. नागदासे ओछामां ओछां २१ वर्ष 80 राज्य कर्युं हतुं. ते ११, ३० उपरथी मालुम पडे छे. शिशुनागे १० वर्ष 81 राज्य कर्युं अने तेनी पछी कालाशोक गादी उपर आव्यो. परंतु तेनी कारकीर्दी केटलो काळ रही ते संबंधी दीपवंशमां कांइ कथन होय तेम मारा जाणवामां नथी. दीपवंश ५, ९९ मी गाथा, जे नीचे आपी छे तेमां कालाशोकने जरूर तेना पिता सुसुनाग साथे भेळसेळ करी दीधो हशे कारण के तेमां कह्युं छे केः—

सुसुनागस्सच्चयेन होन्ति ते दस भातरो ।
सब्बे बावीसति वस्सं रज्जं कारेसु वंसतो ॥

आमां कालसोकना दश पुत्रोनो स्पष्ट निर्देश थएलो छे, जेमणे महावंशमां जणाव्या प्रमाणे ६२ वर्ष राज्य कर्युं हतुं नंदोनो तो पतो ज नथी चन्द्रगुप्ते २४ वर्ष राज्य कर्यानुं जणावेलुं छे बिंदुसारनो मात्र ५, १०१ ६, १५ मां अशोकना पिता तरीके निर्देश थएलो छे, परंतु तेना अमलनो काळ आप्यो नथी 82

अशोके ३७ वर्ष राज्य कर्युं हतुं (५, १०१) बुद्ध पछी २१८ वर्षे तेनो अभिषेक थयो हतो, अने अभिषेक थया बाद त्रण वर्षे तेणे धर्मपरिवर्तन कर्युं हतुं. विगेरे विगेरे. आ बधी हकीकतो सुप्रसिद्ध छे परंतु बीजी बाजुए, नीचे आपेली प्रकट कृत्रिम गाथा ६, २४ -

परिपुण्णवीसवस्साम्हि पियदस्साभिसिञ्चयुं ।
पासण्डं परिगण्हन्तो तीणि वस्समतिक्कमि ॥

के जेनी अंदर २० वर्षो कोई अज्ञात बीनानी साथे लगाड्यां छे उपरांत अशोकना समयना संबंधमां एक गोटाळा भरेली बीजी हकीकत आपेली छे' ६, १०२ मां जणावेलुं छे के अशोकना २६ मा वर्षमां तिस्स गुजरी गयो परंतु ७, ३२ मां ते आठमा वर्षमां गुजरी गयो हतो तेम जणावेलुं छे आ परस्पर विरोधी कथनो केवी रीते उत्पन्न थयां हशे ते हुं समजी शकतो नथी.

११, १, थी आपणने सिलोनना राजाओ संबंधी हकीकत मळे छे के, जेमांना प्राचीन राजाओए तो घणा लांबा समय सुधी राज्य भोगव्युं हतुं, अने पछीना राजाओए घणांज थोडां वर्षो तेम करी शक्या. ५, ११, ८ मां जणावेलुं छे के विजयराजा अजातशत्रु 83 पछी ८ मे वर्षे गादी उपर आव्यो अने ३८ वर्ष राज्य करी उदयना १४ मा वर्षमां गुजरी गयो. त्यार-

---

79 दीप० ४, ३८ ५, ९७

80. नागदास जो खरेखर उदयनो उत्तराधिकारी होय तो तेणे ४० वर्ष राज्य जरूर कर्युं होय कारण के कालाशोकने निर्वाण पछीना १०० मा वर्षमां, राज्य करता १० वर्ष अने १५ दिवस थयां हता

81. दीप० ५, ९७,

82 परंतु आनी गणतरी ११, १२-१३ (जुओ, हेठळ) थी करी शकाय, अने ते प्रमाणे तेना राज्यसमयनां वर्षसंख्या २९ मेळवी शकीए.

83. दी० ९, ४० प्रमाणे बुद्धना अंतिम वर्षमां ते सिलोन आव्यो महावंश ७, १ प्रमाणे जे रात्रिए बुद्धनिर्वाण थयुं ते ज रात्रिए.

पछी लगभग एक वर्ष जेटलो निनायकी-अराजक-काल गया पछी एटले उदयना १६ मा वर्षे पण्डुवासनो राज्याभिषेक थयो अने ते ३० वर्ष राज्य करी नागदासना एकवीसमा वर्षमा अवसान पाम्यो तेना पछी अभय राजा थयो अने तेणे २० वर्ष राज्य कर्युं अने त्यारपछी फरीथी १७ वर्ष अराजक पणु रह्युं ते अंधाधुंधी दरम्यान पकुण्डक या पण्डुकाभय जे लुटारा तरीके जीवन गुजारतो हतो (चोरो आसि, ११, २) ते पोताना नव मामाओने मारीने (११,३) अनुराधपुरमा अभिषिक्त थयो अने ७० वर्ष राज्य करी चन्द्रगुप्तना १४मा वर्षमा मरण पाम्यो ते पोतानो राजमुकुट पोताना पुत्र मुटसीवने सोंपतो गयो हतो आ मुटसीव ६० वर्ष राज्य करी अशोकना[84] अभिषेक पछी १७ वर्ष इ स पूर्व २७ मा देहान्त पाम्यो आ सघळी हकीकतो उपरथी चन्द्रगुप्तनो समय इ स पूर्वे ३१५-३१४ मा आवे छे अने अशोकनो राज्याभिषेक इ स पूर्वे २५७ मा पडे छे परन्तु आ वर्षे मिति ओ वधारे अचोक्कस थाय छ हवे विचार करीए के पकुण्डक जे पोताना अभिषेकना समये ३७ वर्षनो हतो तेणे ७० वर्ष राज्य कर्युं होय अने तेना पछी तेना पुत्रे ६० वर्ष राज्य कर्युं होय ते अशक्य जेवुं ज लागे छे[85] परन्तु आमा कये स्थळे भूल रहेली छे तेनो मात्र निर्णय करवो कठीण छे छतां गणतरीनी चूक पण बहु मोटी नहि होवाथी, सिलोनना ऐतिहासिक ग्रंथो, व्यवस्थित करेली इ स पूर्वेनी ४७७ नी तारीखने कायम राखवामा प्रतिबंध करे तेम लागतुं नथी

आ टुंकी तपासनुं संक्षेपमा तात्पर्य -अशोकना राज्याभिषेक इ स पूर्व २७२ अने २७०नी वचमा थयो हशे अने तेनुं वास्तविक राज्याधिरोहण तेनाथी लगभग चार वर्ष पहेला एटले इ स पूर्वे २७६-२७४ वर्षे थयुं हशे जो एनाथीए वधारे चोक्कस तारीख मेळववा माटे उपर आपेला बीजा वर्षो गणत्रीमा लईए अने अशोक इ स पूर्व २७४ मा राजा थयो हतो एम धारीए तो तेना राज्यकालना ४१ (४+३७) वर्षो गणत्रीमा लेवाथी तेना देहान्तनी तारीख तरीके आपणे इ स पूर्वे २३३ मुं वर्ष मेळवी शकीए बिन्दुसारना सम्बधमा ब्राह्मणग्रंथोनुं कथन बौद्धग्रंथोना कथन करतां वधारे साचुं-प्रामाणिक छे तेम मारुं धारवुं छे अने तेना राज्य कालनो समय आपणे वधारेमा वधारे २५ वर्षनो ज स्वीकारी शकीए आ अनुसार तेनो समय इ. स पूर्वे २९९ अने २७४ वर्षोनी वच्चे निर्णीत थाय अने मारुं एम पण मानवुं छे के तेनुं राज्य पछी ज शरु थयुं हतुं चन्द्रगुप्ते इ स पूर्वे ३२३ अने २९९ नी वच्चे राज्य कर्युं हशे अने आम थयुं ज मने तो वधारे संभवित लागे छे परन्तु कारण ए छे के जस्टिन १५, ३ माथी जो कोईपण अनुमान नीकळी शकतुं होय तो ते एज छे के चन्द्रगुप्त पाश्चिमात्य प्रान्तो[86] जीत्यानी पहेला ज केटलाय वर्षे मगधनो राजा थयो हतो जो के तेणे ते समय पहेला[87] अलेक्झान्डरने खरेखरी रीते जोयो होय तो पण आ अनुमानने बाधो आवतो नथी मेगेस्थिनीज स्यारी पूर्व इ स पूर्वे ३०३-३०२ मा, पाटलीपुत्रना[88] राजदरबारमा आवेलो हतो तेथी अने

84 आ कथन उपरथी बिन्दुसारना समयनी गणतरी करी शकाय तेथी आशरे ९ वर्ष राज्य कर्युं हतुं एम जणाय छ

85 आ वात तो खरेखर आश्चर्य पमाडे छ के एक कथना वधारे लेखरानुं केम्बु छ के Taprobane ना निवासीओ घणा लांबा आयुष्यवाळा हता सरखावो, उदाहरण तरीके प्लाइनी (Pliny) ६, २ (२४)

86 मि विन्सेन्ट स्मिथ पोताना प्राचीन इतिहासना पृ ११५ उपर दर्शावेलो अभिप्राय जो के बाधी वेदक छे छतां हुं तेने स्वीकारी शकतो नथी

87 प्लुटार्क Alex ch 72　　　88 Smith l c p 118

त्यां केटलांक वर्ष रहेलो होवाथी, चंद्रगुप्तना मरणनी प्राचीनमां प्राचीन मिति, मेगेस्थिनीजे तेना जीवना होवानुं चोक्कस कथन करेलुं होवाथी, ते मात्र इ. स. पूर्वे २९९ वर्षे ज घटी शके.

त्यारे हवे, इ स पूर्वे ४७७ अने ३२२ मा वर्षनी वच्चेनुं १६४ वर्षोनुं अंतर आपणे अजातशत्रु अने तेना वंशना राजाओ, तथा नंदराजाओना राज्यकालथी भरी शकीशुं. अजातशत्रु बुद्ध पछी २४ वर्षे राजा थयो हतो एम कहेवाय छे. अने ते उपरथी तेनी अवसानमिति तरीके लगभग इ. पूर्वे ४५३ 89 आपणे प्राय नक्की करीए उदय अथवा उदायि जेने हुं शैशुनाग वंशनो छेल्लो राजा मानुं छुं तेणे पुराणमां आपेली हकीकत अनुसार ३३ वर्ष, अने सिलोनना इतिहास अनुसार मात्र १६ वर्ष राज्य कर्युं हतुं परंतु आ स्थळे आपणे जैनोनुं पण शुं कथन छे ते ध्यानमां लेवुं जोईए आ बाबत हुं आगळ उपर चर्चीश. परंतु ते कथन, एकंदर पौराणिक कथनने पुष्टि आपतुं होय तेम लागे छे दीघनिकाय उपरथी एटलुं तो स्पष्ट जणाय छे के अजातशत्रुए ज्यारे बुद्धनी मुलाकात लीधी त्यारे उदायि ते अगाउ जन्मेलो हतो तथा ते वखते ते ऊंमर लायक थयो हतो,एम मनातुं हतुं. आम छतां तेणे ३० वर्ष राज्य कर्युं पण होय आ गणतरी आपणने स्थूल रूपे इ. स पूर्वे ४२५ अगर ४२० अर्थात् चन्द्रगुप्त पूर्वे सो वर्ष जेटला अर्वाचीन काळमां लावी मूके छे. अने आ समय मुख्यत्वे करीने नंदराजाओनो होय, जेमणे हेमचंद्रना कहेवा मुजब ९५ वर्ष, तेमज जे रीते में उपर पुराणमांथी तारवी काढ्यां छे ते मुजब आसरे ८५ वर्ष, राज्य कर्युं हतुं शुशुनाग नाम खास सन्देहजनक लागे छे कारण के शिशुनाग तो ते वंशनो स्थापक हतो, जेमां बिंबिसार आदि राजा थया हता जो कालासोक खरेखर थई गयो होय तेम आपणे मानीए तो ते नन्द ज हशे आ प्रमाणे शैशुनाग वंशनो इ स. पूर्वे ४२० ना अरसामां अंत आवी गयो हशे अने आम मानवाथी हेमचंद्रना नंदराजाना अभिषेक संबंधी कथन साथे तेनो विरोध पण आवतो नथी. तेथी आ मितिने पासेनी मिति तरीके स्वीकारी शकाय अने हुं इ स. पूर्वे ४७७ वर्षने बुद्धनिर्वाणनी अतिशय संभवित मिति तरीके स्वीकारवामां कोई पण वांधो होय तेम जोतो नथी. 90 हवे जो बुद्धनिर्वाणनी अन्य सौ-

---

89 आ २४ वर्षने पुराणमा अजातशत्रुना राज्यकालना जणावेला २५ वर्ष साथे अद्भुत मळतापणु छे आनो भावार्थ शु ए होय के गणनानो उपयोग बुद्धनिर्वाणथी थयो हशे, कारण के ज्यारे पौराणिक राजयादी उत्पन्न थई त्यारे आ बुद्धनिर्वाण मोजुद हतु आ उपरात बीजु पण एक मळता पणुं अशोकना संबधमा मळे छे. कारण के पुराणमाना अशोकना ३६ वर्षो, बौद्धोए अशोकना अभिषेक बादना बतावेला ३७ वर्ष साथे मळता आवे छे

90. मि विन्सेन्ट ए. स्मिथ, प्राचीन इतिहास, पृ ४२ f, मा बुद्धनिर्वाणने इ. स पूर्वे ४८७–८६ मा नक्की करवा रजु करेला कारणोना विषयमा कंइनु जोईए के ते बीलकुल विश्वसनीय जणाता नथी. वर्षगण्य अने विंध्यवास ए बन्ने वसुबन्धुना समकालीन हता अने चीनी ग्रंथोमा एम जणावेलु छे के 'तेओ निर्वाण पछी ९०० वर्षे थया हता' परतु एम्. एन्, पेरिए B. E F E O XI. 339 ff पुरता प्रमाणो आपी बताव्यु छे के चीनी ग्रंथकारो निर्वाणसमय इ स पूर्वे छठ्ठी सदीमा मूके छे, अने बीजु ए के वसुबन्धु इ स ३५० नी पहेला थई गयो हतो केन्टननी "खण्डित-टिप्पणिका" (Dotted record) जे इ.स ४८९ मा समाप्त थई हती ते बुद्धनिर्वाणनो समय इ स. पूर्वे ४८६ मा बतावे छे अने ते टिप्पणिका उपलक जोता, उपयोगी होय तेम भासे छे परतु ज्यारे आपणे वधारे विचार करीए छीए त्यारे भिन्न भिन्न शाखाओना बौद्धोनुं आ समयना विषयमा भिन्न भिन्न मन्तव्य जोवाय छे अने कोईपण बौद्धशाखा निर्वाणना आ समय अर्थात् इ स पूर्वे ४८६ थी गणत्री करती नथी त्यारे केवल आ एकज नोंधमां आपेली तारीख ज खरी छे एम मानी लेवु बहु अजब लागे छे. उदाहरण तरीके परमार्थ-

मिति करता विश्वसनीय मितितरीके इ स पूर्वे ४७७ मु वर्ष जो स्वीकारी शकाय तो तदनुसार बुद्धनो जन्म अवसानसमये तेमनु वय ८० वर्षनु हतु तेथी इ स पूर्वे ५५७ मा थयो हशे अने आ विषयना सघळी हकीकतोनु आपणु एकज मूळ जे पालिग्रंथो छे ते एम जणावे छे के तेमणे २९ वर्षनी ऊमरे सन्यास ग्रहण कर्यो हतो तथा ३६ मा वर्षे बुद्धत्व मेळव्यु हतु ते उपरथी आ छेल्ली घटना जरूर इ स पूर्वे ५२० मा वर्षे हशे आ गणत्री-जे लगभग साची ज छे-ते अनुसार एटलु तो सुगम्य छे के जो महावीरनु देहावसान जे एक परपरानुसार कहेवाय छे के इ स पूर्वे ५२७ मा थयु हतु ए जो खरु होय तो ते प्रमाणे तेओ अने तेमनो महान् प्रतिस्पर्धी बुद्ध बन्ने कोई पण वखते परस्पर मळी शक्या होय तेम मानी शकाय ज नहि, अने ते प्रमाणे पालिग्रथोमा नातपुत्त अने तेमना अनुयायीओना सबधमा करेला सघळा उल्लेखो कल्पनाजन्य अने इतिविपरीत बनावी लीधेली योजना रुपे ज ठरे परतु आम मानवु ते तो कोई पण दृष्टिए सगत होई नहि शके

आ रीते आपणे जोई शक्या छीए के बुद्धनिर्वाणनी तारीख जो इ स पूर्वे ४७७ वर्षना होय-अने आम होवामा काई शका नथी-तो महावीर निर्वाणनी इ स ५२७ नी तारीख यथार्थ होय ए शक्य ज नथी आ महावीर नीर्वाणनी उपरोक्त तारीख जे पछी गणतरी उपर अस्तित्वमा आवेली के तेओ विक्रम पूर्व ४७० वर्षे निर्वाण पाम्या हता, तेनो पायो मजबूत नथी, तेटला माटे आपणे निःसदेह रीते आ मितिनो अस्वीकार ज करवो जोईए अने तेने बदले कालगणनात्मक बधी गणत्रीओनी साथे बधबेसे तेवी बीजी मिति शोधी काढवा प्रयत्न करवो जोईए आ प्रकारनी मिति डॉ जेकोबीए[91] घणा वर्ष पूर्वे सूचवी दीधेली होवाथी मारू कर्तव्य मात्र तेमनी दलीलोनु महत्त्व बतावावानु तथा तेने केटलाक नवा हेतुओ द्वारा मजबूत करवानु छे, एम हु मानु छु

३ हेमचन्द्रनी जैन परपरा अने महावीरनो सत्य समय

जैन ग्रन्थकारोमा सौथी महान् मनाता हेमचन्द्रे (इ स १०८८-११७०) पोताना स्थविरावली चरित—जे साधारण रीते परिशिष्टपर्वने नामे ओळखाय छे-तेमा बिंबिसारथी माडीने अशोकना पौत्र अने तेना उत्तराधिकारी सम्प्रतिना वखतना काळनो एक प्रकारनो इतिहास आपेलो छे आ ग्रथ जे घणे स्थळे मात्र एक मन कल्पित अने पौराणिक ऐतिहासिक नोंध जेवो जणाय छे ते तेमणे पोताना धर्मप्रवर्तकोना पुराण-वर्णनना एक परिशिष्ट रुपे लखेलो छे परतु मारी खातरी थई छे के आ नोंध जो के केटलेक स्थळे गुचवाडा भरेली तथा पौराणिक लागे छे छता पण तेमा अहीं तहीं केटलीक साचा अने ऐतिहासिक बाबतो सूचित थएली छे अने आ ऐतिहासिक बाबतो महावीरनो समय निर्णय करवामा उपयोगी थाय तेम छे

जेना समय ४९९, ५६९, छे ते एम जणावे छे के तेनी एक कृति बुद्ध पछी २६५ मां वर्षे समाप्त थई हती (परि l c p 361) हवे जे परपरा जणावे छे के अशोक बुद्धनिर्वाण पछी २२ वर्ष थया हता तथा ते शी-हाग-ति (इ स पूर्व २४६-२१) नो समकालीन हता ते परपरानुसार बुद्धनिर्वाणना समय इ स पूर्व ४९६ (२४६+ २५) मां मुकाय मि वि गायगर ऐय्यर, इन्डि एन्टी ३७ ३४१ मां जणावेला कारणोना सबधमां एटलु जणाववु बस थाय के ते सघ दलीलो सहसाराम आज्ञामां आवेला २५६ नी गणतरी उपर अवलम्बित होवाथी तेमज सिलोनना दानहागप्रथामां आपेली मितओने सबधी अर्थघटनपर बहुल रीते ऊभी करवामां आवेली होवाथी साची नथी

91 कल्पसूत्र, पृ ८ अने ते पछीना

श्रेणिक (बिंबिसार) अने तेनो पुत्र कूणिक (अजातशत्रु) जैनोमां सुप्रसिद्ध छे, परंतु तेमना राज्यकालनी मितिओ, मारी जाण मुजब, कोई पण स्थळे आपवामां आवी नथी. हेमचंद्र ६, २१ मां जणावे छे के कूणिक चंपामां मरण पाम्यो हतो अने तेनी पछी उदायिन् राज्यगादी उपर आव्यो हतो, अने तेणे राजधानी तरीके नवुं नगर, पाटलीपुत्र, वसाव्युं हतुं. आ राजा चुस्त जैन हतो अने घणो सत्ताशाली थई शक्यो हतो. परंतु तेना उपर एक शोकजनक विपत्ती आवी पडी हती हकीकत ए छे के तेणे कोईएक राजाने गादी उपरथी उठावी दीधो हतो, तेना पुत्रे युक्तिथी जैन साधुनो वेश पहेरी तेना महेलमां प्रवेश कर्यो अने तेने मारी नांख्यो उदायीनी पाछळ वारस न हतो अने तेथी करीने तेनां पांच राजचिन्होने तेनो उत्तराधिकारी शोधवा बहार मोकलवामां आव्यां पसंदगी विलक्षण थई, कारण के एक नापित अने गणिकानो पुत्र जेनुं नाम नंद हतुं ते आ रीते पसंद थयो (६, २३१) अने राज्यासने तेनो अभिषेक थयो आ बीना, परि० ६, २४३ ना नीचे आपेला श्लोकनी अनुसार, महावीरनिर्वाण पछी ६० वर्षे बनी

अनन्तरं वर्धमानस्वामिनिर्वाणवासरात्। गतायां षष्टिवत्सर्याम् एष नन्दोऽभवन्नृपः॥

आ नंदना संबंधमां हेमचंद्रे विरोधदर्शक विचार बिलकुल प्रदर्शित कर्यो नथी. अने ते उपरथी आपणे साधारण एम मानी शकिए के आ नंद केटलाक प्रमाणमां जैनधर्मनो संरक्षक मनातो हशे आ धारणाने उदयगीरिमांथी मळेला खारवेलना शिलालेख रूप एक अतिशय महत्त्ववाळा लेखद्वारा साचुं समर्थन मळतुं होय तेम जणाय छे ते लेखमां नंदराजना संबंधमां बे उल्लेखो थएला छे अने आ नंदराज ते सामान्य रीते नंदवंशनो ज हशे. आ लेखनो प्रथम फकरो जो के सर्वथा अस्पष्ट छे अने बीजो फकरो त्रुटित थएलो छे परंतु तेनी पछीनो भाग स्पष्ट जणावे छे के खारवेले 'मगधना राजाने अग्रजिन (प्रथम तीर्थंकर) ना पगे पडाव्यो जेने नंदराज लई गयो हतो (?) [पादे च (मू) दापयाति नंदराजनितस अगजिनस]. आ 'अग्रजिन' शब्द ते महावीर तथा ऋषभ बन्नेने लागु पडी शके–अने अहींआं गमे तेने लागु पडतुं होय—परंतु आटलुं तो स्पष्ट ज छे के कालिंग उपर स्वारी करी ते वखते नंदराजा जिननी 92 प्रतिमाने लई गयो हशे अने जो ते जिनमां श्रद्धावाळो न होय तो ते शा माटे आवी वस्तु लई जवानी पसंदगी करे? आ उपरांत नंदनो पूर्वाधिकारी–पूर्वज उदायी ते एक श्रद्धालु जैन हतो अने अजातशत्रु पण थोडेक अंश तेवो ज हतो. 93 आ उपरथी आ बधा राजाओने बौद्धो 'पितृघातक वंश' एवुं जे नाम आपे छे तेमां कांई नवाई जेवुं जणातुं नथी. जो के आ नाम अन्य स्थळे वस्तुतः मात्र अजातशत्रुने ज घटतुं होय एम मानवामां आव्युं छे

आ प्रमाणे महावीरनिर्वाण अने नंदना राज्याधिरोहण वच्चे ६० वर्षोनुं अंतर पडे छे आ कालांतरमां स्पष्ट रीते कूणिकना राज्यसमयनो केटलोक भाग तथा उदायिन्नी संपूर्ण कारकीर्दीना समयनो समावेश थएलो छे अने मे उपर सिद्ध कर्युं छे के उदायी प्राय तेना वंशनो छेल्लो ज राजा हतो. हवे बुद्ध, इ स पूर्वे ४७७ मां निर्वाण पाम्या होय, तो ते हिसाबे अजातशत्रु इ. स पू. ४८५ मां राजा थयो हशे अर्थात् निर्वाण पहेलां आठ वर्षे आ राजानुं पहेलुं साहस तेणे कोसलना वृद्ध राजा साथे युद्ध आरंभ्युं ते हतुं आ कोसलनो राजा ते

92 आ हकीकतने मळती एवी एक वात, प्रो. जेकोबीना 'आउस्गेवाल्ट इर्त्सेलुंगेन, पान ३१ अने ते पछीनामां, प्रद्योत अने उदयनना संबंधमां लखेली मळी आवे छे

93 जुओ जेकोबीनुं कल्पसूत्र, पृ० ५

तेनी ओरमान मातानो भाई हतो भगवतीसूत्रना १५ मा [94] सयमा एम जणावेलु छे के पाछ डात्राय गोशाल, जे महावीरनो कट्टो प्रतिस्पर्धी हतो ते आ लडाइना [95] अत तरतज थाय स्त्रीमा मरण पाम्यो हतो अने तेना मरण पछी १६ वर्ष महावीर जीवता रह्या आ मिति गोशालना सबधमा आपवामा आवेली अन्य मितिओ साथे मळती आवे छे ते आपणे नीचेनी हकीकत उपरथी जोई शकीशु महावीर पहेला बे वर्ष ज्यारे गोशाले जिनत्व प्राप्त कर्यानो दावो करेलो हतो त्यारे महावीरनी ऊमर ४० वर्षनी हती अने त्यारपछी १६ वर्ष सुधी तेओ बन्ने मळ्या ज न होता त्यारपछी तेओ मात्र, गोशालना मरणना वर्षमा एटले छेल्ली वखते मळ्या हता आ उपरथी गोशाले काळ कर्यो ते वखते महावीरनी ऊमर ५६ वर्षनी हशे महावीरनी कुल ऊमर ७२ वर्षनी हती एटले ते उपरथी तेओ गोशाल पछी १६ वर्ष जीवता रह्या हता ते पण साबित थाय छे [96] आ १६ वर्षनी गणतरी करता आपणे ई स पूर्वे ४५०थी सहेज पाछळ एटले आशरे ४६८-६७ मा उतरी आवीए छीए आ तारीख हेमचद्रना कथन-आधारे महावीरना निर्वाण तरीके सूचवेली तारीख साथे तद्दन मळी जाय छे जो के कूणिक अजातशत्रुना राज्यसमय दरम्यान महावीर स्वामीनु निर्वाण थयु हतु एवु चोक्कस कथन मारा जाणवा प्रमाणे, मळतु नथी ए वात खरी परतु तेवी रीते, तेमनो अने उदायीनो मेळाप थया हता एवु बतावनार पण कोई कथन जणातु नथी अने हु धारु छु के, आपण वळके एवु ज अनुमान करवु जोईए के बौद्धग्रथोमा अजातशत्रुना राज्यकालना जे ३० वर्ष बताव्या छे ते साचा छे उदायीनु राज्य १६ वर्ष चाल्यु हशे अने कदाच, अजातशत्रु अने तेना वच्चे जो बीजो कोई न थयो होय तो ३२ थी पण वधारे वर्ष तेणे राज्य कर्यु होय [97]

नदराजाओ के जेमनी सख्या ९ हती तेमना मत्रिओ घणा कुशळ हता ए मत्रीओ सघळा, प्रथम नदराजाना मत्री कल्पकना वशजो ज हता छेल्ला नदराजाना प्रसिद्ध मत्रीनु नाम सकटाल हतु आ सकटालने प्रस्तुतविषयमा स्थूलभद्रना पिता तरीके वर्णववामा आव्यो छे अने स्थूलभद्र ते जैन धर्मना सातमा (अगर नवमा) युगप्रधान आचार्य हता अने तेओ महावीर पछी २१५ (अथवा २१०) मा वर्षमा गुजरी गया हता ए पुस्तकमा नद सकटाल वररुचि, चद्रगुप्तनी युवावस्था तथा चाणक्य साथेनो तेनो सबध—ए विषयक जेटली कथाओ—वातो आपवामा आवी छे ते सघळा मात्र परीनी वातो (Fairy tales) जेवा देखाय छे परतु ए जोता आश्चर्य उत्पन्न थाय छे के आ कथाओ छेक आवश्यक निर्युक्तिनी टीकामा पण आवेली छे अने ते तेनाथी पहेला लखायेली होय तेम देखाय छे तेम ज केटलेक अशे कथासरित्सागरनी वातोओने पण मळती आवे छे अने महावश टीकाना ११९, ८ थी, १२१,

94 हानल आवृत्ती उवा परिशिष्ट १ तथा हरिभद्रसूरी इन्सा ए २६ मानी हकीकत साथ सरखावो

95 आ बनाव ल्हाई पछी बन्यो हतो तेनी साबीती भगवती पृ १२५४ अने त पछीनामाना उपरथी, स्पष्ट मळी आवे छे गोशालना ज निर्यतिना ८ सिद्धाता बताव्या छे तेमा ए लडाइनु सूचन पण थाय छे सरखावो हार्नल) ८ पा २६२

96 सरखावो हानल, उवा भार २ पा ११

97 जो आपणे महावीरना मृत्यु माटे ई स पूर्वे ४६७ नु वर्ष स्वीकारी लईए तो पछी अजातशत्रु जो ते बुद्ध पछी २४ वर्ष जीवतो रह्यो होय तो तेमना पछी १४ वर्ष मरण पाम्या होवा जोईए महावीरना निर्वाण अने नदना राज्यारोहण वच्चे हेमचद्रना कथनानुसार जो ६ वर्षनो अतर होय तो ते मुजब उदायीए ४६ वर्ष पर्यंत राज्य कर्यु जोइए पण आ समय बहु वधारे पडतो लेखाय कारण के तेना गादीए आव्या पहेला ३ वर्ष उपर ज्यारे कणिक बुद्धनी मुलाकात लीधी हती त्यारे तेनो जन्म थएलो हतो एवो उल्लेख मळी आवे छे (नि १५)

२२ ff, 98 भागो साथे तो तेनाथी पण वधारे मळती आवती होय तेम जणाय छे. परंतु आपणने आ स्थळे आ बाबत काई महत्वनी नथी. तेनाथी जे कांई सिद्ध थाय छे ते मात्र एटलुं ज छे के 'आपणा सननी पछी केटलीक सदीओ सुधी नंदो अने मौर्यराजाओना कालना संबंधमां केटलीक कथाओ हिंदुस्तानमां प्रचलित हती.' (जेकोबी, परिशिष्ट पर्व पृ. ५० टि. २). आ बधुं छतां आ ग्रंथमां जो कोई महत्त्वनो श्लोक होय तो ते ८, ३३९ मां आवेलो नीचेनो श्लोक छेः—

एवं च श्रीमहावीरमुक्ते वर्षशते गते । पञ्चपञ्चाशदधिके चन्द्रगुप्तोऽभवन्नृपः ॥

आ श्लोकना महत्त्व उपर भार मूकतां, जेकोबिए केटलांक वर्षो आगम च जणावी दीधुं छे के आ श्लोक, महावीरना निर्वाण संबंधी एक नवी अने वधारे संगत परंपरानो सूचक छे 99 'चन्द्रगुप्तोऽभवन्नृपः' अने ६, २४३ ना अंते आवतो 'एप नन्दोऽभवन्नृपः' आ बन्ने पदोनी रचनाशैली एटली बधी मळती लागे छे के जेथी भाग्ये ज एम कही शकाय के ए अणधारेली रीते—आकस्मिक रीते— लखाई गया होय अने तेना उपरथी एवुं अनुमान निकळतुं होय तेम लागे छे के हेमचंद्रे आ श्लोको कोई विशेष प्राचीन ग्रंथोमांथी अक्षरश उद्धृत कर्या हशे अथवा तो कोई प्राचीन कालगणनात्मक प्राकृत गाथाओनुं भाषांतर कर्युं हशे हेमचंद्र फक्त एटलुं ज जणावे छे के चन्द्रगुप्तनी पछी तेनो पुत्र बिंदुसार गादी उपर आव्यो हतो (८, ४४५) अने बिंदुसार पछी तेनो पुत्र अशोकश्री राजा थयो हतो. (९, १४) अने अशोकश्रीए पोतानुं राज्य पोताना पौत्र संप्रतिने सोप्युं हतु. आ संप्रति ते कुणालनो पुत्र हतो(९, ३५) अने एक श्रद्धावंत जैन हतो. हेमचंद्रे आ स्थळोमां तेओना समयनुं बीलकुल सूचन कर्यु नथी, तेम कालगणना साथे पण तेओनुं अनुसंधान बताव्युं नथी. ते उपरथी जेकोबीना मानवा प्रमाणे आपणे एम धारी शकीए के तेमणे विक्रमसंवत् अने चंद्रगुप्तना राज्याधिरोहणना काल वच्चेनुं अतर २५५ वर्षनु बतावती परंपराने सत्यरूपे स्वीकारी हशे आ गणतरी अनुसार महावीरनिर्वाण अने विक्रमना राज्यधिरोहणनी वच्चेनो काल २५५ + १५५= ४१० बराबर थाय अने ए उपरथी ए पण अनुमान फलित थाय के महावीर इ. स पूर्वे ४६७ मा वर्षमां निर्वाण पाम्या हता. मारा मानवा प्रमाणे आ ज तारीखथी निर्वाण संबंधी बीजी पण बधी बाबतोनो निकाल आवी शके छे, अने तेटला माटे ते ज खरी छे एम मानवुं जोईए

98 सरखावो, टर्नर, महावग १ पृ० ३९ नी फुटनोट तेम ज गायगर, दीप० महा० पृ० ४२ फू. आ ग्रन्थ अने परिशिष्ट पर्व वच्चे नानामा नानी विगतोनी पण समानता छे महावशनी टीका पाछलथी थएली जणाय छे (गायगर, तेज पृ. फु ३७) पण तेमानी सामग्री जूनी छे

99 कल्पसूत्र, पृ. ८. नी फुट नोट

100 दिव्या पृ० ४३० मा अशोक पछी सप्रतिनो जे उल्लेख थएलो छे ते आथी वधारे महत्वनो बने छे नागार्जुनी गुफाना लेखोथी मालूम थयु छे के मगधमा अशोक पछी दशरथ गादिए आव्यो हतो के जेना विषे जैनो कशु कहेता नथी आ उपरथी, मि विन्सेन्ट ए. स्मीथे पोतानी अर्ली हिस्टरी ऑफ इन्डियामा जे एम सूचन कर्यु छे के—अशोकना मरण पछी तेना साम्राज्यना पूर्व अने पश्चिम एम बे विभागो थई गया हता, ते मने खरु लागे छे सप्रतिना पिता कुणालनो उज्जयनी अने तक्षशिला साथेनो सतत संबध ए ज बाबत सूचवे छे. अने जैनो जे मौर्योनो राज्यकाल १०८ वर्षनो गणे छे तेनो पण कदाच आ हकीकतथी निकाळ आवी शके कारण के इ. स पूर्वे १८५ मा मगधमाथी ज्यारे पुष्यमित्रे ए वशनो उच्छेद कर्यो तेनी पहेला ज पश्चिममा ए वंशनु राज्य बन्ध थई गयु हशे तेम छता, ए वात नोंधवा जेवी छे के मेरुतुंगे आपेली कालगणनात्मक गाथाओमा पुसमित्त (पुष्यमित्र) नी राज्यना ३० वर्षोनी नोंध लेवाएली छे अने आ समय इ स. पूर्वे २०४-१७४ ना गाळा साथे बंध बेसतो आवे छे ह, महाभाष्य अने मिनेन्डरना समयथी जे कालगणना नक्की थाय छे तेनाथी विरुद्ध आ उल्लेखने घटावी शकतो नथी.

मेरुतुंगे नोंधेली परंपरानुसार चन्द्रगुप्तना राज्याधिरोहणनुं वर्ष ई स पूर्वे ३१२ मुं आवे छे आ मिति घणी ज गुंचवाडो उत्पन्न करनारी छे मौर्यसंवत् ई स पूर्वे ३१२ मा वर्षे शरु थयो हतो ए बाबत, सेल्युसिडनना संवत्नी साथे ते संबंध अभिन्न छे एम बतावबा खातर मानवुं मने उचित लागतुं नथी जो के आपणे सारी पेठे जाणीए छीए के चन्द्रगुप्ते सेल्युकसने हिंदुस्तानमांथी देशवटो आप्यो हतो तेम ज तेनी पासेथी तेनी सत्ता हठेळना बेक्ट्रीआना मुल्कनो एक भाग रुचावी लीधो हतो परंतु ए बात समजमां नथी आवती के चन्द्रगुप्ते, तेना पराजित शत्रुना नाम उपरथी, पोताना संवत्नो आरंभ कर्यो होय आ उपरांत एम पण मनाय छे के चन्द्रगुप्ते नवो युग स्थाप्यो न होतो (सरखावो, उपर पृ ११५) परंतु चन्द्रगुप्त वीर पछी १५५ वर्षे राज्याभिषिक्त थयो हतो एम कहेवातुं होवाथी एम लागे छे के आ संवत्नो आरंभ पण कोई एक घणीज महत्वनी जैन बाबत साथे संबंध धरावतो हशे अने हुं धारुं छुं त प्रमाणे छे पण तेम ज

चन्द्रगुप्तनो समय जैनधर्ममाटे खरेखर एक अतिशय पीडा अने दुःखनो समय हतो आ समयमां जैनधर्म राज्याश्रयथी वंचित थयो हतो जो के जैनो चन्द्रगुप्तने जैनधर्मानुयायी तरीके अने पाछली वयमां तो खास तेने एक जैन साधु तरीके पण बतावे छे; परंतु चाणक्यनी राजनीति आवा पाखंडी मतोनी [1] अनुकूळ नहीं पण प्रकट प्रतिकूल हती अने वास्तविक रीते जोतां जैनोनो पूर्वहिंदुस्थान साथेनो संबंध ज अशोक पछी सर्वथा तूटी गयो हतो (आमां खारवेलनुं राज्य अपवाद रूप छे परंतु तेनो समय हजी सुधी अनिश्चित छे) ते त्यार पहेलां पण कटलेक अंशे शिथिल थयो होय एम लागे छे परंतु आ उपरांत चन्द्रगुप्तना राज्यकालमां १२ वर्षनो एक दारुण दुष्काळ पडयो हतो के जे दुष्काळ जैनधर्ममां भेद उभो करवामां निमित्त बन्यो हतो एम जणाववामां आवे छे ए ज समयमां श्वेतांबर अने दिगंबर नामना बे संप्रदायोनी शरुआत थई हती जे कालमां चन्द्रगुप्त राजा थयो हतो ते वखते—जैन इतिहासमां घणा ज थोडा कालांशोमां जोवामां आवे छे तेम—एक ज समये जैनधर्म संभूतिविजय अने भद्रबाहु नामना बे युगप्रधानोनी सत्ता हेठळ प्रवर्तती हती परंतु संभूतिविजये, चन्द्रगुप्त जे वर्षमां राज्याभिषिक्त थयो तेनी पछीना ज वर्षमां एटले वीर पछी १५६ मा वर्षमां काल कर्यो आ वर्ष ते कदाच हेमचन्द्र परिशिष्ट पर्व, ८ ३३९ मां जे कहे छे के १ १मुं वर्ष पूर्ण थयुं हतुं (गत) ते ज वर्ष छे; अने ते उपरथी मारी एवी मान्यता छे के आ बनावने अनुकूल आववा माटे ज हेमचन्द्रे चन्द्रगुप्तना राज्यनी शरुआत ई स पूर्वे ३१२(अथवा ३११)नी बराबर मळता एवा ते ज वर्षमां त्यार पहेलांना दशमा अगर अगीआरमा वर्षे न मूकतां मूकी छे संभूतिविजयनो मरणकाल जैन इतिहासना एक कालभागनो अंतसूचक छे ए बाबत खरी छे के तेमना पछी १५ वर्षे गुजरी गया हता ते भद्रबाहु तथा तेमना उत्तराधिकारी स्थूलभद्र ए

1 सरखावो —ई थामस गुप्तवंशनी नोंध (Records of the Gupta dynasty) पा १७ जेकोबी कल्पसूत्र पा ८ वि ए स्मीथ हिंदुस्ताननो प्राचीन इतिहास पा ३३ टी ; ४ टी १८७ टी फ्लीट, ज रा ए सो १९११ पा ८२५ टी० १

अथवा ज्यां सुधी ते अन्यकृत सिद्ध थाय नहीं त्यां सुधी हुं ते चाणक्यकृत ज मानुं छुं ए अर्थशास्त्रमां सांप्रदायिक अथवा जैन नगरना जराए उल्लेख जणाता नथी सिवाय के, पृ ५५वीगेरे उपरना उल्लेख के जमां बीजा बीजा देवोनी साथे कदाचित् जैन सम्मत अपराजित, जयंत अने वैजयन्तनो पण निर्देश छे पण मारा मते एमां कांई विशेषता नथी पृ १९९ इत्यादि उपरना तापकरनो उल्लेख जैनधर्म प्रवर्तकने सूचवे पण आपणे याद राखवुं जोईए के पाली पिटकमां अन्य तीर्थिक ए शब्द अनेक संप्रदायना भिक्षुओ माटे वापरायलो छे

वंने चतुर्दशपूर्वधारी हता, जो के स्थूलभद्रने छेल्ला चार पूर्वो बीजाने शीखववा मनाई थएली हती दिगंबरो भद्रबाहुने छेल्ला श्रुतकेवली माने छे त्यारे श्वेतांबरो स्थूलभद्रने छेल्ला श्रुतकेवली माने छे [2] आ उपरथी एम जणाय छे के संभूतिविजय करतां भद्रबाहु वधारे महत्त्वना लेखाता हशे अने तेम हतुं पण खरूं परंतु भद्रबाहु जो के आखा जैनधर्मना युगप्रधान हता छतां पण केटलेक अंशे सांप्रदायिक हता आम मानवानुं कारण ए छे के ज्यारे ते पोते दक्षिण तरफ जवा नीकळ्या त्यारे तेमणे पोताना अनुयायीओनी एक मंडळी मगधमां छोडी दीधी हती अने जे मंडळी तेमनी साथे दक्षिणमां गई हती तेणे पछी, जे मंडळी मगधमां रही हती तेमनां चारित्र तथा सिद्धान्तने पसंद कर्या नहि अने त्यारपछी भद्रबाहु नेपाल तरफ चाल्या गया अने सघळा सिद्धांतोने [3] एकत्र करवा उद्युक्त थएला संघने तेमणे मदद करवा घणी खुशी न बतावी ते उपरथी लागे छे के तेओ ते लोकोना आ कार्यमां संमत नहि होय अथवा तो तेने पूर्ण रीते पसंद कर्युं नहि हशे अने तेथी आखरे ए अनुमान थाय छे के मूळ प्राचीन, अविभक्त अने महावीरना समयथी निर्विकृत स्वरूपे चालता आवता जैनधर्मना वास्तवमां छेल्ला युगप्रधान संभूतिविजय छे, परंतु तेमना घणा ज वधारे प्रसिद्ध साथी भद्रबाहु, अन्यवस्थितकालनी असरने लईने कोई जुदीज हालतमा मूकाया. तेटला माटे मारुं धारवुं छे के चंद्रगुप्तने संभूतिविजयना देहान्तकालना वर्षमां मूक्यो हशे, जेम के महावीरनिर्वाणनी रात्रिमां पालकनो राज्याभिषेक मूकेलो छे [4]

इ स पूर्वेना ४६७ मा वर्षने महावीर निर्वाण वर्ष तरीके मानवाना पक्षमां अन्यान्य बाबतोनुं विवेचन प्रो० जेकोबीए पोतानी कल्पसूत्रनी आवृत्तिमां कर्युं छे. हुं फक्त बे ज मुद्दा उपर चर्चा करवा मागु छुं, कारण के ए मुद्दाओ आ प्रश्नना विषयमां घणी महत्ता धरावे छे.

हेमचंद्रथी [5]मांडीने अर्वाचीन काळनी सघळी जैनपरंपरा भद्रबाहुना निर्वाणसमय तरीके वीर पछी १७० मुं वर्ष जणावे छे आ वर्ष परंपरागत निर्वाणसमयने हिसाबे इ. स. पूर्वे ३५७ मां आवे परंतु प्रो जेकोबीनी व्यवस्थित करेली मितिनी अनुसार इ स. पूर्वे २९७ मां मूकाय आ बने मितिओमांनी बीजी ज मिति शक्य जणाय छे, कारण के सघळी जैनपरपराओ भद्रबाहुने चन्द्रगुप्त साथे नजीकमां नजीक संबंध धरावनार तरीके स्पष्ट जणावे छे. अने आ रीते इ स पूर्वे ३५७ नी मिति बहिष्कृत थाय छे

कल्पसूत्रमांना जिनचरित्रनुं १४८ मुं सूत्र आपणने जणावे छे के ते ग्रंथ महावीर पछी ९८० वर्ष समाप्त थयो हतो परंतु साथे साथे एक बीजो पण उल्लेख छे (वायणन्तरे) जेमां ९९३ मुं वर्ष आपेलुं छे सघळी टीकाओ जे प्राचीन चूर्णिना [6] आधारे रचाएली छे ते सर्वे आ मितिओनो जुदी जुदी बीनाओ साथे संबंध बतावे छे.[7]

(१) देवर्धिगणीना अध्यक्षपणानीचे थएली वलभीनी सभा, जे वखते सिद्धांतने पुस्तकारुढ करवामां आव्युं हतुं ते प्रसंग

---

2. पण, श्वेतांबरो पण केटलेक ठेकाणे भद्रबाहुने छेल्ला युगप्रधान माने छ, ए बाबतनो पुरावो मळे तेम जणाय छे. सरखावो–जेकोबी, कल्पसूत्र पृ० ११ Z D. M G. 38 14

3 आ विषयनी वधारे विगतो माटे जुओ प्रो० जेकोबीनो 'श्वेतांबर अने दिगंबर सम्प्रदायोनी उत्पत्ति' वाळो लेख Z D M G. 38. 1

4 सरखावो –उपर पृष्ठ 5. परिशिष्टपर्व, ९, ११२ 6 जेकोबी कल्पसूत्र पृ० ५

7. जेकोबी. सेक्रेट बुकस् ऑफ धी इस्ट २२, पृ० २७०

(२) स्कंदिलाचार्यना अध्यक्षपणा हेठळ मथुरामा मळेली सभा जेमा प्राय सच सिद्धांतोमा सुधारा वधारा करवामा आव्या हता

(३) आनदपुरना राजा ध्रुवसेन नाग तेना पुत्रना मरणनो शोक निवारण करवा अथे कल्पसूत्रनु जाहेर वाचन, अने

(४) कालकाचार्ये करेलो पज्जुसणना दिवसनो फेरफार 8

मथुरामा भरेली सभाना विषयमा जणाववु जोईए के तेनु, तेनाथी वधारे महत्वनी अने प्रसिद्ध वल्भीनी सभा साथे गुचवण थएलु छ वल्भीनी सभामा सिद्धान्तग्र थोने अत्यारना रूपमा खरेखर ठरावचामा—नक्की करवामा आव्या हता परतु आ सभा साच ज थएली हती के नहीं, ते प्राचीनकाळनी वात होवाथी अत्यारे विचारणीय नथी9 परतु वल्भी सबधी वर्णनो तेम ज आनदपुरना राजा ध्रुवसेन समक्ष कल्पसूत्रनी थएली जाहेर वाचना, ए बे बाबतो घणा उपयोगनी छे दुर्भाग्ये आनदपुरना सबधमा कोई हकीकत मळती नथी, टीकाओमा ते महास्थान होवानु जणावेल छे परतु आटली माहीतिथी आपणने विशेष मदद मळती नथी तेम छता आपणे नीचेनी बाबतो ध्यानमा लेवी जोइए

१ ध्रुवसेन ए नाम घणु अजाण्यु नथी ते वलभीना एक वशनु नाम छे अने आपणे जाणीए छीए के पहेलो ध्रुवसेन इ स ५२६ मा राज्यगादी उपर आव्यो हतो

२ आ ध्रुवसेनने पुत्र न हतो कारण के इ स ५४० मा तेनी पछी तेनो भाई गृहसेन10 गादी उपर आव्यो हतो अने

३ महावीरनिर्वाणनी तारीख तरीके इ स पूर्वे ४६७ मा वर्षने स्वीकारी कल्पसूत्रनी एक वाचना के—जेना माटे कहेवु जोईए के, ते खरेखर प्राचीन अने उपयोगी छे ते वाचनामा आपेला ९९३ वर्षना, त्यारथी गणना करीए छीए तो एक आश्चर्यजनक सरखापणु मेळवीए छीए कारणके (९९३-४६७= ५)९९३ माथी ४६७ वर्ष बाद करता ते ५२६ मु वर्ष आवे छे ते बराबर वल्भीनी गादी उपर ध्रुवसेनना अधिरोहणनु वर्ष छे

आ सघळी हकीकतो उपरथी मारु चोक्कस अनुमान थाय छे के वल्भीनी महासभा ध्रुवसेनना राज्यारोहणना वर्षमा ज मळी हती, ए बीजु ए के कल्पसूत्रमा आपवामा आवतु महावीरनु जीवनचरित्र पण जे छेल्ली बाबत ते ज सभामा निर्णीत करवामा आव्यु हतु तेनु ध्रुवसेन राजानी समक्ष वाचन करवामा आव्यु हतु अने आ बाबत मारा अभिप्राय प्रमाणे महावीरनिर्वाणना इ स पूर्वे ४६७ मु वर्ष सूचवती हकीकत माटे एक घणु किमती साधन छे

हवे मात्र एक ज प्रश्नने उहापोह करवो बाकी रहो छे जे विद्वानो आ मिति मारा मत्य तेओ एकदम जणावशे के ा सूत्रना गातपुत्तना अवसानना सबधमा पाली सिद्धान्तोमा आवता वर्णनोथी विरुद्ध छे कारण के ते ग्रथोमा जणावेलु छे के बुद्ध ज्यारे शाक्यभू

8 आ कालकाचार्य जैन परपरामा जेना ए महावीर पछी ४० वर्षे विद्यमान गर्दभिल्लना राजा काळमा थ ह आ गणी गरकारा–Z D M G 34 241

9 आ सभाना प्रमुख हकीकत ए जा हाल प्रसिद्ध करेली (Testgruss an Bohtlingl p 54 ff) ग्रथमा जेना उल्लेख छे ते न हाय ना ते मा वीर पछी ९१४ वर्ष एटले इ स पूर्वे ११३ मा मरणपाम्या एम कहेवाय छे

10 आ गणामा भाइया स्कधाजा पछी गादीए आवना एवा कोई नियम न हता ए बाल गृहसेन पछी तेना पुत्र गृहसेन बीजा ज इ स ५ ९ मा गादीए बेठा हता ते उपरथी सिद्ध थाय छे

मिना सामगाममां विचरता हता त्यारे नातपुत्ते पावामां काळ कर्यो हतो; अर्थात् महावीर-निर्वाण बुद्धनिर्वाणनी पूर्वे थयुं हतुं आ वर्णन मने तद्दन मान्य छे परंतु हुं मानुं छुं के ए विद्वानो आ प्रश्नना संबंधमा थोडो संभाळपूर्वक विचार करशे तो तेमने जरुर जणाशे के आ हकीकत बहु महत्त्वनी नथी

प्रो. जेकोबीए पोताना ग्रंथमां एक घणुं ज मजबुत प्रमाण रजु करेलुं छे अने जणाव्युं छे के इ. स. पूर्वे ५२७ ना वर्षने बरतरफ करी, हेमचंद्रना कहेवा मुजब इ. स. पूर्वे ४६७ मुं वर्षज स्वीकारणीय छे. अने मारे आ स्थळे जणाववुं देवुं जोईए के डॉ. जेकोबीनुं प्रमाण एटलुं वधुं मजबुत छे के तेने पालीग्रंथमां मळी आवता आवा प्रकारना वर्णनने लीधे फेंकी देवाय तेम नथी

उपरोक्त वर्णन दीघनिकाय ३, ११७ २०९; अने मज्झिमनिकाय २, २४३[11] मां जोवामां आवे छे अने ते एम जणावे छे के ज्यारे बुद्ध सामगाममां रहेता हता त्यारे तेमने खबर केहवामां आवी हती के तेमना प्रतिस्पर्धीए पावामां काळ कर्यो. अने बीजुं ए के निर्ग्रंथोमां गंभीर भेदो—सांप्रदायिक फांटा पडी गया हता, तेम ज आखो जैनसमाज भग्न थई जवानी तैयारीमां हतो पावा संबंधी वर्णन केटलेक अंशे खरुं छे, कारण के जैनोनी मान्यतानुसारे पण महावीर पावामां ज निर्वाण पाम्या हता परंतु केटलेक अंशे खोटुं पण छे, कारण के में उपर जणाव्युं तेम[12] बुद्धो ए पावाने–राजगृहनी पासे आवेली पावाने—मानता नथी के जे आज दिन सुधी पण जैनो माटे तीर्थ स्थळ मनाय छे. बौद्धो पावाने, ज्यां आगळ बुद्धे चुंदना घरे छेल्लुं खाणुं खाधुं हतुं ते कुशीनारनी पासे आवेला नाना शहेर तरीके ओळखावे छे, के जे बाबत पण शंका उत्पन्न करवा वाळी छे आ उपरांत हुं उपर जणावी गयो छुं के, उपालि साथेनो मेळाप, जेने महावीरना मरणना साचा कारण तरीके बताववामां आव्यो छे, तेवुं कशुं वर्णन सौथी प्राचीन सूत्रोमां मळतुं नथी. अने, अंतमां जणावुं छुं के धर्मभेद संबंधी तेमां आपेलो वृत्तांत आ नोंधने पहेलां करतां वधारे शंकापात्र बनावे छे, कारण के जैनग्रंथोमां आ प्रकारनुं बीलकुल वर्णन नथी, पण तेथी उलटुं ते तो एम जणावे छे के आ अवसरे तो समाजमां सर्व स्थळे शांति फेलायली हती वळी जैन ग्रंथोमां धर्मभेदो छुपावेला छे ज नहीं. ते ग्रंथोमां एवा बे नाना धर्मभेदोनुं वर्णन आपेलुं छे, अने ते तीर्थकरना[13] विद्यमानतामां ज उत्पन्न थया हता तेम कहेलुं छे आ स्थळे हुं गोसाल अने तेना अनुयायीओनी करेली पजवणीनुं वर्णन करतो ज नथी के जेनो महावीरस्वामीना निर्वाण वखते अंत आवी गयो हतो आ बाबतमां, मारुं एम धारवुं छे के आ धर्मभेदोनो झांखो हेवाल निकायोना रचयिताओने मळ्यो हशे अने तेओए तेने पावामां थएला नातपुत्तना निर्वाण संबंधी तेमणे मेळवेला ज्ञान साथे गुंचवी नांख्यो हशे अने तेथी तेओए आ पावाने, भूलथी तेओनी वधारे परिचित पावा मानी लीधी हती आखरे मारे कहेवुं जोईए के आ दंतकथामां उपरोक्त तपासना निर्णयने बाधा पहोंचाडे तेवुं एक पण तत्त्व नथी अने महावीर बुद्ध करतां थोडा वखत पाछळ थया हता ते प्रकारना मतने बरोबर बेसती आवती अन्य बे बाबतो हुं नोंधवा इच्छा राखुं छुं.

दी० नि० २,५७, म० नि० १, ३७७, सं० नि० १, ६६, इत्यादि ग्रंथोमां जैनधर्मने चातुर्याम

---

11 प्रो चामर्स ज रा ए सो १८९५, पृ० ६६५ आदिमा ए उल्लेखोनु अवतरण अने भाषांतर कर्युं छे

12. जुओ उपर पृष्ठ

13. सरखावो--लायमान,इन्डियन स्टडीज़, १७, पृ ९८ नी नोट

एटले ' चार यमवाळो ' [14] कहेलो छे परतु खरी रीते ए महावीरनो धर्म नथी ए तो तेमनी पूर्वे थएला पार्श्व नामना तीर्थंकरनो प्ररूपेलो धर्म छे कारण के महावीरे तो पोताना धमा वलवीओ माटे पाच व्रतनु विधान कर्यु हतु अने खुद जैनोमा पण महाव्रतो ' नी सख्याना सबधमा वास्तविक रीते गुचवण होय तेम जोवामा आवे छे [15] सामञ्ञफलसुत्त आदि पालीग्रथोनी आवा रीते वणन करवामा भूल थएली हती एम मानवानु कारण नथी कारण के आ वर्णन बुद्ध अने महावीर परस्पर वधारे निकटना सबधमा आव्या ते समयनी जैनी परिस्थिति हतो तेनो चितार मात्र छे अने आ उपरथी आपणे कदाच अनुमान करी शकीए के महावीरे, तेमना बुद्ध साथे काईक सबध थयो हतो ते वखते एटले थोडोक वखत वाद पोताना पाच महाव्रतनो सिद्धात छेवटरूपे नक्की कर्यो हतो

आ उपरात बौद्ध धमना ग्रथोमा मुख्य राजा तरीके मात्र बिंबिसारनु वणन थएलु छे अजातशत्रुनो उल्लेख वधारे प्रमाणमा थएलो जोवामा आवतो नथी आ उपरथी ए हकीकतने टेको मळे छे के अजातशत्रुना राज्यनी शरूआत थई त्यारे आगमन बुद्धनु जीवन पोताना अवसान समुख थवा लाग्यु हतु अर्थात् तेमनु जीवन समाप्त थवानी तैयारीमा हतु परतु जैनधमग्रथोमा महावीरना जीवनकालमा कूणिके घणो मोटो भाग भजवेलो छे अने खचीत तेनु वर्णन वधारे नहि तो निदान तेना पिताना जेटलु तो थएलु छे ज बौद्धो ज्यारे जणावे छे के तेमना तीर्थंकर बुद्ध अने आ राजाओनो परस्पर मेळाप मगधनी जुनी राजधानी राजगृहमा थतो हतो त्यारे जैनग्रथोमा स्थळे स्थळे तेमना तीर्थंकर अने कूणिकना मेळापनी भूमी तरीके कूणिकनी नवी राजधानी चपाने बतावबामा आवी छे आ बाबत पण खरेखर अजातशत्रुना राज्यना उत्तरकाळनी द्योतक छे

हवे हु मारी तपासनी अते आवी पहोंच्यो छु मारे न्यायदृष्टिए जणावी देवु जोईए के आ लेखमा लखेली सघळी बाबत एक या बीजा रूपमा आ लेखनी पहेला ज वर्णित थई गएली छे परतु आ प्रकारनु पिष्टपेषण आ जातनी सामान्य रूपनी अत्यारनी सघळी शोधोने साधारण छे, अने तेथी ए बाबतमा मने बीलकुल दिलगीरी थती नथी अत्यार सुधीमा मळी आवेली सघळी हकीकतोनु भडोळ एकवार फरीथी वाचको समक्ष मूकवानु मने घणु ज अनुकूल लाग्यु छे, कारण के ए द्वारा तेओ आना सबधमा वधारे योग्य अभिप्राय-पछी ते अभिप्राय उपरोक्त अभिप्रायने अनुकूल थाय के प्रतिकूल थाय-बाधवा शक्तिमान थशे अने मारु खासुस मानवु छे के महावीरना समयनिणयनो प्रश्न घणो ज महत्त्वनो छे अने तेटला माटे जेटला वधारे साधनो मळे तेटला बधा साधनो द्वारा विवेचन करवा योग्य छे जो हु एटली मोटी आशा न राखी शकु के सघळा लेखको मारा अनुमानने समत थशे, के जे अनुमान मा जेकोबीए लावा काळ उपर सूचवेलु हतु अने जेने में मात्र अन्य नवी दलीलो द्वारा मजबुत करवा ज प्रयत्न करेलो छे तो पण हु एटली आशा तो जरुर राखी शकु छु के उपरोक्त विवेचन घणा लाबा समयथी उपेक्षापात्र बनेला एवा आ अति महत्वना विषय तरफ तेओ पोतानु ध्यान दोरशे मने नहि मळी शकेली एवी घणी नवी माहीतिओ विद्वानोने उपलब्ध थशे अने आ गभीर प्रश्ननो कोई नवो चूकादो जन्म पामे ए पण बनवु सभवित छे अत्यारे तो आनाथी अन्य

14 सरखावो—उत्तराध्ययन सूत्र २३ १२ मा वहेग चाउज्जामो धम्मो

15 सरखावो—हेस्टींगनी इन्साइक्लोपीडिया, पु १, पृ २६४ मा डॉ हॉर्नलनो लेख

प्रकारनो निर्णय थई शके ए मने शक्य लागतुं नथी-के जे निर्णय आ महावीरनिर्वाणना समय साथे संबंध धरावती तेमज तेना उपर आधार राखती अन्य बाबतोने वधारे बंधबेसतो थाय

टिप्पण—आ निबंधना वाचकने जरूर लाग्युं हशे के मैं प्रो. गायगर (Geiger) ना महावंशना भाषांतरना (London 1912) उपोद्घातनो बीलकुल उल्लेख कर्यो नथी. वास्तवमां मारे जणाववुं जोईए के हुं आ निबंध पूरो करी रह्यो त्यांसुधी मैं ते उपोद्घात वाच्योज न हतो. अने तेथी करीने मारां करेला केटलांक अनुमानो त्यार आगमच प्रो. गायगरे साबीत करेली बाबतोनी मात्र पुनरुक्ति रूपे जणाशे. परंतु आ प्रसिद्ध विद्वान् सिलोनना परंपराविषयक सघळी बाबतोनुं अपूर्व ज्ञान धरावता होवा छतां तेमनां कालगणनात्मक तपासना मुख्य परिणाम साथे हुं संमत थई शकतो नथी. बुद्धनिर्वाणनी मिति तरीके इ. स. पूर्वे ४७७ ना वर्षने मानवा माटेनां मारां सघळां कारणो-प्रमाणो-में मारा लेखमां आपेलां छे अने इ. स. पूर्वे ४८३ वर्षथी गणाता सीलोनना संभवित संवत्ना अस्तित्वमात्रथी, मारो मत खोटो होय तेवी मारी खातरी थती नथी. आनुं कारण ए छे के आ संवतनो पत्तो-उल्लेख ११ मी सदीना पहेलां, बुद्धनिर्वाण पछीना १५०० वर्षना अरसामां, थएलो मळतो नथी. अने प्रो. गायगर ज्यारे अशोकनो अभिषेक इ. स. पूर्वे २६४ नक्की करे छे त्यारे तेओ शिलालेखना प्रमाण तरफ उपेक्षा करता होय तेम जणाय छे. कारण तेमां जणावेलुं छे के अभिषेक पछीनुं १२ मुं वर्ष इ. स. पूर्वे २६० अने ५५८ नी वचमां पडे छे. अने ते ज काळना शिलालेखो द्वारा आ प्रमाण पुरावो मळतो होवाथी, सिलोनना ऐतिहासिक ग्रंथोनुं प्रमाण, स्वाभाविक रीते ज निरुपयोगी निवडे छे.

आ निबंधनो उपसंहार करता पहेलां, हुं मारा निबंधना हस्तलिखित कागळोने अतिशय मायाळुपणे वांची जई अंग्रेजी भाषाना शुद्ध प्रयोगने लगती मारी केटलीक भूलो सुधारी आपनार डॉ. एफ्. डबल्यु. थॉमसना तरफ मारी अंतःकरणनी उपकारवृत्ति प्रकट करूं छुं.

तीर्थंकर वर्धमाननो समय

[जर्नल ऑफ धी रॉयल एशियाटिक सोसायटीना सन १९१७ पृष्ठ १२२-३० मां प्रगट थएल एल्. डी. बरनेटना THE DATE OF VARDHAMANA नामना लेखनो अनुवाद]

वर्धमान ए आधुनिक जैनधर्मना संस्थापक छे तथा तेमनो समय ते प्राचीन हिंदुस्थान (आर्यावर्त) नी कालगणनामां एक जूनामां जूनो सीमासूचक स्मरण-स्तंभ छे आम छतां तेमना निर्वाणना समयना विषयमां घणा मतभेदो छे जैन तीर्थंकरोना जीवन तथा युगना संबंधमां पौराणिक हकीकतो तो पुष्कळ उपलब्ध थाय छे परंतु आ परंपरागत कथनोनी विगतो अत्यंत गुंचवणीवाळी तथा परस्पर घणी विरोधात्मक जणाई आवे छे तेमां वळी केटलाक तो सामान्य पणे खोटी रीते समजवामां तथा समजाववामां आवेली छे आ लेखमां आ सघळां परंपरागत कथनोने तेमना युगना रीतरिवाजो गौतम बुद्धनी साथेनो वर्धमाननो संबंध तेमज आ बन्ने त्यागी महापुरुषोनो, मगधना राज्यवंश—के जे वंशनी साथे भारतवर्षना इतिहासना प्रारंभिक काळमां आ बन्ने धर्मो अत्यंत गाढ संबंध धरावता हता—ते वंशना राजाओ तथा महाराजाओनी साथेना तेमना संबंधने अनुकूल थाय ते रीते समजाववानो यत्न करवामां आवेल छे भारत वर्षनी, ई स पूर्वेनी छट्ठी अने पांचमी शताब्दिनी कालगणनानी साधारण रीते यथार्थ योजना हिंदु बौद्ध अने जैन साधनो, के जे अनुक्रमे पुराणो दीपवंश अने गाथाओमांथी मळी आवे छे, ते साधनोमांथी मळी आवता अनेकविध कथनोने परस्पर संगत करवाथी करी शकाय छे आ प्रकारनी कालगणनानी एक विगतवार योजना गत वर्षना इंडियन एन्टीक्वेरीमां आपेली छे तेटला माटे ते ज बाबतनी पुनरुक्ति करवानी अहीं जरूर नथी मारी पद्धतिनी गणना अनुसार वर्धमान साथे संबंध धरावता शैशुनाग राजाओनी तारीखो आपवी ज अहीं पूरती थशे बिंबिसार उर्फे श्रेणिकनो समय ई ५१३-४८० ई स पूर्व छे अजातशत्रु उर्फे कूणिक ई स पूर्वे ४८०-४५३, उदय उर्फे उदायी भद्रक, ई स पूर्वे ४५३-४३७, अने दर्शक ई स पूर्वे ४३७-४१३[1]

जैनपरंपरा अनुसार वर्धमान श्रेणिक बिंबिसार साथे संबंध धरावता हता श्रेणिकनी राणी चेल्लणा वैशालिना चेटक राजानी पुत्री हती अने वर्धमाननी माता त्रिशला ते ए राजानी बहेन हती[2] आ उपरथी बिंबिसारनी राणी ए वर्धमाननी पहेली नेहा (मामानी छोकरी) थाय आपणने मळी आवती नोंधो उपरथी वर्धमाननो पोतानी बेन-मगधनी राणी-साथे अगर तो तेना पति बिंबिसारनी साथ वयोविषयक शो संबंध हतो, ते कल्पी काढवुं अशक्य छे जैन नोंधोमां वर्धमान अने बिंबिसार ए बन्नेना परस्पर थएला मेळाप संबंधी घणी ज जूज हकीकत मळे छे जेकोबीनुं मानवुं छे के उत्तराध्ययनसूत्रना वीसमा अध्ययनमां आवी एक परस्पर थएली मुलाकातनो उल्लेख छे जो ते कदाच तेमज होय तो पण बिंबिसार ए वखते खासो वृद्ध होवो जोइए अने ए जैन यति ना ते समये तरुण युवान हता तथा स्पष्ट रीते तरत ना ज दीक्षित थएला हता[3] परंतु वास्तविक रीते, आ अध्ययनमां उल्लिखित जैन यतिने वर्धमान कहेवा ए वधु शंका भरेलुं लागे छे, कारण-यति एम कहे छे के तेमना पिता कौशाम्बिना (वडीला) छे ज्यारे आपणे ए तो स्पष्ट जाणीए छीए के वर्धमानना पिता तो वैशालीना

---

1 इन्डि॰ एन्टि॰ १९१५ पा॰ ४१-५२ 2 कल्पसूत्र (जेकोबीनी आवृत्ति) पा॰ ११३ 3 S B E, Vol XLV pp 100-1

नजीक आवेला कुण्डग्रामना एक सरदार—उमराव हता. यतिए एम कहेलुं छे के तेमनुं कुटुंब पुष्कळ समृद्धिवान हतुं. परंतु वर्धमानना कुटुंबना विषयमां आवुं कोई खास कथन थएलुं नथी.

अजातशत्रुना विषयमां बौद्धो करतां जैनो घणुं वधारे जाणे छे तेना राज्यकालना अंतिम समयमां तेनी राजधानी चंपा हती अने त्यां ज ते मरी गयो हतो[4] एम जाणवामां आव्युं छे. तेणे वर्धमाननी घणी वार मुलाकातो लीधी हती,[5] अने तेनो पुत्र उदायी ते तो खरेखर एक चूस्त जैन हतो उवासग-दसाओमां [6] गोसालनो मरण समय. कोसल साथे अजातशत्रुना थएला युद्ध बाद बतावेलो छे, अने वर्धमाननुं निर्वाण गोसालना मरण पछी १६ वर्षे थयानुं जणावेलुं छे जैन सूत्रोमां [7] एम कहेलुं छे के वर्धमाननो मामो चेटक, जे वखते अजातशत्रुए चंपा नामनी पोतानी राजधानीमांथी वैशाली उपर हुमलो कर्यो ते वखते, त्यांनो राजा हतो. आ उपरथी आपणे न्यायसर एटलुं अनुमान करी शकीए छीए के ते राजाना भाणेज आ जैन यति, आ बनाव बाद घणा वर्ष सुधी विद्यमान रह्या हता तेम ज एटलुं तो आ परथी स्पष्ट ज थाय छे के जैनो, अजातशत्रुना राज्यना प्रारंभिक वर्षोना करतां तेना अंतनां वर्षोनी घणी ज वधारे अने चोक्कस माहीति धरावे छे.

उदय अने दर्शकना राज्योनुं, आ बंने धर्मोनी नोंधोमां घणुं ज झांखुं प्रतिबिंब नजरे पडे छे. सर्व आटली वात तो कबुल राखे छे के अजातशत्रुनो उत्तराधिकारी उदय बन्यो हतो, अने आ वात पुराणोक्त हकीकतो द्वारा समर्थित न थती होवा छतां आपणे ठीक ठीक तेम मानी शकीए छीए. बौद्ध परंपराओनी अनुसार उदय ए अजातशत्रुनो, बिंबिसारनी हयातिमां सुद्धां एक मानीतो पुत्र हतो, तथा पोताना पितानो बुद्धनी साथे मेळाप थयो ते वखते, ए एक युवान पाटवी कुंवर हतो. आथी अजातशत्रुना मरण समये उदय मध्यवयस्क होवो जोईए परंतु दर्शक, मात्र भासना वासवदत्ता नाटकमांथी ज तेना विषयमां जे फक्त एक परंपरा मळी आवे छे ते अनुसार, गादीए आव्यो ते समये घणो ज जुवान—नानी उंमरनो हतो आ रीते जोतां, पुराणोमां जणाव्या प्रमाणे अजातशत्रु अने उदयनी वच्चे दर्शक आव्यो हतो तेम मनाय नहि. संभवित छे के जे उदय राजानी गादीए ते आव्यो हतो ते राजानो, ते एक पुत्र या तो नानो भाई होई शके. बौद्धो उदय विषे आथी वधारे कांई जाणता नथी, परंतु जैन नोंधोमां जणाव्या प्रमाणे, ते (उदय) जैन धर्मनो एक चुस्त अनुयायी हतो, [8] पोताना पितानो उत्तराधिकारी बन्यो हतो तेम ज पाटलिपुत्रनो [9] वसावनार हतो अने छेल्लुं ए के तेनी कारकीर्दिनो टुंक समयमां ज तेना खूनने लईने अंत आव्यो हतो

दर्शकना विषयमां, सिलोनना बौद्धो फक्त एटलुं ज जणावे छे के तेनुं नाम नागदसक हतुं. परंतु आ उपरांत तेओ कांई जणावता नथी. दर्शकना राज्यना प्रारंभ कालमां चंडप्रद्योत विद्यमान हतो.[10] चण्ड तथा तेना पुत्र पालकने जैनपरंपराओमां जे महत्त्व आपवामां आव्युं छे ते उपरथी एम अनुमान नीकळे छे के ते युगमां जैनधर्मनुं मुख्य स्थान अने केन्द्र मगध नहि परंतु उज्जैन हशे. तेम ज वर्धमान अने चण्ड ए बंने समकाले देहांत थया हता, ते वात जो खरी होय तो, आपणे मानी शकीए के जैनधर्मना संस्थापके दर्शकनुं राज्य जोयुं हशे

---

4. हेमचन्द्र रचित स्थविरावली चरित, ६,२१. 5 औपपातिक सूत्र पृ ३९ 6. हॉर्नलनी आवृत्ति. परिशिष्ट १ अने २. पृ. ११०. 7 निरयावली सूत्र, पृ २७. 8 कल्पसूत्र, op cit, p 5 9. हेमचन्द्र, op. cit जेनी साथे पाटलीपुत्र वसाव्यानी बाबतमा वायुपुराण पण मळतु छे 10 भासकृत स्वप्नवासवदत्तम् (त्रिवेन्द्रम् सीरीझ) पृ० ४

आटली हकीकतो उपरथी एटलो निर्णय थाय छे के वर्धमाननु निर्वाण गौतमबुद्धनी पछीथी थयु हतु परतु विद्वानोनो एक बीजो मजबुत पक्ष पण रहेलो छ जे आ विचारथी सख्त विरुद्ध छे उदाहरण तरीके मि विन्सेन्ट ए स्मीथ,[11] हजी पण माने छ के वर्धमान ए बुद्धनी पहेला केटलाक वर्ष थई गया हता ते लखे छे के जैन यति (तीर्थंकर) ' सभवित रीते बिंबिसारना राज्यना अतनी नजीकना कालमा निर्वाण पाम्या हता " अने गौतम बुद्धनु निर्वाण " अजातशत्रुना प्रारभना राज्यकालमा थयु हतु ' महावीरना निर्वाणना परपरागत चाली आवेला समयने माननाराओनो पण आवो ज मत छे वास्तवमा तेओ, जैन तीर्थंकरना निर्वाणने, बुद्धना निर्वाण करता पचासथी वधारे वर्षो पूर्व मूके छे आथी करीने आ विषयनी विगतवार तपास करवानी जरूर छे

मि स्मीथनो उपरोक्त मत दीघनिकाय ३, ११७ आदि, अने मज्झिम निकाय २, २४३ आदिने आधारे उत्पन्न थएलो छे आ विषयमा प्रथम तो आपणे ए ध्यानमा राखवु जोईए के दी० नि० ? २७ आदि अने म० नि० १, ३७७ मा जनधर्मनो उल्लेख " चातुयाम " (चार मतो वालो) धर्म तरीके करेलो छे जैन आगमग्रथोमा [12] पण ए उल्लेख मळी आवे छे अने ते धर्म वर्धमाननी पूर्वे २५० वर्ष थएला पार्श्वनाथनो हतो परतु ते धर्म वर्धमान-जेमणे पार्श्वनाथना आ चार मतोमा पाचमु ब्रह्मचर्यनु व्रत उमेरीने पाच मतो अमलमा मूक्या-मूकाया हता-तेमनो न हतो बीजु ए के बुद्ध अने बिंबिसार ए बनेनो परस्पर अनेक वखत मेळाप थयो हतो [13] अने आ विषयमा एक बौद्धसप्रदाय [14] तो एटले सुधी कहे छे के बुद्ध अने बिंबिसार ए बन्ने एक ज दिवसे जन्म्या हता आ थी विरुद्ध जैनपरपरानु [15] एम कहेवु छे के वर्धमान अने अवन्तीपति चण्डप्रद्योत ए बन्ने एक ज दिवसे स्वर्ग गया भासकृत वासवदत्ता द्वारा आपणे जाणीए छीए के प्रद्योत खरेखर अजातशत्रुना स्वर्गवास पछी तथा उदयना पण देहात थया बाद पोते हयाती धरावतो हतो आजी यावत ए छे के बुद्ध अजातशत्रुना प्रारभिक राज्यकालमा एटले ते तेना ५ अथवा ८ मा वर्षमा होय, निर्वाण पाम्या हता ए वात सघळी बौद्धपरपराओने समत छे परतु जैनपरपराओ तो एम जणावे छे के वर्धमान कोसलना राजानी साथे अजातशत्रुना युद्ध थई गया पछी ओछामा ओछा १६ वर्ष तो हयाती धरावता हता

आ उपरात आ बने धर्मोना प्राचीनग्रथोना सामान्य अभ्यास द्वारा एटलु अनुमान स्पष्ट रीते नीकळी आवे छे के वर्धमान, बुद्धना समयमा नहि परतु तेमना केटलाक वर्षो पछी जन्म्या हता प्राचीन बौद्ध ग्रथोमा [16] जैनोना भिन्न भिन्न सप्रदायोना उल्लेखो थएला छे जेवा के —पार्श्वनाथ वर्धमान अने पुराण काश्यप एमना अनुयायीओ आ काळ तेमनो विविध धार्मिक पथो स्थवातो हतो तीर्थंकर ए शब्द जैनो अर्थ बौद्धो ' पाषडीमतनो सस्थापक ' एवो करे छे ते शब्दनो जैन ग्रथमा थएलो अर्थ धर्मनो सस्थापक ' छे हवे तैर्थिक अगर तो पाषडीमतोना खास खास सस्थापकोनो विचार करता जैनग्रथोमा नोंधाया प्रमाणे गोसाल ए साथी प्रधानपद भोगवे छे परतु बुद्धना विरोधी तरीके तेनु

11 Early History of India 3 rd ed p 33

12 उदाहरण तरीके जुओ उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन २

13 जुआ, स बु इ पुस्तक ५ (इन्डेक्स्) प्रमाणमा? पा ९९

14 Rockhill Life of the Buddha (Citing *Dulva* XI), p 16

15 The Literary Remains of Dr Bhau Daji p 130

16 सरखावो-महावग्ग ८, ५, २ अगुत्तरनिकाय ३ ३८३

स्थान एटलुं मोटुं जोवामां आवतुं नथी आपणे जाणीए छीए के गोसाल वर्धमाननी पहेल
१६ वर्षे मरी गयो हतो तथा तेणे आजीविक नामे एक सुप्रसिद्ध पंथ स्थाप्यो हतो. जो
गोसाल बुद्धनो समकालीन होत तथा एक विरुद्ध पंथना संस्थापक तरीके प्रसिद्धि भोग
वतो होत तो आपणे सहजे आशा राखी शकिए के, तेनो प्राचीन बौद्धग्रंथोमां, तेव
रूपमां जरुर उल्लेख करवामां आव्यो होत. तेमज जमालि नामनो वर्धमाननो एक प्रसिद्ध सम
कालीन पुरुष, के जेणे जैनधर्ममां पहेलो पक्षभेद उभो कर्यो हतो, तेना विषयमां पण बौद्धो
कशी माहीति नथी अंतमां जैनग्रंथोमां वर्णववामां आवेलुं तत्त्वशास्त्र ए सांख्य तेम ज वेदां
बंनेथी विरुद्ध छे परंतु बौद्ध तत्त्वशास्त्रनो पायो आ बे प्राचीन धर्मो उपर नंखायलो छे
तथा तेमां (बौद्ध दर्शनमां) पाछळना वखतमां व्यवस्थित थएल वैशेपिक दर्शननो क्या
पण उल्लेख थएल नथी, परंतु, एनाथी उलटुं, जैनदर्शने, जेम डॉ भाण्डारकरे स्पष्ट रीते
जणावी आप्युं छे 17 तेम " ते एक बाजुए सांख्य अने वेदांत अने बीजी बाजुए वैशेपिक
बंनेनी वच्चे करेला समन्वयना रूपनुं छे "

हवे आपणे वर्धमानना समय साथे कोईपण रीते संबंध धरावनी एवी जुदी जुदी परंप
रागत हकीकतोने तपासीए

१ आ परंपराओमां प्रथम उल्लेखनीय एवी एक सुप्रसिद्ध गाथा छे. आ गाथाने दिगंबरो
तथा श्वेतांबरो—बंने संप्रदायो माने छे. अने तेनुं तात्पर्य ए छे के महावीरनुं निर्वाण ' विक्र
मनी पूर्वे ४७० वर्ष ' थयुं हतुं परंतु डॉ. होर्नलना 18 जणाव्या मुजब आ गाथानो अर्थ बंने
संप्रदायो जुदी जुदी रीते करे छे. दिगंबरो आने विक्रमना जन्मथी गणे छे त्यारे श्वेतांबरो
तेना राज्याधिरोहणना समयथी आ गाथा साथे विक्रमनुं नाम जोडाएलुं छे ते उपरथी ते
एक अर्वाचीन परंपराद्वारी मानी अने ते रीते ऐतिहासिक दृष्टिए महत्त्व विनानी गणीने तेन
इनकार करवानो नथी. कारण के आ गाथानुं स्वरूप निःशंक आधुनिक होवा छतां पण
शक्य छे के ते कोई एक प्राचीन परंपराने आधारे रचाएली होय. अने तेम मानवाने मो
अधिक मजबुत कारण ए छे के ए गाथा बंने संप्रदायने मान्य छे

आ गाथाविषयक जे खरो प्रश्न छे ते तेना अर्थना संबंधमां छे प्रॉ कीलहॉर्ने 19 ए
जणावे छे के इ स. पूर्वे ५८ वर्षे शरु थएला संवत् साथे विक्रमनो संबंध छेक ९ मी
अने १० मी शताब्दिमां उत्पन्न थवा मांड्यो हतो. अने आ संवतने विक्रमादित्ये स्थापि
कर्यो हतो एवो खास उल्लेख, पहेल पहेलो, सन ११९८ ना एक शिलालेखमां जोवाम
आवे छे परंतु आ उल्लेखनीय संवत्ना विषयमां एक बाबत प्रॉ. कीलहॉर्नने विचारवी रही ग
छे के बारमी शताब्दिमां विक्रमसंवत् ने अनंदविक्रमसंवतना नामे लखवानी एक खास गणन
पद्धति उभी थई हती आ अनंदविक्रमसंवत् 20 लगभग इ स ३३ मां एटले पहेल
विक्रमसंवत् पछी ९० अगर ९१ वर्षे शरु थयो हतो. बीजी 'सनंद' नामनी गणना पद्धति
स पूर्वे ५८ अगर ५७ वर्षे उत्पन्न थई हती चन्द वरदाई नामना ते ज (१२ मी) शताब्दिन
प्रसिद्ध कविए पोताना काव्यमां आ गणत्रीनो अथथी ते इति सुधी उपयोग करेलो छे.
उपरथी एटलु स्पष्ट थाय छे के विक्रमसंवतनी गणतरीनी आ सनन्द अने अनन्द ए बंने रीति
ओ, जे समये प्रस्तुत गाथाने वर्तमान रूपमां मूकवामां आवी ते समये, प्रचलित हत

---

17 जुओ तेमनो रिपोर्ट सन १८८३–८४, पृ १०१ आदि　18. Inp Ant XX p 360
Ind. Ant XIX and XX　20 J R. A S, 1906, p. 500

हवे जो आपणे सन् गणतरी स्वीकारीए तो तदनुसार निर्वाणसमय इ स पूर्वे ५२७मा मूकाय परंतु आपणे जेम पाछळ जोई गया, वर्धमान बुद्धनी पछी थएला होवाथी आ तारीख प्रकट रीते असमंजस छे तेथी परिणामे गाथामा उल्लेख करवामां आवेल विक्रमसंवत् ते इ स ३३मा शरु थएल अने विक्रम संवत् होवो जोईए इ स ३३ थी पूर्वे ४७० वर्ष गणता वर्धमानना निर्वाणनी तारीख तरीके इ स पूर्वे ४३७ मुं वर्ष आवे

२ हवे आपण ते परंपरागत हकीकत [21] तपासीए, जेनी अनुसार मौर्यवंशीय चंद्रगुप्त राजानुं राज्याधिरोहण वीरनिर्वाण पछी १५५ वर्षे थलावेलुं छे चंद्रगुप्तना राज्याधिरोहणनी सौथी वधारे संभवित तारीख [22] ग्रहण करता निर्वाणना समय तरीके आपणे ३१९+१५५= ४७४ इ स पूर्वेनुं वर्ष प्राप्त करीए छीए परंतु जैन गणनीमा भूल थई होय तेम जणाय छे कारण के तेमा ज्यारे पालकना राज्यना ६० वर्ष आपेला छे, त्यारे पुराणोमा तेना राज्यकालना फक्त २४ अगर २८ वर्षो ज गणावेला छे [23] मत्स्यपुराण जेवा सौथी प्राचीन पुराणमा पालकना राज्यना फक्त २८ वर्षो जणावेला छे आ रीते मात्र पालकना ज राज्यकालमा ३२ वर्षनो तफावत पडे छे नंदोना संबंधमा एम छे के हेमचंद्रे तेमना राज्यकाल तरीके ९५ वर्षो गणेला छे परंतु आपणी कालगणनानी पद्धति अनुसार उदयना मरण पछीना नंदोना—मात्र एकला नंदोनो ज जैन ग्रंथमा विचार करवामा आवेलो छे—राज्यना बराबर ९० वर्ष सिद्ध थाय छे जेन गणतरामा आ भूलो छे एम जो स्वीकारी लईए तो आपणे वर्धमानना निर्वाण समय तरीके ४७४-(३२+५), एटले इ स पूर्वे ४३७ मुं वर्ष नक्की करी शकीए

३ हवे आपणे ते परंपरागत हकीकत [24] तरफ फरीए, जेमा कहेलुं छे के महावीर पछीना सातमा पट्टधर स्थूलभद्र ते नवमा नंदना मंत्री हता तथा जे काळे चंद्रगुप्ते नंदनुं खून कर्युं हतुं ते अरसामा स्वर्गे गया हता जो के आपणे सम्राट् अने यति ए बनेना मरणोनी समकालीनता जेवा मुद्दा उपर वधारे भार न मूकीए छता आ मुद्दाना संबंधमा एटली नोंध लेवा जेवी छे के ते गणतरी आपणी तारीख साथे बंध बेसे छे एटलुं याद राखवुं जोईए के गणधरो या पट्टधरोनी परंपराना विषयमा लगाडेली वर्षोनी सरेराश वखतनी माफक ज बराबर बंधबेसा शकती नथी अने एनुं कारण ए छे के पट्टधरनी वारनमा उत्तराधिकारी केंद्र लीघ घणुं एक मोटी उमरनो होवाथी तेना पूर्वजनो समकालीन गणाय छे; नहि के तेनी पछीनी नवी पेढीनो मारा मतनी पुष्टिमा हुं तपागच्छनी[25] पट्टावलीमाथी तेमज लक्ष्मीवल्लभना कल्पद्रुममाथी वर्ष संख्याओ टाकुं छुं आ बने ग्रंथे मा—ए वात परस्पर मळती आवे छे के वर्धमान पछी २७५ या ३८५ वर्षना कालमा २३ स्थविरो थया हता आ उपरथी आपणे प्रत्येक पेढीना १६ अगर १७ वर्षो मेळवी शकीए छीए वर्धमाननी जे निर्वाण तारीख आपणे नक्की करी छे तेनी साथे संगत राखवा खातर चंद्रगुप्त सुधी थएली स्थविरोनी सात पेढीओना ११८ वर्ष नक्की करवा जोईए अने आ वर्षसंख्या, उपर प्रत्येक पेढि माटे मेळवेली वर्षसंख्या साथे मळती थाय छे

---

21 हेमचंद्र एना उल्लेख कर्यो छे अने मरतुंगे तेनी समालोचना करी छे

22 Dr Hultzsch s in JRAS 1914

23 वायु अने ब्रह्माण्ड पुराणमा २४ तथा मत्स्यपुराणमां २८ वर्ष आपेला छे

24 जुओ स्थविरोनी सूचि SBE xxii,pp 278 -89 तथा इन्डि एन्टि पु ११ २४६

25 Ind Ant XI 251

४ अंतमा, आपणे वर्धमान अने अवन्तीपति चण्डप्रद्योत ए बंनेना अवसाननी समकालीनता बतावनारी परंपराना संबंधमां विचार करीए. अहीआं पण आपणे आ समकालीनताने अक्षरशः न लई शकीए छतां पण एटलुं तो स्वीकारी शकाय के आ महात्मा तथा राजा बंने लगभग सरखा समये देहांत पाम्या हशे. भासना "वासवदत्तामां जे एक परंपरा आवेली छे तदनुसार चण्डप्रद्योतनुं मरण मगधना दर्शकना राज्यना प्रारंभमां (४३७-४१३ इ. स. पूर्वे) थयुं होवुं जोईए. कारण एम छे के, भासे. प्रद्योत पासे तेना पुत्रने माटे दर्शकनी बहेननुं मागुं करावेलुं छे आ नाटकना पोताना जर्मन अनुवादमां प्रो. जेकोबी एवो मत धरावे छे के आ प्रद्योत "प्राय महासेननो पुत्र छे " परंतु मारी पासे स्पष्ट पुरावा छे के ते महासेननो पुत्र नहि पण खुद महासेन ज हतो बीजा अंकमां भासे जणावेलुं छे के " प्रद्योत जे महासेन कहेवाय छे तेनुं कारण तेनी मोटी सेना छे [26] छट्ठा अंकमां प्रद्योतनी राणी उदयनने कहे छे के " तुं अमारा पुत्र गोपाल बालकना जेटलो वहालो अमारो जमाई थयो छुं " [27] बौद्धग्रंथो द्वारा आपणे जाणीए छीए के उदयने चंडप्रद्योतनी पुत्रीनुं हरण करी तेनुं पाणिग्रहण कर्युं हतुं

हवे मात्र एटलुं ज बतावबानुं रह्युं छे के-भासनी आ कथा एक प्राचीन अने विश्वासपात्र परंपराने आधारे रचाएली छे ते कथानी अंदर लावाण्यकनुं दहन अने प्रद्योतनी पुत्रीनुं कल्पित मरण ए एक मुख्य साकळ छे अने आ बाबतमां आ कथाने बौद्ध दिव्यावदान [28] द्वारा पुष्टि मळे. भासे प्रद्योतने जे महासेननो विरुद आपेलो छे तेने बाणना कथननुं पण समर्थन मळे छे. कारण के बाणे पण हर्षचरित्रमां[29] ते राजाने ते ज उपनाम आपेलुं छे गोपालपालक एवुं नाम विष्णुपुराणमां पण मळी आवे छे परंतु अन्य पुराणो अने जैन मेरुतुंग तेनुं नाम फक्त पालक एटलुं ज आपे छे, अने आ नाम ते घणुं करीने तेना पूर्ण नामनुं एक रूपान्तरित संक्षिप्त नाम छे. भासे आ रीते स्पष्ट रूपे एक प्राचीन परंपरानो उपयोग करेलो होवाथी आपणे तेनी कथाने स्वीकारीए के चंडप्रद्योत दर्शकना राज्याधिरोहण पछी पण हयाती धरावतो हतो आ कथन जो खरु होय तो तेनुं अने वर्धमाननुं अवसान इ स पूर्वे लगभग ४३७ वर्षनी पहेलां होई शके नहि

आ रीते इ स. पूर्वेनुं ४३९ मुं वर्ष अगर तो अनन्दविक्रमनु ४७० मुं वर्ष ते जैन कालगणनाविषयक प्राचीन परंपराओने पूर्ण करतुं जणाय छे. तेमज आ हिंदु, बौद्ध अने जैन पुरावाओना आधारे ए युगना सामान्य इतिहासना संबंधमां जे जाणीए छीए तेनी साथे पण बंधबेसतुं थाय छे

---

26. त्रिवेन्द्रम् संस्कृत ग्रन्थावलीमा मुद्रित पृ० २०

27. तेज पुस्तक पृ० ६९.

28. जुओ, अवदान ३६

29. हर्षचरित्र उच्छ्वास ६, पृ १२१ (In the Bombay edition of the Text.)

मेरुतुगाचार्यनी स्थविरावली

[जर्नल आफ धी बाम्बे ब्रँच आफ धी रायल एशियाटिक सोसायटी भाग ९ (सन् १८६७-७) मा प्रकाशित डॉ भाउ दाजीना निबंध]

इ स नी पदरमी (१चादमी) शताब्दिमा मेरुतुग नामना एक जैन आचार्य थइ गया छे तेमना रचेला ग्रथो पैकी चार ग्रथोनी नकलो मारी पासे छ एक प्रबधचिंतामणि जेनो फॉर्बससाहेबे रासमाला नामे गुजरातनो इतिहास लखवामा सारो उपयोग करेलो छे बीजु महापुरुषचरित्र, जेमा अनेक अतिप्राचीन जैन सत्पुरुषोना चरित्रो वर्णववामा आव्या छे त्रीजानु नाम षड्दर्शनविचार छे आ ग्रथमा जैन बौद्ध, साख्य, जैमिनीय अथवा मीमासा औलुक्य अथवा कणाद अने नास्तिक एम छ दर्शनोनु सक्षिप्त वर्णन करेलु छे अने चोथा ग्रथनु नाम थेरावली छे आमा स्थविरोनी एक वशावली यानि परपरा आपेली छे आ छेल्लो ग्रथ त, काल गणनात्मक अने ऐतिहासिक मुद्दावाळी केटलीक प्राचीन गाथाओना उपर एक टीकारूप छे आ सघळा ग्रथो सस्कृत भाषामा रचाएला छे परतु तेमा प्राकृत भाषानी गाथाना अवतरणो आपेला छे मारी पासे छ भिन्न भिन्न जैन सूरिओ या पडितोनी रचेली छ सपूर्ण पट्टावलीओ छे अने बीजी पण केटलीक पट्टावलीओना अशो छे परतु तेमानी एके ऐतिहासिक रसिकताना दृष्टिए मेरुतुगनी थेरावलीने पहोंची शके तेवी नथी प्रबधचिंतामणि ग्रथ, तेमा अंते जणाव्या प्रमाणे सवत् १३६७ एटले इ स १४२२(? १३१० जोइए-सपादक) मा वाढीआवाडमा आवेला वर्धमानपुर अर्थात् वढवाण शहेरमा रचेलो हतो

पट्टावलीनो सार नीचे मुजब छ —

कार्तिक वदी १५ ने दिवसे श्रीमहावीर तीर्थंकरनु निर्वाण थयु आ बाबत कल्पसूत्र नामना ग्रथमा वर्णवेलो छ एक प्राचीन गाथानो पण आ स्थळ उल्लेख करेलो छे ते गाथामा एम जणावलु छे के जे रात्रिए अर्हन् तीर्थंकर महावीर निर्वाण पाम्या तेज रात्रिए अवन्ता (माळवा) मा चडप्रद्योत नामना राजा पण मरण पाम्यो तेनी पछी तेनो पुत्र पालक अव तीनी गादी उपर अभिषिक्त थयो मेरुतुग पातानी तारीखो अने कथनोना प्रमाणमा रूपात रित मागधीमा रचेली गाथाओनो उल्लेख करे छे अने ते गाथाओने सस्कृतगद्यमा विवरण पूर्वक समजावे छे

आ पालक राजानु राज्य ६० वर्ष चाल्यु ते वरसत पाटलिपुत्रमा राज्य करता कूणिकना पुत्र उदायीनु खून थयु * आ राजाने सतान नहि होवाथी नापित-गणिकाथी उत्पन्न थएल नदनो पाच देदिप्यमान आभूषणथी भूषित एवा मुख्य हस्तीना पसदगी अनुसार, राज्याभिषेक थयो परिशिष्ट पर्व (हेमचद्रकृत) मा एवु वर्णन मळी आवे छ के ' वर्धमान स्वामी (अर्थात् वीर) ना निर्वाण पछी साठ वर्षो वीती गया पछी आ नद राजा थया अने तेनी पाछळ एक पछी एक एम अनुक्रमे नव नदो पाटलिपुत्रना गादीए आव्या तेमनु राज्य कुल १५ वर्ष चाल्यु ' आम वीर पछी २१५ वर्ष थाय पण परिशिष्ट पर्वमा एम पण कहेलु छे के महावीरनिर्वाण पछी १५ वर्ष चद्रगुप्त राजा थया तदर्थे माटे मेरुतुग आ हकीकत विचार णीय छे एम जणावे छे कारणके आ हकीकत प्रमाण ६० वर्ष थोडा थाय छे तेम अन्य ग्रथोनी हकीकतो साथे पण आ बाबत विरोध धरावे छ

---

* कौणिक अगर कूणिक ते श्रेणिकना पुत्र हता आ श्रेणिक भागवतना मत आठमाना छे अने ते बाद ग्रथोमा वर्णवेल राजगृहनो राजा बिंबिसार ज हता

त्यारपछी १०८ वर्ष मौर्ये राज्य चाल्युं. चाणाक्ये नवमा नंदने गादी उपरथी दूर करी चंद्रगुप्त आदि मौर्य राजाओने पाटलिपुत्रनी राज्यगादी उपर स्थापित कर्या एम वीर पछी ३२२ वर्ष वीत्या. मौर्यराज्य पछी पुष्यमित्रे ३० वर्ष राज्य कर्युं.

त्यारबाद बलमित्र अने भानुमित्रे ६० वर्ष सुधी राज्य कर्युं. आ राजाओ ते उज्जयिनीनी गादी उपर थई गएला तेज नामना राजाओथी जुदा हता कल्पचूर्णि (कल्पसूत्रनी एक टीका) मां एवी हकीकत आपेली छे के आ राजाओए (उज्जयिनीना) चतुर्थी पर्वना संस्थापक कालिकाचार्यने पोताना राज्यमांथी बहिष्कृत कर्या हता. तेमना पछी चालीस वर्ष नभोवाहने, जे केटलांक स्थळोमां नरवाहनना नामथी ओळखाय छे तेणे, राज्य कर्युं. आ बनावनो समय वीर-निर्वाण पछी ४५३ वर्षे आवे छे अने आ वर्षे गर्दभिल्लने निर्मूळ करनार कालिकाचार्य, मानपूर्ण सूरिपद पाम्या. नभोवाहन पछी गर्दभिल्ले १५२ वर्ष राज्य भोगव्युं अर्थात् गर्दभिल्लवंशनु राज्य कुल १५२ वर्ष रह्युं नभोवाहन पछी गर्दभिल्ले उज्जयिनीमां ज्यारे १३ वर्ष मात्र राज्य कर्यु हतुं ते वखते, कालिकाचार्ये पोतानी बेन सरस्वती उपर करवामां आवेला जुलमने कारणे गर्दभिल्लनुं निपूढन कर्युं, अने उज्जयिनीमां शक राजाओने स्थापित कर्या तेओए त्यां चार वर्ष राज्य कर्युं अने ते रीते कुल १७ वर्ष थयां.

गर्दभिल्लना पुत्र विक्रमादित्ये उज्जयिनीनुं राज्य पाछुं लीधुं अने सुवर्णना दानथी विश्वना करजने दूर करीने विक्रमसंवत् नामे नवीन संवत्सर प्रवर्तान्यो आ (युग) नी स्थापना वीर ना वार्षिक दानना वर्षथी * शरु थता वीर संवत् ५१२ वर्षे करवामां आवी.

विक्रमना राज्यकालनां	६०	वर्षो.
तेनो पुत्र विक्रम चरित्र उर्फे धर्मादित्यना राज्यकालनां	४०	.
तेना पछी थएला राजा भाइल्लना राज्यना ,,	११	,,
,, . नाइल्लना राज्यना ,	१४	.
,, ,, नाहडना ,, ,	१०	,
	१३५	..

आ राजाना समयमां श्रीमहावीरनुं यक्षवसति नामनुं मोटुं चैत्य, जालोर नजीक आवेला सुवर्णगिरिना शिखर उपर, एक वेपारी (श्रेष्ठि) ए पुष्कळ द्रव्य (९९ लाख) खरची बंधाव्युं हतुं. विक्रम पछीना १३५ वर्षमां १७ वर्ष उमेरतां १५२ वर्ष थाय छे, अने (गाथामां) पण तेम ज कहेलुं छे विक्रमराज राज्यकाल एटले के विक्रमनां वंशात्मक वर्षनी नभोवाहननी पछी १७ वर्षे शरुआत थई; विक्रम संवत् अगर राज्यारंभ ते विक्रमना राज्यथी, अथवा मेरुतुंगनी कल्पनानुसार विक्रमराज्यकालना १७ मा वर्षथी, शरु थयो. तेथी १५२–१७=१३५ वर्षो विक्रमकालयुगनां थाय छे. जिनकाल ते विक्रमकालनी पहेलांनो जिनवीरनो काल छे आ ४७० वर्षनो काल ते श्रीमहावीर अने विक्रमनी वच्चेना कालनी बराबर छे श्रीवीर अने विक्रमादित्यना काल या संवतनी गणत्री केवी रीते करवामां आवी हती ? विक्रमना राज्यनी शरुआत पहेलां ४७० वर्ष श्री वीरनुं निर्वाण थयुं हतुं, एटले के विक्रमना राज्यनी शरुआत वीरनिर्वाण बाद ४७० वर्षे थई.

---

* दाननुं वर्ष के जे नवा संवतनी स्थापनानुं एक मुख्य कारण छे. राजा आखुं वर्ष अतिशय सुवर्णराशि दानमां आपे छे त्यारे ते प्रवर्ते छे एम मानवु छे. महावीर पोताना मरण अगाउ ४२ मा वर्षमां तेम कर्युं हतुं एम कहेवाय छे

पालक	६०	विक्रमादित्य	६०
नन्द	१५५	धर्मादित्य	४०
मौर्य	१०८	भाइल्ल	११
पुष्यमित्र	३०	नाइल्ल	१४
बलमित्र भानुमित्र	६०	नाहड	१०
नभोवाहन	४०		१३५
गर्दभिल्ल	१३		४७०
	४७०	कुल संख्या	६०५

शक संवतनी आ गणतरी—वीरनिर्वाण पछी ६०५ वर्षे भारत (हिंदुस्थान) मां शरुआत थई हती

आगळी वातचीतनु वर्णन करीने मेरुतुंग अनेक स्थविरो (थेरा, वडील महान यतिओ) ना पट्टप्रतिष्ठाकाल (सूरि पदवी उपर प्रतिष्ठापन) नी तारीखो आपे छे

श्रीवीरना निर्वाणथी —

सुधर्मस्वामीनु पट्टाधिरोहण	२० वर्षसुधी
जंबुस्वामीनु	४४
	६४

परिशिष्ट पर्वमां पण एमज छे के जंबुए वीरनिर्वाण पछी ६४ वर्ष आयुष्य भोगवी पोतानी पाट कात्यायन गोत्रना प्रभवने स्थापित कर्या अने सर्व कर्मथी निवृत्त थई अक्षय्य स्थानने पाम्या

प्रभव	११ वर्ष
शय्यंभव	२३
यशोभद्र	५०
संभूतिविजय	८ ,
भद्रबाहु	१४ ,
	१७०

आ रीते वीरनिर्वाण पछी १७० वर्ष थयां परिशिष्ट पर्वमां जणाव्युं छे के वीरनिर्वाणथी १७० वर्षो गया पछी भद्रबाहु समाधिपूर्वक स्वर्गे गया

स्थूलभद्र	४५ वर्ष अर्थात वीरनिर्वाणथी २१५ वर्ष
आर्यमहागिरि	३०
आर्यसुहस्ति	४६
गुणसुंदर	४४
	३३५ वर्ष

आ समये (अणुनिगोद व्याख्याता) कालिकाचार्य प्रादुर्भूत थया कालिकाचार्यना अणुनिगोद उपरना व्याख्यान सांभळवा इन्द्र आव्यो हतो ते वात कथावली स्थविरावलीमां पुनरावृत्त करी छे कालिकाचार्य प्रज्ञापनाना सूत्रना कर्ता छे मूळमां ३४० ना अंक आप्यो छे जे लहियानी भूल छे कारण के आना प्रमाणमां परिशिष्टपर्वनी जे एक गाथा टांकवी छे तेमां ३७० होवानु जणावेलु छे ते वीर पछीना ११ गणधर सहित पट्टधरोमांना २३ मा पट्टधर हता सिद्धांतमां ते श्यामार्यना नामे ओळखाय छे

कालिकाचार्य	४१ वर्ष
स्कंदिलसूरि	३८ ,,
	४१४ वर्ष

आ आप्या पछी मेरुतुंगाचार्य वृद्धसंप्रदाय एटले प्राचीनपरंपरागत कथनो नोंधे छे स्थूल-भद्रना आर्यमहागिरि आर्यसुहस्ति नामे बे शिष्यो हता.

आर्यमहागिरि शाखा ते मुख्य शाखा छे अने ते स्थविरावालीमां नीचे प्रमाणे आपवामां आवी छेः—

वलिस्सह सूरि		रेवइसिंहो	(रेवतिसिंह)
सांयि	(स्वाति)	खंडलो	(स्कंदिल)
सामज्जो	(श्यामार्य)	हिमवं	(हिमवान्)
संडिलो	(शांडिल्य)	नागज्जुणो	(नागार्जुन)
जियधरो	(जित-धर)	गोविंदो	(गोविन्द)
अज्जसमुद्दो	(आर्यसमुद्र)	भूयदिन्नो	(भूतदिन्न)
मंगू	(मंगु)	लोहित्यो	(लौहित्य)
मंडिल्लो	(मंडिल)	दूसगणि	(दुष्यगणि)
नागहत्थि	(नागहस्ती)	देवड्ढी	(देवर्धिन्)

आ देवर्धी ते वीरथी २७ मा पट्टधर हता. तेमणे संपूर्ण सिद्धान्त, रखेने ते नष्ट थई जाय, तेटला माटे लखाव्यो

कल्पसूत्रमां आपेली बीजी शाखा नीचे प्रमाणे छेः—

अज्जसुहत्थि	(आर्यसुहस्ति)
सुट्ठिय	(सुस्थित)
इंददिन्नो	(इन्द्रदिन्न)
अज्जदिन्नो	(आर्यदिन्न)
सिंहगिरि	(सिंहगिरि)
वइरसामी	(वज्रस्वामी)
सोपारग वइरसेनो	(सौपारक वज्रसेन)

परंतु आ शाखाओमां आर्यसुहस्तिनी पछी गुणसुंदरनुं नाम आवतुं नथी, तेमज श्यामार्यनी पछी स्कंदिलाचार्यनुं नाम पण नथी परंतु मेरुतुंगे पुरातन यादीओमां तेओना नामनो निर्देश थएलो जोवाथी अहीं पण तेमणे ते नामो वचमां मूकी देवानी हिंमत करी छे आवी ज बाबत रेवतिमित्रना संबंधमां जाणवानी छे स्कांदिल पछी ३६ वर्षे रेवतिमित्र थया हता. (अने तेमना पछी), आर्य मंगु २० वर्षे एटले आ काळ ते वीरनिर्वाण पछी ४७० वर्षनो काळ थयो. (वीरनिर्वाणथी) ४५३ वर्ष थयां पछी कालिकसूरि जेमणे गर्दभिल्लनो विनाश कर्यो हतो तेओ थया. तेमना पछी २४ वर्षे आर्यधर्म थया केटलाकनुं एम मानवु छे के मंगु अने धर्म ए बंने एकज व्यक्तिनां नामो छे तेओना मते आर्यधर्मनो काल ४४ वर्षनो बने छे.

भद्रगुप्त	३९ वर्ष
श्रीगुप्त	१५ ,,
श्रीवज्र	३६ ,,

आ समय वीरनिर्वाण पछी ५८४ वर्षनो छे तदनन्तर श्री आर्यरक्षित १३ वर्ष पुष्यमित्र २० वर्ष पट्टधर रह्या आमणे यथार्थ रीते सूत्रार्थनो बोध कराव्यो हतो आ प्रमाणे आपणे या रथी ६१७ मा वर्षमा आवाए छीए आ समये शक संवत्सरनी शरुआत थइ (नकल अत्रे दोषयुक्त छे अने उल्लिखित गाथा मेळववानी जरुर छे)

साधारण रीते नीचे दर्शेल कथन उपलब्ध थाय छे —

अगाउ (प्राचीन समयमा) चन्द्रगुप्त राजाना समयमा बार वर्षनो दुष्काळ पडवाथी उत्पत्तिलब्धि (उत्कृष्ट ज्ञानना अर्थो) अने नीजा हजारो प्रकीर्णको नष्ट थया बहुल्सम अने बलिस्सह आ बने एकज व्यक्तिना नामो हता स्थविरावलीमा आर्य मंगु पछी भिन्नशाखामा उत्पन्न थएला एवा आर्यधर्म, भद्रगुप्त, वज्रस्वामी अने आर्यरक्षितना नामो मुकेला छे अने आम करवानु कारण पटलुज हतु के ते व्यक्तिओ नामांकित या प्रधानपुरुष हता रेवतिसिंह सूरि ते ब्रह्मद्वीपकथी भिन्न छे त्यारपछी वज्रस्वामीना समयमा फरीथी १२ वर्षनो दुष्काळ पड वाथी सिद्धान्तनु व्याख्यान बंध थयु परतु ज्यारे फरी आबादी थइ त्यारे स्कंदिलाचार्ये मथुरामा संघने एकठो करी फरीथी सिद्धान्तना वाचनानो आरंभ कर्यो अने आ वर्णन 'जेसि इमो अणुओगो' थी शरु थती गाथा अनुसारे मानवामा आवे छे \

बीजी शाखामा आर्यसुहस्तिना १२ अंतेवासीओमाना सुस्थित नामे पांचमा अंतेवासी हता तेमनी द्वारा कोटिकगणनी उत्पत्ति थइ अने कल्पसूत्रमा एम जणावेलु छे के व्याघ्रापत्य गोत्रना आर्यमहागिरिने उत्तरथेरो नामना प्रथम अने षडुलुक उर्फे रोहगुप्त जे आठमा अंतेवासी हता तेओना उपरांत आठ शिष्यो हता छेल्ला अंतेवासी षडुलुक उर्फ रोहगुप्तद्वारा कल्पसूत्रमा जणाव्या प्रमाणे त्रैराशिक शाखानो प्रादुर्भाव थयो

आवश्यकसूत्रमा भिन्नभिन्न निह्नवोनो समय नीचे प्रमाणे आपेला छे —

प्रथम निह्नव (जमालि) वीर प्रभुने केवळ ज्ञान थया पछी १४ मे दिवसे (? वर्षे) थयो

बीजो (तिष्यगुप्त)	१६ वर्षे
त्रीजो (अव्यक्त)	२१४ ,
चोथो (समुच्छेदिक)	२२० ,
पांचमो (गंग)	२२८
छट्ठो (रोहगुप्त त्रैराशिक)	५४४
सातमो (गोष्ठा माहिल)	५८४
आठमो (दिगंबर पंथ)	६०९

हवे विचारो के षडुलुक रोहगुप्त आर्यमहागिरिनो शिष्य होय तो ते समये वीर पछी ५४४ वर्षो केवी रीते व्यतीत थया होय ? आर्यमहागिरि ए स्थूलभद्रना शिष्य हता अने स्थूल भद्र उपर समजाव्या प्रमाणे वीरनिर्वाण पछी २४ वर्षे उत्पन्न थया हता आथी (आर्यमहा गिरिना) अंतेवासीने वीर पछी ५४४ मा वर्षमा मूकी शकाय ज नहि

आ संदेहनिराकरण माटे बहुश्रुत विद्वानो ज प्रमाण छे आ ज प्रमाणे बार वर्षना दुष्काळना अंते वज्रस्वामीए पोताना वज्रसेन नामना शिष्यने जाहेर कर्यु हतु के—' ज्यारे तमने एक लाख रूपीआनी किंमतनु भोजन मळे त्यारे तमारे हवे लोकमा समृद्धि (अथवा रेलचेल) थशे एम समजवु ' एम कहीने बने मददो आर्या मोकल्यो, ते शिष्य सोपारगमा वसता जिनदत्त नामना श्रेष्ठि (व्यापारी) ने त्या गयो तेनी इश्वरी नामना पत्नीए तेने झेर भेळव्या विना

एक लाख रुपीआनी किंमतनुं भोजन अर्पण कर्युं.* अने शिष्ये तेमने कह्युं के आवती काले समृद्धि थशे--अने पछी ते त्यां सुखपूर्वक रह्या पछीथी तेने नेन्द्र, चन्द्र अने विद्याधर नामना शिष्यो प्राप्त थया हता

एक सो शाखावाळा वड अगर पिपळाना झाडनी माफक चंद्रकुल, आज सुधी कीर्तिमंत वर्ते छे अने तेना संबंधमां नीचेनी एक गाथा पण प्रचलित छे --

" कोडि गणो गणो मे, वइर साहा साहा से; चन्दकुलं कुलं मे."

" गणोमा कोटी गण, शाखाओमां वज्रशाखा अने कुलोमां चन्द्र कुल (श्रेष्ठ) छे "

भृगुक्षेत्रमां आर्य खपुटाचार्य अने सिद्धसेन प्रभावक (थया)

वळी. वज्रस्वामी पछी वज्रसेन थया हता	३३	वर्ष
नागहस्ति	६९	,
रेवतिमित्र	५९	,
ब्रह्मद्वीपक सिंह	७८	.
	२३९	

त्यार पछी स्कंदिल, हिमवत्सूरि अने नागार्जुन ७८ वर्ष

आ ७८ वर्षमांनां २२ वर्ष ज्यारे व्यतीत थयां त्यारे वलभिनो नाश थयो. तेना माटे एवो उल्लेख छे के--" पण सयरी वाससाइं तिण्णि सयाइं अइक्कमेउण, विक्कमकालाउ तओ वल-ही-भंगो समुप्पण्णो " --विक्रमकाल पछी ३७५ वर्ष व्यतीत थयां पछी वलभिनो भंग थयो.

विक्रम पछी वज्रस्वामी ११४ वर्ष थया.

वज्रस्वामी पछी स्कंदिल २३९ वर्ष थया

तेना पछी २२ वर्षे वलभिभंग थयो अने एम एकंदर ३६५ वर्षो थयां तेज रीते, विक्रम पछी ५१० वर्षे, अने वीरनिर्वाण पछी ९८० वर्षे देवर्धिगणीए सिद्धान्त लखाव्यो अने ते वखते कल्पसूत्रमां तेमणे लख्युं के --" श्रमण भगवान महावीरना निर्वाण पछी ९०० वर्षो पसार थयां पछी १० मां सैकाना ८० मा वर्षमां आ ग्रंथ रचायो हतो '

आना पछी १३ वर्षे (कालकसूरिए) शुक्ल चोथने दिवसे पर्युषणापर्व उजव्युं: अने आ बाबत (उल्लिखित गाथामां) वर्णवेली छे.

१०५५ मा वर्षमां (उल्लिखित) गाथामां जणाव्या मुजब, हरिभद्रसूरिनुं मरण (थयुं).

पछी जिनभद्रक्षमाश्रमण	६५	वर्ष	थया
,, पुष्यमित्र	६०	,,	,,
,, स्वातिसूरि	७५	,,	,,

जेमणे शुक्ल चौदशने दिवसे पाक्षिक प्रतिक्रमणनी स्थापना करी हती. (उल्लिखित गाथा)

केटलाक ग्रंथोमां पुष्पमित्रने स्वातिसूरिनी पछी मुक्या छे, परंतु आम करवुं (उल्लिखित) गाथाथी विरुद्ध छे मुख ग्रंथ (जे अनुक्त या अनिर्दिष्ट छे परंतु जेमां गाथा आपेली) मां एम कहेलुं छे के तेमणे वीर पछी १३०० वर्षे सूरिपद मेळव्युं हतुं परंतु आना संबंधमां बहुश्रुत पुरुषोए तपास करवानी जरुर छे, कारण के तेमां एम जणावेलुं छे के स्वाति (सूरि) पछी संभूतिविजय थया हता पचाश वर्ष माठर, ६० वर्ष संभूतिगुप्त अने वप्पभट्टसूरिः परंतु आ विषयमां उत्तम प्रमाण मात्र संप्रदाय ज छे.

* ग्रंथकार आ स्थळे एम सूचवे छे के श्रेष्ठिनी स्त्रीनो इरादो, दुष्काळपीडीत कुटुंबिओने झेरमिश्रित भोजन आपी अनिवार्य चिरतन पीडामाथी मुक्त करवा माटे एकी वखते मारी नाखवानो हतो

वीरनिर्वाण पछी १६३९ वर्षे अने विक्रम पछी ११६९ वर्षे श्री विधिपक्ष मुख्याभिधान आर्यरक्षितसूरिए अचल गच्छ स्थाप्यो

वारनो शिष्य श्रेणिक हतो तेनो पुत्र कूणिक तेनो पुत्र उदायी तेना पछी पाटलिपुत्रमा नव नदोए राज्य कर्युं चाणाक्ये तेओने हाथी कादी चद्रगुप्तने राज्याभिषिक्त कर्यो तेना पुत्रनु नाम बिंदुसार हतु तेना पुत्रनु नाम अशोक श्री अने तेनो अध पुत्र कुणाल हतो एना पुत्र सप्रति राजाए उज्जयिनीमा राज्य कर्यु हतु आनो वंशज गर्दभिल्ल हतो ए राजानो शक राजाए नाश कर्यो गर्दभिल्लना पुत्र विक्रमादित्ये शक राजाने नसाडी उज्जयिनीनी गादी उपर पोते वेठो तेणे वीरना मोक्ष पछी ४७० वर्षे सवत्सरथुग स्थाप्यो त्यारबाद सवत ८२१ ना वैशाख सुद २ ने सोमवारे चावडा वश (चाउडा अगर चावडा वश) मा वनराजे अणहिलपुर वसाव्यु तेणे पोते ६० वर्ष कुल राज्य कर्यु तेना पुत्र योगराजे ९ वर्ष राज्य कर्यु। पछी सवत ८९१ मा श्रीरत्नादित्ये त्रण वर्ष राज्य कर्यु तेनो पछी वैरिसिंहे ११ वर्ष राज्य कर्यु

सवत ९०१ मा तेनो पुत्र क्षेमराज गादी उपर आव्या अने ३९ वर्ष राज्य कर्यु

सवत ९४४ मा चामुड राजे क्षेमराजनो उत्तराधिकारी बनी २७ वर्ष राज्य कर्यु

सवत ९७१ मा तेनो पुत्र धाघड गादी उपर आव्यो अने तणे २७ वर्ष राज्य कर्यु

सवत ९९८ मा तेनो पुत्र भूअड गादीए आव्यो अने तेणे १७ वर्ष राज्य कर्यु

आ प्रमाणे चाउडा वशना आठ राजाओए कुल १९६ वर्ष राज्य कर्यु

सवत १०१७ मा चालुक्यवशनो श्रीमूलराज(दौहित्र)गादीए आव्यो तणे३ वर्ष राज्य कर्यु

सवत १० ॰ मा तेनो पुत्र वल्लभराज गादीए आव्यो अने तणे चौद वर्ष राज्य कर्यु

सवत १०६६ मा तेना भाइ दुर्लभ राज्यगादी उपर आव्या अने तणे १२ वर्ष राज्य कर्यु

सवत १०७८ मा तेनो भाइ अने नागराजनो पुत्र नामे भीमदेव गादीए आव्यो अने तेण ४२ वर्ष राज्य कर्यु

सवत ११२० मा तेनो पुत्र श्रीकर्णदेव तेना उत्तराधिकारी थया अने तेणे ३० वर्ष राज्य कर्यु

सवत ११५० मा तेनो पुत्र जयसिंहदेव तेनी पछी गादी उपर आव्या अने तेण ४० वर्ष राज्य कर्यु

सवत् ११९९ नी कार्तिक सुद ३ थी सपूर्ण त्रण(?) दिवस सुधी अराजक स्थिति (पादुका राज्य—पावडी ओनु राज्य)

तेज वर्षना मार्गशीर्ष सुद ४ ने दिवसे भीमदेवना पुत्र क्षेमराजना पुत्र देवपालना पुत्र त्रिभुवनपालना पुत्र कुमारपाल गादीए आव्यो अने सवत १२२९ ना पौष सुद १२ सुधी एकंदरे ३० वर्ष, १ मास अने सात दिवस तेणे राज्य कर्यु

ते ज दिवसे तेना भाई महिपालनो पुत्र अजयपाल गादीए आव्या

सवत १२३२ ना फाल्गुन सुद १२ ने दिवसे अर्थात् ३ वर्ष अने ९ महीना पछी लघु मूलराज गादीए आव्या

सवत १२३४ ना चैत्र सुद १४ ने दिवसे तेना राज्यना २ वर्ष, एक महीनो अने बे दिवस पूरा थया अने ते दिवसे भीमदेव राजा थयो

थेरावली समाप्त

(टिप्पण) त्यारबाद गर्जनक (विजननिा महमुदना) राज्यनी स्थापना थई (एक गाथानो उल्लेख कर्यो छे) पछीथी संवत १३०० मा श्री वीरधवलनो भाई वीसलदेव गज्य गादी उपर आव्यो

१३१८ मा अर्जुनदेव
१३३१ मां सारंगदेव
१३३५ मा लघुकर्ण
१३६० मां माधव नामनो एक नागर ब्राह्मण यवनोने लाव्यो

कुमारपालना प्रधान नामे वाहडे, संवत १२११ मां [शत्रुंजय उपर] एक पत्थरनुं मंदिर बंधाववामां बे करोड ९७ लाख रुपीआ (रु २,९७ ००,०००) खर्च्या

संवत १३७१ मां यवनो (मुसलमानो) तरफथी थएला त्रासने लइने, ज्यारे जावडिनी स्थापेली मूर्ति नष्ट थई हती त्यारे समराके एक नवी मूर्ति स्थापित करी

[केटलोक खुलासो.]

थेरावलीना प्रारंभमां आपेलां नामो तथा तारीखो घणांज महत्वनां छे

महावीर ए छेल्ला जैन तीर्थंकर छे.

बौद्धो गौतमने महावीर कहे छे अने तेमना मुख्य अने प्रसिद्ध शिष्य तरीके महाकाश्यपनुं नाम आपे छे जैनो काश्यपने महावीर कहे छे अने गौतमने तेमनो मुख्य शिष्य (गणधर) बतावे छे. जैनो तथा बौद्धो बंने मगध अथवा बिहारनी राजधानी राजगृहना राजा श्रेणिक, जेने जैनो भंभासार कहे छे तथा बौद्धोना मतानुसार जे बिंबिसरो छे. तेने महावीरना मित्र तथा धर्मानुयायी तरीके एकमते जणावे छे. आ पुरुषो तथा त्यारपछीना राजाओना संबंधमां मारी समालोचना हुं बीजा लेखमां करवा इच्छुं छुं. ते लेखमां हुं बुद्धनो काल तथा खिस्ति सन् पूर्वेनो हिंदुस्थाननो इतिहास, जेमना संबंधमां बौद्ध अने ब्राह्मणग्रंथोमांथी जडी आवती तारीखोथी जैन ग्रंथोमां आपेली तारीखो घणीज जुदी पडे छे, तेना विषयमां आलोचना करवा मारो इरादो छे.

परिशिष्ट पर्वमां हेमाचार्ये उदायीना खूनना विषयनी विगतो आपेली छे थेरावली प्रथम नंदनी उत्पत्तिना विषयमां एक संक्षिप्त अने अत्युपयोगी हकीकत आपे छे अत्यारसुधीमां प्रकाशित थएला बौद्धग्रंथोमां ते विषयमां कांई लखेलुं जोवामां आवतु नथी पुराणोमां तेने शूद्रथी उत्पन्न थएल जणाव्यो छे परंतु तेनी नापित (हजाम) कुलमां उत्पत्ति विषयक जे जैन हेवाल मळे छे ते हेवाल अलेक्झान्डरे पंजाब उपर चढाई करी ते समये पाटलिपुत्रना राजाना डिओडोरस सिक्युलस (Diodorus Siculus) अने क्विन्टस कर्टिअसे (Quintus Curtius) आपेला हेवाल साथे जो के तद्दन एकरूप नथी छतां घणो मळतो छे. आ राजा ते, चंद्रगुप्त अगर ग्रीकोना संड्रकोटसनो पूर्वज हतो

प्राकृत ग्रंथोमां शको तेमज सिथिअनोने सग कहेला छे. विक्रमसंवत् अने विक्रमादित्ये करेलो शकराजाओनो पराजय आ बे बनावो समकालीन होय तेम जणाय छे परंतु शकनृपकाल के जे शालिवाहननो युग ज छे ते शक लोकोए करेली मालवा अने दक्खण उपरनी जीतनो समकालीन छे शककाल अथवा शकोना युगने. भारतवर्षीय विद्वानो सुद्धांए केटलीक वखत पहेली बाबत साथे अने केटलीक वखत बीजा बनाव साथे गोटाळो करी दीधो छे, अने ते रीते तेमनी गणत्रीमां १३५ वर्षनी भूल थाय छे.

भरुचनी एक प्राचीन जैन लाइब्रेरीना अवशिष्टोमांथी मळी आवेल एक पट्टावलीना छुटा

पानामा शा कारणथी कालिकाचार्ये शक राजाओने दाखल कया तथा विक्रमादित्य तेमने केवा रीते हाकी मूकी पोतानो मत्सर स्थाप्यो ते बाबतनो खुलासा आप्या पछी नीचेनी बाबत उमेरेली छ "विक्रम पछी १३' वष वीत्या पछी शाक लोकोए फरीथी विक्रमपुत्र (विक्रमनो पुत्र अगर वशज) ने हाकी काढ्या अने तेनु राज्य जीती लीधु

चाउडा (चापोत्कट) वशनी कालगणाना जे वनराजथी शरू थाय छ ते कालगणना प्रबधचिंतामणि तथा अन्य यादीओमा आपेली कालगणनाथी राजाओना नाम सबधी क्रम अने सख्या परत्वे तथा तेओना राज्यकाळनी सख्या परत्वे भिन्न पडे छे आ उपरथी स्वाभाविक रीते एक एवो प्रश्न उभो थाय छे के थेरावलीना कर्ता मेरुतुग ने प्रबधचिंतामणिना कर्ता जेमनु नाम पण मेरुतुग छे ते होय के नहि ?

आ स्थळे हु प्रबधचिंतामणि, जिनमण्डनोपाध्यायकृत कुमारपाल प्रबध तथा एक नमामी पट्टावली उपरथी तारवी काढेलु एक तुलनात्मक कोष्टक नीचे रजु करु छु —

	मेरुतुगनी प्रबध चिंतामणि	जिनमण्डनोपाध्याय कृत कुमारपाल प्रबध	पट्टावली (नाम वगरना)
वनराज	,०	०	६०
यागराज	३५	३५	२२
क्षमराज	२'	२	२'
भूयड	२९	२९	,०
वैरिसिंह	२'	२५	२'
रत्नादित्य	११	११	१५
सामतसिंह	७	७	७
मूलराज	५५	५	५१
चामुण्डराज	१३	१३	१३
वल्लभराज	६ महीना	६ महीना	६ महिना
दुर्लभराज	११—'	११—६	११—६
भीमराज उर्फे भीमदेव	' ४२	४,	४२
कर्णदेव	नथी आप्यु	२९	२९
जयसिंहदेव	प्रतिना दोषने लइन ४९	नथी आप्यु	४८-८-१०
कुमारपाल	३'	३१	३०-८-२७
अजयदेव उर्फे अजयपाल	३		३ ११ २८
मूलराज	'		२-१-२४
भीमदेव	६३		६' -२—८
लघुक राज (अराजक स्थिति)			६ दिवस
त्रिभुवनपाल			२ मास १२ दिवस
वीसलदेव			१८-७-११
अर्जुनदेव			१३-६—६२
सारगदेव			२१-८—८

१ एक प्रतिमा २ अने बीजीमा मूलनी माफक छे

साहित्य-समालोचन

Ardha-Magadhi Reader By Banarasi Das Jain M. A.
Published by the University of the Punjab, Lahore

अर्धमागधी रीडर, ग्रन्थकार प्रो. बनारसी दास जैन, एम्. ए. ओरिएन्टल कॉलेज, लाहोर।

बम्बई, कलकत्ता और पंजाब युनिवर्सिटीके अभ्यासक्रममे कुछ वर्षोंसे जैन साहित्यको भी स्थान मिला है और बम्बई इलाखेमें तो कुछ विद्यार्थी जैन साहित्यका अभ्यास कर एम्. ए. तक भी पहुंचे हैं। लेकिन विद्यार्थियोंको और प्रोफेसरोंको इस विषयमें अभी तक सबसे पहली कठिनाई तो इसी बातकी हो रही है कि पढने-पढानेके लिये वैसी कोई पुस्तकें ही अभी तक तैयार नहीं हैं। कुछ वर्षोंसे जैन साधुओंका प्रयत्न इस बारेमें तो यथेष्ट हो रहा है कि भंडारोंमे पडे पडे सडने वाले संस्कृत प्राकृत आदि जैन ग्रन्थोंको छपवा छपवा कर प्रकट कर दिये जांय। परंतु साधुओंके इस प्रयत्नकी मर्यादा बहुत ही संकुचित और कार्यकी पद्धति बहुत ही शिथिल होने के कारण, युनिवर्सिटीके विद्यार्थियोंको उसका कोई लाभ नहीं मिलता। इस लिये यह काम, जैनसाहित्यके आभ्यासी जो थोडे बहुत स्कॉलर हैं उन्हींके द्वारा किये जानेकी आवश्यकता है।

हमें यह जान कर प्रसन्नता हुई कि श्रीयुत प्रो. बनारसी दासजीने यह अर्धमागधी रीडर तैयार कर, इस महत्त्वके कामका प्रशंसनीय प्रारंभ कर दिया है। यह रीडर, अर्धमागधी अर्थात् जैनागमोंकी प्राकृत-भाषाके अभ्यासियोंको प्रावेशिक ज्ञान करानेमे अच्छी मदत दे सकेगी। इसका संकलन और संपादन उत्तम रीतिसे किया गया है। प्रारंभमे, पहले अर्धमागधीका संक्षिप्त व्याकरण दिया गया है; उसके बाद, अर्धमागधी भाषा और उसके साहित्यका परिचय कराया गया है। तदनन्तर, कुछ उपयुक्त ऐसे छपेहुए जैन ग्रन्थोंकी सूचि, जैन साहित्यके प्रकाशन-कार्यमें विशिष्ट योग देनेवाली कुछ व्यक्तियोंका परिचय, और अन्तमें हस्तलिखित ग्रन्थ पढनेवालोंके लिये पुरानी लिपि विषयक कुछ सूचनाएं भी देदी हैं। फिर कोई ७८ पन्नोंमें, विवागसुय, नायाधम्मकहा, ओववाइयसुत्त, आयारंगसुत्त, पण्हावागरणसुत्त, सूयगडंगसुत्त, उत्तरज्झयणसुत्त और दसवेयालियसुत्त आदि जैन सूत्रोंमेंसे चुन चुन कर कितनेक मूल-पाठ दिये हैं। पाठोंका चुनाव अच्छा और भाषा तथा साहित्यकी दृष्टिसे विशिष्ट परिचायक किया गया है। फिर इन मूल-पाठोंका इंग्रजी अनुवाद और कुछ आवश्यक टिप्पणियां देकर सबोंतमें महत्त्वके शब्द और नामोंकी एक सूचि भी दे दी है। इस प्रकार नवीन अभ्यासीकेलिये इस रीडरको उपयोगी बनानेमें प्रो. जैनने जो खूब परिश्रम और प्रयत्न किया है तदर्थ वे विद्यार्थियोंके धन्यवादके पात्र हैं और हम आशा करते हैं कि भाई श्री बनारसी दासजी इस विषयका अपना प्रयत्न सतत जारी रखेंगे और आगे पर हमको इससे भी अधिक महत्त्वकी कोई ऐसी पुस्तक भेट करेंगे।

प्रस्तुत रीडरकी एक हिन्दी आवृत्ति भी बनारसी दासजीने तैयार की है जो कभी शायद जैन साहित्य संशोधकके पाठकोको पढनेको मिल सकेगी।

प्रकाशक —शाह केशवलाल माणेकचंद, माननीय कार्यवाहक जै० सा० सं० कार्यालय,
भारत जैन विद्यालय, पूना शहर.
मुद्रक —गणेश काशिनाथ गोखले, सेक्रेटरी; श्री गणेश प्रिंटिंग वर्क्स, ४९५ शनवार पेठ, पुणे शहर.

તરંગવતી

અર્થાત્

ભગવાન્ શ્રી મહાવીરદેવના શાસનની એક સાધ્વીની

હૃદયંગમ અને આદર્શભૂત

આત્મકથા

પ્રાકૃતમાં

મૂળ કર્તા પાદલિપ્તાચાર્ય– સંક્ષેપ કર્તા નેમિચંદ્ર ગણિ

પ્રો. લૉયમેનના જર્મન અનુવાદ ઉપરથી ગુજરાતી કરનાર

નરસિંહભાઈ ઈશ્વરભાઈ પટેલ

શાન્તિનિકેતન

પ્રકાશક

બબલચંદ કેશવલાલ પ્રે. મોદી

હાજાપટેલની પોળ–અમદાવાદ.

વિક્રમ સં. ૧૯૮૦ [સર્વ હક્ક સ્વાધીન] સને ૧૯૨૪

આવૃત્તિ ૧ લી. કી. રૂ. ૦-૧૨-૦ નકલ ૧૪૦૦

શ્રી વીર-શાસન પ્રિન્ટીંગ પ્રેસમાં શા કેશવલાલ હરસુખભાઈએ છાપ્યુ

ઠે. રાજપુર ટંકશાળ—અમદાવાદ

કેશવલાલ પ્રેમચંદ મોદી (પ્લીડર) ની પુત્રી

(મોહનલાલ પોપટલાલ ડોક્ટર (પ્લીડર) ની પત્ની)

માણેક

જન્મ સંવત ૧૯૬૨ ના કારતક શુદ ૧૨
બુધવાર તા ૮ નવેમ્બર સને ૧૯૦૫

દેહત્યાગ સં. ૧૯૭૯ ના માગસર વદ ૧૩
શનીવાર તા ૧૬ ડીસેમ્બર સને ૧૯૨૨

અર્પણ પત્રિકા

મ્હારી વ્હાલી ભગિની !

પૂર્વસંચિતની કૃપા વિના આવી બેન કયાથી મળે? ડાહી અને વિવેકી
તો ઘણીય બહેનો હોય, પણ આવી કુટુંબવત્સલ અને સત્કર્મમા
આમ વાર્યું કરનારી તે તો દુર્લભ જ માણે- ! ત્હારા મનોરથ
ઉમદા અને પરોપકારી, એ મનોરથ પાર પાડવામા ત્હારો આ-
ગ્રહ અને ત્હારૂ બળ અમને સૌને હરાવે છે ! તુ ગર્યુ
કરનારી, તુ ત્હારા ગુણથી, બુદ્ધિથી અને કર્મથી સૌને
જીતનારી ! તે અમારામાં જન્મી, એજ અમારો
ભાગ્યોદય છે ધન, વૈભવ કે રાજ્યસત્તા કરતા
તારા જેવા રત્નના મહવાસીને કેમ અભિ
માન ના ચડવુ જોઇએ ? છતાય તારો
મહવાસ કેટલો ટુંકો સુવાસવાળુ ઉ-
ત્તમ કમલ ખીલતા પહેલાજ કર-
માઇ જાય તે દેખી કોને શોક ના
થાય ? એમ છતાય શોક કર્યે શુ વળે
એમ માની ત્હારા સ્મરણાર્થે તારા
જેવીજ સુંદર, પ્રેમાળ અને ગુણવાન
નાયિકાવાળી મહાન્ કથા, સમયના ગાઢ
તિમિરમાથી બહાર પ્રકાશમા લાવવા પ્રયત્ન કરવો
તે ઉત્પન્ન થતા શોકને ભુલવવાનો એક સરલ માર્ગ છે
એમ માનીનેજ આ પુસ્તક ત્હારા સ્મરણાર્થે અર્પણ કરૂ છુ

વિષયાનુક્રમ.

પ્રકાશકના બે બોલ

પાદલિપ્તાચાર્યનું નામ જૈન સાહિત્યમા સુપ્રસિદ્ધ છે પ્રભાવક ચરિત્ર, પ્રબધ ચિતામણિ આદિ અનેક ગ્રથોમા એમના સબધમા કેટલુયે લખેલુ મળી આવે છે સૌરાષ્ટ્રના સુપ્રસિદ્ધ જૈનતીર્થ શત્રુજયગિરિની પવિત્ર તળાટીમા વસેલુ પાલીતાણા નામનુ પાટનગર એ જ આચાર્યના નામનુ અતિ પ્રાચીન સ્મરણસ્થાન છે એમ ઘણી જુની જૈન માન્યતા છે પ્રભાવક અને ચમત્કારી પુરુષ તરીકેની ચિરપ્રચલિત ખ્યાતિ કરતા યે પદિનગણમા પ્રકૃષ્ટ પ્રતિભાશાળી પુરુષ તરીકેની કીર્તિ એમની ઘણી જૂની છે જે રસપૂર્ણ કથા વાચકોના હાથમા છે તેના મૂળ કર્તા એ જ આચાર્ય હતા એક કાળે–ઘણા જૂના સૈકાઓમા જ્યારે સસ્કૃત ભાષાની સર્વશ્રેષ્ઠ ગદ્ય કાવ્ય અને કથાના કર્તા ભટ્ટ બાણનો જન્મ યે થયો ન હતો ત્યારે પાદલિપ્તાચાર્યની તરગવતી કથા સહૃદય વિદ્વાનોના સુકુમાર મનને ગગાના કલ્લોલોની માફક નચાવ્યા કરતી હતી સસ્કૃત વાસવદત્તા અને પ્રાકૃત તરગવતી એ બને કથાઓ સેકડો વર્ષો સુધી ભારતીય સરસ્વતી દેવીની કર્ણ–કલિકાઓ મનાતી હતી જૈન આગમ સાહિત્યના દ્વિતીય યુગના મૂળ સૂત્રધાર વિદ્યમાન જૈન વાઙ્મયને અમર સ્વરૂપ આપનાર યુગપ્રવર જિનભદ્રગણિક્ષમાશ્રમણે પોતાના આવશ્યક મહાભાષ્યમા (જુઓ ગાથા ૧૫૦૮) તરગવતીનો નામનિર્દેશ કર્યો છે અને તેનુ જ પુનરુચ્ચારણ આચાર્યવર્ય હરિભદ્રે પોતાની આવશ્યક ટીકામા કર્યું છે હરિભદ્રના શિષ્ય અને કુવલયમાલા કથાના કર્તા દાક્ષિણ્યચિહ્ન ઉદ્યોતન સૂરિએ (શક સવત ૭૦૦, વિક્રમ સવત્ ૮૩૫) પોતાની કથાના પ્રારભમા પાદલિપ્તાચાર્યની પ્રતિભાની પ્રશસા સૂચવતા ત્રણ શ્લોકો લખ્યા છે તેમા તરગવતી માટે લખ્યુ છે કે —

चक्काय जुवल सहिया रम्मत्तण–रायहस–कयहरिसा ।
जस्स कुलप्पव्वयस्स व वियरइ गगा तरगवई ॥

મહાકવિ ભટ્ટબાણને વિધિએ અર્પેલા અદ્વિતીયતાના આસનથી ઉતારી પાડનાર સિદ્ધ સારસ્વત કવીશ્વર ધનપાળે પણ પોતાની તિલકમજરીની પીઠિકામા પાદલિપ્તની સ્તુતિ કરતા લખ્યું છે કે —

प्रसन्नगम्भीरपथा रथाङ्गमिथुनाश्रया ।
पुण्या पुनाति गङ्गेव गा तरङ्गवती कथा ॥

સુપાસનાહ ચરિય નામે પ્રાકૃત ભાષામા એક ઉત્તમ ચરિત્ર રચનાર લક્ષ્મણ ગણિએ (વિ સ ૧૧૯૮), એ ચરિત્રની પ્રસ્તાવનામા પૂર્વ કવિઓના ગુણગાન ગાતા તરગવતીનુ ગૌરવ આ પ્રમાણે ગાયુ છે —

को न जणो हरिसिज्जइ तरंगवइ–वइयरं सुणेऊण ।
इयरे पबंध–सिंधू वि पाविया जीए महुरत्तं ॥

પ્રભાવક ચરિત્રના કર્તાએ પાદલિપ્તાચાર્યનું મૃત્યુ સાભળી કોઈ કવિએ કાઢેલ દુઃખોદ્ગારનિદર્શક એક પ્રાચીન પ્રાકૃત ગાથા સંગ્રહી રાખી છે જેમાં જણાવ્યું છે કેઃ—

सीसं कह वि न फुट्टं जमस्स पालित्तयं हरंतस्स ।
जस्स मुहनिज्झराओ तरंगलोला नई वूढा ॥

પાદલિપ્તાચાર્યની તે મૂળ કૃતિ આજે ક્યાંયે ઉપલબ્ધ નથી. ઘણા જૂના ભંડારોમાં અને તેવી જૂની ટીપોમાં પણ આ કથાનો ઉલ્લેખ મળી આવતો નથી. આથી જણાય છે કે એ મૂળ કથા ઘણા જૂના સમયમાં નષ્ટપ્રાય થએલી હોવી જોઇએ.

જે કૃતિને આધારે પ્રસ્તુત અનુવાદ તૈયાર કરવામાં આવેલો છે તે એક મૂળ કથાના સારરૂપે પાછળથી રચાયેલો સંક્ષેપ છે, અને આ વાત પહેલા જ પાના ઉપરના બીજા પ્રેરેગ્રાફમાં સ્પષ્ટ જણાવેલી છે આ સારના કર્તા હાઇયપુરીય ગચ્છમાં થએલા આચાર્ય વીરભદ્રના શિષ્ય નેમિચન્દ્રગણિ છે, એમ છેવટે આપેલી ગાથા ઉપરથી જણાય છે. એ ગાથા આ પ્રમાણેઃ—

हाईयपुरीयगच्छे सूरी जो वीरभद्दनामेत्ति ।
तस्स सीसस्स लिहिया जसेणा गणिनेमिचंदस्स (?) ॥

આ હાઇયપુરીય ગચ્છ અને તેમાં થએલા આચાર્ય વીરભદ્ર તથા તેમના શિષ્ય નેમિચન્દ્ર વિગેરેના સમય ઈત્યાદિના સંબંધમાં હજી કાંઇ વિશેષ જાણવામાં આવ્યું નથી, આખો ગ્રંથ ગ્રં૦ ૧૬૪૮ પ્રાકૃત આર્યાઓમાં રચેલો છે.

મૂળ કથા ગદ્યપદ્ય ઉભયમાં હશે એમ જણાય છે અને તેની ભાષા પ્રાચીન અપભ્રંશ હશે. ઉપર જે મૂળ કથાની પ્રશંસા જણાવનારા પદ્યો ટાંકેલાં છે તે ઉપરથી તેનું મહત્ત્વ સહેજે જાણી શકાય તેમ છે. વિદ્વાન શોધકો અને મુનિઓ આ બાબત લક્ષ્ય રાખે અને જૂના પુરાણા ભંડારોમાંથી જો મૂળ ગ્રંથ મળી આવે તો જૈન કથાસાહિત્યની કીર્તિ દિગંત પર્યંત ગહેકી ઉઠે તેમ છે.

આ ગ્રંથની એક મૂળ પ્રતિ, અમદાવાદમાં, રૂતાસાની પોળમાં હરકોર શેઠાણીના નામથી ઓળખાતી હવેલીમાંના બેન શ્રીચંચળબાઇ–શેઠ ઉમાભાઈ હઠીસિંગના ધર્મપત્ની–તરફથી મળી આવી હતી, અને એક બીજી પ્રત પાલીતાણાના આણંદજી કલ્યાણજીના ભંડારમાંથી મળેલી છે.

આમાંની એક પ્રતિ જર્મનીના પ્રસિદ્ધ વિદ્વાન પ્રો. યાકોબીને, રા. રા. કેશવલાલ પ્રે. મોદીએ મોકલેલી, અને તેમણે તે પ્રતિ પોતાના મિત્ર ડૉ. લૉયમાનને આપી ડૉ. લૉયમાનને એ ગ્રંથ અતિશય રસદાયક જણાયાથી તેમણે પ્રથમ આખા ગ્રંથની પોતા-

હાથે નકલ કરી અને પાઠશુદ્ધિ કરવાનો પ્રારંભ કર્યો એ પછી તેની અર્થ નકલના કરતા દરમ્યાન મૂળ પાઠ કેટલેક ઠેકાણે વધારે અશુદ્ધ અને ક્યાંક કઠિન જેવો જણાવાથી બીજી પ્રતિ મેળવવા માટે તેમણે રા રા મોતીચંદ સાથે પત્ર વ્યવહાર શરૂ કર્યો એમ કરવામાં ઘણો સમય જશે એમ જણાયાથી, વચ્ચે તેમણે આ ગ્રંથનો જર્મન ભાષામાં ઉત્તમ અનુવાદ કરી તેને છપાવીને પ્રસિદ્ધ કરી દીધો ડૉ લૉયમેનનો એ અનુવાદ ઘણો સરલ અને કાવ્યમયી ભાષામાં થએલો હોવાથી તેમજ મૂળ કથાની વસ્તુ પણ એક ભાવપૂર્ણ ભારતીય આદર્શ હોવાથી યુરોપમાં તેના તરફ ખાસ લક્ષ્ય ખેંચાયું છે અને બીજી યુરોપીય ભાષાઓમાં પણ તેના ભાષાન્તરો થવા લાગ્યા છે અમારી પાસે એ જર્મન અનુવાદ આવતા અમને પણ એનું ગુજરાતી ભાષાન્તર પ્રકટ કરવાની ઇચ્છા થઈ પણ તે પૂર્વે જ શાન્તિનિકેતનમાં હતા શ્રીયુત નરસિંહભાઈ ઈશ્વરભાઈ પટેલને હાથ જર્મન ભાષાન્તર આવવાથી ગુજરાતી ભાષાન્તર કર્યું અને તેને પુરાતત્ત્વ મંદિરના આચાર્યશ્રી જિનવિજયજી મહારાજે ગાઈડન્સ લઈ, પાલીતાણાની મૂળની પ્રતિની સાથે સરખાવી શોધી આપ્યું છે

આ સાથે પાદલિપ્તાચાર્યના સમય વિગેરેના વિચાર સંબંધમાં એક વિસ્તૃત નિબંધ લખી આપવા માટે મુનિશ્રી જિનવિજયજીને નિવેદન કરતા તેમણે તેમ કરી આપવાની ઇચ્છા દર્શાવી હતી, પરંતુ સમયાભાવે અદ્યાપિ તેઓથી તે લખી ન શકાયા તેથી, હાલ તુરત તો અમે આ સંબંધમાં આટલું જ નિવેદન કરી સંતોષ માનીએ છીએ

ડૉ લૉયમાન મૂળ ગ્રંથ તૈયાર કરી રહ્યા છે અને તે થોડાજ દિવસમાં પૂર્ણ કરી શકવાનું જણાવે છે એ મૂળ ગ્રંથ પ્રસિદ્ધ થવાને પ્રસંગે આ સંબંધમાં સવિસ્તર ઐતિહાસિક હકીકત વાચકોને જોવા મળશે એવી આશા રહે છે

આ બાબત માટે અમે શ્રીયુત નરસિંહભાઈ તથા શ્રી જિનવિજયજીના અત્યંત આભારી છીએ

તેમજ કેટલાક પ્રુફો વિગેરે જોવામાં અને ઉપયોગી સૂચનાઓ આપવામાં સાક્ષરવર્ય રા બ શ્રીયુત રમણભાઈ મહિપતરામ નીલકંઠ બી, એ એલ્ એલ્ બી, તથા શેઠ વર્ધમાન સ્વરૂપચંદે જે પરિશ્રમ લીધો છે તે બદલ તેમનો પણ અમે અંતઃકરણપૂર્વક આભાર માનીએ છીએ

અમદાવાદ હાજાપટેલની પોળ — લી

એપ્રીલ ૧૯૨૪ — પ્રકાશક

પ્રો૦ લૉયમેનની જર્મન પ્રસ્તાવનાનો ગુજરાતી અનુવાદ.

સાધ્વી

અર્થાત્

પ્રાચીન ભારતની એક નવીન કથા.

હું આ જે કથા રજુ કરૂ છું તે ખરેખર એક નવીન કથા છે કારણ કે ભારતવાસીઓ સિવાય બહારના કોઇએ અદ્યાપિ એ વાંચી નથી અને જે ભારતમા એકવાર એ લોકપ્રિય થઇ પડી હતી, ખુદ તે ભારતમા પણ અત્યારે એને કોઇ જાણતુ નથી આ કથા પ્રાચીન ભારતનુ દાન છે, પણ વાંચીને એને વાચક કયા કાળમાં મુકશે એ હું ચોક્કસ રીતે જાણતો નથી. ટુંકામાં એટલુ જ કહેવાનુ કે એમા વર્ણવેલા ધાર્મિક સિદ્ધાન્તો બૌદ્ધ કાળમાં પ્રકટ થયા છે, તેથી કથા ક્રાઇસ્ટના પછીના કાળમા એટલે કે બીજી કે ત્રીજી સદીમા લખાઇ હોવી જોઇએ.

કાળનિર્ણય ચોક્કસ રીતે વાચક જાણશે ત્યારે વખતે ફરીવાર એનો ભ્રમ ઉડી જશે. મથાળે મે કથાકાર પાદલિપ્તનુ નામ આપ્યુ નથી વળી પુસ્તકનુ નામ એમણે જે આપ્યું છે તે પણ લીધું નથી પોતાની કથા કહેનાર સાધ્વીના નામ ઉપરથી એમણે 'તરંગવતી' નામ રાખ્યુ છે. આમ લેખકના અને કથાના મૂળ નામને મે શામાટે વિસારી મુક્યા છે? મારે એ વિસારી મુકવા પડયા છે, કારણ કે એ નામવાળી એમની મૂળ કૃતિ ખરી રીતે તો બહુ કાળથી નાશ પામી છે એમાના વસ્તુ ઉપરથી આશરે એક હજાર વર્ષ પછી 'તરંગલોલા' એવા નવા નામથી તેનું એક નવુ સંસ્કરણ થયુ હતુ એ હજી સચવાઈ રહ્યું છે. અને તેના જ ઉપરથી આ અનુવાદ થયો છે

મે આપેલા નામ પ્રમાણે તેના સમયનિર્ણયની જે લોકોએ આશાઓ રાખી હશે તે આશાઓ તો મારે ઢીલી કરી નાખવી પડે છે, પણ એટલુ તો હું નક્કી માનુ છું કે એ બધુ છતા આપણુ આ પુસ્તક દરેક સાહિત્યભક્તને અને દરેક ધર્મશોધકને બહુ ઉપયોગી થઇ પડશે માનસશાસ્ત્રીને પણ ઉપયોગી થઈ પડશે, અને એ આશ્ચર્ય સહિત જોઈ શકશે કે પુનર્જન્મનો સિદ્ધાન્ત કેવી પ્રબળતાથી ભાવનામય પ્રદેશ ઉપર અમલ કરીને ઠેઠ વસ્તુસ્થિતિમા આવી રહે છે અને શ્રદ્ધાના સામાન્ય મતો પેઠે એ મત પણ વ્યવસ્થિત રીતે પ્રવર્ત્તે છે વૈદ્ય સુદ્ધાંને પણ એમાથી ત્રિદોષ વિષે વાચવાનો આનંદ મળશે—એક ત્રિદોષ એવો પણ જણાશે કે જે કથા-નાયિકાને જ નહિ, પણ સુધરેલા સમસ્ત સંસારને અને એ કથાકાર સુદ્ધાને લાગેલો છે—વળી આપણી કથામા પુનર્જન્મની ભાવના અવિરોધભાવે પ્રકટ થાય છે, કારણ કે આપણે માત્ર કોઈ કોઇ વાર સાંભળેલી એવી પ્રકૃતિજીવનની સાચી કથાઓ પણ એમા આવે છે. બ્રેમના (Brehm) પ્રાણીજીવ વિષેના લેખો વાચીશુ તો આખા એશિયામા અને બીજે પણ પોતાના સ્નેહને માટે પ્રખ્યાત થયેલા ચક્રવાક જાતિના પખી માટે નીચે પ્રમાણે જાણી શકીશું (ત્રીજી આવૃત્તિ, ૧૮૯૦–૧૮૯૨, ભાગ ૬, પૃષ્ઠ ૬૨૪)

1.

"તુર્કસ્તાનમા અમારામાના એક જણે એક જોડામાની માદાને ગોળી મારીને તેની પાપ્રાન

પ્રકારનો ધર્મ વિકસાવ્યો. તેથી યુરોપમાં આપણા જુગો કરતાં ઇતિહાસના જુગ—જેવા કે પ્રાચીન, મધ્ય અને નૂતન જુગ ભારતમા પણ પાડી શકાય—પણ વહેલા શરૂ થયા.

આશરે ઈ. સ. પૂ. ૧૫૦૦ વર્ષથી ભારતમા પ્રાચીન જુગ શરૂ થાય છે. ત્યાર પછી હજારેક વર્ષથી મધ્યજુગ શરૂ થાય છે, એ જુગમાં પ્રકર્ષનો વિકાસ થયો અને ઉપભાષા બનેલી સંસ્કૃત ભાષામાં વિકસતા બ્રાહ્મણધર્મના પ્રકર્ષની રેખા પાસે એક નવુંજ પગલુ મુકાયું. ચાલતી આવેલી બળિપૂજાનો અને સાથે સાથે એ સંસ્કૃત ભાષાનો પણ બુદ્ધધર્મે અને એવા બીજા ધર્મોએ અનાદર કર્યો, અને વિવિધ પ્રકારની લોકભાષાઓનો—એટલે કે પ્રાકૃત ભાષાઓનો—ઉપયોગ કર્યો. મુસલમાનોના હુમલા થયા ત્યારથી છેવટે નૂતન જુગ બેઠો: ઉપર વર્ણવેલા એ પ્રકારના પ્રકર્ષોમાં એક પરદેશી—મુસલમાની પ્રકર્ષ પોતાનુ ફારસીઆરબી ભાષાધન લેઇ આવી મળ્યો.

આમ ધર્મના તથા ભાષાના ઇતિહાસને હિસાબે ભારતનો સમસ્ત મધ્ય જુગ, એક બીજાની સાથે વહેતા તથા ભેગા વહેતા વિરુદ્ધ પ્રકારના પ્રવાહોનો બનેલો છે. પ્રથમ તો નવા ધર્મોએ સામા બળને રોકી દીધું. આમ પ્રખ્યાત મહારાજ અશોકે આશરે ઈ. સ. પૂ. ૨૫૦મા બૌદ્ધ-ધર્મ ગ્રહણ કર્યો અને આખા ભારતમા એણે જે વિખ્યાત લેખો કોતરાવ્યા તે પ્રાકૃતમા કોતરાવ્યા. વળી બુદ્ધધર્મમા અને તેના સહચર જૈનધર્મમાં ધાર્મિક પ્રદેશ ઉપરાંત સાહિત્યના બીજા સર્વ સાધારણ પ્રદેશમાં પણ પ્રાકૃતનો છુટથી ઉપયોગ થવા લાગ્યો. પણ પાછળથી, આશરે ઇ. સ. ની ચોથી સદીમા સંસ્કૃતે પાછો ફરી પોતાનો સર્વોપરિ અધિકાર મેળવ્યો; અને, એ ધર્મોમા પણ એણે પગ પેસાડયો ને કંઇક અંશે તો એનો પુરો કબજો લીધો.

તેથી હવે થયું એમ કે પ્રાકૃત લેખકો જે દેશમા ને કુળમા ઉછર્યા હોય તેને અનુસરીને તથા તેમના ઉપર જે પ્રમાણમા સંસ્કૃત ભાષાનો પ્રભાવ પડ્યો હોય તે પ્રમાણમા સંસ્કૃત નહિ એવી શુદ્ધ લોકભાષાના—એટલે કે દેશમાં બોલાતી ભાષાના ભંડારમાથીજ વિવિધ સમૃદ્ધિ વાળા શબ્દોનો ઉપયોગ કરતા થયા. ઇ. સ. ની શરૂઆતની સદીઓમા જે ઝોક આ ભાષાધન-પ્રાન્તભાષાઓના શબ્દો—તરફ મોહથી વળ્યો, તે પછીની સદીઓમાં સંસ્કૃત ભાષા પાછી સર્વ સાધારણ થઈ ગઇ ત્યારે એનો તે પ્રમાણમા ત્યાગ થયો.

જે કાળમા, ગ્રંથો લખવામા પ્રાન્તની પ્રાકૃત ભાષાનો ઉપયોગ કરવાનુ વલણ હતુ અને સાહિત્યવ્યવહારમા એ ભાષાઓ બધાને સમજાતી હતી તે કાળમાં—ઈ. સ. ની શરૂઆતની સદીઓના એ કાળમા આપણી કથા રચાઈ હતી. પણ સંસ્કૃતના દબાણને લીધે પાછળથી પ્રાન્ત-ભાષાઓ વ્યવહારમાથી ખસતી ગઇ અને સમજવી કઠણ થતી ગઇ. અને પછી એવુ થયું કે જે લેખકો એ ભાષાઓ સમજતા હતા તેઓ એ ગ્રંથોના નવાં સંસ્કરણ કરવા લાગ્યા. એવા પ્રાચીન સમયના ગ્રંથો પાછળથી એવી રીતે નિરૂપયોગી થઈ પડ્યા ને તેથી નાશ પામવાના ભયમાં આવી પડ્યા. એવા ગ્રંથોને આપણી આ કથાની પેઠે સંસ્કૃત શબ્દોથી અર્વાચીન પ્રાકૃતમાં ઉતારી લેઇને, એટલુંજ નહિ પણ સીધો સંસ્કૃત અનુવાદ કરીને બચાવી લીધા છે. આ કથાની પેઠે ઇ. સ. ની શરૂઆતની સદીઓમા લખાયેલી અને પાછળથી નાશ પામેલી બૃહત્કથાનાં એ જાતનાં ત્રણ નવા સંસ્કરણ હાલ મળી આવે છે.

હાલની ગાથાસપ્તશતીને નામે ઓળખાતા શૃંગારિક ગ્રંથની કાળગણનામાં, પ્રાન્તિક ભાષાઓમા પ્રધાન એવી એની પ્રાકૃતને માટે ગુંચવણ ઉભી થઇ હતી. પણ એ ગાથાસમૂહમાં

સાતમી અને આઠમી સદીના ટીકાકારોની ટીકાઓથી, ત્રીસ વર્ષ પહેલાથી જ મારા ધ્યાનમાં આવેલી છે. મારા મિત્રે એ પુસ્તકની તપાસ કરવા, એ હસ્તપ્રતિ ખુશીથી મને સોંપી એમને એ પ્રતિ અમદાવાદના રા. કેશવલાલ પ્રેમચંદ મોદીએ આપી હતી. આ પ્રત કેટલીક સદીઓ ઉપર લખાએલી કોઇ પ્રતિના ઉતારા રૂપે છે તેના પંદર પાના પ્રથમ રા. કેશવલાલે (ગાથા ૧–૪૫૭) તપાસી જોવાને પ્રો. યાકોબીને મોકલ્યા હતા પાછળથી તેમણે પુરી પ્રત મળ્યે મને મોકલી દીધી હતી

હસ્તપ્રતના ખુટતા ભાગ ઉપરથી (અને હુ માનુ છુ ત્યાંસુધી તેના સ્વરૂપ ઉપરથી) યથામતિ મારૂ અનુમાન એવુ છે કે કથા પદ્યમા છે અને ગાથાની સંખ્યા કરવામા આવી છે. એવો ખુટતો મોટો ભાગ એક જ જગાએ છે અને તે ગાથા ૬૭૧ ઉ થી ૬૭૭ ઉ સુધીનો તેર પંક્તિઓ વાળો છે. ગાથાઓના અંકની ગણતરી બધેય (૧૦, ૨૦, ૩૦, એમ) દશકાથી કરેલી છે, અને ૮૦ના અંકને બે વાર મુકયો છે, તેથી ૯૦થી બધા અંકમા દશદશની ભૂલ છેકસુધી ચાલી આવી છે. એક જગ્યાએ ખુટતો ભાગ તો છે જ નહિ છતાં ગમે તો મૂળ લેખના કે ગમે તો સંસ્કારકના દૃષ્ટિદોષથી કંઈક ભૂલ થયેલી લાગે છે. પરણ્યા પછી નાયકનાયિકાએ અનેક માસ પછી સંસારત્યાગ કર્યાનુ એક જગાએ જણાવ્યુ છે બીજી જગાએ બાર વર્ષ પછી સંસાર ત્યાગ કર્યાનુ જણાવ્યુ છે. વાર્તાને આખી મળગ ગોઠવ્યા પછી આ વિરોધભાવ ટાળી શકાય અનુવાદમા આવી પૂર્તિ (બ્રેકેટ કોંસમા) ૧૦મા અધ્યાયને આરંભે મુકી છે. ૧૩૦૯મી ગાથા પૂર્વે હસ્તપ્રતિમા અમુક ભાગ ખુટતો હોય તેમ લાગે છે, પણ (ગાથાના અંક જોતા) કંઇ ભાગ ખુટતો જણાતો નથી; એટલે એ લેખક કે સંસ્કારકનો માત્ર દૃષ્ટિદોષ જ છે.

૧૬૪૪ ગાથામા ભારતભાષામા આ કથા પુરી થાય છે મેં એમા ૧૨ અધ્યાય પાડ્યા છે અને માર્જિનમા ગાથાના અંક મુક્યા છે તેથી અંકોના ભાગને એક બીજા સાથે સરખાવી જોતા કયા અને કેવી રીતે મે અનુવાદને સંક્ષિપ્ત કર્યો છે એ સમજી શકાશે. બાર અધ્યાયના નામ, તેમજ કથાભાગમા હકીકત સ્પષ્ટ કરવા કે કથા ગળગ કરવા કેટલાક શબ્દો મે કૌંસમા મુક્યા છે.

Freiburg i/B. im Hause Sutterlin
Mitte Mai 1921.

Ernst Leumann.

તરંગવતી[1]

(૧ મંગલ અને પૂર્વકથન)

૧-૪ શાશ્વત, અચળ અને અનુપમ સુખને પ્રાપ્ત કરનાર તથા જન્મમરણના કલ્લોલોવાળા દુઃખસમુદ્રથી પાર થનાર સર્વ સિદ્ધાત્માઓને વંદન હો. ગુણ, ગંભીર, વિનય અને વિજ્ઞાન વડે નયધર્મસમુદ્રની શોભા વધારનાર સત્પુરુષોને નમસ્કાર હો. જેના પ્રભાવથી મૃત છતા પણ જે કવિવરો સદા જીવિત જણાય છે તે સંગીત અને સાહિત્યની અધિષ્ઠાત્રી દેવી સરસ્વતી સુપ્રસન્ન થાઓ. કાવ્યરૂપી સુવર્ણના ગુણદોષોની પરીક્ષા માટે જે કસોટી સમાન ગણાય છે તે વિદ્વત્સમાજનું કલ્યાણ થાઓ.

૫-૬ પાદલિપ્ત આચાર્યે તરંગવતી નામે એક કથા લોકભાષામાં રચી છે, તે ઘણી વિસ્તૃત અને વિચિત્ર છે. એમાં કેટલાયે કુલકો ભરેલા છે, કેટલાયે યુગલોથી ગુંથેલા છે, અને કેટલાયે ષટ્કોના ષટ્કો રચેલા છે, એ કારણથી એ કથાને નથી તો કોઈ સાંભળતુ, નથી તો કોઈ પૂછતુ અને નથી તો કોઈ કહેતુ. કેવળ એ વિદ્વાનોના જ ઉપયોગની વસ્તુ થઈ પડી છે, ઈતર જનોને એનો કાંઈ ઉપયોગ થતો નથી, તેથી એવા જનોના હિતાર્થે, તેમજ એ કથા સર્વથા નષ્ટ ન થાય એ માટે પણ, એમાની દેશીગાથાઓ અને લોક પદોને છોડી દઈને અતિસંક્ષેપમાં મેં આ કથા ગુંથી છે. એમ કરવા માટે મારા આ દોષ મૂળ કથાકાર આચાર્યને ક્ષન્તવ્ય થાઓ !

૭-૧૩ ભૂમિતલ ઉપર ઉતરી આવેલ સ્વર્ગલોક સમાન કોશલા (અયોધ્યા) નામે વિશાળ નગરી છે. ત્યાં રહેતી પ્રજા દ્વારા બ્રાહ્મણ, શ્રમણ, અતિથિ અને દેવતાઓની કરાએલી, પૂજાએ કરીને સંતુષ્ટ થએલા દેવો એ લોકો ઉપર સંતતિ અને સંપત્તિના આશીર્વાદો વર્ષાવે છે, એવી એ પુણ્યભૂમિમાં થએલા આચાર્ય પાદલિપ્તના બુદ્ધિવૈભવના નમુના રૂપ આ કથાને અનન્યમનવાળા થઇ તમે સાંભળો. પ્રાકૃત જનોના સર્વ સાધારણ કલ્યાણને અર્થે કરાએલી આ પ્રાકૃતકથા જો ધર્મબુદ્ધિપૂર્વક સાંભળવામાં આવે તો પછી જન્મના ભયથી પણ ડરવાનું કાંઈ પણ કારણ રહે નહિ.

(૨. ભૂમિકાઃ સાધ્વીનું ભિક્ષા લેવા માટે જવું.)

૧૪–૨૧. સમૃદ્ધિશાળી લોકોથી ભરેલા એવા અનેક ગામ અને નગરોથી શોભતો મગધ નામે પ્રસિદ્ધ દેશ છે. એ દેશમાં, પૃથ્વીમાં પ્રધાન, અને રમણીય ઉદ્યાન તેમ જ વનોથી વિભૂષિત, રાજગૃહ નામે સ્વર્ગના જેવું સુન્દર નગર છે. એ નગરમાં પોતાના પરાક્રમો વડે સઘળા શત્રુઓનો જેણે પરાજય કર્યો છે અને વિપુલ સૈન્ય અને સંપત્તિનો જે સ્વામી છે એવો કોણિક નામે રાજા રાજ્ય કરે છે. એ રાજા પોતાના કુળનો પ્રકાશક, શૂરો, અને સર્વ દોષ રહિત છે. રાગદ્વેષ સર્વથા વિલીન થઇ ગયા છે જેમના એવા પરમ શાન્ત વીતરાગ તીર્થંકર મહાવીરના જન્મમરણથી મુક્તિ અપાવનાર શાસન (ધર્મ) નો એ અનુરાગી છે. એ રાજાના શરીર અને જીવિતના રક્ષક જેવો, તથા સર્વ પ્રજાને પ્રિય, કુળવાન અને સદાચારી એવો ધનપાલ નામે નગરશેઠ ત્યાં વસે છે. એ શેઠને અનુરૂપ અને સૌભાગ્યવતી એવી સોમા નામે પતિવ્રતા પત્ની છે.

૨૨–૨૩. એ શેઠના મકાનની સમીપમાં એક ઉપાશ્રય આવેલો છે, એમાં પોતાની ઘણી શિષ્યાઓ સાથે સુવ્રતા નામે એક સાધ્વી આવીને રહેલા છે. એ સાધ્વી કૌમાર-બ્રહ્મચારિણી છે. અનેક પ્રકારનાં તપો તપીને એમણે પોતાની કાયાને ખૂબ કૃશ કરી નાખેલી છે, જૈન ધર્મના તત્ત્વજ્ઞાનને એ પૂર્ણ જાણનારી છે અને એકાદશ અંગો એમને સારી રીતે અવગત છે. પોતાના આત્માની મુક્તિના માર્ગમાં એ હમેશા ઉદ્યુક્ત રહે છે.

૨૪–૨૮. એ સાધ્વીની અનેક શિષ્યાઓમાંથી એક બહુ વિનીત શિષ્યાને એક સવારે છટ્ઠ (બે ઉપવાસ) વ્રતના પારણા કરવાં હતાં, અને તે માટે બીજી એક નવદીક્ષિત ભિક્ષુણીને પોતાની સાથે લઇને તે ભિક્ષા લેવા માટે પોતાની વસતિ (ઉપાશ્રય) બહાર નિકળે છે. નાના મોટા બધા જીવો ઉપર દયાપ્રેમ—ભાવ ધારણ કરતી અને નીચી નજરે તથા ધીમે પગલે ચાલતી એ સાધ્વી ભિક્ષા ગ્રહણ કરવા યોગ્ય એક ઉંચી હવેલીના પ્રશસ્ત આંગણામા આવીને ઉભી રહે છે.

૨૯–૩૦. અતિથિઓના આગમનની રાહ જોતી ઘરની કેટલીક દાસીઓ આંગણામા ઉભી છે તે એ સાધ્વીના સૌન્દર્યને જોઇને ચકિત થઇ જાય છે.

૩૧–૩૫. માંહોમાંહે તે વાતો કરવા લાગે છે કે જુઓ આ લક્ષ્મી સમાન સાધ્વી! એના વાળ કેવા સુન્દર અને આંકડીયા છે! એનું મુખ ચંદ્રના જેવુ મોહક છે. વિના શણગારે હો પણ ચીકણે વસ્ત્રથી એના કાન ઢંકાયલા છે. અને પાણીમાથી કમળ બહાર નિકળે છે તેના જેવો એનો સુંદર હાથ ભિક્ષા માગતી વખતે વસ્ત્રમાંથી બહાર નિકળે છે.

૩૮-૩૭ તેનો શબ્દ સાભળીને ઘરની શેઠાણી બહાર નીકળે છે તે સુ દર ને પ્રભાવશાળી છે, તેની વાણી બહુ ધીમી છે, શરીર ઉપર તેણે બહુ જ આછા પણ બહુ કિમતી ઘરેણા ઘાલેલા છે અને ધોળુ-ઉજળુ વસ્ત્ર પહેરેલુ છે

૩૯-૪૧ પોતાના આગણાને પાવન કરતી આ પવિત્ર સાધ્વીને અને તેની સહચરીને જોઇને પ્રથમ તો સાગરકન્યા લક્ષ્મી સમાન એ સાધ્વીને અને પછી તેની સહચરીને તે આદરભાવે નમસ્કાર કરે છે, ત્યાર પછી કમળકુન ઉપર ભમરા બેઠા હોય એવી કાળી કીકીઓવાળા ચદ્રસમાન એ સુદર મુખ સામે એકી દ્રષ્ટિએ તાકીને જોઇ રહે છે

૪૨-૫૪ લક્ષ્મી જેવી સુદર એ સાધ્વી સબધે તે વિચારે છે "નથી તો સ્વપ્નમા આવી અનુપમ સુદર સ્ત્રીનુ ચિત્ર મે જાયું, કે નથી વર્ણનમા પણ આવુ વાચ્યુ આવુ સુદર તે શ્રીકમળ કોણ હશે? સુદર સ્ત્રીઓને ઘડવાના જે દ્રવ્યો તેમાથી સર્વોત્તમ દ્રવ્યો લે ને જ વિધાતાએ આને ઘડી હશે? જ્યારે આ અત્યારના મુડિત મસ્તકવાળા ભિક્ષુણીવેશમા પણ આટલી બધી સુદર દેખાય છે, ત્યારે રૂપશ્રીસપન્ન ગૃહિણીના વેશમા તો એ કોણ જાણે કેટલી બધી અનુપમ લાગતી હશે! એના એક અગ ઉપર શણગાર નથી અને વળી તે મો ઉપર ધૂળ લાગી છે, તોપણ મારી આખ એના ઉપરથી ખસતી નથી, ઉલટી અગે અગે ફર્યાં કરે છે સ્વર્ગની કુમારિકાઓ પણ આની અનુપમ સુન્દરતાની વાચ્છના કરે તેમ છે શુ આ તે કોઈ અપ્સરા કે દેવકન્યા હશે? પણ એમ કેમ હોય! શિલ્પીએ ઘડી કાઢેલી મૂર્તિની આખોની પેઠે દેવલોકની દેવાગના ઓની આખો તો સાભળવા પ્રમાણે મીંચાતી નથી, તેમ જ તેમના હાર અણકરમાયા રહે છે, અને તેમને ધૂળ લાગતી નથી, પણ આ આર્યાને પગે તો ધૂળ લાગેલી છે અને એની આખો હાલે છે તેથી એ નક્કી દેવી તો નથી જ, છે તો અવશ્ય માનવી લોકની જ કોઇ નારી પરતુ મારે આ રીતે શકામા શા માટે રહેવુ? હુ એમને ધીરે રહીને પૂછી લઉં માણસને જ્યારે સાક્ષાત્ હાથી જ નજરે પડે તો પછી તેના પગલા ખોળવાની શી આવશ્યકતા?"

૫૫-૫૬ એમ વિચાર કરી શેઠાણી સાધ્વીને આદરપૂર્વક પ્રથમ ભિક્ષા આપે છે, અને પછી ઉત્સુકતાએ અને આશ્ચર્યે પ્રશ્ન કરે છે "પૂજ્ય સાધ્વીજી, જો તમને કોઈ નિયમનો બાધ ન થતો હોય તો ક્ષણભર વિસામો લ્યો અને મને કોઈ ધર્મકથા કહો"

૫૭-૬૧ ત્યારે સાધ્વી કહે છે કે "સર્વ જગતના જીવોને હિત કરનાર એવા ધર્મનો ઉપદેશ કરવામા કોઇને કશાનો બાધ હોઇ શકે નહિ અહિંસાલક્ષણધર્મ તો કહેનાર અને સાભળનાર બન્નેને પવિત્ર કરે છે જો કોઇ થોડીવાર પણ ક્રિયાથી મુક્ત

હોય અને ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળ્યા પછી તે અહિંસા ધર્મનું વ્રત લે, તો ઉપદેશકનો ઉપદેશ આપ્યો સફળ છે; કારણકે પોતાના ઉપદેશથી તે માત્ર બીજાને જ નહિ, પણ પોતાને પણ પુનર્જન્મના અપાર સમુદ્રથી પાર ઉતારી જાય છે; આથી ધર્મનો ઉપદેશ દેવો એ તો સદા શ્રેષ્ઠ છે. તેથી હું જે કાંઇ જાણું છું તે કહું છું, તમે ધ્યાન દેઇને સાંભળો."

૬૨–૬૫. તે વખતે દાસીઓ આનંદે તાળીઓ લે છે અને બોલે છે કે "હવે આપણે એકીટસે આ સાધ્વીની અજબ સુંદરતા નિહાળી શકીશું!" પછી એ સાધ્વી અને તેની સહચરી તેમને માંડી આપેલ આસન ઉપર એકાન્ત સ્થાન પર બેસે છે અને આનંદ જેમનો માતો નથી એવી દાસીઓ તથા શેઠાણી પણ તેમને સભ્યતાપૂર્વક નમસ્કાર કરીને સામે ફરસબંધી ઉપર બેસી જાય છે.

૬૬–૬૮. પછી એ સાધ્વી સ્ફુટ અને વિશદ વાકયોએ કરીને, કાન તથા મનને મધુર લાગે તેવે સ્વરે, દુકાણુમાં પણ સહજ સમજાય તેવી શૈલીમાં, જગત્‌ના સર્વ જીવોને સુખ આપનાર અને જન્મ, જરા, રોગ, મરણ આદિના દુ:ખોનો નાશ કરનાર એવા જિનમહાત્માએ કહેલા ધર્મનો સાર સંભળાવે છે, સમ્યગ્‌જ્ઞાનદર્શન, અહિંસા, સત્ય, અસ્તેય, બ્રહ્મચર્ય અને અપરિગ્રહ સ્વરૂપ પાંચ મહાવ્રત; તપ અને સંયમ, વિનય અને ક્ષમા આદિ ગુણવિશિષ્ટ ધર્મના તત્ત્વોનુ રહસ્ય સમજાવે છે.

૬૯–૭૭. જ્યારે સાધ્વી ઉપદેશ આપી રહે છે, ત્યારે શેઠાણી એમને વિનયભાવે કહે છે કે "ધર્મનો ઉપદેશ તો મેં સારી પેઠે સાંભળ્યો; પણ હે પવિત્ર આર્યા! મને બીજી એક વાત કહો, તમારા સુંદર મુખના દર્શનથી મારી આંખો તો તૃપ્ત થઇ છે, પણ તમારા જન્મની કથા સાંભળવાને મારા કાન આતુર બની ગયા છે. વિષ્ણુને જેમ પદ્મ વહાલું છે, તેમ તમે કિયા પિતાને વહાલા હતા? અને આખા જગત્‌ને નમસ્કાર કરવા જેવા તમારાં માતા કોણ હતા? તમારા પિતાના ઘરમાં અને પતિના ઘરમાં કેવુ સુખ હતુ? અને કિયે દુ:ખે તમારે સાધ્વી થવું પડ્યું? એ બધું જાણવાની મને બહુ આકાંક્ષા થઇ રહી છે. જગત્‌માં એમ કહેવાય છે કે સુંદર નારીનું અને નદીનુ, તેમ જ સાધુનું અને સાધ્વીનું મૂળ ન પૂછવું (કારણ કે વખતે એથી એમની તુચ્છતા તરી આવે છે અને અસંતોષ થાય છે અને તેથી તેમના પ્રત્યેનુ માન ઘટે છે). વળી હું એ પણ જાણું છું કે ધર્માત્માઓને નકામી વાતો પૂછી સારે કઇ દેવું નહિ જોઇએ. પણ તમારી સુંદરતાથી આશ્ચર્ય પામીને જ એ પ્રશ્ન પૂછવાનું મને મન થાય છે."

૭૮–૮૦. સાધ્વીએ ઉત્તર આપ્યો કે: "એનો જવાબ આપવો જરા કઠણ છે, કારણ કે આવા નકામા (એટલે કે આત્માની પવિત્રતાને લાભ કરતાં હાનિ વધારે કરનારા)

વિષયો સબંધે અમે વિચાર કરી શકીએ નહિ પૂર્વે ગૃહજીવનમાં જે આનંદ અમે ભોગવતા તે યાદ પણ કરી શકીએ નહિ તોપણ જગતના દુઃખથી જે ઘૃણા પેદા થઈ એ તરફ જ નજર રાખીને, કર્મનું ફળ મને કેમ પ્રાપ્ત થયું એ વિષેનું જ હું સ્વાનુભવનું થોડુંક વર્ણન કરીશ "

૮૧-૮૫ આ શબ્દોથી રાજી થઈને શેઠાણી પોતાની દાસીઓને બધું ધ્યાનથી સાંભળવાની સૂચના કરે છે અને સાધ્વી હવે પોતાના પૂર્વજન્મની કથા કહી સંભળાવે છે પોતના આશ્ચર્યજનક સદ્ભાગ્ય વિષે અભિમાન કર્યા વિના અને માત્ર ધર્મ ઉપર જ દૃષ્ટિ રાખીને સુંદર સરસ્વતી દેવી જેવી એ સાધ્વી આમ આરંભ કરે છે હું જે જાણું છું અથવા જે મને યાદ છે તે પ્રમાણે મારા જીવનની કથા હું ટુંકામાં કહું છું

(૩ સાધ્વીની પૂર્વકથાનો પ્રારંભ)

૮૬-૯૪ મધ્ય દેશમાં વત્સ નામે એક મનોહર પ્રદેશ છે અમૂલ્ય પદાર્થોથી એ પ્રદેશ પરિપૂર્ણ ભરેલો છે ત્યાં અનેક ધર્માત્માઓ વસે છે, અને જીવનની ત્રણ કામનાઓ ધર્મ, અર્થ ને કામનું ઉચિત રીતે પરિપાલન કરે છે તે પ્રદેશની રાજધાની કૌશામ્બી ખરેખર સ્વર્ગનગરી છે, મધ્યદેશનું જાણે મોતી એ છે, બીજી નગરીઓને નમુનારૂપ છે, અને જમુનાને કિનારે જાણે રત્ન છે ત્યાં ઉદયન રાજા રાજ્ય કરે છે, તે યુદ્ધમાં અને પ્રતાપમાં પ્રખ્યાત થયેલ છે, સાધુઓનો અને સાધ્વીઓનો ભક્ત છે, મિત્રોને સુખકર છે, અને શત્રુઓને ભયંકર છે અશ્વે, હાથીએ, રથે અને પાયદળે બળવાન, દેહ ધરીને વશમાં એ ઉતરી આવેલો છે, પૂર્ણચન્દ્ર જેવી એના મુખની શોભા છે, હંસના સ્વર જેવો એનો સ્વર છે, અને સિંહની ગતિ જેવી એની ગતિ છે કુળે, રૂપે ને ગુણે પ્રખ્યાત એવી એની વાસવદત્તા રાણી છે

૯૫-૧૦૧ રાજાને સમાન વયનો એક મિત્ર એ નગરનો નગરશેઠ છે, એનું નામ ઋષભસેન છે નગરના મહાજનનો એ મુખી છે, પ્રજામાં એનો બોલ વજન ભર ગણાય છે, અર્થશાસ્ત્રના સિદ્ધાન્તોને તે સારી રીતે જાણે છે, લોકોમાં અને વ્યાપારીઓમાં યાચ ચુકવી જાણે છે, બધાની સાથે મિત્રભાવે રહે છે, લોકનું ભલું કરવાની વૃત્તિવાળો છે, સત્યનિષ્ઠ અને પ્રમાણિક છે, નિષ્કલંક ગૃહસ્થજીવન જીવે છે, અને જૈન ધર્મના ઉપદેશનું નિરંતર શ્રવણ કરે છે

૧૦૨-૧૦૬ તે શેઠને આઠ પુત્રો થયા પછી છેક એમણે યમુનાની પ્રાર્થના કરી, અને તેના ફળ રૂપે હું એમને ઘેર અવતરી અવતર્યા પછી મને સારી તજવીજથી પારણામાં સુવાડી, અને મારી સંભાળને માટે હું શિઆર દાસીઓ રાખી થોડા સમય પછી નાહી

છેદનની ક્રિયા કરી ને તે સમયે મારાં માબાપે પોતાનાં સગાંસ્નેહીઓને જમાડયાં. પછી જન્મ આદિ જે જે સસ્કાર કરવા ઘટે તે સૌ કર્યા, અને પિતાની ઈચ્છા પ્રમાણે સંબંધીજનોએ મારૂં નામ, તરગવતી યમુનાના તરગોની કૃપાએ હું અવતરી માટે, તરગવતી પાડયું.

૧૦૭–૧૧૫. શય્યામાં જ્યારે હું બેચેન થતી, ત્યારે હાથપગ પછાડતી મારી ધાવ અને દાસી જુદા જુદા ખડોમાં મને વારંવાર ફેરવતી પછી તો મારે માટે સોનાનાં રમકડા આણ્યાં. મારે જે જે જોઈએ એ સૌ સોનાનું આવતું. મારાં સગાં સૌ મને પોતપોતાના ખોળામાં લેતા અને બહુ લાડ લડાવતા, હું ખૂબ તેમના આનંદનું કારણ થઇ પડી. ધીરે ધીરે લોકનાં આખ, મો અને હાથ હાલતા તે ઉપર હું ધ્યાન આપતાં શીખી, અને મારી મેળે કંઇ કઈ ઉચ્ચાર કરતા પણ શીખી પછી એક દહાડો મેં પગ માડવા માડયા ને જ્યારે અશુદ્ધ ઉચ્ચારે તા–તા બોલી, ત્યારે તો મારા કુટુબીઓના હર્ષનો પાર રહ્યો નહિ. ત્યાર પછી થોડે કાળે ચુડાકર્મનો સસ્કાર કરવામા આવ્યો પછી તો હું આમતેમ છુટથી ફરવા લાગી, સખીઓ સાથે સોનાની પુતળીએ રમત રમવા લાગી, અને માટીના ઘરો બાધી તેની રમતમાં લીન થઈ જવા લાગી

૧૧૬–૧૨૧ જન્મ પછી બારમે વર્ષે મારી સમજશક્તિ એટલી બધી ખીલી ઉઠી કે મારે માટે ઉત્તમ પ્રકારના શિક્ષકો રાખવામા આવ્યા, અને રીતસર ધીરેધીરે હું ગણિત, વાચન, લેખન, ગાન, વીણાવાદન, નાચ, અને પુષ્પઉછેરની કળાઓ શીખી, વળી વનસ્પતિશાસ્ત્ર અને રસાયણશાસ્ત્ર પણ મને શીખવવામાં આવ્યા. આ ઉપરાત મારા પિતા જૈન ધર્મના અનુરાગી હતા તેથી તેમની ઇચ્છા એવી થઈ કે મારે ધર્મશાસ્ત્રમા પણ પ્રવીણ થવુ જોઇએ, એટલા માટે નગરમા ઉત્તમ મનાતા ધર્મપડિતો મારે માટે રાખ્યા અને તેમની પાસેથી પાચ અણુવ્રત, ત્રણ ગુણવ્રત અને ચાર શિક્ષાવ્રત વગેરે શ્રાવકધર્મની ભાવનાઓનો મેં સારો અભ્યાસ કર્યો.

૧૨૨–૧૨૪ પછી તો હું ઉમ્મરમા આવી, મારા શરીરના અંગો ખીલી ઉઠયાં અને સ્નેહજીવન શું તે સમજવા લાગી તે વખતે દેશના ઘણા ધનાઢ્ય કુટુબોમાથી મારે માટે માગા આવવા લાગ્યા. પણ તેમાંથી કોઈ પણ કુળે, રૂપે ને ગુણે મારે લાયક ન હોવાથી એ બધાં માગાંને મારા પિતાએ રીતસર પાછા વાળ્યા.

૧૨૫–૧૩૧ હું મારા પ્રિય મડળમાં મોટી થવા લાગી. મારી સખી સારસિકા જે કઈ નવી વાત સાભળતી, તે આવીને મને કહેતી. આનંદ કરવાને જે કોઇ સખીઓ આવતી તેમને હુ મારી હવેલીને સાતમે માળે અગાસી ઉપર લેઈ જતી અને ત્યા અમે

ખુશી હતામા આનદ કરતા, તેમ જ દૂર-દૂર સુધીના દેખાવ જોતા મારા માબાપ અને ભાઈઓ ફુલ, કપડા, ઘરેણા, રમકડા અને મીઠાઈની મને ભેટ આપતા મારા વિનયથી મારા માબાપ, મારા દાનથી ભિક્ષુકો, મારી પવિત્રતાથી મારા ભાઈઓ અને મારા સ્નેહથી બીજા બધા આનદ પામતા લક્ષ્મી જેમ મદર પર્વત ઉપર આનદ પામે તેમ હુ પિતાના ઘરમા મારી ભાભીઓ અને સખીઓ સાથે આનદમા રહેતી, પૌષધના દિવસોમા હુ ઘણી વખતે સામાયિક વ્રત આચરતી અને જૈનધર્મનુ તત્ત્વજ્ઞાન મેળવવા માટે ગણધારિણી સાધ્વીજીઓની ઉપાસના કરતી આ રીતે માબાપ, ભાઈઓ અને સગા સબધી સાથે સ્નેહમા રહીને હુ મારા દિવસો સુખમા નિર્ગમતી હતી

૧૩૨-૧૩૫ એક વાર મારા પિતા, ભગવાનની સેવા કર્યા પછી, સ્નાન કરીને મારા સ્વચ્છ કપડા પહેરીને કુવેથી શણગારેલા ખડમા બેઠા હતા અને મારી સાથે મારી માતા સાથે વાતો કરતા હતા, જાણે ગોવિંદની સાથે લક્ષ્મીજી બેઠા હોય એમ એ શોભતા હતા હુ પણ સ્નાન કર્યા પછી જિનેશ્વર દેવની પૂજાપ્રાર્થના કરીને માબાપને પ્રણામ કરવા ત્યા ગઈ મે નીચી વળીને તેમના ચરણોમા માથુ મુક્યુ, ત્યારે તેમણે 'તારુ કલ્યાણ થાઓ' કહી સ્નેહથી આશીર્વાદ આપ્યા અને પોતાની પાસે બેસવા કહ્યુ

૧૩૬-૧૩૮ પછીવારમા જાણે ચદ્રમામાથી શણગારાઈને શરદ ઋતુની કાળી રાત્રી આવી હોય એમ, બહાર કામ કરવાને લીધે કાળી જેવી કાળી થઈ ગયેલી અમારી માળણ ફુલોના વસ્ત્ર પહેરી ફુલઘરમાથી નીકળીને અમારી બેઠકમા આવી પહોચી, અને સુવાસ પ્રસરાવી દીધો તે હાથમા ફુલની ભરેલી છાબ લઈ આવી હતી અભ્યનાથી મારા પિતા પાસે જઈ વિનયશીલ વિદ્યાર્થીની પેઠે નીચી નમી અને મધમાખીઓના ગુણગણાટ જેવા મધુર સ્વરે બોલી

૧૩૯-૧૪૦ 'હસ અહીંથી જ તેમની ઉનાળાની વાસભૂમિ, હિમાલયના ઉત્તર પ્રદેશમા આવેલા માનસસર, ઉપરથી પાછા આવ્યા છે અને અહીંની તેમની વાસભૂમિમા આનદ કરવા લાગ્યા છે તેઓ કર્ણમધુર સુદર બોલ બોલે છે અને તે વડે આપણને સમાચાર આપે છે કે શરદ ઋતુ આવી છે અને સફેદ પાંખવાળા હસની પેઠે શરદ ઋતુ પણ યમુનાના કિનારાના ઝાડા વને કરીને પોતાના આવ્યાના સમાચાર આપે છે એણે સુવાસિત વનોને આસમાની રગના, અસનવનોને પીળા રગના અને ટીકા સપ્તપર્ણના* વનોને સફેદ વર્ણના વસ્ત્રો પહેરાવી દીધા છે હે શેઠ, તમારા ઉપર એની કૃપા થાઓ, અને સદ્ભાગ્ય તમારા ઉપર હસો'

---

* Alstonia Scholaris આ ઝાડ શાતિનિકેતનમા જોયા છે, અને તે ત્યા 'છાતીમ' એવે અપભ્રશ નામે ઓળખાય છે —અનુવાદ

૧૪૩–૧૪૬. એમ કહીને એણે ફુલની છાબડી ઉઘાડી અને સપ્તપર્ણનાં ફુલથી ભરેલી છાબ મારા પિતાના હાથમાં મુકી. એ ફુલનો સુગંધ, હાથીના મદના ગંધ જેવો, તીવ્ર હતો અને તેથી ચારે દિશામા તેનો સુગંધ પસરી રહ્યો. પ્રભુને અર્પણ કરવાના સંકલ્પે તે છાબને મારા પિતાએ પોતાને કપાળે અડાડી, અને પછી દેવને ચઢાવવાને માટે એમણે તેમાથી થોડાક ફુલ જુદાં કાઢ્યાં, થોડાંક મને આપ્યાં, થોડાંક મારી માને આપ્યા ને બાકીનાં મારા ભાઈઓને અને ભાભીઓને પહોંચાડ્યાં.

૧૪૭–૧૫૬. એ બધાં ફુલ હાથીદાંતના જેવા સફેદ હતા; પણ મારા પિતાની નજર અમુક એક ફુલ ઉપર પડી. એ પુલ ભવ્ય સ્રીના સ્તન જેવડું મોટુ હતું અને રંગે સ્હેજ પીળુ હતુ. થોડીક વાર સુધી તો એ પુલની સામે એ ચકિત થઈને જોઇ રહ્યા. પછી જ્યારે એ વિચારમાંથી જાગ્યા, ત્યારે હસીને મને એ પુલ આપ્યુ ને બોલ્યા.

'આનો રંગ તો જો! ફુલ ઉછેરવામાં અને સુગંધ પારખવામા તું નિપુણ બની છે, તેથી એ વાત તો તું સારી રીતે સમજે. આ બધાં સફેદ સપ્તપર્ણના ફુલોમાં આ એક પીળું કેમ? વખતે કોઈ કુશળ કારીગરે આપણને આશ્ચર્ય પમાડવા અથવા તો ફુલ ઉછેરવાની કળામાં નિપુણતા દેખાડવા આમ કર્યું હશે? કેમકે દાહક અને બીજા દ્રવ્યોથી (તેમને ફુલના કયારાની માટીમા મેળવવાથી) ફુલના અને ફળના ધાર્યા રંગ લાવી શકાય છે. કારણ કે એવા પદાર્થોમા છોડને ખીલવી તેમાં ફેરફાર કરવાનું વલગુ હોય છે, જે આપણે ચોમાસામાં નજરે જોઈએ છીએ છતા યે જુદાજુદા રંગનાં ફુલ અને ફળ ઝાડથીજ પરખાઈ આવે છે'

૧૫૭–૧૫૯ પિતાનાં વચન સાભળીને મેં એ ફુલને બરાબર તપાસી જોયું અને પછી એ બાબતમાં ચોકકસ નિર્ણય ઉપર આવતા હું વિનયભાવે બોલી

૧૬૦–૧૬૨. 'જમીનની જાત ઉપર, વાવેતરની ઋતુ ઉપર, બીજ કે દરૂ ઉપર, તથા ખાતર અને વરસાદ ઉપર ઝાડની જાતનો આધાર રહે છે. અને આ બધી વસ્તુસ્થિતિ ઉપર બારીક નજર રાખીને કુશળ કારીગર ફુલને બધી જાતના રંગ લાવી શકે છે. પણ આ ફુલના સંબંધમા એવું કંઈ થયું જણાતુ નથી, કારણ કે એના સુગંધ ઉપરથી હું પારખી શકું છું કે પીળો રંગ એ ફુલનો પોતાનો નથી, પણ કમળના પુલના રજકણ એ ફુલને લાગેલા છે તેનો છે.'

૧૬૩. મારા પિતાએ ઉત્તર આપ્યો· 'પણ બાગ વચ્ચેના સપ્તપર્ણના ઝાડ, ઉપર આપણું આ જે ફુલ ફુટયું છે તેને કમળના ફુલના રજકણ લાગે કેવી રીતે?'

૧૬૪–૧૬૯. મેં કહ્યુ 'આ ફુલમાંથી જે વાસ આવે છે, તેમા કમળનો વાસ વધારે પડતો છે અને તે ઉપરથી આપણે એ અનુમાન ઉપર આવવું જ જોઇશે કે

આપણુ સમવર્ણનુ ફુલ કમળફુલને રજકણે પીળુ રગાયુ છે સમપર્ણના એ ઝાડ પાસે તળાવ હોવુ જોઇએ ને આ શરદઋતુમા એમાના કમળફુલ ખુબ ખીલ્યા હોવા જોઈએ, અને ત્યા એ પીળે રજકણે રગાયેલા કમળફુલ ઉપર તેમાનુ મધ ચુસવા હજારો મધમાખીઓ બેસતી હશે અને ત્યાથી આગળ ઉડતા એ મધમાખીઓ સમપર્ણના ધોળા ફુલ ઉપર થઈને જતી હશે અને પોતાની પાખ ઉપર આણેલા કમળના રજકણુ એ ફુલ ઉપર પડતા હશે અને આ રીતે આપણુ આ ફુલ પીળુ થયુ હોવુ જોઈએ બીજો તો કોઇ જ સભવ નથી, અને હુ જે કહુ છુ તેની ખાતરી આપણને આપણી માળણ પાસેથી થઈ શકશે ’

૧૭૦-૧૭૨ મારૂ કથન માળજી પિતાએ મારા કપાળ ઉપર વહાલથી ચુબન કર્યું ને બોલ્યા ‘બહુજ સુદર રીતે આ કોહાડો તે ઉકેલ્યો છે, હુ પણ મારી મેળે એ જ અનુમાન ઉપર આવ્યો હતો, પણ તારી પરીક્ષા કરવાને માટે જ મે તને એ પ્રશ્ન કર્યો હતો ખરેખર હવે તુ સત્વર લગ્ન કરવાને યોગ્ય થઈ છે અને તારે યોગ્ય વર શોધી કાઢીશ ’

૧૭૩-૧૭૪ આ વખતે મારી માતાએ મારા પિતાને કહ્યુ ‘આપણી દીકરી જેને વિષે આવા સુંદર અનુમાન પર આવી તે ઝાડને જાતે જોવાની મને બહુ આકાક્ષા છે ’ પિતાએ કહ્યુ ‘ભલે, તમારા સમગ્ર સ્ત્રીમડળને લેઇને ત્યા જઇ શકો બહાર ફરવા જવાથી તમને બીજા પણ લાભ થશે ’

૧૭૫-૧૭૬ અને પછી પિતાએ ઘરના મુનીમને બોલાવીને કહ્યુ ‘કાલે સવારે બાગમા ઉજાણીનો બન્દોબસ્ત કરો બધી વ્યવસ્થા બરોબર કરજો સ્ત્રીમડળ ત્યા આનદ કરવા જનાર છે ’

૧૭૭-૧૮૧ દાસીઓ, સખીઓ અને ભાભીઓએ મને વધાવી લીધી અને મારા ભોજનની સભાળ રાખનારી દાસી બોલી ‘હવે વખત થયો છે, માટે જમી લો કારણ કે જેમ ઇંધણ વિના દેવતા ટકતો નથી, તેમ અન્ન વિના શરીર ટકતુ નથી ખાવાની વેળા વટાઈ જાય એમ ન થવુ જોઇએ ’

૧૮૨-૧૮૭ ચદ્ર અને દૂધના જેવી સફેદ અને ઉત્તમ પ્રકારે બનાવેલી ખીર પછી મે ખાધી અને ત્યાર પછી તાજા માખણનો બનાવેલો પાક ખાધો પછી એક વાસણમા મારા હાથ ધોઇ નાખ્યા ને રૂમાલે લોહીને સાફ કરી નાખ્યા ત્યાર પછી મારા હાથ અને મો ઉપર તેલ ચોળ્યુ

૧૮૮-૧૯૩ આવની સવારે બાગમા જવાની વાત જેતી નો સ્ત્રીઓના મો ઉપર આનદ આનદ છવાઇ ગયો, અને એટલામા જ આ રામ અને નિદ્રા લેતી શક્તિ આવી

પહોંચી. મેં પણ આ અજવાળી રાત ખૂબ આનંદમાં ગાળી, અને જ્યારે ઉંઘ આવી ત્યારે દીવાને અજવાળે જ પલંગમાં જઇ સૂતી. સવાર થતાં મે હાથ મો ધોયાં અને દેવને નમન કરી સાધુપુરૂષોના ગુણસ્મરણ પૂર્વક સંક્ષેપમા પ્રતિક્રમણ કર્યું. પણ અનેક સ્ત્રીઓને તો રાત ઉતાવળે પુરી થતી ન હતી એટલા માટે રાતને ગાળો ભાડતી, અને ખરેખર કેટલીક તો બાગમાં શું શું જોવાનુ મળશે અને સરોવરમા સ્નાન કરવાથી કેવો આનંદ થશે ઇત્યાદિ અનેક વિષયો ઉપર વાતો કરતી આખી રાત જાગતી બેશી રહી.

૧૯૪–૧૯૮. ઉજાણીની વ્યવસ્થા કરવાને મુનીમ તો જોઇતા ચાકરોને લેઇને આગળથી મળસ્કે જ બાગમાં ગયા હતા. એવે પૂર્વાકાશના કમળને ખીલવતા, આકાશમા પોતાનો પ્રવાસ કરતા કરતા સૂર્યદેવ ઉદય પામ્યા. હવે સ્ત્રીઓ જુદા જુદા રંગના–કોઈ સુતરાઉ તો કોઈ હીરાગળ તો કોઇ ચીનાઈ, એમ–બહુ મૂલ્યવાન વસ્ત્રો પહેરી બહાર નિકળી; એમણે વળી મોતીનાં અને સોનાનાં રત્નજડિત ઘરેણાં પહેર્યા હતાં. સ્ત્રીઓની સુંદરતાએ શોભામાં વળી શોભા વધારી મુકી અને તેમની જુવાનીએ તેના ઉપર વળી ઓપ ચઢાવ્યો

૧૯૯–૨૦૪. મારી માતા પણ એટલામાં તૈયાર થઈ ગઈ હતી અને શુભ મુહૂર્ત જોઇને એણે આધેડ નારીઓના ભવ્ય સંઘને પોતાની પાછળ લીધો. પાછળ તેમની ચંચળતાએ મ્હાલતી જુવાન નારીઓ ચાલી. તેમના ઝાંઝરના, કટિમેખળાના અને બીજા ઘરેણાના ઝણકારથી હવેલીનું આગણું એવું તો ઝણઝણી રહ્યુ કે જાણે તે સંઘને વિદાય દેનારા વાજાં વાગતાં હોય અને આ સંઘ નિકળવાના સમાચાર મારી માએ મને, મારી સખીઓ મોકલી, કહાવ્યા.

૨૦૫–૨૦૯. મારી સખીઓ શણગારાતી હતી તે વેળાએ હું પણ સૌથી અનેરાં જ કપડાંથી અને ઘરેણાથી શણગારાતી હતી, અને મારા અતિ મૂલ્યવાન શણગારે કરીને તેમનાથી ત્રણ ગણી શોભા પામી ચંપાના ફુલ પેઠે ખીલી નીકળી હતી. પછી હું સખીમંડળની વચ્ચે મ્હાલતી મ્હાલતી હવેલીના આગણામાં આવી ઉભી. ત્યા આવીને જોયુ તો ઇંદ્રના સ્વર્ગમાં જાણે જુવાન અપ્સરાઓ ટોળે મળી હોય એમ અમારા આંગણામા જુવાન નારીઓ પુર ભપકામા ટોળે મળી હતી.

૨૧૦–૨૧૪. રથને બળદ જોડી દીધા હતા, અને પોતાની બેઠક પાસે ઉભેલા સારથિએ મને દેખતાં જ કહ્યું 'અહીં બેન; શેઠે તમારે માટે આ અનુપમ સુદર રથ નક્કી કર્યો છે' એમ બોલતાંની સાથે જ તેણે મદદ કરીને મને રથમાં ચઢાવી રથમાં સુદર મૂલ્યવાન ગાલીચો પાથર્યો હતો. મારી દાસી અને સખી સારસિકા પણ એજ રથમા આવી બેઠી ને પછી રથ પોતાની ઘુઘરીઓ ખખડાવતો ચાલવા લાગ્યો. પાછળ અમારો

ગ્ખવાળ પોતાનો પોશાક પહેરીને ચાલતો હતો બાજુ બાજુ અમને જોવા આવનાર સ્ત્રીઓની ખૂબ ભીડ જામી હતી

૨૧૫-૨૨૪ અમારો સુદર મધ નગ ના રાજમાર્ગ વચ્ચે થઈને ચા યો, ઠેર ઠેર લોકો ટોળેટોળા મળીને અમને જોવા લા યા નારીઓ પોતપોતાના ઘરની બારીઓમાથી મો કાઢીને બહુ આતુરતાએ અમને જોઈ રહી હતી એ જોઇ હુ તો છક થઇ ગઈ તેમ જ રસ્તા ઉપર અને ઘર ની બારીઓમા જાણે હીન જડી દીધા હોય એમ-સજ્ડ થઇ ગયેલા માણસો પણ અમને જોઈને છક થઈ ગયા સ્વર્ગ, રથમા બેગી ને જતી લક્ષ્મીને જેમ જોઈ રહે તેમ લોક મને એકીનજર જોઈ રહ્યા નગરના જુવાન પુરૂષોના હૈયા મને જોઈને આતુર અને બળવાન કામરાગને લીધે એવા તો બળી ઉઠ્યા કે તેમના જીવન જોખમમા આવી પડયા પણ જુવાન નારીઓને બીજી જ ઈચ્છા થઈ આવી – જો આપણી જાતને સ્વર્ગની સુન્દરતા સાથે સરખાવવી હોય તો આપણે આના જેવુ સુન્દર થવુ જોઇએ માગ સુખની સુંદરતાથી અને મૃદુતાથી નગરનો એ રાજમાર્ગ ગાડો ગાડો થઈ ગયો, અને સુદર દેખાવથી ભરાઇ ગયો એમા મારો દેખાવ તો સૌથી ચમકારી હતો લોકો પાસેથી સાભળેલી આ બધી વાતો મારી સખીઓએ મને કહી

૨૨૫-૨૨૮ બા ને દરવાજે આવી પહોચતા અમે બધા રથમાથી ઉતર્યા અને ત્યા આગળ ચોકીદાર સુમીને અમે બધા ફરવા નિ ળ્યા જાણે સ્વર્ગના નદનવનમા જુવાન અપ્સરાઓ ફરતી હોય, તેમ બધી નારીઓ ફરે તેમ પોતપોતાને માર્ગે ફરવા લાગી ખીલતા ઝાડો એ બી ત ી સાથે ગુથાઇને જે ઉપર ન્ગ્વાજા જેવા બની ગયા હતા, તેની નીચે થઈને તેઓ ચાલવા લાગી, અને ઝાડ ઉપરથી ફુલસરી ડાળખીઓ તોડવા લાગી

૨૨૯-૨૩૦ ચોટલામા મારી માતાએ બૂમ મારી 'આવો આપણે મારી દીકરીએ બતાવ્યુ છે તે, તળાવને કાંઠે ઉગેલુ, સપ્તપર્ણનુ ઝાડ જોવા જઈએ', એની સૂચના પ્રમાણે બધુ એ નારીમડળ આનદભર્યા પગના ભરતુ તે દિશાએ ચાલ્યુ

૨૩૧-૨૩૬ રથમાની મારી સહચરીઓ અને હુ રથમાથી ઉતર્યા પછી બાગની શોભાથી સુબધ મને અને આખે અદર પેઠા શરદઋતુએ બાગના વિવિધ પુષ્પોને સુદર ખીલાવ્યા હતા જાણે ફુલે ફુલે ભમરો ભમતો હોય તેમ હુ તો ભમવા લાગી, અને પક્ષીઓના હ તરો તરેહના ગાનથી મારા કાનને પરિતૃપ્ત કરવા લાગી જેમ જુગારી પોતાની મૂઠ હારી બેસે ને રમતનો તેનો જોમ ભાગી જાય, તેમ વસતને આરભે જેના સુન્દ પીછા ખરી પડયા છે એવા મો સભોગની આતુરતા વિના જ ફરતા જોયા વળી કળોના અને તાલના માડવા અને બાગકોને ખેલવાની કુજો અને

એવી એવી ઘણી જગાઓ બાગમાં જોઈ. ફુલને લીધે સફેદ થઇ ગયેલાં સપ્તપર્ણનાં ઝાડ પાસે રાતા અશોકવૃક્ષ અને આસમાની બાણવૃક્ષ હતાં.

૨૩૭–૨૫૦. ચાલતાં ચાલતાં એક સુંદર સપ્તપર્ણનું ઝાડ અમારી નજરે આવ્યું. એ ચારે બાજુએથી, ફુલશણગારના ભારે કરીને, લચી ગયું હતું. ફુલથી સફેદ થઇ ગયેલી એની ડાળીઓ મધમાખીઓનાં ટોળાંથી નમી ગઇ હતી અને જાણે કાળા રંગનો પોષાક ચઢાવ્યો હોય એવું દેખાતું હતું. અને પવને કરીને જે ફુલ ભોંય ઉપર પડી ગયાં હતાં તેને ગાંડછાએ ચઢેલા કાગડા સફેદ માખણના લોચા માની ઉપાડી ઉડતા ફરતાં હતા. એ ઝાડ ઉપરથી નારીના સ્તન જેવડું મોટું ને ચાંદીના વાડકા જેવું સફેદ એક ફુલ મેં ચુંટયું કે તરત જ મધ ચુસનારી માખીઓનું એક ટોળું, કમળ ઉપર બેસવાની લાલસાએ કમળના ઘાટના અને કમળના જેવો વાસ આપતા મારા મોં તરફ ધસી આવ્યું. મોં ઉપર એ મધમાખીઓ બેસવા જતી હતી, તેમને મેં મારા મૃદુ હાથ વડે વારી; પણ મારા હાથ તો જાણે પવનમાં ડાંખળી હાલતી હોય એમ માની એની દરકાર કર્યા વિના જ તે મો ઉપર આવી લાગી. વેદનાએ મે ચીસ પાડી અને હું પાછી પડી, પણ માખીઓના ગણગણાટ અને પંખીઓના કલબલાટમાં મારી ચીસ તો કયાંય દબાઇ ગઇ. ઘોડાના મોંના ફેણ કરતાંએ નરમ એવી મારી ઓઢણી મેં મારા મો ઉપર ખેંચી લીધી, કે જેથી ઘણીખરી માખીઓ ખશી ગઈ. પણ આમતેમ દોડવાથી મારાં રત્નજડિત ઘરેણાં વિખેરાઇ પડયાં, અને કામદેવનું બાણ જેના વડે ચઢાવાય એવી કટિમેખળા કેડેથી છુટી પડી. પણ વેદનાને લીધે એની પરવા કર્યા વિના જ હું તો દોડી ને કેળના માડવામા પેશી ગઇ. ત્યાં મારી સખી સારસિકા હતી તેણે મને આશ્વાસન આપી કહ્યુ· ‘તને મધમાખીઓ તો હજી યે બહુ લાગેલી છે, પણ ડરવા જેવુ કશુ નથી.’

૨૫૧–૨૬૧. જે સપ્તપર્ણને અમે જોવા આવ્યા તે ઝાડ પાસે હવે હું ગઇ. કમળના તળાવવાળી મધમાખીઓનાં ટોળેટોળાં તેના ઉપર બેઠાં હતા પુનેમના ચાંદા જેવા મધપુડાને છોડીને આજે એ બધી શરદ્‌નાં ફુલોમાં ભરાઇ બેઠી છે. અમારા સાથમાંની જે સ્ત્રીઓ ત્યાં પહોંચી હતી તેમણે તો ફુલોના મોહમા ઝાડની ડાખળીઓ સુદ્ધા બધી ચુંટી નાંખી હતી. મારી સખીના ખભા ઉપર મારા ડાબા હાથનુ કાડુ ટેકવીને અને કમળસરોવર ભણી નજર રાખીને હું આગળ ચાલી રહી હતી. બધી જાતનાં કમળફુલ પુરેપુરાં ખીલ્યાં હતાં. બાગના રત્નસમાન આ સરોવરની સપાટી પક્ષીઓના શબ્દોથી ગાજી રહી હતી અને મધમાખીઓનાં ટોળાંથી છવાઈ રહી હતી. રાતા ફુલ પ્રભાતની, સફેદ ફુલ ચંદ્રપ્રભાની, અને શ્યામળાં ફુલ વાદળાંની યાદ આપતાં હતાં. મધમાખીઓનો ગણગણાટ અને હંસોના નાદથી ગગન ભરાઈ ગયું હતું. પાણીની ઉપરના મોજા ઉપર ફુલ પવનથી હીંચકા ખાતા હતાં. ત્યા મેં કલબલાટ કરતી બતકો, નર–માદાની જોડીએ

ચાલતા ચકવાકો, અને ધોળા પીળા વળા આનદી હંસો જોયા પીળા કમળ ઉપર બેઠેલી મધમાખીઓ સોનાની તાસકોમા મુકેલા નીલમ જેવી શોભી રહી હતી, અને રેતીના કિનારા ઉપર રૂના જેના સફેદ પીછાવાળા હંસ શરદના સુદર હાસ્ય સાથે પોતાનુ હાસ્ય મેળવતા હતા

૨૬૨-૨૬૭ પછી મે નર-માદાની જોડીએ બધાયેલા અને પોતાના સ્નેહને લીધે પકડાયેલા અનેક ચકવાકોને જોયા એમના રાતા રગમા પીળો રગ મેળવાયાથી એ રમણીના સ્તનના રગ જેવા બહુરગી દેખાતા હતા તળાવમા રગિન કમળની જેવા લીલા પાનના જે આસન બધાઈ રહ્યા હતા તેના ઉપર કેટલાક આવા ચક્રવાક આરામ લેતા હતા, અને કેટલાક વળી આવા પત્રાસનોની વચ્ચે વચ્ચે સોમલના જેવા રાતા રગના, જાણે સ્નેહને લીધે જ રાતા બન્યા હોય એવા, પોતાની નારીઓના સ્નેહને પોષતા બેઠા હતા જે વખતે તળાવમાનો આ દેખાવ હુ જોતી હતી તે વખતે એ ચકવાકેનો પરસ્પરનો સ્નેહ અને મમતા જોઈને મારા મનમા કાઈ અગમ્ય વિચારો આવવા લાગ્યા આ જન્મમા નહિ અનુભવેલી એવી કાઈ કલ્પના મને થવા લાગી અને એ ઉડા વિચારો ને વિચારમા મને મારો પૂર્વ અવતાર પ્રત્યક્ષ થઈ આવ્યો એ પૂર્વ જન્મનુ સ્મરણ થતા જ મને મૂર્છા થઈ આવી અને ચેતન વિનાના શરીરની માફક હુ જમીન પર ઢળી પડી

૨૬૮-૨૭૨ જ્યારે મને ભાન આવ્યુ ત્યારે જાણ્યુ કે મારી આખમાથી તો શુ પણ મારા વેદના ભર્યા હૈયામાથી પણ આસુની નદી વહે જતી હતી, અને મારી સખી કમળપત્રનો પડીઓ બનાવી તેમા પાણી લેઈ આવીને મારા દુખભર્યા હૈયા ઉપર અને આખો ઉપર એ પાણી છાટતી હતી હુ ઉભી થઈ અને પાસેની કળોની ઘટા અદરની એક કુજમા પડેલી આસમાની કમળને યાદ કરાવતી કાળી શીલા ઉપર જઈને હુ બેઠી ત્યાર પછી મારા દુખમા અને અશાન્તિમા હૃદયથી ભાગ લેતી મારી સખી મને પુછવા લાગી ‘બેન, તને એકદમ આ શુ થયુ ? શુ તને ચક્કર આવવા લાગ્યા કે બહુ થાક લાગ્યો કે ખરેખર તને મધમાખીએ ચટકો ભર્યો ?’

૨૭૩-૨૭૭ મારી આખમાના આસુ તો એ લુછી રહી હતી, પણ મારા ઉપરના સ્નેહને કારણે એની આખમાથી આસુ દડદડ વહે જતા હતા વળી એ બોલી ‘તને આમ મૂર્છા શાથી આવી ગઈ ? બેન, તુ જે જાણતી હોય તે કહે કે જેથી જલદી તેનો ઉપાય થાય, તારૂ શરીર કથળી ન જાય એટલા માટે હવે ખોટી થવાય નહિ દરદ બેશક કઈક ભારે હોવુ જોઈએ, ઓપરવા કે બે દરકાર કર્યે પાલવે નહિ વાત હાથમા હોય એટલામા જ કઈક ઉપાય કરી લેવો જોઈએ, નહિ તો માત્ર ઉઝરડો હોય તે પણ ઢાઢીના ઘા જેવો થઈ જાય ’

૨૭૮–૨૭૯. સખીને કહી શકાય એવું એણે મને ઘણું કહ્યું ત્યારે મેં ઉત્તર આપ્યો: 'ભય જેવુ કશું નથી, બેન, મને ચક્કરે આવ્યા નથી, બહુ થાકી યે ગઈ નથી કે મધમાખીના ચટકા યે લાગ્યા નથી.

૨૮૦–૨૮૧. પણ એ તો વચ્ચે જ બોલી ઉઠી કે 'ત્યારે તુ રંગ વિના ફીકા પડી ગયેલા રામધનુષની પેઠે મૂર્છા ખાઇને એમ ભોય ઉપર કેમ પડી ગઈ? બેન, તું તારૂં હૈયું ખોલ, હું તો તારી પ્રિય સખી છુ.'

૨૮૨–૨૮૬. નીલમ જેવી સુંદર કુંજમાં મે સખી સારસિકાને કહ્યું- 'મારી પ્રિય સખી, પવનથી તુટી પડેલા પાનની પેઠે મૂર્છા ખાઇને હું શા માટે ભોય ઉપર પડી એ બધી હકીકત હુ તને ટુંકામાં કહીશ. તું મારી નાનપણની સખી છે અને મારા સુખદુ ખની ભાગિયણ છે; તેમ મારા બધા છાના પણ તુ જાણે છે ત્યારે આજની વાત પણ બધી તને કહીશ પણ બધી વાત તારા હૈયામાં રાખજે. એ તારે મોએથી બીજા કોઇને કાને જવા પામે નહિ! મારા ગળાના સમ ખા કે બીજા કોઇને આ વાત કહીશ નહિ.'

૨૮૭–૨૮૮. ત્યારે સારસિકા મારે પગે પડી ને બોલી. 'બેન, તારા પગના સમ ને તારા ગળાના સમ, હુ કોઇને નહિ કહું.'

૨૮૯–૨૯૧. પછી મારી વહાલી ને વિશ્વાસુ સખીને મેં કહ્યુ 'બહુ દુ ખની વાત છે કે મારા પાછલા અવતારની વાત મારી આંખોએ આસુ વડે બહાર નિકળી જવા દીધી છે. મારા પ્રિયનો મને જે વિજોગ થયો છે તેનું સ્મરણ થઇ આવવું એ, પણ બહુ દુ ખની વાત છે જે સ્નેહ મે એકવાર માણ્યો છે ને જે દુ ખ ભોગવ્યુ છે તે સૌ હુ તને કહુ છુ, જે મન દેઇને સાભળ.'

૨૯૨ મારી સખા મારી બાજુમાં સાભળવાને અધીરી થઇને બેસી ગઇ ને આસુ વહેતી આખોએ મે વાત શરૂ કરી.

(૪. પૂર્વ જન્મનુ વૃત્તાન્ત)

૨૯૩–૨૯૪. આપણી પાડોશમાં અગ નામે અસિદ્ધદેશ છે અને એ દેશ શત્રુથી, ચોરથી ને દુષ્કાળથી સદા નિર્ભય છે. ત્યા ચપા નામે સુદર નગર છે જેમા અનેક સુદર બાગબગીચા તથા રમણીય જલાશયો છે ત્યાની વસ્તી સાચે જ સ્વર્ગસમી છે.

૨૯૫–૨૯૯. તે દેશની વચ્ચે થઈને પવિત્ર ગંગાનદી વહે છે. તેને બન્ને તીરે અનેક નગર અને ગામ વસેલાં છે અને જળપખીઓના ટોળે ટોળા તેમા રહે છે સમુદ્રની જાણે વ્હાલી પત્ની હોય એમ એ તેના તરફ ધસે છે. કાદંબ પક્ષી તો જાણે એના કુંડળ છે, હંસની હાર જાણે એની કટિમેખળા છે, ચક્રવાક પક્ષીની જોડ જાણે એનાં બે

તન છે, એના મોજાથી જાણે એ હમણી દેખાય છે એને કિનારે હાથી, બગ, વાઘ, ચિત્તા ને વરુ રહે છે પાણીની સપાટી ઉપર પાકા ગતા ઘણા તરતા હોય એમ ચક્રનામ જેડા આનંદે રમ્યા કરે છે હંસ બતકો અને એવાજ બીજા જળપ્રાણીઓ પણ ચિંતા વિના સ્વતંત્રતાએ ફરતા કરે છે

૩૦૦-૩૧૪ મારી પ્રિય સખી, ત્યા હુ આગના અનંતરમા રાતાપીળા પીંછા વાળી ચક્રવાકી હતી અને સ્વતંત્રતાનુ પૂરુ સુખ ભોગવતી ચકવાકોમા સ્નેહ જેટલો સાચો અને મગન હોય છે તેવો સ્નેહ આખા જગતમા બીજે ક્યાય નહિ હશે અને મારા નર તો વળી ચચળ માથાએ કરીને અને ગોળ દગ જેવે શરીરે કરીને પ્રખ્યાત હતો, તેમા વળી એ કુશળ તરનારો હતો અને કોટના કુંદના ગોળ જેવો સુંદર હતો તેના કાળા અને રૂવાંટી વગરના પગના ચાપ્પા કમળના કાળા પાન જેવા હતા છેવટ સુધી તેનો સ્વભાવ તપસ્વી જેવો નમ્ર હતો, એનો હાથ તો બહુ પહેલેથી બળી ગયેલો હતો રાતા પ્રભાતસમયે તેની સાથે જ હુ તરવા જતી ઉડતી પણ તેની સાથે જ એવી રીતે અમે સ્નેહમા સાથે રહેતા, અમારા ઉત્તરતા સુર શબ્દથી આમાગ કાનને અને હૃદયને આનંદ આપતા, એક બીજાને સુખી કરતા, એક બીજાની પાછળ જતા, સાથે રમત રમતા અને એકબીજાનો વિયોગ કદી સહી શકતા નહિ નદીએ, કમળસરોવરે, રેતીને કિનારે કે કિનારાના જંગલે-જંગલ જતા ત્યા અમે સ્નેહનો દેખાવ કર્યા વિના જ પણ સાચે સ્નેહે બંધાઈને સાથે જ રહેતા

૩૧૫-૩૨૬ એક સમે તો જળપક્ષીઓ સાથે અમે પણ ગગાને પાણીએ બનેલા સુંદર તળાવમા રમતા હતા, તેવે સૂરજને તાપે બળ્યો બળ્યો થાક્યો થયેલો એક હાથી ત્યા નદીમા નાહવા કાંઠે આવ્યો ગતગોના ભારસમા ચચળ એના કાન આમ તેમ હાલતા હતા, મૃદંગના જેવો મૃદુમૃદુ અવાજ તે દયા કરતો, પણ વળી એ ગગનસમુ પ્રાણી વચ્ચે વચ્ચે મેઘગર્જનાના જેવો ભયંકર નાદ પણ કરતુ તેના કુંભસ્થળમાથી મદ ઝરતો હતો અને સપ્તપર્ણના ફુલના જેવો એનો તીવ્ર વાસ પવનને બળે ચારે દિશાઓમા પ્રસરી રહેતો કિનારાના ઘુમ્મટ ઉપરથી આ મહાપ્રાણી નીચે ઉતર્યું રેતીમા પડતા એના પગલા વડે જાણે ગગાની કેડી ઉપર કાંઈ બનાવતુ હોય તેમ દેખાવા લાગ્યુ અને સમુદ્રની રાણી જેવી ગગા જાણે એ હાથીથી ભાર પામીને પોતાના મોતીને લઈને દોડી જતી હોય તેમ દેખાવા લાગી એણે પાણી પીધુ ને પછી સુઢથી ફુવારો મારીને પાણી એવુ ઉડાડ્યુ કે જાણે નદી ઉપર વાદળ ચઢી આવ્યુ પછી પ્રવાહમા એ ઉંડે ઉતર્યો અને સુંઢ વડે પાણીનો પર્વત જેવો પ્રવાહ પોતાની પીઠ ઉપર વહેવરાવ્યો નદીમા એણે એવા તો મોજા ઉછાળ્યા કે તે અમે હતા તે તળાવમા પણ આવી પહોચ્યા એ જ્યારે સુંઢ ઉંચી કરતો અને તેથી એનુ મો પહોળુ થતુ

ત્યારે એનાં જડબાં, જીભ અને હોઠ વડે એવી બખોલ દેખાતી કે જાણે એ અંજન પર્વતની સિંદુરની ગુફા હોય.

૩૨૭–૩૩૫. ભયથી ત્રાસીને બીજાં જળપ્રાણીઓની પેઠે હું પણ મારા સ્વામીની સાથે ઉંચે ઉડી ગઈ. પછી હાથી નદીમાંથી નિકળી પોતાને રસ્તે પાછો ચાલ્યો જતો હતો, તેવે સમે વનફુલાંએ શણગારાએલો, હાથમા ધનુષબાણ લેઇને સાક્ષાત્ જમદૂત જેવો એક જુવાન પારધી આવી પહોંચ્યો. એના પગ ઉઘાડા હતા અને નખ વાઘના પંજાશા ખૂબ લાંબા વધેલા હતા. એનું શરીર ખૂબ મજબુત હતું અને એની પહોળી છાતીમાંથી, ધનુષની પણછ ફુટે એમ, બે લાંબા હાથ ફુટતા હતા. તેની દાઢી રાતાશ પર અને સુંવાળી હતી; હોઠ કંઈક ફાટેલા હતા અને બળવાન ખાંધ ઉપર માથું હાલતું હતુ; માથા ઉપર વાંકડીઆ વાળ હતા અને વાળના છેડા સાપની જીભશા દેખાતા હતા વળી પવને અને સૂરજને તાપે કરીને એની ચામડી કાળી થઈ ગએલી હતી. તેથી એ રાક્ષસસમો કે જમદૂતના સાક્ષાત્ અવતારસમો દિસતો હતો. તેની પીઠે એક તુબડું લટકતું હતુ, અને તેમાં બાણ ભર્યાં હતાં. તેણે ભયંકર વ્યાઘ્રચર્મ પહેર્યું હતું, અને તે જાણે વસ્ત્ર ઉપર મેશના કે સહીંના લીસોટા તાણ્યા હોય એમ દેખાતું હતું.

૩૩૬–૩૪૧. પારધીએ એ હાથીને જોયો કે તરત જ, જરૂર પડે તો ઉપર ચઢી જવા માટે, દોડીને એક મોટા ઝાડ નીચે જઈ ઉભો. પછી ધનુષ પર બાણ ચઢાવીને ખુબ જોરથી ખેંચ્યુ ને હાથી ઉપર તાક્યું. પણ કમનશીબે એ નિશાન ચુક્યો અને તે હાથીને ન લાગતા સામે જ ઉડતા મારા સ્વામીને જઈ ચોટ્યું. તેનાથી એમની એક પાખ કપાઈ પડી ને તેની સાથે એ પણ મૂર્છા ખાઇને પાણીને કિનારે પડ્યા. હુ મારા પ્રિયની પાછળ ઉડી અને એમની વેદના મારાથી નહિ સહન થઇ શકવાને કારણે હું પણ તેમની પાસે જ મુર્છિત થઈ ધરણી ઉપર ઢળી પડી..

૩૪૨–૩૪૬. જ્યારે મને ભાન આવ્યું ત્યારે મેં બળતે હૈયે અને આંસુભરી આંખે શું જોયુ ! મારા સ્વામીની પાંખ છુટી થઈને જાણે પવનના બળે તુટીને કમળ પડ્યુ હોય એમ એમની પાસે પડી હતી અને તેમના શરીરમાં બાણ ચોંટ્યુ હતુ. પાસે પડેલી પાંખ કમળના પાન જેવી વિખરાઇ પડેલી હતી. જાણે રાતાપીળા ઘડા ઉપર લાખના ડાઘા પડ્યા હોય તેમ મારા સ્વામીના શરીર ઉપરના લોહીના ડાઘ દેખાતા હતા. એ ડાઘ એટલા બધા પડ્યા હતા કે જે જોઇને કોઇને તો એમ જ લાગે કે અશોક ફુલના ગોટા ઉપર ચંદનરસની છાંટ મારી છે; અને છતાં યે એ પાણીને કિનારે જ પડેલા હોવાથી કિંશુકવન જેવા કે આથમતા સૂર્ય જેવા ભવ્ય દેખાતા હતા.

૩૪૭-૩૫૦ મારી ચાચ વડે મેં એમના ધામાથી બાણુ ખેચી કાઢયુ, અને રડતી આખે મારી પાખો વડે મે એમને પવન નાખ્યો પછી મે એમને બોલાવ્યા, પણ એ તો જડ જેવા નિશ્ચેટ થઈને પડી રહ્યા હતા તેમ છતા સ્નેહને લીધે અને મુઝવણને લીધે તે વખતે તો મે માની લીધુ કે હજી એ જીવતા છે

૩૫૧-૩૫૩ પણ જ્યારે મને બધુ સમજાઇ ગયું ત્યારે વણુવી નહિ શકાય એવી વેદનાએ હુ તો થોડીવાર બેભાન થઇ ગઇ પછી મારી પાપોમાથી સુદર પીંછાને મારી ચાચ વડે ચુથી નાખ્યા, મારા સ્વામીની પાખોમા પણ મે ચાચો મારી અને મારી પાખો વડે હુ એમને બાઝી પડી હુ એમની આસપાસ ઉડવા લાગી અને આમ રૂદન કરવા લાગી

૩૫૪-૩૫૯ તમને, આ ગગાના શણુગારને, કીયા પાપીએ માર્યા ? મારા સુખની ઇર્ષ્યાએ કોણે મને અનાથ કરી મુકી કે જેથી વિજોગનુ દુ ખ મને આગના ભડકાની પેઠે બાળે છે, અને ભયકર વિચારોની અદર મારે ડુબી જવુ પડયુ છે ? મારા પ્રિય સ્વામી, હવે તમારે વિજોગે કરીને કમળસરોવર ઉપર હુ આનદ શી રીતે ભોગવી શકીશ ? આપણા બેની વચ્ચે કમળના પાદડાએ કરીને પણ વિજોગ થતો, તો જાણે તમે પરદેશ ગયા હો એમ મને તેનુ દુ ખ સાલતું, ત્યારે હવે તો મૃત્યુએ આપણુને આજે કાયમના જુદા પાડયા છે, માટે હવે મારા દુ ખનો અવધિ કયા આવશે?

૩૬૦-૩૬૫ ફરીવાર પાછો એ પારધિ આવ્યો અને મારા જીવનના સાથી ઉપર નજર કરીને જોવા લાગ્યો ત્યા તો હાથીને બદલે મારા સ્વામી માર્યા ગયેલા જણાયા, તેથી વેદનાએ કરીને એ બોલી ઉઠયો 'હા, પ્રભુ !' એ ભયકર માનવીના ભયથી હુ પાછી ઉડી ગઈ પણ મારા સ્વામી માર્યા ગયા તેથી એને પણ દીલગીરી થઈ એણે એમને ઉપાડીને ચદ્રપ્રકાશ જેવી રેતી ઉપર મુકયા પછી કિનારા ઉપર એ લાકડા શોધવા ચાલ્યો એટલે ફરીને હુ મારા પ્રિય સ્વામી પાસે જઈ બેઠી

૩૬ -૩૬૯ ડુસકા ભરતી ભરતી વિદાયના છેલ્લા શબ્દો હુ બોલતી હતી તેવામા તે પારધિ લાકડા લેઇને વળી પાછો આવ્યો અને હુ ફરી પાછી ઉડી ગઇ મને જણાયુ કે એ પાપી હવે મારા સ્વામીનો અગ્નિસસ્કાર કરશે, તેથી એમના મૃત દેહ ઉપર આમતેમ આકાશમા મે નિરાશાએ ઉડ્યા કર્યું

૩૭૦-૩૭૩ અને સાચે જ એ પારધિએ પોતાનુ ધનુષ અને બાણુભર્યું તુબડુ ભોય પર મુકીને મારા સ્વામીને લાકડાની ચિતામા મુકયા પછી એમા અગ્નિ મુક્યો, અને લાકડાની ચીપાટો આમતેમ ખોશી ઘાલી મને તો એ અગ્નિ દાવાનળ કરતા પણ ભયકર લાગ્યો અને વિચારમા ને વિચારમા મારા સ્વામીને શોકભર્યે હૃદયે કહેવા લાગી

૩૭૪-૩૭૮ ઓ પ્રિય સ્વામી, આજ સુધી આપણા મિત્રરૂપ પાણીમા તમે વાસ કરતા, તે આજે આ શત્રુરૂપ અગ્નિને શી રીતે સહન કરી શકશો ? જે અગ્નિ

તમને બાળે છે તેથી હું પણ બળી મરૂં છું, એ અગ્નિ તમે શી રીતે સહન કરી શકશો ? આનંદ અને શોક ઉપજાવનારૂં આપણું પ્રારબ્ધ હજી યે ધરાયું નથી કે આપણને એકવાર એક કર્યા પછી પાછાં ફરી જુદા કર્યાં ? અરેરે ! મારૂં હૈયું લોઢાનું હોવું જોઇએ, નહિ તો એ તમારૂં દુઃખ, ઓ પ્રિયતમ, આમ જોઈ રહે નહિ, પણ તરત જ તમારી ચિતામાં કુદી પડે. આમ દુઃખમાં ને વિજોગમા હું તમારાથી દૂર રહું એના કરતાં તો એ ભલું કે હું તમારી સોડમાં ચિતા ઉપર સુઉં.

૩૭૯–૩૮૩. આમ શોકના આવેગને કારણે ને નારીસુલભ વીરતાને પ્રભાવે હું સતી થવાના ઠરાવ ઉપર આવી. જે સ્નેહી આત્માની પાછળ એમનું શરીર ચાલ્યું જતું હતું તેમની પાસે હું અગ્નિમાં જઈ પડી; અગ્નિ હવે મને હિમ જેવો ઠંડો લાગવા લાગ્યો, કારણ કે હું મારા સ્વામીની સોડમાં હતી. ફુલમાં જેમ માખી, તેમ હું અગ્નિમાં ડુબી ગઈ, અને એ અગ્નિએ મને મારા સ્વામી ભેળી કરી દીધી. જોકે એ રાતીપીળી અગ્નિની શિખા મને બાળતી મારી ચારે બાજુએ રમતી હતી, તોયે પતિના વિચારમાં મને જરા યે દુઃખ થયું નહિ. એમ, મારી સારસિકા, હું સતી થઇને મારા પ્રિય પતિની પાછળ ચાલી નિકળી.
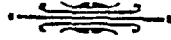
૫ કામના, સાધના અને સિદ્ધિ.

૩૮૪–૩૮૫. (સાધ્વી તરંગવતી આગળ બોલે છે:) અમારાં મરણની કથા મારી સખીને હું વર્ણવી રહી કે તરત જ શોકને લીધે ફરી હું મૂર્છા પામી. ફરી જ્યારે મને ભાન આવ્યું ત્યારે ફરીથી એને અચકાતે શબ્દે અને ધડકતે હૈયે કહેવા લાગી:

૩૮૬–૩૯૬. ગંગાને કાંઠે હું સતી થયા પછી કૌશામ્બી નગરીમાં ઋષભસેન શેઠના ધનવાન્ અને આબરૂદાર ઘરમાં અવતરી એક વખતે આ જળતરંગો જોઇ મને એ મારી પૂર્વજન્મ વાર્તા સાભરી આવી હતી, તેમજ આજે પણ અહીં આ તળાવના ચકુવાકોને જોઇને મને ફરી બળવાન સ્નેહ–સ્મૃતિ થઈ આવી. આ પ્રમાણે મારા પાછલા જન્મનું પ્રારબ્ધ મને બધું કેમ સાભરી આવી તાજું થયું, અને હું મારા સ્વામીથી મૃત્યુ થયે કેમ વિજોગ પામી, એ બધું મેં તને ટુંકામાં કહ્યું છે. પણ તેં મારા જીવના સોગન ખાધા છે તે પ્રમાણે, હું મારા પ્રિયને ફરી મળી શકું નહિ ત્યાં સુધી, આ વાત કોઇને કહેતી નહિ. હવે જ્યારે મારી કામના સફળ થશે, ત્યારે જ મને સુખ થશે.

આજ સાત વર્ષથી હું મારા એ સ્નેહીને ભેટવાની આશામાંને આશામાં, મારા માતાપિતાને ખોટી ખોટી આશાઓ આપ્યે જાઉં છે. જો એમાંથી કશું હવે વળશે નહિ તો હૈયાના દુઃખને ટાળવાનો માત્ર એક જ માર્ગ બાકી છે, જે જિનપ્રભુએ જગતના ઉદ્ધારને માટે સાર્થવાહ થઇને બતાવ્યો છે. તે નિર્વાણનો માર્ગ સાધવાને માટે હું સાધ્વી

થઈશ સંસારના સંબંધમાં બંધાવાથી આ જાતનું જે વિજોગનું દુ:ખ ખમવું પડે છે, તે દુ:ખ ફરી બીજી વાર ન થાય તેવે માર્ગે હું વિચરીશ સંસારના દુ:ખની સાથે સાથે જન્મમરણના દુ:ખ ટાળીને આત્માના સાચા સ્થાનમાં પહોંચવાને માટે હું સાધ્વી થઈશ.

૩૯૭–૪૦૧ (તરંગવતી વળી આગળ બોલે છે) સ્નેહને બળે મારી સખી ઉપર વિશ્વાસ રાખીને મારા દુ:ખની બધી વાત મેં એને કહી એ ભવી સારસિકા પણ મારા ઉપરના સ્નેહને લીધે અને મારા દુ:ખની દયા આવવાને લીધે ભારે વિલાપ કરવા લાગી પછી એ રડતી આંખે બોલી

અરેરે સખી, મારા પ્રારબ્ધમાં આ શી તારા સ્વામીના વિજોગની દુ:ખભરી વાર્તા સાંભળવાની! પૂર્વનાં કર્મ, વખત જતાં પાકીને, કેવાં કેવાં ફળ આપે છે! પણ બેન, ધીરજ ધર, દેવ તારા ઉપર જરૂર કૃપા કરશે અને તારા એકવારના સ્વામી ભેળી તને કરશે.

૪૦૨–૪૦૩ આવાં પ્રિય આશ્વાસનનાં વાક્યો બોલીને સારસિકાએ મને શાંત કરવાના પ્રયત્ન કર્યો, અને પાણી લાવીને મારી આંસુભરી આંખો ધોઈ નાખી પછી અમે કેળોની એ કુંજમાંથી નિકળીને ચાલ્યાં અને જે જગાએ મારી માતા સ્ત્રીઓના સાથને લેઈ આનંદ ઉડાવતી હતી ત્યાં ગયાં

૪૦૪–૪૦૬ મારી માતા તળાવને કિનારે હતી ને ત્યાં સાનાં સ્નાનને માટે વ્યવસ્થા કરતી હતી હું તેની પાસે ગઈ મારી આંખો રાતી અને મારું મોં ફીક્કું જોઈને તરત જ તે ગભરાએલા અવાજે બોલી —બેટા, તને આ શું થયું? આ બાગના આનંદમેળામાં તને દુ:ખ જેવું શું લાગ્યું? તારું મોં કરમાઈ ગયેલી કમળમાળા જેવું કેમ દેખાય છે?

૪૦૭–૪૧૦ શોકને લીધે આંસુભરી આંખો ઢોળાતાં ઢોળાતાં મેં ઉત્તર દીધો –'મા, મારૂં માથું દુખવા આવ્યું છે' તરત જ મારી મા છળી ઉઠી ને બોલી –'દીકરી, ત્યારે તું ઘેર જા! હું પણ તારી સાથે જ આવું છું તને – મારા આખા ઘરના મોતીને – દુ:ખભરી દશામાં એકલી શી રીતે મોકલું?'

૪૧૧–૪૧૪ મારા ઉપરના સ્નેહને લીધે એણે બધી વાતો પડતી મેલીને ઘેર જવાની તૈયારીઓ કરી નાખી, અને નાનીમંડળને ધીમે રહીને એણે કહ્યું 'જ્યારે તમે નાહી રહો અને ઉજાણી જમી રહો, ત્યારે પાછળથી ધીરે ધીરે ઘેર આવજો કંઈક જરૂરનું કામ આવી પડવાથી હું તો અહુણાં જ જાઉં છું તમે આનંદે કામ પતવજો!' આમ એણે પોતાની આનંદની કામના છોડી દીધી, પણ સ્ત્રીઓને એમના કામમાં બગાડો રાખી તેમને આનંદમાં રાખવાને કારણે જ અમારા ઘેર જવાનું કારણ એણે એમનાથી સંતાડી રાખ્યું

૪૧૫–૪૧૬. ચોકીદારોને, વ્યવસ્થાપકોને, ઝનાનખાનાના વ્યંઢળોને તેમના કામની જરૂર પુરતી સૂચનાઓ આપીને પોતાના નાના ટોળા સાથે અને થોડા ચાકરો સાથે મને લેઇને એ સત્વર શહેરમાં આવી.

૪૧૭–૪૧૮. ઘેર આવીને સારસિકાએ મારો શણગાર અને વસ્ત્રો ઉતારી લીધાં ને હું ઘરનાં વસ્ત્રો પહેરીને પલંગમાં સુતી.

૪૧૯–૪૨૨. પછી મારી માતા મારા પિતા પાસે ગઇ અને બોલી:–'આપણી દીકરીને લેઇને હું પાછી ઘેર આવી છું. એના માથામાં વેદના થાય છે તેથી એને બહુ ઉઘાડામાં રાખવી સારી નથી. મારે જે સપ્તપર્ણનું ઝાડ જોવું હતું, તે મેં સારી પેઠે અને ફુલે પૂરૂં ખીલેલુ જોયું છે, અને નારીમંડળ એમની ઉજાણીના આનંદમાંથી નિરાશ ના થઇ જાય એટલા માટે મારા ઘેર આવવાનું કારણ મેં તેમનાથી છુપું રાખ્યું છે.'

૪૨૩–૪૨૬. મારી માતાને મોંએથી આ સમાચાર સાંભળીને મારા પિતા તો અશાન્તિએ અને ચિંતાએ ગભરાઈ ગયા, કારણ કે એમનો સ્નેહ મારા બધા ભાઇઓ કરતાં પણ મારા ઉપર વધારે હતો. એમણે તરત એક સારા કુળમાં અવતરેલા, ચતુર અને વિશ્વાસપાત્ર, તથા આખા નગરમાં પ્રખ્યાત એવા વૈદ્યરાજને બોલાવી આણ્યા. એ શસ્ત્રવૈદું પણ જાણતા હતા. એમનો હાથ હલકો અને વેદના વિના ક્રિયા કરે એવો હતો. રોગની પરીક્ષા કરવાના અને પછી રોગ ટાળવાના ઉપચાર કરવાને આશયે એમણે સામે બાજઠ ઉપર બેશીને મને પુછયું:

૪૨૭–૪૨૮. 'બેન, તમને તાવને લીધે કે માથાના દુખાવાને લીધે શરીર ભારે લાગે છે? મને ખુલ્લું કહો જેથી ઉપચાર થઇ શકે. આજ સવારમાં શું ખાધું હતું? ખાધેલું બરાબર પચી ગયું છે? ગઇ રાત્રે ઉંઘ બરાબર આવી હતી?'

૪૨૯. મારે બદલે સારસિકાએ જે ઉત્તર આપ્યો અને મેં સવારમાં શું ખાધું હતું અને અમે બાગમાં કેમ ગયાં હતાં એ બધું વર્ણવી બતાવ્યું, પણ મારા પાછલા અવતારના અનુભવની વાત ટાળી દીધી.

૪૩૦–૪૩૭. અનેક પ્રશ્નો પુછીને ચિકિત્સા કર્યા પછી વૈદ્યરાજે મારાં માબાપને કહ્યું: 'તમારી દીકરી માંદી દેખાય છે, એટલું એ જ. બાકી ચિંતા કરવા જેવું કશું નથી: કારણ કે, જો ખાધા પછી તરત જ તાવ ચઢે તો એનું કારણ સ્નેહ હોય છે અને એને કફ કહે છે. પચનક્રિયા ચાલતી હોય તે વેળાએ જો તાવ ચઢે તો એનું કારણ બીજું છે ને તે પિત્ત છે, પણ જો પચન થઇ રહ્યા પછી તાવ ચઢે તો તે વખતે વાતને કારણે પણ હોય. જો ત્રણે કારણો એકઠાં થયાં હોય તો એમાં અનેક રોગ હોય, અને એવા ત્રિદોષમાં બે ત્રણ લક્ષણ દેખા દે છે. બીજા એક પ્રકારનો તાવ હોય છે એને અકસ્માતજ્વર કે ખેદજ્વર કે સ્વપ્નજ્વર કહે છે, તે સોટી કે ચા-

ભુકના ફટકાથી, કે હથિયારના ઘાથી કે ઝાડના પડવાથી કે એવા જ કારણથી આવે છે તમારી દીકરીના સબધમા તાવ નક્કી કરવામા એવા કોઈ લક્ષણ દેખાઈ આવતા નથી, તેથી તમારે કશી ચિતા કરવાનુ કારણ નથી એ નીરોગ છે ગાડીના આચકાથી એ હાલી ગઈ છે અને બાગમા ફરવાથી થાકી ગઈ છે એટલે અત્યારે એ નરમ છે ને તાવ જેવુ લાગે છે, પણ એ તો માત્ર થાક જ છે પણ વખતે એને ભીતરની ચિતા પણ હોય અને એ કોઇ ભારે શોકને કારણે થઇ હોય'

૪૩૮-૪૪૧ મારા સબધમા મારા માબાપને વૈદરાજે સાચુ જ કહ્યુ હતુ, અને જ્યારે એ ઉઠયા ત્યારે એમને માન આપવાને માટે હવેલીના દરવાજા સુધી એ એમને વળાવવા ગયા પાછલે પહોરે મારી માતાએ મારા શોકભર્યા હૃદયને ખાવાનો આગ્રહ કર્યો ને મારે કઈક ખાવુ પડયુ એટલામા બાગમા ગએલુ નારીમડળ પાછુ આવ્યુ અને તેમને સ્નાનમા અને ઉજાણીમા કેવો આનદ આવ્યો એનુ વર્ણન કરવા મડયુ રાતે પથારીમા ઉઘાડી આખે આમતેમ મે આળોટયા કર્યું, પણ રાત તો જાણે કેમે કરી જાય નહિ તેવી લાગી

૪૪૨-૪૪૩. સવાર થતા, જે જુવાનોના હૃદયમા આગલે દિવસે મને જોઇને મદનના બાણ વાગ્યા હતા, એવા સેકડો જુવાનોના પિતા મારૂ માગુ કરવાને મારા પિતા પાસે આવવા લાગ્યા ગમે તેવા એ આબરૂદાર હશે, પૈસાદાર હશે, પણ એ બધાના માગા મારા પિતાએ પાછા વાળ્યા, કારણ કે કોઈની નૈતિક કે ધાર્મિક યોગ્યતા એમની નજરમા બેઠી નહિ

૪૪૪-૪૫૧ પણ પછીથી એ પાછા વાળેલા ઉમેદવારોના જુદા જુદા પ્રકારનાં રૂપગુણની વાતો સાભળીને મારા પાછલા અવતારની કથા પાછી મને યાદ આવી ને આંખોમાથી આસુની ધારા વહેવા માડી જેમ જેમ એ સ્મૃતિમા હુ ડુબતી ગઈ, તેમ તેમ ખાવું પીવું હુ ભૂલતી ચાલી માત્ર મારાં માતાપિતાને અને સગાસબધીને રીઝવવાને ખાતરજ વેદનાભર્યે હૈયે પણ કઈક ખાતીપીતી કે ઓઢતીપ્હેરતી જો જીવનના તરગ મને મારે રસ્તે દોરી જાય નહિ, તો એ તરગ ઉપર મારો જીવ શી રીતે ચોંટે? સપ્તપર્ણના ફુલવાસના તરગ જો આકળા થઈને સ્નેહને નચાવે, તો પહેલા ગમે એટલુ સુખ આપતા હોય, પણ આજે મને બાણની પેઠે કેમ ન વાગે? ચદ્રના કિરણો જો મદનનાં બાણ થઈને મારી છાતીમા ભોકાય તો મને શી રીતે સુખકર લાગે? ગમે તો ફુલમાથી અમૃત ઝરે, ગમે તો શાન્તિ આપતો વરસાદ પડે, ગમે તો સવારમા ઝાકળ પડે, પણ મારે મને તો એ સો જાણે અગાર ઝરનો હોય એમ લાગતું ટુકામા જે બધુ બીજી વેળાએ સુખ આપે, તે અત્યારે મારા સ્નેહી વિના મને દુઃખ આપતું હતુ

૪૫૨-૪૫૪ ગુરૂજનોના ઉપદેશ અનુસારે મે મારી કામના સિદ્ધ કરવાને માટે

કઠણ તપસ્યા કરવી શરૂ કરી. એ તપસ્યા એકસોને આઠ આચામ્લ[1] કરવારૂપ હતી. મારાં માબાપે એ વ્રત કરવાની સમ્મતિ આપી. કારણ કે આવા વ્રતથી દુર્ભાગ્ય ટળે છે અને સભાગ્ય વધે છે. મારી મનઃકામનાની તો એમને ખબર જ નહોતી; તેથી જેમ જેમ હું સુકાતી ગઈ તેમ તેમ એમને લાગતું ગયુ કે એ તો વ્રતને કારણે એનું શરીર સુકાતું જાય છે. મારી કામના સિદ્ધ નથી થતી તેથી આ શરીર સુકાય છે એની એમને શી રીતે ખબર પડે?

૪૫૫–૪૬૩. મારી આંતરિક વેદનામાં મને અકસ્માત્ એક નવીન વિચાર સ્ફુરી આવ્યો અને તે અનુસારે મેં કેટલાંક ચિત્રપટ આલેખ્યાં. મારા પાછલા અવતારમાં મારા સ્વામી સાથે રહીને મેં જે અનુભવ લીધો હતો, તે પ્રકટ કરવાને વસ્ત્રપટ ઉપર સુંદર પીંછી વડે અનેક ચિત્રો મે આંક્યાં. અમે એકઠાં સ્નેહે કેમ રહેતાં, કેમ ચરતાં, મારા સહચરને કેમ બાણુ વાગ્યું, પારધિએ કેમ એમને અગ્નિસંસ્કાર દીધો, હું પોતે તેમની પાછળ કેમ સતી થઈ; એ બધા દેખાવોના મેં ચિત્રો ચીતર્યાં. વળી ગંગા, ને તેની પાસેનુ ભર્યું તળાવ, ને નદીનાં બળવાન મોજાં, ને તેના ઉપરનાં સૌ જળપક્ષીઓ, ને તેમાં ચે વળી ખ સ કરીને ચક્રવાકો—એ સૌનાં પણ ચિત્રો આંક્યાં. વળી હાથી ને તેની પાછળ પડેલો ધનુર્ધારી પારધિ પણ ચીતર્યો. કમળતળાવ ફુલે ખીલેલું અને વિવિધ ઋતુના ખીલેલાં ફુલોએ લચકાતાં વિશાળ ઝાડવાળું વન પણ ચીતર્યું—અને એ જુદાં જુદા ચિત્રની ચિત્રમાળાની સામે કલાકોના કલાકો બેશીને મારા હૈયાનો હાર જે ચકુવાક તેના સામુ એકીટશે નિહાળી રહેતી.

૪૬૪–૪૬૬. એવે કાર્ત્તિકી પૂર્ણિમા આવી, એ કૌમુદીપર્વ તરીકે મનાય છે. તે પર્વને મોટા આનંદનો દિવસ ગણવામા આવે છે. હિંસક ધંધા કરનારાઓનાં હાટ બંધ રહે છે અને કષ્ટ કરીને આજીવિકા કરનારાઓને વિશ્રાંતિ મળે છે. ધર્મનિષ્ઠ મનુષ્યો તપ, જપ, દાન, પુણ્ય આદિ કરીને પોતાના જન્મને સફળ કરવા પ્રયત્ન કરે છે.

૪૬૭–૪૭૨. એ દિવસે મેં પણ મારા માતાપિતાની સાથે ઉપવાસ કર્યો. સંધ્યાકાળે ચાતુર્માસિક પ્રતિક્રમણ કરીને બધા આત્માઓની સામે જાણ્યેઅજાણ્યે થએલા અપરાધ માટે મનોભાવે ક્ષમાપ્રાર્થના કરી. સવાર થતાં મેં ઉપવાસનું પારણું કર્યું અને પછી મારી હવેલીની અટારીએ ચઢીને આનંદી નગરની શોભા નિહાળવા લાગી. કળાકુશળ કારીગરોએ ચીતરેલા થાભલાઓ વડે હવેલી આકાશ સુધી ઉંચી શોભી રહી હતી. મુખ્ય દરવાજા ઉપર પાણીએ ભરેલા સોનાના કળશ મુકવામાં આવ્યા હતા, જે જાણે દાનની ઘોષણા કરતા હોય તેવા દેખાતા હતા; અને એથી લોક જાણી લેતા કે આ હવેલીમાં રહેનાર ગૃહસ્થ પુષ્કળ દાન કરનાર છે અને ખરેખર તે દિવસે અમારે ત્યાં પુષ્કળ જ દાન

---

૧ દિવસમાં એક જ વાર અને તે પણ માત્ર લુખૂં સૂકૂં અન્ન જમવું તેને જૈનધર્મમાં આચામ્લ અથવા આયંબિલ વ્રત કહ્યું છે.

કરવામાં આવ્યુ સોનુ, ચાંદી, ગાય, કન્યા, ભૂમિ, શયન, આસન આદિ જેને જે જોઈતું હતું તેને તે આપવામા આવ્યુ

૪૭૩-૪૭ તેની સાથે નગરમા જેટલા જિનમંદિરો (મંદિરો) હતા તે પણ ખૂબ શણગારવામા આવ્યા અને સુવ્રતી સાધુસંતોને સ્વીકારવા લાયક વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન, આસન આદિ વસ્તુઓનુ પણ સદ્ભાવપૂર્વક દાન કરવામા આવ્યું મંદિરોમા બિરાજમાન જિનેશ્વરદેવની મૂર્તિઓ આગળ સોના અને રત્નના ભેટણા મુકયા

૪૭૭-૪૮૦ દાનનુ સદા ફળ મળે છે, સારા દાનનુ સારૂ ને નબળાનુ નબળુ જ્ઞાની અને તપસ્વી સાધુઓને દાન દીધાથી હમેશા સારૂ ફળ મળે છે એ વડે આ જીવનના દુ ખ ટળે છે ને પેલા જીવનમા સારે ઘેર જન્મ મળે છે, જેથી આત્માની ઉન્નતિ કરવાનો અવસર મળી શકે છે સત્પુરૂષોની આ રીતે દાન વિગેરે દ્વારા કરેલી સેવાથી નિર્વાણનો માર્ગ સહજે જડી આવે છે

૪૮૧-૪૮૩ પણ જો રાજાના શત્રુને, ચોરને, જુઠ્ઠાને અને વ્યભિચારીને દાન અપાય તો તેનાં ફળ ખોટા પમાય આ પ્રકારે દાનનો વિવેક કરી અમે અમારે ઉદાર હૃદયે માત્ર આપણા ધર્મના સાધુઓને જ નહિ, પણ બ્રાહ્મણો અને ભિક્ષુકો વગેરે બીજા પણ બધા પ્રકારના દાનાર્થીઓને પુષ્કળ દાન આપ્યા ટુંકામા કૌમુદીપર્વ એ અમારે માટે તો પૈસાની કોથળી છોડી મુકવાનો, દાન આપવાનો અને પવિત્રતા ખીલવવાનો મહાન્ દિવસ હતો

૪૮૪-૪૮૭ સાંજ થઈ અને મે નગરની ઉંચીનીચી છબિ નિહાળવા માંડી; સૂર્યભગવાને પોતાના કિરણની જાળ સંકેલી લીધી ને પોતે અદૃશ્ય થઈ ગયા તેમની સવારની રાણી પ્રભાતદેવીની સાથે રઝીરઝીને એ કંટાળી ગયા હતા ને ફીક્કા પડી ગયા હતા અને સાંજની રાણી સંધ્યાદેવી પાસે તેના શાન્તિનગરમા જઇ રહ્યા લોક એમ પણ કહે છે કે આકાશના આટલા લાંબા પ્રવાસને લીધે થાકયાથી રાતાં-સોનેરી-કિરણોની-માળા-પહેર્યા વીરની પેઠે ધરતીમાતાને ચરણે લીન થઇ ગયા, અને પછી અંધારેલીટી રાત્રિએ આ જીવનને પોતાની અંદર વીંટી લીધા

૪૮૮-૪૯૧ હવે, અમારા ઘરના મુખ્ય દરવાજા આગળ જે એક સુંદર આ ગૃહ આવેલુ હતું તે અમારી હવેલીનો અને ખરી રીતે તે આખા રાજમાર્ગનો શણગાર ગણાતું એ આગળમા અતિ મૂલ્યવાન્ તાજીમા જડીને મે મારી દાસીઓ લોકોને લેવાને માટે મુકી, અને એની સંભાળ રાખવાને મારા સુખદુ ખની અભિપ્રેત, મારી બહેની સખી સારસિકાને પાસે ઉભી રાખી, એવી કામનાથી કે પૂર્વજન્મના સ્વામી, જે જરૂર તે વખતે મનુષ્યજન્મમાં આવ્યા હતા, તેમને ખોળી કાઢ્યા મારા ઘરનાં કે બહારના માણસોમા મર્મ જાણી લેવામા ને પરીક્ષા કરવામાં એના જેવુ કોઇ ચતુર નહોતું મે એને કહી રાખ્યું હતું કે

૪૯૨–૫૦૫. 'માણુસના અંતરને તેના શબ્દો ઉપરથી અને હાવભાવ ઉપરથી કેમ પારખી કાઢવું એ તું તો સારી રીતે જાણે છે. તેથી મારા જીવનને સુખી કરવાને મારૂં કહેવુ સાભળઃ જો મારા તે વખતના સ્વામી આપણા નગરમાં જ જન્મ્યા હશે તો તો બીજા બધા લોકની પેઠે એ પણ ફરવા જરૂર આવશે અને આ ચિત્રો જોશે, અને જોશે ત્યારે અમારો પાછલો ભવ યાદ આવશે. કારણ કે જે માણસ સુખદુઃખમાં સ્નેહી હોય છે, તેણે ગમે એટલો લાંબો વિજોગ સહ્યો હશે તો ય એને એવાં ચિત્રો ઉપર આખ પડતાંની સાથે જ બધું યાદ આવે છે, અને હૈયામાં છુપાઈ રહેલો ઉભરો આંખમાં તરી આવે છે. અસંસ્કારી માણુસની આખ કઠણ હોય છે, મિત્રની આંખ ખુલ્લી અને શુદ્ધ હોય છે, સાચા માણુસની આંખ દૃઢ હોય છે, બેદરકારી માણુસની આખ ઢીલી હોય છે, દયાળુ માણુસ બીજાનું દુઃખ જુએ છે ત્યારે એને દયા ઉપજે છે, અને જ્યારે એ પ્રસંગ એના પોતાના જ જીવનનો અનુભવ હોય છે, ત્યારે તો એથી યે વધારે એને લાગી આવે છે! ત્યારે તો જાણે એની છાતીમાં બાણુ વાગ્યુ હોય એમ એને લાગે છે! વળી લોક કહે છે કે જેને પાછલો ભવ યાદ આવે છે એ ગમે એટલો બળવાન હોય તો ય મૂર્છા પામે છે. તેથી મારા સ્વામીને પોતાના પાછલા ભવનું શોકભર્યું સ્મરણ આ ચિત્રોથી જાગશે કે તરત જ મૂર્છા પામશે. પછી જ્યારે એમને ભાન આવશે ત્યારે હૃદયે અને આંસુભરી આંખે કોણે આ ચિત્રો ચીતર્યાં એમ અધીરાઈથી પુછવા માંડશે. ત્યારે તારે ખાત્રીથી માનવું કે એ જ મારા ખોવાયલા ને મનુષ્યયોનિમાં હાલ અવતરેલા સ્વામી છે. તેમનો દેખાવ અને હાવભાવ તું ધ્યાન દેઈને નિહાળી લેજે અને એમનું નામઠામ જાણી લેજે અને પછી બધી વાત મને સવારમાં કહેજે અહા! એમને ફરીથી મળીને મારૂં બધું દુઃખ વામીશ અને એમને ભેટીને મારો સ્નેહ તાજો કરીશ! પણ અરેરે! જો એ ના જડ્યા તો! મારે સાધ્વી થઈને નિર્વાણને માર્ગે ચાલવા નિકળી પડવું. સ્વામી વિના અને છેવટની સીમાએ જલદી પહોંચવાની આશા વિના જીવતર ગાળવું એમાં જ નવા નવા અવતાર ધરવાનું અનંત દુઃખ છે.'

૫૦૬–૫૦૮. એમ પતિ સાથે ફરી સંજોગ થાય એ કામનાએ મેં સારસિકાને બહુ બહુ સૂચનાઓ આપી ને પછી ચિત્રો સાથે એને વિદાય કરી. અને હવે તો સૂર્ય પૂરેપૂરો આથમી ગયો હતો અને સૌને ઢાંકી દેનારી રાત્રિ આવી હતી. આપણા ધર્મ પ્રમાણે પર્વને દિવસે હમેશના સુવાનાં ખંડમાં સુવાને બદલે પોષધ લેવાના ખંડમાં જમીન ઉપર જ સૂવું જોઈએ તે રાત્રે રાત્રિજાગરણ કરવું જોઈએ અને પ્રભુનું ધ્યાન ધરવું જોઈએ; એ પ્રમાણે હું પણ પોષધ લેવાના ખંડમાં ગઈ અને મારાં માબાપ સાથે જિનપ્રભુની સ્તુતિ–વંદના કરીને દૈવસિક અને ચાતુર્માસિક પાપમાંથી મુક્ત થવા માટે પ્રતિક્રમણ કર્યું.

૫૦૯–૫૧૨. એ બધું કરી રહ્યા પછી હું સ્થિરભાવે ભોંય ઉપર ઉંઘી ગઈ.

એ ઉંઘમાં મે, જાણે હુ પર્વત ઉપર ચઢીને ભમતી હોઉં, એવુ સ્વપ્ન જોયુ જ્યારે હુ જાગી ત્યારે મે મારા પિતાને પુછ્યુ કે–'આવા સ્વપ્નનુ ફળ શું?'

પર૩–પર૩ ત્યારે મારા પિતાએ ઉત્તર આપ્યો –'સ્વપ્નશાસ્ત્ર પ્રમાણે એવુ સ્વપ્ન સદ્ભાગ્ય સૂચવે છે સ્વપ્નવડે માણસનો આત્મા સદ્ભાગ્ય કે દુર્ભાગ્ય, આનદ કે શોક, જીવન કે મરણ આગળથી જાણી શકે છે કાચુ માસ, લોહીભર્યાં ઘા, હાથ પગ ભાગવો, વેદનાની ચીસ, અને આગનો ભડકો એવા એવા સ્વપ્ન નઠારા ફળની સૂચના આપે છે, પણ હાથી ઉપર કે બળદ ઉપર કે મહેલ ઉપર કે પર્વત ઉપર કે દૂધાળા ઝાડ ઉપર ચઢવુ એ આવતા ભાગ્યની સૂચના આપે છે અને સ્વપ્નમા સમુદ્ર કે નદીને જે ઓળગી જાય છે તેના દુ ખ નિશ્ચય ટળે છે વળી જાતિ ઉપર પણ ઘણો આધાર રાખે છે કોઇને સ્વપ્નમા નરજાતિની કે નારીજાતિની વસ્તુ મળે કે ખોવાય તો ધારેલો લાભ કે હાનિ થાય ટુકામા માણસ જે સારાની આશા રાખે છે કે જે નઠારાથી ડરે છે તે સ્વપ્ન ઉપરથી જાણી શકાય છે અને સ્વપ્નમા ફળવાના ફળ ક્યારે ફળે છે એ સ્વપ્નના સમય ઉપરથી નક્કી થાય છે જો સ્વપ્ન સમીસાજે ઉંઘ આવતા જ આવે તો તેનુ ફળ છ મહિને ફળે, જો મધ્યરાતે આવે તો તેનુ ફળ ત્રણ મહિને ફળે, જો બ્રાહ્મમુહૂર્તે એટલે કે ગાયો ચરવા નિકળે તે સમયે સ્વપ્ન આવે તો દોઢ મહિને ફળે અને જો સવાર થતા આવે તો તરત ફળે છેવટે કહેવાનુ એટલુ જ કે સારે શરીરે આવેલા સ્વપ્નો જ ભવિષ્ય સૂચવે છે પણ એથી વિરૂદ્ધના સ્વપ્નોનુ ફળ કઈ જ નથી જ્યારે કન્યા પર્વત ઉપર ચઢ્યાનુ સ્વપ્ન જુવે ત્યારે ધાર્યો પતિ મળે, અને બીજાને એવુ સ્વપ્ન આવે તો ધાર્યું ધન મળે મારી દિકરી! સાત દિવસની અદર તારૂ સદ્ભાગ્ય ખુલશે.'

પર૪–પર૮ મારા પિતાના આ વચનથી મને વિચાર ઉઠ્યો કે મારા હૈયામા જેને માટે કામના છે, તેના સિવાય બીજા પુરૂષ સાથે મારાથી રહી શકાય નહિ મારી ગુપ્ત કથા તો મારા માબાપથી સતાડી રાખવાનો મે ઠરાવ કર્યો તેથી સાર સિકાની વાટ જોતી આખી રાત હુ ત્યા પોષધશાળાના ખડમા બેસી રહી અને પછી વિચારમા ને વિચારમા જિનપ્રભુનુ ધ્યાન ધરતી બિછાનામાથી ઉઠી ઉભી થઈ અને રાત્રિ પ્રતિક્રમણ કર્યું સૂર્યોદય થયા પછી દાતણ કર્યુ ને ત્યાર પછી મારા માબાપથી છુટી પડીને ધીરે ધીરે ઉપર ચાલી ગઇ

પ૨૯–પ૩૨ પછી અમારી હવેલીની અગાશી ઉપર હુ ચઢી, છેક એની ફરસ ઉપર સુદર ચિત્રો ચીતર્યાં હતા અને તેમા મૂલ્યવાન હીરા મોતી જડયા હતા મારૂ તુટી પડે એવુ શરીર માત્ર આશાને લીધે જ ટટાર ચાલી શકતું હતું એવામા સૂરજ ઉગ્યો, એના કિંશુકપુલના જેવા લાલ કિરણો પૃથ્વી ઉપર પથરાઈ રહ્યાં અને પછી દૂર દૂર સુધીની પૃથ્વી કેશર રંગે રગાઇ ગઇ સર્વ જગતને એણે જગાડ્યુ અને રાત્રે બીડાઇ ગયેલા કમળોને ખીલવ્યા

૫૩૩–૫૩૪. એવે સારસિકાએ પણ દેખા દીધી. ઉતાવળે ઉતાવળે એ મારી પાસે આવી અને સ્નેહભરી દૃષ્ટિએ એણે મને આવતાની સાથે જ હૈયા સાથે ચાંપી લીધી. પછી આનંદી મ્હોંએ કુતેહ મળ્યાના સર્વ સમાચાર આપ્યા. એના બોલમાં જ કંઈક અનેરી મિઠાશ હતી. એણે હાંફતે હાંફતે કહેવા માંડયું:

૫૩૫–૫૩૬. 'બહુ દિવસથી ખોવાયલા તારા સ્વામી જડ્યા છે. વાદળાં વિનાની શરદ્‌ઋતુની રાત્રિનો ચંદ્ર જાણે પ્રકાશતો હોય એવું એમનું મુખ પ્રકાશે છે. બેન, હવે ધીરજ ધર. તારી આશા હવે થોડા જ વખતમાં ફળીભૂત થશે.'

૫૩૭–૫૩૮ આ શબ્દો સાંભળ્યા કે તુરત જ હું તો સુખના વરસાદમાં નવાઈ ગઇ, મહાનંદે સારસિકાને ભેટી પડી. પછી મે પુછ્યું: 'ઓ વહાલી સખી, મારા સ્વામીનું સ્વરૂપ તો અત્યારે ફરી ગયું હશે, તો ય તેં એમને શી રીતે ઓળખી કાઢ્યા?'

૫૩૯–૫૬૨. ત્યારે એણે ઉત્તર આપ્યો: "પ્રિય સખી, કેવી રીતે તારા સ્વામી જડી આવ્યા તે વિગતવાર કહું, તું સાભળ તેં ચોકસી રાખવાની જે જે સૂચનાઓ સંધ્યાકાળે આપી હતી, તે સાભળી લેઈ હું છબિઓ લઈ ચાલતી થઈ હું એ છબિઓ ચોતરા ઉપર ગોઠવી રહી તેવે સમયે, રાત્રિએ ખીલતાં પદ્મનો મિત્ર જે ચંદ્ર તે ઉગ્યો. પ્રકાશને ફેલાવતો રાત્રિનો પ્રિયજન, કામદેવનો વહાલો, એ ચંદ્ર ધીરે ધીરે ઉપર ચઢવા લાગ્યો. સરોવરના જળ પર જેમ ખીલેલું કમળ તરે તેમ એ આકાશપટમાં ખીલીને તરવા લાગ્યો. તેવે રાજમાર્ગ ઉપર સુંદર ગાડીઓમાં બેશીને ધને મદમત્ત નગરજનો જાણે રાજા હોય તેમ ફરવા નિકળ્યા. રાતની શોભા જોવાને આતુર સ્ત્રીઓ ગાડીઓમાં બેશી નિકળી. પગે ચાલતા જુવાન પુરૂષો જુવાન સ્ત્રીઓ સાથે હાથેહાથ ભીલાવીને હૈયેહૈયાં મિલાવી આમ તેમ ચાલતા દેખાયા. આનંદે ઘેરાયલાં લોકના ટોળા સામે આવતાં, ટોળામાં મળી જતાં ને પછી પાછાં વળી સાથે ચાલતા. ટુંકામાં, ચોમાસામાં પાણીનો પ્રવાહ નદીનું રૂપ ધારણ કરીને જેમ સમુદ્ર તરફ વહે છે, એમ રાજમાર્ગ ઉપર લોકનો પ્રવાહ વહેવા માંડચો. જે ઉંચા હતા, તે સહજે જોઇ શકતા, પણ જે નીચા હતા તેમને પગની આંગળીઓનાં ટેરવાં ઉપર ઉંચું થવું પડતું. ઘણા ભીડમાં ભચડાતા અને ખાસ કરીને જાડા તો એથી ચીસો પાડતા રાત કેમ ચાલી જાય છે એની કેટલાક માણસો પોતાના ફરવા આગળ પરવા કરતા નહોતા, પણ કેટલાક પોતાના ફાનસમાં અર્ધ ઉપર બળી ગએલી દિવેટો તરફ આંખ રાખ્યા કરતા; અને રાત જેમ જેમ જતી ગઇ તેમ તેમ લોકની આખ ઉંઘે ઘેરાતી ગઇ; અને તેમની આતુરતા ઓછી થતી ગઇ; તેથી ભીડ પણ ઓછી થતી ગઇ; અને આખરે થોડા જ લોકો છબિઓ પાસે આવવા લાગ્યા. પણ હું લોક તરફ અને વખત જોવાને દીવા તરફ જોતી હતી, તેવામાં અકસ્માત્ સરખી વયના પોતાના મિત્રોના ટોળા વચ્ચે ચાલતો એક યુવાન પુરૂષ ત્યાં આવી પહોચ્યો અને છબિઓ જોવા લાગ્યો. કાચબાના પગ જેવા એના પગ મૃદુ હતા, પગની પિંડીઓ ઘાટદાર હતી, એની જાંગો મજબુત હતી, એની છાતી સપાટ વિશાળ અને

માસ ભરી હતી, તેના હાથ લાબા ગત્ર અને બળવાન હતા પોતાના મિત્રોના મુખને કમલ ફુલોની પેઠે ખીલાવતો અને તેમની વચ્ચે ચ દ્રનો જાણે બીજો ચદ્ર આવ્યો હોય એમ એ ચદ્રથી યે વધારે સુદર શોભનો હતો એની જુવાની ની સુદરતા અને મૃદુતા એવી તો ભવ્ય હતાં કે જુવાન સ્ત્રીઓ એને ચ્નેહ્યથી જોઇ રહેતાં ખરખર એવી તો એકેય સ્ત્રા નહીં હેય જેના હૃદયમા આ પુરૂષ પેસી ન શકે લોક તો બોલવા લાગ્યા કે ગમે તો એ દેવલોકનો પુરૂષ હોવો જોઇએ કે ગમે તો એ પોતે જ એકાદ દેવ હોવો જોઇએ એ છબિઓને થોડી વાર જોઈ રહ્યો અને પછી એમા પ્રકટ થતી ઉત્તમ કળાના વખાણ કરતો બોલ્યો

૫૬૨-૫૭૭ 'અહીં આ રેતીના બે કિનારા વચ્ચે નીચાણમા વહેતી ને ભમરા ઉડાવતા મોજાવાળી ચચળ ગગાને કેવી સુદર ચીતરી છે! કમળભર્યા તળાવવાળુ અને વિવિધ ઝાડોથી ઉચુનીચુ દેખાતુ આ વન કેવું સુદર છે! વળી શરત્, શીત, વસત, ગ્રીષ્મ વગેરે ઋતુઓ વનફળ અને વનફુલ વડે કેવી આરોગ્ય બનાવી છે! અરે, અને આ બે સ્નેહને પાજરે પુરાયલા ચકવાક જીવનના સમસ્ત પ્રવાહમા કેવા સુદર રીતે એક બીજાની સાથે જડાઈ ગયા છે! અહીં તેઓ પાણી ઉપર સાથે તરે છે, તહીં રેતીના કિનારા ઉપર સાથે આરામ લે છે, પણે આકાશમા સાથે ઉડે છે અને વળી પણે કમળફુલોની વચ્ચે સાથે જ બેસે છે, સદા અને સર્વત્ર તેઓ એક બીજા સાથે અચળ સ્નેહમા કેવા જડાઈ રહ્યા છે! ચકવાકની ગરદન ટુકી ને સુદર છે અને એનો રગ કિશુક ફુલના જેવો લાલચટક છે વળી મૃદુ અને ટુકી ગરદનવાળી ચકવાકી તેના રગને લીધે કોરેત ફુલના જેવી લાગે છે અને એ ચકવાકની પાછળ કેવી ચાલે ચાલી રહી છે આ હાથી પણ કેવો સુદર ચીતર્યો છે! એ એની નાતના મુખી જેવો લાગે છે અને ઘાડા વનમા પોતાનો માર્ગ કરવાને માટે ઝાડના ડાળ તોડી પાડનો ચાલે છે નદીમા નાહવાને હોસે હવે તે નીચે ઉતરે છે હવે અહીં એના ભવ્ય શરીરને લેઇને એ પાછો નિકળે છે ત્યા તે શિકારી એના ઉપર બાણ તાકે છે પહોળે પગે ઉભો રહીને એ ધનુષ ઉપર બાણ ચઢાવીને કાન સુધી ખેચે છે પછી બાણ છોડે છે—આ પણ બહુ સુદર ચીતર્યું છે—પણે ડાગરના કણુમના જેવા કે કમળના તતુ જેવા રાતાશ રગે ચળકતો ચક્રવાક ઉડે છે અને એ બાણ એને વાગે છે અરે જુઓ, આ ચક્રવાકી સતાપને લીધે વિલાપ કરે છે કારણ કે પારધિએ તેના પતિના જીવનનો અને સ્નેહનો નાશ કર્યો! એ પોતાના સ્વામીની પાછળ પડે છે અને અનત વેદનામા બળી મરે છે ખરેખર! આજના ઉત્સવમાં જે કઇ જોવા જેવુ છે એમાં આ ચિત્રો સૌથી સુદર છે, પણ આ ચિત્રોની બધી હારને અનુક્રમે જોવી જોઇએ'

૫૭૭-૫૮૫ આમ બોલતાંની સાથે જ એ સુદર પુરૂષ ચિત્રો સામે આશ્ચર્યથી જોઇ રહ્યો હતો એટલામા બેભાન થઈ ધરતી ઉપર ઢળી પડ્યો વાસ ઉપર બાંધેલી ધજાની દોરી કપાતા જેમ પળ બળ દઇને જમીન ઉપર પડી જાય એમ એ ઢળી

અને ધંધો વગેરે ચોકસાઇથી પુછી લીધું અને એ બધી હકીકતોથી જ્યારે મને પુરો સંતોષ થયો ત્યારે ઉતાવળે પાછી આવતી રહી.

૬૨૫–૬૨૮. એવામાં નક્ષત્રો, ગ્રહો તેમ જ ચંદ્ર પણ એકેએકે કરી અદૃશ્ય થઇ ગયા અને ફુલો–ચુંટી–લીધા તળાવ જેવું આકાશ કોરૂં થઇ ગયું. અને પછી સઘળા જીવજંતુનો જે મિત્ર અને દિવસનો જે પ્રભુ સૂર્ય તે બધુજીવ (બપોરીઆના) ફુલના જેવો લાલ રંગે ઉગી નીકળ્યો. ચારે દિશાઓ સૂર્યથી સોનારંગે રંગાઇ ગઇ તે જ વેળાએ તને બધા સમાચાર આપવાની આતુરતાએ હું તારી પાસે દોડતી આવી. તારો સ્વામી જણાની જે જે બધી હકીકત મેં જોઇ જાણી તે બધી મેં તને આ રીતે કહી દીધી છે અને મારા ઉપર જે વિશ્વાસ તેં મુકયો હતો તે આજે સફળ થયો છે; એવી લાગણી અત્યારે હું અનુભવું છું."

૬૨૯. (સાધ્વી તરંગવતી પોતાની કથા શેઠાણી પાસે વળી આગળ ચલાવે છે) મારી સખી પોતાની વાત પુરી કહી રહી એટલે હું અધીરી થઇને બોલી: 'પણ એમના માબાપનાં નામ ને વ્યવસાય તો મને કહે '

૬૩૦–૬૩૫. વળતી સારસિકા બોલી: 'એનો પિતા ધરતી અને સાગરના ખજાનાનો ધણી છે. ખુદ હિમાલય પણ એના જેટલો અચળ નથી. વળી એણે ધરતીને ધર્મશાળાઓ અને આનંદશાળાઓથી એવી તો શણગારી દીધી છે કે તેનું નામ જેમ મોટા વ્યાપારી તરીકે તેમ જ મોટા ધર્માત્મા તરીકે પણ ચારે દિશામાં પ્રખ્યાત થઇ ગયું છે. એ શેઠનું નામ ધનદેવ છે. શેઠનો આ પુત્ર ઘરડાં અને જુવાન સૌને વહાલો છે અને એનું નામ પદ્મદેવ છે. એ કામદેવ જેવો સુંદર છે અને વળી પદ્મ જેવો મનોહર છે.'

૬૩૬–૬૩૯. સખીએ જે બધા સમાચાર આપ્યા તેથી મારા કાનની સ્નેહભરી ઉત્કંઠા તૃપ્ત થઇ. છતાં યે સારસિકાની આંખ અને કાનને ધન્યવાદ દેતી હું બોલી–'તું બેન ભાગ્યશાળી કે તેં મારા સ્વામીનાં દર્શન કર્યાં ને એમના વેણ કાનોકાન સાંભળ્યાં' પછી મારી પાસેથી એ ચાલી જતી હતી ત્યારે પણ મેં મારા આનંદના આવેગમાં કહ્યું: 'મારો શોક હવે ટળ્યો છે અને આનંદ ઉભરાયો છે, કારણ કે મારા સ્વામી મને આસક્ત છે'.

૬૪૦–૬૪૨. પછી મેં નાહી લીધું, પંખીઓને દાણા નાખ્યા, જિનપ્રભુની પૂજા કરી અને પારણાં કરીને ઉપવાસ પૂરો કર્યો. ત્યારપછી ઉપવાસે અને પારણાએ થયેલા શ્રમથી આરામ લેવાને કાજે શેતરંજી–પાથર્યા અને પવને–ઠંડા–થયા ખંડમા ગઈ. ત્યાં સ્વામીને મળવાની હજારો આશાઓ હું ઘેરાઇ ગઇ અને એમના સ્નેહથી વિખુટી પડી અનેક વિચારોમાં વખત ગાળવા લાગી.

૬૪૩-૬૪૭ એવે સારસિકા પાછી આવી, એનો શ્વાસ તો જાણે માતો જ નહોતો અને આંખોમાથી બોર બોર જેવ । આંસુ જતા હતા એ બોલી "સવમા ય શેઠ ધનદેવ પોતાના મિત્રો અને સબધીજનોને લેઇને (તારા પિતા) નગરશેઠ પાસે આવ્યા અને સ્પષ્ટ શબ્દોમા એમને કહ્યુ 'તમારી દીકરી તરંગવતીનુ મારા દીકરા ધનદેવ માટે માગુ કરૂ છુ, બોલો, કેવો આંકડો આપને જોઇશે?' પણ નગરશેઠે અસભ્યતાભર્યા આ શબ્દો એમને સભળાવી દીધા

૪૮- ૫૦ 'જે ધણી વેપારને કારણે હમેશા પરદેશમા રહે, કદી ઘેર રહે નહિ અને તેથી કરીને દાસીઓની સાથે રમ્યા કરે, એવા માણસને મારી આવી કન્યા ને શી રીતે સોપુ? એને તો સદા પ્રોષિતભર્તૃકાના જેવા વાળ રાખવા પડે અને (બીજી સ્ત્રીઓની પેઠે) શણગાર સજવાના કદી પ્રસગ જ નહિ આવે સ્વામીથી વિખુટી પડેલી એને ભીની અને રાતી આંખે માત્ર કાગળો લખવામા ને સ્નાન કરવામાં વખત ગાળવો પડે આમ મારી દીકરીને વેપારીના ઘરમા પુષ્કળ ધન હોવા છતા મરતા સુધી વિધવાની દશા ભોગવવી પડે, એના કરતા તો ભીખારીને આપવી સારી પછી ભલેને એવા નાવણીઆ, શણગાર, સુગધી પદાર્થો અને એવા સુદર સોહાગ એને ના મળે'

૬૫૩ સારસિકાએ કહેવા માડયું કે આમ એમણે એ શેઠનુ માગુ તુચ્છકાર્યું અને (વાતચિત્તમા) સભ્યતા, મિત્રતા અને માનવૃત્તિ અશક્ય થઈ પડી તેથી તે શોકાતુર થઈને ચાલી નિકળ્યા

૬૫૪-૬૫૫ મારી સખીએ આણેલા આ સમાચારે શિયાળાનો હિમ જેમ કમળની દાડીને ભાગી નાખે એમ, મારા મનોરથને મૂળથી ભાગી નાખ્યો મારૂ સર્વ ભાગ્ય થા યુ ગયું મારૂં હૈયું એકવાર તો આનદને બદલે પાછુ શોકથી ભરાઈ ગયું અને આંસુભરી આંખોએ મે મારી રોતી સખીને કહ્યુ

૬૫૬-૬૫૮ "મારો સખા જાણે વાગે જીવી શક્યો નહિ, તેથી હુ પણ જીવી શકી નહિ એ જીવે તો જ મારાથી જીવાય પક્ષીના ભવમા પણ હુ એની પાછળ મૃત્યુમા પેઠી! ત્યારે આ આ માનવભવમા એમના વિના-મારા સ્નેહી વિના હુ શી રીતે જીવી શકુ? જા, સારસિકા, અને એમને આ પત્ર આપ, વળી કહેજે કે:

૬૫૯-૬૬૦ 'થરથરતી આંગળી વડે ભોજપત્ર ઉપર લખેલો આ પત્ર સ્નેહની સુદર કથા કહેશે એ છે તો ટુકો, પણ અદર હકીકત મહત્ત્વની છે તમને આપવા એ પત્ર મારી સખીએ આપ્યો છે'

૬૬૧ અને એમના આત્માને આધાર આપવાને માટે વળી આ સ્નેહશબ્દો એમને કહેજે

૬૬૨–૬૬૫. 'તમો સ્વામીને અનુસરવાને માટે જેણે ચક્રવાકીના ભવમાં પોતાનું જીવન સમર્પી દીધું, તે આજે નવે અવતારે નગરશેઠની કન્યા થઇને અવતરી છે. તમને શોધી કાઢવાને જ ચિત્રમાળાનું પ્રદર્શન કર્યું હતું. જેટલામાં તમે એની પાસે આવ્યા કે એની કામના પુરી થઈ. અરે, ગયા ભવમાં ખોવાયેલા અને ફરી પાછા આજે મળી આવેલા પ્રિયતમ! આપણુને ગયા ભવમા એકરૂપ કરનારો સ્નેહસંબંધ હજી યે હોય, તો તમારા જીવનને બાળવી રાખો અને તમારી સાથે મારા જીવનને પણ બચાવો!"

૬૬૬. 'વળી અમને એકસૂત્રે બાંધનારો સ્નેહ પરિપૂર્ણતાએ પામે ત્યાં સુધી સૌ ગુપ્ત રાખવાની એમને સૂચના આપજે.'

૬૬૭–૬૬૯. આ અને એવી બહુ બહુ વાતો મેં ભારે હૈયે સારસિકાને કહી ને પછી કાગળ આપીને વિદાય કરી. (અને છેવટે મેં એને સોગન દેઈ કહ્યું:) 'અમે બે સ્નેહસંબધે જોડાઇશું' એવા સમાચાર ગમે તે રીતે જરૂર લાવજે. મેં તને કહી ન હોય કે કાગળમાં લખી ન હોય, એવી સૌ વાતો મારા વ્હાલની હોય તે, એમને કહેજે.'

૬૭૦–૬૭૧. પછી મારી એ સારી સખી મારા સ્વામી પાસે પત્ર લઇને ગઇ ને સાથે મારા હૃદયને પણ લેતી ગઇ. એની ગેરહાજરીમા ચિંતાએ કરીને મેં નિશ્ચય કર્યો·

(અહીં મૂળ ગ્રંથમા દા શ્લોક ૬૭૧ ઉ. થી ૬૭૭ ખુટે છે.)

૬૭૮–૬૮૦ (સખી પાછી આવી અને મને કહેવા લાગી·–) "સખી, તારી પાસેથી પત્ર લઇને હુ નિકળી એટલે નગર વચ્ચે આવેલા રાજમાર્ગ ઉપરની સુંદર હવેલીઓ પાસે થઈને ચાલી. અનેક ચકલાં વટાવીને હું એક મહેલ પાસે આવી ઉભી, વૈશ્રવણ (કુબેર) અને શ્રી જાણે ત્યા એકઠા થયા હોય એવો એ મહેલ લાગતો હતો. ભારે હૈયે હું તો દરવાજા પાસે આવી ઉભી. ત્યાં ચોકીદાર હતો તેણે અનેક જતીઆવતી દાસીઓમાંથી પણ મને ઓળખી કાટી કે આ કોઇ અજાણ્યું માણુસ છે; અને મને વાતે વળગાડીને પ્રશ્ન કર્યો કે 'તું ક્યાંથી આવે છે?' સ્રીઓને વાતો ઉડાવી દેતાં આવડે છે, તેથી મેં જુઠું જ કહ્યુ, કે 'હું અજાણી છું એ તમે સાચે જ પારખી કાઢ્યું છે, પણ મને તમારા મહેલના કુમારે બોલાવી છે.' ચોકીદારે (આનંદથી) કહ્યું: 'અહીં થઇ જનારઆવનાર કોઇ મારાથી અજાણ્યુ નથી!' તે ઉપરથી મેં એનાં વખાણ કરી કહ્યુ: 'જેને ઘેર દરવાજા આગળ તમારા જેવા ચોકીદાર હોય છે તે શેઠ સુખી છે (અને વળી કહ્યુ) હવે મને શેઠના પુત્રની પાસે લેઈ જાઓ.' એણે ઉત્તર વાળ્યો. 'બીજાની સ્રીઓ મારા ઉપર એવો વિશ્વાસ કરે ત્યારે તો એ કામ હું ખુશીથી કરૂં.' એવુ કહીને તેણે એક દાસીને ભલામણ કરી કે 'સૌથી ઉપરને માળે કુમાર પાસે આને લેઇ જા.' પછી દાસી સાથે હીરામોતીએ

જડેલા મહેલના સૌથી ઉપરના ભાગે હુ પગથારમા જઈ ઉભી ત્યાથી રાજમહેલમા લાબે સુધી નજર પહોચતી હતી દાસી મને રત્નજડિત આસન ઉપર બેઠેલા જુવાન પુરૂષને દેખાડી ચાલતી થઇ

૬૯૧-૭૦૯ વિશ્વાસ રાખીને હુ કુમારની પાસે ગઇ પાસે એક ભોળા જેવો બ્રાહ્મણકુમાર હતો, શેઠનો દીકરો ઢીચણ ઉપર મુકીને એક ચિત્ર જોતો હતો એની આખમાથી આસુ ઝરીને એ ચિત્ર ઉપર પડયુ, તે જેમ કોઇ કાગળમા થયેલી ભૂલ લુછી નાખે એમ એણે લુછી નાખ્યુ આમ એ તને-મળવાની-આશાભર્યો અને વળી તારા-વિજોગથી-ચિતાભર્યો હૈયે બેઠો હતો મે વિનયથી નમીને હાથ કપાળે અડાડી નમસ્કાર કર્યા અને કહ્યુ 'ઘણુ જીવો કુમાર'! તે સાભળી હાથમા વાકો દડ અને લાલચોળ જામા નીચે બ્રાહ્મ્ચર્ય છે જેની પાસે એવો પેલો મૂર્ખો અને બહુબોલો બ્રાહ્મણ ચીભડાના બી જેવા દાત કાઢી બોલી ઉઠયો 'મને બ્રાહ્મણને તે પહેલા નમસ્કાર શા માટે ન કર્યો? ને આ શૂદ્રને કેમ કર્યા?' ભયથી મારી ચુડી તો ખડથી સરી ગઈ, જાણે હુ પોતે સોય ઉપર પડી ગઈ, અને બોલી 'મહારાજ, નમસ્કાર તમને' હુ તરત જ પાછી ઉભી થઈ ગઇ ને બોલી 'સાપના જેટલી મને તમારી બીક લાગે છે, એણે બૂમ મારી 'શુ? મને તુ સાપ કહે છે?' મે ઉત્તર આપ્યો 'સાપ કહેતી નથી, હવે થયો સતોષ?' પણ એ બોલી ઉઠયો 'મને સાપ કહીને હવે ફરી જાય છે? યાદ રાખ કે હુ ઉચા બ્રાહ્મણકુળનો છુ, મારા પિતા હારિતગોત્રના કાશ્યપ છે, અને હુ છાદોગ્ય સપ્રદાયનુ મીઠુ ખાઉ ખાઉ છુ હજી તુ મને ઓળખતી નથી?' આમ એણે મને અનેક મહેણાટુણા સભળાવ્યા શેઠના કુવરથી આ સાભળ્યુ ગયુ નહિ તેથી તેણે એ બ્રાહ્મણને ખખડાવ્યો ને કહ્યુ 'અરે પાજી, પારકા ઘરની દાસીને આમ સતાવ ના તારો ખાલી બડબડાટ બધ કરી દે તુ મહા મૂર્ખ જ છે, બીજુ કાઈ નહિ' શેઠના કુવરે એને આમ ધમકાવ્યો એટલે પછી માત્ર દૂર રહીને મારી સામે આખો કાઢવા લાગ્યો ને બીજા એવા એવા ચાળા કરવા લાગ્યો, બીજુ એનાથી કશુ થઇ શક્યુ નહિ પછી એ ચાલતો થયો એટલે રાજી થઇને, પણ જાણે રડવા જેવી થઇ ગઈ હોઉ એમ, હુ બોલી 'ધન્ય પ્રભુ, એ ગયા'

૭૧૦-૭૧૬ "શેઠના એ કુવરે પછી મને પુછ્યુ 'સુદરી, તુ કયાથી આવે છે? તારે શુ જોઇએ છે તે જલદી બોલી દે'

'ત્યારે હુ બોલી 'હે કુળભૂષણ, અવગુણવિહીન, સદ્ગુણસપન્ન સકળહૃદય મોહન, મારો એક નાનોશો સદેશો સાભળો નગરશેઠ ઋષભસેનની સ્વર્ગની અપ્સરા સમાન કન્યા તરગવતીએ એ સદેશો મોકલ્યો છે તરગવતીએ પોતાના હૃદયની જે ઇચ્છા પોતાના ચિત્રમા ચીતરી છે, તે ઇચ્છા સફળ થવાની આશા રાખે છે પાછલા ભવનો (ચિત્રમા ચીતરેલો) સ્નેહબધ જો હજી યે રહેવાને હોય તો એનુ જીવન ટકાવવા

માટે એને તમારો હાથ આપો. આ સંદેશો મારે તમને આપવાનો છે. સંદેશાનો મર્મ તો (એના લખેલા) આ પત્રમાં તમે જોશો.'

૭૧૭–૭૨૧. "આ શબ્દો સાંભળી એના મોં ઉપર તો આસુનો પ્રવાહ વહેવા લાગ્યો અને એનું આખું શરીર થરથરવા લાગ્યું. આમ એણે પોતાનો સ્નેહ તો દેખાડી આપ્યો, પણ તરત કંઇ ઉત્તર દેઇ શકયો નહિ. કારણ કે ડુસકાંથી એનો સ્વર નિકળી શકયો નહિ. નિરાશાને દાબી દેવાને જે ચિત્ર એણે આંકયું હતું, તે પાછું આંસુથી ફરી પલળી ગયું. કંઈક શાન્ત થઇને એણે પત્ર લીધો અને જેમ જેમ એ પત્ર તે ધીમે ધીમે વાચતો ચાલ્યો તેમ તેમ એની આંખો રમવા લાગી. પત્રનો (ચતુર વાકયોએ લખેલો) ભાવ એ સમજી ગયો એટલે એ સારી રીતે શાન્તિ પામ્યો અને પછી દૃઢ, સ્પષ્ટ, રણકતે શબ્દે બોલ્યો:

૭૨૨–૭૨૪. "વિસ્તાર કરવાનું કારણ નથી. મારી શી દશા છે તે ટુંકામાં જ સાંભળ. જો તું આવી નહોત તો હું જીવી શકત નહિ. ઠીક પળે તું આવી પહોંચી છે ને હવે મને આશા પડે છે કે પ્રિયાને મળવાને કારણે જીવનમાં રસ આવશે. વળી તારા આવવાથી, કામદેવ પોતાના બાણુથી ઉંડા ને ઉંડા ઘા કર્યે જાય છે, તેની સામે રક્ષણ કરવાનું બળ હું પામ્યો છું.'

૭૨૫–૭૨૬. "ત્યાર પછી, તારાં ચિત્રે કરીને એને પાછલો ભવ જે યાદ આવેલો તેની સૌ કથા મને કહી બતાવી અને તેં મને જે કહેલી એને રજેરજ મળતી આવી. બાગના તળાવ પાસે ફરતાં ચકવાકને જોઇને તને તારો પાછલો ભવ જે સાભરી આવેલો તે કથા મેં પણ તેને વિગતવાર કહી સંભળાવી.

૭૨૭–૭૪૫. "એણે કહ્યું: 'અરેરે, (તારી સખીનાં) ચિત્રો જોઇને ત્યાં ને ત્યાં જ મારા હૈયામાં (વિજોગના) દુ:ખનો કાંટો ઉંડે સુધી પેશી ગયો, જેટલો અમારો સ્નેહ એકવાર ઉંડો હતો તેટલો જ ઉંડો એ કાંટો પેઠો. ઉત્સવ પુરો થતાં જેમ વાવટો જમીન ઉપર પડી જાય તેમ ઘેર જઇને હું પથારી ઉપર પડયો, ચારે બાજુ મારા મિત્રો વિંટાઇ વળ્યા ને એજ સ્થિતિમાં બાકીની રાત મેં ગાળી. કિનારા ઉપર આવી પડેલી માછલી જેમ તરફડે, તેમ હું સ્નેહદર્દે પીડાતો અને અસહાય નિરાશાએ હાંફતો પથારીમાં પડી રહ્યો. હું શૂન્યમાં તાકી રહેતો, આંખને અણુસારે ઉત્તર આપતો, વળી હસતો અને ગાતો અને વળી પાછો રોઈ પડતો મારા મિત્રો મારૂં સ્નેહદર્દ પારખી ગયા અને એમણે શરમ છોડીને મારી માતાને વાત ઉઘાડી પાડી કહ્યું કે જો તમે તમારા (પુત્ર) પદ્મદેવને માટે નગરશેઠની દીકરી તરંગવતીનું માગું નહિ કરો તો એ મરી જશે. મારી માતાએ આ વાત મારા પિતાને કરી. તે તુરત જ નગરશેઠને ત્યાં ગયા, પણ નગરશેઠે એમનું માગું તરછોડી કાઢયું. આથી મારાં માબાપે શાન્ત કરવાને પાધરૂં મને કહ્યું–કે તું કહે તેની સાથે તને પરણાવીએ, માત્ર એની વાત છોડ. આ વાત સાંભળીને હું એમને પગે પડયો, નમ્રતાપૂર્વક

હાથ જોડ્યા અને જમીને કપાળ અડાડ્યું, પછી સભ્યતાપૂર્વક બોલ્યો કે જેમ તમે કહેશો એમ કરવા તૈયાર છું, એનામાં એવું શું વધારે છે! આથી મારા માબાપ શાન્ત થયા અને એમની ચિન્તા ટળી પણ મે તો આપઘાત કરવાનો નિશ્ચય કર્યો હતો, કારણ કે મળવાની મારી બધી આશાઓ ભાગી પડી હતી અને દિવસે મારી યોજનાનો અમલ કરતા વખતે લોક મને અટકાવે એ બીકથી રાતે બધા ઊંઘી જાય ત્યારે આપઘાત કરવાનો સંકલ્પ કર્યો જીવવાની તૃષ્ણાથી મુક્ત થઈને અને મરવાને માટે તૈયાર થઈને આ બધા સંકલ્પવિકલ્પ કરતો હતો, એવામા જ તું આ સંદેશો લઈ આવી એથી મારા હૃદયમાં ઉત્સવ થયો ને મારા જીવનમાં અમૃત રેડાયું પણ તારી સખીનો શોકભર્યો કાગળ વાંચતા મારી આંખોમાંથી આંસુ નિકળી પડ્યાં ને મને બહુ દુ:ખ થયું તારી સખીને મારા તરફથી આટલું કહેજે જેને મરતા તું સતી થઈ અને જેને તે આટલે મૂલે ખરીદી લીધો છે તે તારો (ખરીદેલો) દાસ થવાનું સ્વીકારે છે તારા ચિત્રથી એને નો વાતો સાંભરી આવી છે અને જ્યાં સુધી તું એની થઈ નથી, ત્યાં સુધી એ દુઃખિયો છે, અને હવાં એ તારા પ્રેમની અને સ્નેહ પ્રમાણની જે આશાએ એને આજ આનંદ થઈ રહ્યો છે, અને એ આશાએ કરીને એ સુખિયો છે '

૭૪૬-૭૫૮ "આ સંદેશો આપ્યા પછી પણ એ મહાનુભાવે તારા સ્નેહની આશાઓ ઉપર બહુ સ્નેહવાળો કરીને મને બહુવાર ઉભી નાખી ને છેવટે—ના છુટકે—રજા આપી પણ પછી મહેલમાંથી બહાર નિકળતાં મને તો જાણે આકાશપાતાળ એક થઈ ગયાં ખરેખર, (તમે પિતાનો) નગરશેઠનો મહેલ બહાર કરવા (આખા રાજમાર્ગ ઉપર) એવો બીજો કોઈ મહેલ નથી હજી પણ એ ભવ્યતા, એ શોભા, એ આડંબર મારી આંખો આગળ તરી આવે છે, અને તારા પ્રિયની અતુલ સુંદરતા પણ ઝળકી આવે છે હવે એવું લખી આપેલો ઉત્તર તને આપું, એમાં એણે રને, અને આશાઓની ધારાઓ પ્રકટાવી છે "

(તરંગવતી હવે સાધ્વીરૂપે પોતાની કથા આગળ ચલાવે છે) જે પત્ર રૂપે મારા પ્રિય મારી પાસે આવ્યા હતા, તે પત્ર મે લીધો ને તેની ઉપરની મહોરને પટ ધ્યાસે ચુંબન કર્યું હજી તો ગણી આવ્યો એ મહોર ઉપર હતી અને કાનમાં મારી સખીના શબ્દો ઊતરતા હતા, તેવે જ વખતની પાંખડીઓ ઉઘડતાં જેમ અંદરથી તણખલું બહાર નિકળી આવે એમ મારા હૃદયમાં આનંદનો ફુવારો ફૂટ્યો તરત જ ને મહોર તોડી અને વાંચવાને આતુર થઈ કાગળ ઉકેલ્યો મારા પ્રિયતમના મૃત્યુ નિશ્ચયની વીગત જાણી અમારા ભાગ્ય બળની કથાનું એમણે મનન અને સમર્થન કર્યું હતું ત્યાં સુધી અને સાથે હતા ત્યાં સુધીનું બારીકીથી વર્ણન હતું અને મારા મરણની કથા તો એ જાણતા ન હતા જેનાથી ઉપજેલ દુઃખે એમણે પીડાયો છે એ પત્ર મે

વાંચવા માંડયો. જે લાગણી મને થઈ હતી એ એમને પણ થઈ હતી અને તે એમણે સુંદર શબ્દોમાં વર્ણવી હતી. વાંચતાં એમનો સ્નેહ મને સ્પષ્ટ થયો. કાગળમાં આમ હતું:

૭૫૯-૭૬૭. "મારા હૃદયની સ્નેહપાત્રી તરંગવતી જોગ આ સ્નેહસંદેશ છે. જેનું મુખ કમળસમું છે અને જેનું આખું અંગ અનંગને બાણે કરીને આટલી તીવ્ર વેદના સહે છે એવી જુવતીનું મંગળ અને કુશળ હો! (વિજોગમાં પણ) આપણને સ્નેહે કરી જેણે બાંધી રાખ્યા છે એવા કામદેવની કૃપાવડે હું કુશળ છું. માત્ર અનંગનું બાણ મને ચોટયું છે એટલે જયાં સુધી તું મારાથી દૂર છે ત્યાં સુધી મારૂં અંગ ઢીલું ને નબળું પડતું જશે. આ સાજાતાજાના સામાન્ય સમાચાર પછી, કમળપત્રના જેવી સુંદર આંખોવાળી હે પ્રિય, બીજી વાત હવે કહું. આપણા એક વખતના સ્નેહાનંદને યાદ કરતાં આજે પણ તારે માટેની કામનામાં હું ડુબી જાઉં છું; મારા મિત્રો અને સંબંધીઓની મદદથી હું નગરશેઠનું મન મનાવી લેઉં, ત્યાં સુધી તું ધીરજ ધર. પિતાની ઇચ્છા થાય ત્યાં સુધી ધીરજ ધર."

૭૬૮-૭૬૯. આ પત્ર વાંચીને મને લાગ્યું કે મારા પ્રિય (જો કે એમણે અમારા અંતર્જીવનનું યથાસ્થિત વર્ણન કર્યું હતું, તોપણ મને ધીરજ ધરવાનું કહેલું હોવાથી) સ્નેહમાં ઠંડા પડી ગયા છે. આથી મારો ઉત્સાહ ને ઉત્કંઠા પણ ભાગી ગઇ. હું ઢીલી થઇને બેશી પડી અને જાંગ ઉપર કોણી ટેકવી તથા હાથ ઉપર મોં ટેકવી બાવરાની પેઠે તાકી જોઇ રહી.

૭૭૦-૭૭૩. મારી સખી મને સભ્યતાથી સમજાવવા લાગી ને દિલાસો આપવા લાગી. એ બોલી: "પણ મારી સખી, તારી લાંબા કાળની કામના સફળ થવાના, અને તમારો સ્નેહસંબંધ બંધાવાના સમાચાર જે પત્ર આપે છે તે જ પત્રથી તારો શોકજંતુ તારા પ્રિયના વચનામૃતથી મરી જઈ મીઠો થઈ જવો જોઇએ; તેથી નિરાશ થતી ના. થોડા જ સમયમાં તમે એક બીજાને આલિંગન કરી શકશો."

૭૭૪-૭૭૫. મેં ઉત્તર દીધો: "સાંભળ હું શાથી એટલી બધી નિરાશ થઇ ગઈ તે: મને લાગે છે કે દૂર રહેવાથી સ્નેહ ઠંડો પડી જાય છે, કારણ કે એથી અમારા સંબધનો આધાર ભવિષ્ય ઉપર લટકતો રહે છે."

૭૭૬-૭૮૧. હાથ જોડીને ફરી સખી બોલી: "સખી, તું નક્કી જાણજે કે, વીરપુરૂષો પોતાનું સાધ્ય સાધવાને કંઇક યોજના અને વ્યવસ્થા રચે છે. સાચા સાધનને અભાવે જેનોતેનો ઉપયોગ કરી લેવો એ સારૂં નથી. ઉતાવળમાં વગરવિચારે સાચાં સાધન વિના કંઇ કામ કોઇ ઉપાડે તો એ સફળ થાય તો ય પરિણામ કડવાં આવે. સારાં સાધનનો ઉપયોગ કર્યો છતાં માણસ ધાર્યું ના ઉતારી શકે, તો ય એનો દોષ કોઇ કાઢે નહિ. માટે વીરપુરૂષો, કામના બાણથી ગમે એટલા પીડાય તોપણ, કુમાર્ગે જઇને પોતાના કુળને ડાઘ દેઇ બેસે નહિ.

(૭. પલાયન)

૭૮૨-૭૮૭ આમ મારી સખી સાથે વાત કરતા કરતા પદ્મનો ખીલવનારો જે સૂર્ય તે આથમી ગયો એનુ મને ભાન એ રહ્યુ નહિ ઉતાવળે ઉતાવળે મે નાહી લીધુ ને સખી સાથે ઠીક ખાઇ લીધુ પછી એને લેઇને અગાશીમા ગઇ અને સુદર આસન ઉપર બેશીને એની સાથે મારા પ્રિય વિષેની વાતો મોડા સુધી કરી જેમ જેમ મોડુ થતુ હતુ તેમ તેમ અતરની અશાતિ વધતી જતી હતી, અને તે અસહ્ય થતી જતી હતી સ્નેહને બળે હુ એટલી બધી પીડાવા લાગી કે મારૂ જીવન ટકાવી રાખવાને ખાતર મારી સખીને (સારસિકાને) મારે વિનતી કરવી પડી (હુ બોલી-)

૭૮૮-૭૯૦ "કુમુદને ખીલવનારો ચદ્ર જેમ જેમ ઉપર આવે છે તેમ તેમ એ વૈશ્યને (શેઠના દીકરાને) મળવાની મારી ઉત્કઠા બહુ જ વધતી જાય છે અને જેમ પવનને બળે અગ્નીના મો આગળનુ પાણી ઉડી જાય છે એમ એ ઉત્કઠાને બળે મારા હૃદયમાથી તારી મીઠી વાણી પણ ઉડી જાય છે-ટકતી નથી અરે મારો જીવ એમની પાછળ તલસે છે! અત્યારે જ મને એમને ઘેર લેઇ જા! એકવાર એ મારા પતિ હતા, સ્નેહની વેદી ઉપર હુ મારી લાજ હોમી દેઇશ"

૭૯૧-૭૯૨ મારી સખીએ મને સમજાવવા કહ્યુ "તારે તારા કુળની લાજ રાખવી જોઇએ આવું કશું સાહસ કરતી ના! તારે એને કલક ન લગાડવુ જોઇએ. એ તારો થયો છે, તુ એની થઈ છે તારે મુશ્કેલી વહોરી લેવી જોઇએ નહિ તારા માબાપ જરૂર તારી વાત માનશે"

૭૯૩ આપણે સ્ત્રીઓ ઘણીવાર આવેશથી ખેચાઈ જઇએ છીએ, મને પણ એમ જ થયું આવેશનો માર્યો મારો સૌ વિવેક ચાલ્યો ગયો સ્નેહથી હેવર બાવરી બની હુ બોલી-

૭૯૪-૭૯૭ "માણસે બધા જોખમ ખેડવા તૈયાર થવું જોઇએ જે માણસ સાહસ ખેડતા, તેમા આવી પડનારા વિઘ્નોથી ડરતો નથી તે જગતમા વિજય પામે છે એકવાર કામ શરૂ કર્યું કે પછી તે ગમે તેવું આકરૂ હોય તો ય સહેલુ થઈ જાય છે આટલી ઉત્કઠા પછી જો તુ મને મારા પ્રિય પાસે નહિ લેઈ જાય તો સ્નેહને બાણે વીંધાઇને તારી નજર આગળજ મને મરી ગયેલી તું જોઇશે વખત જરા યે ખોવી ના! મને લેઈ જા! જો મને તારે મરેલી જોવી ન હોય તો જ અપકૃત્ય પણ કર!"

૭૯૮-૮૦૯ આવા કમાણુષી કરીને મારા જીવનને આનદ આપવા માટે એ મારી સખી મારા પ્રિયને મહેલે આવવા કબુલ થઈ (જેના ઉપર સ્નેહનુ બાણ ચડાવી શકાય એવું) કામદેવનુ ધનુષ-કામને ઉશ્કેરવા-મારો શણગાર આનંદે ઝટપટ સજી લીધો મારી આખોમા અપ્ય તેજ આવ્યું, કારણ કે એની સાથે મારા પ્રિયને ત્યાં જવા મારા પગ તલપાપડ થઇ રહ્યા હતા અને કેવું તો રોકાને થકીને કમારનું ય આવનુ બઇ ગયુ

હતું. પછી અમે ધ્રુજતે શરીરે એકએકનો હાથ ઝાલીને પાછલે બારણે થઇને મારા ભવ્ય મહેલમાથી બહાર નિકળી ગયાં. (અમારા નગર) કોશામ્બીને સ્વર્ગસમી શોભા આપનારે રાજમાર્ગે થઇને અમે ફુલમાળાના જેવા લાંબા ચૌટામાં ચાલ્યાં. પણ આ સુંદર દેખાવ ઉપર મારી આંખ ચોટે શી રીતે? કારણ કે મારા વિચાર તો મારા પ્રિયમા જઇ ચોંટ્યા હતા! આજે મારા પ્રિયને જોઇ શકાશે એ જ વિચારો મારા મનમાં ઘોળાતા હતા. એથી મને થાક પણ લાગ્યો નહિ. માણસોની ભીડ તો હતી, તો ય અમે ઉતાવળે પગલે ચાલ્યાં અને અનેક હરકતો વેઠીને પણ આખરે અમે સ્નેહમંદિરમા આવી પહોંચ્યાં. સખીએ મને એ બતાવ્યા, તે વેળાએ એ પોતાના મિત્રોની વચ્ચે દરવાજા ઉપર બેઠા હતા અને વીણા વગાડતા હતા. શરચ્ચંદ્રની પેઠે સૌને પ્રકાશ આપી રહ્યા હતા.

૮૧૦-૮૨૦. વગર હાલ્યેચાલ્યે મેં તો એમને જોયા જ કર્યા, છતાં યે મારી આંખો એમને જોઇને ધરાઇ નહિ. વારંવાર એ તો આંસુથી ભરાઈ જતો. મારા ચક્રવાકના ભવના મારા સ્વામીને જેમ જેમ જોયા કર્યા, તેમ તેમ એમને જોવાની મારી તૃષ્ણા અત્યારે વધતી ગઈ. માત્ર એમની જ નજર અમારા ઉપર પડવાને કારણે આનંદ પામીને અમે ત્યાં પાસે ઉભાં, અને છતાં ય પાસે જઈ શકતા નહોતાં. એવામાં સારે નશીબે એમણે પોતાના મિત્રોને રજા આપી. "જાઓ હવે, શરદ્રાત્રિમાં જઈ આનંદ કરો, હું હવે સુઇ જઇશ." એ લોક ગયા કે તરત જ એ મારી સખી (જેને એમણે ઓળખી લીધી હતી) તરફ જોઈ બોલ્યા: "આવ, જે ચિત્રો નગરશેઠને ઘેર મુકયાં હતા, તે આપણે જોઇએ." (આમ એ બોલતા હતા ત્યારે) હું મારા શણગારને અને કપડાને ઠીકઠાક કર્યો જતી હતી ને મારે અભિમાની હૃદયે, કામદેવનો જાણે અવતાર ના હોય એવા મારા પ્રિયને મનમાન્યા જોઇ રહી હતી. સખી સભ્યભાવે એમની પાસે ગઇ, એટલે એ તુરત જ સભ્યભાવે ઉઠ્યા ને જે ખડમાં હું શરમ ને ગભરાટની મારી સંતાઈ ઉભી હતી તે જ ખંડમાં (મારી સખીના દોરાયા) આવી ઉભા. પછી એ આનંદભરી આંખોએ સ્નેહસુખ વદને બોલ્યા.

૮૨૧-૮૨૫. "તારી સખી, મારા જીવનસરોવરને પોષનારી, મને સુખ આપનારી સહચરી, મારા હૃદયની રાણી કુશળ તો છે ને? જ્યારથી મદનપ્રભુનાં બાણથી હું ઘવાયો છું ને તેને મળવાને ઉત્સુક બન્યો છું ત્યારથી મને કશું ચેન પડતું નથી. 'તમે શરદ્રાત્રિમાં આનંદ કરો મારે હવે સુઈ જવું છે' એવુ બહાનું કાઢીને મારા મિત્રોને મેં વિદાય કરી દીધા એ તો માત્ર મારી ચાલાકી જ હતી. (સાચી વાત તો એ હતી કે) તેમની સોબતમાંથી છુટા પડી મારે ફાવે તેમ તમારે મહેલે જવું હતું અને ત્યાં એ ચિત્રો જોવાં હતાં. પણ તને જોતાની સાથે જ મને થયેલા આનંદને લીધે મારા હૃદયનો થાક ઉડી ગયો છે. કહે, મારી પ્રિયા પાસેથી તું શો સંદેશો લઈ આવી છે?"

૮૨૮ ત્યારે મારી સખી બોલી "કશો સદેશો હુ લાવી નથી, એ પોતે જ અહી આવી છે"

૮૨૭-૮૨૮ વળી એ બોલી "સખી છે તો બહુ યે કુશળ, પણ એ એવી તો સ્નેહઘેલી બની ગઈ છે કે તમારે હવે એનો હાથ ઝાલવો જ જોઇશે સમુદ્રની નારી ગગા જેમ સમુદ્રમા વહી જાય છે, તેમ સ્નેહે કરીને તણાની તરગવતી તમારી પાસે દોડી આવી છે"

૮૨૯-૮૩૬ (આ શબ્દો સાભળીને) મારે તો આખે શરીરે પરસેવાના બિ દુઓ ચમકી ઉઠચા, મારામા કશું બળ રહ્યુ નહિ મારી આખોમા આનદના આંસુ ભરાઇ આવ્યા ગભરાતી ને થરથરતી હુ સભ્યતાએ મારા પ્રિયને પગે જઇ પડી, પણ તરત જ એમણે પોતાને બળવાન ને સ્નેહભર્યે હાથે મને ઉઠાડી ઉભી કરી, એમણે મને બાથમા ભીડી લીધી, એમની આખોમા પણ સ્નેહના આસુ ભરાઈ ગયા પછી એ બો યા "મારા શોકને હણનારી મારી સખી, તારૂ ક ય ણ હો!' એમ બોલતા એ, પુરા ખીલેલા કમળ જેવે આનદભર્યે મુખે મારી મામે એકીટસે, જોઇ રહ્યા, એ મુખ જાણે કમળમા બેસનારી પણ કમળ વિનાની લક્ષ્મી ના હોય એવુ મને જણાયુ ચરમની મારી હુ તો એમની એમ ઉભી રહી, આનદના મોજામા ડુબતી અને કમ ળના પાન જેવા મારા કોમળ પગ ધરતી ઉપર આમતેમ ફેરવતી, હુ ત્રાસી આખે એમના તરફ જોયા કરતી અને જ્યારે એ મારી આખ સામે જોતા ત્યારે પાછી નીચુ જોઈ જતી તેમના બધા હાવભાવમા તેમનુ સ્વરૂપ એવુ તો મોહક અને સુદર હતુ કે મારા મોહનો પાર રહ્યો નહિ મારા હૃદયની ભૂમિ ઉપર એમની દૃષ્ટિનો એવો સુખભર્યો વરસાદ રેલાયો કે મારા આનદના બીજ ફુટી નિકળ્યા

૮૩૭-૮૪૧ પછી એ બોલ્યા "મારી કોમલાંગી, આ સાહસ તુ શો રીતે કરી શકી? તારા પિતાની મરજી સપાદન કરતા સુધી જોવાનુ મે તને કહ્યું જ છે તારો પિતા રાજદરબારનો કૃપાપાત્ર છે, મહાજનનો અગ્રેસર છે, મિત્રમડળમા એમનો ભારવક્કર આખા નગરમા સૌથી વધારે છે, એમની ઇચ્છાને જો આ તારા આચરણથી આઘાત લાગશે તો એ પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે ચલાવવાને બધા ઉપાયો યોજી શકશે અને ક્રોધના માર્યા માગ આખા કુટુબ ઉપર વેર વાળશે તેથી તને વિનતી કરૂ છુ કે તારી ગેરહાજરી જણાઇ આવે તે પહેલા તું ઘેર ચાલી જા સીધે રસ્તે તને પ્રાપ્ત કરવાના હુ બધા ઉપાય લઈશ મારી પ્રિયા, આપણે આપણુ મિલન ગમે તેટલુ છુપુ રાખવાનુ કરીએ તોપણ તે તારા પિતાની જાણમા આવી જશે કારણકે ગમે તેટલુ ગૂઢ કાર્ય પણ સાવધાન મનુષ્યો જાણી શકે છે" મારા સ્વામી મારી સાથે આ પ્રમાણે વાત કરે છે એ જ વખતે રાજમાર્ગે જતા કોઈ પુરૂષના નીચે પ્રમાણેના ઉદ્‌ગારો સાભળવામા આવ્યા

૮૪૨-૮૪૩. "પોતાની મેળે ચાલી આવેલ પ્રિયા, યૌવન, અર્થ, રાજલક્ષ્મી, વર્ષાસમય, જ્યોત્સ્ના અને ચતુર સ્નેહીઓના આનંદનો ઉપભોગ જે કરી શકતો નથી તે જાતે ઘેર ચાલી આવેલી લક્ષ્મીની કિંમત જાણતો નથી.

૮૪૪-૮૪૫. "જીવિતના સર્વસ્વસમાન રમ્ય પ્રિયાને પ્રાપ્ત કરીને જે છોડી દે છે તે મનુષ્ય સફળ કામનાવાળો થતો નથી."

૮૪૬-૮૪૮. એ ઉદ્‌ગારના ભાવાર્થથી પ્રેરાઈને વળી મારા પ્રિયે મને કહ્યું: "જો આપણે પરદેશમાં ચાલ્યાં જઇએ, તો જ વિઘ્નથી ને શંકાથી મુક્ત થઈને આનંદે રહી શકીએ." ત્યારે મેં રડતે હૃદયે ઉત્તર આપ્યો: "હા! મારા પ્રિય, હવે મારાથી ઘેર જવાય એમ નથી, હું તો તમે જ્યાં જશો ત્યાં, તમારી પાછળ આવીશ."

૮૪૯. (હુ એમના વિચારો પ્રમાણે અનુસરી શકું એટલા માટે) અનેક તરેહથી એમણે મને ઉત્તેજન આપ્યું, અને હું પાકા ઠરાવ ઉપર આવી એટલે એ બોલ્યા: "ઠીક ત્યારે, આપણે નાશી જઇએ! હું હવે મુસાફરીની તૈયારી કરી લેઉં."

૮૫૦-૮૫૨. માર્ગમાં જરૂર પડે એવી ચીજો એકઠી કરવાને એ મહેલની અંદરના ભાગમાં ગયા, એટલે મારા દરદાગીના લેઇ આવવાને મેં મારી સખીને ઘેર મોકલી. એ દોડતી ગઈ; પણ એટલામાં તો મારા પ્રિય હાથમાં કોથળી લઈને પાછા આવ્યા અને કહેવા લાગ્યા: "ચાલ મારી પદ્મિની, વખત વહ્યો જાય છે. નગરશેઠ જાણી જાય તે પહેલાં આપણે ખશી જવુ જોઇએ."

૮૫૩. મેં ગભરાઈને ઉત્તર આપ્યો: "મારા દાગીના લેવા મેં સખીને ઘેર મોકલી છે. એ આવે એની આપણે વાટ જોઇએ."

૮૫૪-૮૫૮. એમણે ઉત્તર આપ્યો: "અર્થશાસ્ત્રમાં લખ્યું છે કે દૂતી એ પરિભવ-તિરસ્કાર કરાવનારી છે, એ કાર્યની સાધક નગી પણ ખરી રીતે બાધક છે. ખરેખરી ગુપ્ત વાતથી દૂતીને સદા દૂર જ રાખવી જોઇએ. એ જલદી જ ફસાવી દે છે, કારણ કે બૈરીઓથી કશું છાનું રાખી શકાતું નથી. વળી જો સાથે દરદાગીના લીધા, તો તો એથીયે વધારે ફસાઈ પડવાનો ભો. વળી એના આવવાથી આપણને માર્ગ કાપતાં અડચણ પડશે અને આપણી શાન્તિનો ભંગ થશે, માટે એને તો આપણે છોડી દેઇએ! અને હવે વખત ખોવો જોઇતો નથી. હીરા, ઝવેરાત અને એવું એવું સૌ કીંમતી મેં લેઇ લીધું છે. જેની આપણને જરૂર પડશે તે એનાથી ખરીદી લેવાશે. માટે આવ હવે, આપણે ચાલતાં થઇ જઇએ."

૮૫૯-૮૬૩. એ સાંભળીને હું તેમ કરવા તૈયાર થઇ ને સારસિકાની વાટ જોયા વિના જ અમે તો રસ્તે પડયા. નગરના દરવાજા સારી રાત ઉઘાડા રહે છે તેથી અમે બહાર નિકળી ગયા અને જમુનાને કિનારે જઈ પહોંચ્યાં. ત્યાં અમે એક

મછવો ખોળી કાઢ્યો એને દોરથી એક ખીલા સાથે બાંધ્યો હતો અને (સુભાગ્યે) એની અંદર પાણી પેસતુ નહોતુ અમે એને છોડી લીધો ને બંને જણ ઝટપટ અંદર ચઢી ગયા મારા પ્રિયે હાથમાની કોથળી અંદર મુકી દીધી ને હલેસુ પકડ્યુ ત્યાર પછી નદીમા રહેતા કાલીયનાગની અને ખુદ નદીની પણ, નમસ્કાર કરીને, સ્તુતિ કરી પછી સમુદ્રને મળવા જતી નદીમા અમે અમારી હોડી હંકારી

૮૬૪-૮૭૦ પણ અમારા જમણા હાથ તરફ શિયાળવા રખડતા હતા તે અકાળે બોલવા લાગ્યા પશુઓમા સૌથી લુચ્ચા એ શિયાળવાનો અવાજ અમને સંભળાવા લાગ્યો જોરથી વગાડાતા શંખ જેવો બેસુરો એમનો અવાજ હતો તરતજ મારા પ્રિયે મછવો અટકાવ્યો અને મને કહ્યુ "શુકન મળે ત્યાસુધી આપણે ઉભા રહીએ કારણ કે ડાબી બાજુથી નિકળીને જો શિયાળ જમણી બાજુએ જાય તેમજ પાછા જાય અથવા પાછળ આવે તો અપશુકન થાય જીવને કશું જોખમ થવાનુ નથી, કશુ વિઘ્ન આવવાનુ નથી એવી આપણે ખાતરી કરી લેવી જોઈએ"

૮૬૮-૮૭૨ એમ બોલ્યા પછી મોજાના (અટકાવી રાખેલા મછવા ઉપરના) મારાથી ડરીને ફરીથી મછવો નદીમા હંકારવા માંડ્યો હલેસાને જોરે મછવો ચાલ્યો ને વળી મોજાને પ્રવાહ ખમ ઉતાવળો ચાલ્યો, અને આમ અમે મછવામા બેઠી ઘણી ઉતાવળે આગળ ચાલ્યા દૂરના કિનારા ઉપર નવા નવા ઝાડ દેખાતાં ને પાછળ અદૃશ્ય થઈ જતા પવનનો સુસવાટ અને પંખીઓનો કિલકિલાટ અત્યારે બંધ થઇ ગયો હતો અને તેથી જમુના શાન્તિની પ્રતિજ્ઞા પાળતી હોય એવી દેખાતી હતી પણ ત્યારે મારા પ્રિયે, ભય ગયો છે અને ચિંતા જેવું કશું નથી, એમ જાણીને હૃદયને આનંદ આપનારી વાતો કરવા માંડી

૮૭૩-૮૭૯ એ બોલ્યા "આટલા લાંબા વિજોગ પછી આપણે પાછા એક બીજાને આલિંગન દેઈ શકયા એ આપણું કેવું સદ્‌ભાગ્ય! તે આપણો સંજોગ ઇચ્છ્યો ના હોત, એ ચિત્રો ચીતર્યાં ના હોત, તો આપણે એક બીજાને મળી શકયા ના હોત; કારણ કે (પાછલા ભવ પછી) આપણા રૂપ તો બદલાઈ ગયા હતા મારી પ્રિયા, (ખરેખર) તે ચિત્રો ચીતરીને મારા પ્રત્યેની એટલામા મોટી (સ્નેહ-અને) જીવન-સેવા સિદ્ધ કરી છે" આવું આવુ મારા કાનને ને હૃદયને સુખ આપનારૂ એ બહુ બોલ્યા હુ એનો કશો ઉત્તર વાળી શકી નહિ હુ તો માત્ર શરમની મારી મો નીચુ રાખીને ત્રાસી નજરે એમના તરફ જોઇ જ રહી ગળામાથી અવાજ નિકળ્યો જ નહિ, સ્નેહની આશાઓ સફળ થતી જોઇને સ્નેહભર્યું હૈયુ કંપવા લાગ્યું (અંતે) મારાં સુખના ભાવ છુપા કરવાને, મારા પગનો અગુઠો મછવાને પાટીએ ઘસ્તી ઘસતી, હુ બોલી —

૮૮૦-૮૮૩ "આહા પ્રિય, તમે ભલે મારા પ્રભુ છો તમારી સાથે સુખદુખ ભોગ

વવાને મારા અંતરની પ્રેરણાથી મેં આપ સાથે પાસા નાખ્યા છે. મારૂં ગમે તે કરો; માત્ર એટલું માગું છું કે વિષમ સ્થિતિમાં આવી પડતાં પણ મને એકલી મુકી જશો ના ગમે તે થતાં પણ હું તો તમારી સાથે સ્નેહે બંધાઈ રહીશ. જો તમે મને ખાવાનું બંધ કરશો તો મારાથી ભૂખે રહેવાશે, પણ જો મારા હૃદયનું ખાવાનું બંધ કરી દેશો, તો તમારા વિના મારાથી રહી શકાશે નહિ."

૮૮૪-૮૯૨. માનવહૃદયની ચંચળતા દેખાડનારા મારા આ શબ્દો સાંભળીને એમણે ઉત્તર આપ્યો "આહ મારી વ્હાલી, તું એવી કશી ચિંતા કરતી ના, તને એવું કશું નહિ થવા દઉં. આપણે હવે શરદ્‌ઋતુની ઉતાવળી નદીમાં અનુકૂળ પવનને બળે વિના મુશ્કેલીએ આગળ ચાલીએ છીએ અને સુંદર કાકન્દી નગર પાસે આવતા જઇએ છીએ; પેલા એના સફેદ મહેલો દેખાય. ત્યાં મારાં ફોઈ રહે છે, એમના મહેલમાં આપણને આવકાર મળશે અને સ્વર્ગમાં જેમ અપ્સરા તેમ ત્યાં તું ચિંતામુક્ત થઇ સુખમાં રહી શકશે. તું મારા સુખની વધારનારી છે ને દુઃખની હરનારી છે. તું મારા જીવનનું સર્વસ્વ છે ને મારા વંશની રાખનારી છે." એવું કહીને અમારા ચક્રવાકના ભવને સંભારતાં એમણે મને આલિંગન દીધું; ઉનાળામાં (સૂરજથી) તપેલી ભોંયને વરસાદના સ્પર્શથી જેવી આનંદની લાગણી થાય, એવી આનંદની લાગણી મેં મારા પ્રિયના સ્પર્શથી અનુભવી.

૮૯૩-૮૯૬. ત્યાર પછી ગાન્ધર્વલોકો જેમ કરે છે એમ, માનવભોગને શિખરે પહોંચાડનાર ગાન્ધર્વવિવાહે અમે પરસ્પર બંધાયાં. દેવોની પ્રાર્થના કર્યા પછી તરત જ (જેમ વ્યાવહારિક લગ્ન પ્રસંગે થાય છે એમ) મારો હાથ ઝાલવાને બદલે મારા સ્વામીએ મારી જુવાનીની કળી ચુંટી લીધી. પરસ્પર ધરાતા સુધી દાંપત્ય વિલાસનો આનંદોપભોગ કરી લીધો.

૮૯૭. એટલીવારમાં અમારો મછવો અમને લેઇને (અમારી ઇચ્છા હતી તે પ્રમાણે, જમુનામાંથી નીકળીને) ગંગામાં આવી પહોંચ્યો. એકવાર જેમ પૂર્વભવમાં આ નદી ઉપર અમારી ચક્રવાકની જોડી તરતી હતી તેમ આજે સ્નેહી યુગલની જોડી તરવા લાગી

૮૯૮-૯૦૧. રાત્રિ ચાલી ગઈ; લલાટમાં જેને ચંદ્ર છે, ચંદ્રિકા જેનાં સુંદર સફેદ વસ્ત્ર છે અને તારા જેના ભવ્ય અલંકાર છે એવી એ જુવાન રાત્રિનારી સરી ગઇ. પૃથ્વીના જળદર્પણ ઉપર ચંદ્ર હવે તો માત્ર હંસની પેઠે તરવા લાગ્યો; જેને રાત્રિના ચાર પહેરેગીરે અત્યારસુધી પકડી રાખ્યો હતો તે હવે ઉપર ઝાંખો ને નીચે માત્ર ઝાંખો દેખાવા લાગ્યો. મળસકામાં પંખીનાં સૌ ટોળાં જાગી ઉઠયાં, તેમનાં ગાનથી ને સાદથી જાણે નદી સાથે એ સંબંધ જોડતાં હોય એવું દેખાતું હતું. અંધારાનો શત્રુ સૂર્ય, માનવીઓની દિનચર્યાને માટે પ્રકાશતો ગગનદીવો પ્રકટયો હોય એમ, ઉગ્યો.

૮. લૂટારાને હાથે પકડાવુ.

૯૦૨-૯૦૪ ગગાના વહેતા પાણી ઉપર કેટલાક સુધી એમ સુખે વહ્યા પછી મારા પ્રિય બોલ્યા "પ્રિયે નિતબિની, સૂર્ય ઉગ્યો છે એટલે હવે દાતણ કરવાની વેળા થઈ છે, તેથી જમણા હાથ ઉપર શખલા જેવી સફેદ રેતીથી ચળકતો જે કાઠો દેખાય છે ત્યા આપણે ઉતરીએ"

૯૦૫-૯૦૮ ત્યા આગળ પહોચીને મછવો લગયો અને ઉતર્યા જ્યા હજી કોઇ માનવીનો સચાર થયો નહોતો એવા રેતીના કાઠા ઉપર અમે ફરવા લાગ્યા પણ સામે દેખાતી સુદર જગા હજી તો અમે પુરી જોઇ પણ નહોતી તેવામા, જ્યા ભયની શકા સુદ્ધા નહિ પડે એવી તે જગામાથી, એકાએક લૂટારા દેખાયા કાઠા ઉપરના ઝાખરામાથી એ બહાર નિકળી આવ્યા અને જમરાજના ભયકર દૂતો જેવા દેખાતા એ અમારી તરફ ધસ્યા

૯૦૯-૯૨૦ ભયથી હુ તો ચીસ પાડી ઉઠી ને "હવે આ સકટમા શુ કરીશુ?" એમ મારા સ્વામીને પૂછવા લાગી એ બોલ્યા "ડરતી ના! અહુણા જ તને ખબર પડશે કે મારી લાકડીના ઝપાટાથી એમને કેવા હાકી કાઢુ છુ તને મારી જીવનનૌકા બનાવવાના મનોરથમા હુ એવો તો મુગ્ધ થઈ ગયો હતો કે ઘેરથી હથિયાર લેવાનુ પણ ભુલી ગયો સ્નેહના આનદોત્સવને માટે બધા પ્રકારના ઝવેરાત સાથ લીધા, પણ સ્નેહસાહસને અગે જે સકટ રહેલુ છે તેનો તો વિચારેય આવ્યો નહિ છતા યે તું શાન્તિ રાખ! બળવાન્ હશે તે જુદ્ધમા જીતશે આ જગલી ચોર મને ઓળખતા નથી અને એમણે હજી મારો હાથ જોયો નથી, એથી જ એ આવી હિમત કરી શકા છે એક જણને હુ નીચે પાડી દેઇશ અને એના હથિયાર લેઇ બીજાઓની પાછળ પડીશ પરિણામ અનિષ્ટ જ આવશે તો તને લુટાતી દેખવા કરતા મારૂ ઝૌય સમાપ્ત કરી દેઇશ કારણકે તારા કપડા ને ઘરેણા કાઢી લેવાને લૂટારા તને બાધે એ તો મારાથી કદી જોયું જાય નહિ મારે માટે તું પહેલા ભવમા સતી થઈ હતી અને મારે માટે આ ભવમા પરદેશમા નિકળી પડી છે ત્યારે મારામા જ્યા સુધી પ્રાણ છે ત્યા સુધી તને બચાવવાને માટે મારાથી બને એટલુ બળ વાપર્યા વિના શી રીતે રહેવાય? મને જવા દે અને લૂટારાની સાથે જુદ્ધમા ઉતરતા મને અટકાવ નહિ હવે તો જિતવુ કે મરવુ!"

૯૨૧-૯૨૬ આ શબ્દો સાભળીને હુ પ્રિયને પગે પડીને બોલી "મારા નાથ, મને અનાથ કરીને એકલી મુકી જતા ના તમારે જુદ્ધે ચઢવુ જ હોય તો મારો જીવ લેઉ ત્યા સુધી ઉભા રહો કારણ કે લૂટારાના હાથમા તમને પડ્યા આગથી જોવાશે નહિ લૂટારાને હાથે પડ્યા હો એવુ જોવાને જીવવુ એના કરતા તો આશાભેર મરવુ ભલુ. અરેરે મારા પ્રિય, આખરે તમે મારા થયા તો ખરા, પણ એટલામા તો આ ગગા

કાંઠે જ, જાણે માત્ર ચંચળ સ્વપ્ન જ હોય, એમ તમે ચાલી જવા બેઠા ! આવતા ભવમાં આપણે એક બીજાને મળીશું કે નહિ એ તો બીજી વાત છે, પણ અત્યારે તો હું જીવું છું ત્યાં સુધી મારી પાસે રહો ! આપણે એક બીજાથી વિખુટા પડીએ નહિ, બાકી બીજું તો જે થવાનું હોય તે થાય ! કારણકે બીજા બધાને આપણે ભુલાવી શકીશું, પણ આપણાં કર્મના ફળને ભુલાવી શકીશું નહિ." (તેથી કરીને આવતા ભવમાં વિખુટાં પડાય નહિ એટલા માટે આજે પણ વિખુટાં પડવું નહિ જોઇએ)"

૯૨૭–૯૨૮. આ પ્રમાણે કલ્પાન્ત કરીને મેં મારા સ્વામીને જુદ્ધે ચઢતાં વાર્યા. લૂટારાઓને મેં, રડી પડી, હાથ જોડી, કાલાવાલા કરીને, કહ્યુઃ "મરજીમાં આવે એમ મારાં અંગ ઉપરથી ઘરેણાં ઉતારી લો; અમારા સ્નેહની ખાતર મારા સ્વામીને મારશો નહિ (એટલું માગી લેઉં છું)."

૯૨૯–૯૩૮. પછી અમને લૂટારાએ પકડયાં. એક પાખ કપાઇ ગઇ છે જેની એવું પંખી જેમ ઉડી શકે નહિ તેમ અમારાથી પણ નાશી જવાય એમ નહોતું. થો ડાક લૂટારાએ એટલામાં જઇને મછવો અને (તેમાં મુકેલી) કોથળી પણ કબજે કરી લીધી. બીજા મને દૂર લેઈ ચાલ્યા તેથી મેં ચીસો પાડવા માંડી. કેટલાકે મારા સ્વામીને પકડ્યા; પણ, વાદીના શબ્દથી ઝેરી સાપ જેમ ઠંડો પડી જાય તેમ, મારા શબ્દથી એ (યુદ્ધ કરવાની ઇચ્છા છતાં) ઠંડા રહ્યા. અમને બંનેને અને ઝવેરાતની કોથળીને લૂટારા ગંગાના રેતીના કિનારા ઉપર લેઇ ગયા. મારા શરીર ઉપરથી બધાં ઘરેણાં તો ઉતારી લીધા, પણ અમને બેને જરા ય જુદાં કર્યા નહિ છતાં વેલીનાં જેમ ફુલ ચુંટી લેવાય તેમ મારાં બધાં ઘરેણાં ઉતારી લેવાતાં જોઇને મારા સ્વામી રોવા લાગ્યા. હું પણ રોવા લાગી, કારણ કે મારા સ્વામી લૂટાયેલા ભંડાર જેવા, અથવા તો કમળ જેમાંથી તોડી લીધાં છે એવા સરોવર જેવા, દેખાતા હતા. મારી ચીસો બહુ કારમી થતાં એ ભયંકર લૂટારાઓએ મને ધમકાવી (ને કહ્યું): "બૂમો તારી બધ કર ! નહિ તો તારા ધણીને મારી નાંખીશું." એથી હું દબાઇ ગઇ ને મારા સ્વામીનો જીવ બચાવવાની ચિંતા કરવા લાગી, અને માત્ર ધીમે ધીમે છાનાં ડુસ્કાં ખાવા લાગી જોકે આંસુ તો મારી છાતી સુધી દદડી પડતાં હતાં, તો ય મારૂં રોવું તો હોઠ આગળ જ અટકી પડતું

૯૩૯–૯૪૩. અમારા ઝવેરાતની કોથળી લૂટારાના સરદારે જોઇ ત્યારે એ મલકાઇને બોલ્યોઃ "ઠીક શિકાર મળ્યો છે !" એક જણ બોલ્યોઃ "આખો મહેલ આપણે શોધી વળ્યા હોત, તો ય આટલું તો ના મળ્યું હોત." બીજો બોલ્યો "જુગારમાં માણસનું ભાગ્ય ગમે એટલું ખુલે અને વર્ષોનાં વર્ષો સુધી રમે તો ય આટલું તો ભેગું ના થાય. આપણી બૈરીઓને આ બધું આપીશુ ત્યારે એ શું કહેશે ?" આવી વાતો કરતા કરતા એ લૂટારા (અમને લેઇને) કિનારો છોડી વિન્ધ્યાચળની દક્ષિણ દિશા તરફ ચાલતા થયા.

૯૪૪-૯૪૭ પર્વતની ઉંડી સુદર ખોમા લૂંટારાઓની ગુફા હતી ત્યા અમને બનેને એક વેલાવડે એકઠા બાધીને લેઇ ગયા કેટલાક લોક બહાર ઉભા રહીને પાણીની ભિક્ષા માગતા હતા, કારણ કે ગુફાની અદર પાણી ખૂબ હતું ગુફાનો દર વાજો બહુ મજબુત હતો, અને તરવારો ભાલા અને એવા બીજા હથિયારોવાળા લૂંટારા અદર જનાર અને અદરથી નિકળનાર ઉપર સખત ચોકી રાખતા હતા ઢોલ, કરતાલ, શખ અને એવા બીજા વાદ્યોથી તેમજ ગાન, હાસ્ય, નાચ અને બૂમો તથા ચીસોથી થને કોલાહલે કરીને આખી ગુફા ગાજી રહી હતી

૯૪૮-૯૫૪ અદર પેસતા જ અનેક વાવગ ઉપરથી અમે પારખી લીધુ કે આ તો કાળીનુ મદિર છે અને તેના બલિનો ઉત્સવ ચાલે છે દેવીને (નિયમ પ્રમાણે) નમસ્કાર કરવાને માટે અમે જમણી બાજુએ ગયા તો જોયુ કે (અમારા માલ ઉપરાત) બીજો પણ માલ બીજા લૂંટારા લેઇ આવ્યા હતા બને ટોળીવાળા સાજાતાજા પાછા આવ્યા હતા અને મોટી લૂંટ લાવી શકયા હતા તેથી તેઓએ એક બીજાને પ્રણામ કર્યા ને કુશળસમાચાર પુછયા વેલાએ એકઠા બધાયેલા અને લૂંટારાની ગુફામાં આવી પડેલા અમને બેને સૌ જણ આશ્ચર્યચકિત નજરે જોવા લાગ્યા અને એમાથી એક જણ બોલી ઉઠયો "નરનારીઓની જે સૃષ્ટિ પહેલા રચાઈ, તેથી અસતુષ્ટ થઈ (તેનો નાશ કરીને) યમદેવે અતે આ જોડુ સરજ્યું લાગેછે ચાદો રાતથી ને રાત ચાદાથી જેમ વધી જાય તેમ આ એક બીજાથી સુદરતામા વધી જાય એવા છે"

૯૫૫-૯૫૬ અમે એ ગુફામા જરા આગળ ગયા અને જાણે ત્યા સ્વર્ગ અને નરક એકસાથે જ હોય તેમ અદરના આનદી વસનારા અને નિરાનદ કેદીઓને જોયા દેવલોકના જોડા જેવું નરનારીનુ જોડુ અહી આવ્યું છે, એવા સમાચાર ફેલાતા ગુફામાનો રસ્તો (અમને જોવાને) ઉત્સુક લોકથી, ખાસ કરીને બાળકો, વૃદ્ધો અને સ્ત્રીઓથી ઉભરાઇ ગયો

૯૫૭-૯૬૩ શોકાતુર સ્થિતિમા અમને આગળ લેઇ જવામા આવ્યા, ત્યારે કેદમા જીવતી રહેલી સ્ત્રીઓ અમારે માટે વિલાપ કરવા લગી, જાણે અમે એમના જ બાળક હોઇએ પણ પુરૂષના જેવા હૃદયવાળી લૂંટારાની એક સ્ત્રીએ મારા સ્વામીને કહ્યું "તમારૂ સુદર મુખ લેઇને મારી પાસે આવો (અને અમારા ચોકીદારને એણે કહ્યુ) ચદ્ર સમાન સુદર, અને ચદ્રની પ્રિય સખી નક્ષત્રરાણી રોહિણીના જેવી આ સ્ત્રીને આપણી આ પૃથ્વી ઉપર લેઇ આવનાર, આ જુવાન પુરૂષને થોરો વખત અહી ઉભો રાખો, કે જેથી લૂંટારાની નારીઓ પળવાર એની સુદરતા નિરખી લે!" એ ચાલતા હતા ત્યારે મોહ પામવાને ટેવાઇ ગએલી સ્ત્રીઓ મોહવશ થઇને તેમને જોઈ રહવા લગી આ જોઇને હુ તો સતાપથી, ઈર્ષ્યાથી ને સાથે સાથે ક્રોધથી સળગી ઉઠી

૯૪-૯૭ પકડાયેલી સ્ત્રીઓમાની કેટલીક તો, જાણે એ પોતાનો જ પુત્ર

હોય એમ, શોક કરવા લાગી. કેટલીકે એમને કહ્યું: "તારા સ્વર્ગીય સ્વરૂપથી તું અમારું ચિત્ત ચોરી લે છે; તારી દૃષ્ટિનો સ્વર્ગીય ઘુંટડો અમને કૃપા કરીને પીવા દે!" વળી કેટલીક આંખમાં આંસુ લાવીને એમ કહેતી જણાઈ કે "તું તારી સ્ત્રી સાથે અહીંથી વહેલો છુટકારો પામે તો ઠીક!" વળી એક જણી તો એમના સૌન્દર્યથી છેક આશ્ચર્યમૂઢ બની ગઇ ને કટિમેખળાની ઘુઘરીઓ ખણકાવી બોલાવવાના ઈસારા કરવા લાગી.

૯૬૮-૯૭૪. (મારે માટે પણ તરેહવાર વાતો થવા લાગી.) એક જુવાન નર્તકે કામાતુર થઇને કહ્યું "આહ, આ અદ્‌ભુત નારીસ્વરૂપ!" કેટલાક એકબીજાને આંગળી કરી મને બતાવવા લાગ્યા, ને મારા વખાણ કરવા લાગ્યાઃ "એકેએક બાબતમાં એનું સૌન્દર્ય તો જુઓ! એના વેલી જેવા સુંદર શરીર ઉપર કળીઓ જેવાં એનાં સ્તન અને ફણગા જેવાં એના હાથ કેમ ફુટે છે એ તો જુઓ! વળી એને જોઇને પૂરે આવેલી નદી સાંભરી આવે છે; એનાં બે સ્તન તે જાણે ચકવાકનું જોડું બેઠું છે, (અનેક આંકડાથી શોભતી) એની કટિમેખળા તે જાણે હંસની હાર સરખી લાગે છે અને એના નિતંબ તે જાણે પ્રચંડ રેતીના કિનારા હોય એવા દેખાય છે. પૂર્ણચંદ્ર (ઉદયસમયે) પ્રભાતરંગે (એટલે કે રાતે રંગે) રંગાયો હોય એમ એનું સુંદર મુખ રોવાને કારણે કંઇક રાતું થયું છે. અને સર્વ હાવભાવે કરીને સુંદર અને મોહક બનતા એના રૂપથી શ્રીનું સ્મરણ થાય છે. માત્ર એના હાથમાં કમળ નથી એટલી જ ખામી છે. એના કાન જુઓ કેવા રૂપાળા છે! આંખો કેવી કાળી છે! દાંત કેવા શ્વેત છે! સ્તન કેવાં ભરાવદાર છે! જાંગો કેવી ગોળ છે! અને પગ કેવા ઘાટીલા છે!"

૯૭૫-૯૭૬. બીજા બેએક લૂટારા બોલ્યા: "ઘટતાં ઘરેણાં પહેરાવ્યાં હોય તો તો ખરેખર અપ્સરા બની જાય. ખુદ થાભલો હોય તો ય પણ એનો સ્પર્શ કરે તો અંદરથી જાગી ઉઠે મોટો તપસ્વી હોય તે પણ પોતાની કઠોર તપસ્યાના ફળમાં એની વાંચ્છના કરે. ખરે (દેવરાજ) ઇદ્ર પણ પોતાની હજાર આંખો વડે પણ એને જોતાં ધરાય નહિ."

૯૭૭-૯૭૮. પણ પરનારીને દેખી જેઓને કંઈક શરમ આવે છે એવા કેટલાક મને જોઇને સંકોચાયા ને 'અભાગણી' કે 'એ તો પરણેલી છે' એમ કહીને ચાલતા થયા. તો ય અમને બનેને જોઇને કેટલાક લૂટારા અનુમાન કરવા લાગ્યા કે 'જરૂર આપણો સરદાર આ માણસને મારી નાખશે અને પછી એ સ્રીને પરણશે.'

૯૭૯-૯૮૧. આવી આવી વાતો સૌ નરનારીઓ કરવા લાગ્યાં, પણ મારા સ્વામીનું મરણ તો સૌ અનુમાનવા લાગ્યાં અને તેથી મારી ચિંતા અસહ્ય થઈ પડી. સામાન્ય રીતે જુવાન પુરૂષો મને અને જુવાન સ્રીઓ મારા સ્વામીને વખાણતી; બાકીનામાથી કોઇએ જિજ્ઞાસાથી, કોઇએ નિરાશાથી અને કોઇએ તો કશી પણ લાગણી વિના અમારી વાતો કરી. લૂટારાની આ ગુફાની વસ્તી અમારે માટે આમ ત્રણ પ્રકારે

અભિપ્રાય આપ્યા જતી હતી તે સાંભળતા સાભળતા અમે (એ રસ્તાને છેડે) સર દારને ઘેર આવી પહોચ્યા એ ઘર ઉંચુ હતું અને એને કાટાની વાડ હતી

૯૮૨-૯૯૦ આમ અહીં ડાળીઓથી બ ધેલા એક ખડમા અમને લેઈ ગયા એ લોકના સરદારનુ આ દિવાનખાનુ હતું પ્રસિદ્ધ વીરપુરૂષ હોય એમ એ સરદાર કુપળો પાથરેલા આસનઉપર બેઠો હતો, ખીલેલા પુલના મોટા ગોટાથી પોતાને પખો કરતો હતો, એનો એ ગોટો સોના જેવો ચળકતો હતો અને એના ઉપ રના ભમરા સુદર ગુજારવ કરી રહ્યા હતા જુદ્ધ કરીને જીતી આણેલા શસ્ત્રો એ સરદારે પોતાના શરીર ઉપર ધારણ કર્યા હતા, અને અનેક જુદ્ધોમા અને સકટોમા સાચા નિવડેલા લુગારાઓ એની ચારે બાજુ ઉભા હતા જેમ જમને ચારે બાજુએ ગડાળો વીંટાઈ વળે તેમ એની ચારે બાજુએ એ લોક વીંટાઇ વળેલા હતા એના પગની પિંડીઓ માંસના લોચાથી ભરાવાદાર હતી, તેની જાઘો કઠણ અને તેના નિતબ ભારે હતા અમે તો મોતની ચિતાએ થરથરતા થરથરતા હાથ જોડીને તેને નમસ્કાર કર્યા હરણના જોડાને જેમ વાઘ, એમ અમને એ તીણી નજરે જોઇ રહ્યો અને તેથી અમને વળી વધારે ચિતા વધી પડી પાસે ઉભેલુ લુગારાનુ ટોળુ અમારૂ જુવાનીનુ સૌ દય ભયકર, વાકી દૃષ્ટિએ નિહાળવા લગ્યું ને આશ્ચર્યચકિત થઈ ગયું

૯૯૧-૯૯૨ વીરોની, સ્ત્રીઓની અને બ્રાહ્મણોની હત્યા તથા એવા બીજા પાપકર્મો કરવાથી દયામાયા નાશ પામી ગઈ છે જેના હૃદયમાથી, એવા એ (લુગારાના) સરદારે, બીલકુલ લાગણી વિના અમને નિહાળી લીધા, પછી પાસે બેઠેલા એક ભયકર લુગારાને કાનમા આ પ્રમાણે કહ્યુ

૯૯૩-૯૯૪ "(આપણા મડળના) મોટેરાઓ મળીને દેવીને (કાળીને) ઘર ૨નો જે બળિ આપવાનો છે, તેને માટે બે આ નરનારી ઠીક પડશે તેથી કરીને (માતાની) નવમીની રાને આ જોડાનો બળિ દેવાશે એ બેની બરાબર ચોકી કરો જેથી એ નાશી જાય નહિ "

૯૯૫-૧૦૦૭ આ શબ્દો સાભળીને મારા હૃદયમા ચિતા ને મરણની બીક ફરી વળી પેલા લુગારાએ તો એ આજ્ઞા નગલાએ માથે ચઢાવી અને અમને એના ઘરમા લેઈ ગયો ચોકી રાખવામાં જરા પણ ખામી આવે નહિ એટલા માટે એણે મારા સ્વામીને તાણીને બાધ્યા તેમને આપવામા આવતી આવી વિટબણાને હુ જે મારો આત્મા બળી ઉઠયો, તેથી ગરુડ જેના સ્વામીને ઉપાડી ગયો છે એવી સાપણીની પેઠે કલ્પા ત કરવા લાગી વિખરાઇ ગએલે વાળે ને આખમાથી વહી જતે આસુએ હુ એમને અને એમના બ ધને બાઝી પડી, (પછી મે લુગારાને કહ્યુ) "જેમ વનહાથીની સાથે (એને વળગી પડેલી) હાથણીને બાધે તેમ આ નરોત્તમ સાથે મને પણ ભલે બાધો, કારણ કે એમની પીઠ તરફ બાધી લીધેલા એમના ઢીચણ સુધી પહોચતા હાથ મને

આલિંગન દેવાને સર્જાયા છે." (આમ કહીને) હું એમને છુટા કરવા જતી હતી એટલામાં તો એ લૂટારાએ મને મારી, ધમકાવી ને ધક્કો મારી એક કોરા ખસેડી મુકી. મારા સ્વામીએ હિંમત રાખીને પોતાના બંધ અત્યાર સુધી સહન કર્યા હતા, પણ મારી આ સ્થિતિ જોઇને એમની હિંમત જતી રહી રડતા રડતા એ બોલ્યા: "અરેરે, મારે માટે તું આવી કદી ન સાંભળેલી, મરવા કરતાં પણ ભુંડી વેદના સહન કરે છે! મારા સંબંધીઓને અને મારી જાતને માટે કદી પણ નહોતું લાગ્યું તેવું આજે મારી નવવધૂને માટે લાગે છે!" આ સાંભળીને, એ જાણે બળવાન છાતી વાળો હાથી હોય તેમ ધારી એમને પેલા લૂટારાએ ભોંય સાથે દબાવ્યા, જોકે એમના હાથ તો પીઠ તરફ બાંધેલા જ હતા. આમ એમને સૌ રીતે હાલતાચાલતા બંધ કરી દીધા પછી એ નિર્દય લૂટારો એક લાકડા ઉપર બેઠો અને ત્યાં કાચું માંસ તથા મદિરા આરોગવા લાગ્યો.

૧૦૦૮-૧૦૧૪ મરણચિંતાએ મેં મારા સ્વામીને કહ્યું: "અરેરે, આવા દયા વિનાના સ્થાનમાં આપણે મરવું પડશે." એ પછી એ લૂટારાને કહ્યુઃ "આ (મારા સ્વામી) કોશામ્બીના એક વેપારીના એકના એક પુત્ર છે, અને હું પોતે (ત્યાંના જ) નગરશેઠની પુત્રી છું. કહેશો એટલા હીરા, મોતી, સોનુ ને પરવાળાં અમે તમને ત્યાંથી અપાવીશું અમારા પિતા પર કાગળ લેઇને કોઇને ત્યા મોકલો, અને એ બધું જયારે અહીં આવે ત્યારે અમને છુટાં કરજો." પણ એ લૂટારાએ તો ઉત્તર વાળ્યો "તમને (અમારી દેવી) કાળી આગળ બળિ દેવાનું સરદારે નક્કી કર્યું છે. જેની કૃપાએ અમારી સૌ આશા પુરી થાય છે એવી એ માયાને જો માનેલો ભોગ અપાય નહિ, તો એ ક્રોધે ભરાય. અને અમારો નાશ કરે. તેમજ જે અમને અમારી મહેનતનું ફળ, જુદ્ધમા વિજય, ધનમાલ ને બધા પ્રકારનાં સુખ, જે અમને આપ્યા જ જાય છે તેની કૃપા અમારાથી શી રીતે તરછોડાય?"

૧૦૧૫-૧૦૨૧ આવું સાંભળીને અને મારા સ્વામીને આમ ભયંકર રીતે બાંધેલા જોઇને હું તો છાતીફાટ રડવા લાગી. સ્વામીને સ્નેહબંધને બંધાયલી હું છુટે મ્હોંએ વિલાપ કરવા લાગી કારણ કે હવે કોઈ આશા દેખાતી નહોતી. મારી આંખોમાથી એવા તો અનર્ગળ આંસુ વહી ગાલ ઉપર થઇ છાતી ઉપર વહેવા મંડયાં કે કેદ પકડાયેલી બીજી કેટલીક સ્ત્રીઓને પણ રડવું આવ્યું. મેં કલ્પાન્ત કર્યું, માથું કુટયું, માથાના વાળ પીંખ્યા, ને છાતી કુટી (પળવાર સુખદ સ્વપ્નુ આવે તો ય હું તો આમ જ રડું) "મ્હારા વહાલા, સ્વપ્નમાં હું તમને પામી હતી, જાગો ને હું એકલી જ પાછી રોઇશ." મારી વેદનામાં આમ મેં બહુ કલ્પાન્ત કર્યું.

૧૦૨૨ કેટલાક લૂટારા ખૂબ આનંદ ઉડાવતા હતા અને વીણા ઉપર આમ ગાતા હતાઃ—

૧૦૨૩-૧૦૨૬ વારણહારી વાણીની પરવા કર્યાં જ વિના,
જીવનમરણને ઓળંગી સાહસ કરીને,
ધાર્યું લેવુ એ જ વીરનું કામ છે.

કારણકે બીજાની પેઠે મોત તો આવવાનું,
પણ વિના સાહસે ધાર્યું મળવાનું નહિ,
માટે વેળાસર સાહસ કરવા દોડે
જે જિત્યો છે તે જ સુખે મરે છે,
કારણકે વીરપુરુષ જ, ગયેલું સુખ પાછું આવે
ત્યા સુધી, ઉત્સાહને તાબે રાખી શકે છે
૧૦૨૭ સાચે જ, વીર વેદના વેઠતે વેઠતે પણ,
વીરતાથી હરકતોને ધકેલ્યે જાય, તો
સુખરૂપી નારીની સાથે આનદ કરે છે

૧૦૨૮–૧૦૩૩ ત્યાર પછી મારા સ્વામીએ મને કહ્યુ ‘શોક કર ના, મારી વહાલી, પણ હુ તને કહુ છુ તે સાભળ! આ કેદખાનામાથી નાશી છુટ્યુ બની શકે એમ નથી જ વળી માણસે વિના આનાકાનીએ જમદેવની આજ્ઞાને તાબે થવુ જોઇએ એ એકવાર માણસને પકડે એટલે બીજો ઉપાય જ નહિ રાત્રે તારા ને ગ્રહને લેઇને ફરનારો આકાશનો ચદ્ર પણ (સપૂર્ણતામાથી ધીરે ધીરે ક્ષય પામી આખરે બધો ય અંધારો થવાના) દુર્ભાગ્યને તાબે થાય છે ત્યારે સામા ય પ્રાણીને તો કેવડો મોટો ભો છે! સ્થળ, કાળ, વસ્તુ ને પ્રકારને અનુસરી માણસને એના કર્યા કર્મના ફળ મળે ને તેને અનુસરીને સુખદુખ મળે એ તો મહાનિયમ જ છે તેથી મારી પ્રિયા, હિંમત હારતી ના! સમસ્ત પ્રાણીજગતમા એવુ કોઇ નથી કે જે સુખ દુખને નક્કી કરનારા એ નિયમને ઓળગી શકે ’

૧૦૩૪–૧૦૩૮ આ દિલાસો દેનારા શબ્દોથી મારો શોક કઇક ઓછો થયો પતિની સાથે બધાયેલી હરણીની પેઠે હુ બીજી કેદ થઈ પડેલી સ્ત્રીઓ તરફ જોવા લાગી મારા વિલાપથી કેટલાકની આખોમાથી આસુ વહ્યા જતા હતા, અને હવે તે પણ પોતાના દુખ સભારી રડવા લાગી બીજી જે સ્વભાવે જ સહૃદય હતી એ તો અમારા આવવામા જ લાગણી થવાથી રડી પડી હતી રોતી આખે એ પુછવા લાગી ‘તમે કયાથી આવો છો? અને તમે આ લૂગારાને અભાગી હાથે કેવી રીતે પડ્યા!’

૧૦૩૯–૧૦૪૨ (પાછલા ભવની કથાથી માડીને) અમારા નશીબની સૌ કથા મે એમને રડતી આખે કહી સભળાવી હાથી નાઠવા આવ્યો અને શિકારીએ એને બદલે મારા ચક્રવાકને માર્યો, અમે એ ભવમા કેમ સુખી હતા, કેમ હુ એમની પાછળ સતી થઇ અને અમે બે વત્સનગરમા માનવભવમા અવતર્યા, કેમ ત્યા ચિત્રોની સહાયતાથી અમે એકબીજાને શોધી કાઢયા, કેમ મે મારા પ્રિયને વિનતી કરી, પણ એમણે ના પાડી એટલે મે મારી સખી સારસિકાને મોકલી, અને છેવટે અમે મછવામા બેસી નાઠા અને ગગાને રેતીને કાઠે લગારાને હાથે પકડાયા (એ સૌ કહી સભળાવ્યુ)

૧૦૪૩-૧૦૪૬. (ત્યાં ઉભો હતો) એ લૂટારાને આ (બધું) સાંભળીને દયા આવી અને મારા પતિના બંધ ઢીલા કરવા એમની પાસે ગયો. પણ પેલી કેદ પકડાયલી સ્ત્રીઓને તો એણે એવી સખત ધમકાવી કે વાદળાંના કાટકાથી ગભરાઇને જેમ હરણીઓ નાસે એમ એ છુટી પડીને નાઠી. અને એ બધી જતી રહી કે તરત જ એણે મારા સ્વામીને છાનુમાનું કહી દીધું, કે. 'તારે હવે ડરવાનું કારણ નથી; હું તમને મોત-માંથી ઉગારી લેઇશ. તમારાં જીવન બચાવવાને માટે મારા જીવનને જોખમમાં નાખીને પણ ગમે તે પ્રકારે ઉપાય કરીશ.'

૧૦૪૭-૧૦૫૦. એના મુખની આવી વાણી સાંભળીને અમારી મરણચિંતા એકેવારે ચાલી ગઈ અને (અમારા હૃદયમાં) હર્ષ વ્યાપી રહ્યો. છતાં યે છુટવાની અમારી એ આશા સફળ થાય એટલા માટે અમે ઉપવાસ કરી, અમે આજે કોઈપણ પ્રકારનો આહાર લેઇશું નહિ' એવા, જિનપ્રભુને સ્મરી, પચ્ચખાન કર્યો; તેથી લૂટારાએ જ્યારે અમારી સામે સ્વાદિષ્ટ માંસાહાર આણી મુકયો ને બહુ લાંબો પ્રવાસ કરવાનો હોવાથી એ ખાવાને કહ્યું ત્યારે અમે કહ્યું, કેઃ 'અમે એ ખાતા નથી, માટે ખાઈશું નહિ.'

(૯. ઘેર આવવું.)

૧૦૫૧-૧૦૫૫. હવે સૂર્યભગવાનની (આથમતાં) પ્રભુતા ને તાપ ચાલ્યો ગયો, પદભ્રષ્ટ થયેલા રાજા જેવો એ દેખાયો, વાતાવરણમાંથી પાર નિકળી ગયા પછી ઉગતી વખતે દેખાય છે એવો (તાપની નબળાઈથી લાલ) દેખાવા લાગ્યો. દિવસ પુરો થયાના સમાચાર સૌ ઝાડ પણ આપવા લાગ્યાં-એ પણ નમતાં દેખાયાં અને તેમની અંદરના માળામાં પક્ષીઓ આરામ માટે એકઠાં થવા લાગ્યાં. આંખ સામે મરણ દેખીને અમે આટલું બધું રડયા ને કકળ્યાં હતાં ને તેણે કરીને બહુ લાંબો થએલો દહાડો પુરો થયો. પૃથ્વીને આરામ આપતી તથા આકાશને શણગાર સજાવતી રાત્રિ ભવ્યરૂપે આવી. ચંદ્ર પણ પોતાનો મૃદુ, જુઇનાં ફુલ જેવો સફેદ પ્રકાશ પાડતો પોતાના કપાળમાં ચાંલ્લો (સસલાનો દાઘ) કરીને બહાર આવ્યો.

૧૦૫૬-૧૦૬૪. એવે લૂટારાની એ ગુફામાં કોલાહલ મચી રહ્યો. પીતા ને નાચતા લૂટારા તથા કેદીઓ બુમો પાડીને, હશીને, વગાડીને અને ગાઈને શોર કરવા લાગ્યા. જ્યારે એ લોક શાન્ત થઇ ગયા ત્યારે અમારે પહેરેગીરે મારા સ્વામીના બંધ છોડી નાખ્યા ને કહ્યું. 'ચાલો, હવે હું તમને લેઈ જાઉં.' પછી કોઇ જાણે નહિ એવી રીતે અમને એ બહાર લેઈ ગયો, અને એક છુપે વનમાર્ગે આગળ ચાલ્યો. એ ત્યાં ઘણું રખડેલો તેથી ત્યાની સૌ ગલીકુચીઓ જાણતો. એ ચારે દિશાએ નજર રાખ્યા જ કરતો. આ નીરવ પ્રવાસમાં અમને ઘણીવાર થાક પણ ખાવા દેતો. અસ્ત્રશસ્ત્ર એણે સજેલાં હતા ને કમરે પટ્ટો કસ્યો હતો. એવી રીતે એ અમારી સાથે ચાલતો.

૧૦૬૫-૧૦૬૭. એકાદ ઝાડમાથી થોડાંક પખીઓ (અરધી ઉંઘમાંથી જાગીને

ઉડી જતા અને એમની પાખોનો અવાજ, પુ ટ્ડી ખાઇને પડતા સુકા પાદડાના ખખડાટ જેવો સભળાતો વળી રાની ભેસો, વાઘ, ચિત્તા અને જરખની બૂમો, તેમજ પખીઓની અનેક પ્રકારની ચીસો (દૂરદૂરથી) સભળાતી અમે મહાભયમા પડતુ મુકયુ હતુ તે છતા ય, અમે કહી શકીએ કે, વનના બધા પ્રાણીઓ ને પશુપખીઓ સારે નશીબે શાન્તિ રાખી રહ્યા હતા

૧૦૬૮–૧૦૭૧ છેવટે મે હાથીઓએ તોડી પાડેલા ડાળ જોયા, જેના ઉપરથી ફળફુલ તોડી લીધા હતા આ અને બીજી નીશાનીઓથી જાણી લીધુ કે હવે અમે વનને છેડે આવ્યા છીએ અને ત્યારે એ લૂટારાએ અમને કહ્યુ ‘ હવે તમે વનની બહાર આવ્યા છો ને હવે કઇ ભો જેવુ નથી પાસે જ ગામડા આવે છે આ મેદાનને રસ્તે તમે ચાલ્યા જાઓ હુ પણ બીજે રસ્તે ચાલ્યો જાઉં છુ લૂટારાની ગુફામા મારા સરદારના હુકમને અનુસરીન કેદમા રાખ્યા ન સતાવ્યા તે માટે ખમા કરજો ’

૧૦૭૨–૧૦૭૫ મારા સ્વામીએ ઉપકારની લાગણીથી લૂટારાની, અમારૂ ભલુ કરનારની, આખ સામે જોયુ અને શુદ્ધ નમ્રસ્વરે કહ્યુ ‘ અમારે કોઇ (સહાયક) સબધીઓ પાસે હતા નહિ તેવી વેળાએ, તમને એવો હુકમ હતો છતા, તમે અમારા જીવન ઉગારી લીધા છે કોઇ પણ આધાર કે છત્ર વિનાના અને જીવનાશા હારી બેઠેલા અમને તો એમજ લાગ્યુ હતુ કે અમે ફાશીએ ચડી ગયાં છીએ અને અમારા ગળા ઉપર (મોતની) દોરી લાગી છે, એ દોરીને તમે વીરતાથી કાપી નાખી છે વત્સનગરમા વસતા શેઠ ધનદેવનો પુત્ર હુ પદ્મદેવ છુ, એ વાતની કોઇ પણ સાખ પુરશે ’

૧૦૭૬–૧૦૭૯ અને વળી એમણે કહ્યુ ‘ ચાલો ત્યા, અમે તમને સારી પેઠે બદલો આપીશુ ’ લૂટારાએ ઉત્તર આપ્યો ‘ જોઇ લેઈશુ ’ (તે ઉપરથી મારા સ્વામીએ ફરી કહ્યુ) ‘ જ્યારે ત્યા આવવાનુ થાય ત્યારે તમને સમ છે કે, તમે અમા જરૂર મળજો જેણે જીવ બચાવ્યો હોય તેને તેના જેવો સરખો બદલો તો કદી જ આપી શકાય નહિ, પણ તમે અમારા ઉપર કમમા કમ એટલી તો કૃપા કરશો જ કે જેથી અમે તમારો સ્નેહભર્યો આદર કરી શકીએ ’

૧૦૮૦–૧૦૮૧. એણે ઉત્તર આપ્યો ‘તમે મારાથી સતોષ પામ્યા છો એ જ મારે તો ઘણ છે’ આટલુ બોલ્યા પછી વળી એ બોલ્યો ‘હવે તમે તમારી મેળે ચાલતા થાઓ’ એમ કહી એ પર્વતને રસ્તે ચાલતો થયો અને અમે મેદાનમા રખડવા લાગ્યા

૧૦૮૨–૧૦૮૬. રસ્તા વિનાના મેદાનમા મારાથી ચાલવુ મુશ્કેલ થઈ પડયુ અત્યાર સુધી અમે બહુ ઉતાવળે ચાલ્યા હતા અને હવે તો ભુખ, તરસ ને થાકથી અકળાઈ ગઈ હતી તેથી ડેવળ સુકાઈ ગએલું મ્હોએ ચાલતા પગ લથડતા હતા મારાથી જરા ય ચાલવુ અશક્ય થઈ પડયુ એટલે મારા સ્વામીએ મને પોતાની પીઠ ઉપર ઉચકી લીધી, પણ એમને શ્રમ પડે એથી તરત જ નીચે ઉતરી પડવા મે જોર

કર્યું, પણ મને શ્રમમાંથી ઉગારી લેવાને માટે એમણે કહ્યું: 'આપણે છેક ધીરેધીરે જઈશું જો આ વન ધીરેધીરે આછું થઇ ગયું છે. વળી ગાયોએ ઠેરઠેર લોંય ખોદી નાખી છે અને કોઇ કોઇ ઉકરડા પણ દેખાય છે. એ બધાથી સ્પષ્ટ છે કે કોઇ ગામ પાસે જ છે, હવે તને સારી રીતે વિશ્રામ મળશે.'

૧૦૮૭-૧૦૮૯. પળવારમાં મારો ભો ટળી ગયો અને ગાયોને-ગૃહજીવનની માતાઓને-મારી સામે જ જોઇને મને આનંદ થયો. વળી કાનમાં ફૂલના ગોટા ઘાલેલા ને હાથમાં ઝાડની ડાંખળીઓ ઝાલેલા ગોવાળીઆના છોકરા પણ અમે જોયા. ઉત્કંઠાએ એમણે અમને પુછયું: 'આવે ઓતાડે માર્ગે તમે ક્યાંથી આવો છો?' મારા સ્વામીએ કહ્યું કે 'અમે ભુલાં પડયાં છીએ' ને પછી પુછયું:

૧૦૯૦. 'આ દેશનું નામ શું? અને (પાસેના) નગરનું નામ શું? તમારૂં ગામ કયું અને અહીંથી એ કેટલે છેટે છે?'

૧૦૯૧. એમણે ઉત્તર વાળ્યો 'અમારૂં ગામ ખાયગ છે: અહીં આ વન પુરૂં થઇ રહે છે, એથી બીજું કંઈ વધારે અમે જાણતા નથી.'

૧૦૯૨-૧૦૯૪. થોડે આગળ ગયાં ત્યાં તો ખેડેલી લોંય આવી અને મારા પ્રિય બોલી ઉઠયા: 'પણે પેલી જુવાન નારીઓ ગામમાંથી નિકળી વનમાં પાંદડાં વીણવા જાય છે. મારી સુન્દરતનુ પ્રિયા, સફેદ કટિમેખળા નીચે એમની ગોળ ગતાશ પડતી જાગો કેવી સુંદર દેખાય છે!' આવાં આવાં સ્નેહભર્યાં વચનો બોલીને મારા સ્વામીએ મારો ક્લેશજનક થાક ઉતારવા પ્રયત્ન કર્યો

૧૦૯૫-૧૦૯૭. પછી અમે ગામની જરાક એક બાજુએ આવેલા તળાવ ઉપર આવી પહોંચ્યાં, તેના સ્વચ્છ પાણીની અંદર માછલાં હતા ને ઉપર કમળફુલ હતાં. અમે નિશ્ચિંતમને ગામડાના આ તળાવમાંથી કમળે સુવાસિત કંચન જેવુ પાણી ખોબે ખોબે પીધું. ત્યાર પછી વળી અમે (છછરા) પાણીની અંદર ઉતર્યા અને ઠંડું પાણી અમારા (મ્હો) ઉપર છાંટયું, પછી થાક તથા ચિંતાથી મુક્ત થઇને ગામ તરફ ચાલ્યાં.

૧૦૯૮-૧૧૦૦. ત્યાં તો અમે સુંદરીઓને ઘડામાં પાણી ભરી જતી જોઇ, એમણે કેડ ઉપર ઘડા લીધા હતા અને બલૈયાંથી શોભતા હાથ (ઘડાને) ગળે વીંટાળી રાખ્યા હતા. અને મારા મનમાં પ્રશ્ન ઉઠયો: 'ત્યારે આ ઘડાએ એવું તે શું પુણ્ય કર્યું હશે કે એ નવનારીઓની સોડમાં પુરૂપો હોય એવા બેઠા છે અને એમના હાથમાં સુંદર આલિંગન પામ્યા છે?' પણ એ સુંદરીઓ તો એકીટસે આશ્ચર્યદૃષ્ટિએ અમારી સામે જોઈ રહી.

૧૧૦૧-૧૧૦૭. જે ગામમાં અમે આવ્યાં હતા તેની ચારે બાજુએ કળાવિનાની અને છતાં યે સુંદર વાડ હતી. નારીઓ જાણે પહેરા ઉપર ઉભી હોય એવી એ દેખાતી હતી, કારણકે નારીઓનાં સ્તન જેવાં તુંબડાં એના ઉપર લટકતાં હતાં. જ્યાં આ-

ગળથી ગામની સ્ત્રીઓ અમને જોતી હતી, ત્યા આગળથી એ વાડ કમનસીબે ભાગેલી હતી તેથી એ સ્ત્રીઓ આશ્ચર્યથી અમારી સુંદરતા જોતા આખ પણ ફરકાવતી નહિ, અને જોવાની સ્પર્ધામા અદરની બાજુએથી (વાડ) ઉપર પડતી ને તેને હડસેલતી અને કોલાહલ મચાવતી આમ (વાડના) ભાગવાથી અવાજ થતો એટલુ જ નહિ, પણ (ઉત્સુકતાએ બહાર આવેલી) આધેડ સ્ત્રીઓને જોઈને કેટલાક કુતરા ચમ તા ને ઉચા મો કરીને ભસવા લાગતા અમને જે સ્ત્રીઓ જોતી હતી તેમાની કેટલીક તો માદી ને ફીકી દેખાતી હતી, એમને તાવ આવતો હતો અને (દુબળી પડી જવાથી) એમના બલૈયા ઢીલા પડી ગયા હતા એમની પાછલી બાજુએ ધોળો પોશાક પહેરેલી (તદુરસ્ત) તરુણીઓ કેડમા છોકરા લેઇને પોતાના ઘરમાથી બહાર નિકળી આવી હતી આવા આવા અનેક દેખાવ જોયા અને જણના, અને આમતેમ જોતા જોતા અમે ધીરેધીરે (એ ગામની) શેરીમા પેઠા

૧૧૦૮-૧૧૧૦ વનમા હતા ત્યારે ગમે એમ કરીને જીવ બચાવવાની ખાતર અને વનમાથી નિકળી જવાની ખાતર, (જે પગે હુ ચાલતી હતી તે) પગના ઘાની કે ભૂખની કે તરસની કે થાકની મે (બહુ) પરવા કરી નહોતી, પણ હવે તો ભો ટળી ગયો હતો ને ભવિષ્ય નક્કી થઈ ગયુ હતું, તેથી ભૂખ તરસ ને થાક વિષેના મને વિચાર આવ્યા ને મે મારા સ્વામીને કહ્યુ 'પ્રવાસીને કરવુ પડે છે એમ આપણે પણ ખાવાનુ માગીએ '

૧૧૧૧-૧૧૧૭ જેમનુ સો ધન લુગરાએ લૂટી લીધુ હતું એવા મારા સ્વામી બોલ્યા ' જેમને અનગ્ર કુળાભિમાન હોય છે તેમને તો, ગમે એવા સકટમા આવી પડયા છતા, લોકની પાસે ભીખારીને વેશે જવાનુ ભારે પડે છે ગામના લોક પાસે જઇને ઉભો રહુ એ તો મને શરમ ભરેલુ ને નીચુ જોવા જેવુ લાગે કારણ કે (ભીખારીની પેઠે) આમ ઉભા રહેવુ એ તો જેનામા કઈક લાગણી છે એવો માણસ, એનુ બધુ જતુ રહ્યુ હોય અને વગમામા દુખે ઘેરાયો હોય તે ય, પસદ ન જ કરે જે જીભ દુખને સમયે ફરિયાદ કરતા સયમમા રહે એ જીભ ભીખ માગવાનુ શી રીતે કબુલ કરે! અને છતા યે, મારી પ્રિયા, એ અભિમાન હોવા છતા યે તારે માટે ગમે તે કરતા પણ અચકાઇશ નહિ, તેથી આ શેરીના શણગારરૂપ આ મદિરમા તું થોડીવાર થાક ખા, તારે માટે ખાવાનુ શી રીતે લાવવુ એનો હુ વિચાર કરૂ છુ '

૧૧૧૮-૧૧૨૧ ચારે બાજુએથી ખુલુ અને દરેક ખુણાએ થાભલાને ટેકે રહેલુ એવુ એ મદિર હતુ અને ત્યા પવને દિવસે વ ટેલા જુવાનીઆ મેળો ભરતા (વનમાથી નિકળ્યા પછી જે ખેતરો આવ્યા હતા તેની આ બાજુની સીમા ઉપર જ આવેલા) આ મકાનના ખડમા અમે પેઠા એ મુકામ પ્રવ મીઓને ઉતરવા (ગામ લોકોએ) બાંધ્યો હતો તેમા (ગામના) ગૃહસ્થો (જગતની નવીજુની જાણવાની ઈચ્છાએ) અને વળી

ગામનાં છોકરાં (રમવા માટે) એકઠાં થતાં વનમાં બધા પ્રકારનાં બીજ અને પ્રકર્ષે બાળવીને સાચવી રાખનાર, (રાજા) દશરથનાં સત્તીપુત્રવધૂ, જગત્પ્રસિદ્ધ સીતાજીનું સ્મરણ કરીને જમીન ઉપર એક ચોકખી ને ગંગાનાં કણુસલા જેવી ચળકતો જગાએ બેઠાં.

૧૧૨૨–૧૧૨૯. એવામાં તે ખોડખાંપણ વિનાના બાંધાના એક સુંદર જુવાનને ચપળ સિંધી ઘોડા ઉપર બેશીને આવતો અમે જોયો. એણે બહુ જ નરમ ધોળાં સુતરેલ કપડાં પહેર્યા હતાં. તેની આગળ સિપાઈઓ અને બીજા માણસો ઉતાવળે પગલે ચાલતા હતા. હું જરૂર (એની નજરમાં) એક પુરૂષની શોભનમાં નગરનારી જેવી દેખાતી હોઇશ! પણ હું તો શરમાયા વિના અમારા સીતામંદિરના અષ્ટકોણ થાંભલાને અઢેલીને ઉભી રહી કુલ્માષહસ્તી (એ અશ્વારનુ નામ એવું હતું) અમારા મંદિરની ડાબી (દેવના માનમાં) બાજુએ થઈને ચાલ્યો, પણ મારા સ્વામીને દેખતા જ તે એકદમ ઘોડા ઉપરથી છલંગ મારીને ઉતરી પડ્યો એ મારા સ્વામીને પગે પડયો ને ઉંચે સ્વરે રડી પડીને બોલ્યોઃ 'હું તમારા ઘરમાં બહુ દહાડા રહ્યો છું.' મારા સ્વામીએ એને ઓળખ્યો કે તરત જ એને એ આવેગથી ભેટી પડ્યા ને પુછવા લાગ્યાઃ 'તું અહીં ક્યાંથી! (મારા પિતા) શેઠ કુશળ છે? મારાં બા ને બીજાં સૌ આપણાં સંબંધી ને મિત્રો કુશળ છે!'

૧૧૩૦. મારા સ્વામીની સામે એ જમીન પર નમીને બેઠો અને પોતાના જમણા હાથથી એમનો ડાબો હાથ ઝાલી સમાચાર કહેવા લાગ્યોઃ

૧૧૩૧-૧૧૪૨. "નગરશેઠના ઘરમાં મોટે મળસકે ખબર પડી ગઇ કે દીકરી દેખાતી નથી ત્યારે એની સખીએ (સારસિકાએ) તમારી પાછલા ભવની બધી કથા કહી સંભળાવી, અને તમે કેમ તૈયારી કરીને નાશી ગયાં એ વાત પણ એણે કહી. પછી તરત જ નગરશેઠ તમારા પિતા પાસે ગયા અને બોલ્યા 'હું કંઇક કઠોર થયો હતો એને માટે કૃપા કરીને મને ક્ષમા આપશો. મારા જમાઇની (હવે એમને જમાઈ માનીશ) શોધ કરાવો! તરત જ એ ઘેર આવે તો ય એમને (મારાથી) બીવાનું કારણ નથી. એ બિચારો જુવાન પરદેશમાં અજાણ્યા લોકની વચ્ચે શું કરશે?' ત્યાર પછી એમણે (તમારા પિતાને) શેઠને તમારા પાછલા ભવની બધી કથા અથથી તે ઇતિ સુધી, જે પ્રમાણે એમણે સખી પાસેથી સાભળી હતી તે પ્રમાણે, કહી સંભળાવી. અને તમારી કોમળ હૃદયની માતા તો તમે આમ અકસ્માત્ અળગા થઈ ગયા તેથી શોકમાં ડુબી ગયા, અને એવું છાતીફાટ રડવા લાગ્યા કે પાસે બેઠેલાને પણ રડવું આવ્યું. આખા વત્સનગરમાં એક મોંઢેથી બીજે મોઢે એમ સૌ જગાએ વાત જણાઈ ગઇ કે શેઠના દીકરાને ને નગરશેઠની દીકરીને પોતાનાં (સહ)જીવનની કથા યાદ આવી છે. હવે શેઠે ને નગરશેઠે તમને ખોળી કાઢવાને ચારે બાજુ અનેક માણસો મોકલ્યા છે; અને પણ સવારમાજ પ્રયાગ (નામે નગર) તરફ તમારી પુછપરછ કરવા

મોકલ્યો હતો, કારણ કે મારા પિતા ત્યા રહે છે, પણ ત્યા તમારો કશો પત્તો લાગ્યો નહિ છતા યે મે વિચાર્યું કે જેમની મિ કત નાશ પામી હોય છે, કે જેમને માથે બીજા સકટ આવી પડ્યા હોય છે, અથવા જેમણે અપરાધ કર્યો હોય છે, કે જે કઠણ જાદુ વિદ્યા શિખ્યા હોય છે (એમને પ્રયોગ કરવા માટે વનમાની સામગ્રીઓની જરૂર પડે છે), તેમને વનવગડાના પ્રદેશમા ફરવાનુ ગમે છે તેથી એવે એવે ઠેકાણે તપાસ કરવા ને નજર રાખવા ગયો હતો અને અત અહીં આવી પહોચ્યો છુ હવે અહીં મારા શ્રમનો બદલો આપ્યો છે તમારા ઉપર શેઠે અને નગરશેઠે નિજહાથે લખેલા આ કાગળો આપ્યા છે ”

૧૧૪૩-૧૧૪૭ તરત જ માથુ નમાવીને મારા સ્વામીએ પત્રો લીધા અને પોતાના મિત્રને જણાવ્યું કે ‘એ થાક ખાવાને ત્યા બેઠી છે’ કાગળો ઉઘાડીને (પોતે પ્રથમ વાચીને) ધીરે ધીરે વાચવા લાગ્યા, રખેને એમા લખેલુ કઈ છાનુ ઉતાવળે વાચી ના નખાય કાગળોની બધી મતલબ જાણી લીધા પછી, એમણે એ કાગળો (કશુ છુપાવવાનુ હતું નહિ તેથી) મોટેથી વાચી સભળાવ્યા, એટલે હુ પણ એથી વાકેફગાર થઇ કાગળો સાભળ્યા તે પ્રમાણે તો જરા યે ક્રોધ વિના એ લખાયા હતા અને પુષ્કળ વાત્સલ્યભાવ એમા બતાવ્યો હતો, વારવાર લખ્યુ હતું કે ‘ઘેર આવો!’ આથી મારી ચિંતા તો એકેવારે વેગળી થઈ ગઈ અને મારા હૈયામા આનદઆનદ વ્યાપી રહ્યો

૧૧૪૮-૧૧૫૫ એટલામા કુલ્માષહસ્તીની આખો મારા સ્વામીના હાથ ઉપર પડી એમના એ હાથને (લૂટારાની ગુફામા) બહુ સખત બધને બાધ્યાથી સોરાયા હતા ને તેથી જુદી જ જાતના દેખાતા હતા, વળી સુજી પણ ગયા હતા અને એણે (એમને) કહ્યુ ‘રણક્ષેત્રમા ઉતરેલા જોદ્ધાના જેવા તમારા હાથ હાથીની સુઢ સમાન બળવાન છે અને સાથે સાથે અનેક ઘાથી જુદા જ પ્રમાણના ને સુજેલા દેખાય છે એવું જે મે સાભળેલુ તે વાત ત્યારે ખરી કે?’ તરત જ, અમે કેવા કેવા ભયકર દુખ (લૂટારાની ગુફામા) વેઠયા હતા એ એને કહી બતાવ્યું પછી ગામમા સૌથી સારે ઘેર એ અમને, આરામ થાય એટલા માટે, લેઈ ગયો એ ઘર બ્રાહ્મણનુ હતું બ્રાહ્મણ અમારી સાથે સબધ રાખી શકે એવી સ્થિતિના અમે હોવાથી એ બ્રાહ્મણકુટુબમા (બ્રાહ્મણ) સરખો આદર પામ્યા, પાણીના કરવા વાપરી શકયા, વળી હાથ ધોવાને ચોકખુ પાણી મળ્યું અને પછી તરત જ સ્વાદિષ્ટ ભોજન અમને જમાડ્યા, અમે ઉપકાર માન્યો કે અમને આવી પ્રભુની પ્રસાદી મળી અમે હાથ મો ધોઇને અમારા પગના ઘામા ગરમ ઘી ચુકયુ, અને ત્યાર પછી એ કુટુબમાથી વિદાય લેઇ નિકળ્યા

૧૧૫૬ આમ ફરી અમે હતા એવા થઈ ગયા ને હવે બને જણા ઘોડા ઉ

પર ચઢ્યાં. કુલ્માષહસ્તી અને તેના સિપાઇઓ તથા માણુસોને લેઈને ઘર તરફ અમે ચાલ્યાં.

૧૧૫૭-૧૧૭૭. પહેલા તો અમે પ્રણાશક નગર ભણી ચાલ્યા. એ નગર એવું તો સુંદર છે કે એને આખા પ્રદેશનું મોતી અને ભાગ્યદેવીનું સ્થાન કહેવું જોઇએ. પોતાની સખીને ઉતાવળી ઉતાવળી મળવા જતી, ને નીચાણના પ્રદેશમાં બે કાંઠે વહેતી, ને પીવા જેવા સ્વચ્છ પાણીવાળી તમસા નદી (માર્ગમાં આવતી હોવાથી) અમે મ-છવામાં બેશી ઓળગી ગયાં એટલે અમે પ્રણાશક નગરથી શોભી રહેલા એ બે નદી-ઓના સગમસ્થાનમાં તે ને તેજ દિવસે આવી ઉભાં. અને કુલ્માષહસ્તીએ (ઉતાવળે) ગોઠવણ કરી દીધા પ્રમાણે ધોરીમાર્ગે થઇને મહા આનંદે અમારા કુળમિત્રના સંબંધીને ઘેર આવી ઉતર્યાં. ત્યાં અમારો સ્નાનથી, ભોજનથી અને તૈલમર્દનથી સારી રીતે સત્કાર થયો અને ત્યાર પછી વળી રાત્રે સુંદર નિદ્રાનો લાહવો મળ્યો. બીજે દિવસે સવારમાં ઉઠીને દાતણપાણી કર્યાં, નાહ્યાં, દેવની ઉપાસના કરી ને પછી થાક, ભય અને ભૂખથી મુક્ત થઇને વળી પાછાં પથારીમાં સુતાં. તે દરમિયાન કુલ્માષહસ્તીએ અમે ઘર તરફ આવીએ છીએ એવા સમાચાર આપવા, કૌશામ્બીમાં અમારા માબાપ ઉપર કાગળ લખી નાખ્યા. જેટલા દિવસ અમે ત્યાં રહ્યાં તેટલા દિવસમાં ખાનપાન વગેરે સર્વ પ્રકારની અમને જોઈતી સામગ્રીથી અમારાં દુઃખની નિશાની સુદ્ધાં ભુંસી નાંખવા એ લોકોએ પ્રયત્ન કર્યો. થોડા દિવસ પછી જ્યારે અમે પૂરેપૂરા સાજા થયા ત્યારે કૌશામ્બી તરફ જવાની અમે ઈચ્છા દેખાડી પ્રવાસની સૌ તૈયારીઓ થઇ. સ્ત્રીઓએ બહુ યે ના પાડી, તો ય ઘરનાં બાળકોને મેં એક હજાર કાર્ષાપણની (રકમની) બક્ષીસ કરી, જેમાંથી અમારે માટે થયેલું લગભગ બધું ખર્ચ વળી જાય. મારા સ્વામી એટલી બક્ષીસ આપતાં શરમાતા હતા, કારણ કે એવા સ્નેહભર્યા આદરની એવી કિંમત એમને બહુ ઓછી લાગતી અને એવી વાત કરતાં એમને સંકોચ થતો. (જ-તી વખતે મળી લેવાને) એ સ્નેહીઘરની સૌ સ્ત્રીઓને મેં અને સૌ પુરૂષોને મારા સ્વામીએ મળી લીધું. પ્રવાસમાં જરૂર પડે એવી સૌ ચીજો ને ઔષધો સુદ્ધાં અમે સાથે લેઇ લીધાં, જેથી માર્ગમા કશી અડચણ પડે નહિ. ત્યાર પછી મારા સ્વામી સુંદર ઘોડે ચઢ્યા, તે ઘોડો મારા રથની પાછળ ચાલતો હતો. શેઠે અને નગરશેઠે મોકલેલા ચાકરો જ માત્ર નહિ, પણ વળી (એ ચાકરો સાથે કૌશામ્બીથી આવેલો એ અમારો ગૃહમિત્ર) કુલ્માષહસ્તી અને તેનાં માણુસો પણ ચારે બાજુ વીંટાઈ વળીને ચાલતાં તે ઉપરાંત ધાડ પડેલી ત્યારે પોતાની શૂરવીરતા અનેકવાર દેખાડેલી એવા માણુસોને હથિયારબંધ કરીને અમારે રખવાળે મોકલ્યા હતા. આમ અમે ચૌટામાં થઇને પ્રણાશક નગરમાંથી નિકળ્યાં ત્યારે અમારા ભપકાથી સૌ વસ્તી આશ્ચર્યમૂઢ થઇને જોઈ રહી. અને અમારા મિત્રનો અડધો અને અમારો પોતાનો અડધો એમ બેવડો કહેલો લેઇને, કોઈથી ન ઉતરે એવા ભપકાથી, અંતે (એમની નજર) બહાર અમે નિકળી ગયાં ત્યાંસુધી રાજમાર્ગને રસ્તે જતાં હજારો લોક અમારી ઉપર તાકીને જોઈ રહ્યા.

૧૧૭૮-૧૧૮૨. હવે મારા સ્વામીએ ગાડીવાનને કહીને મારો રથ ઉભો રખાવ્યો અને પોતે મારી પાસે અંદર આવ્યા ત્યારપછી વળી પાછો સાથ ચાલ્યો (માર્ગમાં) પછી ઉંચી ડાંગરના ખેતર, વિસામાના ચોતરા તથા પગો જોતા ધીરેધીરે અમે વાસાલિક નામે ગામ આવી પહોચ્યા ત્યાં પર્વતના (લીલોતરીથી ઢંકાયેલા) શિખર જેવું એક પ્રાચીન વડનું ઝાડ જોઈને અમને આનંદ થયો કોઇપણ પ્રવાસીને આનંદ આપે એવું એ મનોહર ઝાડ હતું ખુબ પાંદડાવાળી એની ઘટામાં પંખીઓના ટોળેટોળા એના ઉપર બેઠા હતા અમારો ગૃહમિત્ર એ જોઇને બોલ્યો

૧૧૮૩-૧૧૮૫ 'આપણા ધર્મના પ્રવર્તક વર્ધમાન (મહાવીર-૨૪ માના છેલ્લા તીર્થંકર) સંસારનો ત્યાગ કરીને જ્ઞાન પામ્યા તે પૂર્વે અહીં એમણે વાસ કર્યો હતો અને તેથી આ જગ્યાનું નામ વાસાલિક પડયું પરિણામે એ જિનેશ્વર ભગવાનના સ્મરણમાં હજારો દેવ, કિન્નર ને માણસો આ વડના ઝાડની પૂજા કરે છે '

૧૧૮૬-૧૧૮૮ આ વચનો સાંભળીને અમે બંને પુજ્યભાવે ને આનંદભર્યે હૈયે રથમાથી નીચે ઉતર્યાં જિનભગવાનના સ્થાનકના દર્શન કરવાને અમને ઈચ્છા થઇ અને વડના મૂળને અમારા કપાળવડે બહુ શ્રદ્ધાથી અને નમ્રતાથી સ્પર્શ કર્યો હાથ જોડીને હું બોલી 'હે ભાગ્યશાળી વૃક્ષ, તું ધન્ય છે કે જિનભગવાન મહાવીર તારી છાયામાં આવી રહ્યા '

૧૧૮૯-૧૧૯૦ એ વડની એમ પૂજા કર્યા પછી અને ત્રણવાર એની પ્રદક્ષિણા ફર્યા પછી પાછા અમે તાજા થઇને વિચાર કરતા ફરી રથમાં ચઢયા જ્યાં (ભગવાન) વર્દ્ધમાને શાન્તિએ વાસ કર્યો હતો તે સ્થાનનું દર્શન કર્યાથી મને ઘણો આનંદ અને ઉલ્લાસ થયો અને લાંબા સમય સુધી હું એ વિચારમાં નિમગ્ન થઈ રહી

૧૧૯૧-૧૧૯૫ સ્વામીની પડખે (બેઠી) ગૃહિણીનું સુખ અનુભવતી અનુભવતી એકાકીહરતી અને કાળી એ ગાનડા વટાવી ચાલી પછી રાતવાસો કરવાને અમે, જેની હવેલીઓ વાદળાએ અડકે છે એવી બહુ વસ્તીવાળી શાખાજના નગરીમાં, આવી પહોચ્યા અહીં અમે (મારા સ્વામીના) મિત્રને ત્યાં આનંદથી ગયા, એની કૈલાસના શિખર જેવી હવેલી એ નગરીના અનન્ય શણગારરૂપ હતી અમારે માટે નાહવાની, ખાવાની અને સુવાની ઉત્તમ ગોઠવણ કરવામાં આવી હતી અમારા સમસ્ત સાથને પણ જમાડયો, વળી સારથિની અને બળદની પણ સારવાર કરી આમ અમે બહુ સુખમાં તે રાત ગાળી પછી સવારના મો તથા હાથપગ ધોઇને સૂરજ ઉગતા ત્યાંથી વિદાય લીધી

૧૧૯૬-૧૨૦૨ વિવિધ પંખીઓના અને ભમરાંના ટોળા (ઉડતા) દેખાતા, અમે વાતો કર્યે જતાં હતા તેથી કેટલો પંથ કપાયો એ તો અમને જણાયું ય નહિ

કુલ્માષહસ્તીએ આગળથી કહી રાખ્યું હતું તે પ્રમાણે ગામ અને નગરના રસ્તાની (માપ દેખાડવા) નિશાનીરૂપ ઉભાં રહેલાં પવિત્ર ઝાડોને અમે દૂરથી જોઇ લેતાં. પાછું એક બીજું વડનું ઝાડ દેખાયું; તેની કંઇક પાસે આવ્યાં ત્યારે તેનાં લીલાં પાનને લીધે તે પૃથ્વીનું જાણે શ્યામ, ભવ્ય, પ્રકાણ્ડ સ્તન હોય, એવું દેખાતું હતું; પ્રવાસીઓના સંઘને વિસામો કરવાનું એ સ્થાન હતું, રસ્તાના શણગારરૂપ હતું અને (વળી) કૌશામ્બીના સીમાડાનું મોતી હતું. ડાળડાળીઓની ઘટામાં સેંકડો પંખીઓ રહેતાં; વળી સુવાસિત ફુલકળીઓ અનુપમ શોભા આપતી. ઉપર મેઘ જેવા સફેદ પટ ઝુલતા હતા અને નીચે ઉત્સવહાર પહેરાવેલા અને પાણીએ ભરેલા કોરા ઘડા મુકયા હતા. (અમને ત્યાં સુધી સામે લેવા આવેલાં) ઓળખીતાંએ અને સગાંવહાલાંએ અમને ત્યાં વધાવી લીધાં અને અનેકાનેક આશીર્વાદ આપ્યા.

૧૨૦૩-૧૨૦૭. અમે ત્યાં નાહ્યાં અને તેથી અમારો થાક ઉતરી ગયો. પછી અમે અમારાં સાસરીઆંની પાસે ગયાં અને એમનાં ટોળાંમાં આનંદે જઇ બેઠાં. હવે મારે રથમાં બેસવાનું ન હતું ને તેથી ઘોડે ચઢી. મારી પાછળ (મારી સાચી સખી) સારસિકા અને (મને માન આપવાને આવેલો) આયાઓ, બોનાઓ, દાસીઓ, જુવાનીઆઓ અને બીજાઓનો સાથ ચાલ્યો. પણ ખાસ કરીને મારા સ્વામી પોતાના મિત્રને (કુલ્માષહસ્તીને) લેઇને બીજા ઘોડાઓ જોડેલા સોનાના રથમાં બેશી સાથે ચાલ્યા. વળી નણંદો અને ભોજાઇઓ પણ પોતાના દાસદાસીઓના સાથ સાથે અમને મળવાને આવી હતી, તે પણ સુંદર (બળદ-)ગાડીઓમાં બેશીને મારી સાથે (પિતાના) નગર તરફ ચાલી.

૧૨૦૮-૧૨૧૨. પ્રખ્યાત માણસનાં સુખદુઃખ, જવુંઆવવું, પ્રવાસે નિકળવું ને પાછું ઘેર આવવું, સૌ લોકને તરત માલમ પડી જાય છે. એવી રીતે અમે પણ ઉંચા પ્રભુદ્વારમાં (ઉતાવળે ઉતાવળે તૈયાર કરેલા વિજયતોરણમાં) થઇને કૌશામ્બી નગરમાં પ્રવેશ્યાં. ત્યાં આગળ જમણે હાથે એક નરપંખીનો અવાજ સંભળાયો અને એમ સારા શકુન થયા. અને જે રાજમાર્ગે થઇને અમે ચાલ્યાં તે માર્ગ અમને આવકાર આપવાને સફેદ સુગંધિત ફુલોથી શણગારી કાઢયો હતો, અને ઠેઠ સુધી રસ્તાની બેઉ બાજુની ઉંચી હવેલીઓની હારો ઉપર અને સુંદર દુકાનો આગળ અમને જોવાને આતુરતાથી એકઠાં થયેલાં પુરૂષો અને સ્ત્રીઓની ભીડ જામી હતી. સરોવર ઉપરનાં કમળફુલોની સપાટી પવનથી ઉંચીનીચી થાય એવો દેખાવ લોકનાં કમળફુલશાં મુખોને લીધે અમને દેખાવા લાગ્યો.

૧૨૧૩-૧૨૧૬. મારા સ્વામીને માન આપવાને માટે રાજમાર્ગ ઉપરના લોકોએ સ્નેહભરી દૃષ્ટિએ એમની તરફ જોયું, એટલુંજ નહિ પણ હાથ જોડીને નમસ્કાર કર્યા. વાદળાંથી ઢંકાઈ રહ્યા પછી જેમ શરચ્ચંદ્ર આવે એમ પરદેશથી પાછાં અમને ઘેર આવેલાં

જોઇને સૌને આનદ થયો, એટલુ જ નહિ પણ સૌએ એમને આશીર્વાદ આપ્યા ને તેમાં પણ બ્રાહ્મણોએ અગ્રેસર થઇને અને હૃદયના આ ઉમળકાનો એ કયો હુખો ઉત્તર આપી શકયા નહિ બ્રાહ્મણશ્રમણો અને એવા પૂજ્ય લોકને એમણે પણ હાથ જોડીને નમસ્કાર કર્યો, મિત્રોને આલિંગન દીધા ને બીજાઓને ધન્યવાદ દીધા

૧૨૧૭–૧૨૨૦ કોઈ કોઈ બોલવા લાગ્યા 'નગરશેઠના મહેલ આગળના ચિત્રમા ચીતરેલો ને જેને શિકારીએ વીધી નાખ્યો એ ચક્રવાક પેલો રહ્યો અને તેમા ચીત રેલી અને જે સતી થઇને નગરશેઠને ઘેર દીકરી થઇને અવતરી છે તે આ જ આ (ભાગ્યશાળી) વધૂ છે પ્રારબ્ધે ચિત્રમાના એ બેને કેવી સુદર રીતે એકઠા આણી દીધા છે! બીજા કોઇ બોલવા લાગ્યા 'કેવો સુદર છોકરો!' બીજાએ ટાપસી પુરી 'કેવુ સાચુ!' વળી બોલાયું 'કેવુ જુગને જોડુ!' 'એ એને શોભતો જ છે!'— 'ઉસ્તાદ છોકરો છે!'

૧૨૨૧–૧૨૨૫ એમ સૌ લોકોએ (જુદી જુદી રીતે) મારા પ્રિયતમને વખાણ્યા, પછી અમે ધીરેધીરે એમને મહેલે સાથે આવી પહોચ્યા, ત્યા અમને દાસદાસીઓએ પગ ધોવાનુ પાણી આપ્યુ અને સુદર પાત્રો આણીને તેમાથી દહી, ચોખા અને કુલ દેવને ચઢાવ્યા, પછી અમને માળાઓ અને કમળ ડા આપ્યા ને ત્યાર પછી હુ મારા સ્વામીની સગે બારણામા પેઠી હુ ભૂલથી જરાક પાછળ પડી ગઇ ને ઉતાવળે ચાલીને પાછી સાથે થઈ ગઈ, અને અમે મારા સસરાના મહેલના, લોકની ભીડવાળા સુદર અને વિશાળ ચોકમા આવ્યા

૧૨૨૬–૧૨૩૨ મારા પિતા (નગરશેઠ) પોતાના કુટુબને લેઇને બીજા વેપારીઓ સાથે આગળથી જ આવીને સાગામાચી ઉપર બેઠા હતા કઇક સકોચથી અમે સૌને ચરણે માથુ મુકયુ, અને એમણે સ્નેહાળ દેવોની પેઠે અમારા ઉપર દૃષ્ટિ કરી એમણે અમને આલિંગન આપ્યા, કપાળ ઉપર ચુબન કર્યા, એમની આખમા હર્ષના આસુ આવ્યા ને કયાય સુધી અમારી સામે જોઈ રહ્યા મારી માતા અને સાસુએ પણ અમને હૈયાના ઉમળકાથી આલિંગન આપ્યા અને રોઇ પડ્યા–એમની આખોમાથી આસુ નિકળી પડયા અને સ્તનમાથી ધાવણ નિકળી પડયુ પછી મારા (આઠ) ભાઈ ઓને એકેએકે પગે લાગી અને ભક્તિભાવે મારૂ મસ્તકકમળ એમની આગળ નમા વતી ચાલી ત્યારે એમની પણ આખમા આસુ તરી આવ્યા વળી જે સૌને હુ સ્નેહથી સભારતી તે સૌ આવી મળ્યા મારી દાસીઓ અને સખીઓ (સારસિકાએ) પ્રથમ (વડના ઝાડ નીચે વધાવી લેવા આવ્યા હતા ત્યારે) પોતાના આસુ રોકી રાખ્યા હતા, તેમણે પણ અત્યારે છુટથી વહેતા મુકી દીધા, (કારણ કે થોડી વાર સુધી) એમનું દુખ સમે એવુ નહોતું, ઝાકળના મોતી જેના ઉપર પડ્યાં છે એવી પુલરેખા જેવી એ (બે) દેખાતી

૧૨૩૩–૧૨૩૮. નગરશેઠની અને વેપારીઓની સૂચનાથી પછી (ભેટ મુકતી વખતે લાવવામાં આવે છે એવા પ્રકારનો) એક ઘડો આણ્યો. અમને અમારે આસને બેસાડયા પછી સૌ સંબંધીજનોએ અમારા આજ સુધીના જીવન વિષેની વાતો પુછવા માંડી. ત્યારે મારા પ્રિયે અમને જે અનુભવ થયો હતો તે સૌ (અથથી ઇતિસુધી અનુક્રમે) એમને કહી સંભળાવ્યોઃ અમે એકવાર સાથે વસતાં, એ સહવાસ પ્રિય હોવા છતાં અમારૂં મૃત્યુ થયું ને તેથી વિયોગ થયો, એ ચિત્રોને લીધે પાછો સંજોગ થયો, મછવામાં બેસીને નાશી ગયાં, લટારાના હાથમાં ફસાયાં, મરણના મોંમાં જઇ પડયાં, એમની ગુફામાંથી એક લૂટારાએ બચાવી નસાડયાં, વનમાં પ્રવાસ કર્યો, એક ગામ મળી આવ્યું અને છેવટે કુલ્માષહસ્તી સાથે ભેટો થયો. આ સૌ વાતો વર્ણવી.

૧૨૩૯–૧૨૪૪. અમારો એ સૌ અનુભવ મારા સ્વામીએ વર્ણવ્યો તે સાંભળીને બંને પક્ષની (મારા પોતાના કુટુંબની અને મારા સ્વામીના કુટુંબની) આંખોમાં પાછાં આંસુ ભરાઇ આવ્યાં, અને મારા પિતા બોલ્યાઃ ‘ તમે આ વાત અમને પહેલાં કેમ ના કહી? તમને આટલું દુઃખેય પડત નહિ ને આટલો પસ્તાવોય થાત નહિ. જરા પણ ભલું કર્યું હોય તેને માટે પણ સારો માણસ હદ ઉપરાંત ઉપકાર માને છે અને એનો બદલો વાળી શકાય નહિ ત્યાં સુધી પોતાને ઋણી માને છે. ત્યારે જેનું એક-વાર ભલું કર્યું છે તેના ઉપર વળી ફરી ભલું કરાય તે માણસો ઉપકાર માને નહિ તો શી રીતે જીવી શકે? એવા ભલાનો એને મંદરપર્વત જેટલો ભાર લાગે છે અને તેનો બેવડો બદલો વાળી શકાય ત્યારે જ એને સંતોષ થઇ શકે છે. તમે મને જીવન આપ્યું છે, ત્યારે હું પણ તમને જીવન આપી શકું તો જ જીવવું સારૂં લાગે.’

૧૨૪૫–૧૨૪૮. આવાં આવા વચનોથી ગૃહપતિએ (મારા પિતાએ) અને બીજા શેઠીઆઓએ અમને રીઝવ્યાં. અને અમારા પાછા આવવાથી અમારા ઘરનાં બધાં માણસો ખુશી થયાં હતાં. ખરે, અજાણ્યા લોક, ને સારૂં નગર પણ, અમને હેતે મળવા ઉતાવળે ભરાઇ ગયું; અને વખાણ કરવા માટે, આશીર્વાદ આપવા માટે અને વધાવવા માટે અમે સુંદર કીંમતી ભેટો આપી. કુલ્માષહસ્તીને તો બદલામાં હજાર સોનામહોરો મળી અને અમને પણ સૌ સંબંધીઓએ એકઠાં મળીને અમૂલ્ય ભેટ આપી.

૧૨૪૯–૧૨૫૩. શુભ મુહૂર્ત નિરધારીને અમારા બંને કુટુંબને શોભે એવા ઠાઠથી–નગરમાં કદી થયો નહિ એવા ઠાઠથી–અમારાં લગ્ન થયાં, આખો વખત એવો અસાધારણ ઉત્સવ મંડાયો કે અનેક લોકે આવો આનંદ કદી નહિ અનુભવ્યો હશે! અને અમારા બંને કુટુંબો હૃદયભરી મિત્રતાએ, આનંદશોકનો સમાન અનુભવ કરવા લાગ્યાં, અને બંને કુટુંબો જાણે એકજ હોય એમ દેખાવા લાગ્યાં. વળી મારા સ્વામીએ ગૃહસ્થે લેવાનાં (આપણા ધર્મના) પાંચ વ્રત લીધાં અને જિનપ્રભુના સુંદર અમૃતોપદેશનું મનન

કરતા આદર્શ ગૃહજીવન ગાળવા લાગ્યા હુ પણ આગળ (૪૫૨-૪૫૪ મા) કહી ગઈ છુ એમ એકસો ને સાઠ આયબિલ વ્રત પૂરા કરતી હતી—કારણ કે એ જ વ્રતથી મારી કામના સફળ થઇ હતી

૧૨૫૪ હવે મારી સખી સારસિકાને મે પુછ્યુ 'હુ મારા સ્વામી સાથે ચાલી નિકળી (અને તને ઘેર મોકલી) ત્યાર પછી ઘેર તારી શી સ્થિતિ થઇ?'

૧૨૫૫-૧૨૭૨ સારસિકાએ ઉત્તર દીધો ' તારી સૂચના પ્રમાણે તારા દાગીના લેઇ આવવાને હુ તો ઉતાવળી ઉતાવળી ઘેર ગઈ દરવાજાને આગળો ન જોયાથી ઘરના લોકને વ્યાકુળ થઇ ગયેલા મે જોયા અને મહેલમા મને મારી પણ સલામતી લાગી નહિ છતા યે તારા ખડમાથી તારા દાગીનાની થેલી, નગરના મણિરૂપ એ થેલી લેઇને અહી આવી પણ મારી એટએટલી વાછના છતા તુ તો મને મળી નહિ ને તેથી નિરાશ થઈને એ દાગીનાની થેલી લેઇને પાછી ગઇ 'આહ મારી સખી' એવો નિસાસો નાખીને તારા ખડમા પેઠી ને (દુ ખની મારી) ખૂબ છાતી કુટી ધીરેધીરે મારી ગભરામણભરી એકા તમા શાન્તિ વળતી ગઇ ને મને આમ વિચાર આવ્યો '(પૂર્વ જન્મના યાદ આવ્યાનો) એમનો પડદો નગરશેઠને નહિ ખોલુ તો એ પોતાની દીકરી ઉપર ભારે ક્રોધ કરશે માટે હુ એમ કરીશ, (એટલા માટે કે) જતે દહાડે એ એમની દયા પામે મારૂ પોતાનુ પણ થાડુ ઘણું ઋણ આ પ્રમાણે વળશે ' મારા અકળાએલા હૃદયમા આવા આવા વિચારો ઉઠ્યા અને હુ પથારીમા જઈ પડી, પણ તે રાતે ઉંઘ બીલકુલ આવી નહિ પછી સવારમા હુ નગરશેઠને પગે પડી અને તારો પૂર્વભવ તને સાભરી આવ્યાની અને તારા પ્રિયની સાથે તારા ચાલી ગયાની સૌ કથા એમને કહી દીધી પણ એ તો પોતાના અનમ્ર કુળાભિમાનને કારણે, રાહુએ ગ્રહાએલા ચદ્રની પેઠે પોતાનુ સૌ તેજ હારી બેઠા હાથ ચોળીને એ બોલ્યા 'અરેરે! કેટલુ ભયકર આ પણા કુળ ઉપર આ શું કલક આવી પડયુ! એ ચક્રવાકનો કે શેઠના દીકરાનો પ્રણ કશો દોષ નથી, દોષ માત્ર મારી દીકરીનો કે જે આમ સ્વચ્છદ થઇને ચાલી ગઇ નદી જેમ પોતાના જ કિનારાને ડુબાડે તેમ ભ્રષ્ટ નારીઓ પોતાના કુળની આબરૂને ડુબાડે અશુદ્ધ પુત્રી ઉંચા અને ધનવાન્ કુળને હાનિ કરે છે, અને એ પોતાના ભ્રષ્ટાચારથી આખા કુળને, તે ગમે તેવું સારૂ હોય તો ય, કલક આણે છે, તેથી તે એ કુળને શોભતી નથી સાચુ જ કહ્યુ છે કે કપનાના સ્વપ્ન ઉપર અને સુદર મૃગજલ ઉપર જે ટલો વિશ્વાસ રખાય એટલો જ વિશ્વાસ ચચળ અને ચતુર નારી ઉપર રખાય' વળી એમણે કહ્યુ 'પણ તે આ બધી વાત મને વહેલી કેમ ના કહી? હુ ત્યારે જ એને પરણાવત અને આ સકટ આવવા ના દેત'

૧૨૭૩-૧૨૭૪ "મે ઉત્તર દીધો 'એની કામના સફળ થાય નહિ ત્યા સુધી એ વાત છાની રાખવા માટે મારે એના જીવના સોગન ખાવા પડ્યા હતા હુ

એ સંતલસમાં ભળી હતી, તેથી મારે પગતો પણ ચુપ રહેવું પડ્યું હતું. તેથી શેઠ, મારા ઉપર દયા કરો.'

૧૨૭૫–૧૨૭૯. "શેઠાણીએ જ્યારે આ બધી વાત સાંભળી ત્યારે એ તો તારા દુઃખના ને વિજોગના વિચારમાં બેભાન થઈ પડ્યાં. અને એમને પડેલાં જોઈને, નાગણને ગરૂડના પંજામાં સપડાએલી જોઈને ગભરાએલા નાગરાજની પેઠે, શેઠ પોતે પણ તરત જ છુટે મ્હોંએ રડવા લાગ્યા. ભાન આવ્યા પછી શેઠાણી એવું તો હૃદયભેદક રૂદન કરવા લાગ્યા કે બીજાં બધાને રોવું આવ્યું. ભાઈઓ ભોજાઈઓ ને બીજાં બધાં, સખી, તું જતી રહી તેથી, ખૂબ રોપીટ કરવા લાગ્યાં. પણ શેઠાણીનું હૈયું સ્નેહાળ, તેથી દીકરીના સ્નેહને કારણે એમના શોકનો ને રૂદનનો તો પાર જ રહ્યો નહિ; છેવટે એમણે શેઠને કાલાવાલા કરી કહ્યું:

૧૨૮૦–૧૨૮૪. 'જે લોક શુદ્ધાચારી હોય છે ને આબરૂદાર મનાય છે એમને પણ દીકરી તરફનાં બે દુઃખ તો હોય છે: વિજોગ ને કલંક. પણ એ સૌ પૂર્વકર્મે કરીને નક્કી થયેલા પ્રારબ્ધને આધીન છે. માણસની ઇચ્છા હોય કે ના હોય, પણ એ પ્રારબ્ધ વડે માણસ સુખદુઃખ પામે છે, તેથી ભૂલ થઈ જાય તેનો દોષ લેવો ના ઘટે; કારણકે કુટિલ કાળદેવતા એને ખેંચી ગયો. પૂર્વભવની વાત એને સાંભરી આવી અને તેથી એક વખતના કર્મનું ફળ એને મળ્યું, ત્યારે તો એની ભૂલ બહુ નાની કહેવાય. અને મારો એ દીકરી ઉપર એવો ભાવ છે અને મારા હૈયામાં એ એવી વશી રહી છે કે એના વિના મારાથી જીવાશે નહિં.'

૧૨૮૫–૧૨૮૯. "આવે વચને કાલાવાલા કરીને નગરશેઠની પત્ની પોતાના સ્વામીને પગે પડી, અને 'ઠીક ત્યારે' એવું એમની મરજી ના છતાં ય એમની પાસે કહેવરાવ્યું. પછી એમણે કહ્યું: 'ધીરજ ધર! એ તારી લાડકી તને લાવી આપીશ; એ બે ક્યાં ઉપડી ગયાં છે તેની શેઠ પાસેથી ખબર પડશે' એમ બોલી તારા પિતા પછી રથમાં બેશીને અહીં આવ્યા અને તમને બેને શી રીતે ઘેર પાછાં લાવવાં એ બાબત શેઠ સાથે વિચાર કરવા લાગ્યા, પણ (તે દરમિયાન તારા પિતાના) ખરાબ કુટુંબે તો મને ધમકાવી, આંખો કાઢીને એક લપડાક ચોઢી કાઢી ને આમ મને સજા કરી. વળી એ કહેવા લાગ્યાં કે 'તું એને ત્યાં લેઈ જ કેમ ગઈ?' વળી તમને ખોળવાને માટે માણસો મોકલ્યાં અને તમને આવતાં સાંભળીને એ સૌ રાજી થઈ અહીં પાછાં આવ્યાં."

૧૨૯૦–૧૨૯૧. (સાધ્વી કહે છે:) સારસિકાએ જે બધું જાણ્યું હતું એ સૌ એણે મને વિગતવાર કહી સંભળાવ્યું. અને પછી મારા સ્વામીએ શા માટે ઉતાવળ કરી હતી ને દાસદાસી વગર અમે કેમ ચાલ્યાં ગયાં એ વાત મેં એને કહી સમજાવી.

૧૨૯૨–૧૨૯૭ મારા પતિએ વિદ્વાન મિત્રોની સહાયતાથી એક નાટક રચ્યુ હતું તે નાટક નટીઓ મને ભજવી બતાવે એવી વ્યવસ્થા થોડા દિવસ પછી મારા સસરાએ કરી આમ અમે આ ભવ્ય મહેલમ સબધીઓ અને મિત્રો વચ્ચે, કમળ સરોવરમાના ચક્રવાકની પેઠે, મહા આનદે રહેવા લગ્યા અમારા હૈયા સ્નેહાનદે કરીને ગઠાઇ ગયા અને અમે પળવાર પણ એક બીજાથી અળગા રહી શકતા નહિ હુ જાણે સ્નેહના લાબા સુખને માટે સરજાઈ હતી તેથી એક પગ પણ જો હુ એકલી પડતી તો ય મને એ પગ બહુ લાબો લાગતી, નાહતા, ખાતા, શણગાર સજતા, સુતા, બેસતા, ટુકમા મો કાજ કરતા, અને ચદ્રની એકતાનો આનદ ભોગવતા, તે એટલે સુધી કે અમે માળાઓ પહેરીને, અને સુગધી પ ાથી અમારા શરીર ઉપર છાટીને અને ચોળીને નાટક જોવા જતા ત્યારે પણ એવી એકતાનો આનદ ભોગવતા આમ અમે કશી પણ ચિ ત વિના સ્નેહમા એકવત્ થઈ રહેતા

૧૨૯૮–૧૩૦૮ આમ સુખસાગરમા તરતા તરતા તારાઓ અને ચદ્રથી પ્રકાશતી રાતોવાળી સુદર શરદ્ સુખમા ચાલી ગઇ પછી શિશિરની રાતો આવી તે લાબી થવા લાગી ને ઝાકળ પડવા લાગ્યો, (એ ઋતુમા) સૂરજ પોતાનો પ્રકાશ ઉતાવળે એચી લેવા લાગ્યો, (ગ્રીષ્મની વિલાસસામગ્રીઓ) ચદ્ર, ચદન, મોતીની માળા, કકણ, સુતરના ને રેશમના કપડા એ મો મનથી ઉતરવા લાગ્યા શિયાળો આવ્યો, બરફ સાથે એની પણ મજાઓ લેતો આવ્યો ઘેરઘેર સ્નેહીજન અને (ઘેર આવેલા) બધા પ્રવાસીઓ આનદ કરવા લાગ્યા ત્યારપછી વસતમા ઠડી ચાલી ગઈ ત્યારે સહકાર ફુલ (સા પ્રકૃતિમા) ખી યા તેની સાથે સ્નેહનું રાજ્ય પણ ખીલ્યુ તેવારે નારીઓએ કામ પડતા મેલવા માડ્યા ને Cતાવળી ઉતાવળી હીંડોળાખાટે ગઈ હિ ડોળાખાટને મજબુત બાધી હોય અને સ્નેહી હ થે કરીને એ હિ ડોળાય તો વગર બીએ ખુબ હીંચકા આવે ને ખુબ આનદ મળે અમારા અતુલ, અદ્ભુત અને જોવાજેવા બાગની શોભા નિહાળતા અમે નદનવનના દેવજુગલની પેઠે આનદ કરતા (મારા પ્રિય મને કહેતા) 'મદનવાડીના દૂતરૂપ આ ભમરા તો જો ઝાડના ફુલ અને બીજી વનસ્પતિ ઉપર, નારી લોકની આખના કાજળની પેઠે, ચોટી બેઠા છે અને વેલીઓ ઉપર (તેમની કળીઓ રૂપ) ચદ્રને (ચદ્રગ્રહણમા) ઢાકી નાખતા રાહુ સરખા દેખાય છે' આવી શૃંગારિક ઉપમાઓથી મારા સ્વામી મને આનદ આપતા અને મારા વાળમા ફુલ ખોસતા, જેથી એ બધાનો મિશ્ર સુગધ નિકળતો આવુ આવુ કરવાને લીધે ખીલેલી વનસ્પતિ જોવામા અમને બહુ મજા પડતી અને આવી રીતે આનદમા તથા સ્નેહમા અમે જડાયા રહેતા.

(૧૦ લૂટારાનું સાધુ થવું.)

૧૩૦૯–૧૩૧૪. (ઋતુઓ બદલાતાં ફરી પાછી વસંત આવી અને પ્રકૃતિની શોભા નિહાળવા ફરી પાછાં અમે બાગમા ગયા) ત્યાં એક અશોક વૃક્ષની નીચે મુકેલી પત્થરની બેઠક ઉપર (આપણા ધર્મના) એક સાધુને નિશ્ચિંતમને મ્હોં નીચુ રાખીને બેઠેલા જોયા. તરત જ મારા વાળમાંના ફુલ ખરી પડયાં, મેં મારાં અંગ ઢાંકી દીધાં અને મારા મ્હોને શોભાવતા ચૂર્ણ(પાઉડર)ને લુંછી નાખ્યો. મારા સ્વામી પણ સ્વસ્થ થઇ ગયા; એમણે જોડા ઉતારી દીધા ને ફુલ મુકી દીધાં, કારણ કે લભકાલેર પોશાકે મહાપુરૂષ પાસે જવું શોભે નાહિ. પછી અમે ઉતાવળે ઉતાવળે એમની તરફ ગયાં, અને કંઇક દૂરથી માથું નમાવી પૂજ્યભાવે, પણ શાન્તિથી, અમૂલ્ય રત્નની પેઠે એમને નિહાળવા લાગ્યાં. પછી અમે જરા વધારે નજીક ગયાં, અને માયા, મદ, મોહ આદિથી વિરકત, શુભધ્યાનમાં સંલગ્ન અને શરીર તરફ પણ અનાસકત એવી એ ધર્મમૂર્તિના ચરણમા અમે અમારી કરાંજલિ અર્પણ કરી. ક્ષણભર અમે પણ એમની આગળ, અવ્યગ્ર મનવાળા થઇ, શાન્તચિત્તે ધ્યાન ધરીને બેઠાં અને પછી જ્યારે પોતાના ધ્યાનમાંથી મુકત થઇ, એમણે પ્રશાન્તદૃષ્ટિએ અમારી તરફ જોયું ત્યારે અમે ઉભા થઈ વિનયભાવે એમને ત્રણવાર વંદન કર્યું.

૧૩૧૫–૧૩૧૭ આ પ્રમાણે વંદન અને નમન કરીને તપોગુણનો ઉત્કર્ષ ઇચ્છીને એમના શરીર અને જીવનયાત્રાના કુશળ પ્રશ્નો પૂછ્યા.

૧૩૧૮. એના જવાબમાં તેમણે આશીર્વાદ આપીને કહ્યુ કે 'જ્યાં જવાથી જગતનાં બધાં દુઃખોનો અંત થાય છે અને અતુલ તથા અક્ષય સુખ પમાય છે એવું જે નિર્વાણ સ્થાન તે તમને પ્રાપ્ત થાઓ.'

૧૩૧૯–૧૩૨૦. તેમનો એ આશીર્વાદ અમે અતિ નમ્ર અને શ્રદ્ધાળુ ભાવે મસ્તકે ચઢાવ્યો અને પછી જરા અને મૃત્યુની પેલી પાર લઇ જનાર કલ્યાણકારક ધર્મનો ઉપદેશ આપવાની પ્રાર્થના કરી.

૧૩૨૧. એના ઉત્તરમાં તેમણે જીવ–આત્માનાં બંધન અને મોક્ષ વિષે શાસ્ત્રમા જણાવ્યા પ્રમાણે ધીરેધીરે સરળતાપૂર્વક આ રીતે ઉપદેશ આપ્યોઃ

૧૩૨૨–૧૩૨૬. 'જગતમાં રહેલા પદાર્થોનાં સ્વરૂપને જાણવાનાં ચાર સાધન છેઃ ૧ પ્રત્યક્ષ, ૨ અનુમાન, ૩ ઉપમાન, અને ૪ આગમ. આપણી ઇન્દ્રિયોથી જે વસ્તુ જોઇ–જાણી શકાય, તે પ્રત્યક્ષ ગણાય. જે વસ્તુના કોઇએક ગુણધર્મને જોઈ–જાણી તેના વિશેષ સ્વરૂપનો નિર્ણય કરવો, તે અનુમાન કહેવાય. પ્રત્યક્ષ અગર પરોક્ષ વસ્તુ સાથે કોઈ બીજી વસ્તુને સરખાવવી તેનું નામ ઉપમાન હોય છે, અને કોઈ શાસ્ત્ર અગર શિક્ષક પાસેથી જે વસ્તુનું જ્ઞાન મેળવવું તે આગમ કહેવાય છે. આ ચાર રીતે બંધ અને મોક્ષનું પણ જ્ઞાન મેળવી શકાય છે.

૧૩૨૭–૧૩૩૪. 'હવે આત્મા તે શું છે તે વિચારીએ. આત્મા રૂપ, શબ્દ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શ એ ઇન્દ્રિયગોચર ગુણોથી સદા સર્વદા મુકત છે, એ ઇંદ્રિયથી પણ

અગોચર છે એ અનાદિ અને અનત છે જ્યા સુધી એ શરીરના બધનથી બધાયો છે ત્યા સુધી એ સુખદુ ખ અનુભવે છે, અને ત્યારે (અનુભવે એટલે) – ઇંદ્રિયોવડે નહિ, પણ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ વડે – વિવિધ પ્રકારની સમ્મતિ ઇચ્છા, વિચારો આદિ દર્શાવવા માટે દેહના જે હલનચલન થાય છે તેના વડે – પ્રમાણભૂત થાય છે વિચાર, અહકાર, જ્ઞાન, સ્મરણ, બુદ્ધિ આદિ સ્વરૂપે એ પ્રકટ થાય છે સસારના સ્વભાવ નિયમ પ્રમાણે (પૂર્વ જન્મના પુણ્યના કે પાપના ફળરૂપ) કર્મ ભોગવવનો આત્મા હર્ષ કે શોકનો, સુખ કે દુ ખનો, શાન્તિ કે અશાતિનો, આનદ કે ઉદ્વેગનો, ભય કે વૈરના અનુભવ કરતો પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે

૧૩૩૫-૧૩૩૯ "આત્મા પોતે કરેલા સારા નરસા કર્મવડે સસાર વધારે છે અને તે ત્રણ રીતે મનથી, વાચાથી ને કર્મથી મૂઢ જીવન (મોહે કરીને સસારમા) લિપ્ત થઇ જતા કર્મના બધનમા પડે છે, પણ મોહથી મુક્ત થઇને સસારમા વસે છે તો તે પોતે કર્મથી અલિપ્ત રહે છે, એ જ તીર્થંકરોએ (આપણા ધર્મના સસ્થાપકોએ) એ જ પ્રકારનો ટુકામા (આત્માના) બધ અને મોક્ષ સબધે ઉપદેશ આપ્યો છે એક બાજુથી આત્મા (અમુક કર્મોથી) મુક્ત થાય છે, અને બીજી બાજુથી (અમુક કર્મોથી) એ બધાય છે, એ રીતે સસારપ્રવાહના ચક્રમા ભમરાની પેઠે એ ફર્યા કરે છે સારા કર્મે એ બધાય તો (ફળ પાકીને) દેવયોનિમા અવતરે છે, મધ્યમ કર્મથી માનવયોનિમા અવતરે છે, મોહમય કર્મથી પશુયોનિમા પુનર્જન્મ પામે છે, ને બીલકુલ ખરાબ કર્મથી નરકમા પડે છે

૧૩૪૦-૧૩૪૩ "રાગ અને દ્વેષને જે દબાવી દેતો નથી, તે કર્મના બધનમા પડે છે વળી (પાચ મહાપાપ, જેવા કે) પ્રાણાતિપાત, અસત્ય, અદત્તાદાન, મૈથુન અને પરિગ્રહ, તેમજ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ, (તથા વિવિધ પ્રકારની બીજી નિર્બળતા) ભય, તરગ, કુટિલતા અપ્રામાણિકતા આદિ, આ બધા દુર્ગુણો જ્યારે અજ્ઞાન સાથે ભેગા થાય છે, ત્યારે કર્મના બધનનું મૂળ દૃઢ બને છે, એમ સારરૂપ તિર્થંકરોએ કહ્યુ છે

૧૩૪૪-૧૩૪૬ "તેલ ચોળેલા માથા ઉપર જેમ ધૂળ ચોટી જાય છે, તેમ રાગ અને દ્વેષના વિચારોએ ખરડાએલા આત્માને કર્મ ચોટી જાય છે, અને તેના પ્રભાવથી આત્મા પૃથ્વી, પાણી, અગ્નિ, પવન, અને વનસ્પતિ જેવી અતિ સૂક્ષ્મ જીવયોનિઓમા વારવાર જન્મમરણ કરતો પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે

૧૩૪૭-૧૩૪૮ 'સાધારણ રીતે વર્ણવીએ તો (આત્માને બધનમા રાખનારા) કર્મ આ આઠ પ્રકારના છે

૧ જ્ઞાનાવરણીય	૫ આયુ
૨ દર્શનાવરણીય	૬ નામ
૩ વેદનીય	૭ ગોત્ર
૪ મોહનીય	૮ અતરાય

૧૩૪૯-૧૩૫૨ "અને જેમ જુદા જુદા દાણાના બીજ પૃથ્વીમા વેરવાથી પોતપોતાની જાત પ્રમાણે જુદા જુદા ફળફુલ આપે છે, તેમજ વિવિધ પ્રકારના કર્મો

પોતપોતાની વિવિધતા પ્રમાણે શુભ અશુભ–સારાં નરસાં ફળ આપે છે. કર્મકૃત ફળોદયનું સ્વરૂપ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ અને ભવને આશ્રયે જાણી શકાય છે. દ્રવ્ય એટલે કે (આ વિષયમાં) આત્મા, નક્કી થયેલે ક્ષેત્રે એટલે કે ત્રણ લોકમાં (સ્વર્ગમાં, મર્ત્યમાં અને પાતાળમાં અથવા નરકમાં), કાળમાં એટલે કે ફળને અનુસરી જન્મજન્માન્તરના ફેરામાં ભટકે છે, જેથી એક સ્થિતિ ફરીને બીજી થાય છે અને પૂર્વનાં કર્મને લેઇને નવાં નવાં જીવન ધારણ કરે છે.

૧૩૫૩–૧૩૫૬. "(આત્માના સામયિક શરીરને ધારણ કરતી) સ્થિતિ ઉપર શરીર આધાર રાખે છે, શરીર ઉપર માનસિક કર્મનો આધાર છે, માનસિક કર્મ ઉપર અંતઃકરણનો આધાર છે, અંતઃકરણ ઉપર તદ્રૂપતાનો (ભાવ અને વસ્તુની એકરૂપતાનો) આધાર છે, તદ્રૂપતા ઉપર પરિણામનો આધાર છે અને પરિણામ ઉપર આત્માને લાગતાં બાહ્ય અને આભ્યંતરિક દુઃખોનો આધાર છે. આ દુઃખો ટાળવાને માટે માણસ આનંદ કરવા જાય છે ને ત્યાં બહુ પાપ આચરે છે; આ પાપને લીધે (કારણકે એનું પ્રાયશ્ચિત્ત કરવાને માટે બીજા દેહ ધરવાજ જોઇએ) જન્મમરણના ફેરા ફર્યા જ કરવાની ઘટમાળને ચાકે બંધાય છે. આમ માણસને પોતાના કર્મને અનુસરીને યોજાયા પ્રમાણે ગમે તો નરકમાં, ગમે તો પશુયોનિમાં, ગમે તો માનવજાતિમા કે ગમે તો સ્વર્ગમાં ભમવું જ પડે

૧૩૫૭–૧૩૬૧. "(ઉપર બતાવેલી યોનિઓમાંથી ત્રીજીમાં એટલે માનવજાતિમાં અવતરે તો) માણસને (ઉદાહરણ તરીકે) તેના કર્મને અનુસરીને પુનર્જન્મમા ચંડાળ, ભિલ, અંત્યજ, પારધિ, શક (સિથિયન), યવન (સેમેટિક અને ગ્રીક), બર્બર (વનવાસી) આદિને ત્યા અવતાર આવે. માનવજાતિમાં જન્મ આવતાં પણ તેને પોતાનાં (પૂર્વ)કર્મને અનુસરી અનંત સુખદુઃખ ભોગવવાં પડે; શરીર અને બુદ્ધિના વિકાશને અનુસરી માણસ ચાકર થઈ દુઃખ ભોગવે કે ધણી થઈ સુખ ભોગવે, સંજોગ પામે કે વિજોગ સહે, કુલીનને ઘેર કે કુલહીનને ઘેર અવતરે, જીવનબળ ને જીવનવિલાસમાં આગળ કે પાછળ પગલાં ભરે; લાભ પામે કે હાનિ સહે. એ સૌ કરતા પણ વધારે તો એ ધ્યાન રાખવાનું છે કે આત્મા મનુષ્યના જ (સ્વર્ગના કે બીજા કોઇમાથી નહિ) અવતારમાંથી સર્વ દુખનો અંત આણનાર મોક્ષને પામી શકે.

૧૩૬૨–૧૩૭૧. "(હવે આ મોક્ષ સંબંધેઃ) સસારમાંનો અજ્ઞાન ઝાંખરાએ પુરાઇ ગયેલો જે માર્ગ તે તીર્થંકરોએ સમ્યગ્ જ્ઞાને તથા શુદ્ધ જીવને કરીને ઠેઠ મોક્ષ સુધી ચોકખો કર્યો છે પૂર્વકાળથી પોતાને વળગી આવેલાં કર્મને (જીવના જન્મજન્માન્તરના માર્ગમાં એના ઉપર લાગેલા કર્મસંસ્કારને) આત્મસંયમ વડે જે દબાવે છે અને (રહી ગએલાં અથવા વધતાં જતાં) બાકીનાં કર્મને સંયમ વડે નષ્ટ કરે છે. એ જ્યારે (માનવદેહમાંથી મરીને) પોતાનાં સર્વ કર્મનો ક્ષય કરે છે ત્યારે તે કર્મમુક્ત થાય છે અને પરમપવિત્ર બને છે. નિમેષમાત્રમાં એ ઉંચામાં ઉંચું સ્થાન પ્રાપ્ત કરે છે, અને ફરી

જન્મવાના દુ ખથી અને ચિંતાથી મુક્ત થઇને, અવિચળ પવિત્રતા ભોગવે છે વિવિધ યોનિમા અવતાર આપનાર કર્મથી મુકત થતા આત્મા પવિત્ર બનીને ઉપાધિના પંજામાથી છુટી પોતાની મેળે જ ઉંચે ચઢે છે સર્વોત્તમ દેવોના (ન્ગ્રૈવેયકોના) ઉપર એ પવિત્ર પ્રદેશ આવેલો છે, તે પ્રભાતના જેવો પ્રકાશે છે અને સોના તથા શંખ જેવો સ્વચ્છ છ ત્રિલોકને શિખરભાગે એ અવસ્થિત છે અને રત્નનિર્મિત છત્રના જેવો આકાર ધારણ કરે છે એને કોઇ સિદ્ધક્ષેત્ર, કોઇ પરમપદ, કોઇ અનુત્તરસ્થાન અને કોઇ બ્રહ્મલોક કહે છે અખિલ જગતને શિરોભાગે આવેલા એ સ્થાનની ઉપરે સર્વ કર્મથી વિમુક્ત થએલા સિદ્ધાત્માઓનો શાશ્વત વાસ હોય છે એ સિદ્ધાત્માઓ સર્વ કર્મથી મુકત હોય છે, રાગદ્વેષના સસ્કારોથી અલિપ્ત હોય છે પાપ અને પુણ્યની પેલે પાર ગએલા હોય છે સુખદુ ખના વિકારોથી અસ્પૃષ્ટ હોય છે અનંતજ્ઞાન અને શક્તિથી પરિપૂર્ણ હોય છે એ સિદ્ધાત્માઓ ફરી વાર કયારે પણ પુનર્જન્મને પ્રાપ્ત થતા નથી એક આત્મજ્યોતિમા અનત આત્મજ્યોતિઓ સમિલિત થાય તોપણ તેમના સ્વરૂપાવસ્થાનમા કોઇ પણ પ્રકારનો સકોચ કે વિસ્તાર થતો નથી"

૧૩૭૨–૧૩૭૪ (સાધ્વી તરંગવતી એ શેઠાણી આગળ બોલે છે) સાધુના આ ઉપદેશથી હુ તો એક પ્રકારના આનદમા ડુબી ગઇ, ને હાથ કપાળે લગાડીને બોલી 'અમે આ ઉપદેશને કારણે આપના અત્યત ઋણી છીએ' મારા પ્રિયે તો એમને અચળ શ્રદ્ધાથી નમસ્કાર કરી કહ્યું 'આપ જગતના બધનથી મુકત થઇ ગયા છો, ધન્ય છે આપને જો આપને એ સાભરતું હોય તો આપ એ સાધના શી રીતે સાધી શકયા છો, તે પણ મને કહો મારી ઉત્કઠાને માટે, હે મહાત્મા, મને ક્ષમા આપશો'

૧૩૭૫ તીર્થંકરોના ધર્મમા પરગત થયેલા એ સાધુએ પોતાના જીવનની કથા આનદમય શાન્તિએ મીઠી અને શાત વાણી વડે આ પ્રમાણે કહી

૧૩૭૬–૧૩૮૮ "ભેંસ, સાપ, ચિત્તા અને જગલી હાથીઓ જ્યા વસે છે એવા ભયકર વનપ્રદેશમા આવેલા ચપાપ્રાન્તની ધારે પારધિઓ રહેતા હતા, તેઓ વનમા સહાર કર્યા કરતા, તેમનું સસ્થાન યમરાજના ગુપ્તવાસ સ્વરૂપ હતુ તેમની જોબનવતી કન્યાઓ રાતા રગના વસ્ત્ર પહેરતી અને વળી એમની નારીઓ જુવાન હાથીઓના દાતવડે હથિયાર બનાવવાનુ કામ કરતી હુ પણ પાછલા ભવમા ત્યા પારધિ હતો અને હાથીઓનો શિકાર કરતો વનમા જીવન ગાળતો ને માસ ખાતો, મારા સફળ બાણવેધના લોક વખાણ કરતા અને તેથી મને 'સિદ્ધબાણ' કહેતા મારા પિતા પણ પારધિ હતા, એ પોતાની નેમ કદી ચુકતા નહિ, પોતાના ધધામા કુશળ હોવાથી એમને લોક 'વ્યાધરાજ' કહેતા મારી માતા મારા પિતાની માનીતી હતી ને તે પોતે પણ એક પારધિની પુત્રી હતી વનનુ ભયકર અને અભિમાનભર્યું સૌન્દર્ય તેનુ પોતાનુ જ હતું, એથી લોક એને 'વનસુદરી' કહેતા

૧૩૮૫–૧૩૯૩ "જુવાનીમા એકવાર મે મારૂ તીર એક હાથી ઉપર તાક્યુ,

ત્યારે મારા પિતાએ મને શીખામણ આપી: 'આપણા કુળમાં જે આચાર પળાય છે તે તું સાંભળ. પ્રજા ઉત્પન્ન કરી શકે એવો હોય ને ટોળાનો નાયક હોય એવા ભવ્ય હાથીને તારે મારવો નહિ. વળી પોતાનાં બચ્ચાંનું રક્ષણ કરવાને સ્નેહવશ થઇને પારધિનો ભય કર્યા વિના બચ્ચાની સાથે ચાલે છે એવી જે હાથણી તેને પણ બચાવવી. તેમજ હાથીનું જે બચ્ચું હજી ધાવતું હોય તેને પણ મારવું નહિ, કારણ કે નાનાને મોટું થવા દેવું જોઇએ વળી કોઈ નર તથા માદા સ્નેહવશ થઇને દૈવજોગે આગળથી જ સંભોગ કરતાં દેખાય, તો તારે એ બેને વિખુટાં નહિ પાડવા, કારણકે તેમના સ્નેહસંભોગથી બચ્ચાં થાય છે. આવો આપણો કુળનો આચાર છે તે તારે પાળવો જોઈએ. જે એ આચાર ઓળંગે છે તે અને તેનાં કુટુંબીઓ નાશ પામે છે. (હાથીનાં) બચ્ચાંને મારવાં નહિ અને તેના વંશને બચાવવો જોઇએ. આ શીખો લે અને (પછીથી) તારા પુત્રોને પણ શીખવજે.' આ ભાવનાએ જ હું મારો ધંધો ચલાવતો હતો અને ગાઢા જંગલમાં રસ્તો કાપતો અને ગેંડા તથા જંગલી બળદો તથા જંગલી ભેંસો તથા હરણો તથા હાથીઓ તથા સુવરોની પાછળ પડતો.

૧૩૯૪-૧૪૦૦. "સરખા ઘરની એક જુવાન ને સુંદર કન્યા સાથે મને મારાં માબાપે પરણાવ્યો. એ મને સ્નેહાનંદ આપતી. એ રંગે શ્યામળી હતી, એનાં સ્તન કામોદ્દીપક હતાં, નિતંબ ભારે હતા અને ચદ્રમાના હાસ્યથી પ્રકાશ પામતું હોય એવું એનું મુખ હતું. એની આંખો રાતા કમળ જેવી હતી અને જુવાનીના જોરથી એનું કલેવર ખીલી ઉઠેલું હતું. ટુંકામાં, એની વિશુદ્ધ સુંદરતાને લીધે અને એના સ્નેહને બળે મારી જુવાનીમાં એ મારા મહાભાગ્ય રૂપ બની રહી હતી. વનનું આવું મનગમતું રત્ન જેની પાસે હોય તે શિકારના આવા ખજાનાથી સંતોષ પામ્યા વગર કેમ રહે ! મારી પારધણના મોહભર્યા આલિંગનમાથી છુટી સવારમાં ઉઠતો અને પછી મદિરા અને રતિક્રીડાના ઉપભોગથી જે કંઇ થાક ચઢયો હોય તેને દૂર કરી અમારા પારધિ-લોકની દેવીની પ્રાર્થના કરવા જતો. પછી ખાનપાન કરી તાજો થઇ પાછો મારા લોહીથી ખરડાએલે ધંધે લાગી જતો.

૧૪૦૧-૧૪૧૪. "એક દિવસ ઉનાળામા મેં ધનુષબાણ લીધાં, ભાથું લટકાવ્યું ને રસ્તે પડયો. કાન પાછળ વનફુલ ખોસ્યાં હતા ને પગમાં પાવડીઓ પહેરી હતી. એવી રીતે હું વનહાથીની શોધમા નિકળ્યો, અને આખરે (ખાધાપીધા વગર ને કંઇ શિકાર મેળવ્યા વિના) તાપે ને દુઃખે નબળો પડી જઇ આખા વનમાં રખડતો રખડતો ગંગાનદી સુધી જઈ પહોચ્યો. ત્યા સ્નાન કરીને તરતનો જ નિકળેલો પર્વત જેવો ઉંચો માત્ર એક જ હાથી મેં જોયો. હું જાણી ગયો કે એ મહાજીવ ગંગાની ઝાડીમાંનો ના હોય, કારણ કે ઝાડોથી ગાઢી થયેલી આ ઝાડીમાં એને હતા એવા સુંદર વાળ (વાળા હાથી) મળી શકે એમ નહોતા. તેથી એ હાથી બીજા કોઇ વનમાંથી આવેલો હોવો જોઇએ, એને દાંત તો હતા નહિ, તોપણ એ સર્વોત્તમ શિકાર હોવાને માટે એને મારવો

જોઈએ તેથી પારધિના નિયમ પ્રમાણે બરાબર એકાગ્ર થઈને એ હાથી ઉપર જીવનસહારક બાણ છોડયું પણ તે બાણ કંઈક ઉંચુ નિકળી ગયું ને હવામાં ઉડયું, એ બાણથી એ હાથી ન વિંધાતા એક ચક્રવાક વિંધાઈ પડયો હું ખથી પીડાતા એ ચક્રવાકની એક પાંખ તુટી પડી અને પળવારમા એ જળપટ ઉપર આવી પડયો પાણી જાણે રક્તસાગરમાંનું હોય એમ રાતુ થઈ ગયું એની નારી, રૂદન કરતી એના કલેવર ઉપર આમ તેમ ઉડવા લાગી એથી મને પણ રડવું આવ્યુ ને હું બોલ્યો 'અરેરે, સ્નેહી જોડા ઉપર મે આ શું દુઃખ આણ્યું!' પતિ હજી જીવતો છે એ ભ્રમમા એણે મારૂ બાણ ઘામાથી ખેંચ્યુ એટલામા તો હાથી અદ્રશ્ય થઇ ગયો મે એ પંખીને ત્યાથી ઉપાડી રેતીને કિનારે મુકયો અને પછી થોડી વારે સહાનુભૂતિ સાથે એનો અગ્નિસંસ્કાર કર્યો પણ એટલામા તો મે જે અગ્નિ સળગાવ્યો હતો તેમાં એની ચક્રવાકી પોતાના સાથીના સ્નેહબંધનથી તણાઇને પડી, અને એની સાથે બળી મુઇ

૧૪૧૫-૧૪૨૨ "એ જોઇને મને ભયંકર પરિતાપ થયો (ને વિચાર આવ્યો) 'આવા સુખી જોડાનો મે શા માટે નાશ કર્યો!' હું વિલાપ કરવા લાગ્યો 'અમારા કુળધર્મના નિયમો મે પાળ્યા છે અને છતા યે, અરેરે, આજે આ બીજનો (જેમાથી ફળ પેદા થઇ શકે તેનો) નાશ કર્યો આવા વિહારથી અને આવા કુળધર્મથી મને તો તિરસ્કાર છુટે છે મારાથી આવુ જીવન જીવાય શી રીતે? આ જીવન કરતા તો મરવુ ભલુ!' આમ આપઘાત કરવાની મને પ્રબળ ઈચ્છા થઈ આવી અને તેના આવેશમા મે પણ ચક્રવાકીની પાછળ અગ્નિમા પડતું મે યું ને મારા પાપી શરીરને બાળીને ભસ્મ કર્યું હું મારા કુળધર્મને સખ્ત રીતે વળગી રહ્યા હતો, અને વળી મને મારા કર્મનો પસ્તાવો થયો હતો, તેમજ મારા એ જન્મની અપૂર્ણતાથી ખેદ થયો હતો આ કારણથી, પશ્ચાત્તાપને લીધે પ્રાપ્ત થએલા શુભકર્મના ફળથી—એ શરીરનો નાશ થતાંની સાથે જ નરકમા પડવાને બદલે, ગંગા નદીને ઉત્તર કિનારે એક ધનવાન વ્યાપારીને ત્યા મારો જન્મ થયો

૧૪૨૩-૧૪૨૭ "અનેક ખેડુતોની વસ્તીવાળો, ફળદ્રુપતાએ વખણાએલો અને ઉત્સવોથી ભરપુર એવો બહુ વિશાળ કાશી નામે દેશ છે કમળસરોવર ઉપર અને બાગમા આનંદ કરવાને અનેક પ્રવાસીઓ અહીં આવે છે સાગરરાણી ગંગાનદી કાંઠે દ્વારવતી સમાન વારાણસી નગરી એ દેશમા મુખ્ય નગરી છે, ગંગા નદીના મોજા એ નગરીને કિલ્લા સમાન છે એમા અનેક મોટા વ્યાપારીઓ વસે છે તેમની સ્ત્રીઓ અમૂલ્ય આભૂષણોથી કલ્પવૃક્ષ જેવી શણગારાએલી રહે છે અહેંકો વ્યાપારી લાખોને હિસાબે માલ વેચે છે ને ખરીદે છે એમની હવેલીઓ અલગ અલગ છે, તેથી તેમના આંગણામાં જ નહિ પણ (હવેલીઓની) વચ્ચે લાંબે રાજમાર્ગે પણ વાતાવરણમાં થઈને ઠેઠ જમીન સુધી સૂરજ પોતાનાં કિરણ ફેંકી શકે છે

૧૪૨૮-૧૪૪૦ "અહીં (એક વ્યાપારીની આવી હવેલીમા) મારો

જન્મ થયો અને મારૂં નામ રૂદ્રયશસ્ પડ્યું. રિવાજ પ્રમાણે લેખન આદિ વિવિધ
કળાઓ શીખ્યો. પણ થોડા જ સમયમાં ઉડાઉ બનાવનાર, કલંક લાવનાર, ટુંકામાં
બધા દુર્ગુણ વસાવનાર જુગારની રમત તરફ મારૂં વલણ થયુ. એ રમતે કરીને
(વ્યાપારી વર્ગના) હલકા લોકો અનેક રીતે નષ્ટભ્રષ્ટ થઇ જાય છે અને છળકપટમાં
નિર્દય અને જિતવાને માટે ગાંડા બની જઇને બધા સદ્‌ગુણોને વિસારી મુકે છે. આ
જુગારના મોહમાં હું પડ્યો અને અંતે ચોરી કરવા લાગ્યો અને એથી મારો કુળ-
પર્વત દાવાનળની પેઠે બળવા લાગ્યો. ઘર ફાડવાં ને જાત્રાળુઓને લૂટવા એ મારો ધંધો
થઇ પડ્યો ને મારાં આવાં કર્મને લીધે મારાં(કુટુંબીઓ)ને નીચું જોવાનો પ્રસંગ
આવ્યો. એવી રીતે (એકવાર) બીજાઓનું ધન લૂટવાને ઈરાદે રાતે હાથમાં તલવાર
લેઇને રાજમાર્ગે નિકળી પડ્યો, પણ નગરમાં આ વાતની જાણ થઇ ગઇ અને હરામ-
ખોરનો જીવ હવે સલામત નહોતો એમ જોઇને હું બારીકવનમાં નાશી ગયો.
વિંધ્યાચળની વિભૂતિ સમાન એ વનમાં અનેક જાતનો શિકાર મળી શકે એમ હતો,
પંખીઓનાં પુષ્કળ માળા હતા તથા લૂટારાની પુષ્કળ ગુફાઓ હતી. વિવિધ પ્રકારનાં
ઝાડોની ઘટા સૌને અંધારામાં ઢાંકી દેતી. વિંધ્યાચળની અંદરની બાજુએ આવેલી
આવી એક ગુફામાં હું આવી પહોચ્યો. એને એક જ બારણું હતું અને એ ગુફાનું
નામ સિંહગુફા હતું. ત્યાં હથિયારબંધ મજબુત માણસો રહેતા તે વેપારીઓને ને વણ-
જારાને લૂટી આનંદ કરતા. એ એમના ધંધામાં અને બીજી એવી અનેક કળાઓમાં
તથા હળીમળીને કામ કરવામાં ખૂબ પ્રવીણ હતા. પણ છતાં યે એમાં કેટલક એવા
પણ હતા કે જેઓ બ્રાહ્મણશ્રમણને, સ્ત્રીબાળકને અને ઘરડાંમાંદાંને સતાવતા નહિ.
લૂટતાં હજારોવાર ઘા પણ ખાતા, છતાં યે એકંદર રીતે એમનો ધંધો સારી રીતે
ચાલ્યો જતો. આ ટારાઓમાં હું પણ એક લૂટારા તરીકે દાખલ થઇ ગયો.

૧૪૪૧–૧૪૫૦. "ભલ્લપ્રિય (ભાલો પ્રિય છે જેને એવો) નામે એક જણ એ
મંડળનો નાયક હતો, એ હમેશા પોતાના મજબુત હાથમા ભાલો ઝાલી રાખતો, હલ્લો
કરવામાં સાહસી હતો અને સર્પની પેઠે સર્વને ભયંકર હતો. પોતાના હજારો લૂટારાને
પોષવાને અને પિતા પ્રમાણે તેમનું રક્ષણ કરવાને એ અજાણ્યા ધનવાનોને ખૂબ સતા-
વતો. પોતાના બાહુબળને કારણે એ ઘણો પ્રખ્યાત થયો હતો અને તેથી લૂટારાઓમાં
નાયક તરીકે બહુ માન પામ્યો હતો. એની પાસે મને લઇ જવામાં આવ્યો. મારી સાથે એણે
માયાથી વાતચિત કરી, તેથી બીજા લૂટારા પણ મારી સાથે આદરથી વર્તતા; આથી હું
ત્યાં વિના હરકતે ને આનંદે રહેવા લાગ્યો. ઘણાં ધીંગાણામાં મેં મારૂં ખૂબ શૌર્ય
બતાવ્યું ને તેથી મારો મોભો ને માન વધ્યાં અને આ રીતે આખરે હું એક નામી
લૂટારો ગણાવા લાગ્યો. જુદ્ધ હોય કે ના હોય, અમે નાશી જતા હોઇએ કે કોઇની
પાછળ પડ્યા હોઇએ, પણ હું હમેશાં નાયકની બાજુમાં જ રહેતો, અને મારા સોબ-
તીઓ મને 'શક્તિધર' 'નિર્દય,' 'જમદૂત' આદિ નામે ઓળખતા. શત્રુને હું ચીરી

નાખતો, મિત્રોને બક્ષીસો આપતો અને જુગાર રમતી વખત મરતમા મારી જાતને પણ મુકતો, એવી રીતે બહુ કાળ સુધી મે એ લૂટારાઓની ગુફામા મારા સાથીઓ સાથે યમદેવના ખપ્પર હલાવ્યા

૧૪૫૧-૧૪૫૫ "એકવાર અમારી એક ટોળી અમારા એ નિત્યકર્તવ્ય ઉપર ગઈ હતી ને ત્યાથી લગ્નમા એક જુવાન જોડાને ઘેર લેઈ આવી એ વાતની ખબર થતા એમને જોયા પહેલા જ કાળીની સ્તુતિ થવા લાગી ને એમને (અમારા) સરદાર પાસે આણ્યા એ સ્ત્રીપુરુષને જ્યારે એણે જોયા, ત્યારે તે સ્ત્રીએ પોતાની સુન્દરતાને લીધે એનુ હૈયું હરી લીધુ એણે નિશ્ચય કર્યો કે આ અપ્સરાશી સુન્દરીનો કાળીને ભોગ આપવો કાળીની બીકથી એને પોતાની સ્ત્રી બનાવવાની એની હિમત ચાલી નહિ, પણ મનમાની રીતે લૂટારાઓને દાગીના તો લેઈ લેવા દીધા અને એ જોડા પાસે જે કઇ કીમતી ચીજ હતી તે સૌ એણે એમને સોપી દીધી

૧૪૫૬-૧૪૬૧ "સરદારે મને કહ્યુ 'આ મહિનાની નવમીએ એ બેનો કાળીને ભોગ આપવાનો છે' પછી મને એમના ઉપર ચોકી કરવા રાખ્યો, અને મરણચિતાને લીધે એ બે જણ આસુભરી આખોએ બાવરા જેવા થઈ ગયા, ત્યારે હુ એમને મારા ઘરમા લેઈ ગયો એ પુરુષને મે તાણી બાધ્યો તેથી તે સ્ત્રી પોતાના સ્વામી ઉપરના સ્નેહને લીધે ભયકર વિલાપ કરવા લાગી ને છતીફાટ ચીસો પાડવા લાગી એથી બીજી કેદ પકડાએલી ને જીવનથી નિરાશ થઈ ગયેલી સ્ત્રીઓ ત્યા ટોળે મળી ગઇ ને દયાભાવે ને આકાક્ષાએ એમને પુછવા લાગી 'ક્યાથી આવો છો ને ક્યા જતા હતા ? લૂટારાના હાથમા કેવી રીતે પડ્યા ?'

૧૪ ૨-૧૪૭૧ "આસુભરી આખે ડુસકા ખાતા એણે ઉત્તર આપ્યો 'અમે અહીં શી રીતે આવ્યા એનુ દુ ખભર્યું વર્ણન પહેલેથી સાભળો સુદર ચપાનગરવાળા વનમાં ગગાને કાઠે અમે ગેરૂઆ રગના ચક્રવાક પખી હતા આ મારા સ્વામી તેવારે મારા ચક્રવાક હતા અને હુ એમની પ્રિય નારી હતી અમે ગગા ઉપર કુશળતાએ તરતા અને મોજાના રેતીકિનારા પેઠે શણુગારરૂપ હતા એકવાર એક પારધિ ધનુષબાણ લેઈને આવ્યો અને એણે એ જગલી હાથીને મારવા જતા એમને મારી નાખ્યા (આ અપકૃત્યને કારણે) ખેદ કરતા કરતા એણે એમના મૃતદેહને અગ્નિદાહ દેવા માટે કિનારા ઉપર અગ્નિ સળગાવ્યો સ્વામીની પાછળ જવાને માટે મે પોતે પણ એ અગ્નિમા પડતુ મેલ્યુ એમ મરી ગયા પછી જમુનાને કિનારે આવેલા સુદર કાકન્દી નગરમા નગરશેઠને ઘેર હુ તો કન્યારૂપે અવતરી, અને તે જ નગરમા ત્રણ સમુદ્ર પાર પ્રખ્યાત થયેલા શેઠને ઘેર આ મારા પ્રિય નવા અવતારમા પુત્ર થઈને અવતર્યા (મોટા થતા) અમે ચિત્રવડે એક બીજાને ઓળખી કાઢ્યા, એમણે મારૂ માગુ કરાવ્યુ, પણ મારા પિતાએ એ માગુ પાછુ વાળ્યુ મે એમની પાસે દૂતી મોકલી અને પછી જૂના વારના સ્નેહથી પ્રેરાઇને રાતને અધારે હુ પોતે પણ મારા પ્રિયની હવેલીએ ગઇ

અમને અમારાં માબાપની બીક લાગી, તેથી મછવામાં બેશી નાશી ચાલ્યાં ને પછી ગંગાને રેતીકિનારે લૂટારાને હાથે પકડાઈ ગયાં.'

૧૪૭૨–૧૪૭૮ "એ રીતે એ જુવતીએ પોતે અનુભવેલી પોતાની સુખદુઃખભરી સૌ કથા રોઈરોઈને એ પકડાએલી સહભાગિનીઓને કહી સંભળાવી. પણ મને એ વર્ણનથી મારા પૂર્વભવની વાતો સાંભરી આવી ને તેથી હું બેભાન થઇ ગયો જ્યારે મને પાછું ભાન આવ્યું ત્યારે તે (ભવના) મારા પિતા, મારી માતા તથા પત્ની અને તે વખતનો મારો સૌ અનુભવ તેમજ (તે કાળે હું પાળતો હતો તે) કુળધર્મ પણ મારા મન આગળ તરી આવ્યો અને તે સ્ત્રીએ તેના (પોતાના સ્મૃતિ–) સ્વપ્નમાં જે જોયુ હતું તે હું સમજી ગયો, તેથી મારૂં હૈયું દયાથી અને ભલી લાગણીથી (એ જોડા તરફ) નરમ બની ગયું હું જાણી શકયો કે જેનું મેં વગર વિચારે મોત નિપજાવ્યુ તે ગગાના શણગારરૂપ ચક્રવાકનું જોડું આ જ છે. હવે આ સંકટમાં આવી પડેલા સ્નેહજુગલને ફરી તો મોતના મોંમાં મુકી શકું નહિ. એકવાર કરેલી એ હિંસાનો બદલો મારા જીવનને જોખમે પણ આપવો જોઇએ. એ બંનેને હું ઉગારી લેઈશ અને તે રીતે હું શાન્તિ પામીશ.

૧૪૭૯–૧૪૮૨. "આવો ઠરાવ કરીને હું ઘરમાંથી નિકળ્યો અને તે પુરૂષના બંધ ઢીલા કરી નાખ્યા. પછી મેં પોતે કેડ બાંધી કટાર તથા તલવાર લીધી અને રાત્રે તે કેદીને અને તેની સ્ત્રીને લૂટારાની ગૂફામાંથી બહાર કાઢયાં ને ભયંકર જંગલમાં થઇને એક ગામ સુધી મુકી આવ્યો. જુદા પડયા પછી સંસારથી વિરક્ત થઇને મેં હૈયામાં વિચાર્યું.

૧૪૮૩–૧૪૮૬. મેં "લૂટારાઓનો અપરાધ કર્યો છે તેથી હું એમની પાસે તો પાછો જઇ શકું નહિ એ જમદૂત સરદારની આંખ સામે હવે ફરી હુ શી રીતે જઇ શકું ? વળી મેં લોભે ને વિલાસવાસનાએ જે કર્યું છે એ સૌ મહાભયંકર પાપ છે, માટે હવે તો એમાંથી મોક્ષ મેળવવાને માટે મારે પ્રાયશ્ચિત્ત કરવું જોઇએ. વિલાસની માયામાં પડીને જે બીજાની હિંસા કરે છે તે પોતાની મૂર્ખતાએ કરીને (મનગમતું) વધારે દુઃખ માગી લે છે. જે મમતામાયામાથી મુક્ત થઇ શકે છે, સ્ત્રીઓના પ્રપંચજાળમાંથી સરકી શકે છે અને પ્રેમનાં બંધનથી છુટો રહી શકે છે એ જ સુખી થઇ શકે છે અને સુખદુઃખમાં સમાન રહી શકે છે.'

૧૪૮૭–૧૫૦૦ "આવો વિચાર કરીને હું ઉત્તર તરફ (અથવા પાછો પર્વત તરફ) ચાલ્યો, મેં સંન્યસ્ત લીધું ને (સાંસારિક) વાસનાઓનો ત્યાગ કર્યો. દેવનગરી અલકાપુરીનાં તાલવનોની યાદ આપતી 'પૂર્વતાલ' (નામની નગરી) જઇ પહોંચ્યો. નગરની દક્ષિણ બાજુએ કોઈપણ મદનવાટિકા કરતાં પણ સુંદર, અને માત્ર સ્વર્ગના નંદનવનની જ સરખામણીમાં મુકી શકાય એવો એક બાગ છે. એની લીલોતરી, ફુલ અને ફળની શોભાએ કરીને હૃદયને આનંદ આપે છે. ભમરાનાં ટોળાંએ અને પંખીઓના

ગાને કરીને પૃથ્વીના સૌ બાગોનો જાણે અહીં સાર ખેંચાઈ આવ્યો હોય એવું લાગે છે માત્ર ખામી એટલી જ છે કે પંખીના ગીતનો અને ભમરાના ઉડવાનો મધુર સુર (ત્યા ભરાતા) માણસોની વાતચિતના ગણગણાટમા ભળી જાય છે એ ઉદ્યાનમા, ધોળા વાદળ-માથી નિકળતા સૂર્યના વિમાન જેવુ ભવ્ય અને ચળકતું દેવમંદિર મારી દૃષ્ટિએ પડ્યુ, તે લાકડાના કોતરકામ વાળુ અને નો થાભના ઉપર ઉભુ કરેલુ હતું એના પ્રાગણમા શ્રદ્ધાળુ જાત્રાળુઓ દ્વારા ફુલ, ફળ, પત્ર, માળા અને ચંદન વિગેરેથી પૂજાએલ અને વસ્ત્રખંડોથી વિભૂષિત થએલ રમણીય ન્યગ્રોધ વૃક્ષ શોભી રહ્યુ હતુ પ્રથમ તો મે એ દેવમંદિરની બહારથી પ્રદક્ષિણા કરી અને પછી એ પવિત્ર વૃક્ષ નીચે જઇ ઉભો રહ્યો એની નરમ પાદડાવાળી ડાળીઓ ચારે બાજુ પ્રસરી હતી અને મીઠી મધુર પત્રશોભા આપતી હતી ત્યા ઉભેલા એક જણને મે પુછ્યુ 'આ બાગનુ નામ શુ ? અને કયા દેવની અહીં સ્થાપના છે? મે ઘણા ઘણા સ્થાનો અને સ્થળો જોયા છે, પણ કયાય કદી મે આવે બાગ તો જોયો નથી'

૧૫૦૧-૧૫૦ "હુ કોઇ પરદેશી છુ એવુ એ તુરત કળી ગયો ને તેથી તેણે ઉત્તર આપ્યો 'આ બાગનુ નામ શકટમુખ છે પૂર્વે ઇક્ષ્વાકુ કુળના મુકુટમણિ સમાન ઋષભ નામે રાજા થઇ ગયા તેઓ હિમાચળથી લઈ સાગર સુધી પ્રસરી રહેલી પૃથ્વીના સ્વામી હતા જન્મમરણની જાળમાથી છુટવા માટે જ્યારે તેઓ એ સર્વ ઋદ્ધિસમૃદ્ધિનો ત્યાગ કરી તપસ્યા તપતા હતા ત્યારે આ વૃક્ષ નીચે તેમને અનંત અને અક્ષય એવુ કેવલ્ય જ્ઞાન પ્રાપ્ત થયુ હતુ એટલા માટે આ પરમપવિત્ર સ્થાન મનાય છે અને એથી જ અદ્યાપિ લોકો એની પૂજા કરે છે આ મંદિરમા પણ એ જ યુગાદિદેવ ઋષભતીર્થંકરની પ્રતિમા સ્થાપિત થએલી છે'

૧૫૦૭-૧૫૦૯ "આ સાભળીને મે પણ એ ઝાડની અને મૂર્તિની વંદના કરી ત્યાર પછી આસન વાળીને ઉડી શાન્તિમા બેઠેલા એક સાધુને-મહાપુરૂષને મે ત્યા જોયા એમણે પાચે ઇંદ્રિયોને પોતાની અંદર વાળી દીધી હતી અને તેમના સર્વે વિચારો ધ્યાનમા અને આત્મસંયમમા વળી ગયા હતા હુ ત્યા ગયો ને જેમના હૃદયમાથી મોહપાશવાસના ચાલી ગઇ છે એવા એ પુરૂષને પગે લાગ્યો પૂજ્યભાવે હાથ જોડીને હુ બોલ્યો

૧૫૧૦-૧૫૧૧ "'હે પરમપૂજ્ય, રાગ અને દ્વેષનો નાશ કરવા, ધનજનનો મોહ છોડવા અને પાપપ્રવૃત્તિઓમાથી નિવૃત થવા માટે હુ આપનો શિષ્ય થવા ઇચ્છુ છુ જન્મમરણના વમળ જ્યા ઘેરાય છે, મૃત્યુ બંધન ને વ્યાધિરૂપી સમુદ્ર રાક્ષસ જ્યા પ્રવર્તે છે એવા સંસારસાગરથી તમારૂ શરણરૂપી શસ્ત્ર લેઇને તરી જઇશ'

૧૫૧૨-૧૫૧૩ "કાનને ને હૃદયને મધુર લાગતે સુરે એ બોલ્યા 'મરતા સુધી સાધુનો ધર્મ પાળવો ને ભાર વહેવો એ કંઇક કઠણ છે ખભે કે માથે જડ વસ્તુનો ભાર વહેવો એ માણસ માટે બહુ સહેલુ છે, પણ ધર્મનો ભાર વહન કરવો ઘણું કઠણ કામ મનાય છે'

૧૫૧૪–૧૫૧૫. "મેં ઉત્તર આપ્યો: '(જીવનના એક કે બીજા હેતુ માટે અર્થાત્) આનંદ, પવિત્રતા કે લાભની ઇચ્છા જેને હોય તે જો નિશ્ચય કરે તો એને કશું વસમું નથી. ગૃહસ્થાશ્રમમાથી નિકળી સાધુજીવન ગાળવાનો મેં નિશ્ચય કર્યો છે, કારણ કે એથી જ દુ:ખ ટળશે.'

૧૫૧૬–૧૫૨૪. "પછી મને એ સાધુએ જીવને તારનાર અને જન્મમરણમાંથી મુક્તિ અપાવી મોક્ષે લેઈ જનાર વીતરાગ દીક્ષા આપી. આ સાધુધર્મ પંચમહાવ્રત સ્વરૂપ છે, તેથી તેનું રહસ્ય, અને વિનય, પ્રત્યાખ્યાન, પ્રતિક્રમણ, સમ્યગ્ભાષણ વિગેરે આચાર-વિચાર એમણે મને સમજાવ્યા. ત્યાર પછી ક્રમથી મને જૈન આગમોનો અભ્યાસ કરાવ્યો; એમાં સૌથી પ્રથમ હું ઉત્તરાધ્યયનરૂપે ગણાતાં ૩૬ અધ્યયનો શીખ્યો. એ અધ્યયનોમાં બ્રહ્મચર્ય, ગુપ્તિ, કર્મ વિગેરેનુ સ્વરૂપ બતાવેલું છે. એના પછી આચારાંગસૂત્ર ભણ્યો, એમાં મુક્તિમાર્ગ બતાવનાર નવ અધ્યયનો આવેલાં છે. એના પછી સૂત્રકૃત, સ્થાન અને સમવાય નામના શાસ્ત્રો ઉંડે ઉતરીને નિયમ પ્રમાણે શીખ્યો. તે પછી શેષ રહેલા કાલિકસૂત્રો અને અંગપ્રવિષ્ટ ગ્રંથો શીખ્યા બાદ પૂર્વગત ગ્રંથોનો પણ બરાબર અભ્યાસ કર્યો, એણે કરીને જગત્ના ભાવિક અને મૌલિક સ્વરૂપનું મને જ્ઞાન થયું. આવી રીતે બાર વર્ષ ભણવામા ને સાથે સાથે સંસાર ઉપરનો મોહ છોડવામાં ચાલ્યાં ગયાં. આમ સમ્યગ્ જ્ઞાન અને આત્મસંયમ વડે હું મારા આત્મકલ્યાણને માર્ગે આગળ વધતો જાઉં છું અને લોકોને પણ એ અનુત્તર–સર્વશ્રેષ્ઠ ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યા કરૂં છું."

(૧૧. ત્યાગ અને સાધના.)

૧૫૨૫–૧૫૨૯. (સાધ્વી આગળ કથા કહે છે:) જ્યારે અમે આ ખેદજનક અનુભવ સાંભળ્યો, ત્યારે અમે અનુભવેલું દુ:ખ નવેસરથી તાજું થયું. આંસુભરી આંખે અમે એકબીજા તરફ જોયું (અને અમને લાગ્યું): 'આ પુરૂષ આપણને વિષ તેમજ અમૃત સમાન નિવડ્યા છે (વળી અમે વિચાર્યું) જ્યારે એકવારના આ મહાપાપીએ પણ પોતાના ઉપર વિજય મેળવ્યો છે, ત્યારે આપણે તો દુ:ખનો નાશ કરવાને માટે, જરૂર જ તપસ્યા કરવી જોઇએ. વીતેલાં દુ:ખનો વિચાર કરતાં અમને સ્નેહવિલાસ ઉપર ઉપરતિ થઇ અને અમે એ પવિત્ર પુરૂષને પગે પડ્યાં. પછી પાછાં અમે ઉભાં થયાં, ને બે હાથ જોડી કપાળે અડાડી અમારા એ જીવનતારકને અને પછીથી બની રહેલા અમારા સન્મિત્રને કહ્યુ:

૧૫૩૦–૧૫૩૩. 'જે ચકુવાકનું જોડું માનવદેહમાં તમારે હાથે લૂટારાની ગુફામાંથી ઉગરી ગયુ તે અમે પોતે જ છીએ. તમે અમને જ્યારે જીવન આપ્યું ત્યારે તો હવે દુ:ખમાંથી મોક્ષ પણ આપો. મરણ અને દુ:ખ જ્યાં રોજરોજ આવ્યા જ જાય છે એવા જીવનરૂપની સાકળોવાળો ચંચળ સંસાર અમને સંતાપે છે. અમને નિર્વાણની ઇચ્છા છે તીર્થંકરોએ બતાવેલે પવિત્ર માર્ગે અમને, કૃપા કરીને દોરી જાઓ! સાધુજીવનનાં વિવિધ શાસનો અમારી જાત્રાનું ભાથું હો!'

૧૫૩૪-૧૫૪૨ એ મહાસયમી ઓ યા 'ધમને જે આત્મિક બળ રાખી પાળે છે, તે જરૂર બધા દુ ખમાથી તરત મુક્તિ પામે છે જો તમે પુનજન્મના વિવિધ પરિણામોના દુ ખ ટાળવા ઇચ્છતા હો, તો સ્વાર્થવૃત્તિ છોડી દો ને હવે હમેશને માટે તપસ્યા કરો માણસ એ તો જરૂર જાણે છે જ કે મરણ આવશે, પણ કયારે આવશે તે માન જાણતો નથી, તેથી એ આવે તે પહેલા તેણે ધર્મ પાળી લેવો જોઇએ, ઠાખતી વગાડતુ મોત આવે, ત્યાર પછી તો કઇ તપસ્યા થઇ શકે નહિ જ્યા લગી ઇદ્રિયો સાબુત હોય અને શરીર ચાલતુ હોય ત્યા સુધી માણસ મુક્તિની તૈયારી કરી શકે જીવન ચ ચળ છે અને અનેક વિઘ્નોથી ભર્યું છે, માણસે એના ઉપર વિશ્વાસ ન રાખવો અને પારમાર્થિક કાર્ય કરવા માટે ક્ષણભરનો પણ વિલ બ ન કરવો જો મરણ ને દુ ખ કઇ હોય જ નહિ તો માણસ ધર્મ આચરે કે છોડે તે પાલવે, પણ જો મરણ આવવાનુ જ છે તો કરેલી આળસ માથે પડશે તેથી શરીર સાજુ હોય ને શક્તિઓ સારી પેઠે હોય ત્યા સુધી ~ જીવન સુધારણાનુ કાર્ય મનુષ્ય સફળતાપૂર્વક કરી શકે છે'

૧૫૪૩-૧૫૪૬ એ પવિત્ર પુરૂષના શબ્દો સાભળીને સસાર ઉપર અમને ક્ષોભ થયો અને પવિત્ર જીવન આરભવાનો અમે નિશ્ચય કર્યો તેથી અમે ત્યા જ અમારો શણગાર ઉતારી દીધો અને દાસીઓને સોપી દેઇ કહ્યુ "અમારા માબાપને આ સોપજો અને કહેજો કે 'એ બને દુ ખથી અને જન્મમરણના પર પરાથી કટાળ્યા છે અને એટલા માટે એ દુ ખથી પાર કરનાર ધમમાર્ગે ચઢ્યા છે અવિચાર અને બેદર કારીને કારણે અમે જે સારાનરસા આચારથી તમને હેરાન કર્યા હોય એને માટે તમે અમને ક્ષમા આપજો'"

૧૫૪૭-૧૫૪૯ આ સમાચાર દાસીઓમા ફેલાતા તે તથા નર્તકીઓ પણ દોડતી આવી એ મારા પ્રિયને પગે પડર્યાં ને કાલાવાલા કરવા લાગ્યા 'અમને અનાથ કરી મારી નાખો ના!' કેટલીકે એમના પગને અડવા ફુલ વેર્યા, જે ફુલ એમણે જાણી જોઇને હાથમાથી સેરવી દીધાં હતાં (અને તે બોલી)

૧૫૫૦-૧૫૫૨ 'અમારા જીવનમા વગર કટાળ્યે અમારી (શુભ) કામના પ્રમાણે ઉત્તમાશ આલિંગનની આશામા અમે અમારા જીવનને આનદી માનતી આવી છીએ હવે એ અમારી કામના તમારી પાસેથી જો પરિપૂર્ણ ન થાય તો ભલે! માત્ર તમને જોઈને જ અમે સતોષ ધરીશું શ્વેત કમળ જેવા ચદ્રને માણસ જો અડકી શકે નહિ, તોય એના શુદ્ધ બિબને જોઈ કોને આનદ ના થાય!'

૧૫૫૩-૧૫૫૯ એમ તે સ્ત્રીઓ અનેક રીતે રોવા લાગી અને મારા સ્વામીને પોતાના વિરક્તભાવમાથી પાછા વાળવા કાલાવાલા કરવા લાગી પણ આવા પ્રલોભનોની પરવા કર્યા વિના અને પોતાને અડવા દીધા વિના મારા પ્રિય એ બધાથી ફરી જઇને પેલા સત્પુરૂષ તરફ મો કરીને ઉભા સસારથી વિરક્ત થઇને સાધુજીવનમા પ્રવેશવા માટે એમણે જાતે જ એકેએક બધા વાળ ચુટી નાખ્યા મે પણ પોતે મારા બધા વાળ ચુટી નાખ્યા ને મારા સ્વામી સાથે એ સાધુને પગે પડી, આમ પ્રાર્થના

કરીઃ 'અમને દુઃખમાથી મોક્ષ આપો.' તે ઉપરથી એમણે આગળ કહ્યા પ્રમાણે (સાધુસાધ્વીઓને માટે નક્કી થએલું) સામાયિક વ્રત અમારી પાસે લેવરાવ્યું. (તેમાં એવી પ્રતિજ્ઞા લેવાની છે કેઃ 'હે પૂજ્યપુરૂષ, હું સામાયિક વ્રત પાળીશ, એટલે જ્યા સુધી એ વ્રતમાં હોઇશ ત્યાં સુધી ધર્મથી મના કરેલાં બધાં અસત્કર્મોનો ત્યાગ કરીશ, અને મનસા વાચા કાયા, બનતા સુધી હું જાતે એવા કર્મ નહિ કરૂં, બીજા પાસે નહિ કરાવું, તેમ જો કોઇ કરે તો તેમા સમ્મતિ પણ નહિ આપુ; આવાં બધાં કર્મોથી, હે પૂજ્યપુરૂષ,' હું દૂર રહીશ.') આ વ્રત જો સરળતાથી સારી રીતે પળાય તો મોક્ષ પમાય. વળી આ વ્રતને કારણે જીવહિંસાથી, અસત્યથી, અસ્તેયથી, સ્રીસંસર્ગથી અને પરિગ્રહથી તથા રાત્રિભોજનથી, અમારે દૂર રહેવાનું હતું. વળી જીવનના, મરણના અને દેહના સૌ સ્વાર્થો ત્યાગ કરવા જણાવનારાં જે ઉપવ્રતો તે પણ અંતે અમે ગ્રહણ કર્યાં.

૧૫૬૦-૧૫૬૬. ચાકરોએ ખબર પહોચાડયાથી અમારાં માબાપ ત્યાં આવી પહોંચ્યાં અને અમારી દીક્ષાની વાત સાંભળીને નગરમાંથી બાળકો વૃદ્ધો ને સ્રીઓ પણ ઉત્કંઠિત થઇને આવી પહોંચ્યાં. એમ એ મોટો બાગ સબંધીઓથી અને અનેક જિજ્ઞાસુજનથી ભરાઈ ગયો. લોકનાં શરીર એકબીજાથી દબાવા લાગ્યાં અને મ્હોંમાથાંનો પરથાર થઈ ગયો હોય એટલી ભીડ થઈ ગઈ વ્રતના નિયમને અનુસરીને અમે અમારૂં એકેએક ઘરેણું ઉતારી દીધું હતું એ જોઇને અમારાં સગાં તો રોવા મંડયાં, અને અમારાં બંનેનાં માબાપ તો આવતાની સાથે જ છુટે મ્હોંડે રડવા લાગ્યાં. વળી મારાં સાસુસસરા તો અમને જોતાની સાથે જ મૂર્છા ખાઇ જમીન ઉપર પડયાં. મારાં માબાપનો આત્મા ધર્મના બોધથી કંઈક વિશુદ્ધ બનેલો હતો અને એ જન્મમરણના સંસારદુઃખને જાણતાં હતાં જ, તેથી એ પોતાની આંખનાં આંસુ કંઇક ખાળી શકયાં, ત્યારે મને ઠપકો દેતાં હોય એમ નહિ, પણ વારતાં હોય એમ બોલ્યાં.

૧૫૬૭-૧૫૬૮ 'દીકરી, તારી આ નાની ઉમરમાં આ તે તેં શુ સાહસ કર્યું ? આવી કુમળી સ્થિતિમાં સાધુજીવનનાં ધર્મકર્મ પાળી નહિ શકાય. તારી નિર્બળતાને કારણે એ જીવનમાં પાપ ના થઇ જવાય એટલા માટે હજી ચેતી જા. જ્યારે જીવનના આનંદને ભોગવી રહે ત્યારે તું સાધુજીવન લેજે.'

૧૫૬૯-૧૫૭૦ હું બોલી ઉઠીઃ 'જીવનના આનંદોનો ભોગ તો ક્ષણિક છે અને પછીથી તે કડવા બની જાય છે. કુટુંબજીવનથી ઘણુ દુઃખ ખમવુ પડે છે, નિર્વાણના જેવું કશું સારૂં નથી. બને ત્યાંસુધી માણસે ધર્મને માર્ગે આવી જવું જોઇએ એમાં કલ્યાણ છે; મોત આવી ચઢે તે પહેલાં આપણે પરવારી લેવું જોઇએ'

૧૫૭૧. ત્યારે મારા પિતાએ ઉત્તર આપ્યોઃ 'જાળામાં લૂટારા ભરાઈ રહે એમ ઇંદ્રિયો ભરાઇ રહેલી છે જેમાં, એવી તમારી જુવાની હોવા છતાં યે આ સંસારસાગરની ઉપર થઇને નિર્ભયતાએ તરી જજો ?'

૧૫૭૨. એટલામાં સગાંસંબંધીના ઉપચારથી મારાં સાસુસસરાને ચેતન આવ્યું, તેમણે મારા સ્વામી તરફ જોઇને કહ્યુંઃ

૧૫૭૩-૧૫૭૭ 'દીકરા, આ તને કોણે શીખવ્યું ? અમારી સાથે રહેવું તને ના ગમ્યું ? એવું તે તને શું દુઃખ પડ્યું કે કંટાળીને તું સાધુ થઇ ગયો ? આધ્યાત્મિક જીવનથી જ નહિ પણ ધર્મવિહિત સંસારભોગથી પણ સ્વર્ગ મળે છે અને લોકમાં કહેવત છે કે જીવનમાં સ્ત્રી એ રત્નરૂપ છે અપ્સરા જેવી સુંદર તારે માટે અહીં સ્ત્રીઓ છે તું જ્યારે સ્નેહ ભોગવી રહે ત્યારે ધર્મજીવન પાળજે આપણા વિશાળ ધનને, અમને પોતાને અને (તે છોડવેલી) આ દીકરીને, એ બધાને તું શું છોડી જશે ? હજી યે થોડાં વર્ષ તું જીવનનો આનંદ ભોગવી લે ત્યાર પછી, જ્યારે આવા કઠણ વ્રત સ્વીકારવાના દહાડા આવે ત્યારે તું તે ખુશીથી લેજે '

૧૫૭૮ શેઠને પુત્રે દ્રઢમને દૃષ્ટાન્તો દેઇને (અને નદીઆ આપીને) પોતાના માબાપના કાલાવાલાભર્યાં શબ્દોનો આમ જવાબ આપ્યો

૧૫૭૯-૧૫૯૩ " અજ્ઞાને કરીને રેશમનો કીડો જેમ પોતે ઉપભોગ કરવાને પોતે જ વહોરેલા કોકડામાં ગુંચાઈ રહે છે, તેવી જ રીતે મોહાંધ પુરૂષ ઉપભોગની લાલસાએ સ્ત્રીને કારણે માયામાં પડે છે અને તેથી અનેક દુઃખ ભોગવે છે ખોટા રૂપથી ભોળવાઇને અને મોહથી ભરમાઇને વિવિધ પ્રકારની વસ્તુઓરૂપ કાંટાવાળા સંસારમાર્ગના જાળામાં એ ફસાઈ પડે છે સ્ત્રીના વિજોગથી જેટલું દુઃખ થાય છે એટલું પણ સુખ સ્ત્રીથી એને મળી શકતું નથી ધનમાલથી પણ દુઃખ છે, તેને પ્રાપ્ત કરતા પણ દુઃખ અને સાચવતા પણ દુઃખ, અને જ્યારે નાશ પામે છે ત્યારે ખેદ થાય છે અને માબાપ, ભાઈ, વહુ, છોકરા ને સગાવહાલા એ તો નિર્વાણના માર્ગમાં બંધનની સાંકળો છે જેમ સંઘમાં એકઠા મળેલા લોક એકબીજાની સાથે રહેવા ઇચ્છે છે અને પ્રવાસના દુઃખને લેઇને સાથે ચાલે છે, પણ વનમાં (ભય) આવી પડતા જુદી જુદી દિશામાં પોતપોતાને માર્ગે વેરાઈ જાય છે, તેમ સગાસંબંધી આ સંસારયાત્રામાં સ્નેહસંબંધે સુખદુઃખ ભોગવવાને અને એકબીજાને મદદ કરવાને એકઠા મળ્યાં છે, પણ પછી મરણ થવાથી કે સંસારમાંથી નિકળી જવાથી એ જુદા પડે છે, ત્યારપછી પોતપોતાના કર્મ પ્રમાણે પોતપોતાને માર્ગે ચાલતા થાય છે પોતાના સંબંધીઓ વિના કે બીજી કશી પ્રતીતિ વિના માણસે પોતે જ મોહ છોડીને સમજી જવું જોઇએ કે એમાંથી મુક્ત થયે જ નિર્વાણને માર્ગે જઈ શકાયે, અને તેને સારી રીતે નિશ્ચય થયો હોય તો તો કાળદેવ પોતાની ગુફામાંથી નિકળીને જીવન તોડી ન ખે તે પહેલા જ પોતે ઉદ્યત થઇને અને જાતને કબજે રાખીને કરવા જેવું કરી લેવું જોઇએ તેથી અતદૃષ્ટિ અને દૃઢઇચ્છાબળવાળો પુરૂષ તો, સ્વર્ગનો માર્ગ સહેલો કરવો હોય તો, કશાને (ન તો વસ્તુને કે ન તો માણસને, ન તો માતને કે ન તો સમાને) વળગી ન રહે ત્યારે 'હજી યે થોડા વર્ષ તું જીવનનો આનંદ ભોગવી લે' એવો જો છેવટે ઉપદેશ તમે આપવા હો તો એ પણ ભૂલ છે, કારણ કે સંસાર તો અનિત્ય છે અને જીવનની

કોઇને ખાતરી નથી. મરણની સત્તાને અહીં કોઇથી હડસેલી શકાતી નથી, તેથી એ આવે તે પહેલાં, વખત ખોયા વિના માણસે આ વ્રત લેઇ લેવું ઉચિત છે.”

૧૫૯૪–૧૬૦૨. આવાં આવાં વચનોથી શેઠને પુત્રે પોતાનાં માબાપને અને સગાંસંબંધીઓને પાછા જવા સમજાવ્યું; વળી જે મિત્રો એમની સાથે નાનપણથી ધૂળમાં રમીને મિત્રતાને બંધને બંધાયા હતા તેમને પણ પાછા જવા સમજાવ્યું. પોતાના પુત્ર ઉપરની ખૂબ મમતાને કારણે અમને છોડીને જવું શેઠને ગમતું નહોતું અને એમણે કહેલી વાત અમને ગમતી નહોતી, કારણકે જે સાધુજીવનનું વ્રત અમે લીધું હતું તેને પાળવાની જ અમારી ઈચ્છા હતી. (પાસે ઉભેલા) ઘણા લોકોએ જ્યારે કહ્યું: ‘પોતાની ઈચ્છા પ્રમાણે એ બે જણ પોતાની આધ્યાત્મિક સાધના ભલે સાધે, કારણકે જન્મમરણની ચિંતાથી એ પીડાય છે; સંસારસુખથી પાછા હઠેલા અને તપસ્યા તરફ વળેલા ચિત્તને જે પકડી રાખે છે તે મ્હોં ઉપરથી મિત્ર છે, પણ સાચી રીતે તો શત્રુ છે,’ ત્યારે અંતે લોકોએ કહેલા સમજાવટના એ શબ્દોથી માની જઈને, માત્ર ક્રમને, (કુટુંબથી) અમને જુદા પડવાની એમણે રજા આપી અને એ હાથ જોડીને બોલ્યાઃ ‘ત્યારે તમે આત્મસંયમ પાળવામા અને તપો કરવામાં વિવિધ પ્રકારની કઠણ સાધનાઓવાળી તપસ્યા આચરીને પાર ઉતરો. આ ક્ષણભંગુર સમુદ્રમાથી, જન્મમરણનાં એનાં મોજાંમાથી, એક ખોળેથી બીજે ખોળે જવાનાં વમળમાંથી, અષ્ટપ્રકારનાં કર્મોએ કરીને વલોવાતા જળમાંથી જોગવિજોગના કલેશનાં તોફાનમાંથી અને તેના મોહમાંથી પાર ઉતરી જાઓ.’

૧૬૦૩–૧૬૦૭. વખતે અમારા પગ નગર તરફ વળવાનું મન કરે, પણ આ વચનોથી શેઠે ભલા થઇ તેમને અટકાવ્યા. નગરશેઠે (મારા પિતાએ) તો કહ્યું: ‘તમે ધન્ય છો કે (ગૃહસ્થજનને પાળવા જેવું જે સાદું વ્રત એ નહિ પણ) પુરૂં વ્રત લીધું છે અને તેથી કલેશમય ગૃહજીવન તજી દીધું છે અને સ્નેહના બંધમાથી ને બેડીઓમાંથી છુટાં થયાં છો. સુખદુઃખમાં સમાન થવાય એવાં મોહમુક્ત ધર્મસ્વરૂપ તમે ધારણ કર્યાં છે. સ્રીજાળ તોડીને, સ્નેહસર્પમાંથી છુટીને જે વિનાઅભિમાને ને વિનાક્રોધે તીર્થંકરોના ઉપદેશને અનુસરે છે તેને ધન્ય છે. અમે તો હજી લોભ અને ભોગમાં આનંદ માન્યા જઇએ છીએ અને મોહના પાશથી ને સાંકળોથી બંધાયલા હોવાથી તમારી સાથે આવી શકીએ એમ નથી.’

૧૬૦૮–૧૬૧૩ આમ નગરશેઠે સાધુવ્રત ઉપર અનેક રીતે વ્યાખ્યાન કર્યું, કારણ કે એ બાબતમાં એમને ઉંડું જ્ઞાન હતું. પણ બંને કુટુંબની સ્રીઓ, અમારા ઉપરના સ્નેહને લીધે રડાયું એટલું રડી; એટલા વિલાપ કર્યા, એટલાં ડુસકાં ખાધાં કે વરસાદથી પલળે એમ બાગની જમીન એમનાં આંસુથી પલળી ગઇ. અંતે શેઠ ને નગરશેઠને સ્રીઓ, સંબંધીઓ, અને મિત્રોને લેઇને, દાસ તથા દાસીઓને લેઇને, સૌને રડતાં લેઇને પાછા નગરમાં આવ્યા, અને (જતાં જતાં ય નગરશેઠ અમારા તરફ

પાછુ વાળી જોતા હતા, ત્યારે માણસોના ટોળામા પેલા ભવ્ય સાધુને એમણે જોયા) અમારા સ સારત્યાગથી ચકિત થતા અને ધર્મ ઉપરની આસ્થામા ડુબેલા એ સૌ લોક જ્યાથી આવ્યા હતા ત્યા ચા યા ગયા

૧૬૧૪-૧૬૨૧ હવે એક સાધ્વી એ સાધુના દર્શન કરવાને એમની પાસે આવી, એનો દેખાવ સાધ્વીને ઘટે એવો જ હતો' તે નમ્ર 'હતી,' ને ધર્મનુ તેમજ સાધ્વીઓનુ રક્ષણ કરનારી હતી, તપસ્યામા તથા જ્ઞાનમા પ્રખ્યાત થયેલી (મહાવીર દેવના શાસનમા પ્રખ્યાત થયેલી) મા ની ચ દનાની એ શિષ્યા હતી એણે ધર્મિષ્ઠ સાધુના અને એમના સાથના દર્શન કર્યાં, ત્યાર પછી સ યમનિયમોના પોતાના જ્ઞાનને લીધે એ બોલ્યા 'સ સારદુ ખથી વિરક્ત થતી આ સાધ્વીને તમારી શિષ્યા બનાવો ' સાધ્વીએ પોતાની ખુશી બતાવી, તેમા તેમના આત્માનો વિવેક અને સાધુજીવનમા પણ પળાતી સફળતા સાફ તરી આવતી પછી એ સાધુએ મને કહ્યુ 'આ સાધ્વીની પૂજા કર, એ સાધ્વી પોતાના રક્ષણ નીચે તને લેઇ જાય છે, પ ચમહાવ્રતના ધર્મમા સફળ થએલા એ પ્રસાધ્વી સુવ્રતા છે' યોગ્ય રીતે મે કપાળે હાથ અડાડીને નમસ્કાર કર્યો, અને નિર્વાણને પ થે ચ ડવા માટેની આકાક્ષાએ એ સાધ્વીને પગે પડી એમણે મારા તરફ જોઈને આશીવાદ આપ્યા ' પાળને અઘરૂ એવુ જે સાધ્વીજીવન તે તને સફળ થાઓ અમે તો માત્ર ઉપદેશ આપીને તને ધર્મને માર્ગે ચઢાવીશુ, જો તુ સત્યરીતે પ્રયત્ન કરીશ તો નિર્વાણને માર્ગે ચડી શકીશ '

૧૬૨૨-૧ ૨૭ મે ઉત્તર આપ્યો 'પૂજ્ય માધ્વીજી, જન્મમરણથી ભર્યો સ સારપ્રવાહમા અથડાવાનો ભય મને બહુ લાગ્યો છે, તેથી તમારા શબ્દોને અનુસરીશ ' પછી (છુટા પડતી વખતે) પોતાની વિશાળ ને કઠણ તપસ્યાને બળે બળતા અગ્નિસમાન દીસતા એ સાધુને શ્રદ્ધાપૂર્વક મે નમસ્કાર કર્યો તેમજ પ્રેમનો ત્યાગ કર્યો છે અને સર્વોચ્ચ સાધના ગ્રહણ કરી છે જેમણે એવા એ વહ્નિકુપુત્રને પણ (એમની વિદાય લેતા) નમસ્કાર કર્યા ત્યાર પછી સ્ત્રીઓ જ આવી શકે એવા અમારા શાન્ત એકાન્ત મઠમા આ સાધ્વીઓની સાથે જવા માટે (એ પ્રસાધ્વી તથા એમની સ ગિનીઓ સાથે) નગર તરફ ચાલતી થઈ એટલામા તો આકાશના શણગારરૂપ સૂર્યે પશ્ચિમમા ઉતરવા માડયુ પ્રસાધ્વીની સાથે જ્ઞાનની અને (આજ સુધીના વ્યવહારના) ત્યાગની વાતો કરતા કરતા ધર્મમા શ્રદ્ધા બેસાડતી હતી ને એમા રાત કેમ પડી ગઇ એ તો જણાયુ ય નહિ

૧૬૨૮-૧૬૩૦ બીજે દિને તે વહ્નિકુપુત્ર તથા તે ઉત્તમ (અમને દીક્ષા આપનાર) સાધુ કઇ પણ સ્થાન નિર્ણય કર્યા વિના પરિભ્રમણ કરવાને મ ડે અ ય દિશામા નિકળી પડયા મને તો એ પ્રસાધ્વીએ બ ને પ્રકારના (સાધુજીવનમા અને સાધ્વીજીવનમા પાળવાના) નિયમો શીખવ્યા, અને હુ તપસ્યામા તથા સ સારત્યાગમા દઢ થવા આવુ

જીવન ગાળતાં ગાળતાં (થોડું એક સ્થાનમાં રહીએ અને થોડું સ્થાને સ્થાને પરિભ્રમણ કરીએ એમ કરતે કરતે) અતે અહી (રાજગ્રહ નગરમાં) અમે આવી પહોંચ્યાં છીએ, અને આજે (મારી સહચરી સાથે) છઠના પારણાને માટે ભિક્ષા માગવા નિકળી છું.

૧૬૩૧. (શેઠાણી,) તમારા પુછયા પ્રમાણે, ગયા જન્મમાં અને ત્યાર પછી જે સુખદુઃખ ભોગવ્યાં છે અને તેનાં જે પરિણામ આવ્યાં તે બધું આ વર્ણવી બતાવ્યું.

(૧૨. પ્રશસ્તિ.)

૧૬૩૨–૧૬૩૬. સાધ્વી તરંગવતીએ પોતાની કથા પુરી કરી ત્યારે શેઠાણીએ વિચાર્યું: 'કેવું કઠણ આમણે કર્યું છે ! આવી કુમળી અવસ્થામાં, આવી સારી સ્થિતિમાં, આવું વૈધવ્યવ્રત ગ્રહણ કરીને પણ આવી કઠણ તપસ્યા !' અને તેણે નગરશેઠની દીકરીને કહ્યું: 'હે સાધ્વી, તમારા જીવન સંબધે પ્રશ્ન પુછીને મેં આપને જે આટલું બધુ કષ્ટ આપ્યું તેને માટે કૃપા કરીને ક્ષમા આપો.' તે એને પગે પડી અને અનંત ભવસાગરના કલેશને કારણે કહેવા લાગી: 'સંસારભોગના કાદવમાં કળી ગયેલાં એવાં જે અમે તેમનુ શું થશે ! મોહાન્ધકારે અમને ઘેરી લીધાં છે અને ત્યારે તમે તો કઠણ આ સાધુજીવન ગ્રહણ કર્યું છે. છતાં યે અમને બતાવો કે પુનર્જન્મમાં કષ્ટ ટાળવાને માટે અમારે શું કરવું જોઇએ ?'

૧૬૩૭–૧૬૪૧. તરંગવતીએ જવાબ દીધો: 'તમે સાધુજીવન પાળી શકો એમ ન હો, છતાં યે સંસારમાં એવી રીતે રહો કે તીર્થંકરના ઉપદેશ પ્રમાણે ચાલી શકો.' તે સાધ્વીના આ શબ્દો અમૃતની પેઠે શેઠાણી ઉતારી ગઈ અને મહાકૃપાએ મળ્યા હોય એમ માનવા લાગી. અંતે નિશ્ચય કરીને શ્રદ્ધાપૂર્વક ગૃહસ્થધર્મ પાળવાનું માથે લીધું અને (સજીવને ઉગારવા માટે) સજીવનિર્જીવ વચ્ચેનો ભેદ જાણી લીધો. આમ (ગૃહસ્થજન પાળી શકે એવાં) સરળ પાંચ વ્રતો અને બીજી અનેક ક્રિયાઓ અને વિધિઓ એણે પાળવા માંડી. જે જુવાન દાસીઓએ પણ આ કથા સાંભળી હતી તેમને પણ અસર થઈ અને તીર્થંકરોના ઉપદેશ ઉપર ઉંડી શ્રદ્ધા તેમને બેઠી.

૧૬૪૨. સાધ્વીએ અને તેની સહચરીએ (પોતાના ધર્મને બાધ ન આવતો હોય એવી) ભિક્ષા લીધી અને જોઇજોઇને અને જાળવીજાળવીને પગલાં ભરતી જ્યાંથી આવી હતી ત્યાં એ પાછી ગઈ.

૧૬૪૩. તમને (સાંભળનારને અને વાંચનારને) મેં આ કથા આધ્યાત્મિક જ્ઞાન થાય એટલા માટે કહી બતાવી છે. આના શ્રવણથી સર્વ દુરિત દૂર થાઓ અને જિનેશ્વરની ભક્તિમાં તમારૂં મન લીન થાઓ.

૧૬૪૪. હાઈય પુરીય ગચ્છમા થએલા આચાર્ય વીરભદ્રના શિષ્ય સાધુ નેમિચન્દ્રગણિએ આ કથાનું આલેખન કર્યું.

जैन साहित्य संशोधक समिति

पेट्रन

श्रीयुत हीरालाल अमृतलाल शाह बी. ए. मुंबई

लाइफ पेट्रन

श्रीयुत केशवलाल प्रेमचंद मोदी बी. ए. एल्एल्. बी. वकील अहमदाबाद
श्रीयुत अमरचंद घेलाभाई गांधी मुंबई

सहायक

शेठ परमानंददास रतनजी मुंबई
शेठ कांतिलाल गगलभाई हाथीभाई, पूना
शेठ केशवलाल मणीलाल शाह पूना
शेठ बाबूलाल नानचंद भगवानदास जवेरी पूना

आजीवन-सभासद

श्रीयुत बाबू राजकुमारसिंहजी बद्रीदासजी कलकत्ता
श्रीयुत बाबू पूरणचंदजी नाहार एम्. ए. बी. एल्. वकील कलकत्ता
शेठ लल्लुभाई कल्याणभाई झवेरी बडोदरा (मुंबई)
शेठ नरोत्तमदास भाणजी मुंबई
शेठ दामोदरदास, त्रिभुवनदास भाणजी, मुंबई
शेठ त्रिभुवनदास भाणजी जैन कन्याशाला, भावनगर
शेठ केशवभाई माणेकचंद, मुंबई
शेठ देवकरणभाई मूळजीभाई, मुंबई
शेठ गुलाबचंद देवचंद, मुंबई
श्रीयुत मोतीचंद गिरधरलाल कापडिया, बी. ए. एल्एल्. बी. सॉलिसिटर, मुंबई
श्रीयुत केशरीचंदजी भंडारी इंदोर
शाह अमृतलाल वण्ड भगवानदास कं० मुंबई
शाह वाडीलाल वीरचंद कृष्णाजी पूना
शेठ लखमाजी मोतीलाल, पूना
शाह धनजीभाई वसंतचंद साणंदवाळा, (अहमदाबाद)
शाह बाळूभाई रामचंद, तळेगाम (ढमढेरे)
शाह चुनीलाल अमरचंद मुंबई

हमणां ज प्रकट थएल अत्युत्तम ग्रन्थ

आ चा रां ग सू त्र.

एम तो आचारांगसूत्रनी आज सुधीमां अनेक आवृत्तियो छपाई गएल छे परंतु शुद्धता अने उत्तमतानी दृष्टिए जोतां जणावुं जोईए के एकेय आवृत्ति हजी सुधी बहार पडी नथी. आ आवृत्ति जर्मनीना एक विद्वाने वर्षो सुधी आचारांगसूत्रनो ऊंडो अभ्यास करी तैयार करेल छे मूळनी अनेक प्रतो भेगी करी तेमांथी प्रथम मूळपाठ तारवी काढी पछी चूर्णि, टीका, अवचूरि, टबार्थ अने बालावबोध आदि जुदी जुदी व्याख्या करनाराओना पाठो साथे सरखावी, आनो पाठ निर्णय करवामां आव्यो छे. एटलुं ज नहीं पण आज सुधीमां कोईपण टीकाकार जे वस्तु ए सूत्रमां जोई शक्या न हता ते एमां तारवी काढवामां आवी छे अने ए वस्तु ते आखा सूत्रमां गद्यभाग अने पद्यभाग केटलो छे तेनुं पृथक्करण छे. पश्चिमना विद्वानो आपणा देशना शास्त्रोनो केवी पद्धतिए अने केटली बारीकाईथी अभ्यास करे छे तेनी कल्पना आचारांगसूत्रनी आ आवृत्ति जोवाथी थशे. आनी महत्तानो ख्याल एटला उपरथी आवी के जर्मनीनी एक प्रख्यात युनिवर्सिटीए ए ग्रन्थना संशोधक विद्वानने एमना बौद्धिक परिश्रमना बदलामां ऊंचामां ऊंची पांडित्यप्रदर्शक डॉक्टर "नी डीग्री आपी छे

सारामां सारा एन्टीक कागळ उपर सुन्दर रीते अने नवी पद्धतिए छपाववामां आवेल छे. पाछळ ग्रन्थमां आवता दरेक शब्दनो प्राकृत अने संस्कृत शब्द कोष आपवामां आवेल छे तेम ज खास खास महत्त्वनां पाठान्तरो पण आपेला छे. दरेक भंडार, लाईब्रेरी अने ग्रन्थसंग्रहमां आनी एकेक नकल खास राखवा लायक छे तेम ज दरेक साधुसाध्वीने स्वाध्यायमाटे अत्यंत उपयोगी होवाथी तेमने पण खास संग्रहवा लायक छे.

जर्मनीनी लिप्जीग युनिवर्सीटी तरफथी ए ग्रन्थनी रोमनलीपिमां जे मूळ आवृत्ति प्रकट थई छे तेनी किंमत लगभग ६-७ रुपिया जेटली पडे छे छतां आ आवृत्तिनी किंमत मात्र १॥ रुपियो ज राखवामां आवी छे. घणी ज थोडी नकलो छपाएली छे माटे मंगाववानी इच्छा वाळाए शीघ्रता करवी

त्रण छेद सूत्र

बृहत्कल्प, व्यवहार अने निशीथ.

जैन आगम साहित्यमां आ त्रण छेद सूत्र सौथी वधारे प्राचीन अने प्रधान आगम गणाय छे एमना कर्ता भद्रबाहु स्वामी छे ए छेद सूत्रो उपर पूर्वाचार्योए जेटली व्याख्याओ लखी छे तेटली बीजा कोई पण आगमो उपर नथी लखी. ए छेद सूत्रो हजी सुधी कोईए छपाव्या न हता परतु जर्मनीना प्रसिद्ध विद्वान डॉ शुब्रींग, जेमणे उपरोक्त आचारांग सूत्रनुं संशोधन कर्युं छे तेमणे ज सौथी प्रथम आ त्रण छेद सूत्रोनुं पण अत्युत्तम संशोधन करी प्रकट करवानुं प्रशंसनीय श्रेय प्राप्त कर्युं छे आ सूत्रोना पाठो पण आचारांग सूत्रनी माफक टीका, चूर्णि, भाष्य, निर्युक्ति आदि जुनी व्याख्याओ अने मूळनी जुनामां जुनी प्रतिओ भेगी करी सायन्टीफिक पद्धतिए तैयार करवामा आव्या छे. साथे एवी उत्तम रीते छपाववामा आव्या छे के जेथी आखा सूत्रनुं रहस्य वाचतानी साथे ज, यंत्रने जोवनी माफक, आंखो आगळ तरी आवे छे अंतमां जुदाजूदा पाठान्तरो पण आपवामां आव्यां छे. ऊंचा एन्टीक कागळ उपर सुंदर रीते छपावेलां होवा छतां त्रणे सूत्रोनी किमत फक्त २॥ रुपिया छे हवे थोडी ज प्रतिओ शिलकमां रहेली छे.

मळवानु स्थान —

गुजरात पुरातत्त्वमंदिर
एलीसब्रीज, अमदावाद.

भारत जैन विद्यालय;
पो० डेक्कन जीमखाना, पूना सिटी.

सहायक—श्रीयुत सेठ हरगोविंददास रामजी शाह मुंबई

खंड २] [अंक ३-४

जैन साहित्य संशोधक

(जैन इतिहास, साहित्य तत्त्वज्ञान आदि विषयक सचित्र पत्र)

संपादक—
श्रीजिनविजय (एम् आर् ए एस्)

विषयानुक्रमणिका

परिशिष्ट

प्रकाशक—
जैन साहित्य संशोधक कार्यालय.
ठि भारत जैन विद्यालय—पूना शहर
ज्येष्ठ विक्रम सं १९८१] महावीर नि सं २४५१ [मे, सन् १९२

जैन साहित्य संशोधक

ना

संरक्षक

श्रीमान् सेठ हरगोविंददास रामजी; मुकुंद, मुंबई.

प्रकाशक —शा. चिमनलाल लखमीचंद; जैन साहित्य संशोधक कार्यालय—
भारत जैन विद्यालय, पूना सीटी।

मुद्रक.—टाइटल अने निवेदन विगेरे छापनार—लक्ष्मण भाऊराव कोकाटे,
हनुमान छापखाना, पुणें, तथा गूजराती लखाण छापनार, प्राणजीवन विश्वनाथ पाठक,
—दित्यमुद्रणालय, रायखड, अमदाबाद।

आवश्यक सूचना

जैन साहित्य संशोधकनी आंतरिक अने बाह्य व्यवस्थामा खास केटलाक सुधारा वधारा करवामा आवनार छे अने हवे पछी आ पत्र वधारे नियमित अने व्यवस्थित रूपे प्रकट थाय तेवी स्थायी योजना करवामा आवनार छे तेथी ए बधी व्यवस्थानो सुप्रबन्ध थइ रह्या पछी ज हवे बीजा खंडनो प्रारंभ करवामा आवशे अने तेनी विशेष सूचना जाहेर पत्रक द्वारा सबने विदित करवामा आवशे माटे बीजा खंडना नवीन ग्राहक थवानी अगर चालू रहेवानी जे सज्जनोनी इच्छा होय तेमणे ए सूचना मळ्या पछी ज कार्यालय साथे पत्रव्यवहार करवा निवेदन छे

—जिन विजय।

आ पछीना पानावाळु मजकूर सौथी प्रथम अने अवश्य वांचशो

संपादकीय निवेदन
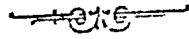
बीजा खंडनो बीजो अंक ज्यारे गया वर्षना ज्येष्ठ मासमां प्रकट थयो हतो त्यारे त्रीजा अंकनुं पण केटलुंक मुद्रण थई चुक्युं हतुं अने ते पछी थोडा ज समयमां ते प्रकट करी शकाशे एवी आशा रहेती हती तेथी तेवी सूचना पण ए बीजा अंकना मुखपृष्ठ उपर आपी देवामां आवी हती। पण धार्या प्रमाणे तेमांनुं कशुं थयुं नहि। अनेक आन्तर-बाह्य अगवडोना सबबे लगभग आखा वर्ष जेटलो लांबो समय व्यतीत थई गयो—पण ए अंक ग्राहकोने पहोंचाडी शकायो नहि। छेवटे आजे त्रीजो अने चोथो—एम बने अंको एक साथे ज रवाना करवानो प्रसंग प्राप्त थयो छे। नियतरीते काम करी शकवानी अगवडनो विचार करतां मारी जातने तो एथी पण काईक आश्वासन मळे छे अने आम विलंबे-पण आजे बीजा खंडना ग्राहकोना ऋणमांथी मुक्त थवानो जे अवसर मने मळे छे ते जाणी मारा दिलनो भार काईक हळको थाय छे।

जैन साहित्य संशोधकना ग्राहकोनी संख्या आजे घणी ओछी छे। एटली बधी ओछी छे के तेनी पासेथी आवता वार्षिक-मूल्यवडे मात्र एक अंकनो प्रेसचार्ज पण पूरो थई शकतो नथी। एटली ओछी संख्याना आधारे सामान्य प्रकारनुं मासिक पत्र पण चलाववानो कोई उद्योग न करे तो पछी आ प्रकारना प्रौढ, दळदार, अने खूब खर्चाळ पत्रना प्रकाशननो तो मनोरथ पण कोण करी शके। वस्तुस्थिति आवी होवा छतां पण आजे आ पत्र जे बीजा खण्डनी समाप्तिनी सीमाए पहुंचे छे तेनुं कारण फक्त एना पोषक, पालक, के संरक्षक,—जे कहु ते—भाई **श्रीहरगोविंददास रामजीनी** निष्काम दानशीलता अने बहुजन-दुर्लभ सात्त्विक सज्जनता छे। ए समानशील बन्धुनी सौहार्द-पूर्ण प्रेरणा अने विकल्प-वगरनी द्रव्यसहायताना प्रतापे ज आ पत्रे जन्म धारण कर्युं छे अने मात्र एक अनियमितताना रोगने छोडीने बाकी बधी सुंदर रीते बे वर्षनुं कीर्तिवन्त अने आकर्षक जीवन पसार कर्युं छे.

सामान्यरीते आ प्रकारना उच्चकोटिना पत्रोना वाचको अने ग्राहको सर्वत्र ओछा ज होय छे, तेमां वळी आ पत्र तो एक अल्प संख्यक समाजवाळा धर्मना तात्त्विक विषयोने अनुलक्षीने ज खास पोतानुं कार्यक्षेत्र खेडतुं होवाथी, एना ग्राहकोनी संख्या-बहुलतानी आशा राखवानुं तो कशुं ज प्रलोभन न होई शके। छतां आ पत्रने पोताना निर्वाह-पुरता प्रबन्धनी तो समाज पासे आशा राखवानो हक्क होय ज—अने ते आशा पूरी करवी ए समाजनुं पण कर्तव्य होय ज। परंतु अद्यापि ए आशा पूरी थई नथी। एमां काईक दोष आ कार्यालयनो पण खास छे, ए मारे प्रथम ज कबूल करवुं जोईए। कारण के एक तो पत्र नियमित रीते समय उपर प्रकट थतुं नथी अने बीजुं, ग्राहको तरफथी आवता पत्रो विगेरेनो यथा समय संतोष कारक उत्तर विगेरे आपी शकातो नथी। आवा प्रबन्ध शैथिल्यना लीधे घणा खरा जिज्ञासु ग्राहकोने निराशा थाय अने तेथी तेओ कंटाळी ग्राहक—श्रेणिमांथी पोतानुं नाम बातल करावे एमां तेमनो जराए दोष काढी न शकाय।

कार्यालय उपर आवता पत्रो अने प्रत्यक्ष थती मुलाकातो उपरथी मने ए तो चोकस खात्री थई छे के अत्यारे जे अल्पस्वल्प ग्राहक वर्ग आ पत्रनो रहेलो छे तेनो पत्र उपर खूब प्रेम छे अने पत्रने नियमित समये मेळववा अने वांचवा ते अति उत्सुक रहे छे। ए उत्सुकताना परिणामे घणा बन्धुओ तो अनेक प्रकारना रंज भरेला पत्रो पण मारी उपर मोकली पोतानो पत्र उपरनो विशिष्ट अनुराग व्यक्त करे छे। हुं आ स्थळे ए

बधा बन्धुओना अनुरागनो उपकार मानु अने तेनी साथे तेमना जे प्रशमनीय जिज्ञासाने संतोषी शक्तो नथी ते माटे क्षमा पण मागु, ए ज अत्यारे तो मारा माटे उचित कर्तव्य छे।

कार्यालयना प्रबन्धमां आ जातनी जे शिथिलता छे तेनुं कारण पण मारे ग्राहको आगळ प्रकट करी देवानी फरज रहे छे। ए शिथिलता होवानुं कारण कोई जातनो प्रमाद नहि पण सहायकनो जे अभाव छे, ते ज छे। घणा खरा बन्धुओ तो जाणता ज हशे के छेल्ला ३-४ वर्षथी मारं कार्यक्षेत्र पूना अने अमदावाद एम बे दूरवर्ती स्थळोमां समान भागे वहेंचाई गएलुं छे। पूनानुं भारत-जैन विद्यालय जेम मारी समग्र सेवानी अपेक्षा राखे छे तेम अमदावादनुं गुजरात पुरातत्त्व मंदिर पण समग्र सेवा मागे छे। तेमाथी ए बन्ने स्थळे वर्षनो लगभग अडधो अडधो भाग रही हुं मारी अल्पशक्ति प्रमाणे ए बन्ने संस्थाओना अडधी सेवा बजावी रह्यो छुं। आम आ संस्थाओना प्रबन्धमां ज हाल मारो समय मुख्यरीते व्यतीत थतो होवाथी जैन-साहित्य संशोधकना प्रबन्धमाटे हुं वधारे समय काढी शक्तो नथी अने तेथी ज उपर जणाव्या प्रमाणे एना कायमा अनियमितता अने अव्यवस्था थई रही छे।

परन्तु दळ घणुं मोटुं आखुं जाणे एक पुस्तक होय तेटलुं मोटुं होवाथी छपावता ज घणो वखत वही जाय छे। जो कोई छापखानुं नियमितरीते काम आपे अने तेनी ज राते तेने पाछुं तपासीने तरत मोकलवामा आवे तो ज मांड मांड त्रण महिने एक अंक पूरो छपाय। पण मारी तो स्थिति पूना अने अमदावाद वच्चे घडियाळना लोलकनी जेम महिने बबे महिने फरती रहे छे; तेथी महिनामां थई शके तेटलुं काम त्रण महिने पण थई शकतुं नथी अने तेमां प्रेसवाळाओनी अनियमितता जे हेरान करे छे ते तो वळी बाकी ज रहे छे। उदाहरण तरीके-आ अंकनो केटलोक भाग पूनामां छपाया बाद बाकीनो भाग अमदावाद छपाववो शुरु कर्यो त्यारे, प्रेसवाळाना कथन उपर आधार राखी, गई होळी पहेला ज ग्राहकोना हाथमां आ अंको पहोंचता करी देवानी इच्छाए पूनामां छपाएला बधो भाग रेलने पार्सलथी अमदावाद मगाववामां आव्यो। पण ते प्रेस, कह्या प्रमाणे होळी सुधी काम पूरु करी शक्यो नहि अने समय थए अमदावाद छोडी मारे पूना आववुं थयुं। एटले फरी ते बधुं काम पाछुं पूना आव्युं अने फाल्गुणना बदले आम ठेठ वैशाखमां आ अंक बहार पाडी शकायो। आवी एकंदर परिस्थिति छे।

सने १९२० ना जान्युआरी मासमां पहेला खण्डनो प्रथम अंक छपावनो शुरु थयो हतो अने ते वर्षना एप्रील मासमां ए अंक प्रकट थयो हतो। आजे १९२५ ना एप्रीलमा आ बीजा खंडनो ४ थो अंक प्रकट थाय छे-एटले लगभग पांच वर्षमा बे खंडो बहार पडया एम कही शकाय।

आ जातना साहित्य विषयक पत्रो सामान्यरीते बधा ज अनियमित के अर्ध नियमित होय छे। इण्डियन् एन्टीक्वेरी जेवा बहु साधन संपन्न मासिक पत्रो पण घणी वखते ६-८ महिना जेटली 'लेट' थई जाय छे तो पछी बाजाओ थाय तेमां तो नवाई ज शी। वळी आवा पत्रोना लखो केटला बधा परिश्रमे तैयार थाय छे तेनी पण साधारण वाचकने तो कल्पना सुधां आववी कठिन। एक एक लेख वर्षोना अभ्यासना परिणामे तैयार थई शके छे। दश पन्दर पंक्तिओना लखाण माटे घणी वखते आखी लाईब्रेरीयो खोळी काढवी पडे छे। एक एक पंक्तिना टाचण माटे काम पडे तो सो-पचास रुपियाना पुस्तको खरीदवा पडे छे। केटलीक वखते महिनाओनी महेनते तैयार करेला लेखो एक आध दुष्प्राप्य पुस्तकना प्रमाण माटे वर्षो सुधी आमना आम फाइलोमा बांधी राखवा पडे छे। एटले आटली बधी महेनते तैयार थतां पत्रो के पुस्तको समयनी मर्यादाने साचवे जो न रही शके तो तेमां कांई मोटा

-दोष न गणाय । तेम ज एवा पत्रोनो कोई खास वर्तमान समाचारनी साथे संबंध होतो नथी जेथी महिना-बे-महिना आगळ-पाछळ थता तेमानुं लखाण उतरी गएलुं के वासी थई गएलु मनाय । मतलब के आवा पत्रो ग्राहकोनी साथे समयनी दृष्टिए बधाएला होता नथी, ए वात पण लक्ष्य-बहार न रहेवी जोईए । तेम छतां जैन-साहित्य संशोधकनी चालू अनियमितततानो हु आथी बचाव करवा नथी मांगतो, कारण के आनी अनियमितता, ते, अनियमितततानी व्याख्या करता घणी वधारे पडती थई गई छे, ए मारे स्पष्ट कबूल करवु ज जोईए ।

* * * * * *

अस्तु । आम अनियमितताना चीलामा जेम तेम गबडतुं आ पत्रनुं रगशियु गाडु आजे बीजा खण्डना छेल्ले नाके आवी पहोंच्युं छे अने तेम थवाथी ग्राहकोनी साथे थएला करारमांथी कार्यालय मुक्त थाय छे । हवे प्रश्न मात्र भविष्यना विचारनो छे । जेम वाचकोने पत्रनी अनियमितता खटके छे तेम मने अने मारा साहित्यप्रिय स्नेहिओने पण ते खूब खटके छे । आवी रीते वर्षे दोढ वर्षे जेम तेम एक अंक प्रकट थाय तेना करता तो एने सर्वथा बन्ध करी देवु सारुं, एवी पण केटलाक मित्रोनी सलाह मळ्या करे छे । पण ए सलाह मने जरा कडवी लाग्या करे छे । कारण के मारी मनोवृत्तिनुं मुख्य वळण प्रारभथी ज जैन साहित्यनी सेवा तरफ वळेलु होवाथी, ए सेवाना एक मुख्य साधन रूप आ पत्रने सर्वथा बन्ध करी देवानी कल्पना मने आघात कारक लागे ए स्वाभाविक छे । तेथी पत्रने चालु राखवु ए तो मारी प्रबल इच्छा छे ज । परतु त्रीजा खंडनो प्रारंभ हवे त्यारे ज कराशे ज्यारे अत्यार सुधी अनुभवाती अव्यवस्था अने अगवडतानो कोईक संतोष कारक निकाल आवशे । आशा तो रहे छे के ए समय पण जल्दी ज प्राप्त थशे ।

वैशाख—सं. १९८१.
भारत जैन विद्यालय, पूना सीटी.

—संपादक

———
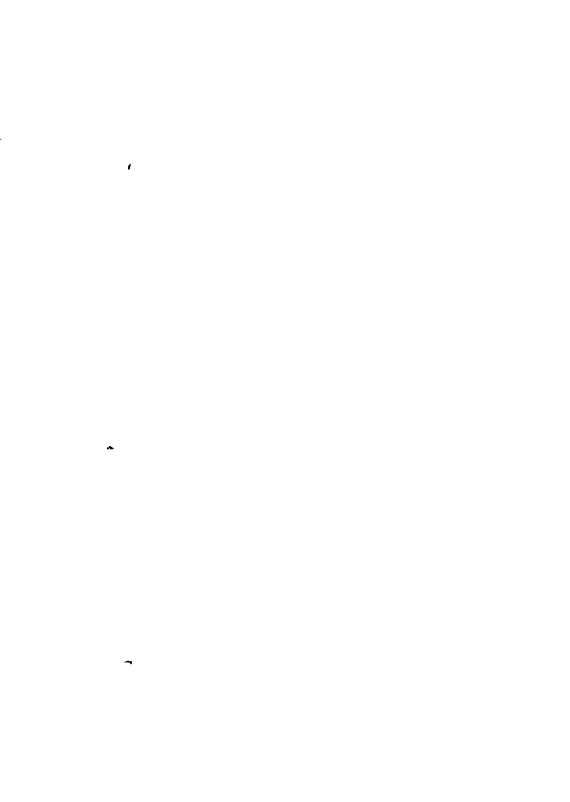
सिद्धक्षेत्र शत्रुंजय गिरि

अपने आश्रयदाता भरत के पुत्र 'नन्न' व उनके 'कौण्डिन्य' गोत्र और अपने 'ब्राह्मणकुल' व काश्यप गोत्र, का कविने यहां भी उल्लेख किया है। एक पद्य से कुछ ऐसा भाव निकलता है कि कवि पहले शिवभक्त थे पर पीछे 'गुरु' के वचनामृत-पान से जिनभक्त हो गये थे[२]। उक्त दोनों प्रतियों में 'गुरु' पर 'दिगम्बर' ऐसा टिप्पण दिया हुआ है, जिससे विदित होता है कि किसी दिगम्बर मुनि के उपदेश से वे शैव धर्म को छोड जिन धर्मावलम्बी हुए थे। अपने आश्रयदाता 'नन्न' की माता भरतमंत्री की भार्या का नाम कविने 'कुंदव्वा'[४] दिया है। जिस प्रकार भरत के अनुरोध से उन्होंने महापुराण की रचना की थी, उसी प्रकार 'नागकुमार चरित' उन्होंने नन्न की प्रार्थना से रचा। उनके दो शिष्य 'गुणधं(व)र्म' और 'शोभन' व अन्य दो सज्जन 'नाइल्ल' और 'शीलभट्ट'ने भी इस रचना के लिये कवि को प्रेरणा की। ग्रंथ के आदि और अंत में कविने नन्न की खूब प्रशंसा की है।

साहित्य-क्षेत्र मे पुष्पदन्त की खूब ख्याति रही है। उनका उल्लेख बहुतसे कवियोंने किया है। कनकामर कविने अपने करकण्डु चरित में उन्हें 'वाएसरि घरु' (वागेश्वरी गृह) कहा है यथा:-

'जयएव सयंभु विसाल चित्तु। वाएसरिघरु सिरि पुप्फयंतु॥

सोमकीर्ति अपने 'यशोधर चरित' (संपूर्ण हुआ वि० सं० १५३६) में कहते हैं:—

यत्प्रोक्तं हरिषेणाद्यैः पुष्पदन्त पुरःसरैः।
श्रीमद्वासवसेनाद्यैः शास्त्रस्यार्णवपारगैः॥
तच्चरित्रं मया नूनं बालेन शक्यते कथम्।
बाहुभ्यां सागरं घोरं केनापि तरितुं यथा॥

सालहवीं शताब्दि के एक और अपभ्रंश भाषा के कवि 'सिंहसेन' अपने आदिपुराण में पुष्पदन्त का स्मरण करते हैं:—

पुणु वि सयंभु महाकइ जायउ। चउमुह पुप्फयंतु विक्खायउ॥

यहां हम पुष्पदन्त कवि के समय पर विचार करेंगे। महापुराण में पुष्पदन्त ने जिन आचार्यों व कवियों का उल्लेख किया है उन में 'अकलंक' 'वीरसेन' और 'जिनसेन' सबसे पीछे के विदित होते है। 'राज वार्त्तिक' आदि ग्रंथों के कर्त्ता प्रसिद्ध तार्किक अकलंक राष्ट्रकूट नरेश कृष्णराज के समय मे हुए हैं जिन्हों ने शक संवत् ६७५ से ६९७ तक राज्य किया। जयधवल सिद्धान्त की वीरसेनीया टीका के पूर्व भाग को वीरसेन स्वामी ने जयतुंग देव के समय में रचा था और उसी के उत्तर भाग को उन के शिष्य जिनसेन ने शक सं० ७५९ में अमोघवर्ष नृप के

---

२ 'सिवभत्ताइमि जिण सण्णासे। बेविमयाइ दुरियणिण्णासे।
बंभणाइ कासवरिसि गोत्तइ। 'गुरु' वयणामय पूरिय सोत्तइ। (अवतरण देखिये)

३ शक सं. १०३० मे 'होयसाल नरेश' 'विष्णुवर्धन' के एक मंत्री का नाम भी 'भरत' था। वह जैन धर्मावलम्बी व माघनन्दि आचार्य का शिष्य था। (Repertoire D'Epigraphic Jaina by Guerinot p. 13, Ins. No 307-308).

४ 'कुंदव्वागब्भसमुब्भवस्स'। राष्ट्रकूटवंशी प्रसिद्ध नरेश महाराज अमोघवर्ष की रानी का नाम 'कन्दक देवी' था। ये 'कन्दक देवी' चेदि नृप 'युवराज' की राज कन्या थी।
(Studies in South Indian Jainism)

५ सम्भवत ये दोनों भरत के सात पुत्रों में से थे। (देखो प्रेमीजी का लेख)

६ देखो जैनहितैषी भाग ११, अंक ७-८ पृ ४२७-४२९

समय में समाप्त किया था। जयधवल सिद्धान्त का भी उल्लेख पुष्पदन्त ने अपने काव्य में किया है। अतः अकलंक, वीरसेन जिनसेन व जयधवल सिद्धान्त का उल्लेख करनेवाले कवि को शाक सं० ७ ९ से पीछे होना चाहिये।

अब हमें देखना चाहिये कि क्या कोई अन्य बातें भी पुष्पदन्त के काव्यों में ऐसी है जो उनके समय निर्णय में सहायक हो सकती हों। आदिपुराण की उत्थानिका से विदित होता है कि कवि ने उस की रचना मान्यखेटपुर में आकर की थी और उस समय वहां तुडिगु नाम के राजा राज्य करते थे जिन्होंने चोड राजा का मस्तक काटा था। मान्यखेट निजाम हैदराबाद के राज्यान्तगत आधुनिक मलखेड का ही प्राचीन नाम है। अनुमान होता है कि कवि के समय में वह चोड मडल को जीतनेवाले किसी प्रतापी नरेश की राजधानी थी। पर जब हम इतिहास के पन्ने उलटते हैं तो शक सं० ७३७ से पूर्व मान्यखेट का कोई पता नहीं चलता। जान पड़ता है कि उस समय तक यह कोई प्रसिद्ध नगर नहीं था। उस के आसपास का प्रदेश चालुक्य राज्य के अंतर्गत था जिस की राजधानी नासिक के निकट वातापि या बादामि नगर थी। चालुक्य वंश की इतिश्री शक सं० ६७ में राष्ट्रकूट वंश के राजा दन्तिदुर्ग द्वारा हुई और उनके वंशज महाराज अमोघवर्ष ने शक सं० ७३७ (सन् ८) में अपनी राजधानी मान्यखेट में प्रतिष्ठित की। इसी समय से यह नगर इतिहास में प्रसिद्ध हुआ है।

अब हमें यह खोज करना चाहिये कि क्या तुडिगु नाम के यहां कोई राजा हुए हैं? महापुराण में अन्य कई स्थानों पर पुष्पदन्त ने इसी राजा का उल्लेख शुभतुगदेव और भैरव नरेन्द्र के नाम से किया है और 'यशोधरचरित व नागकुमारचरित' में राजा का नाम वल्लभराय पाया जाता है। जहा-जहा इन नामों में से किसी का भी उल्लेख आया है वहां टिप्पणकार ने उस पर कृष्णराज ऐसा टिप्पण दिया है। इस पर से यही अनुमान किया जा सकता है जैसा कि प्रेमीजी ने कहा है कि तुडिगु शुभतुगदेव भैरवनरेन्द्र वल्लभराय और कृष्णराज ये पांचों किसी एक ही राजा के नाम हैं और इन्हीं के समय में पुष्पदन्त ने अपने काव्यों की रचना की है। वल्लभराय राष्ट्रकूट नरेशों की आम उपाधि थी। अरब के कई लेखकोंने इन नरेशों का उल्लेख बल्हारा शब्द से किया है जो वल्लभराय का ही अपभ्रंश है। जिनसेनाचार्य ने हरिवंशपुराण की प्रशस्ति में इन्द्रायुध को श्रीवल्लभ विशेषण दिया है।

कृष्णराज नाम के तीन राजा राष्ट्रकूट वंश में हुए हैं। इन में से प्रथम तो वे हैं जिनके समय में अकलंक स्वामी हुए हैं व जिनके पुत्र और उत्तराधिकारी इन्द्रायुध के समय (शाक

---

७ देखो विद्वद्रत्नमाला भाग १ पृ ?

८ ... भुअण भीमु। तो ... बाहुं ... सामु।
भुवणेक्कराम रायाहिराउ। ... तुडिगु महाणुभाउ।
त ... घन कणयपयर। महिपरिभमंत मेवा(ल्या)डिनयर॥

९ Smith Early History of India Ed III p 4 4-4 0

10 They (Arab) called the Rashtrakuta kin Pall ara l cau e thos princes were in the habit of a uming the title Vallabha (beloved Bier aime) which in combination with the word Ral (prince) was ea ily corrupted in to the form Balh'ra

[V Smith E H I p 4? 4 0]

११ पातीन्द्रायुधि नाम्न कृष्णनृपज ... दक्षिणाम

सं० ७०५) में जिनसेनने हरिवंश पुराण की रचना समाप्त की थी। इन के समय तक मान्यखेट राजधानी नहीं हुई थी। पर दूसरे और तीसरे कृष्णराज मान्यखेट के सिंहासन पर हुए हैं। कृष्णराज द्वि० अमोघ वर्ष के उत्तराधिकारी थे, जिन्होंने लगभग शक सं० ८०० से ८३७ तक राज्य किया। इन के समय में मान्यखेट पुरी चालुक्य वंशी राजा विजयादित्य तृतीय द्वारा लूटी और जलाई गई थी[12]। कृष्णराज तृतीय के लिये शिलालेखों से शक सं० ८६२, ८६७, ८७३ और ८७८ के उल्लेख मिले हैं। उन का सब से अन्तिम उल्लेख शक सं० ८८१ का सोमदेव ने अपने 'यशस्तिलकचम्पू' में किया है। इन सबसे पहले की एक तिथि कृष्णराज के लिये मुझे कारंजा भंडार के 'ज्वालामालिनि कल्प' नामक ग्रंथ में देखने को मिली। उस ग्रंथ के अन्तिम पद्य ये हैं—

अष्टाशत सैकषष्टिप्रमाण शक वत्सरेष्वतीतेषु।
श्री-मान्यखेटकटके पर्वण्यक्षयतृतीयायाम् ॥ १ ॥
शतदलसहित-चतुःशत-परिमाण-ग्रंथ-रचनया युक्तम्।
श्रीकृष्णराज-राज्ये समाप्तमेतन्मतं देव्याः ॥ २ ॥

इससे विदित होता है कि उक्त ग्रंथ की रचना शक संवत् ८६१ की अक्षय तृतीया को समाप्त हुई थी और उस समय मान्यखेट नगर में 'कृष्णराज' राज्य करते थे। ये राजा कृष्णराज तृतीय के अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकते। इस प्रकार कृष्णराज तृतीय का राज्य काल कम से कम शक सं० ८६१ से लगा कर ८८१ तक सिद्ध होता है।

हम ऊपर कह आये हैं कि पुष्पदन्त ने अपने समय के 'तुडिगु' अपर नाम कृष्णराज द्वारा चोड नृप के मारे जाने का उल्लेख किया है। राष्ट्रकूट वंशी राजा जैन धर्मानुयायी थे और इस समय के चोड नरेश कट्टर शैव। दोनों नृप बलवान् भी थे। अतः दोनों बीच वत्सर ही युद्ध छिड़ा रहता था। कभी राष्ट्रकूटों की जीत हो जाती थी तो कभी चोडों की। मैसूर प्रान्त के 'अतकूर' नामक स्थान से एक शिलालेख मिला है जिस में ऐसे ही एक युद्ध का उल्लेख है। उससे विदित होता है कि शक सं० ८७१ (सन ९४९) में जब राष्ट्रकूट नरेश कृष्णराज और चोड नृप राजादित्य के बीच युद्ध चल रहा था तब कृष्णराज के सहायक व उन के बहिनोई गंगनरेश 'बुतुग' (भूतराय द्वि०) द्वारा राजादित्य की मृत्यु हुई[13]। इसी शिलालेख के आधार पर सर विन्सेन्ट स्मिथने अपने '*भारत के प्राचीन इतिहास*' में लिखा है कि 'कृष्ण तृतीय' के समय की राष्ट्रकूटों और चोडों की लड़ाई विशेष उल्लेखनीय है—क्यों कि सन् ९४९ में चोड राजा 'राजादित्य' की समरभूमि में ही मृत्यु हुई[14]। क्या आश्चर्य यदि पुष्पदन्त ने अपने पुराण में इसी घटना का उल्लेख किया हो।

प्रेमीजीने उत्तर पुराण के ५० वें परिच्छेद के प्रारम्भ का एक श्लोक उद्धृत किया है जिससे विदित होता है कि उस पुराण के समाप्त होने से कुछ पूर्व मान्यखेट पर किसी 'धारा नरेश' ने चढाई की थी और उस सुन्दर नगर को नष्ट भ्रष्ट कर डाला था[15]। हम ऊपर कह आये हैं कि

---

12 "The Eastern Chalukya Vijayaditya III (A. D 844–888) boasts that he captured the Rashtrakuta capital and burnt it, and the assertion seems to be borne out by other inscriptions" Imp Gaz Vol II, p 33

13 Epigraphia Indica Vol III p. 50.

14 V. Smith E H I pp. 424–430

15 दीनानाथधनं सदा बहुधनं प्रोत्फुल्ल-वल्ली-वनम् मान्याखेटपुरं पुरंदरपुरीलीलाहरं सुन्दरम्।
धारानाथनरेन्द्रकोपशिखिना दग्धं विदग्धप्रियम्। क्वेदानीं वसतिं करिष्यति पुनः श्रीपुष्पदन्तः कविः ॥

कृष्णराज द्वितीय के समय में मान्यखेट पुरी लूटी और जलाई गई थी पर किसी 'धारानाथ' के द्वारा नहीं, वेंगी के चालुक्यवंशी राजा ने उसे लूटा था। देखना चाहिए कि क्या कभी किसी धारा के राजा द्वारा भी मान्यखेट लूटा गया है। धनपाल कवि अपने 'पाइयलच्छी नाममाला' नामक कोष के अंत में श्लोक २७६ आदि में लिखता है कि 'विक्रम संवत् १०२९ में जब मालवा वालों के द्वारा मान्यखेट लूटा गया था तब धारा नगरी निवासी धनपाल कवि ने अपनी बहिन सुन्दरी के लिये यह पुस्तक बनाई'। इस उल्लेख से हमें मान्यखेट पर आक्रमण करनेवाले राजा का नाम तो विदित नहीं हुआ, पर इतना पता चल गया कि वि० सं० १०२९ (शक सं० ८९४) के लगभग धारा वालों ने मान्यखेट को लूटा था। खोज करना चाहिये। शायद इस विषय पर कहीं से कुछ और प्रकाश पड़े। ग्वालियर के उदयपुर नामक ग्राम से एक शिलालेख मिला है जिस में मालवा के परमारवंशी राजाओं की प्रशस्ति खुदी है। इस प्रशस्ति का बारहवाँ पद्य यह है —

> तस्माद् (वैरिसिंहात्) अभूदरिनरेश्वर संघसेवा-
>
> गजद्गजेन्द्र रवसुन्दर तूर्य नादः ।
>
> श्रीहर्षदेव इति खोट्टिगदेव लक्ष्मीं
>
> जग्राह यो युधि नगादसम प्रतापः ॥

खोट्टिगदेव कृष्णराज तृतीय के चचेरे भाई थे जो उन के पीछे मान्यखेट के सिंहासन पर आरूढ़ हुए। उक्त पद्य से हमें दो बातें नई विदित हुई। एक तो यही कि जिस की हम खोज में थे। अर्थात् मान्यखेट की लूटमार करनेवाले 'धारानाथ' का नाम। और दूसरी यह कि उस लूटमार के समय मान्यखेट के स्वामी खोट्टिगदेव थे। वैरिसिंह के पुत्र श्रीहर्षदेव का नाम 'नव साहसाङ्कचरित' में 'श्रीहर्ष' या 'सीयक' तिलकमञ्जरी में 'हर्ष' और 'सीयक' व 'प्रबन्धचिन्तामणि' में श्रीहर्ष सिंहभट और 'सिंहदन्त' पाया जाता है। इस प्रकार पाइयलच्छी नाममाला और उदयपुर प्रशस्ति से यह सिद्ध हुआ कि वि० सं० १०२९ लगभग जब सीयक श्रीहर्ष द्वारा मान्यखेट लूटा गया था उस समय कृष्णराज तृतीय की मृत्यु हो चुकी थी और उनका उत्तराधिकारी खोट्टिगदेव वहां के सिंहासन पर था।

अब इससे आगे बढ़ने से पूर्व हमें यहां तक की छानबीन का पुनः दृष्टि गोचर कर लेना चाहिये —

१ पुष्पदन्त ने अकलङ्क, वीरसेन और जिनसेन का उल्लेख किया है। इससे उनका काव्य-रचना-काल शक सं० ७९९ से पीछे होना चाहिये।

२ पुष्पदन्त ने अपने समकालीन मान्यखेट नरेश का 'वल्लभराय' नाम से उल्लेख किया है, जिसपर कण्हराय टिप्पण पाया जाता है। मान्यखेट के समान राष्ट्रकूट वंशी राजाओं की वल्लभराय उपाधि थी उनमें कृष्णराज नाम के दो राजा हुए हैं।

३ पुष्पदन्त ने अपने समय के मान्यखेट नरेश द्वारा 'चोड' राजा के मारे जाने का उल्लेख किया है। कृष्णराज तृतीय ने शक सं ८७२ में चोड राजा से युद्ध किया था और वहां के राजा की समरभूमि में ही मृत्यु हुई थी।

---

१ विक्कम कालस्स गए अउणत्तीसुत्तरे सहस्सम्मि । मालवनरिंद धाडीए लूडिए मन्नखेडम्मि ॥ इत्यादि

१८ Epigraphia Indica Vol I p 226

१८ भारत के प्राचीन राजवंश भाग १, पृ. ९२

४ पुष्पदन्तने धारा नरेश द्वारा मान्यखेट के लूटे जाने का उल्लेख किया है। शक सं० ८९४ के लगभग धारा के परमार राजा श्रीहर्ष द्वारा मान्यखेट के लूटे जाने का पता चलता है।

इस प्रकार इन ऐतिहासिक तथ्यों के मिलान से इसमें बहुत कम सन्देह रह जाता है कि पुष्पदन्तने अपने काव्यों की रचना मान्यखेट के राष्ट्रकूट वंशी राजा कृष्णराज तृतीय के समय में की थी, जिन के अभी तक, जैसा कि हम ऊपर बता आये है, शक सं० ८६१ से लगाकर ८८? तक के उल्लेख मिले है। यह राजा जैनियों का बड़ा भक्त था व बड़ा प्रतापी और बलवान् भी था। सोमदेवने उसे पांड्य, सिंहल, चोल चेरम, आदि प्रदेशों का विजेता कहा है। शिलालेखों से भी सिद्ध है कि उसने चोड मण्डल के प्रबल राजा को परास्त कर वहां राष्ट्रकूटाधिपत्य स्थापित किया था। उसने गंगराजा 'राचमल' को पराजित कर वहां की गद्दीपर 'भूतराय' को बैठाया था। ये ही 'भूतराय' चोडयुद्ध में उनके सहायक हुए थे और इन्हीं द्वारा चोड राजा का मस्तक काटा गया था। सम्भव है कि इसी प्रताप के कारण उन्होंने 'भैरव नरेन्द्र' की उपाधि भी प्राप्त कर ली हो, जिसका कि उल्लेख पुष्पदन्तने अपने काव्य में किया है। या स्वयं पुष्पदन्तने ही उनके लिये उक्त 'विरुद' निर्धारित करलिया हो। कविराजों को ऐसी स्वतंत्रता रहती है। 'शुभतुंग' कृष्णराज प्रथम का उपनाम अनुमान किया जाता है। प्रहलनमिदत्तने इस राजा का इसी पद से उल्लेख किया है। उसी का 'मल्लिषेण प्रशस्ति' में 'साहसतुंग' नाम पाया जाता है। पर सम्भव है कि ये भी वल्लभराय के समान राष्ट्रकूट नरेशों के सामान्य 'विरुद' थे। देवली के ताम्रपत्रों से यही बात सिद्ध होती है। यह भी हो सकता है कि शुभतुंग व साहसतुंग इस वंश के खास २ प्रतापी नरेशों की उपाधि रही हो। हम देख चुके है कि मान्यखेट को लूटमार से कुछ पूर्व ही कृष्णराज की मृत्यु हो चुकी थी क्योंकि उस लूटमार के समय उनके उत्तराधिकारी 'खोट्टिगदेव' सिंहासन पर थे। यदि इसी लूटमार का उल्लेख पुष्पदन्तने किया है तो स्वयंसिद्ध है कि उन्होंने उत्तरपुराण का अन्तिम भाग, 'यशोधर चरित और नागकुमार चरित' कृष्णराज के उत्तराधिकारियों के समय में लिखे थे। ये राजा 'कृष्णराज' के समान प्रतापशाली नहीं हुए। इनके समय में राष्ट्रकूट राज्य की अवनति प्रारम्भ हो गई थी। शायद इसी से हम उत्तरपुराण के अन्तिम भाग, यशोधर चरित और नागकुमार चरित में शुभतुंगराय व भैरवनरेन्द्र का उल्लेख नहीं पाते। यहां राजा का उल्लेख केवल 'वल्लभराय' से किया गया है जो राष्ट्रकूट नरेशों की साधारण

---

१९ Duff's Chronology p 89

२० 'अत्रैव भारते मान्यखेटाख्य नगरे वरे। राजाभूत् शुभतुंगाख्यस्तन्मन्त्री पुरुषोत्तम '॥

यहां शुभतुंग (कृष्ण प्रथम) को मान्यखेट का राजा कहा है, पर इतिहास कहता है कि इनके समय तक राष्ट्रकूट राजधानी नासिक में थी। मान्यखेट पुरी को अमोघवर्ष प्रथम ने सन् ८१४ ईस्वी में बसाया था।

(Deoli plates).

२१ 'राजन् साहसतुंग सन्ति बहव: श्वेतातपत्रा नृपा:

किंतु त्वत्सदृशा रणे विजयिनस्त्यागोन्नता दुर्लभा। इत्यादि।

२२ 'The Rashtra-Kutas are stated in it (Deoli plates) to have sprung from the *Satyaki* branch of Yadava race and to be known as '*Tunga*'

(Ins in C P & Berar, p 10)

उपाधि थी। 'तुडिगु' तामिल व कनड़ी आदि किसी दक्षिणी भाषा का शब्द है। सम्भवतः यह भी कोई प्रतापसूचक उपाधि होगा।

अब हमें प्रेमीजी के उस पाठ पर विचार करना चाहिये जिससे महापुराण का समाप्ति सं० ६०६ में पाई जाती है। समयसूचक पद्य जैन साहित्य संशोधक में उद्धृत अश के अनुसार यह है —

पुप्फयंत कयणा धुयपंक। जइ अहिमाण मेरुणामके॥
कयउ कव्वु भत्तिए परमत्थें। छसय छडोत्तर कय सामत्थें।
कोहण संवच्छर आसाढए। दहमए दियहे चंद रुइ रूढए।

निस्सन्देह इन पद्यों से संवत् ६०६ क्रोधन आषाढ शुक्ल १० मी का महापुराण समाप्त होने का बोध होता है। अब इनके स्थान पर कारंजा की प्रति का पाठ देखिये —

पुप्फयंत कइणा धुयपंक। जइ अहिमाण मेरुणामके।
कयउ कव्वु भत्तिए परमत्थें। जिणपयपंकय मउलियहत्थें।
कोहण संवच्छर आसाढए। दहमइ दियह चंदरुइ रूढए।

यह पाठ और तो सब बातों में ऊपर के पाठ के ही समान है पर इसमें सं० ६०० के सूचक पद का पता नहीं है। उसके स्थान पर जो पद है उससे संवत् का कोई बोध नहीं होता। इन पाठों में से कौनसा शुद्ध और कौनसा अशुद्ध माना जाय। प्रेमीजी मुझे सूचित करते हैं कि ऊपर वाला पाठ अनेक प्राचीन प्रतियों में पाया जाता है। इससे उसे सहसा अशुद्ध और जाली कहने का भी साहस नहीं होता। न तो सं० ६०६ शक गणना के अनुसार क्रोधन था और न विक्रम गणना के अनुसार। पर सम्भव है कि यह इन से भिन्न कोई और संवत् का वर्ष हो।

अब हमें महापुराण की समाप्ति का समय अन्य प्रकार से शोधना पड़ेगा। इस पुराण के प्रारम्भ के एक पद्य से विदित होता है कि पुष्पदन्तने उस पुराण की रचना किसी सिद्धार्थ संवत्सर में प्रारम्भ की थी। सोमदेवकृत यशस्तिलक चम्पू के उपसंहार वाक्य को देखिये —

शक-नृप-कालातीत-संवत्सर-शतेष्वष्टस्वेकाशीत्यधिकेषु गतेषु अङ्कतः (८८१) सिद्धार्थ-संवत्सरान्तर्गत चैत्रमासमदन-त्रयोदश्यां पाण्ड्य-सिंहल-चोल-चेरम-प्रभृतीन्महीपतीन्प्रसाध्य मेलपाटी-प्रवर्धमान-राज्य-प्रभावे श्रीकृष्णराजदेवे सति तत्पादपद्मोपजीविनः समधिगत-पञ्च-महा-शब्द-महासामन्ताधिपतेश्चालुक्यकुल-जन्मनः सामन्तचूडामणेः श्रीमदरिकेसरिणः प्रथम पुत्रस्य श्री-मद्वद्दिगराजस्य लक्ष्मीप्रवर्द्धमान-वसुधरायां गंगाधारायां विनिर्मापितमिदं काव्यमिति।

इससे प्रसंगोपयोगी हमें केवल इतनी बात विदित होती है कि शक सं० ८८१ सिद्धार्थ संवत्सर था और उस समय मान्यखेट में चोल आदि नरेशों को जीतने वाले राजा कृष्णराज (तृतीय) का राज्य था। महापुराण का प्रारम्भ भी इसी सिद्धार्थ संवत्सर में होना चाहिये। पुराण की समाप्ति का समय प्रेमीजी के पाठ के समान ही कारंजा की प्रति में भी क्रोधन संवत्सर आषाढ शुक्ल १० मी दिया हुआ है। क्रोधन संवत्सर साठ-साला-संवत्-चक्र में सिद्धार्थ संवत्सर से ६ वर्ष बाद आता है। अतः महापुराण की समाप्ति का ठीक समय शक

यह प्रति संवत् १६ मार्गशीर्ष वदि ८ गुरुवार की है।

२८ गुप्त और कलचुरि संवत् से भी यह समय ठीक नहीं बैठता। गुप्त संवत का प्रारम्भ सन् ३१९ इसवी व कलचुरि संवत् का सन् ४८ इसवी से माना जाता है।

सं० ८८७ आषाढ शुक्ल १० वीं सिद्ध होता है। श्रीयुत राय बहादुर बाबू हीरालालजीने मेरे लिये इस तिथि का मि स्वामी कन्नूपिलाइ के 'इंडियन एफेमेरिस' नामक सारिणी से मिलान किया तो इसकी अंग्रेजी सम-तिथि ११ जून सन् ९६५ ईस्वी (रविवार) आती है। प्रेमीजीने 'चंदरुइ-रूढए' का अर्थ 'सोमवार' किया है। पर मेरी समझ में उसका ठीक अर्थ 'चन्द्रवार' नहीं शुक्ल-पक्ष है। चंद्ररुचि रूढे—अर्थात् जब चन्द्रमा वृद्धिशील होता है। मुझे भी सन्देह था कि सम्भव है उक्त पद में 'सोमवार' का भी भाव हो और शायद आषाढ शुक्ल १० वीं रविवार को प्रारम्भ होकर सोमवार तक गई हो। पर राय बहादुर हीरालालजी उसका ठीक मिलान कर लिखते हैं कि उक्त तिथि रविवार को ही सूर्योदय से १३ घंटे १५ मिनट पश्चात् अर्थात् सायंकाल को समाप्त हो चुकी थी।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि जब पुष्पदन्तने अपने पुराण समाप्त होने के माह और तिथि दिये हैं तब क्या उन्होंने संवत् का उल्लेख नहीं किया होगा? यह तो सिद्ध है कि 'छसय छडोत्तर कय सामत्थे' वाला पाठ ठीक नहीं है या कम से कम उपर्युक्त चार संवतों के अनुसार वह ठीक नहीं बैठता। पर उसके स्थान पर कारंजा की प्रति का जो पाठ है उसमें संवत् आदि का कोई भाव नहीं है। जब मैंने कारंजा की प्रति का अवलोकन किया था उस समय तक प्रेमीजी के अवतरण मेरे देखने में नहीं आये थे। तब मुझे ऊपर उद्धृत पद्यों में 'जइ अहिमाण मेरुणामके' में किसी संवत् की सूचना छुपी होने का सन्देह हुआ था, पर प्रेमीजी के संवत् का स्पष्ट बोध करानेवाले पाठ को देखकर मेरा वह सन्देह दूर हो गया था। पर अब पुन. मेरी दृष्टि उसी पद पर जाती है। मैंने अपने इस सन्देह का संकेत बाबू जुगलकिशोरजी मुख्तार से भी किया था। पर उन्होंने लिखा कि 'अभिमानमेरु' कवि का उपनाम है उसमें अंकों आदि का कोई भाव नहीं। पर मुझे इससे सन्तोष नहीं हुआ 'अभिमानमेरु' कवि का उपनाम अवश्य है कई स्थानोंपर उन्होंने अपने इस 'विरुद' का उल्लेख किया है, पर हो सकता है कि यहां पर कवि का वह भाव रहा हो और अंकों का भी। खासकर 'अंक' शब्द से यह सन्देह और भी दृढ होता है। अंक का लांछन भी अर्थ होता है और गणना भी। अतः सम्भव है कि प्रयत्न करने से उसमें संवत् का भाव निकले। उक्त पद के एक २ अक्षर को लीजिये। 'जइ' संस्कृत के 'यति' का अपभ्रंश-रूप विदित होता है। उससे सप्त ऋषियों का भी बोध हो सकता है अत. उसकी अंक संख्या ७ मानी जा सकती है। 'अहिमाण' अभिमान के बराबर है जिससे अष्ट मद का बोध होता है और उसकी अंक संख्या ८ ली जा सकती है। 'मेरु' से आठ का भाव लेने के लिये मैं कोई प्रमाण नहीं पा सका[१]। पर यदि उससे ८ का भाव लिया जा सकता हो और 'अंकानां वामतो गतिः' के नियमानुसार हम इन अंकों को 'दायें से बांई ओर को रक्खें' तो संवत् ८८७ निकल सकता है। बहुत सम्भव है कि इस पद में ऐसा अर्थ हो, पर जब तक अष्ट मेरु के लिये कोई प्रमाण न मिल जावे तब तक इस कल्पना पर अधिक जोर नहीं दिया जा सकता।

जब हम यह सिद्ध करते हैं कि महापुराण शक संवत् ८८७-(वि० सं० १०२२) में समाप्त हुआ था तब हमें मानना पडेगा कि मान्यखेट की जिस लूटमार का कविने उक्त पुराण के ५० वें

---

[१] जैन शास्त्रों में 'मेरु' पांच माने गये हैं। शक संवत् ५८७ भी क्रोधन था पर अन्यप्रमाणों से वह समय पुष्पदन्त के लिये ठीक नहीं माना जा सकता।

परिच्छेद में उल्लेख किया है वह वि० स० १०२९ से पश्चात् नहीं हो सकता। पर धनपाल की पाइयलच्छी नाम माला में उस घटना के उल्लेख से ऐसा मालूम पड़ता है कि वह उस ग्रंथ के समाप्त होने के वर्ष वि० स० १०२९ में हो हुई थी। इस विरोध का परिहार कैसे हो? उदयपुर प्रशस्ति से सिद्ध है कि उक्त घटना के समय मान्यखेट के सिंहासन पर 'खोट्टिगदेव' आरूढ थे। खोट्टिग के उत्तराधिकारी कक्कराज का एक दानपत्र शक स० ८९४ (वि० स० १०२९) आश्विन शुक्ल १५ का मिला है।[२६] उस से सिद्ध होता है कि 'खोट्टिग' की मृत्यु आश्विन शुक्ल १५ स० १०२९ से पूर्व ही हो चुकी थी और उस समय तक हर्षदेव के भीषण आक्रमण के पश्चात् इतना समय बीत चुका था कि राजधानी में फिर से शान्ति और सुप्रबंध स्थापित हो जाय। यदि ऐसा न होता तो उक्त समय में मान्यखेट के राजा को दान पत्र निकालने बैठने का अवकाश न मिलता। इस से अनुमान किया जा सकता है कि वि०स० १०२९ में उक्त घटना कम से कम पांच सात वर्ष पुरानी हो चुकी थी। हर्षदेव का आक्रमण मान्यखेट पर कब हुआ इस का कुछ अनुमान इस प्रकार लगाया जा सकता है। महापुराण सिद्धार्थ संवत्सर में प्रारम्भ हो कर क्रोधन संवत्सर में समाप्त हुआ था। अत उस के १०२ परिच्छेदों की रचना में कवि को छह वर्ष लगे जिस की औसत एक वर्ष में १७ परिच्छेदों की आती है। कवि ने मान्यखेट की लूटमार का उल्लेख आदिपुराण के ३७ व उत्तर पुराण के ४९ परिच्छेद पूर्ण हो जाने पर किया है। उत्तर पुराण के शेष १६ परिच्छेदों की रचना में कवि को अधिक से अधिक एक वर्ष लगा होगा। अत वि० स० १०२२-१ = १०२१ के लगभग मान्यखेट की लूटमार होना सिद्ध होता है। लगभग आठ वर्ष पुरानी घटना का वि० स० १०२९ में हुई जैसी उल्लेख करने का यह कारण हो सकता है कि हर्षदेव मान्यखेट पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् और कई प्रदेशों को जीतते हुए वि० स० १०२९ में धारा राजधानी में पहुंचे होंगे। इस विजय यात्रा में मान्यखेट की विजय ही सबसे अधिक कीर्तिकारी हुई होगी। इसी से धनपाल ने उस का उल्लेख विशेषरूप से किया। ऐसी यात्रा में सात आठ वर्ष व्यतीत हो जाना कोई बड़ी बात नहीं है।

महापुराण की उत्थानिका से विदित होता है कि पुष्पदन्त किसी राजा द्वारा सताये हुए मान्यखेट पुर को आये थे। आन्ध्र-कर्नाटकदेश में विक्रम की १० वीं शताब्दि तक तो जैन-धर्म का खूब जोर रहा और वहां के राजा जैन आचार्यों की अच्छी भक्ति करते रहे, पर दशवीं शताब्दि के अंतिम भाग में वहां शैवधर्म का प्राबल्य बढ़ा और जैनियों को आपत्ति पहुंचाने लगी। वारंगल कैफियत से जाना जाता है कि राजराज नरेन्द्र के समय में वहां के एक बड़े जैन आचार्य 'वृषभनाथ तीर्थ' को राजधानी 'राजमहेन्द्री' छोड़ कर धारंगल भाग आना पड़ा था जिस का कारण उन का राजराजनरेन्द्र द्वारा सताया जाना ही विदित होता है। यह राजा कट्टर शैव था जो सन् १०२० (शक ९४२) में राजमहेन्द्री के तख्त पर बैठा।[२७] क्या आश्चर्य यदि महाकवि पुष्पदन्त भी यहीं के किसी ऐसे ही राजा द्वारा सताये हुए मान्यखेट आये हों। मान्यखेट के राष्ट्रकूट नरेश जैनधर्म में श्रद्धा और जैन कवियों को आश्रयदान के लिये खूब विख्यात थे। यही नहीं उन में से कई स्वयं अच्छे कवि हुए हैं। प्रश्नोत्तर रत्नमाला के कर्ता अमोघवर्ष प्रसिद्ध ही हैं। इन्हीं की छत्र-छाया में जिनसेन गुणभद्र सोमदेव महावीराचार्य आदि धुरंधर जैनाचार्यों ने यह जैनधर्म की ध्वजा फहराई थी। मान्यखेट में जैन कवियों का

२६ Ind Ant Vol XII p 263

२७ Studies in South Indian Jainism p 18

अच्छा जमाव रहता था। कवि ने स्वय उसे 'दीनानाथ-धन सदा बहुधन' कहा है। इसी कीर्ति से आकर्षित हो कर पुष्पदन्त मान्यखेट आये होंगे। पर वे 'अभिमान मेरु' थे इस से सीधे राजदरबार में नहीं गये। नगर के बाहर ही एक उपवन में टिक रहे। पर मान्यखेट में उन के जैसे कवि रत्न देर तक छिपे नहीं रह सकते थे। वे मंत्री भरत से मिला दिये गये। वहां उन का खूब आदर सत्कार हुआ, स्वय भरत के प्रासाद में उन्हें रहने को स्थान दिया गया और वे कविता करने को प्रोत्साहित किये गये।

यह निर्णय किये जाने के अभी कोई साधन उपलब्ध नहीं है कि महापुराण से कितने समय पश्चात् 'यशोधर चरित' और 'नागकुमार चरित' की रचना हुई। पर इतना निश्चित है कि वे दोनों महापुराण से पीछे लिखे गये हैं। महापुराण पूर्ण होने तक भरत मान्यखेट के मंत्रित्व पद पर थे। पर अन्य दो काव्यों की रचना के समय उन के पुत्र 'नन्न' उक्त पद को विभूषित कर रहे थे। उन्हीं की प्रेरणा से उन्हीं के शुभतुंग प्रासाद में रहते हुए कवि ने उक्त दो काव्यों की रचना की। इन काव्यों में यथावसर 'नन्न' की ही कीर्ति वर्णित है। इस समय या तो भरत की मृत्यु हो चुकी थी या उस समय की प्रथा के अनुसार वे अपने चौथे पन में संसार से विरक्त हो, गृहभार अपने सुयोग्य पुत्र को सौंप, मुनि-धर्म का पालन करने लगे थे। आश्चर्य है कि कवि ने अपने काव्यों में इस विषय का कोई उल्लेख नहीं किया। 'नागकुमार चरित' की रचना के समय कवि के माता पिता भी स्वर्गवासी हो चुके थे[२८]।

हम ऊपर सिद्ध कर चुके हैं कि कृष्णराज की मृत्यु महापुराण पूर्ण होने से पूर्व ही हो चुकी थी। पर 'यशोधर चरित' और 'नागकुमार चरित' में जो वल्लभराय का उल्लेख आया है उस पर भी महापुराण के समान 'कृष्णराज' ऐसा टिप्पण पाया जाता है। टिप्पणकर्ता की यह अवश्य भूल है। वहां 'वल्लभराय' से कृष्णराज के उत्तराधिकारियों का तात्पर्य लेना चाहिये। यह हम देख ही चुके हैं कि राष्ट्रकूट वंशी सभी राजा 'वल्लभराय' कहलाते थे।

महापुराण, यशोधर चरित और नागकुमार चरित के अतिरिक्त भी महाकवि पुष्पदन्त ने कोई ग्रंथ रचे या नहीं, इस के जानने के लिये कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

[नागकुमार चरित की उत्थानि का का कुछ भाग]

पणवेप्पिणु भावें पंच गुरु कलिमल वज्जिउ गुणभरिउ।
आहासमि सिय पचमिहे फलु, णायकुमार चारु चरिउ ॥
दुविहालंकारें विप्फुरंति। लीला कोमलइ पयाइ दिंति।
मह कव्व निहेलणे सचरंति। बहु हाव भाव विब्भम धरंति ॥
घत्ता। सिरिकन्हराय करयलनिहिय असिजलवाहिणि दुग्गयरि।
धवलहर सिहरिहय मेहउलि पविउल मण्णखेडनयरि ॥ १ ॥
मुद्धाई केसव भट्ट पुत्तु। कासव रिसि गोत्ते विसाल चित्तु।
णण्ण हो मंदिरे णिवसंतु संतु। अहिमाण मेरु गुण गण महंतु ॥
पत्थिउ महि पणवियसीसएण। विणएण महोदेहि सीसएण ॥१॥
दुरुज्झिय-दुक्किय-मोहणेण। गुणधम्में अवरावि सोहणेण ॥
भो पुप्फयंत पडिवण्णपणय। मुद्धापवि केसइय तणय।

---

२८ 'महु ण्पियराइ होन्तु सुहधामइ'। १ महोदेर्घनाम्न शिष्येण,

तुहु वाईसरि दया निकउ । तुहु अम्हह पुण्ण निबंध हेउ ॥
तुहु भव्वजीव पक्करुह भाणु । पइ धणु मण मण्णिउ तिण समाणु ।
गुणवंत भत्तु तुहु विणय गम्मु । उज्झाय पयासहि परम धम्मु ॥
घत्ता । ओलग्गिउ भावें दिणि दिणे । णिय मण पक्खालिवि थविउ ।
कइ कव्व पिसल्लउ जस धवलु । मिम्मजुयलेण पविण्णवउ ॥
भणु भणु सिरि पंचमि फलु गहीरु । आयण्णहि णायकुमारु धीरु ।
ता वल्लहराय महत्तएण । कलिविलसिय दुरिय कयंतएण ॥
कोण्डिण्णगोत्त-णह-ससहरेण । दालिद्दकंद कंदल हरेण ।
वर कव्व रयण रयणायरेण । लच्छी पोमिणि माणस सरेण ॥
पसरंत कित्ति वहु-कुलहरेण । विच्छिण्ण सरासइववधेण ।
बहु दीणणायपूरिय धणेण । मइ पसर पराजिय परबलेण ॥
णियवंधवि दिण्ण चिंतियफलेण । छण इंद बिंब सच्छिह मुहेण ।
कुंदव्व-भवइं दिय तणुरुहेण ।
णण्णेण पवुत्तु महाणुभाव । भो कुसुमदसण हय वसण ताव ।
करि कव्वु मणोहरु मुयहि लद्दु । जिणधम्म कज्ज मा होहि मद्दु ॥
आयण्णमि भणु हउ णिम्मलाइं । सियपंचमि उववासहो फलाइं ।
णण्णाण पवोल्लिउ एम जाम । णाइल्लइं सीलइं पण ताम[1] ॥
घत्ता । कइ भणिउ समजसु जस विमलु णण्णु जि अण्णु न धरसिरिहे ।
तहो केरउ णाउ महग्धयरु दविहिं गायउ सुरगिरिहे ॥
त तुहुपि चडावहु णियवकव्व । दिहि हाउ णण्णे आसण्ण भव्वें ।
बुद्धीए णण्णु सुरगुरु णमंति । पर णण्णहो णउ वहरिय जिणंति ॥
पहुभत्तिए हणु व समाणु दिट्ठु । परणण्णु ण वाणरु णरु विसिट्ठु ।
गंगेउ सउच्चें जणिय तुट्ठि । पर णण्णु ण वइरिहु दइ पुट्ठि ॥
धम्मेण जुहिट्ठिलु धम्मरत्तु । पर णण्णु पवासदुहेण चत्तु ।
चाएण कण्णु जण दिण्ण चाउ । पर णण्णु ण बंधुहु दइ घाउ ॥
कंताए मणोहरु छण ससंकु । पर णण्णहो णउ दीसइ कलंकु ।
गरुयत्तें महि सुविसुद्ध चरिउ । पर णण्णु ण किडि दाढाइ धरिउ ॥
सुथिरत्तें मरु भणंति जाइ । पर णण्णु पुरिसु पसरु ण होइ ।
सायरु व गहीरु कयायरेहिं । पर णण्णु ण मथिउ सुरवरेहिं ॥
घत्ता । जा पहुउ वण्णिउ वर कइहिं । भावि णियमण भावहि ।
तहो णण्णहो करउ णाउ तुहु । सुललिय कव्व चडावहि ॥
णाइल्ल साल भट्टारु वयणु । त आयण्णवि नयकमल वयणु ।
पडिजपइ वियसिरि पुप्फयंतु । पडिवज्जमि णण्णु जि गुणमहंतु ॥
धणु पुणु महु तणु व तणाउ कहु । धम्मेण णिवद्धु सुपवि महु । (शान्त)
हउ करउ कव्वु णिन्तु विमणु । वण्णंतु सुयण विप्फुरिय वयणु ॥
दुज्जण मज्झणहा सहाउ एहु । मिहिर उण्हउ सायरु हाइ मद्दु ।

---

[1] कुन्दव्व मातुनाम ।

भो णिसुणि णण्ण कुलकमल सूर। सुरसिहरि धीर पडिवण्ण सूर ॥
जिण भणिउ अणनाणन गयणु। तहो मज्झे परिठिउ तिविहु भुअणु।
पहिलउ मल्लय संकासु दिट्ठु। बीयउ कुलिसोवमु रिसिहि सिट्ठु ॥
तइयउ मुइङ्ग साणिणहु कहंति। अरहन्त अरुह भणु किं रहंति।

घत्ता। तइ लोकु कमलरुह हरि हरिहिं ण धरिउ ण किउ ण णिट्ठियउ।
तहिं बहु दीवंबहि मंडियउ। मज्झिउ भुअणु परिट्ठियउ ॥

इय णाय कुमार चारु चरिए नन्ननामंकिए महाकइ पुप्फयन्त विरइए महाकव्वे
जयधर-विवाहकल्याण वण्णणो नाम पढमो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ छ ॥

(नागकुमार चरित का अंतिम भाग।)

गोत्तम गणहर एव सिट्ठउ। सूरिपरंपराए उवइट्ठउ।
णायकुमारचरित्तु पयासिउ। इयसिरिपंचमि फल मइ भासिउ ॥ १ ॥
सो णंदउ जो पढइ पढावइ। सो णंदउ जो लिहइ लिहावइ।
सो णंदउ जो विवरि विहावइ। सो णंदउ जो भावें भावइ ॥ २ ॥
णंदउ सम्मइ सासणु सम्मइ। णंदउ पयसुह णंदउ नरवइ।
चिंतिउ चिंतिउ वरिसउ पाउसु। णंदउ णण्णु होउ दीहाउसु ॥ ३ ॥
णण्ण हो सम्मवतु सुपवित्तइ। णिम्मल दंसण णाण चरित्तइं।
णण्णहो होउ पच कल्लाणइ। रोय-सोय-खयकरण विहाणइ ॥ ४ ॥
णण्णहो जसु भुअणत्तए विलसउ। णण्णहो घरे वसुहार पवरिसउ।
सिवभत्ताइमि जिणसण्णासें। बे वि मयाइ दुरिय णिण्णासें ॥ ५ ॥
बंभणाइं कासवरिसि गोत्तइं। गुरुवयणामय पूरिय सोत्तइं ॥
मुद्धाएवी केसव णामइ। महु पियराइ होंतु सुहधामइ ॥ ६ ॥
सप्पज्जउ जिण भावें लइयहो। रयणत्तय विसुद्धि दगइयहो।
मज्झु समाहि बोहि सप्पज्जउ। मज्झु विमलु केवलु उप्पज्जउ ॥ ७ ॥

घत्ता। णण्णहो मज्झु वि दय करउ। पुप्फयंत जिणणाहपियारी।
खमउ असेसु वि दुव्वयणु। वसउ वयणे सुयदेवि भडारी ॥ ८ ॥

सुहतुंग भवण वावार भार णिव्वहण वीर धवलस्स।
कोंडिल्ल गोत्त नहससहरस्स पयइए सोमस्स ॥ ९ ॥
कुव्वागब्भसमुब्भवस्स सिरि भरहभट्ट तणयस्स।
जस पसर भरिय भुअणोयरस्स जिणचरण कमल भसलस्स ॥ १० ॥
अणवरय रइय वरजिणहरस्स जिण भवण पूयणिरयस्स ॥
जिण सासणायमुद्धारणस्स मुणिदिण्णदाणस्स ॥ ११ ॥
कलिमलकलंक परिवज्जियस्स जियदुविहवइरिणियरस्स।
कारुण्णकंद णव जलहरस्स दीणयण सरणस्स ॥ १२ ॥
णिवलच्छी कीला सरवरस्स वापसरि णिवासस्स।
णिस्सेस विउस विज्जाविणोय णियरस्स सुद्ध हियस्स ॥ १३ ॥
णण्णस्स पत्थणाए कव्व पिसल्लेण पहसिय मुहेण।
णाय कुमार चरित्त रइय सिरिपुप्फयंतेण ॥ १४ ॥

———*———

કવિવર સમયસુન્દર

(ભાવનગર મુકામે ભરાએલી ૭ મી ગુજરાતી સાહિત્ય પરિષદ્ માટે લખાએલો નિબંધ)

[लेखक श्रीयुत मोहनलाल दलीचंद देशाइ, बीए एल्‌एल् बी, मुंबइ]

જૈન સાધુઓ ભારતની એક ધાર્મિક સંસ્થા છે અને પોતાના આચાર-નિયમ પ્રમાણે શ્રમણશીલ-પરિવ્રાજક છે એક વર્ષમાં એકી સાથે ચાતુર્માસ એક સ્થળે ગાળવું તેમને અપરિહાર્ય છે, જ્યારે બાકીના આઠ માસમાં એક ગામથી બીજા ગામ અપ્રતિહત વિહાર કરી દરેક સ્થલે ઉપદેશ આપતા રહી વિહાર કર્યે જાય છે લગભગ પચીસસો વર્ષ પહેલાં થયેલા ધર્મ સંસ્થાપક શ્રી મહાવીરના અનુયાયી જૈન શ્રમણોની સંસ્કૃતિ સમય ધર્મ પ્રમાણે અનેક ઉદય અને અસ્તના હિંડોલે હીંચીને હજુ સુધી પણ અખંડ પણે ચાલી આવી છે તે શ્રમણ-પંથે સ્થાપેલા દયા ધર્મની અસરથી ભારતમાં હિંસક યજ્ઞયાગ બંધ પડયા એટલું જ નહિ પણ જાતિભેદના જુલમને ઘણા સૈકાઓ સુધી વિશેષ અવકાશ મળ્યો નહિ વિશેષમાં કાવ્ય નાટક, કથા-ભાષા વગેરે સાહિત્ય પ્રદેશમાં પણ તે શ્રમણોએ દરેક શતકમાં-દરેક યુગમાં અન્ય પંથોની સાથે સાથે પ્રબળ ફાળો આપ્યો છે, અને એ સત્યની પ્રતીતિ તેના સાહિત્યનો ઇતિહાસ લખાશે ત્યારે અતિ સ્પષ્ટ રીતે અને જરૂર થશે

સંસારની ઉપાધિઓના બંધનથી મુક્ત એવા નિર્બંધ પંખીઓ પેઠે વિચરતા માત્ર ધર્મ પરાયણ જીવન ગાળવા નિર્માયેલા સાધુઓના સુર વિશ્વબંધુ ભાવના, પ્રભુ ભક્તિના, અને નીતિના ઉપદેશના ગીતો ગાવામાં જ નીકળી શકે પોતપોતાના જમાનાની ભાવનાઓને વ્યક્ત કરવી, પોતાના સમયના જુદા જુદા આ શૈલીને અને નોખા નોખા વહેતા લાગણી-પ્રવાહોને એકત્ર કરી પયગમ્બરી વાણીમાં તેનું ઉદ્‌બોધન કરવું એ કવિઓનું કર્તવ્ય છે સામાન્ય લોકોના દિલમાં જે સુંદર ભાવો જાગે-પણ જે સમજ વાની કે સમજાવવાની તેમનામાં તાકાત નથી-તેમને ભાષા આપવી, તેમને અમર વાણીમાં વ્યકત કરવા એ કવિઓનું કાર્ય છે નિર્બંધ પંખીઓમાં કોકિલા જેવું શ્રમણશાલી

પખી ભાગ્યે જ જોવામા આવશે. આવા કવિપગભૂનો જૈન સાધુઓએ પ્રાન્ત પ્રાન્ત અને દેશેદેશ વિહાર કરી પોતાના કાવ્યનો ટહુકો લોકોને સભળાવ્યો છે. આ પૈકી એક કવિ પરભૃતનો પરિચય કરાવવાની આ નિબધની ઉમેદ છે

તેમનુ નામ કવિવર સમય સુન્દર. તેમનો કાલ વિક્રમનો સત્તરમો શતાબ્દિ છે. તેમને સવત્ ૧૬૪૯ માં વાચનાચાર્ય-ઉપાધ્યાય પદ લાહોરમા મળ્યુ હતુ અને પ્રથમનો ગ્રંથ 'ભાવશતક' સ૦ ૧૬૪૧ મા રચેલો મળી આવે છે, તેથી તે વખતે તેમની ઉમર ૨૧ વર્ષની ગણીએ તો તેમનો જન્મ સં૦ ૧૬૨૦ માં મૂકી શકાય કે જે વખતે તેમના દીક્ષાગુરૂ સકલચંદ્ર ઉપાધ્યાયના દીક્ષા ગુરૂ જિનચંદ્ર સૂરિને સૂરિપદ (૧૭ વર્ષની વયે, મળ્યા સંવત્ ૧૬૧૨) મળ્યાને આઠ વર્ષ થઈ ગયા હતા. તેમનો છેલ્લો ગ્રંથ સ૦ ૧૬૯૭ લગભગનો મળી આવે છે તેથી તેઓ સ૦ ૧૬૨૦ થી ૧૭૦૦ સુધી-૮૦ વર્ષ જેટલું જીવન ગાળી શકયા હતા એ પ્રાય નિશ્ચિત થાય છે.

તત્કાલીન સ્થિતિ.

ખરતર ગચ્છ અને તપાગચ્છ વચ્ચે લાબા વખતથી સ્પર્ધા અને વિખવાદ ચાલ્યા આવતા. એ વિખવાદ સત્તરમા શતકના પૂર્વાર્દ્ધમાં વધી પડયો હતો. શ્વેતામ્બરો અને દિગંબરો વચ્ચેનો વિરોધ તો બહુ જૂનો હતો પણ સં. ૧૧૭૬ માં સિદ્ધરાજના દરબારમા વાદિદેવ નામના શ્વેતામ્બર સૂરિએ કુમુદચંદ્ર નામના દિગમ્બરાચાર્યને શાસ્ત્રાર્થમાં હરાવી દિગમ્બરોને ગૂજરાતના રાજ્યની હદપાર કરાવ્યા-તે પછી એ બનેના કાર્ય કરવાનાં ક્ષેત્રો બહુધા જૂદાં પડી ગયા હતાં ને તેથી એમના વચ્ચેનો વિરોધ પણ મોળો પડી ગયો હતો. પણ બીજી બાજુએ શ્વેતામ્બર મૂર્તિપૂજકમાથી જુદા પડી લુંકામત અને બીજામત નીકળ્યા પછી તેમની સાથેનો વિરોધ પ્રબળ થઇ પડયો હતો શ્વેતામ્બર મતના ખરતર અને તપગચ્છ વચ્ચેની મતામતી પણ પ્રબળ થઇ પડી હતી અને તેમાં ધર્મસાગર ઉપાધ્યાયજી નામના તપગચ્છીય વિદ્વાન-પણ-ઉગ્રસ્વભાવી સાધુએ કુમતિકદકુદ્દાલ (યાને પ્રવચન પરીક્ષા) નામનો ગ્રથ બનાવી તપગચ્છ સિવાયના અન્ય સર્વ ગચ્છ અને મત સામે અનેક આક્ષેપો મૂકયા. આથી તે સર્વ મતો ખળભળી ઉઠયા; અને તેનું જો સમાધાન ન થાય તો આખા જૈન સમાજમાં દાવાનળ અગ્નિ પ્રકટે. આ માટે જોખમદાર આચાર્યોને વચ્ચે પડયા વગર રહી શકાય નહિ તેથી તપગચ્છાચાર્ય વિજયદાન સૂરિએ ઉપરોકત ગ્રંથ પાણીમા બોળાવી દીધો અને તેને અપ્રમાણ ઠેરવ્યો. તેમણે જાહેરનામું કાઢી 'સાત બોલ'ની આજ્ઞા કાઢી એક બીજા મતવાળાને વાદ-વિવાદની અથડામણ કરતા અટકાવ્યા હતા. પણ આટલાથી વિરોધ જોઈએ તેવો ન શમ્યો ત્યારે વિજયદાન સૂરિ પછી આચાર્ય હીરવિજય સૂરિએ ઉકત 'સાત બોલ' પર વિવરણ કરી 'બાર બોલ' એ નામની બાર આજ્ઞાઓ જાહેર કરી હતી. સ૦ ૧૬૪૬. આથી જૈન સમાજમાં ઘણી શાન્તિ આવી, અને

ખરતર ગચ્છના અને તપગચ્છના આચાર્યો એક બીજાની નિન્દામાં ન ઉતરતાં જૈન ધર્મનો પ્રભાવ અન્ય સમાજમાં અને રાજદ્વારમાં પાડવા માટે પ્રયત્નશીલ થયા

વિક્રમનો સત્તરમો સૈકો જૈનો માટે ઘણો પ્રતાપી હતો તે સદીમાં મહાન મોગલ સમ્રાટ અકબર, જહાંગીર અને શાહજહાં (સં૦ ૧૬૧૨ થી સં૦ ૧૭૧૪) એ ત્રણ શહેનશાહોએ સમગ્ર ભારત વર્ષમાં રાજ્ય સત્તા જમાવી રાખી લોકોમાં આબાદી અને શાન્તિની સ્થિરતા કરી અકબરે સં૦ ૧૬ ૮ મા ચિતોડ ૧૬૩૫ મા રણથંભોર અને કાલંજરના કિલ્લા જીતી લીધા અને સં૦ ૧ ૨૮ મા અમદાવાદમાં પોતાનો વાવટો ફરકાવ્યો પછી વડોદરા, ચાંપાનેર, સુરત એ સઘળો મિર્ઝાઓએ કબજે કરેલો મુલક તેઓને કાઢી મેલી, પોતાના રાજ્ય તળે મૂકી અકબર આગ્રે આવ્યો ત્યાં પછીના ત્રણ વર્ષમાં બહાર અને બંગાલા હાથ કર્યા આમ સર્વ સ્થળે શાન્તિ પસારી. આ સૈકામાં શ્વેતામ્બર જૈન સાધુઓ સંસ્કૃત પ્રાકૃત અને સ્વભાષા-લોક ભાષામાં સાહિત્ય વિશેષ વિશેષ ઉત્પન્ન કરવા લાગ્યા. તપગચ્છીય પ્રભાવક મહાપુરુષ હીરવિજય સૂરિએ તથા તેમના શિષ્ય ઉપાધ્યાય શાન્તિચંદ્ર આદિએ, ખરતર ગચ્છીય જિનચંદ્ર સૂરિએ, અને નાગપુર તપગચ્છીય પદ્મસુંદર ઉપાધ્યાયે અકબર બાદશાહને જૈનધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવી તેની તેના પ્રત્યે સદ્ભાવના ખેંચી અનેક જૈન તીર્થ સંબંધી ફરમાનો, જીવ-વધ-બંધની આજ્ઞાઓ અને પુસ્તકો, સ્થાન વગેરેના ઈનામો પ્રાપ્ત કર્યા. જહાંગીરે ત૦ વિજયસેન સૂરિ અને ખ૦ જિનસિંહ સૂરિને મોટા ધાર્મિક બિરૂદો આપ્યા, અને શાહજહાંએ પણ સહાનુભૂતિ દાખવી. આ સામાન્ય રીતે શાન્તિની સતત વર્ષામાં અન્ય ધર્મોમાં પણ ઘણી જાગૃતિ આવી અને સાહિત્ય વૃદ્ધિ થઈ

સં૦ ૧૬૦૦ મા તેમ અમદાવાદમાં જ જન્મનાર દાદુજીએ ત્યાગી ફકીર બની જયપુર માના રાજ્યમાં ઘણો જીવન-કાળ કાઢી ૧૬૪૦ મા અકબર સાથે ધર્મોલાપ કર્યો. વેદાન્ત જ્ઞાન સામાન્ય મનુષ્યોને ગળે ઉતારવા સરલ રીતિથી લોક-ગમ્ય ભાષામાં ઉપદેશ કર્યો મુખ્ય વાત એ હતી કે

આપા મેટૈ હરિ ભજૈ તન મન તજૈ વિકાર
નિર્વૈરી સબ જીવસોં, દાદૂ યહુ મત સાર

એક પરમેશ્વર જગતનો સાર છે તે પરબ્રહ્મ કબ્રદેવ તે 'રામ' છે તેની ઉપાસનાથી સુખની પ્રાપ્તિ જગતના સુખો તેની પાસે નિઃસાર છે તે પરમાનંદમય આનંદમય સુખ પ્રાપ્ત કરવા દાદૂ કહે છે બીજા સાધન માર્ગોમાં જરૂર ના બતાવી ભરી નજર (જેવા કે રામાનુજ, વલ્લભ આદિ સગુણ પૂજામાં), કોરી ભક્તિ નહિને તુચ્છ બતાવ્યા સર્વ સાથે દ્વેષ તજી દેવાની મતી રે.. અને સર્વ જીવ પર દયા દૃષ્ટિ રાખવાની નેક આજ્ઞા કરી આ પ્રમાણે એવા સાધનો ભેદ બતાવ્યા કે હિંદુ મુસલમાન આદિ અવિરોધ આચરી શકે તે સં૦ ૧૬૬૦ માં નરાણા ગામમાં (જયપુર) સ્વર્ગસ્થ થયા. તેના

શિષ્ય સુન્દરદાસે (જન્મ સ૦ ૧૬૫૩, દાદૂજી પાસે દીક્ષા સ૦ ૧૬૫૯, મરણ ૧૭૪૬) વેદાન્ત જ્ઞાનને સુમધુર સરલ અને ઉચ્ચ હિન્દી કાવ્યમા વિવિધ પ્રકારની રચના કરી તેમણે અદ્વૈત બ્રહ્મવિદ્યાનો પ્રચાર કરવાથી અને તેઓ અતિ કુશલ વિદ્વાન હોવાથી તેમને દાદૂ પંથીઓ 'બીજા શંકરાચાર્ય' કહે છે [1]

ગોસ્વામી તુલસીદાસ—(જન્મ સ૦ ૧૬૦૦, મરણ સં૦ ૧૬૮૦) આ હિન્દી સાહિત્યના અપ્રતિમ મહાકવિ છે તેમણે રામાયણ રચી તે એટલી બધી આજસુધી પ્રસિદ્ધ છે કે, તેનુ વાંચન દરેક હિન્દી કુટુમ્બમાં થાય છે. તેમજ અનેક હિન્દી કાવ્યો રચ્યાં. અકબરના પ્રસિદ્ધ કવિ ગંગના તથા અન્ય હિન્દી પ્રસિદ્ધ કવિ વિહારી તથા કેશવદાસના સમકાલીન છે.

મહારાષ્ટ્રમાં અઢાર પર્વના મહાભારતને મરાઠીમા પહેલવહેલાં અવતારનાર કવિ વિષ્ણુદાસ, અને મુક્તેશ્વર (જન્મ ૧૬૫૬, સ્વર્ગ૦ ૧૭૦૬) તેમજ પ્રસિદ્ધ સતકવિઓ એકનાથ (જન્મ સ૦ ૧૬૦૫, સ્વ૦ ૧૬૫૬), તુકારામ (જન્મ સં૦ ૧૬૩૪ યા ૧૬૬૪-સ્વ૦ ૧૭૦૮), સમર્થ રામદાસ (જન્મ સં૦ ૧૬૬૫ સ્વ૦ ૧૭૩૮) આદિ થયા.

ગૂર્જર ભાષાના આ યુગ માટે એમ કહેવામા આવે છે કે 'જે ભાષાના પ્રથમ યુગમાં—સાહિત્યના પ્રભાતમા—નરસિંહ મહેતા જેવા ભક્ત કવિનાં પ્રભાતિયા ગાજી રહ્યાં હતાં તેના મધ્ય યુગમા—સોળમા અને સત્તરમા શતકમા—કવિતાના સ્વર્ગીય ગાનનો ધ્વનિ છેક મન્દ પડી ગયો'—આ વાત સત્ય નથી. જૈનેતર ગુર્જર કવિઓ આ યુગમાં વધુ સંખ્યામાં મળી નથી આવ્યા તેથી તેવી વાત મૂકવામા આવે તે સ્વાભાવિક છે પણ મને ખાત્રી છે કે આ ઉન્નતિના અને જાગ્રતિના યુગમાં અનેક જૈનેતર ગૂર્જર કવિઓ થયા હોવા જોઈએ; અને તે શોધખોળ કરતા સાપડી શકશે. જ્યારે મધ્ય યુગમાં જૈન કવિઓ માટે તો નિર્વિવાદ રીતે સ્પષ્ટ કહી શકાય તેમ છે કે તેમણે સાહિત્યની ધારા અખંડ નિરાવરણ અને નિર્મલ રાખી, તેનામા ઓજસ્‌વાળુ પય સિંચી તેને બલવતી, વેગવતી અને ઉજ્વલ બનાવી હતી.

આ સત્તરમા શતકમાં જેમ અગ્રેજીમા, રાણી એલિઝાબેથનો સમય (સ૦ ૧૬૧૫-

---

૧ રાઘવીય ભક્તમાલમા જણાવ્યુ છે કે ' શંકરાચાર્ય દૂસરો, દાદૂ કે સુદર ભયો. ' આ સુન્દરદાસજીએ સ૦ ૧૬૬૩-૧૬૮૨ કાશીમા રહી વિદ્યા લઇ લોકને આપી પછી બહુ પર્યટન કર્યું ગુજરાતમા પણ તે ઘણો કાળ રહ્યા હતા અને ગુજરાતી ભાષા પોતે શીખી લીધી હતી. તેના અપ્રસિદ્ધ 'દશો દિશાકે સવૈયે'મા ગૂજરાત સબધી લખ્યુ છે કે —

' આભડછોત અતીત સૌ કીજિયે, બિલાઇ રૂ કૂકર ચાટત હાંડી '

આ પરથી જણાય છે કે વૈષ્ણવ સંપ્રદાયની અસરથી ગુજરાતમા આભડછેટ પર લોકોનું ઘણુ ધ્યાન રહેતું હશે.

૧૬૬૦) ઉક્ત ભાષા માટે એક મહાન્ ઉન્નતિનો છે, તેમ જ અકબરનો રાજ્યકાલ (સં૦ ૧૬૧૩-૧૬૬૨) સર્વ દેશી ભાષાઓ માટે વૃદ્ધિ અને ગૌરવનો યુગ થયો છે અને દેશોમાં આ સમૃદ્ધિશાલી સમયમાં અતિશય સંતોષજનક ઉન્નતિ થઈ છે અને સારા સારા કવિ અને લેખક પાક્યા છે ઉર્દૂ ભાષાની સ્થાપના-પ્રતિભા મુખ્યપણે આ સમયમાં થઈ હિંદી ભાષાના સમયવીર-મુખ્ય નાયક ગોસ્વામી તુલસીદાસ આ યુગમાં થયા કે જેમનો કવિતાકાલ (સં૦ ૧૬૩૧-સં૦ ૧૬૮૦) છે તે મહાનુભાવ-મહાત્માએ રામાયણ આદિ રચી હિન્દી પર જેટલો ઉપકાર કર્યો છે તેવો કોઈએ કર્યો નથી, કવિપ્રિયા અને રસિકપ્રિયાના કર્તા હિન્દી કવિ કેશવદાસ (કવિતાકાલ સં૦ ૧૬૪૮-૧૬૬૮) એક પ્રતિષ્ઠિત નામી કવિ થયા, આ ઉપરાંત અકબરના દરબારમાંના રાજકવિ, બીરબલ ('બ્રહ્મ' ઉપનામથી) આદિ, તેમજ સેનાપતિ, દાદૂ દયાલ, સુંદરદાસ, નાભાદાસ પ્રભૃતિ કવિઓ ઉદ્ભવ્યા આ બહુકાલમાં આની પહેલાં સૂરદાસ આદિએ વ્રજભાષાદ્વારા કૃષ્ણ કવિતા પર અધિક ધ્યાન આપ્યું હતું, જ્યારે તુલસીદાસના કાલથી રામભક્તિની ધારા વહી અને પછી રામભક્તોએ કૃષ્ણની પેઠે રામનું પણ શૃંગારપૂર્ણ વર્ણન કર્યું (આની અસર જૈનસાહિત્યમાં નેમિનાથ-રાજુલ અને સ્થુલિભદ્ર ને કોશ્યાના પ્રસંગો લઈ શૃંગાર પર મર્યાદિત સ્વરૂપે ઉતરી વૈરાગ્ય પરિણામ પર લાવવા તરફ જૈન કવિઓ પ્રેરાયા હોય એવું સંભવે છે) મહારાષ્ટ્રમાં મહાભારત મરાઠીમાં અવગત થયું અને તત્ત્વજ્ઞાનમય અભંગો-દાસબોધ જેવા તાત્ત્વિક ઉપદેશો ભાષામાં ઉતરવા લાગ્યા આવા પ્રતાપી-ઉત્સાહભર્યા શતકમાં ગુજરાતી સાહિત્યમાં ગાનનો ધ્વનિ મંદ પડે એ માનવાને આચકો આવે

મધ્યયુગ ભાષા

ગૂર્જર પ્રાચીન સાહિત્યના ત્રણ યુગ નામે અપભ્રંશ યા પ્રાચીન ગુજરાતી યુગ, મધ્યકાલીન યુગ અને અર્વાચીન યુગ એમ પાડીએ, તો અપભ્રંશ યુગમાં 'અપભ્રંશ કિંવા પ્રાચીન ગૂર્જરાતીના વ્યાકરણ આદિપ્રવર્ત્તક અને પ્રાકૃત બોલીઓના પાણિની'-હેમાચાર્ય (વિ૦ સં૦ ૧૧૪૫ થી ૧૨૨૯), પ્રબંધચિંતામણિના કર્ત્તા મેરૂતુંગ (વિ૦ સં૦ ૧૩૬૧), કવિ ધનપાલ (ભવિષ્યદત્ત કથાના કર્ત્તા) આદિ અનેક જૈન ગ્રંથકારોએ પ્રબલ સાહિત્ય સેવા કરી છે જૈન ભંડારોમાં અપભ્રંશના અનેક પુસ્તકો મળી શકે તેમ છે એ સિદ્ધ વાત છે કે સંવત પંદરમા સૈકા સુધી સૌરાષ્ટ્ર, ગુજરાત અને રાજસ્થાન એ સર્વ પ્રદેશોમાં અપભ્રંશ ભાષા જ વ્યાપક ભાષા તરીકે પ્રવર્ત્તતી હતી સંવત્ ૧૩ મા સૈકાથી સં૦ ૧૫૫૦ સુધીની ભાષાને અન્તિમ અપભ્રંશ ભાષા ગણી શકીએ આને ડા૦ ટેસીટેરી જૂની પશ્ચિમ રાજસ્થાની ભાષા કહે છે

મધ્યકાલીન યુગ વિક્રમ પંદરમા શતકથી સત્તરમા શતકનો ગણીએ તો તેમાં પંદરમા શતકમાં થોડા, પણ સોળમા શતકમાં ઘણા વધુ અને સત્તરમામાં તો અતિ વિપુલ પ્રમાણમાં જૈનકવિઓ અને ગ્રંથકારો મળી આવે તેમ છે મધ્યકાલીન કે અર્વાચીન યુગમાં

એક પણ શતક જૈનોની ગૂર્જર સાહિત્યસેવા વગરનું રહ્યુ નથી. જૈન સાધુઓએ ભંડારોદ્વારા આ સર્વ સાચવી ગણ્યુ છે, તે માટે તેમને ધન્યવાદ ઘટે છે, અને તેથી તે સર્વ સાહિત્યનો ઇતિહાસ અખંડ લખી શકાશે તેમ થયે વિશેષ પ્રભાના દર્શન થશે.

રા. નરસિંહરાવે આંકેલ ગૂજરાતી ભાષાના વિકાસક્રમની સમયરેખામા સં૦ ૧૬૫૦ થી ૧૭૫૦ સુધીની ભાષાને 'મધ્ય ગૂજરાતી' કહી છે. આ મધ્ય ગૂજરાતી કે ઉપર નિર્દેશેલ મધ્યકાલીન યુગમા પ્રસ્તુત કવિ (વિક્રમ સત્તરમો સૈકો) થયેલ છે તે સૈકામાં અનેક સુંદર કૃતિઓ રચી પોતાને સિદ્ધહસ્ત આખ્યાન-કથા કવિ તરીકે સિદ્ધ કરનાર જૈનકવિઓ નામે કુશલ લાભ (કૃતિઓ સં૦ ૧૬૧૭ થી ૧૬૨૪). સોમવિમલ સૂરિ (કૃતિ સં૦ ૧૬૧૫ થી ૧૬૩૩), નયસુંદર (કવિતાકાલ સં૦ ૧૬૩૨ થી ૧૬૬૯), પ્રસ્તુત કવિ સમયસુંદર (સં૦ ૧૬૫૮ થી ૧૭૦૦), અને શ્રાવક કવિ ઋષભદાસ (કવિતાકાલ સં૦ ૧૬૬૨ થી ૧૬૮૭) એ પાચ અગ્રભાગ લે છે. આ પૈકી ઋષભદાસ સંબંધી લેખ પાચમી ગૂર્જર સાહિત્ય પરિષદ્‌મા મે જરા વિસ્તારથી લખી મોકલ્યો હતો તે છપાઇ ગયો છે, અને નયસુન્દર સંબધી મારો નિબધ આનદ કાવ્ય મહોદધિના છઠ્ઠા મૌક્તિકની પ્રસ્તાવનામાં પ્રકટ થયો છે. આ લેખદ્વારા કવિવર સમયસુન્દર સંબંધી-કંઇક હકીકત જણાવવા મેં પ્રયત્ન કર્યો છે.

મધ્યયુગનું કથાસાહિત્ય.

સં૦ સત્તરમા સૈકાના પ્રારભથી લોકકથાઓને કાવ્યમાં મૂકવાના સુંદર પ્રયાસો જૈન સાધુઓના હાથથી થઇ ગયા હતા માત્ર પોતાના ધાર્મિક કથા સાહિત્યમાંથી જ વસ્તુ લઈ જૈન સાધુઓએ પોતાનુ-જૈન કાવ્ય સાહિત્ય અખંડપણે ઉત્પન્ન કર્યું છે (જેમ પ્રેમાનંદાદિએ કર્યું છે તેમ), એટલુ જ નહિ, પણ તે ઉપરાત લોકકથાઓને પણ કાવ્યમાં (શામળદાસાદિની માફક) ઉતારી છે; વિશેષમાં તેઓએ, એ બને કવિઓ-પ્રેમાનદ અને શામળભટ્ટ-ની અગાઉના સૈકામાં એટલે સંવત સત્તરમા સૈકામાં-તેના પ્રારંભથી ભાષામાં અવતાર્યું છે.

આના સમર્થનમાં કહીશું કે સં૦ ૧૫૬૦ માં સિંહકુશલે નંદબત્રીશી રચી, ઉદયભાનુએ વિ૦ સં૦ ૧૫૬૫ મા વિક્રમસેન ચોપાઇ રચી કે જેના માટે રા. મણિલાઈ બકોરભાઇએ નોંધ કરી છે કે 'પાંચસેં છાસઠ ટુંકનો આ પ્રબધ છે. દરેક રીતે તે શામળભટની વાતો સાથે હરીફાઇ કરે તેવો છે. આ પ્રબધની રચના કોઇપણ રીતે શામળભટ્ટની વાતોથી ઉતરતા પ્રકારની નથી'; ત્યારપછી[2] કુશલલાભે સં૦ ૧૬૧૬ માં માધવ-કામકુંડલા

૨ કુશળલાભ-ખરતર ગચ્છના અભયધર્મ ઉપાધ્યાયના શિષ્ય તેમણે ઉક્ત બે કથાઓ ઉપરાત તેજસાર રાસ, વીરમગામમા સં૦ ૧૬૨૪ મા, અગડદત્તરાસ, નવકાર છંદ, ગોડી પાર્શ્વનાથ છંદાદિ રચેલ છે.

પર રાસ, અને સં૦ ૧૬૧૭ માં મારૂઢોલા પર ચોપઈ, ³દેવશીલે સં૦ ૧૬૧૯ માં વેતાલ પચીશી અને હેમાનંદે તેજ નામનો ગ્રંથ સં૦ ૧૬૪ માં, ગુણમેરૂસૂરિ શિષ્ય રત્નસુંદર ઉપાધ્યાયે પંચોપાખ્યાન (પંચતંત્ર) ચતુષ્પદી સં૦ ૧૬૨૨ માં સાણંદમાં અને શુકબહોતરી ઉર્ફે રસમંજરી સં૦ ૧૬૩૮ માં ખાંભતમાં, ⁴વચ્છરાજે નીતિશાસ્ત્ર પંચાખ્યાન (પંચતંત્ર) ચોપઈ સં૦ ૧૬૪૮ માં, ⁵હીરકલશે સિંહાસનબત્રીશી સં૦ ૧૬૩૬ માં, ⁶મંગલમાણેકે વિક્રમાદિત્ય અને ખાપરા ચોરનો રાસ સં૦ ૧૬૩૮ માં, નરપતિ કવિએ વિક્રમાદિત્ય ચોપઈ સં૦ ૧૬૪૯ માં અને નંદબત્રીશી, ⁷હેમરત્ને ગોરાબાદલ પદ્મિની કથા ચોપઇ સં૦ ૧૬૬૦ માં, સારંગે ભોજપ્રબંધ ચોપઇ સં૦ ૧૬૫૧ માં, અને બિલ્હિણ પંચાશિકા, અને કનકસુંદરે સં૦ ૧૬૬૭ માં સગાલ શા રાસ, એમ અનેક કવિઓએ અનેક કૃતિઓ રચી છે જૈનેતરમાં માત્ર એકાદ જેમકે સં૦ ૧૫૭૪ માં આમ્રપદ્ર (આમોદ)ના કાયસ્થ ન્યાતિ નરસા સુત ગણપતિએ માધવાનળની કથા ગૂજરાતીમાં બનાવેલી લોકકથા મળી આવી છે અને શોધ કરતાં બીજી પણ થોડી ઘણી મળી આવે જો કે સત્તરમા શતકના ઘણાખરા મળેલા ગ્રંથો ધાર્મિક છે, પણ તેમાં આ લોકકથાના ગ્રંથ મળવાથી તેમાંથી લૌકિક બાબતો ઘણી પ્રાપ્ત થઈ શકે તેમ છે

કેટલાકો એમ માનતા હતા અને માને છે કે ગૂજરાતીમાં વાર્ત્તાઓ લખનાર મૂળ કવિ શામળભટ્ટ આદિ છે, પરંતુ તેમની પહેલાંના જૈન રાસાઓમાંથી અનેક રાસાઓ વાર્ત્તાઓ રૂપે બનાવેલા મળી આવે છે એ વાત ઉપર કર્ત્તાઓ અને તેમની કૃતિઓનો

---

૩ દેવશીલ-તપાગચ્છના સૌભાગ્યસૂરિ શિ સોમવિમલસૂરિ શિ લક્ષ્મીભ શિ૦ ઉદયશીલ શિ૦ ચારિત્રશીલ શિ પ્રમોદશીલના શિષ્ય તેની આ કૃતિ ગ જગજીવનદાસ દયાલજી મોદીએ વડોદરામાં પ્રસિદ્ધ કરી છે

૪ વચ્છરાજ-પાર્શ્વચંદ્રસૂરિ-સમરચંદ્રસૂરિ-રત્નચારિત્ર શિ તેની અન્ય કૃતિઓ સ ૧૬૮૨ માં ખંભાતમાં શાંતિનાથ ચરિત્ર

૫ હીરકલશ-ખરતર દેવતિલક શિ૦ હર્ષપ્રભ શિ અન્યકૃતિઓ સમ્યક્ત્વ કૌમુદી સં૦ ૧૬૨૪ કુમતિ વિધ્વંસ ચોપઇ સં૦ ૧૬ ૭

૬ મંગલમાણેક—આંચલિક ગચ્છના બિડાલંબ ગચ્છ મુનિરત્ન-સૂરિ આનંદરત્ન-સૂરિ જ્ઞાનરત્ન ઉદયસાગર-ભાનુભટ્ટ શિ તેણે વિશેષમાં અંબડ કથાનક ચોપાઇ સ ૧૬૩૮ જેઠ શુ ૧૫ ગુરૂએ શરૂ કરી સ ૧૬૩૯ માં કાર્તિક શુ ૧૩ ઉજ્જેણીમાં નિઝામના રાજ્યમાં પૂરી કરી છે

૭ હેમરત્ન—પૌર્ણમિક ગચ્છ દેવતિલક સૂરિ-જ્ઞાન તિલક સૂરિ-પદ્મરાજ ગણિ શિષ્ય અન્યકૃતિ શીલવતી કથા સં૦ ૧૬૭૩ પાલીમાં બનાવી

આ બધા જૈન શ્વેતામ્બર સાધુઓ છે ગૂજરાતના શ્વેતામ્બર સાધુઓએ કથા સાહિત્ય માટે કેવી સેવા બજાવી છે તે માટે જર્મન વિદ્વાન ડૉક્ટર હર્ટલકૃત ઑન ધી લિટરેચર ઑફ ધી શ્વેતામ્બરાસ્ ઑફ ગુજરાત ” એ નામનું ચોપાનીયું અવલોક્વું

પાટે, અમદાવાદની સલતનત તૂટી ત્યારે, શ્રી હીરવિજયસૂરિ નામે સાધુ હતા આગ્રે જઈ ઈબાદતખાનામાં અકબર બાદશાહ અને અન્ય ધર્મીઓને તેમણે જૈનધર્મનો મહિમા બતાવ્યો.

"આ ઇતિહાસ શું કહે છે? ગુજરાતના અગ્રગણ્ય નાગરિક જૈનોનો સૂર્ય ગુજરાતના હિન્દુ સામ્રાજ્ય દરમ્યાન મધ્યાન્હમાં હતો અને હેમચંદ્રની માફક અમાસનેદિવસે પ્રકાશોજ્જ્વલ પૂર્ણિમા આણવા સમર્થ હતો. તેઓ મહિનાઓના મહિના સુધી દરિયો ખેડી લાંબી સફરો કરી દેશદેશાવરની લક્ષ્મી લાવી ગુજરાતમા ઢોળતા; પોતાના વીરત્વ અને વફાદારીથી રાજા પ્રજા ઉભયને સંકટ અને સૌભાગ્યના સમયમાં મદદ કરતા, અણહિલપુરની ગાદીનું ગૌરવ જાળવતા–વધારતા, બીજા દેવોનાં મંદિરો ખંડિયર થઈ જતાં હતા, છતાં સરસ્વતી દેવીનાં મંદિરો જૈન સાધુઓના ભીષ્મ પરિશ્રમને લીધે ઘંટનાદથી ગાજી રહ્યાં હતાં. દેલવાડાપરના વિમળશાહના દેહરા જેવા અનેક સૌંદર્યથી ગૂજરાત વિભૂષિત થતું હતું; રાજ્યની ઉથલ પાથલો, અંધાધૂંધી, અને બીન સલામતી વારવાર નડતી છતા પોતાના ઉત્કૃષ્ટ વૈશ્ય ગુણોને લીધે ગૂજરાતનો વેપાર પડી ભાગવા ન દીધો અને આજ પર્યંત વેપાર ખેડવાની લાયકાત અને શક્તિ તેજ રાખ્યા."

(જૈનધર્મ પ્રકાશનો જ્યુબિલી અંક).

આટલુ કહી હવે આપણે પ્રસ્તુત કવિનો પરિચય કરવા પ્રત્યે વળીશુ.

કવિનો પરિચય.

કવિ પોતાના જૂદા જૂદા ગ્રંથમાં નાની મોટી પ્રશસ્તિ આપી પોતાનો કંઇક પરિચય કરાવતો ગયો છે. તે પરથી સમજાય છે કે પોતાનો ગચ્છ જૈનશ્વેતામ્બર મૂર્તિપૂજક સંપ્રદાયના પૈકી ખરતર ગચ્છ હતો તે ગચ્છના ઉત્પાદક સંબંધી એવો ઉલ્લેખ કરે છે કે—

"જૈનોના છેલ્લા તીર્થંકર શ્રી મહાવીર સ્વામીની પટ્ટ પરપરાએ દેવાચાર્ય થયા, તેમના પટ્ટધર નેમિચંદ્ર, તેના પછી ઉદ્યોતનસૂરિ થયા. તેમણે આબુગિરિના એક શિખર પર અષ્ટમ તપ આદરી સૂરિમંત્ર આરાધ્યો. ત્યાર પછી વર્ધમાનસૂરિ થયા. તેના શિષ્ય જિનેશ્વરે ગૂજરાતના રાજા દુર્લભરાજ (સં૦ ૧૦૬૬ થી ૧૦૭૮) ની રાજ્ય સભામા શ્રી અણહિલ્લપુર (પાટણ) નગરે શ્વેતપટ (ચૈત્યવાસી) સાથે વાદ કરી તેઓનો પરાભવ કર્યો અને વસતિનો મનોહારી માર્ગ પ્રકટ કર્યો. તે સુરિના પટ્ટધર સંવેગરંગશાલા નામના ગ્રંથના રચનાર જિનચંદ્રસૂરિ થયા અને તેના પછી પટ્ટધર, ખરતરગણનાયક, જૈન સિદ્ધાત શાસ્ત્રો પૈકી નવ અંગ–આગમપર સંસ્કૃતમા વૃત્તિ–ટીકા રચનાર અભયદેવસૂરિ થયા. ૧૧

૧૧. વિક્રમની સત્તરમી શતાબ્દિમા (સં૦ ૧૬૧૭) અભયદેવસૂરિ ખરતર હતા કે નહિ તે સંબંધી પાટણમા જ તપાગચ્છના ધર્મસાગર ઉપાધ્યાય અને ખરતર ગચ્છના ધનરાજ ઉપાધ્યાયને

" ત્યાર પછી તેમના શિષ્ય જિનવલ્લભસૂરિ થયા, તેમના પછી ૬૪ જોગણીને વશ કરનાર જિનદત્તસૂરિ થયા તેના જિનચંદ્રસૂરિ, તેના પછી અનુક્રમે જિનપતિસૂરિ, જિનેશ્વરસૂરિ, જિનપ્રબોધસૂરિ અને જિનચંદ્રસૂરિ થયા જિનચંદ્રસૂરિના આદેશથી તેજપાલે શાંતિનાથનુ બિંબ બનાવ્યું, તેના પછી જિનકુશલસૂરિ (ખરતરગચ્છની પટ્ટાવલિમા ૪૩ મા) ત્યાર પછી જિનપદ્મ, જિનલબ્ધિ, જિનચંદ્ર, જિનોદય, જિનરાજ, જિનભદ્ર અનુક્રમે થયા આ ૫૬ મા જિનભદ્રસૂરિએ જેસલમેર, જાબાલિપુર (જાલોર), દેવગિરિ, અહિપુર (નાગપુર-નાગોર), અને પાટણમા પુસ્તક ભંડારો કરાવ્યા (પટ્ટધર પદ સં૦ ૧૪૭૫ અને મરણ સં૦ ૧૫૧૪) ત્યાર પછી ક્રમે જિનચંદ્ર, જિનસમુદ્ર, જિનમાણિક્ય થયા જિનમાણિક્યના જિનચંદ્રસૂરિ થયા કે જે હાલ વિદ્યમાન છે તે જિનચંદ્રસૂરિને અકબ્બર બાદશાહે આનંદથી 'યુગ પ્રધાન' પદ આપ્યું "

ઉક્ત (૬૧ મા) જિનચંદ્રસૂરિના[૧૨] હસ્તદીક્ષિત મુખ્ય શિષ્ય સકલચંદ્ર ઉપાધ્યાય[૧૩] થયા અને તેના શિષ્ય તરીકે હું, સમયસુંદર વાચક-ઉપાધ્યાય થયો (જુઓ સં૦ ૧૬૭૬ મા રચેલી અર્થરત્નાવલી અથવા અષ્ટલક્ષીની પ્રશસ્તિ પીટર્સન ચતુર્થ રીપોર્ટ ન ૧૧૭૪-પૃ ૬૮)

જબરો ઝઘડો થયો હતો ધર્મસાગરે એવું પ્રતિપાદન કરવા માગ્યુ હતું કે ખરતર ગચ્છની ઉત્પત્તિ જિનેશ્વરસૂરિથી નહિ પણ જિનદત્તસૂરિથી થઇ છે અભયદેવસૂરિ ખરતર ગચ્છમા થઇ શકતા નથી જિનવલ્લભસૂરિએ શાસ્ત્ર વિરૂદ્ધ પ્રરૂપણા કરી છે વગેરે ચર્ચાના વિષયો પોતાના ઔષ્ટ્રિક મતોત્સૂત્રદીપિકા નામના ગ્રંથમા મૂકયા (રચ્યા સં ૧૬૧૭) આ ગ્રંથનું બીજું નામ પ્રવચન પરીક્ષા છે યા બંને જૂદા હોય-બંનેમા વિષયો સરખા છે તેમાના એકનું બીજું નામ કુમતિકંદકુદ્દાલ છે આથી બહુ હોહાકાર થયો બે ગચ્છ વચ્ચે અથડામણી અને અંતે પ્રબળ વિખવાદ ઉત્પન્ન થતા તે કયા અટકશે એ વિચારવાનું ગચ્છ જોખમદાર આચાર્યો । વચ્ચે પડયા વગર ચાલે નહિ તેથી તપાગચ્છના વિજયદાનસૂરિએ ઉક્ત કુમતિકંદકુદ્દાલ ગ્રંથ સભાસમક્ષ પાણીમા બોળાવી દીધો હતો અને તે ગ્રંથની નકલ કોઇની પણ પાસે હોય તો તે અપ્રમાણ ગ્રંથ છે માટે તેમાનુ કથન કોઇએ પ્રમાણભૂત માનવું નહિ એવું જાહેર કર્યું હતું ખરતરગચ્છ વાળાએ પોતાના મંતવ્ય પ્રતિપાદન કરાવવા ભગિરથ પ્રયત્ન સેવ્યો હતો એ વાતના પ્રમાણમા જણાવવાનું કે આપણા નાયક સમયસુંદર ઉપાધ્યાયજીના સં૦ ૧૬૭૨ માં રચેલા સામાચારી શતકમા સં૦ ૧૬૧૭ મા પાટણમા થયેલા એક પ્રમાણ પત્રની નકલ આપેલી છે કે જેમા એવી હકીકત છે કે અભયદેવસૂરિ ખરતર ગચ્છમા થયેલા છે એ વાત પાટણના ૮૪ ગચ્છવાળા માને છે, અને એ પ્રમાણ પત્ર સાચું જણાય છે અને તેનો હેતુ ઉપરનો કલહ-ના શમાવવા અર્થે હતો

૧૨ જિનચંદ્રસૂરિ-ગોત્ર રીહડ પિતા શ્રીવંત માતા સિરિયાદેવી જ્ઞાતિ વણિક તિમરી (તીવરી) -જોધપુર રાજ્ય) ની પાસે આવેલા વડલી ગામમા સં ૧૫૮૫ મા જન્મ માત્ર નવ વર્ષની ઉંમરે સં ૧૬૦૪ મા જૈન સાધુની દીક્ષા ૧૭ વર્ષની વયે સં ૧૬૧૨ ભા૦ શુદિ નવમી ગુરૂવારે જેસલમેરમાં સૂરિપદ તેમણે અકબર બાદશાહને જૈન ધર્મનો બોધ આપ્યો હતો અને બાદશાહે યુગમા પ્રધાન

આ રીતે પોતાની ગુરૂ પરંપરા પોતે આપી છે તે અત્ર જણાવી. પોતે પોતાના ગચ્છનુ નામ બૃહત્ ખરતર ગચ્છ આપેલ છે કારણ કે ખરતર ગચ્છમાં પોતાના સમય સુધીમાં અનેક શાખાઓ મૂળ વૃક્ષમાંથી નીકળી હતી અને પોતાનુ મૂળ વૃક્ષમાંથી ચાલી આવેલ થઇ બતાવવા 'બૃહત્' શબ્દ યોજેલ છે.

સં૦ ૧૬૪૯ ના ફાગણ શુદિ ૨ ને દિને યુગપ્રધાન જિનચંદ્ર સૂરિએ અકબ્બર બાદશાહના કહેવાથી લાહોરમાં (લાભપુરમાં) માનસિંહને આચાર્યપદ આપી તેમનુ નામ જિનસિંહ સૂરિ[૧૪] રાખ્યુ, તે સમયે તેજ જિનચંદ્ર સૂરિએ સ્વહસ્તે કવિ સમયસુંદર

પુરૂષ સૂચક 'યુગપ્રધાન' પદ આપ્યુ હતુ. એમ કહેવાય છે કે બાદશાહને જૈનધર્મી-જૈનધર્મ પ્રશંસક બનાવ્યો હતો (प्रबोधितो येन दया परेण स्यकब्बरास्य. पतिनापि सुरत्य·-જિનલાભ સૂરિના સં૦ ૧૮૩૩ ના આત્મપ્રબોધની પ્રશસ્તિ) તેમને સકલચંદ્ર ઉપાધ્યાય ઉપરાન્ત ૯૫ શિષ્યો હતા-તેમા મુખ્ય સમયરાજ, મહિમારાજ, ધર્મ, નિધાન, રત્નનિધાન, જ્ઞાનવિમલ વિગેરે હતા તેમનો સ્વર્ગવાસ વેનાતટે (બિલાડા-મારવાડ) સં૦ ૧૬૭૦ ના આશ્વિનવદિ બીજના દિને થયો (જુઓ ઇંડિયન એંટિક્વેરીમા આપેલ ખરતર ગચ્છની પટ્ટાવલિ-મારૂ ભાષાન્તર, સનાતન જૈનના ૧૯૦૭ ના જુલાઇના અંકમા વધુ માટે જુઓ રત્નસાગર ભાગ ૨ જો પૃ૦ ૧૨૫) તેમણે પોતાની પાસે ગેલી નામની શ્રાવિકાએ સં૦ ૧૬૩૩ ફા૦ વદ ૫ ને દિને બાર વ્રત સ્વેચ્છા પ્રમાણે ગ્રહણ કર્યા તે સબંધી 'ઇચ્છા પરિણામ ટિપ્પનક' યા બાર વ્રતનો રાસ ભાષામા સં૦ ૧૬૩૩ મા બનાવ્યો છે. વળી મેડતામા જેને હાલ 'લોઢારો મદિર' કહેવામા આવે છે તેમા ચિંતામણિ પાર્શ્વનાથની પ્રતિમાની તેમણે સં૦ ૧૬૬૯ ના માઘ શુદિ ૫ શુક્રવારે મહારાજા સૂર્યસિંહના રાજ્યમા પ્રતિષ્ઠા કરી છે (પ્રાચીન લેખ સંગ્રહ ભા૦ ૨ પૃ૦ ૩૦૭). તેમનાજ સમયમા તેમના અનુયાયી ભક્ત, પ્રખ્યાત કર્મચંદ્ર મંત્રીએ સં૦ ૧૬૩૫ ના ભયંકર દુકાળના વખતમા સવાકરોડ રૂપીઆ ખર્ચી સત્રાકારો બંધાવી બહુ જનોને બચાવ્યા હતા અને તે કર્મચંદ્રે તેમનો યુગ પ્રધાન મહોત્સવ-તેમના શિષ્ય જિનસિંહ સૂરિનો આચાર્ય પદ મહોત્સવ અતિ દ્રવ્ય ખર્ચી સં૦ ૧૬૪૯ મા ઉજવ્યો હતો. વળી તેમના સમયમા સોમજી અને શિવજી એ બે પ્રસિદ્ધ શ્રાવકોએ રાણકપુર, ગિરનાર, આબુ, ગોડીપાર્શ્વનાથ અને શત્રુંજય એ પાંચ જૈનતીર્થોએ સંઘ કાઢી લઇ ગયા હતા. (જુઓ સમયસુંદરની કલ્પસૂત્ર ટીકાની પ્રશસ્તિ) આ કર્મચંદ્ર મંત્રીએ સંધર નગરમા જિનકુશલ સૂરિનો મોટો સ્થૂભ સં૦ ૧૬૫૫ માહા શુદ ૧૦ મે કરાવ્યો તે સિવાય બીજા સ્થલોએ તેમના અનેક સ્થૂભ કરાવ્યા હતા

૧૩ **સકલચંદ્ર ગણી**-તેઓ વિદ્વાન પંડિત અને શિલ્પશાસ્ત્રમા કુશલ હતા. પ્રતિષ્ઠાકલ્પ શ્લોક ૧૧૦૦૦, જિનવલ્લભ સૂરિકૃત ધર્મશિક્ષા પર વૃત્તિ (પત્ર ૧૨૮), અને પ્રાકૃતમા હિતાચરણ નામના ઔપદેશિક ગ્રંથ પર વૃત્તિ ૧૨૪૩૯ શ્લોકમા સં૦ ૧૬૩૦ મા રચેલ છે

૧૪. **જિનસિંહ સૂરિ**-પિતા ચાપસી, માતા ચતુરંગા દેવી, ગોત્ર ગણધર ચોપડા, વણિક જ્ઞાતિ. જન્મ ખેસર (ખેતાસર) ગામમા સં૦ ૧૬૧૫ ના માગશર શુદિ પૂર્ણિમાને દિને; તેમનુ મૂલ નામ માનસિંહ દીક્ષા બીકાનેરમા સં૦ ૧૬૨૩ ના માગશર વદિ ૫ ને દિને, વાચક-ઉપાધ્યાય પદ જેસલમેરમા સં૦ ૧૬૪૦ ના માઘ શુદિ ૫ ને દિને સૂરિપદ લાહોરમા સં૦ ૧૬૪૯ ના ફાલ્ગુન શુદિ ૨ ને દિને. અકબ્બર બાદશાહને મળવા માટે કાશ્મીરમા કઠિન વિહાર (મુસાફરી) કર્યો હતો વાર, સિદ્ધર અને (ગિઝની) આદિ દેશોમા પણ તેમણે અમારિ એટલે જીવદયા-અહિંસા પ્રવર્તાવરાવી હતી. અકબર

તથા ગુણવિનય એ બે સાધુઓને ઉપાધ્યાય પદ આપ્યું આ વાત ઉક્ત ગુણવિનય[૧૫]ઉપાધ્યાયે જ સં૦ ૧૬૫૫ માં રચેલા કર્મચંદ્ર મંત્રિવંશ પ્રબંધ-કર્મચંદ્રવંશાવલિ પ્રબંધમાં આપેલી છે કે જે કર્મચંદ્ર મંત્રીએ આ આચાર્ય મહોત્સવ કરેલો આ સમયે જ જિનચંદ્ર સૂરિને યુગ પ્રધાનપદ મળેલું જણાય છે

> વાચક પ ગુણ વિનયનઇ, સમયસુંદરનઇ દીધઉ રે
> યુગ પ્રધાનજીનઇ કરઈ જાણિ રસાયણ સીધઉ રે
> —શ્રી જિન શાસન ચિર જયઉ

આ ઉત્સવના શુભ કાર્યના ઉપલક્ષમાં બા શાહ અકબ્બર ખંભાતના બંદર ઉપર એક વર્ષ સુધી કોઈ મગર કે માછલીઓ ન મારે એવો હુકમ બહાર પાડયો હતો તેમ લાહોરમાં પણ એક દિવસ કોઇપણ જીવ ની હિંસા નહિ કરવાની આજ્ઞા ફેરવી દીધી હતી (જુઓ ઉક્ત પ્રબંધ ઐતિહાસિક રાસમાળા ભા૦ ૩, જૈન ઐતિહાસિક ગૂર્જર કાવ્ય સંચય) જુઓ પં૦ જયસોમ કૃત સંસ્કૃતમાં કર્મચંદ્ર મંત્રી પ્રબંધ ઉક્ત જિનસિંહ સૂરિએ બાદશાહ પર પોતાનો પ્રભાવ પાડી તેની પાસેથી આષાઢ શુદિ ૯ થી આષાઢ શુદિ ૧૫ સુધીના સાત દિવસોના બીલકુલ જીવવધ ન થાય એવું ફરમાન મેળવ્યું હતું આ અસલી ફરમાન પર હાથ આવ્યું છે ને તે હિન્દી 'સરસ્વતી' માસિકના જૂન, સને ૧૯૧૨ ના અંકમાં છપાયું છે આમાં હીરવિજય સૂરિના ઉપદેશથી પર્યુષણના આઠ અને બીજા ચાર એમ બાર દિવસો સુધીમાં જીવવધના નિષેધ માટે ફરમાન આપ્યું છે તેનો પણ ઉલ્લેખ કર્યો છે

જિનચંદ્રસૂરિ એક પ્રભાવક મહાપુરૂષ હતા તેમના જ્ઞાન અને આચારની ખ્યાતિ અકબ્બર બાદશાહે ઉક્ત કર્મચંદ્ર બછાવત પાસેથી સાંભળી પોતાની નિજકલમવડે ફુરમાન (વિનતિ) પંજાબના લાહોર નગરથી લખી અને પોતાના ખાસ મરજી દાન ઉમરાવો તે ગુરૂને બોલાવવા માટે મોકલ્યા તે વખતે તે ગુરૂના ૮૪ શિષ્યમાં મુખ્ય સકલચંદ્ર ઉપાધ્યાયના શિષ્ય પંડિત સમયસુંદરજી પણ વિહારમાં સાથે હતા તે વિહાર કયાંથી ક્યાં કર્યો અને લાહોરમાં આવ્યા પછી ઉપરાંત મહોત્સવ કેમ થયો એ સંબંધી સમયસુંદરજીએ 'ગુરૂ ગુણ છંદ અષ્ટક' હિન્દીમાં બનાવેલ છે તે અત્ર જણાવીશું

બાદશાહે પોતાના રાજ્યહિવટના છેલ્લા વર્ષમાં (સં૦ ૧૬૬ મા) દસ્તાવેજ રી ફરમાન કરી આપ્યું હતું કે ભાદરવા શુદ ૮ થી ભાદરવા શુ ૧૫ સુધી પોતાના સંપૂર્ણ રાજ્યમાં જીવહિંસા બંધ રાખવી ત્યાર પછી જહાંગીર બાદશાહે તેમને યુગપ્રધાન પદ આપ્યું હતું પટ્ટધર જિનચંદ્ર સૂરિ સ્વર્ગસ્થ થતા વેનાતટમાં (બિલાડા મારવાડમાં) અચ્છનાય પં૦ સં૦ ૧૬૭ ના પૌષ વદિ ૧૩ ને દિને મેડતામાં થયો (જુઓ ઉપરોક્ત ખરતર ગચ્છ પટ્ટાવલિ સનાતન જૈન જુલાઇ ૧૯૦૭ રત્નસાગર ભા૦ ૨ પૃ ૧૨૭ જ્ઞાનવિમલ કૃત સં ૧૬૫૪ની શ દ પ્રમે વર્તમાની ગુરૂ પટ્ટાવલિ પીટર્સન રીપોર્ટ બીજો પૃ૦ ૬૫) તેમની પાટે જિનરાજ સૂરિ (બીજા) આવ્યા

૧૫ ગુણવિનય વાચ -તેમણે ભાષામાં આ નબંધ ઉપરાંત અંજનાસુંદરી પ્રબંધ સં૦ ૧૬૬૨

૧૬ મતનકી મુખ વાણિ સુણી જિનચંદ સુરિંદ મહંત જતી,
તપજપ કરૈ ગુરૂ ગુજ્જરમેં પ્રતિબોધત હૈ ભવિકું સુમતી,
તબહી ચિતચાહન ચૂપ ભઇ સમયસુંદરકે ગુરૂ ગચ્છપતી,
ભેજ્ય પતસાહ અકબ્બરકી છાપ બોલાયે ગુરૂ ગજરાજ ગતી. ૧

એજી ગુજ્જરતે ગુરૂરાજ ચલૈ વિચમે ચોમાસ જાલોર રહૈ,
મેદનીતટમેં મંડાણ કિયો ગુરૂ નાગોર આદરમાન લહૈ,
મારવાડરિણી ગુરૂવંદનકો તરસૈ સરમૈ વિચ વેગ વહૈ,
હરખ્યો સત્ર લાહોર આયે ગુરૂ પતસાહ અકબ્બર પાવ ગહૈ. ૨

એજી સાહ અકબ્બરકી વબ્બરકે ગુરૂ સૂરત દેખત હી હરખૈ,
હમ જોગી જતી સિદ્ધ સાધ વ્રતી સબહી ખટ દરસન કે નિરખૈ,
ટોપી અમડમાવાસ ચંદ ઉદય અજ તીન બનાય કલા પરખૈ,
તપ જપ દયા દર્મ ધારણકો જગ કોઈ નહીં ઇનકે સરખૈ. ૩

ગુરૂ અમૃતવાણિ સુણી સુલતાન એસા પતસાહ હુકમ્મ કિયા,
સબ આલમ માહિ અમાર પલાય બોલાય ગુરૂ ફુરમાણ દિયા,
જગજીવ દયા ધર્મ દાક્ષણતૈ જિન સાસનમેં જુ સોભાગ લિયા,
સમયસુંદર કહૈ ગુણવંત ગુરૂ દગ દેખત હરખત ભવ્ય હિયા. ૪

એજી શ્રીજી ગુરૂ ધર્મ ધ્યાન મિલૈ સુલતાન સલેમ અરજ્જ કરી,
ગુરૂ જીવ દયા નિત પ્રેમ ધરૈ ચિત અંતર પ્રીતિ પ્રતીતિ ધરી,
કર્મચંદ બુલાય દિયો ફુરમાણ છોડાય ખંભાયતકી મછરી,
સમયસુંદરકે સબ લોકનમેં નિત ખરતર ગચ્છકી ખ્યાતિ ખરી. ૫

ના ચૈત્ર શુદ ૧૩ બુધે, ગુણસુંદરી ચોપઇ, અંચલમત સ્વરૂપ વર્ણન રાસ સં૦ ૧૬૭૪ માઘ શુદ ૬ રવિવારે માલપુરમા રચેલ છે. ખરતર ગચ્છની ક્ષેમ શાખામા ક્ષેમરાજ ઉપાધ્યાયના પ્રબોધમાણિક્ય શિષ્ય. તેના જયસોમ, અને તેના તેઓ શિષ્ય થાય. આ કવિએ સંસ્કૃતમા પણ અનેક ગ્રંથો રચ્યા છે તે પૈકી ખંડ પ્રશસ્તિ કાવ્ય ટીકા સં૦ ૧૬૪૧, દમયંતી ચપૂ ટીકા સં૦ ૧૬૪૬, રઘુવંશ ટીકા સં૦ ૧૬૪૬, વૈરાગ્યશતક ટીકા સં૦ ૧૬૪૭, ઇંદ્રિય પરાજયશતક વૃત્તિ સં૦ ૧૬૬૪, ઉત્સૂત્રોદ્ઘટ્ટન કુલક ખંડન સં૦ ૧૬૬૫ કે જેમા ઉપરોક્ત ધર્મસાગર ઉપાધ્યાયના મતનુ ખંડન કરેલુ જણાય છે, સંબોધ-સત્તરી ટીકા, લઘુઅજિતશાંતિ સ્તોત્ર ટીકા છે. આ પરથી તેઓ એક સત્તરમા સૈકામા વિદ્વાન્ ટીકાકાર અને સાક્ષર હતા એ નિર્વિવાદ છે. (વધુ માટે જુઓ ઐ- ગમસંગ્રહ ભાગ ૩ જો)

૧૬. ૨. મેદનીતટ—મેડતા, મારવાડરિણી—મારવાડની સ્ત્રીઓ. ૩. ટોપી... . હરખે=આનો અર્થ બરાબર સમજાતો નથી, પણ એમા એમ હોવાનો સંભવ છે કે ટોપી ઉડાડી અધર રાખી હોય, અમાવાસને દિને ચદ્રનો ઉદય બતાવ્યો હોય અને ત્રણ બકરા બતાવીચમત્કાર બતાવ્યા હતા. ૪ ભવ્ય—પાઠાંતર હોત. મછરી—માછલી પકડવાનુ ખંભાતમા થતું હતું તે ફુરમાનથી દૂર કરાવ્યુ. ૬—ચામર છત્ર..... જિય રે- -પાઠાંતર—જુગપ્રધાનકાએ ગુરૂકૂ ગિગડદુ ગિગડદું ધુધુ બાજીયેરે સમયસુંદરકે ગુરૂ માન ગુરૂ, પતિસાહ અકબ્બર ગાજીયેરે. (જૈન સંપ્રદાય શિક્ષા પૃ. ૬૪૯)

એજી શ્રી જિનદત્ત ચરિત્ર સુણી પતસાહ ભરે ગુરુ રાજિયે રે
ઉમરાવ સબે કર જોડ ખડે પભણે અપણે મુખ હાજિયે રે
ચામર છત્ર મુરાતબ ભેટ નિગડદુ ધુધુ બાજિયે રે
સમયસુંદર તૂહી જગત્ર ગુરુ પતસાહ અકબ્બર ગાજિયે રે　　　૬

હેજી જ્ઞાન વિજ્ઞાન કલા ગુણ દેખ મેરા મન મ ગુરુ રીઝીયેજી
હુમાયૂકો નંદન એમ અખૈ અબ સિંધ (માનસિંધ) પટોધર કીજીયેજી,
પતસાહ હજૂર થપ્યો સધ સૂરિ મ ડાણ મંત્રીશ્વર વીઝીયેજી
જિણચંદ પટે જિણસિંહ સૂરિ ચંદ સૂરજ જ્યૂ પ્રતપીજીયેજી　　　૭

હેજી રીહડવંસ વિભૂષણ હંસ ખરતર ગચ્છ સમુ શશી
પ્રતપ્યો જિન માણિક્ય સૂરિ કે પાટ પભાકર જ્યૂ પ્રણમૂ ઉલસી
મન શુદ્ધ અકબ્બર માનત હૈ જગ જાણત હૈ પરતીત એસી,
જિનચંદ મુણીંદ ચિર પ્રતપો સમયસુંદર દેત આશીશ એસી ×　　　૮

આ પરથી એમ અનુમાન થાય છે કે જિનચંદ્રસૂરિ, અકબર બાદશાહે બોલાવવાથી ગૂજરાતમા હતા ત્યાથી અનેક શિષ્યો સાથે લઇ ગયા તેમા સમયસુંદર હતા ગૂજરાતમાથી વિહાર કરતા પહેલા જાલોર, ત્યાથી મેદિનીતટ-મેડતા, નાગોર એમ મારવાડમાથી પસાર થઇને લાહોર આવ્યા

સ૦ ૧૬૪૯ પહેલા તો સમયસુંદર ગૂજરાતમા જ રહ્યા હતા અને સ૦ ૧૬૪૯ મા લાહોર આવી ઉપાધ્યાય પદ મેળવી પછી તે બાજુ ને વિશેષમા મેવાડ-મારવાડમા પ્રવાસ કર્યો છે અને તેથી તેમની મુખ્ય ગૂજરાતી ભાષામા અનેક દેશોના પ્રાન્તીય શબ્દો, મારવાડી શબ્દો, ફારસી શબ્દો જોવામા આવે છે આ વાત તેમણે જે ગ્રંથો રચ્યા તેના નિર્દિષ્ટ સ્થલપરથી-તે ગ્રંથોપરથી જણાઈ આવે છે

×આ અષ્ટક 'મહાજન વંશ મુક્તાવલિ -પં૦ રામલાલ ગણી ગવડી વિદ્યાશાલા બીકાનેરમાથી તેની પ્રસ્તાવના પૃ૦ ૫-૬ પરથી ઉતારેલુ છે તેમા વિશેષ જણાવ્યુ છે કે આ વખતે નગાબ (ચિતારા) એ તસ્વીર બાદશાહ અને ગુરુમહારાજની ઉતારી તે બીકાનેરના ખરતર ભટ્ટારક શ્રી પૂજ્ય પાસે મોજૂદ છે ચિતારાએ બા શાહ અકબરની સભામાથી બાદશાહની પાછળ મુખ્ય ૩ તસ્વીર લખી છે બિરબલ કરમચંદ બછાવત તથા કાજી ખાનખા અને શ્રી ગુરુ મહારાજના સવ સાધુ સમુદાયમથી ૩ મુખ્ય સાધુ નામ લખ્યા છે- વેપર્ષ (ખરૂ નામ વિવેક હર્ષ) પરમાનંદ તથા સમયસુંદર આ છબી પ્રકટ થાય તો ઘણો પ્રકાશ પડે અને કવિ સમયસુંદરની તસ્વીર મળી આવે આવીજ છબી તપાગચ્છીય હીરવિજય સૂરિની તે વખતની પ્રકટ થઇ છે (જુઓ સાગર શ્રી જિનવિજયજીએ કૃપારસકોશની લખેલી ભૂમિકા સાથે પ્રકટ કરેલ છબી તેમા પણ અકબ્બર સાથે ત્રણ અમીરાદિ, અને હીરવિજય સાથે ત્રણ જૈન સાધુઓ છે આ અને ઉપરની છબી બંને એકનો નથી એમ શંકા રહે છે વળી આ અષ્ટક જૈન સંપ્રદાય શિક્ષા (યતિ શ્રી પાલચંદ્રી) મા પૃ૦ ૧૯૮ ની ટિપ્પણીમા પ્રકટ થયુ છે

સં૦ ૧૬૫૮ અમદાવાદ, સં૦ ૧૬૫૯ ખંભાત, સં૦ ૧૬૬૨ સાંગાનેર, સં૦ ૧૬૬૫ આગ્રા, સં૦ ૧૬૬૭ મરોટ સં૦ ૧૬૬૮ મુલતાન, સં૦ ૧૬૭૨ અને ૧૬૭૩ મેડતા. સં૦ ૧૬૭૪ માં જિનચંદ્રસૂરિ મેડતામાં સ્વર્ગસ્થ થયા ને જિનરાજસૂરિને[૧૬] તેમની ગાદી ત્યાં મળી. સં૦ ૧૬૭૬ માગશર માસમા રાણકપુર (સાદડી પાસે) ની જાત્રા કરી [તે રાણકપુરની જાત્રા વખતે કરેલા સ્તવનમા તેના મંદિરનુ વર્ણન આપ્યુ છે કે 'ચારે દિશાના ૨૪ મંડપ, ચાર ચતુર્મુખ (ચોમુખ) પ્રતિમા, તે દેહરાનુ નામ ત્રિભુવન દીપક. ૮૪ દેરી, ભોયરાં. મેવાડ દેશમા. ૯૯ લાખ ખર્ચી પોરવાડ ધરણાકે બંધાવ્યુ. ત્યા ખરતર વસતિ છે ને તે ઉપરાંત બીજા પ્રાસાદ છે.] અને તે વર્ષમા લાહોર ગયા, સં૦ ૧૬૮૧ જેસલમેરમા હતા. આની પછી સં૦ ૧૬૮૨ મા જેસલમેર પાસેના પાંચ ગાઉ પરના-અસલ રાજ્યધાની લોદ્રવપુરમા રહેતા[૧૭] થેરૂ ભણશાલીએ જેસલમેરથી શત્રુંજયપર જવાનો સંઘ કાઢયો.

---

૧૬ જિનરાજસૂરિ—(બીજા) પિતા શા ધર્મસી, માતા ધારલદે, ગોત્ર બોહિત્થરા. જન્મ સં૦ ૧૬૪૭ વૈ. શુ ૭, દીક્ષા બીકાનેરમા સં૦ ૧૬૫૬ ના માર્ગશીર્ષ શુદિ ૩, દીક્ષાનામ- રાજસમુદ્ર, વાચક (ઉપાધ્યાય) પદ સં૦ ૧૬૬૮, અને સૂરિપદ મેડતામા સં૦ ૧૬૭૪ ના ફાગણ શુદ ૭ ને દિને થયુ તે મહોત્સવ ત્યાના ચોપડા ગોત્રીયસાહ આસકરણે કર્યો. તેમણે ઘણી પ્રતિષ્ઠાઓ કરી-દાખલા તરીકે સં૦ ૧૬૭૫ ના વૈશાખ શુદિ ૧૩ શુક્રે શત્રુંજય ઉપર અષ્ટમ ઉદ્ધારકારક અમદાવાદના સંઘવી સોમજી શિવજીએ ઋષભ અને બીજા જિનોની ૫૦૧ મૂર્ત્તિઓ બનાવરાવી તેની પ્રતિષ્ઠા કરી. ભાણવડમા પાર્શ્વ-નાથની પ્રતિમાની સ્થાપના કરી હતી સં૦ ૧૬૭૭ જેઠ વદિ ૫ ગુરૂવારે જહાંગીરના રાજ્યમા અને શાહજાદા શાહજહાના સમયમા ઉક્ત આસકરણે બનાવેલા મકરાણી (સંગેમર્મર) ના પથ્થરના સુંદર વિહાર (મંદિર) મા મેડતામા શાંતિનાથની મૂર્ત્તિની પ્રતિષ્ઠા કરી એવુ કહેવાય છે કે તેમને અંબિકા દેવીએ વર આપ્યો હતો. તેઓ પાટણમા સં૦ ૧૬૯૯ ના આષાઢ શુદિ ૯ ને દિને સ્વર્ગસ્થ થયા. તેમણે નૈષધીય કાવ્યપર જૈનરાજી નામની વૃત્તિ રચી છે અને બીજા ગ્રંથો રચ્યા છે. તેમના કહેવાથી મતિસારે ધન્ય શાલિભદ્રનો રાસ સં૦ ૧૬૭૮ આસો વદિ ૬ ને દિને ખંભાતમા રચ્યો હતો.

૧૭ થેરૂ ભણશાલી સંબંધી એવું કહેવાય છે કે તે લોદ્રવપુર (હાલનુ લોધરા) મા ઘીનો વેપાર કરતો હતો એક ઘીનુ પાત્ર લઇ ભરવાડણ વેચવા આવી, તેની નીચે ચિત્રાવેલ હતી આથી તે પાત્રના ઘીનો તોલ કરતા જેમ જેમ ઘી કાઢતા જાય તેમ તેમ તે પાત્ર ભરાતુ જાય આ ચિત્રાવેલ પાત્ર નીચેની ઇંઢોણી સાથે હતી, તે ઇંઢોણી લઇને થેરૂશાહે ફેંકી દીધી, પછી તેમાથી તે વેલ લઇ તેના પ્રતાપે અખૂટ ઘીથી અઢળક સંપત્તિ તેણે પ્રાપ્ત કરી આ વાત તેણે જિનસિંહ સૂરિને કહી, ગુરૂએ સુકૃતાર્થ કરવા કહ્યુ ત્યારે થિરૂએ ત્યા થઇ ગયેલા ધીરરાજા (ધીરાજી ભાટી) એ સં૦ ૧૧૯૬ પછી બંધાવેલા લોધરામાના સહસ્રફણા પાર્શ્વનાથના મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર કર્યો તેમા વિશાલપ્રતિમા સ્થાપન કરી. અને પોતાની બે પત્ની તથા બે પુત્રના કલ્યાણાર્થે ચાર બાજુએ ચાર દેવકુલિકાઓ બંધાવેલી છે. આની પ્રતિષ્ઠા નૈષધકાવ્ય ઉપર જૈનરાજી નામની ટીકાના કર્ત્તા મહા વિદ્વાન્ આચાર્ય જિનરાજ સૂરિએ સં૦ ૧૬૭૫ મા કરેલી છે વિશેષમા થેરૂશાહે જ્ઞાનભંડાર કરાવ્યા અને નવરત્નોના જિનબિંબ કરાવ્યા. ક્રોડો રૂપીઆ ખર્ચ્યા, ત્યારપછી શત્રુંજયનો સંઘ સં૦ ૧૬૮૨ મા કાઢયો. આની પહેલા બાદશાહ અકબ્બરે થેરૂશાહને દિલ્હી બોલાવી ઘણુ માન આપ્યુ થેરૂશાહે નવ હાથી, પાંચસે ઘોડા નજર કર્યા ત્યારે બાદશાહે

આમાં શ્રી જિનરાજસૂરિ પ્રમુખ અનેક આચાર્ય સાથે હતા અને સમયસુંદર ઉપાધ્યાય પણ આ સંઘમાં ગયા હતા આ સંઘ શત્રુંજયની યાત્રા કરી આવ્યો—સ૦ ૧૬૮૨ પછી સમયસુંદર ૧૬૮૨ માં નાગોર આવ્યા, ને ત્યાં શત્રુંજય રાસ રચ્યો ત્યાંથી સ૦ ૧૬૮૩ મેડતામાં, સ૦ ૧૬૮૫ લૂણકર્ણસર, સ૦ ૧૬૮૭ પાટણ આ વર્ષમાં ભારે દુકાળ પડયો હતો કે જેનું વર્ણન તેમણે ચંપક ચોપાઈમાં કર્યું છે સ૦ ૧૬૯૧ ખંભાત, સ૦ ૧૬૯૪ અને ૧૬૯૫ જાલોર, સ૦ ૧૬૯૮ અમદાવાદ, સ૦ ૧૬૯૮ અહેમદપુર (અમદાવાદ), એ રીતે એ સ્થલોએ આપણા કવિએ અચૂક નિવાસ કર્યો હતો

આ ઉપરાંત સમેતશિખર (પાર્શ્વનાથહિલ જેને હાલ કેટલાક કહે છે), ચંપા, પાવાપુરી, ફલોધી (મારવાડ), નાડોલ, વીકાનેર, આબુ, શંખેશ્વર, જીરાવલા, ગોડી, વરકાણા, અંતરીક્ષ પાર્શ્વનાથ, તેમજ ગિરનાર વગેરે અનેક જૈન તીર્થોની યાત્રા કરી હતી ૧૭૬ જેસલમેરમાં પોતે ઘણાં વર્ષો ગાળ્યા લાગે છે

રાયજાદો ગોત્ર ખિતાબ બક્ષ્યો આથી આની ઓલાદ રાયભણશાલી કહેવાય છે આગ્રામાં મોટું જિનમંદિર થિરૂશાહે કરાવ્યું કે જે હાલ મોજૂદ છે ભણશાલી એ મૂળનામ એ રીતે પડયું કે લોદ્રપુરના યદુવંશી ધીરાજી ભાટી રાજાના યુવરાજ પુત્ર સગરની માતાને બ્રહ્મરાક્ષસ લાગ્યો હતો તેને સં ૧૧૯૬ મા ખરતર ગચ્છના ચમત્કારી આચાર્ય જિનદત્ત સૂરિએ કાઢ્યો તેથી રાજા કુટુંબ સહિત જૈન થયો અને તેના પર આચાર્યે જૈનત્વની ક્રિયારૂપે ભંડશાલામાં વાસક્ષેપ કર્યો તેથી તેનું ગોત્ર ભંડશાલી (ભણશાલી) સ્થાપિત થયું અને તેના આ વંશજ થેરૂશાહ થયા આ રીતે મૂળ ભણશાલી જૈન હતા જુઓ મહાજન વંશ મુક્તાવલિ પૃ ૨૮-૦

૧૭૬ જેસલમેર—આનો કિલ્લો રાજસ્થાનમાં પ્રસિદ્ધ છે યદુવંશી ભટ્ટી મહારાઓએ લોદ્રપુરથી આવી સં૦ ૧૨૧૨ મા બાંધ્યો જૈનના ખરતર ગચ્છના શ્વેતાંબરી સાધુઓનો આ પ્રબલ નિવાસ રૂપ હતો જિનરાજ જિનવર્ધન જિનભદ્ર આદિ સૂરિયોએ અનેક જૈન દેવાલયોની પ્રતિષ્ઠા કરી છે કિલ્લા પર આઠ જૈન મંદિર છે તે પૈકી મુખ્ય ચિંતામણી પાર્શ્વનાથનું છે—સ૦ ૧૪૫૮ માં જિન રાજ સૂરિના આદેશથી તેના ગર્ભગૃહમાં સાગરચંદ્ર સૂરિએ પ્રતિમા સ્થાપિત કરી અને સં૦ ૧૪૭૩ મા મહારાઉલ લક્ષ્મણ સિંહના સમયે સંપૂર્ણ થયું તે રાજાના નામ પરથી તેનું નામ લક્ષ્મણવિહાર રાખ્યું ને તેમાં જિનવર્ધન સૂરિએ પ્રતિષ્ઠા કરી તેમાંની ચિંતામણી પાર્શ્વનાથની મૂર્તિ ભટ્ટીઓની પ્રાચીન રાજધાની લોદ્રપુરથી આણેલી ને તેથી પ્રાચીન છે બીજું મંદિર સંભવનાથનું સં ૧૪૮૪ મા જિનભદ્ર સૂરિના ઉપદેશથી આરંભાયેલું તે ૧૪૯૭ મા પૂરૂં થયું ને તેમાં તે સૂરિએ પ્રતિષ્ઠા કરી તે વખતે ૩૦૦ મૂર્તિની પ્રતિષ્ઠા થઇ આ મંદિરની નીચે જ્ઞાનભંડાર વાસ્તે ભોંયરૂં બંધાવ્યું તેમાં ભંડાર રાખ્યો જે હજુ વિદ્યમાન છે તેમાં ૧૦ મીથી ૧૧ મી વિક્રમ સદીના લખાએલા તાડપત્રના પ્રાચીન દુર્લભ પુસ્તકો મોજુદ છે બીજા મંદિરો—આદીશ્વર શાંતિ શીતલ ચંદ્રપ્રભ મહાવીર વગેરેના વિક્રમના સોળમા શતકના પૂર્વાર્ધમાં લગભગ નજીક ત્યાં બંધાવેલા છે આ તથા સર્વ બીજા મંદિરોમાં કુલ મળી આશરે ૭૦૦૦ જિનબિંબો છે વળી બધા મળી ૬ જ્ઞાન ભંડારો છે ત્યાંના ભંડારોની પુસ્તકસૂચિ સદ્‌ગત સાક્ષર ચિમનલાલ ડાહ્યાભાઇ દલાલ મહાશ્રમ લઇ કરેલી તે ગાયકવાડ સરકારે હમણાં બહાર પાડી છે જોધપુર બિકાનેર રેલ્વેમાં

જૈનોના ભારતવર્ષમા તેમના તીર્થંકરોની જન્મભૂમિ, દીક્ષાભૂમિ, કેવલજ્ઞાનભૂમિ, નિર્વાણભૂમિ તરીકેનાં તીર્થો અનેક છે. તેમા મુખ્ય શત્રુંજય, ગિરનાર, સમ્મેત–શિખરાદિ છે. તે સર્વની યાત્રા દરેક ચુસ્ત જૈનને માટે આવશ્યક ગણાય. આ કવિએ રચેલ ' તીર્થ-માલા સ્તવન ' પરથી જણાય છે કે તેમાં લખેલ અષ્ટાપદ અને નંદીશ્વર એ શાસ્ત્રોક્ત તીર્થ સિવાય બધાંય તીર્થની યાત્રા તેમણે કરી હતી. તે સ્તવન નીચે પ્રમાણે છેઃ—

૧૮ શત્રુંજે ઋષભ સમોસર્યા ભલા ગુણ ભર્યારે, સિદ્ધા સાધુ અનંત, તીરથ તે નમુરે,
તીન કલ્યાણક તિહા થયાં, મુગતે ગયારે, નેમીશ્વર ગિરનાર, તીરથ તે નમુરે ૧

અષ્ટાપદ એક દેહરો, ગિરિસેહરોરે, ભરતે ભરાવ્યા બિંબ—તી૦
આબુ ચૌમુખ અતિ ભલો, ત્રિભુવનતિલોરે, વિમલ વસઇ વસ્તુપાલ. ૨

સમેતશિખર સોહામણો, રલિયામણોરે, સિદ્ધા તીર્થંકર વીસ.
નયરી ચંપા નિરખીયે, હૈયે હરખીયેરે, સિદ્ધા શ્રી વાસુપૂજ્ય. ૩

પૂર્વ દિશે પાવાપુરી, ઋદ્ધિ ભરીરે, મુક્તિ ગયા મહાવીર.
જેસલમેર જુહારીયે, દુઃખ વારીયેરે, અરિહંત બિંબ અનેક ૪

વિકાનેર જ વંદીયે, ચિર નંદીયેરે, અરિહંત દેહરા આઠ
સેરિસરો સંખેસરો, પંચાસરોરે, ફલોધી થંભણ પાસ ૫

અંતરિક અંજાવરો, અમીઝરોરે, જીરાવલો જગનાથ
' ત્રૈલોક્ય દીપક ' દેહરો, જાત્રા કરોરે, રાણપુરે રિસહેસ. ૬

શ્રી નાડુલાઇ જાદવો, ગોડી સ્તવોરે, શ્રી વરકાણો પાસ.
નંદીશ્વરના દેહરા, બાવન ભલારે, રૂચકકુંડલે ચાર ચાર. ૭

શાશ્વતી અશાશ્વતી, પ્રતિમા છતીરે, સ્વર્ગ મૃત્યુ પાતાલ.
તીરથ યાત્રા ફલ તિહા, હોજો મુઝ ઇહારે, સમયસુંદર કહે એમ ૮

બાડમેર સ્ટેશનથી જેસલમેર ૯૨ માઇલ છે તપાગચ્છે ૧૯ મી સદીમા પ્રવેશ કર્યો ને મહાકષ્ટે ૧૮૬૯ મા કોટની નીચે તેમના તરફથી શિખરબંધ દહેરું બંધાયુ. ત્યાના દહેરા સબંધી વિગત જિનસુખ સૂરિએ જેસલમેર ચૈત્ય પરિપાટી બનાવેલ છે તેમા મળે છે (જુઓ પ્રાચીન તીર્થમાલા સંગ્રહ પૃ૦ ૧૪૬.)

૧૮. શત્રુંજય—પાલીતાણા કાઠીયાવાડમા–આવેલો પવિત્રગિરિ ગિરનાર–જુનાગઢમા આબુ કે જયાં વિમલ મંત્રીએ અને વસ્તુપાલ મંત્રીએ મહાન્ કારીગરીના અદ્ભુત જૈન દેવાલયો બંધાવેલાં છે. સમેત-શિખર કે જયા ૨૪ તીર્થંકરો પૈકી ૨૦ મુક્તિ પામ્યા છે–કલકત્તાથી જવાય છે

ચંપાએ વાસુ પૂજ્યની નિર્વાણ ભૂમિ. પાવાપુરી—મહાવીરની નિર્વાણ ભૂમિ જેસલમેર—વીકાનેર પ્રસિદ્ધ છે.

સેરીસરો, સેરિસા–કલ્લોલ પાસે આ તીર્થનો હમણાં જ ઉદ્ધાર કરવામા આવ્યો છે.

શંખેશ્વર પાર્શ્વનાથ–પાટણથી ૨૦ ગાઉ દૂર પંચાસરો પાર્શ્વનાથ પાટણમાં વનરાજ ચાવડાએ સ્થાપેલ ફલોધી—મેડતારોડ સ્ટેશનથી પા ગાઉ. સં૦ ૧૧૮૧ મા પાર્શ્વનાથની પ્રતિમા સ્થાપાયેલી છે.

<u>શિષ્ય પરંપરા</u>

હર્ષનંદન નામના એક વિદ્વાન્ શિષ્ય તેમને હતા તે શિષ્યે સં૦ ૧૬૭૩ મા 'મધ્યાન્હ વ્યાખ્યાન પદ્ધતિ' તથા બીજો ગ્રંથ નામે 'ઋષિમંડલ સ્તવ' (મહર્ષિ સ્તવ) ગાથા ૨૭૧ નું,- તેના પર ૪૦૦૦ શ્લોકની ટીકા રચેલ હતી ખરતર ૧ છમા લઘ્વાચાર્યીય નામનો આઠમો ગચ્છભેદ ખ૦ જિનસાગરસૂરિએ સં૦ ૧૬૮૬ મા કર્યો હતો તે ગચ્છને હર્ષનંદને ઘણો વધાર્યો વિશેષમા હર્ષનંદને તથા ખ૦ સુમતિકલ્લોલ એ બને એ મળીને તૃતીય જૈન આગમ નામે સ્થાનાંગ પરની વૃત્તિમાની ગાથાઓ પર શ્લોક ૧૩૬૦૪ ની વૃત્તિ રચી હતી

સમયસુંદરના શિષ્યના શિષ્ય નામે હર્ષકુશલ ગણી (ઉપાધ્યાય) હતા કે જેણે સમયસુંદરની ભાષાકૃતિ નામે ધનદત્તની ચોપઇ પોતે સંશોધિત કરી હતી

સમયસુંદરની શિષ્ય પરંપરા અખંડ પણે સં૦ ૧૮૭૨ સુધી તો ચાલી આવેલી હતી એ વાત સિદ્ધ છે સં૦ ૧૮૭૭ ના માગશર શુદિ ૪ ના દિવસે તેમની શિષ્ય પરંપરામાના આલમચંદે 'સમ્યકત્વ કૌમુદી ચતુપદી' એ નામની પદ્યકૃતિ મકસુદાબાદમા બનાવેલ છે તેમા પોતાની પ્રશસ્તિ આપતા જણાવે છે કે

> યુગવર શ્રી જિનચંદ સરીસા ખરતર ગચ્છ જિંદાજી
> રીદ ગોત્ર નસિંહ કહંદા સદ્દગુરુ સુજસ સવાઇજી
> પ્રથમ શિષ્ય તસુ મહા વેરાગી જિણ મમતા સહુ ત્યાગીજી
> સકલચંદજી સકલ સોભાગી મમતા ચિત્તસું જાગીજી
> તાસુ શીસ પરગટ જગમાહી સઈ કોઇ ચિત્ત ચાહીજી
> પાઠક પદ્દીધર ઉચ્છાહે સમય સુંદરજી કહાઈજી
> તાસુ પરંપરમે સુવિચારી ભયે વાચક પ ધારીજી
> કુશલચંદ જી બહુ હિતકારી તાસુ શિષ્ય સુખકારીજી
> સદ્દગુર આસકરણજી સુહાયા જગમે સુજસ ઉપાયાજી
> તાસુ શિષ્ય આલમચંદ કહાયા એ અધિકાર બણાયાજી

આ રીતે સમયસુંદરની શિષ્ય પરંપરામા કુશલચંદ ઉપાધ્યાય થયા, તેના શિષ્ય આસકરણજી અને તેના શિષ્ય આલમચંદ

કંસારી—ભીમનાથ પાર્શ્વનાથ ખંભાતમા તેની પ્રતિમા અભયદેવસૂરિના સમયમા પ્રગટ થઇ

અંતરિક્ષ પાર્શ્વનાથ—આકોલાથી લગભગ ૨૦ ગાઉ દૂર

અજારો (અજાહરો) પાર્શ્વનાથ-કાઠિયાવાડના ઉના ગામ પાસે

અમીઝરો પાર્શ્વનાથ—વડગામ (પાલણપુર તાલુકો)

ઉવસગ્ગહર પાર્શ્વનાથ (મારવાડ) નાકોડા—મારવાડમા ગોડી પાર્શ્વનાથ—પારકરમા વરકાણા પાર્શ્વનાથ-મારવાડમા

સંસ્કૃત ભાષામાં કૃતિઓ

કવિ એક સમર્થ વિદ્વાન્, ટીકાકાર, સંગ્રહકાર, શબ્દશાસ્ત્રી, છંદશાસ્ત્રી અને અનેક ગ્રંથોના અવલોકનકાર અને અવગાહનાર હતા એ તેમના નીચેના ગ્રંથો પરથી જણાઈ આવે છે. આ ગ્રંથો ગૂર્જર ભાષા સિવાયના છે –

ભાવશતક શ્લોક ૧૦૧ સં૦ ૧૬૪૧.

રૂપકમાલા પર વૃત્તિ શ્લો૦ ૪૦૦, સં૦ ૧૬૬૩ આ વૃત્તિ કવિના પ્રગુરૂ ઉક્ત જિનચંદ્ર સૂરિના શિષ્ય રત્નનિધાન ગણીએ શોધી હતી.

કાલિકાચાર્ય કથા (સંસ્કૃત) સં૦ ૧૬૬૬.

સામાચારી શતક સં૦ ૧૬૭૨ મેડતામાં.

વિશેષ શતક (પત્ર ૬૭) સં૦ ૧૬૭૨ મેડતામાં, આનો ઉલ્લેખ કર્ત્તાએ પોતાની ગાથા સહસ્રીમાં કર્યો છે [રચ્યા દિન પાર્શ્વજન્મ દિને.

વિચાર શતક (પત્ર ૪૫) સં૦ ૧૬૭૪

[૧૯] **અષ્ટલક્ષી** સં૦ ૧૬૭૬ (રસ જલધિરાગ ગોસમેતે) લાહોર. આ राजानो ददते सौख्यम्–એ રીતના વાક્યના આઠ લાખ અર્થોવાળો ગ્રંથ છે આનુ બીજું નામ અર્થરત્નાવલિ છે. તે લાભપુર (લાહોર) માં પૂર્ણ કર્યો (પી રી ૪ થો. પૃ. ૬૮–૭૩)-

આ અષ્ટલક્ષી ગ્રંથ કવિએ સં૦ ૧૬૪૯ પહેલા શરૂ કરી તે વર્ષમાં એક પુસ્તકના પ્રમાણનો કરી નાખ્યો હોવો જોઇએ એમ જણાય છે એટલુ જ નહિ પણ તે વર્ષમા શ્રી અકબર બાદશાહે ખુદ રાજસભામા વાચી સાભળી આ પુસ્તક સ્વહસ્તે લઇ કવિના હાથમાં આપી તે રીતે પ્રમાણ-ભૂત કર્યો એવુ પોતે આ ગ્રંથમાં જ જણાવે છે·—

---

[૧૯] આમા પહેલા એક શ્લોકમા સૂર્યદેવની સ્તુતિ કરી છે તે ખાસ ધ્યાન ખેચે છે ત્યારપછી બીજા શ્લોકમા બ્રાહ્મી–સરસ્વતીની સ્તુતિ કરી જણાવે છે કે ' રાજા નો દદતે સૌખ્ય ' એ શ્લોકના એક પાદના મે નિજબુદ્ધિની વૃદ્ધિ નિમિત્તે અર્થો કર્યા છે તેમા તે પાદમાના ' રાજા ' નો અર્થ સૂર્ય પણ થાય છે એમ જણાવી સૂર્યદેવના નામો આપે છે –

सावित्री सविता राजा विसृजो विघृणो विराट् ।
सनाच्च नन्तुरग स्वतालोकनमन्त्रुत ॥

એમ સ્કંદપુરાણમા શ્રી સૂર્યસહસ્ર નામમા જણાવ્યુ છે તેથી રાજા એટલે શ્રી સૂર્ય, ન એટલે અમને સૌખ્ય આપે છે

આમ જૂદા જૂદા અર્થો દરેક શબ્દોના મૂકી આખા વાક્યનો અર્થ કરી, સર્વે મળી આઠ લાખ અર્થ કર્યા છે તે જણાવી છેવટે પોતાની પ્રશસ્તિ આપે છે.

सवति १६४९ प्रमित श्रावण शुक्ल १३ दिने सन्ध्याया कश्मारदेश विजयमुद्दिश्य श्री राजश्री रामदास वाटिकाया कृतप्रथमप्रयाणेन श्री अकब्बर पातशाहिना जलालदीनेन अतिजात साहिजाने श्री सिलेम सुरत्राण सामनमटलिकराजराजिविराजितराजसभाया अनेकवैयाकरणता र्किक विद्वत्तमभट्टसमक्ष अस्मद् गुरुरान् युगप्रधानखरतर–भट्टारकश्री जिनचन्द्र सूरीश्वरान् आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिप्रमुखकृतमुखमुखशिष्यव्रातपरिकरान् अधमानसन्मानबहुमानपूर्वं समाहूयायमष्टलक्षार्थी ग्रन्थो मत्पार्श्वात् वाचयाचकेऽक्रमेण चेतसा । ततस्तदर्थश्रवण समुत्पन्नप्रभूतनूतनप्रमोदातिरेकेण सजात चित्तचमत्कारेण बहुप्रकारेण श्रीसाहिना बहु प्रशसापूर्वं 'पठ्यता सर्वत्र विस्तार्यता सिद्धिरस्तु' इत्युक्त्वा च स्वहस्तेन गृहीत्वा एतत् पुस्तक मम हस्ते दत्वा प्रमाणी कृतोऽय ग्रन्थ । अत्र सापयो गित्वात् श्रीसाहिनापि समुद्दिश्यार्थमाह–राजा श्री अकब्बर नोऽस्मभ्य सौख्य सुख दत्ते प्रजानामिति।

એટલે—સવત્ ૧૬૪૯ ના શ્રાવણ સુદ ૧૩ દિને સાજે કાશ્મીર દેશપર વિજય કર્યો તે નિમિત્તે શ્રી રાજ શ્રી રામદાસ (આ રામદાસ તે જણાય છે કે જેણે સ૦ ૧૬૫૨ મા સેતુબધ (રાવણવહો) ની ટીકા રચી છે અને જેને માટે પ્રાજ્ય ભટ્ટની રાજતરગિણિમા વિશેષ ઉલ્લેખ મળી આવે છે) ની વાડીમા શ્રી અકબર બાદશાહ-જલાલદીને પ્રથમ પ્રયાણ કરી અતિ આનદાન શાહજા । શ્રી સલીમ (પાછળથી જહાગીર બાદશાહ) સુલતાન સામત મડલિક રાજાઓથી વિરાજિત । સભામા અનેક વ્યાકરણીઓ તાર્કિક વિદ્વત્તમ ભટ્ટ–પડિત સમક્ષ અમારા ગુરુવર યુગપ્રધાન ખરતર ભટ્ટારક શ્રી જિનચદ્ર સૂરીશ્વરને આચાર્ય શ્રી જિનસિહસૂરિ વગેરે આણેલા શિષ્ય સમુદાય સહિતને અતિશય સન્માન આપીને બોલાવી આ અષ્ટલક્ષાર્થી ગ્રથ મારી પાસે શુદ્ધ ચિત્તથી વચાવ્યો, ત્યારપછી તેના શ્રવણથી તેને અતિ નવીન પ્રમોદનો અતિરેક થતા ચિત્તમા ચમત્કૃતિ થતા બહુ પ્રકારે શ્રી બાદશાહે બહુ પ્રશસા કરી અને 'ભણ્ય વાચી આનો વિસ્તાર કરો' એમ કહી સ્વહસ્તે તેને લઈને આ પુસ્તક મા । હાથમા આપી આ ગ્રથ પ્રમાણભૂત કર્યો પછી પોતે જેના અર્થ કરવા ચાહે છે તે પદ લઈ રાજા એટલે બાદશાહ અકબર તે ન એટલે આપણને પ્રજાને સૌખ્ય આપે છે આ ગ્રથની અતે કવિએ 'અકબર ગુણ વર્ણન અષ્ટક' મૂકેલ છે તે ખાસ અવગાહવા યોગ્ય છે-

વિસવાદ શતક સ૦ ૧૬૮૫ આમા સૂત્રોઆદિમા પરસ્પર જે વિરોધ ભાસે છે તે બતાવ્યો છે

सूत्र प्रकरण गाथा प्रबन्ध सबन्ध चार चरितेषु ।
ये केऽपि विसवादा दृष्टा उद्धारिता इह ते ॥ पी री ३ पृ २८०

વિશેષ સગ્રહ સ૦ ૧૬૮૫ લૂણકર્ણસરમા

આ રચનામા શ્રી જિનસિહ સૂરિના શિષ્ય ઉપાધ્યાય સમયરાજ ગણિએ (મહવિરાજ ગુરુ—કે જે મારા વિદ્યાગુરુનાજ શિષ્ય થાય) મારા પર અનુગ્રહ કરેલો છે એમ પોતે જણાવે છે

ગાથાસહસ્રી સં૦ ૧૬૮૬ (પી. રી. ૩ પૃ. ૨૮૮).

આમા જમાલિ આદિ નિન્હવોની આવશ્યક ચૂર્ણિમાથી ૧૬ ગાથા ટાંકી કહેલ છે કે આની વ્યાખ્યા સંબંધ સહિત મારા રચેલ વિશેષ સંગ્રહમાંથી વિદિત થશે. આમાંની અનેક ગાથાઓ જૈન ઇતિહાસ અને સાહિત્ય માટે ઉપયોગી થાય તેવી છે.

> गाथा कियत्य प्रकृता कियत्य श्लोकाश्च काव्यानि कियंति संति ।
> नानाविध ग्रंथ विलोकन श्रमादेकीकृता अत्र मया प्रयत्नात् ॥

જયતિહુયણ નામના સ્તોત્રપર વૃત્તિ સ૦ ૧૬૮૭ પાટણમાં.

[૨૦] દશવૈકાલિક સૂત્રપર શબ્દાર્થ વૃત્તિ. ટીકા શ્લો. ૩૩૫૦ સં૦ ૧૬૯૧ ખંભાતમાં.

વૃત્તરત્નાકર વૃત્તિ સ૦ ૧૬૯૪ જાલોરમા.

[૨૧] કલ્પસૂત્રપર કલ્પકલ્પલતા નામની વૃત્તિ શ્લો૦ ૭૭૦૦.

નવતત્વપર વૃત્તિ.

વીર ચરિત્ર સ્તવ એ નામના જિનવલ્લભસૂરિ કૃત સ્તવન પર ૮૦૦ શ્લોકની ટીકા વીરસ્તવ વૃત્તિ (દુરિયરવ સમીર વૃત્તિ)

સંવાદસુંદર ૩૩૩ શ્લો૦

ચાતુર્માસિક વ્યાખ્યાન.

રઘુવંશ વૃત્તિ (પત્ર ૧૪૫)

કવિ કાલિદાસ કૃત રઘુવંશ નામનો ગ્રંથ જૈનોમાં સાહિત્ય અર્થે પઢાવવામા આવતો અને તેથી તેના પર વૃત્તિઓ પણ જૈન સાધુઓએ અનેક કરેલી જોવામાં આવે છે.

આ રીતે સંસ્કૃત ભાષામાં કૃતિઓ તેમણે કરી છે. વૃત્તિ-ટીકા ઉપરાંત અનેક ગ્રંથો સૂત્રો વાચી તે સર્વેનુ દિગ્દર્શન કરાવી તેમા રહેલા વિસંવાદ શોધી પોતાનું બહુશ્રુતપણું દાખવ્યુ છે.

---

૨૦ દશવૈકાલિક—સૂત્ર એ પ્રાચીન શય્યંભવ સૂરિકૃત જૈનાગમ છે તે પર પ્રસિદ્ધ હરિભદ્ર સૂરિએ ટીકા કરી છે. કર્તા કહે છે કે તે ટીકા વિષમ છે તેથી શિષ્યોને અર્થે શીઘ્રબોધ થાય તે હેતુથી સુગમ કરી છે. (મુદ્રિત મ૦ ૧૯૭૫)

૨૧. કલ્પસૂત્ર—એ પણ પ્રાચીન, ભદ્રબાહુકૃત જૈનાગમ છે. આ પરની કર્તાની ટીકા ડૉ૦ જેકૉબી (કે જેણે અંગ્રેજીમા આ સૂત્રનો અનુવાદ કરેલ છે. જુઓ સેક્રેડ બુક્સ ઓફ ધ ઇસ્ટ) ના કહેવા પ્રમાણે જિનપ્રભ મુનિએ કલ્પસૂત્ર પર રચેલી સંદેહવિષૌષધિ નામની ટીકાનો માત્ર સંક્ષિપ્ત સાર-abstract-છે. આ જિનરાજસૂરિ (કે જેનું સૂરિપદ સ૦ ૧૬૭૪થી મરણ સં૦ ૧૬૮૬ સુધી રહ્યુ) ના રાજ્યમા ને જિનસાગર સૂરિના યૌવરાજ્યમા લૂણકર્ણસર ગામમા આરંભ કરીને તેજ વર્ષમા ઔપારિણી પુરમા પૂર્ણ કરેલ છે તેથી આ રચના મ૦ ૧૬૭૪ થી ૧૬૮૬ ની વચમા કરી છે ને તે દરમ્યાનમા

ગૂર્જર ભાષાની પદ્યકૃતિઓ

૧ ચોવીશી (૨૪ તીર્થંકરના સ્તવનો) સં૦ ૧૬૫૮ વિજયાદશમી અમદાવાદમા આને કવિએ 'ચતુર્વિશતિ તીર્થંકરગીતાનિ' એ નામ આપ્યુ છે આની શુદ્ધ પ્રત આણંદજી કલ્યાણજી હસ્તકના પાલીતાણાના ભંડારમા છે

૨ શાંબપ્રદ્યુમ્ન પ્રબંધ રચ્યા સં૦ ૧૬૫૯ વિજયાદશમી ખંભાતમા સ્તંભન પાર્શ્વનાથના પસાયથી

ભાષામા મોટો ગ્રંથ રચવાનો આ તેમનો પહેલો પ્રયાસ છે એમ તે જણાવે છે

શક્તિ નહી મુઝ તેહવી બુદ્ધિ નહી સુપ્રકાશ
વચનવિલાસ નહી તિસ્યઉ એ પણિ પ્રથમ અભ્યાસ

કૃષ્ણના કુંવર શાંબ અને પ્રદ્યુમ્ને આખરે નેમીશ્વર પાસે દીક્ષા લીધી અને વિમલ ગિરિ પર સંલેખના કરી મોક્ષે ગયા આ બંનેનો અધિકાર આઠમા અંગમાથી (અંતકૃત્ દશાંગ-અંતકૃત્ એટલે તદ્ભવ મુક્ત થનાર-ચરમભવી મહાત્માઓ સંબંધીનું સૂત્ર) લઇ આ પ્રબંધ બે ખંડમા રચ્યો છે ગાથા ૫૩૫, ઢાલ ૨૧, શ્લોક ૮૦૦ છે અને તે જેસલમેરના વતની નાનાવિધશાસ્ત્ર વિચાર રસિક લોકા સાહ મિવરાજની અભ્યર્થનાથી રચેલો છે એવુ એક જૂની પ્રતમા લખેલુ છે સં૦ ૧૬૭૦ ની લખેલી સારી અને જૂની પ્રત લીંબડીના ભંડારમા મોજૂદ છે

૩ દાન શીલ તપ ભાવના સંવાદ P (અથવા સંવાદ શતક)[22] સં૦ ૧૬૬૨ સાંગાનેરમા 'પદ્મપ્રભુ સુપસાઉલે'-

જૈનમા ધર્મના ચાર પ્રકાર નામે દાન, શીલ, તપ અને ભાવના જણાવ્યા છે-તે દરેક પોતપોતાને વડો માને છે અને એ રીતે ચારે પોતપોતાના ગુણ ગાઇ પોતપોતાથી કેટલા સુખી અને સિદ્ધ થયા તે જણાવી તકરાર કરી આપ વડાઈ વીરની પરિષદ્મા, વીર પ્રભુ પાસે કહે છે ત્યારે છેવટે વીર સમાધાન કરી જણાવે છે કે –

સુરસુંદર્યસમ્માન સ ૧૬૮૫ મા પોતે હતા તે વિશેષસમરના રચનામાન અને રચત પરથી જણાય છે તેથી આ રચના સં૦ ૧૬૮૫ મા જ પૂર્ણ થયેલી છે

આ P ચિહ્ન મુદ્રિત થયેલ ગ્રંથ સૂચવે છે

૨૨ કોઈ પ્રતમા પાઠાંતર બામક ને બદલે છાસઠ' છે પણ ઘણી પ્રતોમા બાસઠ છે તેથી તે જ પાઠ યોગ્ય લાગે છે આ સંવાદો સંવાદ શતક કર્ત્તાએ પોતે એક ઠેકાણે કહેલ છે પોતાની સીતારામ ચોપાઇમાં એક ઢાલનો રાગ મૂકતા જણાવ્યુ છે કે રાગ ધન્યાસિરી-શીલ કહે જગિ હૂં વડું મુઝ વાત સુણો એક મીઠીરે (કે જે આ સંવાદમા બીજી ઢાલમા શીલ કહે છે) એ સંવાદ શતકની બીજી ઢાલ.' કુલ ૫ ઢાલ છે અને ૫૦ કડી છે આ સંવાદ સજ્ઝાયમાળા અને રત્ન સમુચ્ચયમા મુદ્રિત થયેલ છે

કો કેહની મ ઢંગ તુમ્હે નિંદ ને અહંકાર
આપ આપણે ઠામે રહો સહુકો ભલો મનાર
તોપણ અધકો ભાવ છે, એહડી મમગ્ત્ય
દાન શીલ તપ ત્રિણે ભલા, પણ ભાવ વિના અકયત્થ.
અંજન આખે આજતા અધિકો આણી રેખ
રજમાહે તજ કાહના, અધિકો ભાવ વિશેષ

૪ **ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધનો રાસ.** P મારૂ સં૦ ૧૬૬૫ જેઠ શુ ૧૫ આગ્રામાં.

પ્રત્યેક બુદ્ધ થઈ સિદ્ધ થયેલા જૈન કહેલા કરકંડુ, દુર્મુખ, નેમિરાજ અને નિર્ગતિ (નિગ્ગઇ) એ ચાર સંબંધી ચાર ખંડમાં આ રાસ વિભક્ત છે. પ્રત્યેક ખંડ સં૦ ૧૬૬૪ માં પૂર્ણ કર્યો છે પણ દરેકની તીથિ જૂદી જાદી છે. ૧ કરકંડુ પરનો સં૦ ૧૬૬૪ ફાગણ સિદ્ધિયોગ બુધવારે. ઢાલ ૧૦. ગાથા ૧૮૭. શ્લોક ૨૫ ૨ દુમુહપર ચૈત્ર વદ ૧૩ શુક્ર. ઢાલ ૮. ૩ નેમિરાજ પર-તીથિ નથી જણાવી ઢાલ ૧૭ ૪ નિગ્ગઈ પરનો મારૂ સંવત ૧૬૬૫ જેઠ શુદ ૧૫ આગ્રામાં 'વિમલનાથ પસાઉલે' સાન્નિધ્ય 'કુશલસૂરીંદ'; ઢાળ ૯. આચારે ખંડ નાગડ-ગોત્રના સંઘનાયક સૂરશાહના આગ્રહથી રચ્યા છે. આખો રાસ અતિ સુંદર અને રસમય છે. મદનરેખા (મયણરેહા) સંબંધી આખ્યાન ત્રીજા ખંડમાં અંતર્ગત થાય છે. મુંબઇના શ્રાવક ભીમસી માણેકે આ મુદ્રિત કરેલો છે ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધ પર તિલકાચાર્યકૃત ૨૧૫ પત્રમાં, ૧૧૩૮ શ્લોકમાં, ૬૦૦ શ્લો. અને ૩૫૦ શ્લોકમાં રચાયેલી એમ ચાર પુસ્તક રૂપે કથાઓ જૈન ગ્રંથાવલીમાં નોંધાઈ છે.

૫ **પોષધવિધિ સ્તવન** (એક નાની કવિતા) સં૦ ૧૬૬૭ માગશર શુદ ૧૦ ગુરૂ મરોટમાં.

૬ **મૃગાવતી ચરિત્ર રાસ-ચોપઇ.** સં૦ ૧૬૬૮ મુલતાનમાં

વત્સદેશની રાજધાની કોશામ્બીના રાજા શતાનીકની રાણી અને ઉદાયનની માતા મૃગાવતી પતિ પોતાના પુત્રને સગીર મૂકી સ્વર્ગસ્થ થતા પોતે રાજ્ય ચલાવે છે તે વખતે તેના પર આસક્ત બની અવંતીનો રાજા ચંડપ્રદ્યોત આક્રમણ કરે છે, પણ તેને સમજાવી રાજ્યને દુર્ગઆદિથી પ્રબલ કરી આખરે મહાવીર ભગવાન પાસે પોતે દીક્ષા લે છે. આ પ્રમાણે શીલ સાચવી પુત્રહિતાર્થે રાજ્યવ્યવહાર કરી ધર્મ વૈરાગ્ય પામી મુક્તિ મેળવે છે, તે જૈન સતી પર આ સુંદર આખ્યાન છે જુદી જુદી ગુજરાતી, મરૂધરની, સિંધી, પૂર્વની નવી નવી ઢાળોમાં ત્રણ ખંડોમાં આ 'મોહનવેલી' ચોપઈ રચેલી છે. પ્રથમ ખંડમાં ૧૩ ઢાળ, ગાથા ૨૬૬ અને બીજામાં પણ ઢાળ ૧૩, ગાથા ૨૬૬, ત્રીજામાં ઢાલ ૧૨, ગાથા ૨૧૧ છે. મૂળ જેસલમેર નિવાસીને મુલતાનવસતા રીહડ ગોત્રના કરમચંદ શ્રવક વગેરે માટે મુલતાનમાં કે જ્યાં 'સિંધુ શ્રાવક સદા સોભાગી ગુરૂગચ્છ કેરા બહુ રાગી' —સિંધી શ્રાવકો વસતા હતા ત્યાં રચેલ છે.

આ રચનાની પહેલા પોતે સાબપ્રદ્યુમ્નની ચોપાઈ રચી હતી એવું આના મંગલાચરણમાં જ જણાવ્યું છે

૭ કર્મ છત્રીશી–P સં૦ ૧૬૬૮ માહ શુદ ૬ મુલતાનમાં ૩૬ કડીનું કર્મવશ સર્વ જીવ છે એમ જણાવી તે માટેના દૃષ્ટાંત આપ્યા છે (પ્ર૦ ચૈત્યવંદન સ્તુતિ સ્તવનાદિ સંગ્રહ પુના)

૮-૧૦ પુણ્ય છત્રીશી (સં૦ ૧૬૬૮ સિદ્ધપુર) શીલ છત્રીશી અને સંતોષ છત્રીશી } સં૦ ૧૬૬૯ દરેકમાં ૩૬ કડી

૧૧ ક્ષમા છત્રીશી નાગોરમાં

(આદરજીવ ક્ષમા ગુણ આદર એથી શરૂ થતું ૩૬ કડીનું પ્રસિદ્ધ કાવ્ય)

૧૨ સિંહલ સુત પ્રિયમેલક રાસ સં૦ ૧૬૭૨ મેડતામાં

દાન વિષય ઉપર આ આખ્યાન છે સાધુને દાન દેવાથી સિંહલસુત સિંહલસિંહ કેવા સુખ પામે છે તે અને તેમાં પ્રિયમેલક નામના તીર્થનું માહાત્મ્ય જણાવી તે ઉત્તમ શ્રાવક તરીકે ધર્મના રૂડા કામ કરે છે અને સમાધી મૃત્યુ પામી સુરપદવી લહે છે એ બતાવ્યું છે ઢાલ ૧૦ છે આ પોતાની સ્વકલ્પિત કથા લાગે છે

૧૩ નલદમયંતી રાસ સં૦ ૧૬૭૩ વસંત માસમાં મેડતામાં

કવિ પ્રેમાનંદે નલાખ્યાન રચ્યું છે, તેની પહેલાના એકામાં કવિ સમયસુંદરે જૈન કથામાં નિરૂપેલું નલદમયંતી ચરિત્ર પરથી ભાષામાં આ રસમય રાસ રચ્યો છે [24]તિલકાચાર્ય કૃત દશવૈકાલિક વૃત્તિ અને પાંડવ નેમિ ચરિતમાંથી અધિકાર ઉદ્ધરી ' કવિયણ કેરી કિહાં કણિ ચાતુરી ' કેળવી છ ખંડમાં, સર્વ ગાથા ૯૧૩, શ્લોક સંખ્યા ૧૩૫૦, અને

---

૨૩ આમાં પ્રાચીન સુભાષિત મૂકેલ છે કે—

યત–ઘરિ ઘોડો નઇ પાલો જાય ઘરિ ઘેવુ નૈ લૂકઉ ખાય
ઘરિ પ ય ઠ ને ધરતી સુઇ તિણરી બ ધ ઋિ જીવનાને રૂઇ

આની પ્રત મારી પાસે છે પત્ર ૧૧ પંક્તિ ૧૩ બીજી પ્રતો પોરવાડના મહાવીર ભંડાર તેમજ ગારીયાધરના પાલણપુરના ભંડારોમાં છે

૨૪ તિલકાચાર્ય–શ્રી ચંદ્રપ્રભ–ધર્મઘોષ–ચક્રેશ્વરસૂરિ–શિવપ્રભસૂરિ અને તેના શિષ્ય તેમણે આવશ્યક સૂત્ર લઘુવૃત્તિ ૧ ૬૫ શ્લોકમાં સં ૧૨૯૬ માં ચૈત્યવંદના વંદનક પ્રત્યાખ્યાનવૃત્તિ શ્લો. ૫૫૦, પ્રાવકપ્રતિક્રમણ સૂત્રવૃત્તિ શ્લો ૨ ૦ સાધુપ્રતિક્રમણવૃત્તિ શ્લો ૨૮૬ ઉક્ત દશ વૈકાલિક સૂત્રવૃત્તિ શ્લોક ૭૦૦ સં ૧૩૪૬ માં, જીતકલ્પવૃત્તિ શ્લો. ૧૭ સં ૧૨૭૪ માં શ્રાદ્ધજીતકલ્પ મૂળગાથા ૩૬ અને તેના પર સ્વોપજ્ઞવૃત્તિ શ્લો ૧૧૫ પૌર્ણમિક સામાચારી શ્લો ૨૫ નેમિનાથ ચરિત્ર શ્લો ૩૫૦ અને પ્રત્યેક બુદ્ધ ચતુષ્ટય કથા રચેલ છે આ પૈકી છેલ્લો ગ્રંથ પણ કવિએ ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધનો રાસ રચતા કામ જોયો હોય

ઢાલ ૩૮ મા રચના કરી છે આની પ્રત મુંબઈની મોહનલાલજી સેંટ્રલ લાયબ્રેરીમાં; આણંદજી કલ્યાણજીના પાલીતાણાના ભંડારમા, લીંબડીના ભંડાર વગેરે સ્થળે વિદ્યમાન છે

૧૪. પુણ્યસાર ચરિત્ર. સં૦ ૧૬૭૩ આની પ્રત મને પ્રાપ્ત થયેલ નથી.

૧૫. રાણકપુર સ્તવન સં૦ ૧૬૭૬ માગશર. રાણકપુરમા

મારવાડમા સાદડી પાસે રાણકપુરમા સોમસુંદરસૂરિથી પ્રતિષ્ઠિત થયેલું ૯૯ લાખ ખર્ચી ધનાશા પોરવાડે સં૦ ૧૪૯૧ મા બંધાવેલું અતિ ઉત્તમ અને શિલ્પકારીગરીથી ભરપૂર અનેક સ્તંભોવાળુ 'ત્રિભુવન દીપક' નામનુ મંદિર વિરાજે છે તેની કવિએ જાત્રા કરી તેના ટુંક વર્ણન રૂપે આ સ્તવન રચ્યુ છે ચારે દિશાના ૨૪ મંડપ, ચાર ચતુર્મુખ (ચોમુખ) પ્રતિમા, ૮૪ દેરી, ભોયરા ત્યા ખરતર વસતિ–દેહરૂ છે.

૧૬. વલ્કલચીરીનો રાસ સં૦ ૧૬૮૧ જેસલમેરમા

ઉપરોક્ત જેસલમેરી કર્મચંદ મુલતાનમા વસતો હતો તેના આગ્રહથી આ પણ રાસ રચ્યો છે આની પ્રત પ્રવર્તક શ્રી કાન્તિવિજયજીના વડોદરાના ભંડારમા છે. અને લીંબડીના ભંડારમા છે.

૧૬અ. એકાદશી (મૌન એકાદશી) નું વૃદ્ધ (મોટું) સ્તવન.P સં૦ ૧૬૮૧ જેસલમેર પ્ર. રત્નસમુચ્ચય પૃ. ૧૭૨–૩

૧૭. વસ્તુપાલ તેજપાલનો રાસ. સં૦ ૧૬૮૨ (પાઠા ૧૬૮૬) તિયરી પુરમાં.

આ એક બહુ ટૂંકી કૃતિ છે આમા વસ્તુપાલ અને તેજપાલ જે ગૂર્જરરાજ વીરધવલના પ્રખ્યાત શૂરવીર જૈન મંત્રીઓ થયા તેમણે જે દેવલ કર્યા તેનો તથા બીજાં ધર્મ કાર્યોનો ટુંક અહેવાલ છે આની પ્રત મે લખી લીધેલી છે એક પ્રત ફાર્બસ સભા પાસે છે.

૧૮ શત્રુંજય રાસ. P સં૦ ૧૬૮૨ (પાઠા ૧૬૮૬)[૨૫] નાગોરમા શ્રાવણ વદમાં. આ રાસ ટૂંકો છે તેમા લખ્યુ છે કે સં૦ ૪૭૭ મા ધનેશ્વરસૂરિએ શત્રુંજય માહાત્મ્ય નામાનો ગ્રંથ શિલાદિત્ય હજૂર કર્યો (આ એક દંત કથા છે) તેનો કંઈક આધાર આમા લીધો છે આમા પહેલી ઢાલમા શેત્રુંજયના ૨૧ નામ, પછી તેનુ પ્રમાણ, બીજી ઢાલમા ત્યા સિદ્ધ થયેલાનાં નામ, ત્રીજી તથા ચોથી ઢાલમા તેના સોલ ઉધ્ધાર વર્ણવેલા છે, પછી માહા-

૨૫ બાસી અને છાસી એમ તેમ બાસઠ અને છાસઠ એમ પાઠાંતર બા અને છા એકબીજાને બદલે લખાઇ જવાના હસ્તદોષથી સંભવે છે આ બંને રાસો માટે જુઓ ફાર્બસ ગુજરાતી સભાના હસ્તલિખિત પુસ્તકોની સચિત્ર નામાવલી પૃ ૪૭ અને પૃ.૬૭.

ત્મ્ય બતાવી પાચમી ઢાલમા ત્યા પાપનુ આલોયણ (આલોચના) કરતા છુટકો થાય છે એ બતાવી છઠી ઢાલમા ત્યાના દેવળોનુ ટુક વર્ણન કરી-ચૈત્ય પ્રવાડિ વર્ણવી જણાવે છે કે-

ચૈત્ય પ્રવાડિ ઇણ પર કરીએ સીધા વંછિત કામ
જાત્રા કરી શેત્રુંજ તણીએ સફલ કિયા અવતાર
કુશલ ક્ષેમશુ આવિયાએ સંઘ સહુ પરિવાર-

આ રીતે સઘ સાથે પોતે જાત્રા કરી કુશલક્ષેમ આ યા ને ત્યાર પછી સ૦ ૧ ૮૨ મા નાગોરમા આ રાસની રચના કરી તા આ સઘ ક્યો તે અદર જણાવેલ સોમજીશાહ

વશ પોરવાડે પરગડો એ સામજી સાહ મલ્હાર
રૂપજી સઘપતી કરાવીઓ એ ચામુખ મુખ ઉદ્ધાર

નો સઘ કદાચ હોય એવી કલ્પના થવા સભવ છે કારણ કે તે અમદાવાદના શેઠ સોમજી સવાઇએ સ૦ ૧૬૭૫ મા આ ચૌમુખની ટોક બધાવી તેમાના બહારના ભાગને ખરતરવસહિ અને અદરના ભાગને ચૌમુખ-વસહી કહે છે મીરાતે-અહમદી કહે છે કે આ મદિર બધાવવામા ૫૮ લાખ રૂપીઆ લાગ્યા હતા

(રત્નસમુચ્ચયમા પૃ ૨૭૭ થી ૨૮૦ ને પાને પ્રસિધ્ધ થયેલ છે છેલ્લી પ્રશસ્તિ આમા છે તેથી વધારે ૧૯ મી કડી પછી ત્રણ કડી બીજી પ્રતમા વિશેષ છે તેમા જણાવેલ છે કે આ રાસ શત્રુંજય માહાત્મ્ય સાભળી તે અનુસાર રચ્યો છે અને તે જેસલમેરથી ભણશાલી થિરે શત્રુંજયનો સઘ કાઢ્યો હતો, તો આ થિરનો સઘ જ ઉપર જણાવેલ કુશલક્ષેમથી આવેલ સઘ હોવાનુ સ્પષ્ટ પ્રતીત થાય છે)

૧૮ સીતારામ પ્રબધ ચોપઇ સ૦ ૧૬૮૩ મેડતામા

આ રાસ ઘણો મોટો છે અને જૈન રામાયણ આખી તેમા મૂકી છે આમા પ્રથમ જ પોતે આની અગાઉ ચાર રાસ રચ્યા છે તેમા ' હે સરસ્વતિ તે મદદ કરી હતી તેમ આમા પણ મદદ કરજે ' એવુ જણાવે છે —

સમરૂં સરસતિ સામિણી એક કરૂં અરદાસ
માતા દે જે મુઝને કરૂં વચન વિલાસ
સબ પ્રજૂન કથા સરસ (૧) પ્રત્યેક બુદ્ધ પ્રબધ (૨)
નલ દવદતી (૩) મૃગાવતી (૪) ચઉપઇ ચ્યાર સબધ
આઇ તું આપી તિહા સમથી દીધો સા
સીતારામ સબધ પણિ સરસતિ કરે પ્રસાદ

આ પદ્મ ચરિત્ર (પઉમ ચરિયમ્)-સીતાચરિતના આધારે રચેલ છે હિન્દુ રામાયણમાથી અનેક આખ્યાનો જૂદા જૂદા હિન્દુ કવિએ લખેલા છે કવિ કહે છે કે-

જિનશાસન શિવશાસને સિતારામ મુનિ સુણીજેરે
ભિન્નભિન્ન શાસન ભણી કો કો વાર્ત્તા ભિન્ન કહિજેરે

આ નવ ખંડમા લગભગ ૩૭૦૦ ગાથાનો આ રાસ, ગોલછા ગોત્રીય પ્રસિધ્ધ રાયમલના પુત્રરત્ન અમીપાલ અને નેતસી, તથા ભત્રીજા રાજસીના આગ્રહે રચેલો છે. તેમાં કવિએ ગૂજરાતી, સિંધી, મારવાડી, મેવાડી, હુંઢારી, દિલ્હી વગેરે અનેક સ્થાળોના ગીતો તથા દેશીઓ લઇ તેની લયમાં પોતાની દેશીઓ બનાવી કાવ્યચાતુરી એવી કુશલતાથી રશને ખીલવી બતાવી છે કે ન પૂછો વાત આ કૃતિ તો કવિની અદભૂત થઈ છે અને તે ગૂર્જર કવિ શિરોમણી પ્રેમાનંદથી અનેકધા ટક્કર મારી કેટલીક બાબતમા ચડી જાય છે કવિ પોતે આ કૃતિને માટે મગરૂર છે એમ તે છેલ્લે જે જણાવે છે તે પરથી સ્પષ્ટ થશે.—

સીતારામની ચોપઇ જે ચતુર હુઇ તે વાચો રે,
રાગ રતન જવહર તણો, કુણ ભેદ લહે નર કાચો રે—
નવરસ પોષ્યા મેં ઇહા, તે સુઘડો સમજ લેજ્યો રે,
જે જે રસ પોષ્યા ઇહા, તે ઠામ દેખાડિ દેજ્યો રે—
કે કે ઢાલ વિષમ કહિ તે, દુષણ મત ધો કોઇ રે,
સ્વાદ સાખૂણી જે હુવે તે લિગ હદે કદે ન હોઇ રે—
જે દરબારે ગયો હુસે હુંઢાડિ મેવાડિ ને ઢિલ્લી રે,
ગુજરાત મારૂઆડિમેં તે કહિસે ઢાલ એ ભલ્લી રે—
મત કહો મોટિ કા જોડી, વાચતા સ્વાદ લહેસો રે,
નવનવા રસ નવનવી કથા, સાભલતા સાબાશ દેશો રે—

આ રાસ ખાસ પ્રકટ કરવા યોગ્ય છે. દેવચંદ લાલભાઈ પુસ્તકોદ્ધાર ફંડવાળા પાસેથી આની પ્રત મને જોવા મળી હતી. તેઓ પ્રકટ કરવા ઇચ્છતા હોય એમ જણાતું હતું, પણ આને ત્રણ ચાર વર્ષ થયા છતા કંઈપણ તે માટે પ્રયાસ થયો નથી જણાતો તે શોચનીય છે. આ રાસની કવિ સ્વહસ્તલિખિત પ્રત આગ્રાભંડારમા છે.

૨૦ **બારવ્રતરાસ** સં. ૧૬૮૫

૨૧ **ગૌતમપૃચ્છા** સ ૧૬૮૯

૨૨ **થાવચ્ચા ચોપાઇ** સં. ૧૬૯૧

[થાવચ્ચા પુત્ર કથા શ્લોકબદ્ધ પત્ર ૧૧ ની જૈનગ્રંથાવલિમા નોધાયેલી છે]

૨૩ **ચંપક શ્રેષ્ઠીની ચોપાઇ** સ. ૧૬૯૫ જાલોરમા.

આ અનુકંપાદાન ઉપર કથાનક છે. પોતાના અધિક સ્નેહી શિષ્યના આગ્રહથી. બે ખંડ. કુલ ગાથા ૫૦૬. ગ્રંથાગ્રથ શ્લો. ૭૦૦. પ્રત આણદજી કલ્યાણજીના તથા ઘોરાજીના ભંડારમા છે.

આમા એ પણ બતાવ્યું છે કે મરત ઉપર આધાર રાખનાર હોય છે પણ C મ અને ભાવી બંનેને ભાવી કરતા ઉદ્યમ અધિક છે

સહુ કો લોક લહઇ છઇ સરવુ, તે બોલ કેના વાચુ
ઉદ્યમ છઇ ઇમ પણિ ભાવી અધિકુ સમયસુંદર કહઇ સાચુ

[ચંપકશ્રેષ્ઠિ કથા એ નામથી (૧) ૩૫૫ શ્લોકમા, ( ) જયસોમ (કવિ સમયસુંદર સાથે જેણે ઉપાધ્યાય પદ લીધું તે ગુણવિનયના ગુરૂ) કૃત, (૩) વિમલગણિ કૃત, એમ ત્રણ જૈન ગ્રંથાવલિમા નોધાએલ છે]

૨૪ ધનદત્ત ચોપાઇ સ૦ ૧૬૯૬ આસો માસ અમદાવાદમા

આ વ્યવહારશુદ્ધિ પર કથાનક છે શ્રાવકે વ્યવહારમા કેવી રીતે વર્ત્તવુ એ આનો ઉદ્દેશ છે શુદ્ધ વ્યવહાર-ચોખવટભર્યો વ્યવહાર કર્યો તે કવિ બતાવે છે શ્રાવકના ૨૧ ગુણ ગણાવે છે

વિણજ કરતા સાચીયઉ માહરૂ ઓછુ નાપઇ હાથ
અધિકુ પિણ તોલઇ નહી સાહજી મનમાહિ આણઇ સાચ-
સુણઉ રે ભવિકજન શ્રાવક ગુણ ઇકવીસ દાખિ પરઇ

સખર વયન ન ભઇ નિખર સા નિખર સખર ન દેઇ
જિણ વેલા દેવુ કહ્યુ મા તિણિ વેલા તે દેઇ-સુ

કૂડુ કદિ બોલઇ નહિ સા સાચુ કહઇ નિતમેવ
પહિલઉ વ્યવહાર શુદ્ધિ ગુણ સા ઇમ કહુ અરિહંતદેવ સુ

લગભગ દોઢસો ટુકનો આ રાસ છે આની પ્રત અમદાવાદ મા, ઘો ૧જી અને પાટણના ભંડારમા છે પાટણના હાલાભાઇના ભંડારના ડાબડા ૮૭ મા પત્ર ૮ ની આ રાસની એક પ્રત છે તેની અંતે લખ્યુ છે કે 'સર્વ ગાથા ૧૬૧ શ્રી સમયસુંદર મહોપાધ્યાયાના પૌત્ર પં હર્ષકુશલ ગણિના સંશોધિતા સા. હરજી ધનજી સુશ્રાવિકાગ્રહેણ ' પત્ર ૯ આ પરથી જણાય છે કે કવિની શિષ્ય પરંપરા હતી અને તે પૈકી તેના શિષ્યના શિષ્યનું નામ પંડિત હર્ષકુશલ હતું

[ધનદત્ત કથા (૧) શ્લોકબદ્ધ પત્ર ૨૪, (૨) ગદ્યમા પત્ર ૧૦ (૩) પત્ર ૧૭ માણિક્યસુંદર કૃત, (૪) ૩૩૦ શ્લોકની, એમ ચાર અને સૌથી પ્રાચીન તાડ પત્રમા લખેલી અમરચંદ્ર કૃત એમ પાચ જૈન ગ્રંથાવલિમા નોધાયેલ છે]

૨૫ સાધુવંદના સ૦ ૧૬૯૭ (લી૦ ભંડાર)

૨૬ પાપ છત્રીશી સ૦ ૧૬૯૮ અહિમ પુરમા (પૂરણચંદજી નહાર પાસે પ્રત છે)

૨૭ રુસઠ રાસ. આ પ્રાપ્ત થયેલ નથી. [મૂળ આ કથા પ્રાકૃતમાં દેવેંદ્રસૂરિ કૃત ૫૩૭ ગાથામાં અને બીજી પ્રાકૃતમાં ૩૫૦ ગાથા, જૈન ગ્રંથાવલિમાં નોંધાયેલ છે.]

૨૮ પુણ્યાઢય રાસ (ડહેલાનો અપાસરો તથા રત્નવિજયજીનો ભંડાર. અમદાવાદ)

૨૯ પુંજા ઋષિનો રાસ.

નાગપુરીય તપાગચ્છની પટ્ટાવલિમાં થએલા એક મુનિના તપનું વર્ણન કરવા સમયસુંદર ઉપાધ્યાયે આ રાસ કરેલો જણાવ્યો છે. પાર્શ્વચંદ્રસૂરિ સંતાનીય વિમલચંદ્રસૂરિ થયા તેની પાસે પુંજા મુનિએ રાજનગરમાં વિ સં૦ ૧૬૯૦ માં અષાઢ શુદિ ૯ ને દિને દીક્ષા લીધી, અને ત્યાર પછી ઉગ્ર તપ ક્રિયા કરી ૧૨૩૨૨ (?) ઉપવાસ કર્યા અને બીજાં અનેક તપ કર્યા. આ સર્વ તપની સંખ્યા વગેરે ઉક્ત રાસમાં આપી છે.

આ સિવાય કવિએ અનેક સ્વાધ્યાયો (સઝાયો), સ્તવનો, પદ વગેરે ટુકી કવિતાઓ રચેલી છે-

સઝાયો—મહાસતી યા મહાપુરૂષો પર લખેલી, અને બીજી વૈરાગ્યોપદેશક સઝાયો એમ બે પ્રકારે છે.

(૧) રાજુલ પર સઝાય. (પ્રથમ ચરણ-રાજુલ ચાલી રંગ શું રે)
ગજસુકુમાલ સ૦ (નયરી દ્વારામતિ જાણિયેજી)
અનાથી મુનિ સ૦ (શ્રેણિક રયવાડી ચડયો)
બાહુબલિ સ૦ (ગજતણા અતિ લોભિયા...વીરા મ્હારા ગજથકી ઉતરો)
ચેલણા સ૦ (વીર વાંદી વલતા થકાંજી ...વીરે વખાણી રાણી ચેલણાજી)
અરણક મુનિ સ૦-(અરણિક મુનિવર ચાલ્યો ગોચરી)
કરકંડુ સ૦-(ચંપા નગરી અતિ ભલી, હું વારી લાલ)
નમિરાજર્ષિ સ૦. પ્રસન્નચંદ્ર રાજર્ષિ સ૦. સ્થૂલભદ્ર સ૦
મેઘરથ રાય સ૦-દશમે ભવે શ્રી શાંતિજી, મેઘરથ જીવડો રાય-રૂડારાજા....ધન્ય ધન્ય મેઘરથ રાયજી, જીવદયા ગુણખાણ..)
શાલિભદ્ર સ૦ (પ્રથમ ગોવાળિયા તણે ભવેજી, દીધું મુનિવર દાન....)
ભૂદેવ-નાગિલાની સ૦ (અર્ધ મંડિત ગોરી નાગલા રે-આ દેશી વિનય વિજય અને યશોવિજય કૃત શ્રી પાળરાસમાં લેવાઈ છે) અપ્રગટ
ધનાની સઝાય-(જગિ જીવન વીરજી, કવણ તમારો શીષ)-અપ્રકટ.

(૨) નિંદા પર-(નિંદા મ કરજો કોઇની પારકી રે)
માયા પર-(માયા કારમીરે માયા મ કરો ચતુર સુજાણ)
દાનશીલ તપ ભાવ પર-(રે જીવ જિન ધર્મ કીજીએ)

ધોબીડા પર-(ધોબીડા તું ધોજે મનનું ધોતિયું રે)

પંચમઆરા

(શ્રાવકના) એકવીસ ગુણ સં૦ (પુરણચંદજી નહાર-કલકત્તા પાસે પ્રત છે)-
આ કદાચ વ્યવહાર સુદ્ધિ રાસનો ભાગ હોય

સ્તવનો

(૧) મુનિસુવ્રત સ્વામી સ્ત૦ (પખવાસાનું સ્ત૦)-૧૫ દિવસના ઉપવાસ કરવાના
તપ ઉપર-(જંબૂદ્વીપ સોહામણો દક્ષિણ ભરત ઉદાર)

ઋષભદેવ સ્તવન

તીર્થમાલા સ્તવન (શત્રુંજયે ઋષભ સમોસર્યા)

રાણકપુર સ્ત૦ સં૦ ૧૬૭૬ (રાણકપુર રળિયામણું રે શ્રી આદીશ્વર દેવ મન મોહ્યું રે)

અષ્ટાપદ ગિરિ સ્ત૦(મનડો અષ્ટાપદ મોહ્યો માહરોજી નામ જપું નિશિદીસજી)

સીમંધર સ્ત૦ (ધન ધન ક્ષેત્ર મહાવિદેહજી)

શત્રુંજય મંડણ શ્રી આદિનાથ સ્તવન સં૦ ૧૬૯૮ માં કવિના હાથનું લખા
યેલું પંડિત લાલચંદ પાસે છે 'સંવત સોલ ૯૮ વર્ષે ભાદ્રવા સુદિ ૧૩ દિને
લિષિત ॥ સ્વયમેવ ॥' એમ છેલ્લે ઉલ્લેખ છે તેમાંની ૨૨ મી કડી

'ચંચલ જીવ રહે નહીંજી રાચઈ રમણી રુપ,
કામ વિટંબણ સી કહુંજી તું જાણઈ તે સરુપ

તે જિન હર્ષે પોતાના ' આદિજિન વિનતિ ' સ્તવનમાં થોડા ફેરફાર સાથે લીધી
જણાય છે

(૨) પંચમી તપ પર નાનું સ્ત૦-(પંચમી તપ તમે કરો રે પ્રાણી)

પંચમી તપ પર વૃદ્ધ (મોટું) સ્ત૦-ઢાલ ૩નું (પ્રણમી શ્રી ગુરૂપાય નિમલ જ્ઞાન ઉપાય)
જ્ઞાન પંચમી એ જૈનોમાં જ્ઞાન વૃદ્ધિ અર્થે એક ધાર્મિક પર્વ છે આમાં
જણાવ્યું છે કે

જ્ઞાન વડો સંસાર જ્ઞાન મુગતિ દાતાર
જ્ઞાન દીવો કહ્યો એ સાચો સદ્દહો એ
જ્ઞાન લોચન સુવિલાસ લોકાલોક પ્રકાશ
જ્ઞાન વિના પશુ એ નર જાણો નિશ્ચુ એ

એકાદશી વૃદ્ધ સ્ત૦ ૧૩ કડીનું (સમવસરણ બેઠા ભગવંત, ધરમ પ્રકાશે શ્રી
અરિહંત). જૈન એકાદશી નામના ધાર્મિક પર્વ પર જેસલમેરમાં સં૦ ૧૬૮૧

ઉપધાન તપ સ્ત૦-(શ્રી મહાવીર ધરમ પરગાસે, બેઠી પરષદ બારજી.)
પોષધવિધિ સ્ત૦-

(૩) વિનતિ એટલે સંબોધન રૂપે આપવીતિ-સ્વદોષ જણાવી પ્રભુની કરૂણા અને દયા માગવા માટે જેમા આર્જવ પૂર્વક વિનતિ કરવામા આવી છે તેવા વિનતિ સ્તવનો.

મહાવીર વિનતિ સ્ત૦ (વીર સુણો મોરી વિનતિ, કરજોડી હો કહું મનની વાત) આ જેસલમેરમા વાચનાચાર્ય પોતે હતા ત્યારે બનાવ્યું છે.

અમર સરપુર મંડન શીતલનાથ વિનતિ સ્ત૦ (મોરા સાહેબ હો. શ્રી શીતલનાથ કિ, વીનતી સુણો એક મોરડી)

આલોયણ (આલોચના) રૂપે વિનતિ સ્ત૦

(૪) છંદ—પાર્શ્વનાથ છંદ (આપણ ઘર બેઠા લીલ કરો.)

(૫) દાદાજી સ્ત૦ (ખરતર ગચ્છમા પોતાની ગુરૂ પરંપરામાં થયેલ જિન કુશલ-સૂરિજી 'દાદાજી' તરીકે ઓળખાય છે. ઘણા ચમત્કારી હોઈ તેમણે સમરતાં ઘણાને પરચા આપ્યા છે એમ મનાય છે. એવો પરચો કવિને મળ્યો હતો તેવું આ સ્તવનમાં જણાવેલ છે, તેમજ પોતાની કૃતિનાં પણ સ્તુતિ રૂપે તેમનુ સાનિધ્ય લઈને આહ્વાહન કરેલું છે. આદિ ચરણ—આયો આયોજી સમરતા દાદોજી આયો)

સ્તુતિઓ. પ્રભુ સ્તુતિ.

વિમલાચલ ઋષભ સ્તુતિ.

[૨૬]કેટલાંક પદો. વૈરાગ્ય-ઉપદેશ બોધક ટૂંકા કાવ્યોને 'પદ' એ નામ અપાય છે. જે મળેલા તે આ નિબંધમા ઉદ્ધૃત કર્યા છે આ બધા હિન્દી ભાષામાં છે.

અન્ય કૃતિઓ—ઉપરોક્ત સિવાય અન્ય કૃતિઓ કવિની હોવાનો સંભવ છે. એ પૈકી ઋષિમંડળ પર પોતાની ટીકા કે સ્તવન-કંઈ પણ હોવી જોઈએ.[૨૭]

૨૬ ઉપરના મઝાયો સ્તવનો, પદ વગેરે સર્વ મુદ્રિત થયા છે જુઓ જૈનપ્રબોધ સઝાયમાળા, રત્નસાગર, રત્નસમુચ્ચય જૈન કાવ્યસંગ્રહ, ચૈત્યવંદનસ્તુતિ સ્તવનાદિ સંગ્રહ.

૨૭ કારણ કે ખ૦ શિવચંદ પાઠકે ૨૪ જિન પૂજા સં ૧૭૭૯ (નંદ મુનિ નાગધરણી) વર્ષમા આશો શુદ ૨ ને શનિને દિને જયપુરમા રચેલ છે તેમા સમયસુંદરની આ કૃતિનો પોતે આધાર લીધેલો જણાવ્યો છે —

સમયસુંદર અનુગ્રહી ઋષિમંડલ, જિનકી શોભ સવાયા,
પૂજા રચી પાઠક શિવચંદૈ આનંદ સંઘ વધાયા—
રત્નસાગર ભાગ ૧ લો પૃ. ૨૮૮.

કવિની અન્યે કરેલી પ્રશંસા

આ સર્વ કૃતિઓ પરથી જણાય છે કે સમયસુંદર એ એક પ્રતીષ્ઠિત, નામી કવિ, ગ્રંથકાર અને લેખક હતા તેમના સમકાલીન, શ્રાવક-કવિ પ્રસિધ્ધ ઋષભદાસે પણ માત્ર નામથી ઉલ્લેખેલા પ્રસિદ્ધ કવિઓમા સમયસુંદરને પણ ગણાવ્યા છે —

સુસાધુ હંસ સમયો સુરચંદ, શીતલ વચન જિમ શારદચંદ
એ કવિ મોટા બુદ્ધિ વિશાલ, તે આગલિ હું મુરખ બાલ
—કુમારપાલ રાસ, રચ્યા સં૦ ૧૬૭૦

આ પરથી સં૦ ૧૬૭૦ પહેલા જ સમયસુંદરે શરચ્ચંદ્ર સમાન શીતલ વચન જેના છે એવા મોટા બુધ્ધિ વિશાલ કવિ તરીકેની ખ્યાતિ ઋષભદાસ જેવા ઉત્તમ અને તે યુગના એક આધારભૂત કવિ પાસે મેળવી હતી એ સ્પષ્ટ જણાય છે

સં૦ ૧૬૭ પછી તો તેમણે અનેક સુંદર અને મોટી કૃતિઓ રચી છે અને તેથી તેમની ખ્યાતિ દિન પ્રતિદિન વધતી ગઈ છે તેમની કવિતાઓના પ્રથમ ચરણો લઇને તેની દેશીઓ મૂકીને તે દેશીઓ પર અનેક જૈનકવિવરો—સારા સારા કવિઓએ (સમકાલીનમા ઋષભદાસ અને પછીના આનંદઘન વિગેરે) પોતાના કાવ્યો રચ્યા છે એ વાત વિસ્તારથી હવે પછી સમજાવેલ છે

વિશેષમા તે પછીના જ અઢારમ સૈકામા થયેલા એક કવિ નામે પંડિત જ્ઞાનતિલકના શિષ્ય વિનયચંદ્રે પોતાના સં૦ ૧૭૫૨ ના ફાગણ શુદિ ૫ ના દિને પાટણમા ૪૨ ઢાલ અને ૮૪૮ ગાથાના ઉત્તમકુમાર ચરિત્ર રાસમા પોતાની માહીતી આપતી છેવટની પ્રશસ્તિમા સમયસુંદર માટે યથાર્થ જણાવ્યુ છે કે —

જ્ઞાન પયોધિ પ્રબોધિવા રે અભિનવ શશિહર પ્રાય મુ
કુમુદચંદ ઉપમા વહે રે સમયસુંદર કવિરાય સુ ૮
તતપર શાસ્ત્ર સમરથિવા રે સાર અનેક વિચાર સુ
વલિ કલિકિકા કમલિની રે ઉલ્લાસ દિનકાર સુ ૯

આ રીતે કવિરાજ સમયસુંદર જ્ઞાન સમુદ્ર માટે ભરતી આણનાર અભિનવ ચંદ્રમા સમાન, કુમુદ માટે ચંદ્ર સમ, અને શાસ્ત્ર સમર્થન કરવા તત્પર—શાસ્ત્રના ગર્ભમાથી અનેક વિચારથી સાર-અર્ક કાઢનાર અને કમલના ઉલ્લાસ માટે જેમ સૂર્ય તેમ શાસ્ત્રનુ ઉલ્લાસન કરનાર હતા

કવિની લઘુતા

કવિએ પોતાના આખ્યાનો ઘણી સુન્દર, મનોરમ અને સાદી ભાષામા આળેખ્યા છે, જે પ

અને કવિત્વ બતાવ્યું છે; છતાં પોતે પોતાના નામ પાછળ ' કવિ ' એ પદ કદાચ ધારણ કરેલું દેખાતું નથી; ઉલટું પોતાની લઘુતા તેમણે બતાવી છે.

૧ પ્રણમૌ ગુરૂ માતા પિતા, જ્ઞાનદૃષ્ટિ દાતાર,
કીડીથી કુંજર કરે, એ મોટો ઉપગાર
ગારૂડ ફણીની મણિ ગ્રહે, તે જિમ મંત્રપ્રભાવ,
તિમ મહિમા મુઝ ગુરૂ તણો, હું મતિ મૂઢ સ્વાભાવ.
—પ્રત્યેકબુદ્ધરાસ.

૨ હુ મૂઢ મતિ કિસ્યું જાંણું મુઝ વાણિ પણિ ન સવાદો રે,
પણિ જે જોડિ મેં રસ પડ્યો તે દેવગુરૂનો પરસાદોરે,
હું શીલવંત નહિ તિમો, મુઝ પોતે બહુ મંમારોરે,
પણિ શીલવંતનો જશ કહતા મુઝ થાશે મહિ નિસ્તારો રે.
—સીતારામ ચોપાઇ.

પણ કવિ પોતે ' કવિ ' નાં લક્ષણ એક સ્થલે જણાવે છે કે;

ચપલ કવીસરના કહ્યા એક મન ને વચન એ બેઇરે,
કવિ કલ્લોલ ભણિ કહે, રસના વાલા પણ કેઇરે,
—સીતા રામ

કાવ્યનો હેતુ

સાધુઓનાં ગુણ ગાવાથી અનંત લાભ છે, તેથી ભવનો અંત આવે. પ્રહસમે ઉઠી શીલવંતનાં નામ સહુ જપે છે તેથી હું પણ ભક્તિથી આ મૃગાવતી શીલવતીનું ચરિત્ર ભણું છું. દાન ઉત્તમપાત્રને દેવાથી અઢળક લક્ષ્મી થાય છે તેથી આ સિંહલસુતની દાન કથા કહું છું. જીભ પવિત્ર કરવા આ દમયંતી સતિનું ચરિત્ર કહું છું. કોઇને કલંક ન દેવું—પાપ વચન પરિહરવુ એ સીતાનું દુખ જોઇ બોધ લેવાનો છે તેમ જ શીલ પાળી સીતાની પેઠે સુખ અને લીલવિલાસ પામો તે માટે સીતા રામનો સબંધ કહું છું અનુકંપાપર ચંપક શ્રેષ્ઠી, અને વ્યવહાર શુદ્ધ શ્રાવક ધર્મપર ધનદત્તની કથા કહું છું—એમ કવિ જણાવે છે.

પોતાની કૃતિમાં મંગલાચરણમાં મહાવીર આદિ તીર્થંકર, ગૌતમસ્વામી, સરસ્વતી, સુમતિ, માતપિતા, ગુરૂ—દીક્ષાગુરૂને વિદ્યાગુરૂની, સ્તુતિ—સ્મરણ કરે છે તે પૈકી સરસ્વતી આદિની સ્તુતિ ખાસ ધ્યાન ખેંચે છે.

સરસ્વતી સ્તુતિ

વીણા પુસ્તક ધારિણી સમરૂં સરસતિ માય,
મૂરખનૈ પંડિત કરૈ કાલિદાસ કહિવાય.
—ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધ રાસ.

સમરૂં સરસતિ સામિની પ્રણમુ સ ગુરૂ પાય
બે કરજોડી વીનવુ માગુ એક પસાય.
સરસ વચન દીઉ સરસતિ સુણતા અમીય સમાણ
સદગુરૂ પણિ સાનિદ્ધ કરો નિરમલ દિઉં મુઝ ગ્યાન

—મૃગાવતી રાસ

સમરૂં સરસતિ સામિણી, એક કરૂં અર દાસ
માતા દેજે મુઝને કરૂં વચન વિલાસ
સબપ્રજૂન કથા સરસ (૧) પ્રત્યેકબુદ્ધ પ્રબંધ (૨)
નલ દવદંતિ (૩) મૃગાવતી (૪), ચઉપઇ ચ્યાર સબંધ
આઇ તુ આવી તિહાં સમર્યાં દીધો સાદ
સીતારામ સંબંધ પણિ, સરસતિ કરે પ્રસાદ

—સીતારામ ચોપાઇ

સુમતિ

મુજને સુમતિ જગાઇયો, ઉઠ ઉઠ રે ઉઠ,
ગુણ વરણને ગરવા તણા હૈ તુઝ પૂરસો પુઠ
નિણ મુઝ ઉદ્યમ ઊપનો પંખીને જિમ પંખ
એક લાભ વલિ કહે સુમતિ, દૂધ ભર્યો વલિ શંખ.

—ચારપ્રત્યેક બુદ્ધ રાસ

માતપિતા-ગુરૂસ્તુતિ

માતપિતા પ્રણમું મહા જનમ દીયો મુઝ જેણ
વાદૂ દીખા ગુરૂ વલી ધરમ રતન દિયો તેણ
વિદ્યાગુરૂ વાદૂ વલી ગ્યાન દૃષ્ટિ દાતાર
જગમાહિ મોટો જાણિજ્યો એ ત્રિહુંનો ઉપકાર.
એ ત્રિહુને પ્રણમી કરી છઠો ખંડ કહેસિ
નવ રસ મેલી એહવા સગલા સ્વાદ લહેસિ

—સીતારામ ચોપાઇ

આ સિવાય ચમત્કારી ગુરૂઓ પોતાના ગચ્છમા પૂર્વે થયેલા તે જિનદત્તસૂરિ, અને જિનકુશલસૂરિ વગેરેનુ આવ્હાહન કરે છે અને સાનિદ્ધ માગે છે —

શ્રી જિનદત્ત સુરિ જાગતો હવઇ પ્રણમુ તસ પાય
અખંડ ૧૨ અક્ષર થકી યુગ પ્રધાન કહિવાય.
ઉતી ચોસઠિ જોગિણી, ક્ષેત્રપાલ બાવન
નામઇ ન થાઇ વીજલી લાક ખડઇ ધનધન.

ખંડ બીજઇ સાનિધિ કરી જિમ શ્રી કુશલ સૂરીંદ,
તિમ ત્રીજઇ કરજ્યો તુમ્હે, હું પણિ છું મતિમંદ,

—મૃગાવતી ત્રીજા ખંડની આદિમાં.

આનાજ બીજા ખંડમાં જિનકુશલ સૂરિની સહાય માગી હતી.

શ્રી જિનકુશલ સૂરીસરૂ, સુણિ મોરી અરદાસ,
મુઝનઇ આળસ ઊપજઇ, મનિ પણિ નહીં પ્રકાસ.
ઉદાસીન મન આલસૂ, કહો કીમ કીજઇ જોડિ,
તું સદ્ગુરૂ જગિ જાગતા, પૂરઇ વંછિત કોડિ
પરતો એક મઇ પેખીઉં, નગર મરોટ મઝાર,
મેહ માગ્યો વૂઠો તુરત, ઇમ અનેક પ્રકાર.
તેણઇ તુઝનઇં મઇ પ્રાર્થ્યો, સમરથ સાહિબ જાણિ,
મઇ બીજો ખંડ માંડીઉ, તું સિદ્ધિ ચાડિ પ્રમાણિ,

આ રીતે 'પરતો'—ચમત્કાર—પરિચય પોતાને મરોટનગરમાં જિનકુશલ સૂરિના નામ સ્મરણથી વાંછિત મેઘવૃષ્ટિ થયાનો પોતાને મળેલો કવિ સ્વીકારે છે. એ ઉપરાંત બીજો 'પરતો' પણ દેશવરમાં પોતાને મળેલ તે હકીકત પણ પોતે તેમના સ્તવનમાં નોંધી છે.

આયો આયો જી સમરંતા દાદોજી આયો,
સંકટ દેખ સેવકકું સદ્ગુરુ, દેરાવર તે ધ્યાયો જી—સમરંતા૦
દાદા વરસે મેહ ને ગાત અધેરી, વાયપિણ સબલૌ વાયૌ,
પંચ નદી હમ બૈઠે બેડી, દરિયે હો દાદા હરિયે ચિત્ત ડગાયો જી—સમરંતા૦
દાદા ઉચ્ચ બણી પોહચાવણ આયો, ખરતર સંઘ સવાયો,
સમયસુંદર કહે કુશલ કુશલ ગુરૂ, પરમાનન્દ સુખ પાયો જી—સમરંતા૦

—[પ્ર૦ રત્નસાગર ભા. ૧ પૃ. ૬૪૮]

ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધના રાસની અંતે પણ જિનકુશલ સૂરિના સાંનિધ્યથી એ પૂર્ણ થયો એમ જણાવે છે.

વિમલનાથ સુપસાઉલે એ, સાન્નિધ્ય કુશલ સૂરીંદ,
ચારે ખંડ પૂરા થયા એ, પામ્યો પરમાણંદ—

વાર્ત્તાનો ઉપયોગ.

કવિ પ્રેમાનન્દ, અને શામળના પુરોગામી આ કવિએ પણ વાર્ત્તાઓને કૌતુકવતી બનાવી વિમલવાણીમાં મૂકી. વાર્ત્તાઓનું મૂલ કથામાનું વસ્તુ લઇ તેને મનમા ખડી રાખી તેનામા પોતાનો અનુભવ પૂરતા જઇ લોકોત્તર ગિરામા મૂકતા જઈ રસની સાથે વાર્ત્તાના પ્રવાહનું અનુસધાન કવિ રાખતો ગયો છે.

સમયસુન્દર તો દેશી રાગો-ઢાળો-દેશીઓના માર્મિક જાણકાર અને વાપરનાર હતા અને તે વાપરી જે સુન્દર કાવ્યો રચતા તે એટલે દરજ્જે સુધી પ્રસિદ્ધ થઇ ગયા હતાં કે તેમના પછીના જ નહિ, પણ નયસુંદર અને ઋષભદાસ જેવા તેમના સમકાલીન સમર્થ જૈન કવિઓએ પણ સમયસુન્દરના કાવ્યોની દેશીઓ ટાંકી તે દેશી ઢાળોમાં પોતાની કવિતાઓ રચી છે.

દેશી રાગો યથાસ્થાને વ્યાપરવામાં સમયસુંદરે વિવેચક બુદ્ધિથી કૌશલ દાખવ્યું છે.

(૧) સિંધુડે રાગે રે, સુણિ શૂરિમા જાગે રે,
અતિ મીઠી પણ લાગે ઢાલ એ સાતમી રે.

(૨) ગોડી રાગેં પહેલી ઢાળ, સમયસુંદર કહે વચન રસાલ.

× × × ×

ગોઠી રાગ રસાલ બીજી ઢાલ કહી,
સમયસુંદર કહે એમ સુણતાં સરસ સહી

(૩) ટોડીને ધન્યાશરીજી, નવમી ઢાલે રાગ,
સમયસુંદર કહે સાભલોજી, જિમ ઉપજે વૈરાગ.

× × × ×

ઢાલ ભણી એ સાતમી, ધન્યાસિરિ રાગ સોહેરે,
સમયસુંદર કહે ગાવતા, નરનારી મન મોહેરે

(૪) ભલો રાગ ખભાયતીરે, સોહેલાની ઢાલ છઠ્ઠી રે,
સમયસુંદર કહે શ્રાવકા રે, સાભલતા અતિ મીઠીરે.

યુદ્ધમાં વીર રસ ઉત્પન્ન કરાવવા યુદ્ધગીત 'કડખા' માં મૂકાય છે. હાલ ઝૂલણા છંદ યા પ્રભાતિયું જે રીતે ગવાય છે તેજ રીતે બારોટ ચારણાદિ ગાઈ તેને 'કડખું' નામ આપે છે. જૈન કવિઓ બનતાં સુધી યુદ્ધ સંગ્રામનાં ગીત આ કડખાની દેશીમાં જ મૂકે છે. સમયસુંદરે યુદ્ધ સંગ્રામનુ ગીત-યુદ્ધ વર્ણન આ દેશીમાં મૂક્યુ છે અને છેવટે કહ્યુ છે કે 'રામગ્રી રાગની ઢાલ એ પાચમી, સમયસુંદર કહે જાતિ કડખો.—

ચડયો રણ ઝૂઝવા ચંડપ્રદ્યોત નૃપ, ચડતનાં તુરત વાજાં વજાયાં,
સુભટ ભટ કટક ચટ મટકિ ભેલા થયાં, વડવડા વાગીયા વેગે ધાયા.—૧ ચડયો૦

(ગજવર્ણન) શીશ સિંદૂરીયા પ્રબલ મદ પૂરીયા, ભમર ગુંજાર ભીષણ કપોલા,
સુંઢ ઉલાલતા શત્રુદલ ગાલતા, હાથીયા કરત હાલા કલોલા—૨ ચડયો૦

ઘંટ બાજે ગલે રહે એકઠા મલે, મેહ-કાલી ઘટા જાણે દીસે,
ઢલકતી ઢાલ ને શીશ ચામર ઢલે, મત્ત માતંગ રહે ભર્યા રીસે—૩ ચડયો૦

હાલતા ચાલતા જાણે કરી પર્વતા, ગુહર ગુંજાર ગંભીર કરતા,
ચંડપ્રદ્યોત રાજા તણા કટકમે, હસ્તી લાખ દોય મદવારિ ઝરતા—૪ ચડયો૦

(અશ્વવર્ણન) દેશ કાશ્મીર કબોજ કાબુલ તણા, ખેત્ર ખુરસાણ સુધા બુખારા,
અવલ ઉત્તર પવન પાણી પથા વની મન મલા કચ્છી તેજી તુખારા—૫ ચડયો૦
નીલડા પીલડા સબલ કબોજડા, રાતડા રગ મવિલા કિહાડા,
હિરડીયા હાલૂઆ ધૂસરા દૂસરા, હાસિલા વાસલા ભાગ જાડા—૬ ચડયો૦
પવન વેગ પાખર્યા ફોજ આગલ ધર્યા ચાલતા જાણે ચિત્રામ લેખ્યા
એહવા અશ્વ ઉજેણી રાજા તણે કટકમે લાખ પચાસ સખ્યા—૭ ચડયો૦

(પાયક વર્ણન) શિર ધરે આકડા બાહે પેહેરી કડા, ભાજની પરતના બોલવાલા
એકથી એકડા કટક આગલ ખડા, શૂર વીર વાંકડા સુભટ પાતા—૮ ચડયો૦
સબલ હાથાલ મૂછાલ જિન સાજિયા લોહ મય ટોપ આટોપ ધારા,
પચ હથિયાર હાથે ને બાથે ભડિ ભીમ સમ વ‍ ભલા પાલિ હાગા—૯ ચડયો૦
તીર તર કસ ધરા અભગ ભટ આક્રા સહસ જોધાર સગ્રામ શૂરા
ચડપ્રદ્યોત રાજાતણે એહવા, સાત કોડિ સાથ પાયક પૂરા—૧૦ ચડયો૦

(રથવર્ણન) નિજ નિજ નામ નેજા ધજા ફરહરે ઘર હરે ઘોર નીશાણ વાજા,
જરદ જોશણ કીયા લાખ બે રથ શીયા, સાથમે ચડપ્રદ્યોત રાજા—૧૧ ચડયો
ચાલીયા કટક જાણે ચક્રવર્તિકા, પસરી ધૂન ઉડે ગગન લાગી
સમુદ્ર જલ ઊછળ્યા સેષ પણ સલસલ્યા સુદર ગોપીનાથજી નિદ ભાગી—૧૨ ચડયો
ઈંદ્રને ચદ્ર નાગેદ્ર પણ ખલભલ્યા લક ગઢ પોલિ તાલા જડાયા
સબલ સીમાલ ભૂપાલ ભાગી ગયા ચડપ્રદ્યોત રાજા ન આયા—૧૩ ચડયો૦
આવીયો ચડપ્રદ્યોત ઉતાવલો, દેશ પચાલની સીમમાહે
દુમુર્ખ રાજા પણ દેઈદમામા ચડયો આવી સાહમો આયો મન ઉચ્છાહે—૧૪ ચડયો
ફોજ ફોજે મળી ભાટ ભટ ઊછળી સબલ સગ્રામ ભારથમ ડાણ્યો,
ભડે ભડ મલ્યા ભૂપ ભૂપે ભરયા સુભટ સુભટે અડયા દેખી ટાણો—૧૫ ચડયો૦
મુકુટ પરભાવે રાજાન જીત્યો દુમુર્ખ, કટકમા પ્રગટ જસ પડહ વાગો
હાથ લપટ સદા દુ‍ કપટી તદા ચડપ્રદ્યોત રાજાન ભાગ્યો—૧૬ ચડયો
નાસતો ભાજતો ચડપ્રદ્યોત નૃપ જાલિ કરી બેડીયામાંહે દીધો
કટક ભાજી દશોદિશિ ગયું તેહનું ' ધર્મ જય પાપ ક્ષય વચન સીધો—૧૭ ચડયો૦
દુમુર્ખ રાજા ન આયો ઘેર આપણે કહે ઇતા ગજ પચ રાત પાખો
રાગમી રાગની ઢાલ એ પાચમી સમયસુંદર કહે જાતિ પાખો—૧૮ ચડયો૦

આમ ઉજ્જયિનીના વિષયલપટ રાજા ચડપ્રદ્યોતને અને પચાલના કંપિલપુરના રાજા દુર્મુખ સામેના યુદ્ધનુ વર્ણન કવિએ કડખાની દેશીમા આપ્યું, તેમ ' સિધુડો ' એ યુદ્ધના રાગમા કવિએ કચનપુરના કરકડુ રાજા ચપાના દધિવાહન રાજા પર ચડે છે તેનું વર્ણન કરે છે

કરકંડુ રાજા રે, મુણિ કરત દીવાજા રે, તતકાલ વજાયા, વાજાં ચતુરંગ રે.
કટકી કરી ધાયો રે, ચંપા પુરી આયો રે, તપ તેજ સવાયો રે, પુર વીંટી રહ્યો રે
ગઢરો હો મડયો રે, અભિમાન ન છંડયો રે, નિજ બોલ ન ખંડયો, નૃપ માહામો અડયો રે.
રણ ભૂમિકા સૂડે રે. નાલગોલા ઊડે રે, ગડગડત ગયણંડ, શેષનાગ સલસલે રે,
સરણાઇ વાજે રે, સિંધૂડો માજે રે ગંભીર વિરાજે ઉભા દિગ્ગજે રે.
પહેર્યા જિણ શાલા રે, ઉમટયા મેઘ કાલા રે, સિર ટોપ તેજાલા ઝગઝગ ઝગકતા રે,
ભાલા અણીયાલા રે, ઉછાલે પાલા રે એક સુભટ સુંડાલા, ચાલે ચમકતા રે
વાજે રણતૂરા રે, બેઉ દલ પૂરા રે, એક એકથી સૂરા સુભટ તે સાથમે રે.
જમકી જીભ લપકે રે, જાણે વિજલી ચમકે રે, તરવાર ઉઘાડી ઝબકે હાથમેં રે.
વહે તીર વચાલે રે, આવતા ટાલે રે વયર પોતાનું વાલે ને સાસે નહી રે
નવા નેજા ફરકે રે, વઢવાને થરકે રે પગ એક ન સરકે પાછા તે સહી રે.
મૂછે વલ ઘાલે રે, આગલથી ચાલે રે ફોજ આવતી પાળે તે વલી વાગ્ગી રે.
એક પાગડા છોડે રે, નૃપ હોડાહોડે રે, અણીઓં અણી જોડે ફોજાં માગ્ગી રે.
છોડી આતમ આસરે, બેઉ ગજા-ગજ રે ન રહે ગજ વાજ ઝાલ્યા કેમ ફિરે રે.
ઠાકુરજી પુકારે રે, બાપ બિરુદ સંભારે રે આજ જય તે તુમ્હારે જીતેં પામીયેં રે.
ભાજણુરા સુસ લીધા રે, ગંગોદક પીધા રે, ભલા ભોજન કીધા તાજા ચૂરમા રે.
ગણીરા જાયા રે, આગ્ગ્હા સાગ્હા ધાયા રે ઘણા અમલ ખવરાયા ચડિયા શૂરમાં રે
એક કાયર કંપે રે, ચિહુ દિશિ દલ ચંપે રે, મુખ જંપે હાહા હવે કિણ દિશિ ભાગશું રે,
શરીર ત્રાકુકે રે, હોગે રણ ઢૂકે રે, મુખ ફૂકે આવો આજ લટાપટ લાગશું રે.
સગ્રામ મંડાણો રે, નહીકો તિમો ગાણો રે, ગય ગણો સમજાવે જે બિહુ ગયને રે.
હુતી વાત થોડી રે, થઇ કલેશની કોડી રે, ન શકે કોઇ છોડી સમજાયને રે
સિંધુડે રાગે રે, સુણિ શૂરિમા જાગે રે, અતિ મીઠી પણિ લાગે ઢાલ એ સાતની રે
સમયસુંદર ભાખે રે, હવે વઢના રાખે રે, પદ્માવતી પાખે એ કુણ મતિ સમી રે

કવિએ અનેક દેશદેશાતર ભ્રમણ કરેલ છે અને ત્યાં ત્યાંથી ગવાતાં ગીતોને–દેશીઓને લઇ તેમા પોતાનાં કાવ્યો ગાયા છે–સગીત કાવ્યો રચ્યા છે. પોતાના 'મૃગાવતી રાસ' માં જણાવે છે કે:–

સંધી પૂરવ મરૂધર ગુજરાતી, ઢાલ નવી નવ ભાતી,
ચતુર વિચક્ષણ તુમ્હે હોઇ, ઢાલ મ ભાગજ્યો કોઇ.

એટલે સિંધની સિંધી, પૂર્વ હિંદની, મારૂવાડની મરૂધર અને ગુજરાતની ગુજરાતી ઢાળો નવી નવી પોતે કરી છે, તે ઢાળને હે શ્રોતા! તમો ચતુર વિચક્ષણ હોઇને કોઈ ભાંગતા નહિ–અખંડ રાખજો એટલે રાગથી અળગી નહિ કરતા–ગાયે જ જજો, કારણ કે

ભાગી ચૂડિમેં નહી સકારા, તૂટિ લટિમેં જ્યુ હાગ,
ભાગે મને ન સોહે વૈરાગી, તિમ ન સોહે ઢાલ ભાગી
કનક મુદ્રડી નંગ વિહુણી, રસવતી જેમ અલૂણી,
કંત વિના જિમ નારિ વિરંગી, રાગ વિણ ઢાલ ન ચંગી.

મીઠી ઢાલ રાગસિંઉં મેલી જિમ મિશ્રી દૂધ બેની
તેહ ભણી ગાન રાગસિક કહ્યો ચતુર ગુમ્હે જસ લેયો

આ ઉપરાંત ઢુંઢાડી (મારવાડ પાસેનો પ્રદેશ), મેવાડી, દિલ્હી વગેરેની દેશીઓ લીધી છે (જુઓ ઉપર સીતારામ ચોપાઈ પર લખતા જણાવ્યું છે તે)

હવે ઉપરના પ્રાંતની ઢાલો જોઇએ સિંધી, એટલે સિંધ પ્રદેશની પોતે મુલતાનમા વસ્યા હતા અને ત્યા અનેક સિંધીઓ વસતા હતા એમ તેમણે જણાવ્યુ છે તે લોકોમાથી—

(૧) સિંધી ઢાળ ૧ રાગ-મારુણી-આખર દીવા ન બને રે મલરિ કમન ન હોઇ
છોરિ મૂરખ મેરી માહરી મીયા જોરે પ્રીતિ ન જોઈ,
કન્હઇયા મે કયાગ્લ માસિયા જેવન જાસિયા બે બહુર ન આસિયા

એની ઢાલ-એ ગીત "સંધિ માહે પ્રસિદ્ધ છે" આ પ્રમાણે કવિએ સ્વહસ્તલિખિત પોતાની સીતારામ પ્રબંધ ચોપાઈમા આઠમા ખંડની બીજી ઢાલમા લખ્યુ છે

૨ સંધિની રાગ આસાઉરી મન રાજી તો સુ કરઇ કાજી, એ ઢાલ
૩ રાગ આસાઉરી સિંધૂડો ઢાલ સિંધની

—આ બને મૃગાવતી રાસમા વાપરી છે

(૨) પૂરવની ઢાળ–રાગ હુસેની ધન્યાસિરી મિશ્ર

દિલ્લી કે દરબારમે લખ આવે લખ જાઇ એક ન આવે નવરંગ ખાન જાકિ પગિ પલિર જાઇ
—નવરંગ વૈરાગીલાલ એ દેશી

(૩) મરૂધર ઢાલ-(ઢુંઢાડી તથા મેવાડી)તો પુષ્કળ લીધી છે કારણ કે ત્યા પોતે બહુ વાસ કર્યો છે-કવિએ પોતે જણાવેલ તે પ્રમાણે નીચે મૂકવામા આવેલ છે

૧ વરસારી હોલી આવઇ, નાણુા—એ ગીત
૨ ભોજરાજારી ગીતરી હાથીયા રઇ હનકઈ આવઇ માહરઇ પ્રા ણીરે-એની ઢાલ
૩ પારીયો પહરીયો ઓતગણે આબૂ ઘેણે આયુ ઘણેરે લાન
૪ તોરા કીજે મ્હારા લાલ દારૂ પીજે જી પડદે પધારો મ્હારા લાલ લસરક સેજ્જેજી – તેરી અજબ સૂરતિ મ્હાકો મનડો૨ મો રે લોની લજ્યાજી-એ ગીતની ઢાલ
૫ રે રંગ રત્તા કરહના, મો પ્રીઉ રતો આણુ હુંનો ઉ પરીકા દિને પ્રાણ કરૂં ખુરબાણુ સુરંગા કરહલા રે મો પ્રીઉ પાઠો વાલ મજિઠા કરલ્હા રે-એ દેશી રાગ મારૂણી
૬ અમ્હા માંકી ચિત્તાના કોઈ જોઇ અમ્હા મારૂડે મેવાસીકો સા સોહામણો રે લો
૭ રૂઠીરે રૂઠીરે બારણે સમના પદમિનીરે એ દે શી રાગ મારૂણી —આ બધી મૃગાવતીમા
૮ રાગ આસાઉરી સિંધૂડો મિશ્ર ચરણાની ચાસુડા રણે ચડે, ચખ ભરી રાતા ચોલારે
વિગનિ દાનવ દન વિચિ ધાવ દીયો ધમરોના રે—રારણાની

૯. વેસર સોનાકી, ઘડિ ચતુર સોનાર વે૦, વેસર પહેરી સોનાકી રંગે નંદકુમાર વે૦
—એ ગીતની. રાગ અસાઉરી.

૧૦. નોખારા ગીતરી–નોખારા ગીત મારૂયાદિ ઢુંઢાડિ માહે પ્રસિદ્ધ છે

૧૧ રાગ ખભાયતી. સોહલાની જાતિ. અમા મોરી મોહિ પરણાવિ હે અમા મોરી.
જેસલમેરા સેગ જાદવા હે—જાદવ મોટા રાય, જાદવ મોટા રાય હો
અમા મોરી કહિ મોઢીને ઘોડે ચડેહો—એ ગીતની ઢાલ.

૧૨. રાગ ખભાયતી–સુબરા તુ સુલતાણુ, બીજાંહો થારા સુંગરા ઓલગૂ હો–એ ગીતની ઢાલ
–એ સુબરાના ગીતની ઢાલ–જોધપુર મેડતા નાગોર નગરે પ્રસિદ્ધ છે

૧૩. તિલ્લીરા ગીતરી ઢાલ–મેડતાદિક દેસે પ્રસિદ્ધ છે (આ સીતારામ પ્રબંધમાંથી છે.)

(૪) ગૂજરાતની

૧. પોપટ ચાલ્યઉ રે પરણવા–એ સસારી ગીતની ઢાલ ખંભાતમા પ્રસિદ્ધ છે. (ચંપકસેઠ રાસ)
૨. ઢાલ ગામી ગૂજરાતી ફુલડાની
૩. રાગ વયરાડી–જાજારે બાંધવ તું વડો–એ ગૂર્જરની ગીતની ઢાલ
૪. કપૂર હુવે અતિ ઉજલુ રે, વલિ અનોપમ ગંધ—એ ગીતની ઢાલ.

આવી અનેક દેશીઓ ગીતો વગેરેની લીધી છે તે પરથી એમ સમજાય છે કે સ્ત્રી ગીતો–લોકગીતોનું સાહિત્ય તે વખતે–કવિના જમાનામાં ઘણું હતું. એક સ્થળે એક એવી દેશી ઉતારી છે; જેમકે રાગ પરજીયો. ઢાલઃ—

સિહરા સિહર મધુ સૂરીગે, ગઢા વડો ગીરનારી રે
રાણ્યા સિરહર રૂકમિણીગે, કુંયરાનંદ કુંમાર રે
કંસાસુર મારણુ આવિને રે પલાદ ઉધારણ રાસ રમણ ધરિ આવ્યો
ધરિ આવ્યો ધરિ આવ્યો, હો રામ રમજી ધરિ આવ્યો —એ દેશી

આ પરથી કવિની અગાઉના કાવ્યો હતાં તે પૂરવાર થાય છે. 'સોરઠ દેસ સોહામણો સાહેલડી રે દેવાં તણો નિવાસ–એ ગજસુકુમાલની ચોઢાલીયાની' દેશી એક સ્થળે કહી છે અને બીજે સ્થળે સુબાહુ સંધીની ઢાલ કહી છે તે પરથી ગજસુકુમાલ પરથી ચાર ઢાલવાળુ કાવ્ય તથા સુબાહુ સંધિ એ કવિના અગાઉનાં અન્ય કવિએ રચેલાં સુપ્રસિદ્ધ કાવ્યો હતાં તે સિદ્ધ થાય છે.

કવિ પોતે જોડેલાં કાવ્યોની પહેલી કડીની દેશી તરીકે પણ બીજા પોતાનાં કાવ્યમાં મૂકી છે તે પરથી એમ સિદ્ધ થાય છે કે પોતાની દેશીઓ પર પણ પોતાને મોહ હતો. દાખલા તરીકે સીતારામ પ્રબંધમાં—

(૧) પ્રત્યેક બુદ્ધની બીજા ખંડની આઠમી ઢાલ.
(૨) સુણોરે ભવિક ઉપધાન લહ્યા વિણુ કિમ સૂઝે નવકાર એ સ્તવનની ઢાલ
(આ ઉપધાન સ્ત૦ પોતાનું છે)

(૩) રાગ બગાલે-ઇમ સુણી હત વચન્ન કોપીઓ રાજા મન-એ મૃગાવતીની ચોપઇની બીજા ખંડની દશમી ઢાલ.

(૪) રાગ ધન્યાસિરી-સીલ કહે જગિ હું વડું મુઝ વાત સુણો એક મીઠીરે-એ સંવાદ શતકની બીજી ઢાલ (આ સંવાદ શતક તે દાનશીલ તપભાવના સંવાદ પર ચોપાઇ સ્વરચિત છે તે)

(૫) શ્રેણિકરાય હું રે અનાથી નિગ્રંથ (અનાથી પર સજ્ઝાય)

(૬) આદરજીવ ક્ષમા ગુણ આદર (ક્ષમાછત્રીશી)

(૭) હવે રાણી પદમાવતી જીવરાશિ ખમાવે (પ્રત્યેક બુદ્ધ રાસ) વગેરે વગેરે અનેક ઉદાહરણ છે

રમાલંકાર જ કાવ્યનું લક્ષણ છે?

રમાલંકારવાળું કાવ્ય લખનારને જ કવિ કહેવાય એવો નિયમ સર્વાંશે ગ્રહણ કરી ન શકાય રમાલંકારવાળું કાવ્ય કરવું શ્રમસાધ્ય છે અને તે પંડિતોને માટે-વિદ્વદ્ભોગ્ય થાય છે જે સહજ સરલતાથી અખંડપણે વ્હેતા ઝરાની માફક સ્વાભાવિક, સરલતાથી રસિકભાવ અર્પતી કવિતા છે તે કાવ્ય નથી એમ કેમ કહી શકાય ? આવી કવિતામાં ચરિત્ર વિષયક ગ્રંથમાં ચરિત્રનાયકનું રસાળ અને ચિત્તવેધક કથાનક સુરસરીતિથી કવિએ વર્ણવેલું હોય છે ત્યારે માનવી વૃત્તિના ભિન્નભિન્ન દશ્યો વાચકની દૃષ્ટિપટિકા પર આબેહૂબ આલેખવાનું અમોઘ સામર્થ્ય કવિનું સ્થળે સ્થળે જણાઈ આવે છે ભયપ્રદ યુદ્ધસંગ્રામ, રમ્ય સુરમ્ય સ્થાનો, રાજ્યાભિષેકના પ્રસંગો, અને નગરશોભાના અપ્રતિમ દેખાવો-ઉત્સવના મનોહર રીતિથી વર્ણન કરેલા હોય છે આમાના કેટલાક વર્ણનો આ કવિના આપણે અગાઉ જોઇ ગયા વિશેષ હવે પછી જોઈશું

પ્રકૃતિ પર કાવ્યો

પ્રકૃતિનું સૌંદર્ય કવિ જે આંખથી જોઈ શકે છે તે પ્રકૃત-સામાન્ય જનો જોઈ શકતા નથી પ્રકૃતિના વિવિધ દેખાવ જોઈને સુંદર શબ્દ રચનાથી તેનું વર્ણન કરવામાં કવિનો ભાવ વહે છે અને તે ભાવથી સૌન્દર્યઅર્પણ કરતો કવિ વિશેષ આકર્ષક બને છે આપણા જૂના સાહિત્યમાં બહુ સુન્દર કાવ્યો આ સંબંધી મળતા નથી, છતાં સામાન્ય એવા કંઈ નમુનાઓ મળી આવે છે —

વસંતવિહાર

> તેણે અવસરે મોહામણો આવ્યો માસ વસંત સુરંગા ખેલણા
> રસિયા ખેલે બાગમે, ગાયે રાગ વસંત સુરંગા ખેલણા.
> બોલસિરી જાઇ જૂઇ કુંદ અને મુચકુંદ-
> ચંપક પાડલ માલતી ફૂલી રહ્યા અરવિંદ-
> દમણો મરૂઓ મોગરો સબ ફૂલી વનરાય-
> એક ન ફૂલી કેતકી પીઉ વિણ હર્ષ ન થાય-

આંબા મોર્યા અતિ ઘણા, માંજર (મંજરી) લાગી સાર,-
કોયલ કરે ટહુકડા, ચિહુ દિશિ ભમર ગુંજાર-
જુગબાહુ રમવા ચલ્યો, મયણરેહા લે સાથ,-
બાગમાહિ રમે રંગશું, કંઠ ધરે નિજ હાથ-
નિર્મલ નીર ખડો ખલી, ઝીલે ગજ મરાલ,-
પ્રેમદા શું પ્રેમે રમે, નાખે લાલ ગુલાલ-
ભોજન ભક્તિ યુક્તિ ભલી, રમતા થઇ અવેર,-
રાત પડી રવિ આથમ્યો, પ્રસર્યો પ્રબલ અંધેર-
નિર્ભય ઠામ જાણી રહ્યો, રાતે બાગ મઝાર,-
કેલીઘર સૂતો નૃપ, થોડો સો પરિવાર-
ચોથી ઢાલ પૂરી થઇ, ઝૂબખડાની જાતિ,-
સમયસુંદર કહે હવે સુણો, રાતે હોશે જે વાત-
—નમિરાજ પ્રત્યેક બુદ્ધ રાસ રચ્યા સં૦ ૧૬૬૨

વસંતવર્ણન

એહવે માસ વસંત આવીઉ, ભોગી પુરૂષા મન ભાવીઉ,
રૂડી પરઇ ફૂલી વનરાઇ, મહકે પરિમલ પુહવી ન માઇ.
અંબર ઘણુ મહોર્યા સહકાર, માંજરી લાગી અધિકે સાર,
કોઇલ બઇઠી ટીહૂકા કરે, શાખા ઉપરિ મધુરે સ્વરે.
છયલ છબીલા નર છોગાલ, ગાઇ વાઇ બાલ ગોપાલ,
ચતુર માણસને હાથે ચંગ, મેઘનાદ વાજઇ મિરદંગ.
રંગ ગીત ગાઇ ફાગના, રસિક ભેદ કહઇ રાગના,
ઊડે લાલ ગુલાલ અબીર, ચિહુ દિસિ ભીંજાઇ ચરણા ચીર.
નગરમાહિ મહુકો નરનારિ, આણંદ ક્રીડા કરઇ અપાર,
ટલતી રામગિરિ એ ઢાલ, સમયસુંદર કહે વચન રસાલ
—પ્રિયમેલક રાસ, સં૦ ૧૬૭૨.

કવિ પોતાના સમયનું પ્રતિબિંબ છે.

કવિ એ પોતાના સમયનુ ચિત્ર નજર આગળથી દૂર કરી શકતો નથી. કલ્પનાના અંતર્પટ પર ખેંચેલાં ચિત્રો કે આદર્શભાવનામાંથી ઉતારેલાં પાત્રોના આલેખનો વાણીમાં ચિતરતી વખતે કવિ આસપાસની પરિસ્થિતિ થોડો વખત ભૂલી જાય, છતાં યે સંપૂર્ણ રીતે પોતાના સમયની સ્થિતિમાંથી સંપૂર્ણ રીતે કવિ મુક્ત થઇ શકતો નથી પ્રચલિત કથાઓ કે શાસ્ત્ર—પુરાણની દંતકથાઓને સ્વભાષામા, કવિતામાં, અવતારતીવેળા આખ્યાનક કવિઓથી સ્વસમયની સ્થિતિ કદિ વીસરાતી નથી. આખ્યાનોનો હેતુ રસ અને બોધ આપવાનો છે અને તેથી મનુષ્યઆત્માની સ્વભાવિક પ્રેરણા-(ideal) ને વ્યાપકરીતે અંત સુધી અખંડપણે આપવામા ભાવનામય-આદર્શમય કવિઓ ચીવટથી વળગી રહે તેવુ

આખ્યાનોમા સ્વાભાવિક રીતે હોતું નથી આટલુ છતા આખ્યાનમા માત્ર હકીકતો કહી જવી એટલુ જ કાય કવિનુ નથી, તેમા તેને રંગણામય ભાવના સાથે વસ્તુ સ્થિતિના ચિત્રકાર (realist) થવુ પડે છે રાસાઓ એ મુખ્યપણે આખ્યાનો છે-કથા વર્ણનો છે તેના રચનાસમયના આચાર, વ્યવહાર અને રહેણી-કહેણીની વાતો તેમા પ્રવેશ પામે છે તેથી તે સમયનુ થોડુ ઘણું સામાજિક જ્ઞાન પણ થાય છે

આ કવિએ હસુખરાજા (પછીથી પ્રત્યેક બુદ્ધ) ની પટરાણી ગુણમાલાને સાત પુત્ર થયા છતા પુત્રીની ઇચ્છા થઇ તે હકીકત પર કેટલીક સ્ત્રીઓ સામાન્ય રીતે અતૃપ્ત હોય છે તેના પર એક ઢાળ તેના પ્રબંધમા રચી અને ખાસ કરી છેવટે ગૂજરાતી સ્ત્રીઓને માટે તે હકીકત લાગુ પડે છે એવુ જણાવી કવિ ટોણો મારે છે કે પોતાનુ કહેવુ સાચુ છે કે નહિ તે જાણવુ હોય તો ' ગૂજરાતી લોક પૂછજ્યોરે તે કહેશે તતકાલ ! ' તે ઢાલ નીચે પ્રમાણે છે —

અતૃપ્ત સ્ત્રી

આ કામિની તૃપ્તિ ન પામે કેમ
રઢ લીધી મૂકે નહી રે પગ પગ નવનવા પ્રેમ રે—આ કામિની
જનમથી માયા કેતી રે લીખે ઘરનું સૂત્ર
ધૂતની થે રમતી કહે રે એ મુજ પતિ એ પુત્ર રે—
દેવ સમારે દિન પ્રત્યે રે લીખી નાણ વિન્નાણ
અણુખ અદેખાઇ કરે રે ગાવે ગીત ને (પિયના) ગાન રે—
આરાધે કુલ દેવતા રે, વિનતિ કરે વારવાર
ગૌરી ગણ ગોરી રમે રે ભલા હોજ્યો ભરતાર રે—
પરણી પણ રહે પૂછતી રે, વશીકરણ એકાત
કિમહિ પિયુડો વશ કરૂ રે પૂછે મનની ખાત રે—
સુખ પામે ભરતારસું રે તો પુત્ર વાછે નાર
પુત્ર પાખે કહે કામિની રે કોઇ સરજી કિરતાર રે—
પુત્ર પરણાવુ પ્રેમસુ રે વહુ દેખુ એમ વાર
ગોદ ખેલાવુ પોતરા રે સફળ કરૂ અવતાર રે—
બાલક પીલા ઉપરે રે નારે ઉગમતે સૂર
ખેત્રપાલે ભમતી રહે રે ગાલે તેલ સિંદૂર રે—
પુત્ર તણુ સુખ ઉપના રે તો પણ ઉત્તર [illegible] મ,
ગુણમાલા રહે ઝૂરતી રે પુત્રી ન પામી એમ રે—
ચોરી ન બાંધી આગણે રે તોરણે નાવી જાન
પેસતો જમાઇ ન પોખીયો રે તે દીધુ અપ્રમાણ(કુલ જ્ઞાન) રે—
હાથ મુકાવણ હાથીયો રે કે ઘોડા કે ગામ
જમાઇ ન દીધા દાયજે રે તો ધન કેહુ (કેહે) કામ રે—
ધનનન (ધનતણ) સ ાતી નારીનો રે સરજ સદાશે એમ

હવે આપણે જોશીનુ વર્ણન જોઇએ —

ઢાલ દસમી—રૂપક હયડઇ અતિ ઊજલુ રે એહની રાગ કેદારો ગોડી

રૂપ કીધુ બ્રાહ્મણ તણૂ રે, ચાલ્યઉ નગર મઝારિ
હાથે લીધુ ટીપણું રે, વાચઇ તિથિ નઇ વાર — ૧
—જોસીયડઉ જાણઇં જોતિષ સાર,
એતઉ નિમિત્ત પ્રકાશઇ અપાર—જોસિયડઉ૦
સ્નાન કરી તટની જલઇ રે, ટલતા મુક્યા કેસ,
માથઇ બાંધ્યુ કાલીયુ રે વારૂ બણાયઉ વેસ—જોસિ૦ — ૨
તિલક કીધુ કેસર તણૂ રે, વિચિમાહિ નરખુ ચારિ,
અદ્ભુત આડિ બિંદુ ગમા રે, સુંદર ચક્ર સરીરિ—જો૦ — ૩
ધોલુ ખીરોદક ધોતીયુ રે, જન્નોઈ સુવિસાલ,
હરિ વિષ્ણુ હરિ વિષ્ણુ સુખિ જપઇરે, તુલસીની જપમાલ—જો૦ — ૪
હેમ કમંડલુ હાથમઇ રે, નીર ભરિઉ નિત જાણિ,
વેદ ભણઇ સુખિ વેદીયઉરે, કહઇ મહુનઇં કલ્યાણ—જો૦ — ૫
ભમતઉ ભામા ઘરિ ગયઉરે, દીઠઇ કુબજા દાસિ,
સુંદર રૂપ સરલ તનૂરે, તતખિણ કીધુ તાસિ—જો૦ — ૬
અચરિજ દાસી ઊપનુ રે, કીધુ ચરણ પ્રણામ,
પૂછ્યુ કેથિ પધારસ્યઉ રે, જમસ્યુ ભોજન કામ?—જો૦ — ૭
સત્યભામા મુઝ સામિની રે, આવઉ તસુ આવાસિ,
મોદક મીઠા આપસ્યુ રે, દેસ્યઉ મુઝ સાબાસિ—જો૦ — ૮
વિપ્ર બાહિરિ મંદિ માહિ ગઇ રે, દાસી ભામા પાસિ,
દીઠ્યો રૂપ નવિ ઉલખીરે, રહિય વિમાસિ વિમાસિ—જો૦ — ૯
કુબજા દાસી હુ તુમ્હ તણી રે, કહી બ્રાહ્મણની વાત,
દઉડિ તેડી આવિ તેહનઈ રે, સિદ્ધ રૂપ સુવિખ્યાત—જો૦ — ૧૦
વેદ ભણંતઉ આવીયઉ રે, દીધઉ આશીર્વાદ,
ભામા ઊઠિ ઊભી થઇ રે, પ્રણમ્યા ચરણ પ્રસાદ—જો૦ — ૧૧
ભામા ભગતિં ઇમ ભણઇ રે, એક કરૂ અરદાસ,
રૂકમણિનુ રૂપ રૂયડુ રે, મૂઝથી અધિક પ્રમાદ—જો૦ — ૧૨
તિણિ તેહનઈ માનઇ ઘણું રે, કૃષ્ણજી કંત મુરારિ,
અધિક રૂપ કરિ માહરૂં રે, મનિસુ તુમ્હ ઉપગાર—જો૦ — ૧૩
ચિત્ત ઉત્તરઈ કંતનુરે, રૂકમણિથી એક વાર,
તઉ હુ જાણું માહરૂ રે, જીવિત સફલ સંસાર—જો૦ — ૧૪
વિપ્ર કહિં વિધિ છઇ ઘણી રે, તે જઉ સર્વ કરેસિ,
તઉ રૂપ થાસ્યઈ તેહવુ રે, દેવી વિસમય ધરેસિ—જો૦ — ૧૫
જે કહો તે સ્વામી હુ કરૂ રે, વેગિ મ લાયઉ વાર,
મસ્તક મુંડિ તું આપણુ રે, આભ્રણ સવિ ઊતારિ—જો૦ — ૧૬

ખડિત દડિત અતિ જયા રે પ'રી પુરાણા ચીર,
મસ્તક મુખ આંખિ મસિ ઘસીરે સનહુ લેપિ શરીર—જો૦ ૧૭
જિમ કહ્યુ તિમ ભામા કર્યઉ રે, અ થી ન દેયઇ દોષ
દીસઈ રૂપ બીહામણું રે જાણુઇ જુન રોસ—જો ૧૮
ફૂડ મુડ સ્વાહા ફૂડ ચુડ સ્વાહારે અઠોતરસઉ વાર
મ ત્ર ગુણે અણુબોલતી રે હોસ્યઉ રૂપ અપાર—જો૦ ૧૯
ભામા હૂ ભુખ્યો થયઉરે ભોજન ઘઇ ભરપૂર
બઇસાયઉ વિપ્ર જમાડવારે પ્રીસ્યા બ્_ રત પૂરે—જો ૨૦
પ્રીસ્યા લાડૂ ખાજલારે વીવાહના પક્વાન
નિરખતા સવિ નીરમ્યારે, અચરિજ એ અસમાન—જો૦ ૨૧
રે રે વિપ્ર તું કૂણ છઇ રે ત્રિપતિ ન પામઇ કિમ,
ઊઠિ ઊઠિ તું ઇહા થકીરે, પભણ્યુ દાસી એમ—જો ૨૨

—સ ૧૬૫૮ મા રચેલ સાંબપ્રદ્યુમ્ન રાસ લખ્યા સ૦ ૧૬૫૯

આમા બ્રાહ્મણુ જોશીનુ કેવુ તદ્રૂપ ચિત્ર આપ્યુ છે તે હાલના જોશી સાથે સરખા વવા જેવુ છે તેવી રીતે ચીતારાનુ આબેહૂબ સ્વરૂપ કવિએ પોતાના એક અન્ય રાસ -બે હજાર વષ પર થયેલ મૃગાવતી પરની ચોપાઈમા આળેખ્યું છે તે અત્ર નીચે આપ વામા આવે છે તેમા કવિ પોતાના સમયની સ્થિતિ ભૂલી શકતો નથી જે ચિત્ર ચિતા રાએ દોર્યા છે તેમા રાતા મો અને ચુચી આખવાળાને માથે મોટા પાઘડા વાળા તિર હાજ મુગલ અને કાબલી, કાળા હબસી, પાડુવર્ણું પઠાણુ, કુરાન કિતાબ વાચતા બુઢા કા જીના ચિત્રો મૂક્યા છે, એટલુ જ નહિ પણુ માથે મોટા ટોપા ઘાલનારા ને કોથળા જેવા ઢીલા સુંથણા (પાટલુન) પહેરના । છેડતી કરતા ઢાપાયમાન થનારા ફિરંગીઓને પણુ બાકી રાખ્યા નથી આ અકબર-જહાંગીરના સમયમા વેપાર અર્થે જૂદે જૂદે સ્થલે કોઠીઓ નાખનાર અગ્રેજ-પોર્ટુગીઝો છે આમ કરી કવિએ સમય વિરોધનો દોષ વ્હોરી લીધો છે, અને એવો કાલ વિરોધ ઘણે સ્થળે દેખા દે છે, તેના દષ્ટાંતો ત્રલોક અગાઉ અપાઈ ગયા છે

ચતુર ચિતારો

ખડ ૨ જો પ ગી ઢાળ શાતડીયા રગીનઇ કિહાથી આવીયારે-એ દેશી

રાગ પરજીઓ

સમ્બ ચીતારામાહિ સુદર રે નિપુણુ છઇ જેહનું નામ રે
રાજમહલ દીધો તેહનઇ રે વાર કરવા ચિત્રામરે

—ચતુર ચીતારો રૂપ ચીતરઇ રે

નાદઇ મોહ્યા મિરગલા રે, આપઈ આપણું સીસો રે,
નાદઇ મોહ્યા વિષધર રે, ડોલઇ મૂકી રીસો રે– તોરે૦ ૧૨

નાદઇ મોહ્યા કૃષ્ણજી રે, નાદઇ ઈશ્વર નાચ્યઉ રે,
નાદઇ બ્રહ્મા વસિ કીયઉ રે, સુર રમણીસ્યુ રાચ્યઉ રે– તોરે૦ ૧૩

નાદઇ ચિત્ત વિનોદસ્યુ રે, દુખિયા કાલ ગમાવઇ રે,
નાદઇ સુખિયા સુખ લહઇ રે, જોગી ચિત્ત રમાવઇ રે– તોરે૦ ૧૪

ચ્યાર વેદ તિમ પાચમઉ રે, એ ઉપવેદ સવાદો રે,
વલિ વિશેષ વખાણીયઉ રે, નારીમોહન નાદો રે– તોરે૦ ૧૫

નાદ વિના સોભઇ નહી રે, પંડિતનઈ મુખિ વાણી રે,
માન વિના સોભઇ નહી રે, જિમ રાજા પટરાણી રે– તોરે૦ ૧૬

લવણ વિહુણી રસવતી રે, જિમના સ્વાદ ન આપઈ રે,
લોક માહિ હાસી લહઈ રે, કંઠ વિના આલાપઈ રે– તોરે૦ ૧૭

દીપક રાગ દીવા બલઇ રે, અગનિ વિના તતકાલો રે,
પંચમ નવપલ્લવ તરૂ રે, ઇમ સગલી રાગ માલો રે– તોરે૦ ૧૮

રમતું ગાયઈ તુંબડા રે, હીયડઇં હરખિત હોઇ રે,
નરનારી મોહી રહ્યા રે, સાંભલતા સહુ કોઇ રે– તોરે૦ ૧૯

વૈદરભી વાત સાંભલી રે, તેડયા તુંબ તુરંતો રે,
બાપ પુછઇ બઇસી કરી રે, ગવરાવ્ય ઓ ગુણવંતા રે– તોરે૦ ૨૦

પૂછ્યા કિહાંથી આવીઆ રે, સ્વર્ગ થકી સુખવાસો રે,
દ્વારિકા નગરી માહિ થઇ રે, અમ્હે આવ્યા તુમ્હ પાસો રે– તોરે૦ ૨૧

કુમરી કહઇ સુત કૃષ્ણનઉ રે, જાણઉ કુમર પ્રદ્યુન્નો રે,
સંબ કહઇ કુણ તોલખઇ રે, એહવા પુરૂષ રતન્ન રે– તોરે૦ ૨૨

કુમરી મન મોહઉ ગુણે રે, રાગ ધર્યો પરછન્નો રે,
જઈ પરણું તઉ તેહનઈ રે, નહિ તરિ અગનિ સરન્ન રે– તોરે૦ ૨૩

એહવે ગજ આલાનથી રે, છૂટઉ કરઇ વિનાસો રે,
કુણ નર ઝાલઈ તેહનઇ રે, જઇ ન સકઈ કો પાસે રે– તોરે૦ ૨૪

રાજા પડહ વગાડીયઉ રે, જે હાથીનઇ ઝાલઇ રે,
રાજા રંજ્યઉ તેહનઇ રે, જે માગઇ તે આલઇ રે– તોરે૦ ૨૫

હાઢી ઢંઢેરો છબ્યઉ રે, લોક અચંભઉ આણઇ રે,
ગાનઇં ગજ વસિ આણીયઉ રે, સહુ સાબાસી વખાણઈ રે– તોરે૦ ૨૬

માગઉ માગઉ માગણઉ રે, પૂરૂ મુઝ પ્રતિન્યા રે,
રાધણહારી કોઇ નહીં રે, દ્યઉ વૈદરભિ કન્યા રે– તોરે૦ ૨૭

રૂઠઇ રાજા ઇમ ભણ્ઇ રે ગામ સીમથી કાઢ્ઢ રે
નગર વિટાલ્યુ કુબડિરે એ બાંજે આશાઢ રે-　　તોરે૦ ૨૮
ગામણુ ગામ બાહિર ગયા રે રાજાસુ નહિ જોર રે
સબ કહઇ પ્રદ્યુમ્નઇ રે, વિધાબલ કાઇ ફેરક રે-　　તોરે ૨૯

—સાંબ પ્રદ્યુમ્નરાસ રચ્યા સં૦ ૧૬૫૯ લખ્યા સં૦ ૧૬૫૯

મૃગાવતીનુ રૂપવર્ણન

બીજી હાળ નાયકાની, રાગ કેદારો

તસ ઘરણી મૃગાવતી રે સુંદર રૂપ નિધાન રે મૃગાવતી
ચેડાની સાતે સતી રે એક એકથી પરધાન રે મૃગાવતી
રૂપકલા ગુણ રૂયડી રે લાલ રૂયડુ સીલ આચાર રે　મૃગાવતી ૧
સ્યામ વેણી દંડ સોભતા રે લાલ ઉપરિ રાખડી ઊપરે　મૃ
અહિરૂપ દેખણ આવીઊ રે લાલ મસ્તકિ મણિ આરોપરે　મૃ૦ રૂપ૦
બહુ ગમા ગૂથી માંદની રે લાલ બાંધ્યો તિમિર મિથ્યાન રે　મૃ૦
વિચિ સઇથો સીંદૂરીઊ રે લાલ પ્રગટ્યો ધરમ પ્રભાતરે　મૃ૦ રૂપ
શશિ દલ ભાલ જીત્યો થકો રે લાલ સેવઇ ઇસિર દેવ રે,　મૃ૦
ગંગાનદિ તપસ્યા કરઇ રે લાલ ચિતાતુર નિતમેવ રે　મૃ રૂપ
નયન કમલ દલ પાખડી રે લાલ અણીઆલી અનૂપરે　મૃ૦
હવિ વધતી હરણી ગ્રહી રે લાલ દેખિ શ્રવણ દોઇ રૂપ રે　મૃ રૂપ૦
નિરમલ તીખી નાશિકા રે લાલ જાણે દીવાની ધાર રે　મૃ૦
કાલિમા કા દીસઇ નહીં રે લાલ ન બલઇ સ્નેહ લગાર રે　મૃ૦ રૂપ૦
અતિ રૂડી રદનાવલી રે લાલ અધર પ્રવાલી વિચાર રે　મૃ૦
સરસતિ વદન કમલઇ વસઇ રે લાલ તસુ મોતિણી માલ રે　મૃ૦ રૂપ૦
મુખ પુનિમનો ચંદલો રે લાલ વાણિ અમૃતરસ ભાવ રે　મૃ૦
કલંક દોષ દૂરઇ કીઉ રે લાલ સીલ તણઇ પરભાવ રે　મૃ રૂપ૦
કંઠ કોકિલથી રૂયડો રે લાલ તે તો એક વસંત રે,　મૃ
એ બારે માસ સારિખો રે લાલ રૂપઇ મેર અનંત રે　મૃ૦ રૂપ૦
કુઅલી (કુમળી) બાહ લતાયિકા રે લાલ, કમલ સુકોમલ હાથ રે　મૃ
રિદ્ધિ અનઇ સિદ્ધ દેવતારે લાલ, નિસ વસઇ બઇ સાથિ રે　મૃ૦ રૂપ૦
હિયડ કમલ અતિ રૂયડો રે લાલ ધરમ બુદ્ધિ આવાસ રે　મૃ
કટિ લહિ જીત્યો કેસરી રે લાલ સેવઇ નિત્ય વનવાસ રે　મૃ રૂપ૦
ચરણ કનકના કાછિબા રે લાલ કમલ અતિ સુકુમાલ રે　મૃ૦
નખ રાતા અતિ દીપતા રે લાલ દરપણ જિમ સુવિસાલ રે　મૃ૦ રૂપ૦

દેવ ગુરૂ ધર્મ ગાગિણી રે લાલ, અનિ દાનાર ઉદાર રે, મૃ૦
ભગતિ ઘણી જગતાની રે લાલ, આીનો એ આચાર રે, મૃ૦ ૩૫૦
એ બીજી ટાલ જાણુગે રે લાલ, નાયકા કેરી એહ રે, મૃ૦
સમય સુંદર કહઈ સાભલો રે લાલ. રાગ કેદારઇ તેહ રે, મૃ૦ ૩૫૦

—સં૦ ૧૬૬૮ મા રચિત મૃગાવતી ચોપઇ, લખ્યા સં૦ ૧૭૧૫.

દમયંતીનો ચંદ્રદ્વારા નલને સંદેશ

ઢાલ ૫ મી લાવનશી

હો સાયરસુત સોહામણો, સોહામણો રે, હો સાભલિ સુગુણ સદેસ
હો ગગનમંડલ ગતિ તાહરી, તાહરી રે, હો દેખઇ તું સગલા દેસ,

—દેખઇ સગલા દેસ.

ચંદલિયા સદેસો રે કહે માહરા કંતનઇ રે—
થાહરી અબલા કરઇ રે અંદેસ, અબલા કરઇ રે અંદેસ,
નાહલીઇ વિહુણી રે નારી હું કયું રહું રે—

હો વાલમ મઇ તોનઇ વારીઉ, વારીઉ રે, હો જૂવટઇ રમવા તું મ જાય,
હો રાજ હારી નલ નીસર્યો, નલ નીસર્યો રે. હો વનમાહિ ગયો વિલખાય

વારીયો રહો વનમાહિ—

ચંદલિયા સદેસો હો કહે માહરા કંતનઇ રે—
હો નલ તુમ્સું હું નીસરી, નીસરી રે હો આગમ લીયો દુખ આધ
હો સુજનઇ તું છોડી ગયો, એવડો કિસ્યો અપરાધ,
ચંદલિયા સદેસો હો કહે માહરા કંતનઇ રે—

હો સૂતી મૂકી તઈં કા સતી, કા સતી રે, હો પ્રમદા ન જાણી તઇ પીડ,
હો હાથિ જિને પરણી હુતી, પરણી હુતી રે, હો ચતુર કર્યણો કિમ ચીર— ચંદલિયા૦
હો ઝબકિ જાગી ઝૂરવા, ઝૂરવા રે, હો પ્રિય તું ન દીઠો પાસ,
હો વનિ વનિ જોઉં તુનઇ વાલહા, હો વાલહા, હો સાદ પણિ કીધા સો પચાસ— ચંદલિયા૦
હો નિરતિ ન પામી થાહરી નાહલા. નાહલા રે, હો પગિ પગિ મૃગલી પણિ પૂછી,
હો રોઈ રોઇ સુઇ ગનમા, ગનમા રે, હો મહીઅલ પડી હું મુર્છિ— ચંદલિયા૦
હો કીધુ તઈં ન તે કો કરઇ, કો કરઇ રે, કો પુરૂષા ગમાડી પરતીતિ,
હો વિસ્વાસ ભાગો હવિ વાલહા, હો વાલહા રે, હો પુરૂષા કેઇ પ્રીતિ— ચંદલિયા૦
હો દૃષ્ટાંત થાહરો નલ ! દાપસ્યઇ, દાપસ્યઇ રે. હો કવિયણ કેરી રે કોડિ,
હો પુરૂપ કુડા સહુ કપટીયા કપટીયા રે, હો પરી લગાડી ખોડિ— ચંદલિયા૦

હો એહવા ચરર્યું ઉતબાગ, ઉતબણ રે　હો દીધા દત તી નારી
હો ચઉથી ઢાલ પુરી કરી પુરી કરી રે હો સમયસુંદર સુ વિચાર–
હો સમયસુંદર સુ વિચાર

—ચદલીયા સંદેશો રે હો કહે માહરા કતનઇ રે

—સ ૧૬૭૩ મા રચિત નલ દવતી રાસ લખ્યા ન સ૦ ૧૭૬૯

કવિએ પોતાના સ૦ ૧૬૭૨ મા ચેલા પ્રિયમેલક નામના રાજકુમારને સાહસિક બનાવી સમુદ્ર યાત્રા કરાવી તેના સાહસો વર્ણવ્યા છે તેની વાનગી રૂપે એક કાવ્ય લઇશું જે પ્રતમાથી આ ઉતારવામા આવ્યુ છે તે સ૦ ૧૬૮૦ મા લખાયેલી પ્રત છે એટલે કે રચ્યા સાલ પછી આઠ વર્ષે જ અને તે વળી કવિના જીવનમા જ લખાયેલી પ્રત છે, તેથી તે વખતની ભાષાનો નમુનો પણ આ કાવ્ય પૂરો પાડશે

ભાગ્ય પરીક્ષા

(ઢાલ ત્રીજી, વાલુરે સવાયો વયર ૬ માહરૂ જી-મભાવતી ચઉપઇની એ ઢાલ)

અમર્ં કુમરનઇ આવીયોજી ફીરો મુઝ્ઝ વિના કુ ણી
અવહીત્યા જે આવા પડજી ધિગ તે જનમતઈ ધૂલિ　　૧
કરમ પરીખા કરણ કુમર ચ લ્યોજી ધનવતીચ્ની ધણી સાથિ
ન્ત વિહુંણી દિસિ કામિનીજી અન્ની નઈ ત્રીજુ આથ　　૨

—*કરમ પરીખા કરણ કુમર ચલ્યોજી

દેસ પ્રદેસે અચરિજ દેખસ્યુજી બાન્યતઉ લહસ્યુ ભેદ
સાજણ દુરજણ સમઝસ્યુજી ઇમ મનિ ધરીરે ઉમેદ　　૩ કરમ

યત ' દીસઇ વિવિહચ્ચરિય જાણિજ્જઇ સજ્જણ દુજ્જણ વિસમો
અપ્પાણ ચ કલિજ્જઇ હિંડિજ્જઇ તેણ પુ હવીએ
આધિ રાતિ ઉઠિ ગ્રુ ચિ લીધી સાથિ
સિરલ સુત મન સાહસીજી હથિયાર તરવારિ હાથિ　　૪ કરમ૦
તુગ ગયો દરિયાન તટઇજી સમુ ચ યો માહરી
પ્રવહણ બઇઠ પરદ્વીપ ભણીજી નાગિનઇ લહરે નડ઼　　૫ કરમ૦
આગલિ જાતા દરિયઉ ઊછલ્યોજી તિમ વલી લાગઉ તોફાન
પ્રવહણ ભાગો કોલાહલ પ ડ્યોજી અતિ દુખ પ ડ્યું અસમાન　　૬ કરમ૦
પુન્ય સયોગઈ પામ્યઉ પાટીયોજી ધનવની લીધઉ આધાર

---

* આ ' કર્મ પરીખા કરણ કુમર ચલ્યોજી ' એ દેશી કવિના પછીના અનેક કવિઓએ પોતાની કૃતિઓ માટે લીધી છે સમયસુંદરની કૃતિની દેશીઓ ઘણી પ્રસિદ્ધ થયેલી દેખાય છે

લંકા ગઢનો રાય સ૦ સ૦ સીતાસુ લપટાણો રાતિ દિવસ રહ્યો રે લો૦ મહિયા૦
મન વંછિત સુખ માણિ સ૦ સ૦ સીના પણિ કીધો સહુ જિમ રાવણ કહ્યો રે લો૦ મહિયા૦ ૧૧
સાચો તે સોભાગ સ૦ સ૦ સીલ રતન સાચે મનિ પૂરો પાલીયે રે લો૦ મહિયા૦
કરે એક વચન વિલાસ સ૦ સ૦ પર પુરૂષા મધાતિ પગ્ચિો ટાલિયે રે લો૦ મહિયા૦ ૧૨
જુગતિ કહે વલિ એક સ૦ મ૦ કુસતિ જો સીતા તો કિમ આણી ઘણી રે લો૦ સહિયા૦
કહે અપરા વલિ એમ મ૦ સ૦ અભિમાને આણીએ રમણી આપણી રે લો૦ સહિયા૦ ૧૩
કહે કામિણિ વલિ કોઇ સ૦ સ૦ તે આણી તો માની કા ? રામ સીતા ભણી રે લો૦ સહિયા૦
કહે વલિ બીજી કોઇ સ૦ સ૦ સીતાસુ પૂરવે પ્રીતિ હુતી ઘણી રે લો૦ સહિયા૦ ૧૪
જો હુયે જીવન પ્રાણુ સ૦ સ૦ તે માણુસ મુંકે તો જીવ વહે નહી રે લો૦ સહિયા૦
અપજસ સહે અનેક સ૦ સ૦ પ્રેમ તણી જાયે કિમ વાત કિણે કહી રે લો૦ સહિયા૦ ૧૫
એક કહે હિત વાત સ૦ સ૦ લોકા મે ન્યાઇ નૃપ રામ કહીજીયે રે લો૦ સહિયા૦
કુલને હોઇ કલંક સ૦ સ૦ તે રમણી રૂડી પણિ કિમ ગખીયે રે લો૦ સહિયા૦ ૧૬
ઊખાણો કહે લોક સ૦ સ૦ 'પેટે કો ઘાલે નહિ અતિ વાલ્હી છુરી'રે લો૦ સહિયા૦
રામને જુગનો એમ સ૦ સ૦ ઘરમેથી સીતાને કાઢે બાહિરી રે લો૦ સહિયા૦ ૧૭
સેવકે એહવી વાત સ૦ સ૦ નગરીમે સાભલિને રામ આગે કહી રે લો૦ સહિયાં૦
રામ થયા દિલગીર સ૦ સ૦ એહવી કિમ અપજસ વાત જાયે ગહી રે લો૦ સહિયા૦ ૧૮
અન્ય દિવસ શ્રીરામ સ૦ સ૦ નષ્ટ ચરિત નગરીમે રાતિ નીસર્યા રે લો૦ સહિયા૦
કિણુહી કારૂબારિ સ૦ સ૦ છાના સા ઊભા રહિ કાન ઉંચા ધર્યા રે લો૦ સહિયા૦ ૧૯
તેહવે તેહની નારિ સ૦ સ૦ બાહિરથી અસૂરી આવી તે ઘરે રે લો૦ સહિયા૦
રીસ કરી ભરતાર સ૦ સ૦ અસ્ત્રીને ગાલી દેઇ ઘો બહુ પરે રે લો૦ સહિયા૦ ૨૦
રે રે નિરલજ નારિ સ૦ સ૦ તુ ઇતરી વેલા લગિ બાહિર કિમ રહી રે લો૦ સહિયા૦
પેસિવા નહિ ઘુ માહિ સ૦ સ૦ હુ નહિ છુ સરિખો રામ તું જાણે સહી રે લો૦ સહિયા૦ ૨૧
સુણિ કુવચન શ્રી રામ સ૦ સ૦ ચિંતવિવા લાગા મુઝ દેખો મેહણો રે લો૦ સહિયા૦
ક્ષત ઉપરિ જિમ ખાર સ૦ સ૦ દુખ માહે દુખ લાગો રામને અતિ ઘણો રે લો૦ સહિયા૦ ૨૨
રામ વિચાર્યો એમ સ૦ સ૦ અપજસ કિમ લોકામાહિ એહવો ઊછલ્યો રે લો૦ સહિયા૦
સીતા એહવી હોઇ સ૦ સ૦ સહુ કોઇ બોલે લોક કુજસ ટોલે મિલ્યો રે લો૦ સહિયા૦ ૨૩
પરઘરભજા લોક સ૦ સ૦ ગુણ છોડી અવગુણ એક બોલે પારકારે લો૦ સહિયા૦
ચાલણિ મેંદો મુકિ સ૦ સ૦ છીતીને થૂલા દેખાડે અસારકા રે લો૦ સહિયા૦ ૨૪
તે કો નહિય ઉપાય સ૦ સ૦ દુશમણનો કિણહિ પરિ ચિત્ત રજીયે રે લો૦ સહિયા૦
સૂરિજ પણિ ન સુહાઇ સ૦ સ૦ ઘૂયડને રાતિ કેહી પરિ કીજીએ રે લો૦ સહિયા૦ ૨૫
શીતનો પાલણ આગ સ૦ સ૦ તાવડનો પણિ પાલણ ટાઢી છાહડી રે લો૦ સહિયા૦
તરસનો પાલણ નીર સ૦ સ૦ માણુસના અબેસાસ પાલણ બાહડી રે લો૦ સહિયા૦ ૨૬
સહુના પાલણ એમ સ૦ સ૦ પણિ દુરજણના મુખનો પાલણ કો નહી રે લો૦ સહિયા૦
સાચો ભાવે જૂઠ સ૦ સ૦ મે મેલો માહરો કુલવંશ કીયો સહી રે લો૦ સહિયા૦ ૨૭
કુજસ કલંક્યો આપ સ૦ સ૦ અજી તાઇ સીતાને છોડુ તો ભલી રે લો૦ સહિયા૦
ઇમ ચિંતવતા ચિત્ત સ૦ સ૦ ઇણ અવસરિ આવ્યા તિહા લખમણ મન રમીરે સહિયા૦ ૨૮

રામલક્ષ્મણ સંવાદ

ચિંતાતુર શ્રી રામ દેખીને દુખ કારણ લખમણ પૂછીઓ રે લો૦
તુમ્હ સરિખે પણિ સુર સોચ ને ચિંતા કરિ મુખ નિરખીઓ કીઓ રે લો ૨૯
કહિવા સરિખો હોઇ તો મુઝને પરમારથ બાંધવ દાખીયે રે લો૦
રામ કહે સુણ વીર તે સ્યુ છે જે તુમ્હથી છાનુ રાખીયે રે લો ૩
લોક તણો અપવાદ સીતાની સગલી વાત તે રામે કહી રે લો
રાવણ લંપટ રાય સીતા તિહાં સીલવતી મ્હે તે કિમ રહી રે લો૦ ૩૧
એહવી સાંભલી વાત કોપાતુર લખમણ કહે લોકો સાંભલો રે લો૦
સીતાના અપવાદ જે કહિસ્યે તેહનો હુ મારિ ગોલી સિતતો રે લો ૩૨
રામ કહે સુણ વછ લોકાના મુહડા તો બીક સમા મલા રે લો
કિમ છુટી જે તેહ, કુવચન પણિ લોકોના કિમ જાઈ સલા રે લો૦ ૩૩
સુણો લખમણ કહે સામિ ઝખ મારે નગરીના લોક અભાગીયારે લો૦
સાચો સીતા સીલ એ વાતનો પરમેસર થાસ્યે સાખીઓ રે લો ૩૪
જો પણિ વાત છે એમ, તો પણિ વિણ છોડયા મુઝ અપજસ નૂતરે રે લો
ઇણ પરિ ચિત્ત વિચારિ, વાત સહુ ન્યાઇ રામ સુણિ તો જે કરે રે લો ૩૫
પહિલી ઢાલ રસાલ સ સ૦ સાંભલતા સુગનો હીયડો ગહગહે રે લો૦ સ
કીધા કરમ કઠોર સ સ૦ વિણ વેધા છૂટે કુણ સમયસુંદ મ્હે રે લો સ ૩૬

—સીતા રામ પ્રબંધ ચોપઇ રચ્યા સં ૧૬૮૩ ને

લખ્યા સં ૧૬૮૩ (કવિ હસ્ત લિખિત)

આમા કેવી સાદી વાણી-અલંકાર કે ટાપટીપ વગરની રચના—કવિત્વમા પરિણમે છે ગામમા સીતા માટે બોલાતો અપવાદ, તેનુ રામ પાસે નિવેદન, રામ નગર ચર્ચા જોવા જતા એક જણે સીતાને રાવણે રાખી છતા રામે પોતાને ઘેર રાખી એવુ મારેલુ મેણુ, તે પર રામના વિચાર અને લક્ષ્મણ સાથેનો વાર્તાલાપ એ સવ બતાવી રામના મનના ભાવોનો પ્રવાહ અનેક કડીઓ સુધી સતત ચાલુ રાખ્યો છે

‘ભાવ સરલ, સ્પષ્ટ અને ભવ્ય હોય-તે ઘણી વખત પ્રબળ હોય તો તેમાથી નિપજતુ કાવ્ય-અમૂર્ત ભાવોને મૂર્ત શબ્દોમા છંદોબદ્ધ રચનામા મૂકવાથી પરિણમતુ કાવ્ય ખરૂ કાવ્ય બને છે ઉત્તમ કાવ્યમા વાચ્યાર્થ તરત જ સમજાવો જોઇએ પ્રસાદ અને મધુરતા સાથે નવી નવી ખૂબી જેમ વાચીએ તેમ જણાતી જાય તે ઉત્તમ કાવ્ય છે વાચ્યાર્થ તુરત ન સમજાય એ લોકને માટે તો નિરર્થક જ થઇ પડે છે આમા અર્થબોધ સરલતાથી એકદમ થાય છે, અને આ સ્પષ્ટ કવા કવિના અપ્રકટ અને અતિ મ્હોટા કાવ્ય—જેન રામાયણ ને અવતારતા આ સીતા રામ પ્રબંધમાથી એક આખુ કાવ્ય વિસ્તારનો સંકોચ રાખ્યા વગર અત્ર આપ્યું છે

કવિના અખંડ કાવ્યો-મહાકાવ્યમાંથી નમુના લઇ તેમની કાવ્ય શક્તિ પર વિચાર કરવાનાં સાધન જોયાં, હવે તેનાં ખંડ કાવ્યો-ટૂંકા કાવ્યો પર જઇએ.

આલોયણ (આલોચના) સ્તવન.

આમાં શત્રુંજય ગિરિની યાત્રા કરતા ત્યાં ઋષભદેવ પાસે પોતાના હૃદયની વાત કરી જે કંઇ પોતે પાપો કર્યા હોય તે ગણાવી તેની આલોચના કરી માફી ચાહે છેઃ-

બે કરજોડી વીનવૂ જી, સુણિ સ્વામી સુવિદીત,
કૂડ કપટ મૂંકી કરી જી, વાત કહૂ આપ વીત.
કૃપાનાથ ! મુઝ વીનતી અવધાર-

તૂ સમરથ ત્રિભુવન ધણીજી, મુઝને દુત્તર તાર- કૃપા૦

ભવસાયર ભમતા થકાજી, દીઠા દુખ અનંત,
ભાગ સંયોગે ભેટિયોજી, ભય ભંજણ ભગવંત- કૃપા૦

જે દુઃખ ભાજે આપણાજી, તેહને કહિયે દુખ,
પરદુખભંજન તૂ સુણ્યોજી, સેવકને દ્યો સુખ- કૃપા૦

હવે પોતાના સમયની સ્થિતિ જણાવે છે—

દૂષમ કાલે દોહિલોજી, સૂધો ગુરૂ સંયોગ,
પરમારથ પીછે નહીજી, ગડર પ્રવાહી લોક- કૃપા૦

[તિણ તુઝ આગલ આપણા જી, પાપ આલોઉં આજ,
માય બાપ આગલ બોલતા જી, બાલક કેહી લાજ- કૃપા૦]

જિન ધર્મ જિન ધર્મ સહૂ કહેજી, થાપૈ અપણી જી વાત,
સામાચારી જુઇ જુઇ જી, સંશય પડયા મિથ્યાત- કૃપા૦

જાણ અજાણપણે કરી જી, બોલ્યા ઉત્સૂત્ર બોલ,
રતને કાગ ઉડાવતાજી, હાર્યો જનમ નિટોલ- કૃપા૦

આ પછી પોતાની આપવીતી-નિર્બળતા ઉત્કટ હૃદય નિર્મળતાથી જણાવે છે.

ભગવંત-ભાખ્યો તે કિહાજી, કિહા મુઝ કરણી એહ
ગજ પાખર ખર કિમ સહેજી, સબલ વિમાસણ તેહ- કૃપા૦ ૧૦

આપ પ્રરૂપ્યુ આકરૂજી, જાણે લોક મહંત,
પિણ ન કરૂ પરમાદિયોજી, માસાહસ દૃષ્ટાંત- કૃપા૦ ૧૧

કાલ અનંતે મે લહ્યાજી, તીન રતન શ્રીકાર,
પિણ પરમાદે પાડિયાજી, કિહા જઇ કરૂ પુકાર- કૃપા૦ ૧૨

જાણૂં ઉત્કૃષ્ટી કરૂજી, ઉદ્યત કરૂ અવિહાર,
ધીરજ જીવ ધરે નહીજી, પોતે બહુ સંસાર- કૃપા૦

મહાવીર સ્તવન

વીર સુણો મોરી વીનતી કરજોડી હો કહું મનની વાત
બાલકની પરે વીનવૂ, મેરા સ્વામી હો ! તૂ ત્રિભુવન તાત—
વીર સુણો મોરી વીનતી　　૧

તુમ દરશણ વિણ હુ ભમ્યો ભવ માંહ હો સ્વામી ! સમુદ્ર મઝાર
દુખ અનંતા મે સહ્યા, તે કહિતા હો કિમ આવે પાર.　　વીર ૨

પર ઉપગારી તૂ પ્રભુ દુખ ભજે હો જગ દીન દયાલ
તિણ તોરે ચરણે હું આવિયો, સામી ! મુઝને હો નિજ નયણ નિહાલ　　વીર. ૩

અપરાધી પિણુ ઉધર્યા તે કીધી હો કરુણા મોગ સ્વામ
હું તો પરમ ભક્ત તાહરો તિણ તારો હો નહીં ઢીલનો કામ　　વીર ૪

× × × ×

[આ પછી શૂલ પાણિ, ચડકૌશિક નાગ, ગોશાલો, ગૌતમ, જમાલિ અયમન્તા ઋષિ, મેઘકુમાર, નંદિષેણ, આર્દ્રકુમાર, ચેલણા, શ્રેણિક એ સર્વને ઉદ્ધર્યા જણાવી]

ઇમ અનેક તે ઉધર્યા કહું તોરા હો કેતા અવદાત
સાર કરો હિવ માહરી મનમાહે હો આણો મોરડી વાત　　વીર ૧૫

સુધો સંજમ નહિ પલૈ નહિ તેહવો હો મુઝ દરશણ જ્ઞાન
પિણ આધાર છે એતલો, ઇક તોરો હો ધરૂં નિશ્ચલ ધ્યાન　　વીર ૧૬

મેહ મહિતલ વરસતો, નવિ જોવે હો સમ વિષમા ઠામ,
ગિરૂવા સહજે ગુણ કરે સ્વામી ! સારો હો મોરા વંછિત કામ　　વીર ૧૭

તુમ નામે સુખ સંપદા તુમ નામે હો દુખ જાયે દૂર
તુમ નામે વંછિત ફલે, તુમ નામે હો મુઝ આનંદ પૂર　　વીર ૧૮

કલશ (હરિગીતના લયમા કલશ મૂકાય છે)

ઇમ નગર જેસલમેરૂ મંડન તીર્થંકર ચોવીસમો,
શાસનાધીશ સિંહ લંછન સેવતા સુરતરૂસમો
જિનચંદ ત્રિશલા માત નંદન સકલચંદ કલા નિલો
વાચના ચારજ સમયસુંદર સંથુણ્યો ત્રિભુવનતિલો

ચાર ચરણમા છે લું ચરણ સાધારણ—સામાન્ય એક જાતનું આવે એવુ—ભુજંગી, કે એવી જાતના છંદ વાળુ કાવ્ય તેને સામાન્ય રીતે ' છંદ ' એ નામ જૈનોમા અપાયું છે આવો ' છંદ ' પાર્શ્વનાથનો ૭ કડીનો કવિએ કરેલો નોધવામા આવ્યો છે, તેના પ્રથમની બે કડીઓ આ છે —

આપણ ઘર બેઠા લીલ કરો, નિજ પુત્ર કલત્ર શુ પ્રેમ ધરો
તમે દેશ દેશાંતર કાંઇ દોરો નિત્ય પાસ જપો શ્રી જિન કેરો　　૧

હતી. શ્રી મહાવીરના ઉપદેશથી વૈરાગ્ય આવતા શાલિભદ્ર એક દિવસ એક, બીજે દિવસે બીજી એમ સ્રીનો ત્યાગ કરતો ગયો; આથી તેની બહેન પોતાના પતિને સ્નાન કરાવતી વખતે રડી પડતાં આંસુ પતિના શરીરે પડયાં. તે ધન્યે રડવાનું કારણ જાણી જણાવ્યું કે આવો ત્યાગ હોય ! વૈરાગ્ય થતો હોય તો એકદમ સર્વનો ત્યાગ એકી સાથે ઘટે. સ્રીએ કહ્યુ કે કહેવું સોહેલું છે, પણ કરવુ દોહેલુ છે. એટલે ધન્ય શેઠે સર્વ સ્રીનો તુરત જ પરિત્યાગ કરી સંયમ લીધો. શાલિભદ્રે પણ પછી દીક્ષા લીધી બંને મહાવીરના શિષ્ય–સાધુ બની સંયમ પાળી દેવલોકે ગયા. ઉપરના શાલિભદ્રના ત્યાગથી તેના બેન અને બનેવી ધના વચ્ચેની–સ્રી પતિની વાત ટુંકમા પણ સુંદર શબ્દોમા કવિએ આલેખી છે તે જરા ઉદાહરણાર્થે અત્ર મૂકવામા આવે છે:—

૧

વીર તણી વાણી સુણી જીરે, વૂઠો મેહ અકાલ, એકેકી દિન પરિહરેજી રે, જિમ જલ છડે પાલ
માતા દેખી ટલવલે જીરે, માછલડી વિણ નીર, નારી સઘલી પાયે પડે જીરે, મત છંડો સાહસ ધીર
વહુઅર સઘલી વીનવે જીરે, સાંભલ સાસુ વિચાર, સર છાંડી પાલેં ચડ્યો જીરે, હંસલો ઊડણહાર.

૨

ઇણ અવસર તિહા નાવતા જીરે ધના શિર આંસુ પડંત, કવણ દુ:ખ તુજ સાંભર્યું જીરે, ઊંચુ જોઇ કંતત
ચંદ્રમુખી મૃગલોચની જીરે, બોલાવી ભરતાર, બંધવ વાત મેં સાંભલી જીરે, નારીનો પરિહાર
ધનો ભણે સુણ ઘેલડી જીરે, શાલિભદ્ર પૂરો ગમાર, જો મન આણ્યું છંડવા જીરે, વિલંબ ન કીજે લગાર.
કરજોડી કહે કામિની જીરે, બંધવ સમો નહી કોય, કહેતા વાત જ સોહલી જીરે, મકતા દોહલી હોય
'જારે જા' તેં ઇમ કહ્યો જીરે, તો મે છડી રે આઠ, પિઉડા ! મેં હસતા કહ્યુ જીરે, કુણ શું કરશું વાત.

૩

ઇણે વચનેં ધનો નીસર્યો જીરે, જાણે પંચાયણ સિંહ, જઈ સાલાને સાદ કર્યો જીરે, ઘેલા ! ઉઠ અબીહ.
કાલ આહેડી નિત ભમે જીરે, પૂઠે મ જોઇશ વાટ, નારી બંધન દોરડી જીરે, ધવ ધવ છંડે નિરાશ
જિમ ધીવર તિમ માછલો જીરે, ધીવરે નાખ્યો રે જાલ, પુરુષ પડી જિમ માછલો જીરે, તિમહિ અચિંત્યો કાલ.
જોબનભર બિહું નીસર્યા જીરે, પોહોતા વીરજીની પાસ, દીક્ષા લીધી રૂઅડીજી રે, પાલે મન ઉલ્લાસ.

× × ×

ક્ષમાછત્રીશી—એ છત્રીશ કડીનુ સમતા વિષયે કાવ્ય છે તેમાં પહેલા એટલું જણાવે છે કે

આદર જીવ ક્ષમા ગુણ આદર, મ કરિશ રાગને દ્વેષજી,
સમતાયે શિવ સુખ પામીજે, ક્રોધેં કુગતિ વિશેષ જી— આદર૦

સમતા સંજમ સાર સુણી જે', કલ્પ સૂત્રની સાખજી,
ક્રોધ પૂર્વ કોડિ ચારિત્ર બાલે, ભગવંત ઇણી પરે ભાખજી— આદર૦

કુણ કુણ જીવ તર્યા ઉપશમથી સાંભલ તું દૃષ્ટાંતજી
કુણ કુણ જીવ ભમ્યા ભવમાંહે ક્રોધ તણે વિરતંતજી— આ ૨૦

આ પછી જૈન કથાઓમાંથી ક્રોધ અને સમતાપર દૃષ્ટાંત આપી છેવટે જણાવે છે કે—
ઇમ અનેક તર્યા ત્રિભુવનમેં, ક્ષમા ગુણે ભવિ જીવજી ક્રોધ કરી કુગતે તે પહોતા પાડતા મુખ રીવજી
વિષ હલાહલ કહીયે વિરૂઓ તે મારે એક વારજી, પણ કષાય અનંતી વેલા આપે મરણ અપારજી
ક્રોધ કરતા તપ જપ કીધા, ન પડે કાંઇ ઠામજી આપ તપે પરને સંતાપે ક્રોધશું કેહો કામ જી
ક્ષમા કરતા ખરચ ન લાગે ભાગે ક્રોડ કલેશજી અરિહંત દેવ આરાધક થાયે વ્યાપે સુજસ પ્રદેશજી

કેટલાક છુટક પદો

પ્રભુ-રૂપ

પ્રભુ તેરો રૂપ બન્યો આછો નિકો-પ્રભુ પાય બગનકે પાટ પટંબર પેચ બણ્યો કસબીકો—પ્રભુ૦
મસ્તક મુકટ કાને દોય કુંડલ હાર હિયે સિર ટીકો સમકિત નિર્મલ હોત સકલજન દેખ દર્શ જિનજીકો
સમવસરણ વિચ સ્વામી વિરાજિત સાહિબ તીન ભુવનકો સમયસુંદર કહે એ પ્રભુ મેરે, સકલ જગત તાહિકો

ઋષભ સ્તવન-રાગ મારૂ

દેવ મેરા હો ઋષભ દેવ મેરા હો પુણ્ય સંજોગે હું પામીઓ પ્રભુ દરિસન તેરા હો— ઋષભ૦
ચોરાશી લખ હું ભમ્યો, પ્રભુ ભવના ફેરા હો દુખ અનંતા મેં સહ્યા પ્રભુ ત્યાહા ઘણેરાં હો.
ચરણ તુમારા મેં ગ્રહ્યા સ્વામી અબકી વેળા હો સમયસુંદર કહે તુમહથી સ્વામી કોણ ભલેરા હો

ઋષભ ભક્તિ

હેરી માઇ ઋષભજી મેરે મન ભગતિ બસીરી— માઇ૦
પ્રથમ ભવનપતિ પ્રથમ નરેશર પ્રથમ યોગીસર પ્રથમ જતિ રી— માઇ૦
પ્રથમ ભિક્ષાચર પ્રથમ તીર્થંકર પ્રથમ કેવલજ્ઞાની મુગતિ ગતિ રી— માઇ
શ્રી વિમલાચલ સાહેબ મંડણ પ્રણમત સમયસુંદર ઉલ્લસી રી— માઇ૦

શાન્તિનાથ સ્તવન, રાગ બિલાસ.

આગન કલ્પ ફલ્યોરી હમારે માઇ આગન
રિદ્ધિ વૃદ્ધિ સુખ સંપતિદાયક શ્રી શાંતિનાથ મિલ્યો રી— હમારે૦
ચૂવા ચંદન મૃગ મદ ભેની માંહે બરાસ ભલ્યો રી—
પૂજત શ્રી શાંતિનાથકી પ્રતિમા અનંગ ઉદ્વેગ ટલ્યો રી— હમારે
શરણે રાખ્યો કૃપા કરી સાહિબ યું પારેવો પંખી રી
સમયસુંદર કહે તુમારી કૃપા તે શિવ સુંદરી શું મિલ્યો રી— હમારે૦

અનંતગુણી પ્રભુ

ગુણ અનંત અપાર પ્રભુ તેરે ગુણ૦ સહસ રસના કરત સુર નર તોહી ન પાવે પાર— પ્રભુ૦
કૌન અંબર ગિને તારા, મેરૂગિરિકો ભાર ચરમ સાગર લહિર માલા કરત કૌન વિચાર— પ્રભુ

ભક્તિ ગુણ લવલેશ ભાખ્યો, સુવિધિ જિન સુખકાર, સમયસુંદર કહત હમકું, સ્વામી તુમારો આધાર-પ્રભુ૦

પ્રભુ સેવાનો ઉલ્લાસ-રાગ મલાર.

ક્યૂં ન ભયે હમ મોર, વિમલગિરિ ક્યું ન ભયે હમ મોર.
રૂપભજી રેખત આનંદ ઉપજત, જેમે ચંદ ચકોર- વિમલ૦ ક્યૂં૦

ક્યૂં ન ભયે હમ શીતલ પાની, સિંચિત તરૂઅર છોડ,
અહનિશ જિનજીકો અંગ પખાલત, તોરત કર્મ કઠોર- વિમલ૦

ક્યૂં ન ભયે હમ બાવના ચંદન, ઔર કેશર કોરી છોર,
ક્યૂં ન ભયે હમ મોગર માલતી, રહેત જિનજીકે ઉર- વિમલ૦

ક્યૂં ન ભયે હમ મૃદંગ ઝલરીયા, કરત મધુર ધ્વની ઘોર,
જિનજીકે આગે નૃત્ય સોહાવત, પાવત શિવપુર ઠોર- વિલાસ૦

જગમંડલ સાચો એ જિનજી, ઔર દેખા ન રાચત મોર,
સમયસુંદર કહે એ પ્રભુ સેવો, જનમ જરા નહી ઓર વિમલ૦

મનને ઉપદેશ

મેરા જીવ આરતિ કાહા ધરે,
જેસા વે ખાતમે લખિત વિધાતા, તિનમે ઘટે ન બઢે— મેરા૦ ૧

ચક્રવર્ત્તિ શિર છત્ર ધરાવત, કે ક ન મંગલ કરે,
એક સુખીયા એક દુખી દીસે, એ સબ કરમ કરે— મેરા૦ ૨

આરતિ અબ છોર દે જીઉડા, રોતે ન રાજ ચડે,
સમયસુંદર કહે જો સુખ વાછે, કર ધરમ ચિત્ત ધરે— મેરા૦ ૩

સમયના પલટા પર વૈરાગ્ય સૂચક પદ-રાગ આશાવરી

કિસિકું સબ દિન સરખે ન હોય. પ્રહ ઉગત અસ્તગત દિનકર, દિનમેં અવસ્થા દોય—કિસિકું.
હરિ બલભદ્ર પાંડવ નળ રાજા, રહે પટ્ખંડ સિદ્ધિ ખોય, ચંડાળ કે ઘર પાણી આણ્યુ, રાજા હરિચંદ જોય
ગર્વ મકર તુ મૂઢ ગમારા, ચડત પડત સંબ કોય, સમય સુંદર કહે ઇતર પરત સુખ, સાચો જિનધર્મ સોય

રાગ પદ

સ્વારથકી સબ હેરે સગાઇ કુણ માતા કુણ બેનડ ભાઈ—સ્વારથકી૦
સ્વારથ ભોજન ભુક્ત સગાઇ, સ્વારથ બિન કોઇ પાણી ન પાઇ-
સ્વારથ માબાપ શેઠ બડાઇ, સ્વારથ બિન નહુ હોત સહાઇ-
સ્વારથ નારી દાસી કહાઇ, સ્વારથ બિન લાઠી લે ધાઇ-
સ્વારથ ચેલા ગુરૂ ગુરુભાઇ, સ્વારથ બિન નિત હોત લરાઇ-
સમય સુંદર કહે સુણોરે લોકાઇ, સ્વારથ હે ભલિ પરમ સગાઇ-

(પાઠાંતર) સ્વારથ હે ભલા ધર્મ સખાઇ-

વૈરણ નિદ્રા-રાગ પદ

સોઇ સોઇ સારી રૈન ગુમાઇ બૈરન નિદ્રા કહાસે રે આઇ—સોઇ૦
નિદ્રા કહે મે તો બાલી રે ભોલી, બડે બડે મુનિજનકુ નાખુ રે ઢોલી—
નિદ્રા કહે મે તો જમકી દાસી એક હાથે મૂકી બીજે હાથે ફાસી—
સમયસુંદર કહે સુનો ભાઇ બનીયા આપ મૂએ સારી ડુબગઇ દુનીયા—

[આમા પોતાના શ્રોતાઓ 'વાણીઆ' ને ઉદ્દેશેલ છે ને કબીરનુ ચરણ કહેત કબીરા સુનો મેરે ભૈયા આપ મુએ પિછે ડૂબ ગઇ દુનિયા' એનુ અનુકરણ કર્યું જણાય છે]

સમયસુંદરજી એક વખત હાલના અજમેર પાસેના કિસનગઢ શહેરમા પધાર્યા હતા, ત્યા શ્રાવકોને આપસ આપસમા કલેશ અને એક બીજાની નિંદા કરતા જોઈ તેઓશ્રીએ નીચે પ્રમાણે હૃદયની ઉર્મિઓ પ્રકટ કરી છે તે આત્માર્થી જનોએ મનન કરવા જેવી છે

કયારે મલશે શ્રાવક એહવા સુગુરુએ આવી વખાણીજી
ધર્મગોષ્ઠી ચર્ચા કરીશુ અમે, વીતરાગ વચન પ્રમાણીજી　　　કયારે
ધુરથી સમકિત જે સુધો ધરે માને નહિ મિથ્યાતોજી
સ્વામીશુ ધરણે બેસે નહિ નહિ રાગદ્વેષની વાતોજી　　　કયારે૦

[વખાણ-વ્યાખ્યાન ધુરથી-મૂળથી સમકિત-સમ્યગ્દર્શન-શ્રદ્ધા સુધો-શુદ્ધ, મિથ્યાત્વ-અશ્રદ્ધા-મિથ્યા શ્રદ્ધા સ્વામી-સહધર્મી-સ્વધર્મી ધરણો-ત્રાગુ-આડુ]

છેલ્લે સ્થૂલભદ્ર અને કોશાનો પ્રસગ લઇ એક ગીત કવિએ રચ્યુ છે તે અપ્રકટ હોવાથી અત્ર આપુ છુ —

રાગ સારગ

પ્રીતડિયા ન કીજઇ હો નારિ પરદેસીયા રે ક્ષણે ક્ષણે ક્ષણે દાઝે દેહ
વીછડિયા વહાલેસર મલવો દોહિલોજી સાલે સાલે અધિક સનેહ-પ્રીતડિયા૦
કાલ આવ્યા ને આજ ઉઠિ ચાલસેરે ભમર ભમતા જોઈ
માજણિઆ વજાવીને પાછા વળતાજી ધરતિ ભાર ન હોઇ-પ્રીતડિયા૦
મનના મનોરથ સવિ મનમા રહ્યાજી કહીએ કેહનિ સાથિ
કાગળીઓ લખતા ભીનો આસુએજી ચડિયો હો દુર્જન હાથ-પ્રીતડિઆ૦
થૂલભ કોસા ખુઝવીજી પાલ્યો હો પૂરવ પ્રેમ
સીલ સુરંગિ પેહરો ચુનડિજી સમય સુંદર કહે એમ—પ્રીતડિયા

[સીલસુરંગી ચુનડી ઉપર પછીના કેટલાક કવિઓએ નવા કાવ્ય કર્યાં છે]

આ કવિની કૃતિઓમા, કવિ રજપુતાના-મારવાડ મેવાડમા બહુ રહેલા તેથી તે ભાષાના છાટણા જોવામા આવે છે એટલુ જ નહિ, પણ ઉર્દુ-ફારસી શબ્દો પણ ઘણા વપરાયા જણાય છે કારણ કે કવિને દિલ્હી અને મુગલ દરબારમા-શહેનશાહ અને તેના રાજદ્વારીઓના પ્રસગમા બહુ આવવુ પડયું હતું તેથી અને તેમ જ ગુજરાતમા પણ મુસલમાની રાજ્યનો

અમલ કરણઘેલાના પછીના સમયથી થઈ ચૂકયો હતો તે કારણે દફતરો, અદાલત વગે-રેમાં મુસલમાની ભાષાનો પ્રવેશ થઈ ચૂકયો હતો. ગૂજરાતવાસી લોકોની મૂળ ભાષા ગૂજ-રાતી હોવા છતા પણ રાજ્યના વ્યવહાર માટે ઊર્દુ ભાષા ભણવી કે બોલવી પડતી; આથી ઊર્દુ-ફારસી અરબી શબ્દો કાળે કરીને આ સત્તરમા સૈકામાં ઘર કરી ગયા—રૂઢ થયા. વિશેષમાં વિક્રમ ચૌદમા શતકમાં ઇરાનથી ભાગી આવી પારસીઓ ગૂજરાતમા વસ્યા હતા, મુસલમાનો ઉપરાત પોર્ટુગીઝો અને તેમના હરીફ તુર્કો સોળમાં શતકમાં આવી પહોચ્યા હતા, આ કવિના સમયમાં એટલે સત્તરમા સૈકામા અગ્રેજોએ પણ આવી પોતાની કોઠીઓ સુરત વગેરે સ્થળે નાખવાના પ્રયત્નો ચાલુ રાખ્યા હતા. આ વિદેશીઓની સાથેના સંબધ વ્યવહારથી ભાષાપર નવી અસર થઇ. આ કાળ અને સજોગ વશાત્ ઘુસેલા શબ્દોનું ભાષામાં ભરણુ થયુ તેથી તે ભડોળને ભાષાની વૃદ્ધિ સમજી આદર આપવો ઘટે. આથી ભાષાનુ સૌંદર્ય ખંડિત થયેલું માનવુ યોગ્ય નથી. કોમળ અને કઠિન બંને જાતના શબ્દો આવશ્યક છે મરદાનગી બતાવવામા લલિત કોમલતાનો પ્રયોગ ન ઘટે.

કવિના નલદમયતી રાસમાંથી બે ચાર કડી જોઇએ—ખંડ ૬ ઢાલ ૨.

> નવલગય તખત બઇસારી કરી રે, વરતાવઇ આપણી આણુ દાણુ રે,
> ખલક લોકઇ આગઇ ખડી રે, આગઇ જુડયો સમસ્ત દીવાણુ રે.
> દેસ વસ સગલો કીઉ રે, કાઇ સાધ્યા ભરતનિ ખંડ રે,
> ભૂપતિ સલામે લઇ ભેટણા રે, નલનો તપ તેજ પ્રચંડ રે

આ કવિએ જૂની શાસ્ત્રીયકથાઓના આખ્યાનોનો ઉપયોગ કરી પોતાની ભાષામાં-ગૂર્જર ભાષામા આખ્યાનોનો બાગ ખીલાવ્યો છે. તેમાં પોતે પ્રાચીન આખ્યાનોમાં તદ્રૂપ બની તેને પોતાના હૃદયની અંદર પ્રવેશ કરાવી તેમાંથી તેઓનાં પાત્રોને પોતાના સમ-યના પાત્રો જેવા કલ્પી જે ક્વચિત્ ક્વચિત્ મૂકયાં છે તે એનું દૂષણ નથી પણ ભૂષણ છે. આ રીતે પ્રાચીનમાનુ ગ્રહણ કરી તેનું રૂપાન્તર કરી પોતાના ભાષા સાહિત્યને ઉજ્જવળ બનાવ્યુ છે. છૂટા છૂટા પદો-નાના નાનાં કાવ્યો રચી પોતાના હૃદયનો ઉલ્લાસ પ્રકટ કર્યો છે. કવિ પ્રેમાનદના પુરોગામી આ કવિએ આખ્યાન કવિ તરીકે પ્રસિદ્ધતા સિદ્ધ કરી છે, અને દેશી સાહિત્યની વૃદ્ધિ કરી છે.

આવા પ્રાચીન દેશી સાહિત્યનું જ્ઞાન ઘણું વધારવાની જરૂર છે તે જ્ઞાન વધતાં અને પ્રાચીન સાહિત્ય પરત્વેની આપણી મમત્વ બુદ્ધિ તીવ્ર થતાં તે જ્ઞાન ફલદ્રુપ નીવડશે, તેમાથી કવિઓને નવીન ઉર્મિઓનાં સાધન, ભાવો, અને રસમય વાણી મળશે; ભાષા-શાસ્ત્રીઓને ભાષાવિકાસ—રૂપાન્તર વગેરેપર અવનવો પ્રકાશ પ્રાપ્ત થશે અને સમગ્ર ભાષાનો ઇતિહાસ રચવામાં તે ઉપયોગી થશે આ દેશી પ્રાચીન સાહિત્ય એ આપણા સાહિત્યનું પ્રબલ પોષકબળ છે, પછી તે જૈન હો વા જૈનેતર. બને એકજ—ભારતમાતાનાં-ગૂર્જરી માતાના સંતાન છે, બને સરસ્વતી દેવીના એક સરખા ઉપાસક છે, બને સાહિત્ય શરી-

રના અંગો છે બન્નેની લાજ એક બીજાના હાથમા છે બન્ને એક બીજા સાથે એકત્રિત રહીને જ શોભશે, અને પોતાની માતાને-ભૂમિને શોભાવશે

પરમ પ્રભુભક્ત નાગર વૈષ્ણવ શ્રી નરસિંહ મહેતા કહી ગયા છે કે 'પક્ષાપક્ષી ત્યા નહી પરમેશ્વર, સમદૃષ્ટિને સર્વ સમાન'—તે સર્વેએ સ્વીકારી સાહિત્યને પક્ષાપક્ષી વગરનુ રાખવાનુ છે, તો જ ગૂર્જરી વાણીનો જય થશે-ઉત્કર્ષ થશે તથાસ્તુ !

પૂરવણી

આ નિબધ લખાઇને છપાઇ ગયા પછી સમયસુંદરજીની કેટલીક નવી કૃતિઓ જાણવામા આવેલી હોવાથી તેના નામ વિગેરે આ પૂરવણીમા આપી દેવાનું ઉચિત લાગ્યુ છે

સસ્કૃત પ્રાકૃત-ગદ્ય પદ્ય ગ્રથ

(૧) ચતુર્માસ પર્વ વ્યાખ્યાન પદ્ધતિ સ ૧૬૬૫ ચૈત્ર શુ ૧ અમરસર નગરમા

(૨) કપલતા મધ્યે ભોજનવિચ્છિત્તિ ગદ્યમા સાધર્મિક ભાઇઓની ભક્તિ સબધી વિવેચન

ભાષા કૃતિઓ-ચોપાઇ વિગેરે

વ્યવહાર શુદ્ધિ ચોપાઇ	સવત્ ૧૬૯૩
દ્રુપદી સતી સબધ	સવત્ ૧૭૦
આલોયણા છત્રીસી	અહમદપુર (અમદાવાદ) મા સ ૧૬૮૮

સમય વગ ની કવિતાઓ

૧ જબૂ રાસ	૨ નેમિરાજીમતી રાસ	૩ પ્રશ્નોત્તર ચોપાઇ
૪ શ્રી પાન રાસ	૫ હસરાજ વચ્છરાજ ચોપાઇ	૬ પ્રશ્નોત્તર સાર સગ્રહ
૭ પદ્માવતી સઝાય	૮ ચ્યાર પ્રત્યેક બુદ્ધપર સ	૯ પાર્શ્વનાથ પચકલ્યાણક સ્તવન
૧ પ્રતિમા સ્તવન	૧૧ મુનિસુવ્રત સ્તવન	

નાના નાના કાવ્યો-ગીતો વિગેરે

૧ નલ દવદતી, ૨ જિનકુશલસૂરિ ૩ ઋષભનાથ ૪ સનત્કુમાર ૫ અર્હન્નક ૬ સ્થૂલભદ્ર જી, ૭ ગૌતમસ્વામી ૮ ક્રોધનિવારણ ૯ માનનિવારણ ૧ મોહનિવારણ ૧૧ માયાનિવારણ ૧૨ લોભ નિવારણ ૧૩ યતિ લોભનિવારણ ૧૪ મનશુદ્ધિ, ૧૫-૧૬ જીવપ્રતિબોધ, ૧૭ આર્તિનિવારણ ૧૮ નિદ્રાનિવારણ ૧૯ કુકારનિવારણ ૨૦ કામિની વિશ્વાસ ૨૧ જીવનટ ૨૨ સ્વાર્થ ૨૩ પારકી હોડ નિવારણ ૨૪ જીવ વ્યાપાર ૨૫ ઘડી લાખીણી ૨૬ ઘડિયાલા ૨૭ ઉદ્યમભાગ્ય ૨૮ મુક્તિ ગમન ૨૯ કર્મ ૩૦ નાવ ૩૧ જીવદયા ૩૨ વીતરાગ સત્યવચન ૩૩ મરણભય, ૩૪ સદેહ ૩૫ સૂતા જગાવણ ૩૬ પરમેશ્વર પૃચ્છા, ૩૭ ભગુંન પ્રેરણ ૩૮ ક્રિયા પ્રેરણ ૩૯ પરમેશ્વર સ્વરૂપ દુલભતા, ૪ જીવ કર્મ સબધ ૪૧ પરમેશ્વર લય, ૪૨ નિરજન ધ્યાન ૪૩ દુષમ કાલે સયમ પાલન

॥ अर्हम् ॥

॥ नमोऽस्तु श्रमणाय भगवते महावीराय ॥

जैन साहित्य संशोधक

' पुरिसा ! सच्चमेव समभिजाणाहि । सच्चस्साणाए उवट्ठिए मेहावी मारं तरइ । '

' जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ, जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ । '

' दिट्ठं, सुयं, मयं, विण्णायं जं एत्थ परिकहिज्जइ । '

—निर्ग्रन्थप्रवचन-आचारांगसूत्र ।

पुरातत्त्व संशोधननो पूर्व इतिहास

(સંવત્ ૧૯૭૭ ની શ્રાવણી પૂર્ણિમાના દિવસે, ગૂજરાત મહાવિદ્યાલય, અમદાવાદમાં અપાએલું વ્યાખ્યાન)

પુરાતત્ત્વ એ એક સંસ્કૃત શબ્દ છે સામાન્ય રીતે ઇંગ્રેજીમાં જેને "એન્ટીકવીટીઝ" (Antiquities) કહે છે તે અર્થમાં આ શબ્દ યોજવામાં આવે છે પુરાતત્ત્વ એટલે પુરાતન-જૂનું પુરાણું, અને સંશોધન એટલે શોધખોળ કરવી જૂની વસ્તુઓની શોધખોળ કરવી તે પુરાતત્ત્વ સંશોધન કહેવાય હિંદુસ્તાનની જૂની પુરાણી વસ્તુઓની શોધખોળ કરવાની શરૂઆત ક્યાંથી થઇ અને કઇ કઈ સંસ્થાઓએ તથા કઈ કઈ વ્યક્તિઓએ આ કાર્યમાં વિશેષ ભાગ લીધો તેનું કાંઇક દિગ્દર્શન કરાવવાનો આજના આ મારા વ્યાખ્યાનનો મુખ્ય ઉદ્દેશ છે

મનુષ્ય એક વિશિષ્ટ બુદ્ધિશાળી પ્રાણી છે તેથી દરેક વસ્તુના સ્વરૂપને જાણવાનો અથવા જાણવાની જીજ્ઞાસા હોવાનો તેનો મુખ્ય સ્વભાવ છે આત્માનું અમરત્વ માનનાર દરેક આસ્તિક મનુષ્યના મતે પ્રત્યેક પ્રાણીમાં તેના પૂર્વસંચિત સંસ્કારો પ્રમાણે ન્યૂનાધિક પ્રમાણમાં જ્ઞાનનો વિકાસ થયેલો હોય છે મનુષ્ય પ્રાણી જે સર્વ પ્રાણીઓમાં શ્રેષ્ઠ મનાય છે તેનું કારણ એ છે કે બીજી જીવ-જાતિઓ કરતાં મનુષ્ય જાતિમાં જ્ઞાનનો

વિકાસ સર્વાધિક થયેલો છે. જ્ઞાનના વિકાસ અથવા પ્રસારનુ મુખ્ય સાધન વાણી એટલે ભાષા છે, અને એ વાણીનુ વ્યક્ત સ્વરૂપ સપૂર્ણ રીતે મનુષ્યજાતિમા જ ખીલેલું છે. તેથી બીજા બધા દેહધારી જીવાત્માઓ કરતા મનુષ્યાત્મામા જ્ઞાનનો વિશેષ વિકાસ થાય તે સ્વાભાવિક છે મનુષ્ય જાતિમા પણ વ્યક્તિગત પૂર્વસચિતાનુસાર જ્ઞાનના વિકાસનું અપ્રમિત તારતમ્ય રહેલુ છે સંસારમા એવા પણ મનુષ્યો દૃષ્ટિગોચર થાય છે કે જેમનામા જ્ઞાનશક્તિનો લગભગ છેક અભાવ જ હોય છે અને જેઓ મનુષ્યરૂપમાં પણ સાક્ષાત્ અબુદ્ધ પશુ જેવા હોય છે બીજી બાજુએ એવા પણ મનુષ્યો ઉત્પન્ન થાય છે કે જેમનામા જ્ઞાનશક્તિ અપ્રમેયરૂપે ખીલેલી હોઈ જેઓ પૂર્ણ પ્રબુદ્ધ ગણાય છે પ્રાચીન ભારતવાસીઓના મોટા ભાગનો તો એવો પણ પૂર્ણ વિશ્વાસ હતો, કે એ જ્ઞાનશક્તિ કોઈ કોઇ વ્યક્તિમા એટલે સુધી સંપૂર્ણ ખીલેલી હોય છે અથવા ખીલી શકે છે કે જેથી તે જગત્‌ના સમસ્ત પદાર્થોનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન મેળવી શકે છે; વિશ્વની દૃશ્ય કે અદૃશ્ય એવી એક પણ વસ્તુ કે બાબત તેનાથી અજ્ઞાત હોતી નથી. આવી વ્યક્તિને આર્યો "સર્વજ્ઞ"ના નામે ઓળખે છે. આર્યોની આ મોટા ભાગની શ્રદ્ધા પ્રમાણે આવી કોઈ યથાર્થ સર્વજ્ઞ વ્યક્તિનું અસ્તિત્વ હોઈ શકે કે નહિ એ એક પ્રાચીનકાળથી જ મોટો વિવાદગ્રસ્ત વિષય થઈ પડયો છે; અને સર્વજ્ઞના અસ્તિત્વ–નાસ્તિત્વના વિષયમા આજ સુધીમાં અસંખ્ય વિદ્વાનોએ અનંત શંકા–સમાધાનો કર્યા છે પરંતુ મારે કહેવુ જોઇએ કે નરી આંખે જોઇ શકાય એવા સર્વજ્ઞનું અસ્તિત્વ સાબીત કરનારૂ તો કોઈ પણ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ આજ સુધીમા ચિકિત્સક સસાર આગળ રજુ કરવામા આવ્યુ નથી અસ્તુ એ "સર્વજ્ઞ" ના વિષયમા ગમે તેમ હો, પણ એટલી બાબત તો ચોક્કસ છે કે કોઇ કોઇ મનુષ્ય વ્યક્તિમા જ્ઞાનશક્તિનો એટલો બધો વિકાસ અને પ્રકર્ષ થયેલો પ્રત્યક્ષ જોવાયો છે અને જોવાય છે કે જેનું માપ કાઢવુ બીજાઓના માટે અશક્ય છે શબ્દશાસ્ત્રની બીકને લીધે આપણે એવી પ્રબુદ્ધ વ્યક્તિને જો સર્વજ્ઞ ન કહી શકીએ તો પણ બહુજ્ઞ–અનલ્પજ્ઞ તો અવશ્ય કહી શકીએ છીએ એવી એક બહુજ્ઞ વ્યક્તિની જ્ઞાનશક્તિની તુલનામાં બીજા સાધારણ એવા લાખો કરોડો મનુષ્યોની એકત્રિત જ્ઞાનશક્તિ પણ પૂરી થઈ રહે તેમ નથી.

ઇતિહાસ–અતીત કાલથી સસારમાં આવી અસખ્ય અનલ્પજ્ઞ વ્યક્તિઓ ઉત્પન્ન થતી આવી છે, અને જગત્‌ને તેઓ પોતાની એ અગાધ જ્ઞાનશક્તિનો અમૂલ્ય વારસો સોંપતી રહી છે. છતા મનુષ્ય જાતિએ જગત્‌ના વિષયમા હજી બહુ જ અલ્પ જાણ્યુ છે. જગત્ અદ્યાપિ એવું ને એવું જ અગમ્ય અને અજ્ઞેય છે. જગત્‌ની બીજી અનત વસ્તુઓને તો બાજુએ મૂકીએ પણ મનુષ્ય જાતિએ પોતાના વિષયમા જ હજુ કેટલું જાણ્યું છે ? જેવી રીતે માનવી સંસ્કૃતના પ્રથમ નિદર્શક અને સંસારના સાહિત્યના આદિમ ગ્રથ ઋગ્વેદમાંના ઋષિઓ મનુષ્ય જાતિના ઇતિહાસને અનુલક્ષીને પૂછતા હતા કે–

को ददर्श प्रथमं जायमानम् ?

'સૌથી પ્રથમ ઉત્પન્ન થનારને કોણે જોયો છે ?' તેવી જ રીતે આજે વીસમી

શતાબ્દીના તત્ત્વજ્ઞાનીઓ પણ હજી એ જ પ્રશ્ન પૂછી રહ્યા છે જેવી રીતે જગત્‌ના પ્રાદુર્ભાવના વિષયમા સત્‌ યુગીન નાસદીય સૂક્તનો રચયિતા મહર્ષિ જાણવા ઇચ્છતો હતો કે

को अद्धा वेद क इह प्रवोचत्
कुत आ जाता कुत इय विसृष्टि ।

'આ જગત્‌નો પસારો ક્યાથી આવ્યો છે—અને ક્યાથી નીકળ્યો છે, એ કોઈ જાણે છે ? અને કોઈ બતાવે છે ?' તેવી જ રીતે આજના આ કલિયુગનો તત્ત્વજીજ્ઞાસુ પણ હજી તે જ પ્રશ્નનો ઉત્તર જાણવા તલપી રહે છે જો કે આવી રીતે જગત્‌-તત્ત્વ બહુ ગૂઢ અને અગમ્ય છે, ગૂજરાતી ભક્ત કવિ અખો કહે છે તેમ એ ખરેખર "અધારો કુઓ" છે અને એનો ભેદ પાઈ કોઈ મુઓ નથી છતા માનવી જીજ્ઞાસા અને જ્ઞાન શક્તિએ એ "અધારા કુઆ" નાયે કેટલાક ખણકો ખોળી કાઢવાનો ભગીરથ પ્રયત્ન કર્યો છે એ કુઆના ઉડા પાણી ઉપર ફરી વળેલી નીળી શેવાળને જ્યા ત્યાથી ખસેડી એના જળકણોનો આસ્વાદ મેળવવા મોટી આપત્તિઓ ઉઠાવી છે ગૂઢતર અને ગૂઢતમ જણાતા એ જગત્‌નાયે કઇ કઈ રૂપોને મનુષ્યે ઓળખ્યા છે

સૃષ્ટિના સ્વાભાવિક નિયમ પ્રમાણે ચોમાસાની મોસમમા આકાશ ઉપર ચઢી આવતા વાદળા અને તેમા થતી ગર્જના તથા વિજળીઓને જોઇને જેમ આપણા વેદકાલીન પૂર્વજો મહા ભયભીત થતા હતા અને કુદરતના એ ઉપયોગી મેઘને પણ મોટી આફત રૂપે માનતા હતા તેમ આજે આપણે માનતા નથી પોતાની અસાવધાનતાને લીધે જેમતેમ પ્રજ્વાળેલા અગ્નિમા ભસ્મ થઇ જતી પોતાની પર્ણકુટિઓને જોઇને, કોઈ રાક્ષસ કે દેવ પોતાના ઉપર કુપિત થઇ આ અગ્નિના રૂપે આવેલો છે એમ સમજી તેની આગળ દૂરથી ઉભા ઉભા હાથ જોડી જેમ તેઓ તેની પ્રાર્થના કરતા તેમ આજે આપણે કરતા નથી. વાયુના વેગથી ઉડી જતા ઝુપડા અને ધાસના ઢગલાઓને જોઇને જેમ તેઓ તેને કોઈ મોટો અદૃષ્ટ ચોર સમજી ઇંદ્ર પાસે તેને શિક્ષા કરાવવા માટે ઇન્દ્રની વિવિધ પ્રાર્થનાઓ કરતા તેમ આજે આપણે કરતા નથી આપણા પૂર્વજો અને આપણામા થયેલા આ ફેરફારનુ કારણ શું છે ? વેદકાલીન આર્યો પછી તેમની સતતિએ કરેલી કુદરતના એ ગૂઢતત્ત્વોની કેટલીક શોધખોળો તે જ તેનુ કારણ છે વિશ્વના રહસ્યને સમજવા માટે જેમ જેમ પાછળના મનુષ્યો વધારે બુદ્ધિપૂર્વક વિચાર કરતા ગયા તેમ તેમ તેમને સૃષ્ટિના એ બાધા નુ નિયમો સમજાતા ગયા તેઓએ મેઘના સ્વરૂપને જાણ્યુ, અગ્નિના સ્વભાવને ઓળખ્યો, વાયુની પ્રકૃતિને પહેચાણી, અને તેથી, પછી નિર્ભય અને નિશ્ચિત થવાના ઉપાયો શોધ્યા તેનાથી પણ આગળ વધી આધુનિક યુગના મનુષ્ય પ્રાણીએ કુદરતની એ સ્વચ્છન્દ શક્તિઓના આતર મર્મને સમજી, તેમને કાબુમા આણી, તેમની પાસેથી કેવા કેવા કામો લેવા મા યા છે તે આપણે પ્રત્યક્ષ જોઈ અને અનુભવી રહ્યા છીએ

મનુષ્ય પોતાના ઇન્દ્રિય બળથી માત્ર પોતાના નજદીક સ્થાન રહેલા ધરાવતી અને

પોતાના સસર્ગ કે અનુભવમા આવતી બાબતોનું જ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી શકે છે. સંસર્ગાતીત કે અનુભવાતીત બાબતોનુ જ્ઞાન મનુષ્યોને પોતાની ઇન્દ્રિયો દ્વારા થઈ શકતું નથી. તેમ છતા આપણે જેટલા વિશ્વાસથી આજના બનાવોની ચર્ચા કરીએ છીએ, તેટલા જ વિશ્વાસથી હજારો લાખો વર્ષો પહેલા બની ગયેલા બનાવોની પણ ચર્ચા કરીએ છીએ. શિવાજી કે પ્રતાપ, અકબર કે અશોકને આપણા યુગના કોઇ પણ મનુષ્યે પ્રત્યક્ષ જોયા નથી, છતાં જેમ આપણને આપણા પોતાના અસ્તિત્વની ખાતરી છે તેટલી જ તેમના અસ્તિત્વની પણ ખાતરી છે. જેમ આજે આપણે આપણી વચ્ચે વિચારતા સસારના એક મહાત્માના આદર્શમા પૂર્ણ શ્રદ્ધા ધરાવીએ છીએ તેમ જ આજથી અઢીહજાર વર્ષો પહેલા થઈ ગયેલા તીર્થંકર મહાવીર કે તથાગત બુદ્ધના આદર્શમાં પણ તેટલી જ પૂર્ણ શ્રદ્ધા ધરાવીએ છીએ જેવી રીતે આપણે ભગવદ્ગીતાના અતિમ રહસ્યકાર લોકમાન્ય તિલકની પ્રથમ શ્રાધ્ધ તિથિ ગયા પરમ દિવસે ઉજવી છે, તેવી જ રીતે પાચ હજાર વર્ષ પહેલા જન્મ લેનાર અને ભગવદ્ગીતાના મૂળ ઉપદેષ્ટા ભગવાન્ શ્રી કૃષ્ણની જન્મતિથિ આવતા પરમ દિવસે ઉજવવાના છીએ. આ અનુભવાતીત અને સમયાતીત બાબતોનું જ્ઞાન કરાવનાર કોણ છે? કયા સાધનદ્વારા આપણે એ ભૂતકાલની વાતોને જાણીએ છીએ? કહેવાની આવશ્યકતા નથી કે એ બાબતનું જ્ઞાન કરાવનાર ઇતિહાસ શાસ્ત્ર છે ઐતિહાસિક સાહિત્ય દ્વારા જ આપણે ભૂતકાલની વાતોને જાણી શકીએ છીએ. ઇતિહાસ જેટલો યથાર્થ અને વિસ્તૃત હોય તેટલુ જ આપણુ ભૂતકાલીન જ્ઞાન પણ યથાર્થ અને વિસ્તૃત હોઇ શકે, એ સ્વત સિદ્ધ છે. આપણા કમનસીબે આપણા પૂર્વજોએ રચેલો આપણા દેશનો યથાર્થ કે વિસ્તૃત ઇતિહાસ ઉપલબ્ધ નથી. જગત્ની બીજી પ્રાચીન પ્રજાઓને તેમના દેશોના વિષયમા જેટલો પ્રાચીન તથા વિસ્તૃત ઇતિહાસ મળી આવે છે તેટલો આપણા આ વિશ્વવૃદ્ધ આર્યાવર્તનો ઇતિહાસ મળી આવતો નથી. પ્રાચીન અને વિસ્તૃત ઇતિહાસ તો બાજુએ રહ્યો પરતુ આપણા માટે તો આપણી પહેલાંની ત્રીજી પેઢીનો ય ઇતિહાસ બહુ દુર્લભ્ય છે વર્તમાન શતાબ્દીનો પણ પૂરો વૃત્તાન્ત આપણે જાણતા નથી. જે રાષ્ટ્રીય શક અને સવત્નો આપણા પૂર્વજો અનેક સૈકાઓથી ઉપયોગ કરતા આવ્યા છે અને જેના આધાર ઉપર આપણી આખી મધ્યકાલિન કાલગણના અવલબિત છે, તેના પ્રવર્તક કોણ છે એ હજી પણ અજ્ઞાત કે અનિશ્ચિત છે. આવી સ્થિતિમાં પુરાતત્ત્વ-સંશોધન એ જ આપણા ઇતિહાસના નિર્માણનો પાયો છે. આપણો ઈતિહાસ જૂનીપુરાણી વસ્તુઓની શોધખોળ કરીને તેના ઉપરથી નીકળતાં પરિણામો ઉપર રચાએલો છે અને રચાવાનો છે એમ તો સાધારણ રીતે દુનીઆના દરેક પ્રાચીન પ્રદેશની પુરાતન પરિસ્થિતિ કે જેનુ દર્શન ઈતિહાસરૂપી દૂરદર્શક યંત્રથી પણ થઇ શકતું નથી, તેને જાણવા માટે જૂનીપુરાણી વસ્તુઓ જ આધારભૂત હોય છે, પરતુ ભારતવર્ષને માટે તો આપણા જન્મદિવસથી જ લઈને ઠેઠ યુગની આદિ સુધીની પરિસ્થિતિ જાણવા માટે બધો આધાર જૂની પુરાણી વસ્તુઓ ઉપર જ રાખવો પડે છે. કારણ કે શાસ્ત્રીય પદ્ધતિથી જેને આપણે

ઈતિહાસ કહીએ તેવા ઈતિહાસ તો ભારતવાસીઓએ નાનો મોટો એક પણ લખ્યો નથી, અથવા તો હવે તે મળતો નથી ઈતિહાસ નિર્માણના કામમા આવે તેવી જૂની પુરાણી વસ્તુઓમા જૂના ગ્રંથો, શિલાલેખો, તામ્રપત્રો, સિક્કાઓ તથા ધાતુપાત્રો, મંદિરો, મસ્જીદો જલાશયો કીર્તિસ્તંભો અને તેવા બીજા મકાનો અથવા ખંડેરો વિગેરે ગણાય છે આપણા પૂર્વજોએ ઈતિહાસના સ્વતંત્ર ગ્રંથો તો નિર્માણ નથી કર્યા પરંતુ ઇતિહાસના સાધનો તો ઘણા જ નિર્માણ કર્યા છે એમા શકા નથી પણ આપણે તો એ પણ જાણતા ન હતા—કે પછી જાણવાની દરકાર રાખતા ન હતા કે આ સાધનોની શી રીતે છાણવીણ કરી તેમાથી આપણો ઇતિહાસ ઉપજાવી શકીએ એ પાઠ આપણને પશ્ચિમવાસીઓએ શીખવ્યો છે કેવળ પાઠ જ શીખવ્યો છે એમ નથી પરંતુ અનેક પ્રકારના કષ્ટો વેઠી અને પરિશ્રમો લઈ તેમણે આપણા માટે ઈતિહાસના અનેક અધ્યાયો પણ તૈયાર કર્યા છે અને એ માટે આપણે હમેશા તેમના કૃતજ્ઞ જ રહેવુ જોઈએ આટલુ આનુષગિક કહી હવે હુ મારા વ્યાખ્યાનના મુખ્ય–પ્રતિપાદ્ય વિષય ઉપર આવુ છુ

જેમ મે પ્રારભમા જણાવ્યુ છે, તેમ મનુષ્ય એ વિશિષ્ટ બુદ્ધિશાલી, જ્ઞાનવાન્ પ્રાણી છે તેથી દરેક વસ્તુના સ્વરૂપને વિશેષપણે જાણવાની જીજ્ઞાસા તેનામા સ્વાભાવિક જ રહેલી છે તેમા વળી જે મનુષ્યો સાધારણ મનુષ્યો કરતા વધારે જ્ઞાનવાન્ હોય છે તેમનામા એ જીજ્ઞાસા ઘણા ઉત્કટ પ્રમાણમા હોય છે એવા મનુષ્યોને જ્યારે કોઈ અપરિચિત પ્રદેશનો અથવા માનવ સમાજનો નવીન સમાગમ થાય છે ત્યારે તેમને તેમના ધર્મ, સમાજ, ઇતિહાસ આદિના વિષયમા જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવાની તીવ્ર ઇચ્છા ઉત્પન્ન થાય છે આ જ્ઞાન–પિપાસાથી પ્રેરિત થઈ તે મનુષ્યો તે તે બાબતની શોધખોળમા પડે છે એ અપરિચિત પ્રદેશની ભાષા શીખે છે તેના જ્ઞાનભડારને તપાસવાનો પ્રયત્ન કરે છે, અને તેમ કરી પોતાના દેશબધુઓને પોતે મેળવેલા નવીન જ્ઞાનનો લાભ આપવા માટે પોતાની ભાષામા તે નવા ભડારને ઉતારવાનો ઉપક્રમ કરે છે ભારતવર્ષમા વ્યાપારદ્વારા પૈસા કમાઈ પેટપૂજા કરવા અર્થે આવેલા ઈગ્રેજો આ જ પ્રમાણે આપણા ઈતિહાસની શોધખોળમા ઉતર્યા હતા

ઇ સ ૧૭૫૭ મા ઇસ્ટ ઇન્ડિઆ કપનીએ, પ્લાસીના પ્રસિદ્ધ યુદ્ધ પછી ધીરે ધીરે બગાળ ઉપર અધિકાર પ્રાપ્ત કરવાનો પ્રારભ કરી દીધો હતો ૧૭૬૫ મા તેણે બગાલ, બીહાર અને ઉડીસાની દીવાની હસ્તગત કરી લીધી ૧૭૭૨ મા બગાલના નવાબ પાસેથી અધિકાર પડાવી લીધા, અને પછી તરત, એટલે ૧૭૭૪ મા નવાબને મમૂળગો પદચ્યુત કરી પોતાનો ગવર્નર–જનરલ નિયુક્ત કરી દીધો અગ્રેજોના માટે એ સ્વાભાવિક જ હતુ કે તેઓ હવે આ દેશના ધર્મ, સમાજ આદિનુ થોડુ ઘણુ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે જે દેશની સાથે વ્યાપાર કરીને તેમણે કરોડો નહિ પણ અબજો રૂપીઆ મેળવ્યા હતા, અને હજારો નહિ પણ લાખો વર્ગ માઈલ જમીન તેઓ પચાવી પડ્યા હતા, તે જ દેશની અમૂલ્ય જ્ઞાનસપત્તિ મેળવવાનો પણ પ્રશસ્ત લાભ કેટલાક વિદ્વાન્ અગ્રેજોને થઇ

આવ્યો જે કેટલાક વિદ્યાપ્રેમી અગ્રેજો કંપની તરફથી ભારતનુ શાસનકાર્ય ચલાવવા માટે નિયુક્ત થતા, ઘણુ કરીને, તેઓ જ આ કાર્યમાં અગ્રેસર બનતા હતા જો કે પાછળથી તો, ફ્રાસ અને જર્મનીના વિદ્વાનોએ જ ભારતીય પુરાતત્ત્વમાં મહત્ત્વના કામો કર્યા હતાં અને ભારતીય સાહિત્યની તેમણે જ વધારે સેવા કરી હતી, તો પણ આ કાર્યનો પ્રારંભ કરવાનો પહેલો યશ તો અગ્રેજોને જ છે સૌથી પહેલાં સર વીલીયમ જોન્સે આ કાર્યની મગલમય શરૂઆત કરી હતી આર્ય સાહિત્યના સંશોધન કાર્ય સાથે સર જોન્સનુ નામ સદાને માટે જોડાયલુ રહેશે સર જોન્સ ભારતીયોના મત પ્રમાણે મ્લેચ્છ હતા, અને તેથી તેમને સસ્કૃત શીખવવામા ઘણી અડચણો નડી હતી બ્રાહ્મણોના કટ્ટરપણાને લીધે તેમને પોતાનું અધ્યયન ચાલુ કરવામાં કેવી મુશ્કેલીઓ પડી હતી તેનું રમુજી વર્ણન તેમના જીવનવૃત્તાંતમા આપેલુ છે. આખરે તેઓ આ મુશ્કેલીઓમાંથી પાર થયા અને અપેક્ષિત જ્ઞાન મેળવ્યા બાદ તુરત શકુન્તલા નાટક અને મનુસ્મૃતિનો ઈગ્રેજી અનુવાદ પ્રકટ કર્યો. તેમના આ અનુવાદો જોઈ ભારતીય સભ્યતાનુ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવા માટે યૂરોપના વિદ્વાનોમા ઘણી જીજ્ઞાસા ઉત્પન્ન થઈ. જે પ્રજા આવી જાતનુ ઉત્કૃષ્ટ સાહિત્ય નિર્માણ કરી શકે છે તે પ્રજાનો ભૂતકાળ કેટલો ભવ્ય હશે તે જાણવાની આકાક્ષા ત્યાંના લોકોમા ખૂબ જાગી સને ૧૭૭૪ ના જાન્યુઆરીની ૧૫ મી તારીખે તત્કાલિન ગવર્નર જનરલ વૉરન હેઇસ્ટીગની સહાયતાથી, એશિયાખડના ઈતિહાસ, સાહિત્ય, સ્થાપત્ય, ધર્મ, સમાજ, વિજ્ઞાન આદિ બધા વિષયોની શોધખોળ કરવા માટે સર જાન્સે “એશિયાટિક સોસાયટી” નામની સસ્થાની શુભ સ્થાપના કરી. એ સસ્થાની સ્થાપના સાથે જ હિંદુસ્તાનના ઈતિહાસના અન્વેષણનો અમર આરભ થયો એમ આપણે ઉપકાર સાથે સ્પષ્ટપણે કબુલ કરવુ જોઈએ. તે પહેલા આપણુ ઐતિહાસિક જ્ઞાન કેટલુ અલ્પ અને નિર્મૂલ હતું તે એક ભોજપ્રબધ જેવા લોકપ્રિય નિબંધના વાચનથી જ જણાઇ આવે છે. એ પ્રબંધમા, કાલિદાસ, બાણ, માઘ આદિ ભોજથી અનેક શતાબ્દીઓ પહેલાં અને જુદા જુદા વખતે થઈ ગયેલા કવિઓને પણ ભોજના દરબારી કવિઓ તરીકે વર્ણવી બધાને એક જ દરબારમા લાવી બેસાડયા છે, તેમ જ સિંધુરાજ કે જે વાક્પતિરાજના મૃત્યુ પછી તેના રાજ્યનો સ્વામી બન્યો હતો, તેને બદલે એ પ્રબધ લેખકે વાક્પતિરાજને સિંધુરાજની ગાદીએ બેસાડી બાપને દીકરો બનાવી મૂકયો છે. જ્યારે ભોજ જેવા પ્રસિદ્ધ રાજાના ઈતિહાસ–લેખકને પણ તેના વશ અને સમયના વિષયમા આટલી બધી અજ્ઞાનતા હતી તો પછી સર્વ સાધારણની અજ્ઞાનતાના વિષયમા તો કહેવું જ શું ? અશોક જેવા પ્રતાપી સમ્રાટ્ની તો લોકોને સામાન્ય કલ્પના પણ ન હતી. જો કે હિંદુસ્તાનના ઈતિહાસના ઘણાક પુસ્તકો અને બીજા સાધનો મુસલમાનોના જમાનામા નષ્ટ થઇ ગયા હતા, તો પણ બૌદ્ધકાલીન અનેક સ્તૂપ, સ્તભ, મદિર, ગુફા, જલાશય આદિ સ્થાનો, ધાતુ અને પાષાણની દેવી–દેવતાઓની મૂર્તિઓ, ખડકો, શિલાઓ અને તામ્રપત્રો ઇત્યાદિ ઉપર કોતરેલા અસખ્ય લેખો કે જે ઈતિહાસના ખરાં અને મુખ્ય શાધનો મનાય છે, હજીએ અસખ્ય વિદ્યમાન હતા, તેથી તેમના ઉપરથી જો

ઇતિહાસ તારવી કાઢવાનો પ્રયત્ન કરવામા આવ્યો હોત તો આજની માફક તે સમયમા પણ આપણા ઇતિહાસના ઘણાક અધ્યાયો રચી શકાયા હોત, પરંતુ તેમના તરફ કોઇની દૃષ્ટિ જ ગઈ ન હતી, અને પાછળથી તો જેમ જેમ દેશમા અરાજકતા અને અજ્ઞાનતા વધતી ગઈ તેમ તેમ લોકો પ્રાચીન કાળની લિપિ અને તેની સાથે સ્મૃતિને પણ ભૂલતા ગયા અને એ રીતે સાધનોની હયાતી હોવા છતા પણ તેનો કાઇ ઉપયોગ થયો નહિ

ઈ સ ૧૩૫૬ મા દિલ્હીના સુલતાન ફીરોજશા તુગલકે ટોપરા અને મેરઠથી અશોકના લેખવાળા બે મોટા સ્તંભો ઘણા ઉત્સાહ અને પરિશ્રમ સાથે દિલ્હીમા અણાવ્યા હતા, (જેમાનો એક ફીરોજશાહના કોટલામા અને બીજો 'કુશ્ક શિકાર' પાસે ઉભો કરેલો છે) એ સ્તંભો ઉપર ખોદેલા લેખોમા શુ લખેલુ છે તે જાણવા માટે એ બાદશાહે ઘણી મહેનત કરી અને ઘણા ઘણા પંડિતોને બોલાવી તે વાચવા માટે કીધુ, પણ કોઇનાથી તે વાચી શકાયા નહિ, અને તેથી અંતે તે બાદશાહને બહુ જ નિરાશા થઈ હતી સાભળવા પ્રમાણે અકબર બાદશાહને પણ એ લેખોના મર્મ જાણવાની બહુ જીજ્ઞાસા હતી પરંતુ કોઈપણ મનુષ્ય તે પૂરી કરી શક્યો ન હતો પ્રાચીન લિપિઓને ઓળખવાનુ ભૂલી જવાને લીધે જ્યારે કયાએ કોઈ આવા જૂના શિલાલેખો અથવા તામ્રપત્રો મળી આવતા ત્યારે લોકો તેમના વિષયમા વિવિધ કલ્પનાઓ કરતા કોઇ તેને સિદ્ધિદાયક યંત્ર કહેતા, કોઇ તેને દેવતાનો લખેલો મંત્ર માનતા, અને કોઇ તેને કયાએ જમીનમા દાટેલા ધનની નોંધ સમજતા આવી અજ્ઞાનતાને લીધે લોકોને એવા શિલાલેખો કે તામ્રપત્રોની કાઈ પણ કિમ્મત જણાતી ન હતી ભાગેલા તૂટેલા જૂના મંદિરો આદિના શિલાલેખોને તોડી ફોડી કયાક તેમને પગથીઆઓમા ચણી દવામા આવતા અને કયાક ભાગ અને ચટણી વાટવાના કામમા લેવાતા અનેક જૂના તામ્રપત્રો તાબાના ભાવે કસારાને ત્યા વેચવામા આવતા કસારાઓ તેમને ગાળી-ઉકાળી તેમાથી નવા વાસણો તૈયાર કરતા લોકોની એ અજ્ઞાનતા હજી પણ ચાલુ છે મે મારા ભ્રમણ દરમ્યાન અનેક શિલાલેખોની આવી આવી દુર્દશાઓ થયેલી જોઇ છે અનેક જૈનમંદિરોમાના શિલાલેખો ઉપર ચોટાડેલો ચૂનો મે મારા હાથે ઉખાડેલો છે ચાર વર્ષ ઉપર મુબઇમા એક બ્રાહ્મણ, જે ખંભાતની પાસેના એક ગામડામા રહેતો હતો તે ત્રણ ચાર તામ્રપત્રો લઈને મારી પાસે આવ્યો હતો તેની જમીન સંબધે સરકારમા કોઇ કેસ ચાલતો હતો, તેથી પોતાના ઘરમા પડી રહેલા એ તાબાપત્રમા પોતાની જમીન માટે કંઇ લખેલુ હશે એમ ધારી તે વચાવવા મારી પાસે લાવ્યો હતો તેમાના એક પત્રાની વચ્ચોવચ્ચથી બે ઇંચ વ્યાસ જેટલો ગોળ ટુકડો કાપી લીધેલો હતો તેથી એ લેખનો કેટલોક મહત્વનો ભાગ જતો રહ્યો હતો આ સંબધમા મે તેને પૂછ્યુ ત્યારે તેણે જવાબ આપ્યો કે થોડાક મહિના ઉપર એક લોટાનુ તળીયુ બનાવવા માટે એમાથી એટલો ટુકડો કાપી લેવામા આવ્યો હતો ! આવા તો અનેક દાખલાઓ હજીએ બને છે આવી જ દુર્દશા આપણા જુના ગ્રંથોની થઇ છે યુગોના યુગો સુધી સારસભાળ લીધા વગર અંધારી કોટડીઓમા પડી રહેલા હજારો હસ્તલેખો ઉંદરડાઓના ઉદરમા ગરક થયા છે, અને છાપરામાથી

પડતા પાણીના ભેજથી સડી–ગળી માટીમા મળ્યા છે. અનેક ગુરૂઓના નાલાયક ચેલાઓના હાથે પણ આપણા સાહિત્યની ઓછી વિટંબણા નથી થઈ એક દાખલો આપું. ઇંદોરમાં એક વિદ્વાન્ ગોરજી હતો તેણે કોઈના બે છોકરાઓને ચેલા બનાવવા માટે પાળ્યાપોષ્યા હતા. એ ગોરજી મરી ગયા પછી પાછળથી એ છોકરાઓ તેનો જે વિશાળ પુસ્તકભંડાર હતો તેમાથી રોજ ફાવે તેમ હજાર બે હજાર પાનાઓ ફાડી હલવાઈને ત્યાં પડીકાં બાધવા માટે આપી આવતા અને બદલામા પાશેર ગરમાગરમ જલેબી લઈ આવી સવારમાં નાસ્તો પાણી કરી મજા માણતા. મને જ્યારે એની ખબર પડી ત્યારે તે હલવાઈ પાસે જઇ બધા પાના તપાસ્યા જેમાથી પાચસો વર્ષ જેટલા જૂના લખેલાં બે ત્રણ જૈનસૂત્રો મને અખંડ મળી આવ્યા હતા પાટણના જૈનભંડારોમા સિદ્ધરાજ, કુમારપાળ અને તેનાથી યે પહેલાંનાં લખેલા તાડપત્રોનો તબાખૂના પાનના ભૂકાની માફક થયેલો ભૂકો મેં મારી આ નરી આંખે જોયો છે આવી રીતે આપણે આપણી અજ્ઞાનતાને લીધે આપણા ઈતિહાસનાં સાધનો નષ્ટ કર્યાં છે એટલુ જ નહિ પણ પરસ્પરની મતાન્ધતા- અને સાંપ્રદાયિક અસાહિષ્ણુતાના વિકારને વશ થઈને પણ આપણે આપણા સાહિત્યને ઘણી રીતે ખંડિત અને દૂષિત કર્યું છેઃ શૈવોએ વૈષ્ણવોના સાહિત્યનુ નિકંદન કર્યું છે, વૈષ્ણવોએ જૈનોના સ્થાપત્યને દૂષિત કર્યું છે, દિગંબરોએ શ્વેતામ્બરોના લેખોને ખંડિત કર્યા છે તથા લુંકાઓએ તપાઓની નોધો બગાડી છે એમ પરસ્પર એક બીજાનું એકબીજાએ ઘણુ જ ખોદ્યુ છે શોધખોળના વૃત્તાન્તોમા આવા અનેક ઉદાહરણો નોધાયલા મળી આવે છે છેવટે મુસલમાન ભાઈઓએ હિન્દુઓનાં સ્વર્ગીય ભુવનોને તોડી ફોડી બેદાન મેદાન કર્યા છે, અને તેમનાંય પવિત્ર ધામોને આખરે કાળે જમીનદોસ્ત કર્યા છે. આવી જાતની સંકટની પરંપરાઓમાંથી જે બચી રહેલા હતા તેમને સુરક્ષિત રાખવા માટે, જે અર્ધમૃત દશામાં હોય તેની પાસેથી કાઈક છેવટનુ જાણી લેવા માટે અને તેમ કરી ભારતનો ભૂતકાળ કે જે વિસ્મૃતિ અને અજ્ઞાનના પડ નીચે સજ્જડ દબાઈ રહ્યો હતો તેનો ઉદ્ધાર કરવા માટે ઉપર જણાવેલી એશિયાટિક સોસાયટીની સ્થાપના થઇ હતી એ સોસાયટીની સ્થાપનાના દિવસથી હિન્દુસ્તાનના ઐતિહાસિક અજ્ઞાનાન્ધકારનો ધીરે ધીરે લોપ થવા લાગ્યો અનેક અંગ્રેજો એ સંસ્થાના ઉદ્દેશને પૂર્ણ કરવા માટે જુદા જુદા વિષયોનુ અધ્યયન કરવા લાગ્યા અને તે તે વિષયોના લેખો લખવા લાગ્યા એ લેખોને પ્રગટ કરવા માટે 'એશિઆટિક રિસર્ચીજ્' નામની એક ગ્રંથમાળા ચાલુ કરવામા આવી સને ૧૭૮૮ મા એ માળાનો પ્રથમ ભાગ પ્રકટ થયો ૧૭૯૭ સુધીમા એના પાચ ભાગો પ્રકાશિત થયા ૧૭૯૮ મા તેનું એક નવીન સંસ્કરણ ઇંગ્લાંડમા ચોરીથી જ છપાવી દેવામાં આવ્યુ ત્યાં એ ભાગોની એટલી બધી માગણી થઇ કે ૫–૬ વર્ષમા જ તેની બે આવૃત્તિઓ પ્રકટ થઇ ગઈ, અને એમ્ એ લૅબૉમ નામના એક ફ્રેન્ચ વિદ્વાને, 'રિસર્ચેસ્ એશિયાટિકમ્' ના નામે તેનો ફ્રેન્ચ અનુવાદ પણ પ્રકટ કરી દીધો સોસાઇટિની એ ગ્રન્થમાળામા બીજા વિદ્વાનોની સાથે સર વીલીયમ જોન્સે પણ હિંદુસ્તાનના ઈતિહાસના વિષયમા અનેક ઉપયોગી લેખો લખ્યા.

સૌથી પહેલા તેમણે જ પોતાના એક લેખમા એ વાત જાહેર કરી હતી કે મેગાસ્થનીસે વર્ણવેલો સાન્ડ્રોકોટસ અને ચદ્રગુપ્ત મૌર્ય એ બને એક જ વ્યક્તિ છે પાટલિપુત્રનુ જ અપભ્રષ્ટ રૂપ પાલીબોથ્રા છે અને તે આધુનિક પટના જ છે કારણ કે પટનાની પાસે વહેતા શોણનદને હિરણ્યબાહુ કહેવામા આવે છે અને મેગાસ્થનીસનુ "એરાનોબાઓ" એ જ હિરણ્યબાહુનુ અપભ્રષ્ટ નામ છે આ રીતે ચન્દ્રગુપ્ત મૌર્યનો સમય સૌથી પહેલા જોન્સ સાહેબે જ નિશ્ચિત કીધો હતો

જે અગ્રેજ સૌથી પહેલા સસ્કૃત ભાષા શીખ્યો હતો તેનુ નામ ચાર્લ્સ વિલ્કીન્સ હતુ તેણે જ પ્રથમ દેવનાગરી અને બગાળી ટાઈપો બનાવ્યા બદાલ પાસેના સ્તભ ઉપરનો લેખ સૌથી પ્રથમ તેણે જ ખોળી કાઢયો હતો એ સિવાય બીજા પણ કેટલાક તામ્રપત્રો અને શિલાલેખો ઉપર એણે એશિયાટીક રીસર્ચીસના પ્રારભના ભાગોમા કેટલીક નોંધો લખી હતી ભગવદ્ગીતાનુ પહેલ વહેલુ ઇગ્રેજી ભાષાન્તર પણ એ જ અગ્રેજે કર્યું હતુ

સને ૧૭૯૪ મા સર જોન્સનુ મરણ થયું તેમના પછી તેમના સ્થાન ઉપર હેનરી કોલબ્રુકની સ્થાપના થઇ કોલબ્રુક અનેક વિષયોમા પ્રવીણ હતા તેમણે સસ્કૃત સાહિત્યનુ ઘણું પરિશીલન કર્યું મૃત્યુના સમયે સર જોન્સ પ્રસિદ્ધ પડિત જગન્નાથ દ્વારા સપાદિત "હિન્દુ અને મુસલમાનોના કાયદાઓનો સાર" એ નામક સસ્કૃત ગ્રન્થનો અનુવાદ કરતા હતા એ અધુરા અનુવાદને પૂર્ણ કરવાનુ કામ કોલબ્રુક સાહેબને સોપવામા આવ્યુ તેમણે કેટલાક સસ્કૃત પડિતોની સહાયતાથી સને ૧૭૯૭ મા એ કામ પૂરુ કર્યું આ પછી તેમણે 'હિન્દુઓના ધાર્મિક રીતરીવાજો' 'ભારતીય માપનુ પરિમાણ' 'ભારતીય વર્ણવ્યવસ્થાની ઉત્પત્તિ' 'ભારતવાસીઓની જાતો' આદિ વિષયો ઉપર ગભીર નિબધો લખ્યા એ પછી ૧૮૦૧ મા 'સસ્કૃત અને પ્રાકૃત ભાષા' 'સસ્કૃત અને પ્રાકૃત છન્દ શાસ્ત્ર' વિગેરે લેખો લખ્યા એ જ વર્ષમા દિલ્હીના લોહસ્તભ ઉપર કોતરેલી વિશાળદેવની સસ્કૃત પ્રશસ્તિનુ અગ્રેજી ભાષાન્તર પ્રકાશિત કર્યું સને ૧૮૦૭ મા તેઓ એશિયાટિક સોસાયટીના સભાપતિ બન્યા એ જ વર્ષમા તેમણે હિન્દુ જ્યોતિષ એટલે ખગોળ વિદ્યા ઉપર એક ગ્રથ લખ્યો, જૈનધર્મ ઉપર એક વિસ્તૃત નિબધ પ્રકટ કર્યો કોલબ્રુકે વેદ, સાખ્ય, ન્યાય વૈશેષિક વેદાન્ત, બૌદ્ધ આદિ ભારતના બધા દર્શનો ઉપર મોટા મોટા નિબધો લખ્યા હતા તે સિવાય કૃષિ, વાણિજ્ય, સમાજવ્યવસ્થા, સાધારણ સાહિત્ય, કાનૂન, ધર્મ, ગણિત, જ્યોતિષ, વ્યાકરણ આદિ બધા વિષયો ઉપર તેમણે ખૂબ વિસ્તૃત પ્રબધો લખ્યા હતા તેમના એ લેખો–નિબધો–પ્રબધો આજે પણ તેટલા જ માનથી વચાય છે વેબર, બુલ્હર અને મેક્સ મૂલર આદિ વિદ્વાનોએ નિશ્ચિત કરેલા કેટલાક સિદ્ધાન્તો ભ્રમપૂર્ણ સિદ્ધ થઇ ગયા છે પરતુ કોલબ્રુકે જાહેર કરેલા વિચારો ઘણા જ ઓછા તેમ થવા પામ્યા છે એ એક સૌભાગ્યની જ વાત હતી કે આપણા સાહિત્યને શરૂઆતમા જ એક એવો ઉપાસક મળી આવ્યો કે જેણે યુરોપની આગળ આપણા પ્રાચીન

તત્ત્વજ્ઞાન અને સાહિત્યને નિષ્પક્ષપાતપૂર્વક મૂળ સ્વરૂપમાં ઉપસ્થિત કર્યું અને જેણે દુનીયાનું ધ્યાન આપણી પ્રાચીન સંસ્કૃતિ તરફ સહાનુભૂતિપૂર્વક આકર્ષ્યું. જો તેણે આવો અપૂર્વ પરિશ્રમ ન કર્યો હોત તો આજે યુરોપમા સંસ્કૃતનો આટલો પ્રચાર ન થયો હોત કોલબ્રુક ભારત છોડી જ્યારે ઇગ્લાડમા ગયા ત્યારે ત્યાં પણ તેમણે રૉયલ એશિયાટિક સોસાઈટિની સ્થાપના કરી અનેક વિદ્વાનોને સસ્કૃતનુ અધ્યયન કરવા માટે ઉત્સાહિત કર્યા, અને આખે અપગ થતા સુધી બીજા અનેક ઉપાયો દ્વારા સંસ્કૃત સાહિત્યની સતત સેવા કરતા હતા

જ્યારે એક તરફ કોલબ્રુક સાહેબ સંસ્કૃત સાહિત્યના અધ્યયનમાં ગર્ક થયા હતા ત્યારે બીજી તરફ બીજા કેટલાક તેમના જાતભાઇઓ હિંદુસ્તાનના જુદા જુદા પ્રાંતોના પુરાતત્ત્વની ગવેષણા કરવામાં મચી રહ્યા હતા સને ૧૮૦૦ મા માર્કિવસ વેલસ્લિ સાહેબે માઈસોર પ્રાન્તના કૃષિ આદિ વિભાગોની તપાસ કરવા માટે ડૉ. બુકૅનનની નેમણુક કરી હતી. તેમણે પોતાના કૃષિવિષયક કાર્યની સાથે સાથે તે પ્રાંતની જુની પુરાણી બાબતોનું કેટલુક જ્ઞાન મેળવ્યુ. તેમના કાર્યથી સંતુષ્ટ થઇને કંપનીએ તેમને ૧૮૦૭ મા બગાળ પ્રાંતના એક વિશિષ્ટ પદ પર યોજ્યા. સાત વર્ષ પર્યંત તેમણે બિહાર, શાહાબાદ, ભાગલપુર, ગોરખપુર, દિનાજપુર, પુરનિયા, રંગપુર અને આસામમા કામ કીધુ જો કે તેમને પ્રાચીન સ્થાનો વિગેરેની શોધખોળનું કામ સોંપવામા આવ્યુ ન હતું તો પણ તેમણે ઈતિહાસ અને પુરાતત્ત્વની ખૂબ ગવેષણા કરી. તેમની આ ગવેષણાથી ઘણો લાભ થયો. અનેક અજ્ઞાત ઐતિહાસિક બાબતોની માહીતી મળી. આમ પૂર્વીય ભારતની પ્રાચીન વસ્તુઓની શોધખોળ સૌથી પ્રથમ એમણે જ કરી

પશ્ચિમ ભારતની પ્રસિદ્ધ કેનેરી ગુફાઓનું વર્ણન સૌથી પ્રથમ સાલ્ટ સાહેબે અને હાથીગુફાઓનુ વર્ણન રસ્કિન સાહેબે લખ્યું આ બન્ને વર્ણનો બોમ્બે ટ્રાંઝેકશન નામના પુસ્તકના પહેલા ભાગમા પ્રકાશિત થયાં. એ જ પુસ્તકના ત્રીજા ભાગમાં સાઈકસ સાહેબે બીજાપુર (દક્ષિણ) નુ વર્ણન લોકોની આગળ મૂકયુ

છેક દક્ષિણ હિદુસ્તાનનુ વર્ણન ટૉમસ ડેનિયલ નામના સાહેબે મેળવવુ શરૂ કર્યું. તે જ વખતે દક્ષિણમા કર્નલ મેકેન્ઝીએ પણ પુરાતત્ત્વ–વિદ્યાના અભ્યાસનો પ્રારભ કીધો હતો. તે સર્વે ડિપાર્ટમેન્ટમા નોકર હતા. તેમણે અનેક પ્રાચીન ગ્રન્થો અને શિલાલેખોનો સગ્રહ કર્યો હતો મેકેન્ઝી સાહેબ કેવળ સગ્રહકાર હતા તેઓ ગ્રન્થો અને લેખોને વાચી શકયા ન હતા પરતુ તેમના પછીના શોધકોને તેમના આ સંગ્રહથી ઘણો લાભ થયો હતો દક્ષિણના કેટલાક અનતિ–પ્રાચીન શિલાલેખોના ભાષાન્તરો ડૉ. મિલે કીધા હતા. આવી જ રીતે રાજપુતાના અને મધ્ય ભારતના કેટલાક ભાગોનું જ્ઞાન કર્નલ ટૉડે મેળવ્યુ અને એ પ્રદેશોમાંની અનેક જુની પુરાણી વસ્તુઓની શોધખોળ તેમણે કરી.

આ પ્રમાણે જુદા જુદા વિદ્વાનો દ્વારા ભારતના ભિન્ન ભિન્ન પ્રાંતોના વિષયમાં ઘણુક જ્ઞાન મેળવવામાં આવ્યું ને ઘણીક વસ્તુઓ જાણવામાં આવી, પરંતુ પ્રાચીન લિપિ-

નું સ્પષ્ટ જ્ઞાન હજી કોઈને મળેલું ન હોવાથી ભારતના પ્રાચીન ઐતિહાસિક સાધનોના ભંડાર ઉપર હજી તેવો ને તેવો જ અંધકારનો પડદો પડેલો હતો. જુદા જુદા વિદ્વાનોએ અનેક પુરાતન સિક્કાઓ અને શિલાલેખોનો ઘણો સારો સંગ્રહ મેળવી લીધો હતો ખરો, પણ લિપિજ્ઞાનના અભાવે તેમનો ત્યાં સુધી કાંઈ ઉપયોગ થયો ન હતો.

ભારતવર્ષના પ્રાચીન ઇતિહાસના પ્રથમ અધ્યાયનો ખરો પ્રારંભ ઈ. સ. ૧૮૩૭થી થાય છે. એ વર્ષમાં એક નવીન નક્ષત્રનો ઉદય થાય છે કે જે ભારતીય પુરાતત્ત્વ વિદ્યા ઉપર પડેલા પડદાને દૂર ખસેડે છે. એશિયાટિક સોસાઈટિની સ્થાપનાના દિવસથી તે ૧૮૩૪ સુધીમાં પુરાતત્ત્વ સંબંધી ખરું કામ બહુ જ ઓછું થયું હતું. ત્યાં સુધી વિશેષ કરીને જુના ગ્રંથોના અનુવાદો જ થતા રહ્યા હતા. શિલાલેખો કે જે ભારતના ઇતિહાસના એક માત્ર ખરા સાધન તરીકે ગણાય છે તેમના સંબંધમાં ઘણું જ ઓછું કાર્ય થયું હતું. કારણ એ હતું કે પ્રાચીન લિપિનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન મેળવવું અદ્યાપિ બાકી હતું.

મેં ઉપર એક ઠેકાણે જણાવ્યું છે તેમ પહેલ વહેલા સંસ્કૃત ભાષા શીખનાર અંગ્રેજ ચાર્લ્સ વિલ્કીન્સ હતો, અને સૌથી પ્રથમ શિલાલેખ તરફ ધ્યાન આપનાર પણ તે જ હતો. તેણે ઈ. સ. ૧૭૮૫માં દીનાજપુર જીલ્લાના બદાલ નામક સ્થાન પાસે મળેલા એક સ્તંભ ઉપરનો લેખ વાંચ્યો હતો જે બંગાળના રાજા નારાયણ પાલના સમયનો લખેલો હતો. તે જ વર્ષમાં એક હિંદુસ્થાની પંડિત નામે રાધાકાન્ત શર્માએ ટોમરાવાળા દિલ્હીના અશોક સ્તંભ ઉપર ખોદેલા અજમેરના ચૌહાણ રાજા અનલદેવના પુત્ર વીસલદેવના ત્રણ લેખો વાંચ્યા જેમાંના એકની મિતિ 'સંવત્ ૧૨૨૦ વૈશાખ સુદી ૫' છે. આ લેખોની લિપિ બહુ જુની ન હોવાથી સરલતાની સાથે તે વાંચી શકાયા હતા. પરંતુ તે જ વર્ષમાં જે. એચ. હેરિંગ્ટને બુદ્ધગયા પાસે આવેલી નાગાર્જુની અને બારાબાર ગુફાઓમાં ઉપરના લેખો કરતાં વધારે જુના એવા મૌખરી વંશના રાજા અનન્તવર્માના ત્રણ લેખો ખોળી કાઢ્યા હતા કે જેમની લિપિ ગુપ્તકાલીન લિપિથી ઘણે અંશે મળતી હોવાથી તેમનું વાચન કઠિણ થઈ પડ્યું હતું. પણ ચાર્લ્સ વિલ્કીન્સે ચાર વર્ષ સુધી સતત પરિશ્રમ લઈ તે ત્રણે લેખોને વાંચી લીધા અને તેમ કરી તેણે ગુપ્તલિપિની લગભગ અર્ધી વર્ણમાળાનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી લીધું.

ગુપ્તલિપિ એટલે શું એની તમને ખબર નહિ હોય તેથી તેનો સહજ ખુલાસો અહિં કરી દઉં. હાલમાં જે લિપિને આપણે દેવનાગરી (અથવા બાળબોધ)ના નામે ઓળખીએ છીએ, તે સાધારણ રીતે ત્રણ અવસ્થાઓમાંથી પસાર થયેલી છે. આ ચાલુ આકૃતિ પૂર્વે તેની જે આકૃતિ હતી તેને કુટિલ લિપિના નામે ઓળખવામાં આવે છે. એ આકૃતિનો સમય સાધારણ સમજવાની ખાતર ઈ. સ. ના ૬ ઠ્ઠા સૈકાથી તે ૧૦ મા સૈકા સુધીનો માની લેવો જોઈએ. તેની પહેલાની આકૃતિને ગુપ્તલિપિના નામે ઓળખવામાં આવે છે, જેનો સામાન્ય સમય ગુપ્તવંશનો રાજત્વકાળ ગણાય છે. તે પહેલાની આકૃતિવાળી લિપિ બ્રાહ્મીલિપિ કહેવાય છે. અશોકના લેખો આ જ લિપિમાં લખાયલા છે. એનો સમય ઈ. સ. પૂ. ૫૦૦ થી ઈ. સ. ૩૫૦ સુધીનો મનાય છે.

પાદરી જેમ્સ સ્ટીવન્સને પણ પ્રિંસેપની માફક આ શોધમાં અનુસરતાં થઈ 'ક', 'જ', 'થ', 'વ', અને 'વ' એટલા અક્ષરો ઓળખી કાઢયા, અને આ અક્ષરોની સહાયતાથી તેમણે લેખોને પુરા વાંચી તેનો અનુવાદ કરવાનો મનોરથ કીધા પણ કાંઈક તો અક્ષરોને ઓળખવામાં ભૂલ થઈ જવાથી, કાંઈક વર્ણમાળાની અપૂર્ણતાથી અને કાંઈક એ લેખોની ભાષાને સંસ્કૃત સમજવાથી તેમનો એ ઉદ્યોગ પૂરેપૂરો સફળ થયો નહિ આથી પ્રિંસેપને નિરાશા થઈ નહિ ઈ સ ૧૮૩૫ માં પ્રસિદ્ધ પુરાતત્ત્વજ્ઞ પ્રો લૅસ્સને એક બાક્ટ્રિઅન ગ્રીક સિક્કા પર આ જ અક્ષરોમાં લખેલું ઍગૅથૉક્લિસનું નામ વાંચ્યું, પરંતુ ૧૮૩૭ ની શરૂઆતમાં જ શ્રી પ્રિંસેપે પોતાના અલૌકિક સ્ફુરણથી એક નાનો સરખો 'દાન' શબ્દ શોધી કાઢયો હતો જેણે એક સમ આ બધી ગૂઢ બાબતોનો નિકાલ કરી દીધો હકીકત આ પ્રમાણે છે-ઈ સ ૧૮૩૭ માં મિ પ્રિંસેપે સાંચીસ્તૂપના સ્તંભો આદિ ઉપર ખોદેલા કેટલાક નાના લેખોની છાપોને એકત્ર કરીને જોઈ તો તે બધામાં અંતે બે અક્ષરો એક જ સરખા જણાયા અને તેની પહેલાં સ સ લખેલો દેખાયો જેને પ્રાકૃતભાષાનો છઠ્ઠી વિભક્તિનો પ્રત્યય (સંસ્કૃત સ્ય ના બદલે) માની એ અનુમાન કર્યું કે બધા લેખો જુદા જુદા મનુષ્યો દ્વારા કરાએલા દાનનું સૂચન કરતા હોવા જોઈએ છેલ્લા બધે એક સરખા જણાતા બે અક્ષરો કે જે ઓળખાતા ન હતા, તેમાથી પહેલા અક્ષરની સાથે 'ા' ની માત્રા અને બીજાની સાથે અનુસ્વારનું ચિન્હ લાગેલું હોવાથી પહેલો અક્ષર તે દા અને બીજો તે ન હોઈ એમ એ શબ્દ દાનં જ હોવો જોઈએ એમ તેમણે નિશ્ચય કીધો. આ અનુમાનાનુસાર દ અને ન ને ઓળખવાથી એ આખી વર્ણમાળા પૂરી થઈ અને તેના આધારે દિલ્હી અલ્હાબાદ, સાંચી, મથિયા, રધિયા ગિરનાર, ધૌલી આદિના અશોકના બધા લેખો સહેલાઈ પૂર્વક વાંચી લેવાયા એ વાચનથી એ પણ નિશ્ચય થઈ ગયો કે એ લેખોની ભાષા જેમ અત્યાર સુધી સંસ્કૃત સમજવામાં આવતી હતી તે ન હતી, પરંતુ તે ઉક્ત સ્થાનોની પ્રચલિત પ્રાચીન દેશભાષા હતી (જેને તે વખતે સાધારણ રીતે પ્રાકૃતના નામે ઓળખવામાં આવતી)

આવી રીતે બ્રાહ્મી લિપિનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન મેળવવામાં આવ્યું અને તેના યોગે ભારતના જૂનામાં જૂના લેખો વાચવામાં સંપૂર્ણ સફળતા મળી

હવે એક તેવી જ બીજી જૂની લિપિની શોધના વિષયમાં કાંઈક જણાવું છું કે જેનું જ્ઞાન પણ એ જ સમયમાં મેળવવામાં આવ્યું હતું એ લિપિનું નામ ખરોષ્ઠી છે ખરોષ્ઠી લિપિ એ આર્ય લિપિ નથી પણ અનાર્ય લિપિ છે તેને સેમેટિક લિપિના કુટુંબની અરમાઈક લિપિમાંથી નિકળેલી માનવામાં આવે છે એ લિપિની લખવાની પદ્ધતિ ફારસી લિપિ જેવી છે, અર્થાત્ ડાબી બાજુથી જમણી બાજુ તરફ લખતા જવાની છે એ લિપિ ઈ સ પૂર્વે ત્રીજી–ચોથી શતાબ્દીમાં ભારતવર્ષના જ કેટલાક ભાગમાં પ્રચલિત હતી શહાબાજગઢી અને મન્સેરાના ખડકો ઉપરના અશોકના લેખો આ લિપિમાં ખોદેલા છે તે સિવાય શક, ક્ષત્રપ, પાર્થિઅન અને કુશાનવંશી રાજાઓના સમયના કેટલાક બૌદ્ધ

લેખો તથા બાક્ટ્રિઅન ગ્રીક, શક, ક્ષત્રપ વિગેરે રાજવંશોના કેટલાક શિક્કાઓ ઉપરના લેખો આ લિપિમાં કોતરેલા મળી આવે છે. તેથી ભારતીય પુરાતત્ત્વજ્ઞોને આ લિપિના જ્ઞાનની પણ ખાસ આવશ્યકતા હતી.

કર્નલ જેમ્સ ટૉડે બાક્ટ્રિઅન, ગ્રીક, શક, પાર્થિઅન અને કુશાનવંશી રાજાઓના શિક્કાઓનો મોટો સંગ્રહ કર્યો હતો, જેની એક બાજુએ ગ્રીક અને બીજી બાજુએ ખરોષ્ઠી અક્ષરોના લેખો કોતરેલા હતા. જનરલ વેંટુરાએ સને ૧૮૩૦ મા માનિકિઆલ સ્તૂપ ખોદાવ્યો તો તેમાથી ખરોષ્ઠી લિપિના કેટલાએક શિક્કાઓ અને બે લેખો મળી આવ્યા આ શિવાય સર અલેક્ઝેંડર બર્ન્સ આદિ પ્રાચીન શોધકોએ પણ એવા અનેક શિક્કાઓ એકત્ર કર્યા હતા જેની એક બાજુના ગ્રીક અક્ષરો તો વાંચી શકાતા હતા પરંતુ બીજી બાજુના ખરોષ્ઠી અક્ષરોને ઉકેલવાનુ કાંઈ પણ સાધન ન હતું એ અક્ષરો માટે ભિન્ન ભિન્ન કલ્પનાઓ થવા લાગી હતી. સને ૧૮૨૪ માં કર્નલ ટૉડે કડફિસેસના શિક્કા ઉપરના આ અક્ષરોને 'સસેનીઅન્' અક્ષરો જાહેર કર્યા ૧૮૩૩ માં ઍપોલોડોટસના શિક્કા ઉપરના આ જ અક્ષરોને પ્રિંસેપે "પહલવી" અક્ષરો માન્યા. એક બીજા શિક્કા ઉપરની આજ લિપિને તથા માનિકિઆલ સ્તૂપના લેખની લિપિને પણ પાલી એટલે બ્રાહ્મી લિપિ માની, અને એની આકૃતિ જરા વાંકી હોવાથી એ અનુમાન કર્યું કે છાપેલી અને ચોપડામા લખેલી ગુજરાતી લિપિમાં જેમ અંતર હોય છે તેમ જ અશોકની દિલ્હી આદિ સ્તંભોવાળી અને આ લિપિમા અંતર છે પરંતુ પાછળથી સ્વયં પ્રિન્સેપને જ આ અનુમાન અનુચિત લાગવા માંડ્યુ ૧૮૩૪ માં કેપ્ટન કોર્ટને એક સ્તૂપમાંથી આ જ લિપિનો લેખ મળ્યો જેને જોઈને પ્રિંસેપે ફરી આ અક્ષરોને "પહલવી" અક્ષરો કહ્યા. પરંતુ એ જ વર્ષમા શોધક મી. મેસનને કાબૂલની ઘાટીમા શોધખોળ કરતા અનેક એવા શિક્કાઓ મળી આવ્યા જેના ઉપર ખરોષ્ઠી અને ગ્રીક બન્ને લિપિમાં રાજાઓના નામો લખેલા હતાં. મેસન સાહેબે જ સૌથી પ્રથમ મિનેન્ડો, અપોલૅડોટો, અરમાઈઓ, બાસિલિઓ અને સૅટિરો વગેરે નામો વાંચ્યાં. પરંતુ આ તેમની માત્ર કલ્પના હતી તેમણે આ નામો પ્રિંસેપ સાહેબને લખી મોકલ્યા આ કલ્પનાને સત્ય કરવાનો યશ પ્રિન્સેપ સાહેબના ભાગ્યમા જ હતો. તેમણે મેસન સાહેબના સંકેતો અનુસાર શિક્કાઓ વાચવા માંડ્યા તો તેમાથી બાર રાજાઓના તથા છ પદવીઓના નામો તેમને મળી આવ્યા.

આવી રીતે ખરોષ્ઠી લિપિના ઘણાક અક્ષરોનો બોધ થયો, અને સાથે એ પણ જ્ઞાન થયુ કે આ લિપિ ડાબી બાજુથી જમણી બાજુએ વંચાય છે. તેથી એ પણ નિશ્ચય થયો કે આ લિપિ સેમેટિક વર્ગની છે, પણ તે સાથે તેની ભાષા કે જે વાસ્તવમાં બ્રાહ્મી લેખોની ભાષા માફક પ્રાકૃત જ હતી, તેને પહલવી માની લેવાની ભૂલ કરવામાં આવી આ પ્રકારે ગ્રીક લેખોની સહાયતાથી ખરોષ્ઠી લિપિના ઘણાક અક્ષરો તો જણાઈ ગયા પણ ભાષાના વિષયમા ભ્રાન્તિ થવાથી, પહલવીના નિયમો તરફ ધ્યાન રાખી લેખોને વાંચવાનો ઉદ્યોગ કરવાથી અક્ષરોને ઓળખવાની અશુદ્ધતા આવવા લાગી, જેથી થોડાક સમય પર્યંત તેનુ

કાર્ય અટકી પડયું પરંતુ ૧૮૩૮ માં બે આરૂટ્રીઅન ગ્રીક શિક્કાઓ ઉપર પાલી લેખો જોતાં જ બીજા શિક્કાઓની ભાષા પણ તે જ હશે એમ માની તેના નિયમાનુસાર તે લેખો વાચવાથી પ્રિંસેપનું કામ આગળ ચાલ્યું, અને એકંદર ૧૭ અક્ષરો તેમણે તેના ખોળી કાઢયા પ્રિંસેપની માફક મી નૉરિસે પણ આ વિષયમાં ઘટતી શોધ કરી એ લિપિના બીજા છ અક્ષરો નવા શોધી કાઢ્યા બાકી રહેલા થોડાક અક્ષરો જનરલ કનિંગહામે ઓળખી લીધા, અને તેમ કરી ખરોષ્ઠીની સંપૂર્ણ વર્ણમાળા તૈયાર કરી લેવામાં આવી

ભારતવર્ષની જૂનામાં જૂની લિપિઓનું જ્ઞાન મેળવવાનો સામાન્ય ઇતિહાસ આ પ્રમાણે છે ઉપરોક્ત વર્ણનથી આપણને જણાય છે કે લિપિ વિષયક શોધખોળમાં મી પ્રિંસેપની કામગિરી ઘણી મોટી છે એશિયાટિક સોસાઇટી તરફથી બહાર પડેલા "સેન્ટેનરી રિવ્યુ" નામના પુસ્તકમાં "એશ્યેંટ ઈંડીઅન અલ્ફાબેટ" વાળા આર્ટિકલના પ્રારંભમાં જ આ બાબત વિષે ડૉ હૉર્નેલ લખે છે કે —

'જૂના શિલાલેખોને ઉકેલવાનું અને તેનું ભાષાંતર કરવાનું સોસાઈટિનું અત્યુપયોગી કાર્ય સને ૧૮૩૪ થી ૧૮૩૯ સુધીમાં થયું હતું એ કાર્યની સાથે મી જેમ્સ પ્રિંસેપ, કે જે તે વખતે સોસાઈટિના સેક્રેટરી હતા તેમનું નામ સદાને માટે જોડાઈ રહેશે કારણ કે હિન્દુસ્તાન વિષયક જૂની લેખનકલા, ભાષા અને ઈતિહાસ સાથે સંબંધ ધરાવનારી અને આપણા આધુનિક જ્ઞાનના આધારભૂત એવી મોટી શોધો તે એક જ મનુષ્યના પુરૂષાર્થને લઇને અને તે પણ વળી આટલા અલ્પ સમયમાં થઈ હતી "

પ્રિન્સેપના પછી લગભગ વીસ વર્ષ સુધી પુરાતત્ત્વ સંશોધનના સૂત્રો જેમ્સ ફર્ગ્યુસન, મેજર કિટ્ટો, એડવર્ડ ટૉમાસ, અલેકઝાંડર કનિંગહામ, વાલ્ટર ઇલિયટ, મેડોઝ ટેલર, સ્ટીવન્સન, ડૉ. ભાઉ દાજી વિગેરેના હાથમાં રહ્યા આમાંના પહેલા ચાર વિદ્વાનોએ ઉત્તર હિંદુસ્તાનમાં, ઇલિયટ સાહેબે દક્ષિણ હિંદુસ્તાનમાં, અને પાછળના ત્રણે પશ્ચિમ હિંદુસ્તાનમાં કામ કર્યું હતું ફર્ગ્યુસન સાહેબે પુરાતન વાસ્તુવિદ્યા (Architecture) નું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવામાં ઘણી મહેનત લીધી હતી, અને તેમણે આ વિષય ઉપર અનેક ગ્રંથો લખ્યા હતા આ વિષયનો તેમનો અભ્યાસ એટલો બધો આગળ વધી ગયો હતો કે તેઓ કોઇપણ ઇમારતને આંખેથી જોઇને જ સાધારણ રીતે તેનો સમય નિશ્ચિત કરી લેતા હતા મેજર કિટ્ટો બહુ વિદ્વાન્ તો ન હતો પણ તેની શોધક બુદ્ધિ બહુ તીક્ષ્ણ હતી જ્યાં બીજા અનેક વિદ્વાનોને કાંઇ પણ જડયું ન હતું ત્યાં જ તેણે પોતાની ગીધ જેવી ઝીણી દૃષ્ટિના બળે કેટલી યે ચીજો ખોળી કાઢી હતી તે ચિત્રકલામાં પણ નિપુણ હતો તેણે પોતાના હાથથી કેટલા યે સ્થાનોના ચિત્ર કાઢ્યા હતા અને તે પ્રકાશિત કર્યાં હતા. તેની આવી શિલ્પકળા વિષયક ઉંડી કુશળતા જોઇ સરકારે તેને બનારસ સંસ્કૃત કૉલેજનું મકાન તૈયાર કરાવવાનું કામ સોંપ્યું હતું તેણે આ કામમાં ઘણો પરિશ્રમ ઉઠાવ્યો હતો. આ પરિશ્રમને કારણે તેની તબીયત બગડી ગઈ અને આખર ઇંગ્લાંડમાં જઇ તે સ્વર્ગસ્થ

થયો ટૉમસ સાહેબે ખાસ કરીને પોતાનું લક્ષ્ય શિક્કાઓ તથા શિલાલેખો તરફ ખેંચ્યું. તેણે ઘણા પરિશ્રમ સાથે ઇ સ પૂર્વે ૨૪૬ થી લઇ ૧૫૫૪ સુધીનો ૧૮૦૦ વર્ષોનો પ્રાચીન ઇતિહાસ તારવી કાઢયો હતો. જનરલ કનિંગહામે પ્રિંસેપનું જ બાકી રહેલું કામ હાથમાં લીધું તેમણે બ્રાહ્મી તથા ખરોષ્ટી લિપિના સઘળા પ્રકારોનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. દક્ષિણના ચાલુક્ય વંશનુ વિસ્તૃત જ્ઞાન લોકોની આગળ તેમણે જ પ્રથમ મૂક્યું. ટેલર સાહેબે ભારતની ભૂમિનિર્માણવિદ્યાનું જ્ઞાન મેળવ્યું અને સ્ટિવન્સને શિક્કાઓની શોધખોળ કરી. પુરાતત્ત્વ સંશોધનના કામમા પહેલવહેલી પ્રવીણતા જે ભારતવાસી વિદ્વાને મેળવી હતી તેમનુ નામ ડૉ ભાઉ દાજી હતું તેમણે અનેક શિલાલેખો ઉકેલ્યા અને પ્રાચીન ભારતના ઈતિહાસના જ્ઞાનમા ખૂબ વૃદ્ધિ કરી. એ વિષયમા બીજા નામાંકિત ભારતના વિદ્વાન તરીકે કાઠિયાવાડના વતની પંડિત ભગવાનલાલ ઇન્દ્રજીનુ નામ લેવુ જોઇએ. તેમણે પશ્ચિમ ભારતના ઇતિહાસમાં ઘણી અમૂલ્ય વૃદ્ધિ કરી છે. અનેક શિલાલેખો અને તામ્રપત્રો ઉકેલ્યાં હતાં. તેમની વિદ્વત્તાનું ખરૂ સ્મારક તો તેમણે ઉડીસાના ખંડગિરિ–ઉદયગિરિ વાળી હાથીગુફામાના સમ્રાટ્ ખારવેલના લેખને શુદ્ધ રીતે ઉકેલ્યો તે છે. બંગાલના વિદ્વાન ડૉ રાજેન્દ્રલાલ મિત્રનું નામ પણ આ વિષયમાં ખાસ ઉલ્લેખ કરવા યોગ્ય છે. તેમણે નેપાલના સાહિત્ય અને ઈતિહાસ વિષયમા આપણને ઘણુ જ્ઞાન આપ્યુ છે

આ બધુ કામ વિદ્વાનોએ ખાસ પોતાના શોખથી જ કીધુ હતું ત્યા સુધી સરકાર તરફથી એ વિષય માટે કોઇ ખાસ પ્રબંધ કરવામાં આવ્યો ન હતો. પરંતુ એ કામ એટલું બધું મહાભારત છે કે સરકારની ખાસ મદદ વગર સંપૂર્ણ થવું અશક્ય છે. અને ૧૮૪૪ માં લંડનની રૉયલ એશીઆટિક સોસાઈટીએ ઇસ્ટ ઈન્ડીઆ કંપનીને વિનતિ કરી કે આ કામમા સરકારે ખાસ મદદ કરવી જોઇએ અને સરકાર મારફત જ આ કામ થવુ જોઈએ. તેથી ૧૮૪૭ મા લોર્ડ હાર્ડિંજના પ્રસ્તાવથી બોર્ડ ઑફ ડાયરેક્ટર્સે આ કામમા ખર્ચ કરવાની મંજુરી આપી. પણ સન ૧૮૫૦ સુધીમા તેનુ વાસ્તવિક પરિણામ કાંઇ પણ ન આવ્યું. ૧૮૫૧ માં સંયુક્ત પ્રાંતના ચીફ એન્જીનીઅર કર્નલ કનિંગહામે એક યોજના ઘડીને સરકાર ઉપર મોકલી અને સાથે એ પણ સૂચવ્યુ કે જો ગવર્નમેંટ આ કામ તરફ લક્ષ્ય નહિ આપશે તો કદાચિત્ ફ્રેંચ અને જર્મન લોકો આ કામ ઉપાડી લેશે, અને તેમ થશે તો તેમાં અંગ્રેજોના યશની હાનિ થશે ક. કનિંગહામની આ સૂચનાનુસાર અને ગવર્નર જનરલની ભલામણથી ૧૮૫૨ માં આર્કિઓલૉજીકલ સર્વ્હે નામનું એક ડિપાર્ટમેન્ટ કાયમ કરવામાં આવ્યું અને ૨૫૦ રુપીઆ માસિક પગારે કનિંગહામ સાહેબની જ આ ડિપાર્ટમેન્ટના ડાયરેક્ટર તરીકે નેમણુક કરવામા આવી. આ યોજના સ્થાયી રૂપે ન હતી સરકારની ધારણા એમ હતી કે મોટાં મોટાં મહત્ત્વપૂર્ણ સ્થાનોનું યથાતથ વર્ણન, તત્સંબધી ઇતિહાસ અને કિંવદન્તીઓનો સંગ્રહ કરવામાં આવે. નવ વર્ષ સુધી સરકારની આ જ નીતિ ચાલૂ રહી હતી. તે દરમ્યાન કનિંગહામ સાહેબે પણ પોતાના નવ રિપોર્ટો બાહાર પાડયા

૧૮૭૧ થી સર (ની આ ધારણામા ધાર્ડ ફેરફાર થયો કનિંગહામના રિપોર્ટોથી સરકારની ખાત્રી થઈ કે આખુ હિન્દુસ્તાન મહત્ત્વપૂર્ણ સ્થાનોથી ભરેલુ છે અને તે બધાની શોધખોળ થવાની આવશ્યકતા છે એટલા માટે આખા હિન્દુસ્તાનની શોધખોળ કરવા માટે કનિંગહામ સાહેબને ડાયરેક્ટરને બદલે ડાયરેક્ટર-જનરલ બનાવ્યા અને તેમની મદદમાટે બીજા વિદ્વાનોની નેમણુંક કરી પ તુ ૧૮૭૪ સુધી એકલા કનિંગહામ સાહેબ જ ઉત્તર હિંદુસ્થાનમા શોધખોળનુ કામ કરતા હતા ૧૮૭૪ મા દક્ષિણ ભાગની ગવેષણા ક વા માટે ડૉ બર્જેસની યોજના ક વામા આવી

આ ડિપાર્ટમેન્ટનુ કામ કેવળ પ્રાચીન સ્થાનોની શોધ કરવાનુ હતુ, તેમનુ રક્ષણ કરવાનુ કામ પ્રાંતિક સરકારોને સ્વાધીન હતુ પણ પ્રાંતિક સરકારોએ આ તરફ લક્ષ્ય ન આપ વાથી અને પ્રાચીન સ્થાનો, સ રક્ષણના અભાવે, નષ્ટ થવા લાગ્યા આ દુર્દશા જોઇ લૉડ લિટને ૧૮૭૮ મા "ક્યુરેટર ઑફ એન્શ્યન્ટ મૉન્યુમેન્ટ્સ" નામના એક અધિકારીની નેમણુંક કરવાનો વિચાર કીધો તે અધિકારી માટે દરેક પ્રાન્તના સ રક્ષણીય સ્થાનોની યાદી તૈયાર કરી, તેમા ક્યા કયા સ્થાનો સુરક્ષિત રહી શકે છે, કયા કયા સ્થાનો મરામત ક વા લાયક તો નથી પણ હજી પૂરા નષ્ટ થયા નથી, અને કયા કયા મહત્ત્વપૂર્ણ સ્થાનો તદ્દન નષ્ટ થઈ ગયા છે, એ સઘળી વિગતો લખવાનુ કામ નિશ્ચિત કરવામા આવ્યુ આ યોજનાના સબ ધમા 'સેક્રેટરી ઑફ સ્ટેટ' ને લખવામા આ યુ પણ તેણે લૉર્ડ લિટનની યોજનાનો અ સ્વીકાર કર્યો અને આ કામ કરવાનો ભાર ડાયરેક્ટર ઉપર નાખવા જણા યુ પ તુ ૧૮૮૦ માં હિ દી સરકાર ભા તમ ત્રીને લખ્યુ કે ડાયરેક્ટર-જનરલને આ કામ કરવા જેટલી ફુરસદ નથી અને બીજો કોઈ ઉચિત પ્રબધ કર્યા સિવાય ઘણા મહત્વના સ્થાનો નષ્ટ થતા જાય છે ત્યારે ૧૮૮૧ થી લઈને ૧૮૮૩ સુધી મેજર કોલ આ ઈ ની કયુરેટર તરીકે નેમણું કરવામા આવી. આ ત્રણ વષમા એ કયુરેટરે " પ્રીઝર્વેશન ઑફ નેશનલ મો યુ મે ટ્સ ઓફ ઇ ડીઆ " નામના ત્રણ રિપોર્ટો પ્રકટ કર્યા તે પછી એ કયુરેટરનુ પદ કાઢી નાખવામા આવ્યુ

૧ને ૧૮૮૫ મા જનરલ કનિંગહામ સાહેબ પોતાના પદથી રિટાયર્ડ થયા ૧૮૬૨ થી ૧૮૮૫ સુધીમા તેમણે ૨૪ રિપોર્ટો બહાર પાડ્યા હતા આ રિપોર્ટો જોવાથી કનિંગહામ સાહેબના અલૌકિક પરિશ્રમનો ખ્યાલ આવી શકે છે આટલી યોગ્યતા સાથે આટલુ બધુ કામ ઘણા થો ા જ માણસોએ કર્યુ હશે તેમના પછી ડાયરેક્ટર-જનરલ તરીકે ડૉ બર્જેસની નેમણુંક ક વામા આવી ત્યા થી અન્વેષણની સાથે સરક્ષણનુ કામ પણ આ ખાતાને સોપ વામા આ યુ મ ર્વે ક વા માટે હિ દુસ્તાનના પાચ ભાગો કરવામા આવ્યા, અને દરેક ભાગ માટે એ સ ર્વેય ની યોજના કરવામા આવી મુબઇ, મદ્રાસ, રાજપુતાના અને સિધ સાથે પજાબ, મધ્ય પ્રદેશ અને વાયવ્ય પ્રાત સાથે મધ્ય ભારત, અને આસામ સાથે બ ગાળ, એમ પાચ ભાગો નિયત કરવામા આવ્યા, પરતુ સર્વેયર કેવળ ઉત્તર

ભારતના ત્રણ ભાગો માટે જ નિયત થયા. મુબઈ અને મદ્રાસ પ્રાન્તોનું કામ ડૉ. બર્જે-સના હાથમાં જ રહ્યુ.

આ સમય સુધી પણ સરકારની ઇચ્છા એ ખાતાને સ્થાયી કરવાની ન હતી. સરકારની સમજ એવી હતી કે પાંચ વરસમા આ કામ પુરૂ થઇ જશે. એટલા માટે પ્રાચીન લેખોને ઉકેલવા માટે એક યુરોપીઅન પંડિતની નેમણુક કરી અને સાથે દેશી વિદ્વાનોની પણ મદદ લેવાનો નિશ્ચય કર્યો.

૧૮૮૯ મા ડૉ બર્જેસ પણ પોતાના હોદ્દાથી ફારેગ થયા આથી એ ખાતાની હાલત ઉતરતી થવા લાગી. આ ખાતાના હિસાબની તપાસ કરવા માટે સરકારે કમિશન નીમ્યું. તેણે પોતાના રિપોર્ટમા ખર્ચની બાબતમાં કેટલીક કાપકૂપ કરવાની ભીફારસ કરી. હિન્દુસ્તાનના લાભ માટે થતા ખર્ચમા કાપકૂપ કરવાની સીફારસને સ્વીકારવા સરકાર હમ્મેશાં તૈયાર જ હોય છે એ કહેવાની ખાસ આવશ્યકતા નથી. ડૉ બર્જેસ પછી ડાયરેક્ટર જનરલનું સ્થાન ખાલી રાખવામાં આવ્યુ. બંગાલ અને પંજાબના સર્વેયરોને પણ રજા આપી. આટલુ ઓછુ કરીને પણ સરકારે ચાલૂ યોજનાને ફકત પાચ જ વર્ષ સુધી જારી રાખવાનુ જાહેર કર્યું. પણ સરકારી હુકમ માત્રથી જ કામ એકદમ કેમ થઇ શકે? ૧૮૯૦ થી ૧૮૯૫ સુધીના પાંચ વરસ આ ખાતા માટે ઘણી જ દીનદશામા વીત્યાં, અને કામ પણ પૂરૂં ન થયુ. ૧૮૯૫ થી ૧૮૯૮ સુધી સરકાર વિચાર જ કરતી રહી કે આ વિષયમાં શું કરવું જોઇએ ૧૮૯૮ માં તેનો એવો વિચાર થયો કે શોધખોળનુ કામ બધ કરીને હવે તો આ ખાતા પાસેથી ફક્ત સંરક્ષણનું જ કામ લેવુ જોઈએ. આ નવા વિચાર પ્રમાણે નીચે મુજબ પાચ ક્ષેત્રો નક્કી કરવામાં આવ્યાં.

(૧) મદ્રાસ અને કુર્ગ (૨) મુંબઇ, સિંધ અને બરાર
(૩) સંયુકત પ્રાંત અને મધ્યપ્રદેશ (૪) પંજાબ, બ્રિટિશ બલુચિસ્તાન અને અજમેર
(૫) બંગાલ અને આસામ

૧૮૯૯ ના ફેબ્રુઆરી માસની ૧ લી તારીખે એશિઆટિક સોસાયટિના સમારંભમાં લૉર્ડ કર્ઝને આ ખાતાને ખૂબ ઉન્નત કરવા માટેનો પોતાનો વિચાર જાહેર કર્યો. ત્યારબાદ ૧૯૦૧ માં વાર્ષિક એક લાખ રૂપીઆ ખર્ચ કરવાની આ ખાતાને મજુરી આપવામા આવી, અને ડાયરેક્ટર-જનરલની ફરીથી નેમણુંક કરવામા આવી. સન ૧૯૦૨ માં નવા ડાયરેક્ટર-જનરલ માર્શલ સાહેબ હિંદુસ્તાનમાં આવ્યા. ત્યારથી આ ખાતાનો નવો ઈતિહાસ શરૂ થાય છે તે આજે કહેવાનું કામ મારૂ નથી. જ્યારે એ ખાતા ઉપર આપણી સત્તા થશે ત્યારે એના ઇતિહાસનુ આપણે અવલોકન કરીશું.

ઇંગ્રેજ સરકારના આ કામનું ઉદાહરણ લઈ કેટલાંક દેશી રાજ્યોએ પણ પોતાનાં રાજ્યોમા આ વિષયના ડિપાર્ટમેટો ખોલ્યાં છે ભાવનગર સંસ્થાને કેટલાક પંડિતોદ્વારા કાઠિયાવાડ, ગૂજરાત અને રજપુતાનાના અનેક શિલાલેખો અને દાન પત્રોની નકલો મેળવી “ભાવનગર પ્રાચીન શોધ સગ્રહ” ના નામે એક પુસ્તક દ્વારા તેમને પ્રકાશિત કરી છે.

કાઠિયાવાડના આગળના પૉલિટિકલ એજંટ કર્નલ વૉટ્સનને પ્રાચીન વસ્તુઓ ઉપર બહુ પ્રેમ હતો, તેથી કાઠિયાવાડના કેટલાક રાજાઓએ મળીને રાજકોટમાં "વૉટસન મ્યુઝીઅમ" નામનું પરાણુ-વસ્તુ-સંગ્રહાલય સ્થાપ્યું જેમાં કેટલાક લેખો, તામ્રપત્રો, પુસ્તકો, શિક્કાઓ આદિનો સારો સંગ્રહ થયેલો છે. માઇસોર રાજ્યે પણ આવું એક સંગ્રહાલય સ્થાપ્યું છે, અને સાથે આર્કિઑલૉજીકલ ડિપાર્ટમેંટ પણ સ્વતંત્ર રીતે ઉઘાડયું છે, જે દ્વારા આજ સુધીમાં અનેક રિપોર્ટો, પુસ્તકો અને લેખસંગ્રહો છપાઈ પ્રસિદ્ધ થયા છે ત્યાંથી એપિગ્રાફિઆ કર્નાટિકા નામની એક સીરિઝ નીકળે છે જેની અંદર હજારો શિલાલેખો-તામ્રપત્રો ઇત્યાદિ પ્રસિદ્ધ થયા છે. ત્રાવણકોર, હૈદરાબાદ અને કાશ્મીર ના રાજ્યોએ પણ આ કામ સ્વતંત્ર રીતે કરવા માંડયું છે એ સિવાય, ઉદયપુર, ઝાલાવાડ, ગ્વાલીઅર, ભોપાળ, વડોદરા, જુનાગઢ, ભાવનગર, આદિ રાજ્યોમાં પણ સ્થાનિક સંગ્રહાલયો થતાં જાય છે.

બ્રીટિશ રાજ્યમાં સરકાર અને બીજી સંસ્થાઓ અથવા સ્વતંત્ર વ્યક્તિઓ દ્વારા થયેલા પુરાણુ-વસ્તુ-સંગ્રહને મુંબઈ, મદ્રાસ, કલકત્તા, નાગપુર, અજમેર, લાહોર, લખનૌ, મથુરા, સારનાથ, પેશાવર, આદિ સ્થળોના પદાર્થ-સંગ્રહાલયોમાં સુરક્ષિત રાખવામાં આવે છે, તેમજ ઘણીક વસ્તુઓને લંડનના બ્રીટિશ મ્યુઝિઅમમાં મોકલવામાં આવે છે. એ બધી વસ્તુઓના તે તે સંસ્થા દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવતા રિપોર્ટો અને કેટલૉગોમાં વર્ણન આપેલા હોય છે. શિલાલેખો, તામ્રપત્રો અને શિક્કાઓ એ વિષયના ખાસ જુદા પુસ્તકો અને ગ્રંથમાળાઓ પણ પ્રકટ થાય છે.

જેવી રીતે હિંદુસ્તાનમાં આ પ્રમાણે પુરાતત્ત્વની ગવેષણાનું કામ ચાલે છે, તેવી રીતે યુરોપમાં પણ ચાલે છે. ફ્રાંસ, જર્મની, ઑસ્ટ્રિયા, ઇટલિ, રશીયા આદિ રાજ્યોએ પોતપોતાના રાજ્યોમાં એ વિષય માટે સ્વતંત્ર સોસાઇટિયો, ઍકેડેમીઓ, વીગેરે સ્થાપેલી છે અને ત્યાંના પણ અનેક વિદ્વાનોએ હિન્દુસ્તાનના સાહિત્ય અને ઇતિહાસને પ્રકાશમાં આણવા ઘણો પરિશ્રમ ઉઠાવ્યો છે. નષ્ટપ્રાય થતા આપણા હજારો ગ્રંથોને તેમણે ઉદ્ધર્યા છે અને સંગ્રહ્યા છે, વાંચ્યા છે અને છપાવ્યા છે. સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત સાહિત્યને પ્રકાશમાં આણવાનું જેટલું કામ જર્મન વિદ્વાનોએ કર્યું છે તેટલું બીજા કાઇએ કર્યું નથી. તુલનાત્મક ભાષાશાસ્ત્રને જેટલું જર્મનોએ ખીલવ્યું છે તેનો શતાંશ પણ બીજાઓએ ખીલવ્યું નથી. બીજી પણ બધી મૌલિક શોધો મોટે ભાગે જર્મન વિદ્વાનોના હાથે જ થયેલી છે. અંગ્રેજોનો હિંદુસ્તાન સાથે ખાસ સંબંધ હોવાથી જ તેઓ આ વિષયમાં થોડું ઘણું કરવાનો ડોળ કરે છે એટલું જ. અસ્તુ.

આ પ્રમાણે દેશ અને વિદેશમાં વ્યક્તિ અને સંસ્થાએ કરેલા પુરાતત્ત્વાનુસંધાનથી આપણી પ્રાચીન સંસ્કૃતિના ઘણાક અજ્ઞાત અધ્યાયો લખાયા છે, અને લખાય છે. શિશુનાગ, નંદ, મૌર્ય, ગ્રીક, શાતકર્ણી, શક, પાર્થિઅન, કુશન, ક્ષત્રપ, આભીર, ગુપ્ત, હૂણ,

યૌધેય, ખેસ, લિચ્છવી પરિવ્રાજક, વાકાટક, મૌખરી, મૈત્રક, ગુહિલ, ચાવડા, ચાલુક્ય, પ્રતિહાર, પરમાર, ચાહમાન, રાષ્ટ્રકૂટ, કચ્છવાહા, તોમર, કલચૂરી, ત્રૈકુટક, ચંદેલા, યાદવ, ગુર્જર, મિહિર, પાલ, સેન, પલ્લવ, ચોલ, કદંબ, શિલાર, સેંદ્રક, કાકતીય, નાગ, નિકુંભ, બાણ, મત્સ્ય, શાલંકાયન, શૈલ, મૂષક આદિ અનેક પ્રાચીન રાજવંશો કે જેમના વિષયમા એક અક્ષર જેટલું પણ આપણે જાણતા ન હતા તેમના વિસ્તૃત ઇતિહાસો જાણવામા આવ્યા છે. અનેક જાતિ, ધર્મ, સંપ્રદાય, ધર્માચાર્ય, વિદ્વાન્, ધનવાન્. દાની અને વીર પુરૂષોના વૃત્તાન્તોનો પરિચય થયો છે; અને અસંખ્ય પ્રાચીન નગર, મંદિર, સ્તૂપ, અને જળાશયોની હકીકતો મળી છે. સો વર્ષ પહેલા આપણે આમાનું કંઈ પણ જાણતા ન હતા.

આ ઉપરથી સ્પષ્ટ સમજી શકાય એમ છે કે પુરાતત્ત્વના સંશોધનનું કેટલું બધું મહત્ત્વ છે. તે દેશના ઇતિહાસને શુદ્ધ અને સંપૂર્ણ બનાવે છે. તેનાથી પ્રજાના ભૂતકાળનુ યથાર્થ જ્ઞાન થાય છે, અને ભવિષ્યકાળમા કયે માર્ગે જવું તેનું ખરૂ સૂચન મળે છે.

વિદ્વાનોનો અભિપ્રાય છે કે પુરાતત્ત્વ સંબંધી જે કામ અદ્યાપિ થયું છે તે ભારતવર્ષની વિશાલતા અને વિવિધતા તરફ લક્ષ્ય કરતા હજી બાળપોથીનું પહેલુંજ પાનું ઉઘાડવામાં આવ્યુ છે એમ કહેવામા કોઈ પણ જાતની અત્યુક્તિ થતી નથી આ દેશમાં એટલી બધી વસ્તુઓ છુપાયલી, દટાયલી, ખોવાયલી પડી છે કે જ્યારે સેંકડો વિદ્વાનો સૈકાઓ સુધી પરિશ્રમ કર્યો કરશે ત્યારે જ તેમને પ્રકાશમા લાવી શકશે

ભારતના રાષ્ટ્રીય જીવનના નવીન ઇતિહાસ માટે બંધાયેલા કોરા પુસ્તકમા "ૐ નમ" લખવાનુ મોટુ માન ગૂજરાતને મળે એવો ઈશ્વરીય સંકેત દેખાય છે. તેથી રાષ્ટ્રીય ઇતિહાસના દરેક અધ્યાયમાં ગૂજરાતનો આદિ ઉલ્લેખ આવે એમ જો આપણે ઇચ્છીએ તો દરેક વિષયમા આપણે પ્રગતિ કરવી જોઇએ; અને એવા જ કોઈ અજ્ઞાત સંકેતથી આપણે રાષ્ટ્રીય શિક્ષણ મંદિરની સાથે પુરાતત્ત્વ મંદિરની પણ સ્થાપના કરી છે. એને સફળ બનાવવાનુ લક્ષ્ય આપણા દરેક વિદ્યાર્થીમા પ્રભુ ઉત્પન્ન કરે એમ ઇચ્છી હુ મારૂં વ્યાખ્યાન સમાપ્ત કરૂં છું.*

---

* પુરાતત્ત્વ મંદિર ગ્રંથાવલીમા પ્રકટ થએલ "આર્યવિદ્યા વ્યાખ્યાનમાળા" નામના પુસ્તકમાથી આ વ્યાખ્યાન અત્ર ઉદ્ધૃત કરવામા આવ્યુ છે.

વૈશાલીના ગણસત્તાક રાજ્યનો નાયક
રાજા ચેટક

જૈન સાહિત્યમા વૈશાલીનો રાજા ચેટક ઘણી રીતે પ્રસિદ્ધ છે શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીરે પ્રચારેલા ધર્મના એક મહાન્ ઉપાસક તરીકે તો તેની ખ્યાતિ છે જ, પરંતુ બીજી રીતે વ્યાવહારિક પ્રસગોથી પણ તેની તેટલી જ પ્રસિદ્ધિ છે એ પ્રસિદ્ધિનુ પહેલુ કારણ તો એ છે કે જૈન ધર્મના છેલ્લા તીર્થંકર નિર્ગ્રંથ જ્ઞાતપુત્ર શ્રી મહાવીરના ઘરાણા સાથે તેનો બેવડો સબધ હતો શ્રી મહાવીરની માતા ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણી એ ચેટકની સગી બહેન થતી હતી અને એ ત્રિશલાના મોટા પુત્ર અને મહાવીરના મોટા ભાઈ નદિવર્ધન સાથે એની વચલી પુત્રી નામે જેષ્ઠાએ લગ્ન કર્યા હતા બીજુ કારણ જેવી રીતે મહાવીરના ઘરાણા સાથે એનો કૌટુબિક સબધ હતો તેવી જ રીતે તત્કાલીન ભારતના બીજા કેટલાક પ્રધાન રાજવશો સાથે પણ એનો સગપણનો સબધ બધાએલો હતો સિંધુસૌવીરનો રાજા ઉદ્રાયણ અવતીનો રાજા પ્રદ્યોત, કૌશાબીનો રાજા શતાનિક, ચપાનો રાજા દધિવાહન અને મગધનો રાજા બિંબિસાર એ બધા એના જમાત થતા હતા જૈન સાહિત્યમા કુણિક અથવા કોણિકના અને બૌદ્ધસાહિત્યમા અજાતશત્રુના નામે પ્રસિદ્ધ પામેલો મગધનો સમર્થ સમ્રાટ્, તથા સામાન્ય રીતે જૈન, બૌદ્ધ અને બ્રાહ્મણ–ત્રણે સપ્રદાયના કથાસાહિત્યમા વ્યાપક થએલો ઉદયન વત્સરાજ, એ ચેટકના સગા દૌહિત્ર થતા હતા ત્રીજુ તે વખતે હયાતી ધરાવતા ભારતના ગણસત્તાક રાજ્યોમાના એક પ્રધાન રાજ્યતત્રનો તે વિશિષ્ટ નાયક કહેવાતો હતો અને છેલ્લુ જૈન પરપરા પ્રમાણે આખા આર્યાવર્તમા ક્યારે યે નહી થએલી એવી એક ભયકર જનનાશક લડાઇ એને લડવી પડી હતી જેમા એનો પ્રતિપક્ષી, એનો પોતાનો જ સગો દૌહિત્ર મગધરાજ અજાતશત્રુ હતો!

જૈન પરપરામા આટલી બધી પ્રસિદ્ધિ મેળવનાર અને ઉક્ત રીતે તત્કાલીન ભારતમા એક મહત્ત્વનુ સ્થાન પ્રાપ્ત કરનાર એ ભારતના વિષયમા જૈન સાહિત્ય સિવાય અન્યત્ર ક્યાયે ઉલ્લેખ મળી આવતો ન હોવાથી ઐતિહાસિકોની દૃષ્ટિમા હજી એનુ અસ્તિત્વ ધ્યાન ખેચવા લાયક રીતે અંકિત થયુ નથી બ્રાહ્મણ સપ્રદાયના સાહિત્ય તરફ નજર કરીએ છીએ ત્યારે તેમા, એ સમયના ભારતના મગધ, કોશલ, કૌશાબી અને અવતી જેવા રાજસત્તાક રાજ્યોની તો નાની મોટી નોંધો લખાએલી મળી આવે છે ખરી, પણ વૈશાલી જેવુ સ્થાન કે જેમા ગણસત્તાક રાજ્યપદ્ધતિ ચાલતી હતી તેનો નામનિર્દેશ પણ તેમા ભાગ્યે જ જડી આવે છે

બૌદ્ધ સાહિત્યમા વૈશાલી અને ત્યા આધિપત્ય ભોગવતી લિચ્છવી નામની ક્ષત્રિય જાતિના સબધમા ઘણી ઘણી વાતો લખેલી મળી આવે છે, પરંતુ એ સ્થાન અને એ

'શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની માતા—જેનું વાસિષ્ઠ ગોત્ર હતું, તેના ત્રણ નામ હતા એમ કહેવાય છે જેમ કે ૧ ત્રિશલા, ૨ વિદેહદિન્ના, અને ૩ પ્રિયકારિણી' 'વિદેહદિન્ના' ના વ્યુત્પત્યર્થ ઉપરથી જણાય છે કે તેનો જન્મ વિદેહના ગણકુળમાં થયો હતો માતાના આ કુળ સૂચક નામ ઉપરથી મહાવીરનું પણ એક નામ વૈદેહદિન્ન હતું જેનો ઉલ્લેખ આચારાંગ સૂત્રમાં ઉપર્યુક્ત સૂત્ર પછી તરત જ કરવામાં આવેલો છે જેમકે—

समणे भगवं महावीरे नाए नायपुत्ते नायकुलनिव्वत्ते विदेहे विदेहदिन्ने विदेहजच्चे विदेहसूमाले (पृ ४२२)

આ બંને અવતરણો કલ્પસૂત્રમાં પણ અવિકલરૂપે ઉદ્ધૃત થએલા છે ત્યાં ટીકાકારો विदेहदिन्नની વ્યાખ્યા આ પ્રમાણે કરે છે विदेहदिन्ना त्रिशला तस्या अपत्यं वैदेहदिन्नः । આગળ ઉપર આપણે જોઇશું કે વૈશાલી એ એક વિદેહનો જ ભાગ હતો અને તેથી ચેટકનું ઘરાણું વિદેહ રાજકુળ તરીકે લેખાય એ સ્પષ્ટ જ છે આ રીતે મહાવીરની માતા ત્રિશલા વિદેહ રાજકુળના ચેટકની બ્હેન થતી હતી તે ઉક્ત આવશ્યકચૂર્ણિ અને આચારાંગના ઉલ્લેખ ઉપરથી સ્પષ્ટ થઈ જાય છે

ત્રિશલાના મોટા પુત્ર અને મહાવીરના મોટા ભાઇ નન્દિવર્ધનની સ્ત્રી ચેટકની પુત્રી થતી હતી તેનો એક ઉલ્લેખ તો ઉપર આવી ગયો છે બીજો ઉલ્લેખ પણ એજ આવશ્યકચૂર્ણિમાં આગળ ઉપર થએલો છે જેમાં ચેટકની કઇ પુત્રીએ કોની સાથે લગ્ન કર્યાં તેની નોંધ લેવામાં આવી છે એ નોંધ પ્રમાણે ચેટકને એકંદર સાત પુત્રીઓ હતી જેમાંથી છના લગ્ન થયા હતા અને એક કુમારિકા જ રહી હતી એ સાત પુત્રીઓમાંથી પાંચમી પુત્રી જેનું નામ જ્યેષ્ઠા હતું તેનું લગ્ન નન્દિવર્ધન સાથે થયું હતું ઉલ્લેખ આ પ્રમાણે છે

'जट्ठा कुडग्गामे वद्धमाणसामिणो जट्ठस्स नन्दिवद्धणस्स दिन्ना'

જ્યેષ્ઠા [નામે કન્યા] કુંડગ્રામમાં વર્ધમાન (મહાવીરનું મૂળ નામ) સ્વામિના જ્યેષ્ઠ [બંધુ] નન્દિવર્ધનને આપી હતી' આ ઉલ્લેખ આચાર્ય હેમચન્દ્ર પોતાના મહાવીરચરિત્રમાં પણ કરેલો છે –

कुण्डग्रामाधिनाथस्य नन्दिवर्धनभूभुजः ।
श्रीवीरनाथज्येष्ठस्य, ज्येष्ठा दत्ता यथारुचि ॥[1]

શ્રી મહાવીરના મોટા ભાઇનું નામ નન્દિવર્ધન હતું તેનો પણ ઉલ્લેખ તો આચારાંગ અને કલ્પસૂત્ર—એમ બંને મૂળ સૂત્રોમાં આવેલો છે,—યથા

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स जिट्ठे भाया नन्दिवद्धणे कासवगुत्तेणं । (आचारांग पृ० ४२२, કલ્પસૂત્રમાં પણ આજ પાઠ છે)

---

૧ ભાવનગરની જૈન ધર્મ પ્રસારક સભાએ છપાવેલ ત્રિષષ્ઠીશલાકા પુરુષચરિત્રના ૧૦ પર્વનું પૃષ્ઠ ૭૭

[કેટલાક દેશો અને કેટલીક જાતોમાં મામાની કન્યા ઉપર ભાણેજનો પ્રથમ હક્ક હોય એમ પ્રચલિત રીવાજ અને જૂનાં પ્રમાણો ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાઈ આવે છે. મહારાષ્ટ્રમાની મરાઠા જાતિમાં ખાસ કરીને આજે પણ એ રીવાજ ચાલૂ છે. આવશ્યક સૂત્રની ટીકામા હરિભદ્રસૂરિએ એક ઠેકાણે 'દેશકથા' નું વર્ણન કરતાં જૂની ગાથા ઉતારી છે જેમાં જણાવ્યું છે કે દેશ દેશના રીત રીવાજો જુદા જુદા હોઈ કોઈ દેશમાં જ્યારે એક વસ્તુ ગમ્ય કે સ્વીકાર્ય હોય છે ત્યારે બીજા દેશમાં તે જ બાબત અગમ્ય કે અસ્વીકાર્ય હોય છે. ઉદાહરણાર્થ-જેમ અંગ અને લાટ દેશના લોકોને માતુલદુહિતા એટલે મામાની છોકરી ગમ્ય હોય છે ત્યારે ગોડ દેશના લોકો માટે તે ભગિની હોઈ અગમ્ય છે. ગાથા આ પ્રમાણે-

छन्दो गम्मागम्मं जह माउलदुहियमग-लाडाण।
अण्णेसि सा भगिणी गोलाइण अगम्मा उ ॥

જેમ મહાવીરની મામાની પુત્રીએ પોતાની ફૂઈના પુત્ર નન્દિવર્ધન સાથે લગ્ન કર્યાં હતાં તેમ ખુદ મહાવીરની પુત્રી પ્રિયદર્શનાનાં લગ્ન પણ તેની સગી ફૂઈ સુદર્શનાના પુત્ર જમાલિ નામના ક્ષત્રિય કુમાર સાથે થયાં હતાં જેનો ઉલ્લેખ ઘણા પ્રાચીન અર્વાચીન ગ્રંથોમાં થએલો છે. આવશ્યક સૂત્રના ભાષ્ય, ચૂર્ણિ. ટીકા આદિમાં પણ એ બાબતની સ્પષ્ટ નોંધ છે. યથા—

कुण्डपुरनगरं तत्थ जमाली सामिस्स भाइणिज्जो.. तस्स भज्जा सामिस्स दुहिता। (હરિભદ્ર કૃત આવશ્યક સૂત્ર ટીકા. પૃ૪, ૩૧૨)]

૨. ભારતનાં બીજાં કેટલાંક પ્રધાન રાજ્યો સાથે ચેટકનો કૌટુંબિક સંબંધ.

ઉપરના ભાગમાં જણાવ્યા પ્રમાણે ચેટકને એકંદર સાત પુત્રીઓ હતી જેમાં એક તો કુમારિકા જ રહી હતી અને બાકીની છનાં. ભારતના તે વખતના જુદા જુદા નામાંકિત રાજાઓ સાથે લગ્ન થયાં હતાં. એ પુત્રીઓ અને જેમની સાથે તેમનાં લગ્ન થયા તે રાજાઓ વિગેરેનો ટુંક ઉલ્લેખ આવશ્યક ચૂર્ણિમા નીચે પ્રમાણે કરેલો છે.

एतो य वेसालीए नगरीए चेडओ राया हेहयकुलसभूतो। तस्स देवीणं अण्णमण्णाणं सत्त धूताओ। पभावती, पउमावती, मिगावती सिवा, जेट्ठा, सुजेट्ठा, चेलण त्ति। सो चेडओ सावओ परवीवाहकरणस्स पच्चक्खात। धृताओ ण देति कस्स त्ति। ताओ माति मिस्सगाओ रायं सापुच्छित्ता अण्णेसिं अच्छितकाणं सरिसगाण देन्ति। पभावती वीतिभए उद्दायणस्स दिण्णा, पउमावती चपाए दहिवाहणस्स, मिगावती कोसवीए सताणियस्स, सिवा उज्जेणीए पज्जोतस्स जेट्ठा कुंडग्गामे वद्धमाणसामिणो जेट्ठस्स नन्दिवद्धणस्स दिण्णा। सुजेट्ठा चेल्लणा य देवकारिओ अच्छति।[1]

અર્થાત્—'વૈશાલી નગરીમાં હેહયવંશમા જન્મેલો ચેડગ (ચેટક) નામે રાજા તેને

[1] થોડા અક્ષરોના ફેરફાર સાથે આનો આ જ ઉલ્લેખ હરિભદ્રવાળી આવશ્યક ટીકામા પણ આવેલો છે. જુઓ આગમોદય સમિતિદ્વારા પ્રકાશિત એ ટીકા, પૃ૪ ૬૭૬-૭

જુદી જુદી રાણીઓથી સાત પુત્રીઓ થઈ–૧ પ્રભાવતી, ૨ પદ્માવતી ૩ મૃગાવતી, ૪ શિવા, ૫ જ્યેષ્ઠા, ૬ સુજ્યેષ્ઠા, અને ૭ ચેલ્લણા તે ચેટગ શ્રાવક હોવાથી તેણે કોઇના પણ લગ્ન ન કરવાની પ્રતિજ્ઞા લીધેલી હતી, તેથી તે પોતાની પુત્રીઓના લગ્ન નથી કરતો, આથી તે પુત્રીઓની માતાઓએ રાજાની અનુમતિ મેળવી પોતાને ઇચ્છિત અને પુત્રીઓને સદૃશ એવા રાજાઓને તે કન્યાઓ આપી જેમ ૧ પ્રભાવતી વીતિભયના ઉદાયનને, ૨ પદ્માવતી ચંપાના દધિવાહનને, ૩ મૃગાવતી કૌશાંબીના શતાનીકને, ૪ શિવા ઉજ્જયિનીના પ્રદ્યોતને, અને ૫ જ્યેષ્ઠા કુડગામમાં વર્દ્ધમાન સ્વામિના મોટા ભાઈ નંદિવર્દ્ધનને પરણાવી હતી સુજ્યેષ્ઠા અને ચેલ્લણા [ત્યાં સુધી] કુમારિકા જ હતી ' આની આ જ હકીકત આચાર્ય હેમચંદ્રે પણ મહાવીર ચરિત્રમાં, પોતાના શબ્દોમાં આ પ્રમાણે નોંધી છે–

इतश्च वसुधावधूना मौलिमाणिक्यसन्निभा ।
वैशालीति श्रीविशाला नगर्यस्त्यगरीयसी ॥
आखण्डल इवाखण्डशासन पृथिवीपति ।
चेटीकृतारिभूपालस्तत्र चेटक इत्यभूत् ॥
पृथग्राज्ञीभवास्तस्य बभूवु सप्त कन्यका ।
सप्तानामपि तद्राज्याङ्गाना सप्तेव देवता ॥
प्रभावती पद्मावती मृगावती शिवापि च ।
ज्येष्ठा तथव सुज्येष्ठा चिल्लणा चेति ता क्रमात् ॥
चेटकस्तु श्रावकोऽयविवाहनियम वहन् ।
ददौ कन्या न कस्मैचिदुदासीन इव स्थित ॥
तन्मातर उदासीनमपि ह्यापृच्छ्य चेटकम् ।
वराणामनुरूपाणा प्रददु पञ्च कन्यका ॥
प्रभावती वीतभयेश्वरोदायनभूपते ।
पद्मावती तु चपशद्दधिवाहनभूभुज ॥
कौशाम्बीशशतानीकनृपस्य तु मृगावती ।
शिवा तूज्जयिनीशस्य प्रद्योतपृथिवीपते ॥
कुण्डग्रामाधिनाथस्य नन्दिवर्धनभूभुज ।
श्रीवीरनाथज्येष्ठस्य ज्येष्ठा दत्ता यथारुचि ॥
सुज्येष्ठा चिल्लणा चापि कुमार्यावेव तस्थतु ॥
रूपश्रियोपमाभूते ते द्वे एव परस्परम् ॥[१]

આ છેલ્લી બન્ને પુત્રીઓ જે કુમારિકા રહેલી છે તેમાંથી ચેલ્લણા મગધના રાજા શ્રેણિક સાથે કેમ પરણે છે અને સુજ્યેષ્ઠા કુમારિકાવસ્થામાં જ જૈન ભિક્ષુણી કેમ થઈ જાય છે તેની હકીકત આગળ ઉપર જોઈશું એ પહેલાં પાંચે પરણીત પુત્રીઓના વિષયમાં જરા વધારે વિસ્તારથી તપાસ કરીએ આ પાંચમાંથીયે વયથી કનિષ્ઠ પણ નામથી જ્યે

---

૧ મહાવીરચરિત્ર, ૫૮–૭૧

થાના વિષયમા તો ઉપર જે નોધ લીધી છે તે કરતાં વધારે કાઇ હકીકત જૈનગ્રંથકારો આપતા નથી. તેથી હવે ચાર જ પુત્રીઓની હકીકત આપણે જાણવાની રહી.

પ્રભાવતી.

ઉપર આપેલા ઉતારા પ્રમાણે ચેટકની પ્રથમ પુત્રીનું નામ પ્રભાવતી હતું અને તે વીતિભયના ઉદાયન વેરે પરણી હતી આ ઉદાયનનો ઉલ્લેખ ઘણા જૈન ગ્રંથોમાં થએલો છે. સૌથી જૂનો ઉલ્લેખ ખાસ ભગવતી નામના સુપ્રસિદ્ધ સૂત્રમાથી મળી આવે છે. એ સૂત્રના ૧૩ મા શતકના, ૬ ઠા ઉદ્દેશકમા, એના દેશસ્થાનાદિની નોંધ આ પ્રમાણે લેવાએલી છે

तेण कालेण तेण समयेण सिंधुसोवीरेसु जणवएसु वीतीभए नाम नगरे होत्था। तस्स ण वीतीभयस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं मियवणं नामं उज्जाणे होत्था। तत्थ ण वीतीभए नगरे उदायणे नाम राया होत्था.. तस्स.. रन्नो पभावती नाम देवी होत्था...तस्स णं उदायणस्स रन्नो पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए अभीतिनाम कुमारे होत्था।. तस्स ण उदायणस्स रन्नो नियए भायणेज्जे केसी नामं कुमारे होत्था।...से ण उदायणे राया सिंधुसोवीरप्पामोक्खाणं सोलसण्ह जणवयाण वीतीभयप्पामोक्खाण तिण्ह तेसट्ठीणं नगरागरसयाण महासेणप्पामोक्खाण दसण्हं राइण बद्धमउडाण विदिन्नछत्तचामरवालवीयणाणं अन्नेसिं च बहूणं राईसरतलवर जाव सत्थवाहप्पभिईणं आहेवच्चं जाव कारेमाणे पालेमाणे समणोवासए अभिगय जीवाजीवे जाव विहरइ।[1]

તાત્પર્યાર્થ—તે કાલ અને તે સમયમાં, સિંધુસોવાર નામના દેશમાં વીતિભય નામે એક શહેર હતું. તે શહેરની ઉત્તર-પૂર્વ બાજૂએ મૃગવન નામે નગરોદ્યાન હતું. તે વીતિભય શહેરમા ઉદાયન નામે રાજા હતો, તે રાજાની પ્રભાવતી નામે પટરાણી હતી. તેને અભીતિ નામે પુત્ર હતો. તે ઉદાયન રાજાને કેસી નામે એક કુમાર ભાણેજ હતો. એ ઉદાયન રાજા સિંધુસોવીર આદિ સોળ જનપદ, વીતિભય આદિ ત્રણસો ત્રેંસઠ નગર અને આકર (ખાણ) તથા મહાસેન પ્રમુખ દશ મોટા મુકુટબદ્ધ રાજાઓનો, તેમ જ બીજા અનેક નગરરક્ષક, દણ્ડનાયક, શેઠ, સાર્થવાહ આદિ જનસમૂહનો સ્વામી હતો. એ શ્રમણોપાસક અર્થાત્ જૈનશ્રમણોનો ઉપાસક હતો અને જૈનશાસ્ત્ર પ્રતિપાદિત જીવ અજીવ આદિ તત્ત્વ-પદાર્થનો જાણકાર હતો ઇત્યાદિ

આ સૂત્રપાઠ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ચેટકની મોટી પુત્રી પ્રભાવતીનાં લગ્ન વીતિભયના ઉદાયન સાથે થએલાનો જે ઉલ્લેખ આવશ્યક ચૂર્ણિમા કરેલો છે તે પરંપરાને બરાબર અનુસરતો છે આ સૂત્ર પાઠમાં ઉદાયનને જે મહાસેન પ્રમુખ દશ મુકુટબદ્ધ રાજાઓનો સ્વામી જણાવ્યો છે તે હકીકત ખાસ વિચારવા જેવી છે મહાસેન સિવાયના બીજા કયા નવ રાજા એના આજ્ઞાંકિત હતા તેની નોંધ તો કોઇ પણ જૈન ગ્રંથમા મારા જેવામા આવી નથી. પણ મહાસેન શી રીતે એનો આજ્ઞાકિત થયો તેની કથા ઘણા

૧ આગમોદયસમિતિદ્વારા પ્રકાશિત ભગવતી સૂત્ર, પૃષ્ઠ ૬૧૮.

ગ્રંથોમા આપેલી છે આ મહાસેન, તે ઇતિહાસપ્રસિદ્ધ અવન્તીનો રાજા તે જ મહાસેન છે જેનુ વધારે પ્રખ્યાતિ પામેલુ નામ પ્રદ્યોત અથવા ચડપ્રદ્યોત છે અવતીના એ મહાસેન ઉપર ઉદાયને જે નિમિત્તથી ચઢાઈ કરી એને પરાજિત્ત કર્યો તેનુ વર્ણન, આવશ્યક ચૂર્ણિ અને ટીકા બનેમા દશપુરનગરની ઉત્પત્તિ બતાવતા કરેલુ હોઈ તેનો સારાશ આ પ્રમાણે છે —

એક વખતે કેટલાક મુસાફરો સમુદ્રની યાત્રા કરતા હતા સમુદ્રમા ખૂબ તોફાન થવાથી તેમનુ વહાણુ ખરાબે ચઢયું અને કોઈ પણ રીતે તે આગળ વધતું ન હતું તેથી લોકો બહુ ગભરાયા તેમની આ દશા એક દેવના જોવામા આવી અને તેથી પોતાની શક્તિ વડે તે વહાણને ખરાબામાથી બહાર કાઢી રસ્તે પાડ્યું અને વળી તે લોકોને મહાવીર તીર્થંકરની ચદનકાષ્ઠની બનાવેલી એક મૂર્તિ-જે તે દેવે જાતે જ બનાવી હતી— લાકડાની પેટીમા બધ કરીને આપી અને કહ્યુ કે આમા દેવાધિદેવની મૂર્તિ મુકેલી છે એના પ્રભાવથી તમે સહિસલામત રીતે સમુદ્રપાર જઇ શકશો થોડા જ દિવસોમા એ વહાણુ સિંધુસૌવીરના કાઠે આવી લાગ્યુ પછી તે લોકોએ દેવે આપેલી તે મૂર્તિને વીતભયમા ઉતારી દીધી તેને ત્યાના રાજા ઉદાયનની રાણી પ્રભાવતીએ પોતાના મહેલમા એક ચૈત્યગૃહ બનાવી તેમા સ્થાપી અને હમેશા તેની પૂજા કરવા લાગી રાજા જો કે પહેલા તો તાપસધર્મિઓનો ભક્ત હતો પણ પાછળથી ધીમે ધીમે તે એ મૂર્તિ ઉપર શ્રદ્ધાવાળો થવા લાગ્યો એક દિવસે રાણી પ્રભાવતી નાચ કરતી હતી અને રાજા વીણા વગાડતો હતો તે વખતે રાજાની દૃષ્ટિમા રાણીનુ માથુ નહી દેખાવાથી તે અધીરો થયો અને તેથી તેના હાથમાથી વીણા વગાડવાનો ગજ સરી પડ્યો રાણી આ જોઇ ગુસ્સે થઈ અને બોલી કે "સ્વામિન્! શુ મ્હે ખરાબ નાચ કર્યો છે, જેથી તમે વીણા વગાડવી બંધ કરી દીધી?" વધુ આગ્રહ કરતા રાજાએ ખરી હકીકત કીધી અને તેથી રાણી સમજી ગઈ કે હવે મારૂં આયુષ્ય થોડુ જ બાકી રહ્યુ છે તેથી જીવનનુ શ્રેય સાધવા સસારનો ત્યાગ કરી ભિક્ષુણી થવુ જોઈએ ભિક્ષુણી થવા માટે રાજાની અનુમતિ માગતા, ઘણા વિરોધ પછી, રાજાએ એવી સરતે તેને અનુમતિ આપી કે "જો તુ મરીને સ્વર્ગમા દેવતા થાય તો પછી અહી આવીને મને તારે સદ્બોધ આપવો" રાણીએ તે સરત કબૂલ કરી અને ભિક્ષુણી થઈ થોડા જ દિવસમા કાલ કરી તે સ્વર્ગમા દેવતા રૂપે ઉત્પન્ન થઇ પૂર્વે આપેલા વચન પ્રમાણે તેણે સ્વર્ગમાથી આવીને રાજાને સદ્બોધ કર્યો અને તેથી રાજા પણ દિવસે દિવસે વધારે ધાર્મિક થયો

રાણીના મરી ગયા પછી તે મહાવીરની મૂર્તિની, રાણીની એક વિશ્વાસુ પણ શરીરે કૂબડી એવી એક દાસી હતી તે હમેશા ભક્તિપૂર્વક પૂજા કર્યા કરતી હતી એક વખતે ગાધાર દેશનો એક શ્રાવક એ પ્રભાવશાળી મૂર્તિના દર્શન કરવા માટે ત્યા આવ્યો દાસીએ તે શ્રાવકની ખૂબ પરિચર્યા કરી તેથી તે ખુશી થઈને જતી વખતે પોતાની પાસે એક પ્રકારની દૈવી પ્રભાવવાળી ગોળિઓ હતી તે તેને આપતો ગયો એ ગોળીઓના ભક્ષણથી

આ રીતે, જૈનપરંપરામાં મહાસેન પ્રદ્યોત વીતિભયના ઉદાયનનો આજ્ઞાંકિત થએલો માનવામાં આવે છે.

ઉદાયનનું પાછલું જીવન.

ઉદાયનના રાજકીય જીવન સંબંધમા આટલી હકીકત પાછળના જૈન ગ્રંથોમાં મળે છે, મૂળ ભગવતી સૂત્ર કે જેનો ઉલ્લેખ ઉપર કરવામા આવ્યો છે તેમાં ફક્ત એટલી જ બાબત વર્ણવી છે, કે જ્યારે શ્રી મહાવીર વીતિભયમા આવ્યા ત્યારે ઉદાયન તેમનો ધર્મોપદેશ સાભળી તેમની પાસે દીક્ષા લઈ તેમનો શિષ્ય બન્યો. આ દીક્ષા લેતી વખતે તેણે પોતાનું રાજ્ય કોને સોપવું એ માટે એક વિલક્ષણ વિચાર કર્યો રાજ્યનો ખરો હક્કદાર એનો પુત્ર અભીતિકુમાર થતો હતો. પણ, રાજ્યાધિકાર ચલાવનાર મનુષ્યો ઘણા ભાગે દુર્વ્યસની અને દુરાચારી થઇ જાય છે અને એવા વ્યસની અને આચારહીન મનુષ્યો મરીને દુર્ગતિમાં જાય છે, તેથી પોતાનો પુત્ર રખેને રાજ્યસત્તાના યોગે દુર્વ્યસની બની દુર્ગતિમાં જઇ પડે એવી બ્હીકથી પુત્રને રાજ્ય ઉપર ન બેસાડતા પોતાનો ભાણેજ જે કેશીકુમાર કરીને હતો તેને બેસાડયો. પિતાના આ કૃત્યથી અભીતિકુમાર બહુ નારાજ થયો અને તેથી પોતાની બધી માલમત્તા લઇ તે ત્યાથી ચાલ્યો ગયો અને ચંપાના રાજા કુણિક પાસે (કે જે તેનો માસિયાઈ ભાઈ થતો હતો) જઇ રહ્યો. આ પ્રમાણે આખી જીંદગી તે પિતા ઉપર વૈરભાવ રાખતો થકો ત્યાનો ત્યાં જ મરી ગયો. નમુના ખાતર સૂત્રકારનાં કેટલાક વચનો અહિં આપુ છુ—

तए णं से उदायणे राया समणस्य भगवओ महावीरस्स आतिय धम्म सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए। उट्ठेइत्ता समण भगव महावीर तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी 'एवमेय भते ! तहमेय ! जहेयं तुब्भे वदह ' त्ति . ...अह देवाणुपियाण अंतिए मुडे भवित्ता जाव पव्वयामि।'...तए ण तस्स उदायणस्स रन्नो अयमेया· रूवे अब्भत्थिए.. समुप्पज्जित्था–' एवं खलु अभीयीकुमारे ममं एगे पुत्ते इट्ठे कंते जाव किमंग पुण पासणयाए, तं जइ णं अह अभीयीकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुडे भवित्ता जाव पव्वयामि; ता ण अभीयीकुमारे रज्जे य रट्ठे य जाव जणवए माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे

મને જોવા મળી શક્યુ નથી. આ લેખ ઉપરાત, ઉષવદાતના નાસિકના એક પ્રાચીન લેખમા બીજી લીટી· મા દશપુર એ સસ્કૃત નામ વાપરવામા આવેલુ છે. (જુઓ આર્કી. સર્વે. વેસ્ટ ઇં પુ. ૪ પા ૯૯, પ્લે, ૫૨ ન. ૫), તથા મન્દસોરના જ એક બીજા લેખમા એ નામ વપરાયેલુ જોવામા આવે છે. મિતિ (વિક્રમ) સંવત્ ૧૩૨૧ (ઇ. સ. ૧૨૬૪–૬૫) ગુરુવાર ભાદ્રપદ શુક્લ પચમી છે, તથા એ લેખ કિલ્લાના પૂર્વ તરફના પ્રવેશદ્વારના અદરના દરવાજાની ડાબી બાજુએ ભીંત પર ચણી લીધેલા એક શ્વેત પત્થર પર લખેલો છે વળી, બૃહત્સંહિતા ૧૪, ૧૧–૧૬ (જુઓ કર્નનો અહેવાલ જર્ન રૉ એ. સો. નૉ. સ. પુ ૫. પા, ૮૪) મા પણ અવતિ સાથે આ સ્થળનો પણ એ જ નામથી ઉલ્લેખ કરેલો છે.

गढिए अज्झोववन्ने अणाढाय अणवयग्ग दीहमद्ध चाउरंतसंसार कंतार अणुपरियट्टिस्स इ। त नो खलु मे सेय अभीयीकुमार रज्जे ठावेत्ता पव्वइत्तए। से य खलु मे णियग भाइणेज्ज केसि कुमार रज्जे ठावेत्ता पव्वइत्तए। तए ण से केसी कुमारे राया जाए । तए ण से उद्दायणे राया सयमेव पचमुट्ठिय लोय करेइ जाव सव्वदुक्खप्पहीणे।

तए ण तस्स अभीयिस्स कुमारस्स अण्णदा कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि कुडुंब जागरिय जागरमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-' एव खलु अह उद्दायणस्स पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए, तए ण से उद्दायणे राया मम अवहाय णियग भाइणिज्ज केसिकुमार रज्जे ठावेत्ता समणस्स महावीरस्स अंतिए पव्वइए।' इमेण एयारूवेण महया अप्पत्तिएण मणो माणसिएण दुक्खेण अभिभूए समाणे अतेपुर परियालसपरिवुडे सभडमत्तोवगरणमायाए वीतीभयाओ नयराओ पडिनिग्गच्छति। पडिनि० २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगाम दूइज्जमाणे जणेव चपानयरी जणेव कूणिए राया तणेव उवागच्छइ कूणिय राय उवसपज्जित्ताण विहरइ । तत्थ वि ण से विउलभोगसमिइसमन्नागए यावि होत्था । तए ण से अभीयीकुमारे समणोवासए यावि होत्था । अभिगयजीवाजीवे उद्दायणमि रायरिसिमि समणुबद्धवेरे कालमासे काल किच्चा । (भगवती पृष्ठ ६१८ २०)

ઉદાયનના મરણની હકીકત

આવશ્યકચૂર્ણિ, ટીકા આદિ ગ્રંથોમા ઉદાયનના મૃત્યુની નોંધ આ પ્રમાણે લીધેલી મળી આવે છે-ઉદાયન રાજએ દીક્ષા લીધા પછી લૂખાસૂકા મળેલા ભિક્ષાહારને લીધે તેના શરીરમા વ્યાધિ ઉત્પન્ન થયો. વૈદ્યોએ તેને દહીં ખાવાનું જણાવ્યુ તેના માટે તે વ્રજમા રહેતો એક વખતે વીતભયમા ગયો ત્યા તેનો ભાણેજ કેશી રાજ્ય કરતો હતો કે જેને તેણે જ રાજ્ય ઉપર બેસાડયો હતો. કેશીકુમારને તેના દુષ્ટ મંત્રિઓએ ભર માવ્યો કે 'આ ઉદાયન ભિક્ષુજીવનના દુઃખથી કંટાળ્યો છે અને રાજ્ય મેળવવા ચાહે છે' તેણે કહ્યુ-'આપી દઈશ' મંત્રિઓએ કહ્યુ કે 'એ રાજધર્મ નથી મળતું રાજ્ય તે કોઈ આપી દેતુ હશે?' લાંબાકાળે મંત્રિઓએ તેને મમતાથી પકડી રાજ્ય ન આપવા માટે પાકો કર્યો ત્યારે તેણે પૂછ્યુ કે-'તો પછી શુ કરવુ જોઈએ?' મંત્રીઓ કહે- વિષ અપાવવુ જોઈએ' પછી તેની વ્યવસ્થા કરવામા આવી. એક ગોવાળણના હાથે દહીંમા ઝેર નખાવી તે મુનિને અપાવ્યું અને એ રીતે તેના જીવનનો અંત આણવામાં આવ્યો. આ વૃત્તાન્ત જાણી નગરની દેવતાને ભારે ક્રોધ થયો અને તેથી તેણે આખા નગર ઉપર ધૂળની વૃષ્ટિ કરવી શરૂ કરી. ઉદાયન મુનિ ત્યા એક કુંભારના ઘરમા ઉતર્યા હતા અને તે કુંભાર એમની પરિચર્યા કરતો હતો તેથી તેને અનપરાધ જાણી દેવતાએ ત્યાથી ઉપાડી સિનવલ્લી નામના પ્રદેશમા મૂક્યો કે જ્યા તેના નામથી બીજુ નગર વસ્યુ વીતભય પત્તન દેવ

ઉદાયનના મરણની આ કથા-પરંપરા ઘણી પ્રાચીન હોય તેમ જણાય છે, કારણ કે આ હકીકતનું મૂળ સૂચન ખાસ આવશ્યક સૂત્ર-નિર્યુક્તિમાં કરવામાં આવ્યું છે એ સૂત્ર-નિર્યુક્તિ ભદ્રબાહુની રચેલી કહેવાય છે અને પરંપરા તેનો સમય મહાવીર નિર્વાણ પછીની બીજી શતાબ્દી જણાવે છે ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ જોતા નિર્યુક્તિના કર્તા ભદ્રબાહુ એટલા પ્રાચીન હોય તેમ લાગતું નથી તેમનો સમય અપેક્ષાકૃત અર્વાચીન છે, પણ ટીકાકારો કરતા તે સમય ઘણો જ આગળ જાય તેમ છે તેથી ટીકાકારોએ નોંધેલી ઉદાયનની એ હકીકત ઘણા જૂના સમયથી ચાલતી આવી છે એટલું તો ચોક્કસ કહી શકાય તેમ છે,

---

કુળમા ચદ્રસમાન, પ્રચડ પરાક્રમી અને અખડ શાસનવાળો કુમારપાળ નામે ધર્મવીર દાનવીર અને યુદ્ધવીર રાજા થશે તે મહાત્મા પોતાની પ્રજાને પિતાની જેમ પાલન કરીને મોટી સમૃદ્ધિવાન્ કરશ સરળ છતા અતિ ચતુર શાત છતા આજ્ઞામા ઇંદ્ર જેવો અને ક્ષમાવાન્ છતા અધૃષ્ય એવો તે ચિરકાળ આ પૃથ્વી પર રાજ્ય કરશે ઉપાધ્યાય જેમ પોતાના શિષ્યોને વિદ્યાપૂર્ણ કરે તેમ તે પોતાની પ્રજાને પોતાના જેવી ધર્મનિષ્ઠ કરશે શરણેચ્છુઓને શરણ કરવા લાયક અને પરનારીસહોદર તે રાજા પ્રાણથી અને ધનથી પણ ધર્મને બહુ માનશે પરાક્રમ ધર્મ દયા આજ્ઞા અને બીજા પુરુષગુણોથી તે અદ્વિતીય થશે તે રાજા ઉત્તર દિશામા તુરુષ્ક (તુરુસ્થાન) સુધી પૂર્વમા ગગાનદી સુધી દક્ષિણમા વિંધ્યગિરિ સુધી અને પશ્ચિમમા સમુદ્ર સુધી પૃથ્વીને સાધશે એક વખતે વજ્રશાખા અને ચાદ્ર કુળમા થયેલા આચાર્ય હેમચદ્ર તે રાજાના જોવામા આવશે તે ભદ્રિક રાજા મેઘના દર્શનથી મયૂરની જેમ તે આચાર્યના દર્શનથી હર્ષિત થઇ તેમને વદના કરવાની ત્વરા કરશે સૂરિ જિનચૈત્યમા ધર્મદેશના દેતા હતા ત્યા તેમને વદના કરવાને માટે તે રાજા પોતાના શ્રાવક મત્રીઓની સાથે આવશે ત્યા પ્રથમ દેવને નમસ્કાર કરીને પછી તત્ત્વને નહી જાણતા છતા પણ તે રાજા શુદ્ધ ભાવથી આચાર્યને વાદશે પછી તેમના મુખથી શુદ્ધ ધર્મદેશના પ્રીતિપૂર્વક સાભળીને તે રાજા સમ્યક્ત્વ પૂર્વક અણુવ્રત (શ્રાવકના વ્રત) સ્વીકારશે પછી સારી રીતે બોધને પ્રાપ્ત કરીને તે રાજા શ્રાવકના આચારનો પારગામી થશે અને રાજસભામા બેઠો સતો પણ તે ધર્મગોષ્ઠિથી પોતાના આત્માને રમાડશે અર્થાત્ ધર્મચર્ચા કરશે પ્રાય નિરતર બ્રહ્મચર્યને પાળનાર તે રાજા અન્ન, શાક અને ફળાદિ સબધી અનેક નિયમો વિશેષ પ્રકારે ગ્રહણ કરશે સદ્બુદ્ધિવાન્ તે રાજા અન્ય સાધારણ સ્ત્રીઓને ત્યજી દેશે, એટલું જ નહિ પોતાની ધર્મપત્નીઓને પણ બ્રહ્મચર્ય પાળવાનો પ્રતિબોધ કરશે સૂરિના ઉપદેશથી જીવ અજીવ વગેરે તત્ત્વોને જાણનાર તે રાજા આચાર્યની જેમ બીજાઓને પણ બોધ (સમ્યક્ત્વ) પ્રાપ્ત કરાવશે અર્હંત ધર્મના દ્વેષી એવા પાડુરોગી બ્રાહ્મણો પણ તેની આજ્ઞાથી ગર્ભશ્રાવક જેવા થઇ જશે પરમ શ્રાવકપણાને પ્રાપ્ત કરનાર અને ધર્મ જાણનાર તે રાજા દેવપૂજા અને ગુરુવદન કર્યા વગર ભોજન કરશે નહિ તે રાજા અપુત્ર મૃત્યુ પામેલાઓનું દ્રવ્ય લેશે નહી વિવેકનું ફળ એ જ છે અને વિવેકીઓ સદા તૃપ્ત જ હોય છે પાડુ જેવા રાજાઓએ પણ જે મૃગયા (શિકાર) છોડેલ નહીં તેને એ રાજા છોડી દેશે અને તેની આજ્ઞાથી બીજા સર્વ પણ છોડી દેશે હિંસાનો નિષેધ કરનાર એ રાજા રાજ્ય કરતે સતે મૃગયાની વાત તો દૂર રહી પણ માકણ કે જુ જેવા ક્ષુદ્ર પ્રાણીઓને અત્યજ પણ મારી શકશે નહીં પાપર્દ્ધિ (મૃગયા) નો નિષેધ કરનારા એ મહાન્ રાજાના રાજ્યમા અરણ્યમા રહેતી સર્વ મૃગજાતિઓ ગોષ્ઠની ગાયોની જેમ સદા નિર્વિઘ્ને વાગોળશે શાસનમા પાકશાસન (ઇંદ્ર) જેવો તે રાજા સર્વ જળચર, સ્થળચર અને ખેચર પ્રાણીઓની રક્ષા કરવાને માટે કાયમની અમારી ઘોષણા કરાવશે જેઓ જન્મથી જ

મૂર્તિ વિગેરેની હકીકત સંબંધે ગમે તેમ હોય પણ એકંદરે જૈન કથા અને સૂત્રના આધારે આપણે આટલું તો માની શકિએ કે મહાવીરના સમયમાં સિંધુસૌવીરમાં કોઇ વીતિભય કરીને નગર હતું અને ત્યાં ઉદાયન નામે રાજા રાજ્ય કરતો હતો. તેની એક સ્ત્રી પ્રભાવતી હતી જે વૈશાલીના ચેટકની પુત્રી થતી હતી તેને અભીઈ નામે પુત્ર હતો જેને પિતાએ ગમે તે કારણે પોતાનું રાજ્ય સોંપ્યું ન હતું, અને તેટલા માટે તે ચંપામાં

મામના ખાનાર હતા તેઓ પણ તેની આજ્ઞાથી દુઃસ્વપ્નની જેમ માસની વાર્તા પણ ભૂલી જશે. પૂર્વે દેશની રીતિથી શ્રાવકોએ પણ જેને પૂરેપૂરૂં છોડયું નહોતું તેવા મદ્યને આ નિર્દોષ રાજા સર્વત્ર છોડાવી દેશે. તે રાજા આ પૃથ્વીપર મદ્યને એવું રૂંધી દેશે કે જેથી કુંભકાર પણ મદ્યના પાત્રને ઘડવા છોડી દેશે. મદ્યપાનના વ્યસનથી જેમની સંપત્તિ ક્ષીણ થઇ ગઈ છે એવા પુરૂષોએ મહારાજાની આજ્ઞાથી મદ્યને છોડી દેવા વડે સંપત્તિવાન્ થશે. પૂર્વે નળ વગેરે રાજાઓએ પણ જે દ્યુતક્રીડાને છોડી નથી, તે દ્યુતનું નામ પણ શત્રુના નામની જેમ તે ઉન્મૂલન કરી દેશે તેનું ઉદયવાળું શાસન ચાલતાં આ પૃથ્વીપર પારેવાની પણ ક્રીડા અને કૂકડાના યુદ્ધ પણ થશે નહિ. નિ:સીમ વૈભવવાળો તે રાજા પ્રાયઃ પ્રત્યેક ગ્રામે જિનમંદિર કરાવવાથી બધી પૃથ્વીને જિનમંદિરોથી મંડિત કરશે, અને સમુદ્રપર્યંત પ્રત્યેક માર્ગે તથા પ્રત્યેક નગરે અર્હંત પ્રતિમાની રથયાત્રાનો મહોત્સવ કરાવશે દ્રવ્યના પુષ્કળ દાન વડે જગતને ઋણમુક્ત કરીને તે રાજા આ પૃથ્વી ઉપર પોતાનો સંવત્સર ચલાવશે

આવો મહાન્ પ્રતાપી કુમારપાળ રાજા એક વખતે કથાપ્રસંગમાં ગુરુમુખથી કપિલમુનિએ પ્રતિષ્ઠિત કરેલી અને રજમાં ગુપ્ત થયેલી તે પ્રતિમાની વાત સાંભળશે, જેથી તત્કાળ તે ધૂળિનું સ્થાન ખોદાવી એ વિશ્વપાવની પ્રતિમાને બહાર કાઢી લઇ આવવાનો મનોરથ કરશે તે વખતે મનનો ઉત્સાહ અને બીજા શુભ નિમિત્તો વડે એ રાજા પ્રતિમાને હસ્તગામી થવાનો સંભવ માનશે પછી ગુરુની આજ્ઞા લઇ યોગ્ય પુરૂષોની યોજના કરીને વીતભય નગરના તે સ્થળને ખોદાવવાનો આરંભ કરશે. તે વખતે પરમ અર્હંત એવા તે રાજાના સત્ત્વથી શાસનદેવતા ત્યાં આવીને સાન્નિધ્ય કરશે કુમારપાળ રાજાના ઘણા પુણ્યથી ખોદાવવા માંડેલા સ્થળમાં જ તત્કાળ તે પ્રતિમા પ્રકટ થશે. રાજાએ નીમેલા પુરુષો પ્રાપ્ત થયેલી તે પ્રતિમાને નવીન હોય તેમ યથાવિધિ પૂજા કરીને રથમાં બેસારશે. માર્ગમાં તેની અનેક પ્રકારે પૂજાઓ થશે, તેની પાસે અહોરાત્રિ સંગીત થયા કરશે, તેની સમીપે ગામડાની સ્ત્રીઓ તાળીઓ દઇને રાસડા લેશે, પંચશબ્દ વાજીંત્રો હર્ષપૂર્વક વાગશે, અને તેની બન્ને બાજુ ચામરો વીંજાતા જશે એવી રીતે મોટી ધામધૂમ સાથે એ પ્રતિમાને રક્ષકજનો પાટણના સીમાડામાં લાવશે. તે હકીકત સાંભળીને અંતઃપુર પરિવાર સહિત ચતુરંગ સેનાથી પરવરેલો કુમારપાળ રાજા સર્વસંઘની સાથે તે પ્રતિમાની સામે જશે. ત્યાં જઇ તે પ્રતિમાને પોતાને હાથે રથમાંથી ઉતારી હાથી ઉપર બેસારીને મોટા ઉત્સવ સાથે પોતાના નગરમાં પ્રવેશ કરાવશે અને પોતાના રાજભવનની પાસેના ક્રીડા ભવનમાં રાખીને તેની વિધિપૂર્વક ત્રિકાળ પૂજા કરશે પછી તે પ્રતિમાને અર્થે ઉદાયન રાજાએ જે આજ્ઞા લેખ લખી આપ્યો હતો, તે વાંચીને કુમારપાળ તેને પ્રમાણ કરશે નિષ્કપટી કુમારપાળ રાજા તે પ્રતિમાને સ્થાપન કરવા માટે એક સ્ફટિકમય પ્રાસાદ કરાવશે. જાણે અષ્ટાપદ પર રહેલા પ્રાસાદનો યુવરાજ હોય તેવો તે પ્રાસાદ જોવાથી જગતને વિસ્મય પમાડશે પછી તે પ્રાસાદમાં તે પ્રતિમાનું સ્થાપન કરશે- એ પ્રમાણે સ્થાપિત કરેલી તે પ્રતિમાના પ્રભાવથી કુમારપાળ રાજા પ્રતિદિન પ્રતાપ, સમૃદ્ધિ અને આત્મકલ્યાણમાં વૃદ્ધિ પામ્યા કરશે હે અભયકુમાર! દેવ અને ગુરુની ભક્તિ વડે એ કુમારપાળ રાજા આ ભારતવર્ષમાં

અજાતશત્રુના આશ્રયે જઇને રહ્યો હતો તેમ જ મહાસેન રાજા સાથે ઉદાયનને લડાઇનો પ્રસંગ બન્યો હશે, અને તેમાં ઉદાયનને વિજય મળ્યો હશે.[1]

એક વિલક્ષણ પરંપરાસામ્ય

જૈન ગ્રંથોમાં જેમ વીતભયના ઉદાયન સાથે ચંદનકાષ્ઠની બનાવેલી જૈન મૂર્તિનો આ પ્રમાણે સંબંધ લખેલો મળી આવે છે તેવો જ એક સંબંધ કૌશામ્બીના ઉદયન સાથે બૌદ્ધ ગ્રંથોમાં જોડેલો મળી આવે છે. પ્રસિદ્ધ ચીની પ્રવાસી બૌદ્ધશ્રમણ યવનચંગ (કે હ્વેનત્સંગ) જ્યારે હિન્દુસ્થાનમાં આવ્યો ત્યારે બૌદ્ધ લોકોમાં એ વાત ઘણી જાણીતી હોય તેમ લાગે છે. તેણે પોતાના પ્રવાસવૃત્તાંતમાં, કૌશામ્બીનું વર્ણન લખતાં નોંધ કરી છે કે—"કૌશામ્બી શહેરમાં એક જૂનો મહેલ છે જેની અંદર ૬૦૦ ફીટ ઉંચો મોટો વિહાર છે. એ વિહારમાં ચંદનના લાકડામાંથી કોરી કાઢેલી એવી બુદ્ધની મૂર્તિ છે જેના ઉપર પત્થરનું છત્ર કરેલું છે. આ કૃતિ ઉદાયન રાજાની કરેલી કહેવાય છે. આ મૂર્તિ ઘણી ચમત્કારિક છે અને એની અંદર દૈવી તેજ રહેલું છે જે વખતે વખતે ઝગકી

તારા પિતાની જેવો થશે.' [ભાવનગરની જૈન ધર્મ પ્રસારક સભા મારફત પ્રકટ થએલ મહાવીરચરિત્ર ભાષાંતર પાન ૨૬૮-૨૭૨ (બીજી આવૃત્તિ)]

૧ કદાચિત્ સુવર્ણગુલિકા નિમિત્તે ચંડપ્રદ્યોત સાથે થએલા યુદ્ધની કિંવદન્તીમાં પણ પ્રાચીનતાનો પુરાવો હોય એમ એક બીજા સૂત્રના સૂચન ઉપરથી અનુમાન થાય છે. ભગવતી જેટલા જ પ્રાચીન અંગ નામે પ્રશ્ન વ્યાકરણમાં એક ઠેકાણે જેમના નિમિત્તે મોટા યુદ્ધો થયા હતા એવી કેટલીક સ્ત્રીઓના નામો ગણાવ્યા છે જેમાં સુવણ્ણગુલિયા નું નામ પણ લખેલું છે. સૂત્રપાઠ આ પ્રમાણે છે—

'मेहुणमूलं च सुव्वए तत्थ तत्थ वत्तपुव्वा संगामा जणक्खयकरा-सीयाए, दोवइए कए, रुप्पिणीए पउमावईए, ताराए, कंचणाए, रत्तसुभद्दाए, अहिन्नियाए, सुवन्नगुलियाए, किन्नरीए सुरूवविज्जुमतीए, रोहिणीए य, अन्नेसु य एवमादिएसु बहवो महिलाकएसु सुव्वंति अइक्कंता संगामा। [આગમોદય સમિતિ તરફથી પ્રકાશિત પ્રશ્નવ્યાકરણ સૂત્ર (અભયદેવસૂરિની ટીકા સાથે) પૃ ૮૫]

'મૈથુનસંજ્ઞાના મૂળે પ્રાચીનકાળમાં ત્યાં ત્યાં થએલા સંગ્રામો સાંભળીએ છીએ જેમકે સીતા અને દ્રૌપદીના માટે તથા રુક્મિણી, પદ્માવતી, તારા, કંચના, રક્તસુભદ્રા, અહિલિકા, સુવર્ણગુલિકા, કિંનરી, સુરૂપ-વિદ્યુન્મતી રોહિણી આદિ અને બીજી પણ અનેક સ્ત્રીઓ નિમિત્તે સંગ્રામો થએલા છે.'

મૂળ સૂત્રમાં આપેલા આ ઉદાહરણોની વ્યાખ્યા સમજાવતા ટીકાકારે સંક્ષેપમાં તે બધી કથાઓ લખી છે. જે એ સ્ત્રીઓના વિષયમાં બીજા બીજા ગ્રંથો પુરાણો આદિમાં પ્રસિદ્ધ છે. એમાં સુવર્ણગુલિકાની જે હકીકત આપી છે તે ઉપર આપેલી હકીકતને અક્ષરે અક્ષર મળતી છે અને તેથી સાબીત થાય છે કે સુવર્ણગુલિકા નિમિત્તે ઉજ્જયિનીના ચંડપ્રદ્યોત સાથે થએલા સંગ્રામની પરંપરા ઘણી પ્રાચીન છે. (સૂત્રકારે ગણાવેલા સ્ત્રીઓના નામોમાંથી અહિન્નિકા કિન્નરી અને સુરૂપવિદ્યુન્મતીની હકીકત ટીકાકાર અભયદેવસૂરિની જાણમાં ન આવવાથી તેમણે એમની કશી હકીકત લખી નથી ફક્ત अप्रतीता (અજ્ઞાત) એટલીજ નોંધ કરી છે. એ ઉપરથી ટીકાકારની પ્રામાણિકતાનો પુરાવો નોંધવા જેવો.)

ઉઠે છે આ મૂર્તિને ઉપાડી જવા માટે જુદા જુદા દેશના અનેક રાજાઓએ પોતાની શક્તિ વાપરી છે અને ઘણા માણસોએ ભેગા થઇને એને ખસેડવાનો પ્રયત્ન કર્યો છે પણ તેઓ એને જરા પણ હલાવી શક્યા નથી. તેઓ એ મૂર્તિની પ્રતિકૃતિ બનાવીને તેની પૂજા કરે છે* અને તેમ કરી, મૂળ મૂર્તિની જ તેઓ પૂજા કરે છે એમ શ્રધ્ધા રાખે છે. (જુઓ -Beal's Buddhist Records of the Western Countries, Book I. p 234) આવી જ એક મૂર્તિની બીજી નોંધ, એ મુસાફરે ખોતાન પ્રદેશના પિમા શહેરના વૃત્તાતમાં લીધી છે. તે લખે છે કે-" અહીં (પિમા શહેરમાં) ચંદનના લાકડામાંથી બનાવેલી બુદ્ધની એક ઉભી આકૃતિની મૂર્તિ છે. આ મૂર્તિ લગભગ ૨૦ ફીટ ઉંચી છે. આ મૂર્તિ ઘણી ચમત્કારિક છે અને એમાથી તેજ સ્ફુર્યા કરે છે જેમને કોઈ પણ પ્રકારનો રોગ થાય છે તેઓ આ મૂર્તિની સોનાના વરખથી પૂજા કરે છે અને તેમ કરવાથી તેઓ સાજા થઈ જાય છે-એવી અહીંના લોકોની માન્યતા છે જેઓ અંતઃકરણપૂર્વક આ મૂર્તિની પ્રાર્થના કરે છે તેમનું ઇચ્છેલું સફળ થઈ જાય છે. અહીંના લોકો કહે છે કે, આ મૂર્તિ, એ જૂના જમાનામાં કે જ્યારે બુદ્ધ જીવતા હતા ત્યારે, કોશાબીના ઉદાયન રાજાએ બનાવી હતી; બુદ્ધ જ્યારે નિર્વાણ પામ્યા ત્યારે એ મૂર્તિ પોતાની મેળે ત્યાંથી આકાશમાં ઉડીને આ રાજ્યના ઉત્તરે આવેલા હો-લો-લો-કિ-અ નામના શહેરમાં આવીને રહી. આ નગરના લોકો શ્રીમાન્ અને વૈભવશાલી હતા, તેમ જ મિથ્યામતના અનુરાગી હતા. તેમને કોઇપણ બીજા પ્રકારના ધર્મને માટે માન ન હતું. જે દિવસથી એ મૂર્તિ ત્યા આવી હતી ત્યારથી તેની દૈવી ચમત્કૃતિ પ્રકટ થવા લાગી. પણ લોકોએ તેના તરફ જરાએ આદર દેખાડયો નહીં.

ત્યાર પછી એક અર્હતે ત્યા આવીને તેને નમસ્કાર કરી તેની પૂજા કરી. તે દેશના લોકો એ અર્હતનો આકાર અને વેશ જોઇને ભયભીત થયા અને રાજાને જઇને તરત તેની ખબર આપી. રાજાએ એવું ફર્માન કાઢયુ કે એ આગંતુક મનુષ્યને રેતી અને ધૂળથી ઢાકી દેવો. તેથી લોકોએ તેને તેવી રીતે હેરાન કર્યો અને કોઇએ અન્નપાણી આપ્યા નહિ તેની આ સ્થિતિ જોઇને એક માણસ કે જે હંમેશા એ મૂર્તિની પૂજા કરતો હતો તેને ક્રોધ થયો અને તેથી છાની રીતે આવી તેણે એ અર્હતને ખોરાક આપ્યો જતી વખતે તે અર્હતે એ માણસને બોલાવીને કહ્યું કે આજથી સાત દિવસ પછી અહીં રેતી અને ધૂળની ભયંકર વૃષ્ટિ થશે જેથી આ આખું નગર દટાઇ જશે અને કોઇપણ જીવવા પામશે નહીં, એટલા માટે તારે પોતાનો જીવ બચાવવો હોય તો અહીંથી તરત ચાલ્યા જવુ જોઈએ ગામના લોકોએ મને જે રેતી અને ધૂળથી ઢાકી દઇ હેરાન કર્યો છે તેનું આ ફળ મળનાર છે. આવી રીતે કહીને તે અર્હત્ બીજી ક્ષણે અદશ્ય થઇ ગયો. પછી તે માણસે શહેરમા આવીને પોતાના સગા સબધીઓને આ વાત જણાવી પણ

*આવી જાતની એ મૂર્તિની એક પ્રતિકૃતિ યવનચંગ પોતાની સાથે ચીનમા લઇ ગયો હતો તેની નોધ પણ એ જ પુસ્તકમા, પ્રસ્તાવના, પાન ૨૦ ઉપર કરેલી છે.

આપ્યાં. આ રીતે દિવસે દિવસે એ બને રાજાઓની મિત્રાચારી વધારે દૃઢ થતી ગઈ. એક વખતે રાજા બિંબિસારે રોરુકના એ રાજાને ધર્મમાર્ગનો પરિચય કરાવવા માટે ભગવાન્ બુદ્ધની એક ભવ્ય છબી તૈયાર કરાવી, તેના તરફ ઘણા માન પૂર્વક મોકલી આપી. તે છબી જોઈ રુદ્રાયણ રાજા બહુ આશ્ચર્ય પામ્યો અને છબી લાવનાર મનુષ્યોને, તે છબી કોની છે એ વિગેરે પ્રશ્નો પૂછી ભગવાન બુદ્ધના કલ્યાણકર જીવન અને ધર્મમાર્ગથી પરિચિત થયો. પછી તેની ઈચ્છા પણ એ ધર્મના અનુયાયી થઈ જવાની થઈ ત્યાર પછી રાજા બિંબિસારે એ રાજાને વિશેષ ધર્મબોધ આપવા માટે ભગવાન બુદ્ધને વિજ્ઞપ્તિ કરીને મહાકાત્યાયન નામના એક ભિક્ષુ અને શૈલા નામની એક ભિક્ષુણીને એ દેશમાં મોકલાવ્યાં. ભિક્ષુએ રાજાને અને ભિક્ષુણીએ રાજાના અંતઃપુરમાં રહીને રાણીને ભગવાન બુદ્ધના ધર્મનો બોધ આપવા માંડયો. એ બંનેના ઉપદેશથી રાજા અને રાણીની ધર્મ પ્રતિ ઘણી પ્રીતિ થઈ.

એ રાજા વીણા વગાડવામા બહુ પ્રવીણ હતો અને રાણી નૃત્ય કરવામાં કુશલ હતી. એક દિવસે જ્યારે રાજા વીણા વગાડતો હતો અને રાણી નૃત્ય કરતી હતી, ત્યારે રાજાએ રાણીના મરણકાલ નજીક આવ્યાનાં લક્ષણો જોયા, તેથી તેના હૃદયમાં ધ્રાસકો પડયો અને તેના હાથમાથી વીણા જમીન પર પડી ગઈ આ જોઈ રાણી ચમકી અને રાજાને કહેવા લાગી કે 'દેવ! શું મ્હે ખરાબ નાચ કર્યો?' રાજા કહે 'ના, એમ નથી.' પછી તેણે એ જોએલી બધી વાત કહી અને આજથી સાતમે દિવસે તારૂં મૃત્યું થશે એમ કહ્યું. તે સાભળીને રાણીએ કહ્યું 'દેવ! જ્યારે એમ છે તો પછી, જો તમે મને અનુમતિ આપો તો મારૂં કલ્યાણ કરવા માટે હું પ્રવ્રજ્યા લઈ ભિક્ષુણી થઈ જાઉં. રાજાએ એવી શરતે અનુમતિ આપી કે-જો તું મરીને દેવ થાય તો અહીં આવીને પછી મને તારે દર્શન આપવુ રાણીએ તે વાત કબૂલ કરી અને શૈલા નામા ભિક્ષુણીની પાસે પ્રવ્રજ્યા લીધી. સાતમે દિવસે તે રાણી મરણસંજ્ઞાની ભાવના કરતી છતી મરીને ચાતુર્મહારાજિક દેવલોકમા દેવતાપણે ઉત્પન્ન થઈ. કરેલી પ્રતિજ્ઞા પ્રમાણે તે પછી રાત્રે આવીને રાજાને પ્રત્યક્ષ થઈ ત્યારે રાજાએ શય્યામાં સૂતા સૂતા બને હાથો લાંબા કરી તેને આલિંગન કરવા માટે પાસે બોલાવી. દેવી કહે 'મહારાજ! હું તો અહીંથી મરીને સ્વર્ગમાં દેવકન્યા થઈ છું. જો તમારે મારો સમાગમ જોઈતો હોય તો તમે પણ ભગવાન્ બુદ્ધ પાસે પ્રવ્રજ્યા લો જેથી કાળ કર્યા પછી તમે સ્વર્ગમાં ઉત્પન્ન થઈ શકશો અને મારી સાથે સમાગમ કરી શકશો.' એમ કહી દેવી અંતર્ધાન થઈ. રાજાએ આખી રાત સંકલ્પ વિકલ્પમાં વીતાડી, આખરે પ્રવ્રજ્યા લેવાનો નિશ્ચય કીધો, અને તે પ્રમાણે પોતાના પુત્રને શિખંડીને રાજ્ય ઉપર બેસાડી પોતે ત્યાથી રાજગૃહ નગરમાં જ્યા ભગવાન્ બુદ્ધ રહેતા હતા ત્યાં ગયો. જતી વખતે પુત્રને ધર્મનીતિપૂર્વક રાજ્યનું રક્ષણ અને પ્રજાનું પાલન કરવા માટે બે શબ્દો કહેતો ગયો અને પોતાના જે બે મુખ્ય મંત્રિઓ હતા તેમને બધી વ્યવસ્થા સાંભળવાનું સૂચન કરતો ગયો. તેણે પછી ભગવાન્ બુદ્ધ પાસે પ્રવ્રજ્યા લીધી અને તે તેમનો શિષ્ય બન્યો

આ તરફ તેનો પુત્ર શિખંડી બીજા બે દુષ્ટ મંત્રિઓની સંગતિથી અનીતિના માર્ગે ચઢયો અને પ્રજાને પીડા આપવા લાગ્યો. જૂના જે બે સારા મંત્રી હતા તેમને રાજ્યકારભારથી દૂર કર્યા. આ હકીકતની ખબર જ્યારે કેટલાક વ્યાપારિઓ મારફત પ્રવ્રજિત થએલા એ વૃદ્ધ રાજાની જાણમા આવી ત્યારે તે વ્યાપારિઓ સાથે પ્રજાજન જોગો આશ્વાસનનો સંદેશો મોકલ્યો અને જણાવ્યું કે શિખંડીને એ અન્યાયાચરણમાથી દૂર રાખવા માટે હું જાતે જ ત્યા આવીશ. વ્યાપારિઓ સાથે આવેલો એ સંદેશો એક બીજાની કર્ણપરપરાએ એ દુષ્ટ મત્રીઓની જાણમા આવતા તેઓ મનમા ગભરાયા અને એ વૃદ્ધ રાજા રોરુક નગરમા ન આવી શકે તેનો ઉપાય વિચારવા લાગ્યા. પછી તે બને શિખંડી રાજા પાસે જઇને તેને કહેવા લાગ્યા કે-' દેવ, સભળાય છે કે વૃદ્ધ રાજા અહી આવે છે.' રાજા કહે-' તે તો પ્રવ્રજિત થએલા છે, તેને હવે અહી આવવાનું શું પ્રયોજન હોય?' મંત્રીઓ કહે-' દેવ, જેણે એક દિવસ પણ રાજ્ય કર્યું હોય છે તેનુ મન પછી રાજ્ય વિના ક્યાએ રમી શકતું નથી એટલે ફરી એ રાજ્ય મેળવવા પાછો અહીં આવે છે.' રાજા કહે-' જો રાજા થશે તો હું પાછો કુમાર થઈ જઇશ. એમા શો વિરોધ છે!' મંત્રીઓ કહે-' દેવ, એ અયુક્ત છે. જેણે કુમારો, મંત્રીઓ અને પ્રજાજનોના નમસ્કારો ઝીલ્યા હોય તે કેમ પાછો યુવરાજ પદમા દાખલ થઈ શકે?' ઈત્યાદિ ઘણી રીતે તે રાજાને તેમણે ખોટી રીતે ભરમાવ્યો અને આખરે તેની અનુમતિ મેળવી કેટલાક ઘાતક મનુષ્યોને એ આવતા વૃદ્ધ રાજાની સામે મોકલ્યા જેમણે તેનો શિરછેદ કરી તેના જીવનનો અંત આણ્યો. પછી ક્રમે ક્રમે તે શિખંડી રાજા વધારે દુષ્ટ થતો ગયો. એક દિવસે તે શહેર બહાર સઘળા લવાજમા સાથે ફરવા નિકળ્યો. તે વખતે રસ્તામા એક ઠેકાણે એકાતમા ઉભા રહેલા આગળના તે મહાકાત્યાયન ભિક્ષુને જોયો. તેને જોઇને ક્રોધિત થયો અને પોતાના માણસોને તેના ઉપર મૂઠી ધૂળ નાખવાનો હુકમ કર્યો. લોકોએ તેના ઉપર એટલી બધી ધૂળ નાખી કે જેથી તેનુ આખુ શરીર તેમા દટાઈ ગયું.

આ બાબતની ખબર જ્યારે પેલા બે જૂના મંત્રીઓને થઇ ત્યારે તેઓ ત્યા આવ્યા અને તે ભિક્ષુને ધૂળના ઢગલામાથી બહાર કાઢયો. ભિક્ષુએ કહ્યુ, આ નગરનો વિનાશકાળ આવી રહ્યો છે અને આજથી સાતમે દિવસે ધૂળની વૃષ્ટિના લીધે આ આખુ નગર જમીનદોસ્ત થઈ જશે. તેથી તમારે અહીથી બચી જવુ હોય તો ઘરથી માડી નદી સુધી જમીનમા એક સુરંગ ખોદાવી રાખો અને એક નાવ તૈયાર કરી મુકો. પહેલે દિવસે એક મોટો વંટોળિયો થશે જેના લીધે શહેરની બધી ખરાબ ધૂળ આકાશમા ઉડી જશે. પછી બીજે દિવસે ફુલોની વૃષ્ટિ થશે. ત્રીજે દિવસે વસ્ત્રોની વર્ષા થશે. એમ અનુક્રમે રત્નોની વર્ષા થશે અને પછી છેવટે ધૂળની વર્ષા થઇ બધુ શહેર તેમા દટાઇ જશે. તમે પુણ્ય કાર્ય કરનાર હોવાથી એ આફતમાથી ઉગરી શકશો. એટલે તૈયાર કરી રાખેલી નાવ રત્નોથી ભરીને નદી માર્ગે તમે અન્ય દેશમા ચાલ્યા જજો. છેવટે બધુ તેમ થયુ અને તે મંત્રીઓ જે પ્રદેશમા જઇને રહ્યા ત્યા તેમના નામથી ક્રમથી હિરુક અને ભિરુકચ્છ નામના નગરો વસ્યા

મહાકાત્યાયન ભિક્ષુ પણ ત્યાંથી નીકળી લમ્પાક, સ્યામાકગન્ત્ય, વોક્કાણ વગેરેના મુલકમાં થતો સિંધુ નદી ઉતરી મધ્યદેશમા આવેલી શ્રાવસ્તી નગરીમા જ્યાં આગળ ભગવાન્ બુદ્ધ રહેતા હતા ત્યાં સંઘ ભેગો જઇ મળ્યો.

રુદ્રાયણ રાજાની આ હકીકત, જ્યાં સુધી હું જાણુ છું, દક્ષિણના હીનયાન સંપ્રદાયના પાલી સાહિત્યમા ક્યાંએ આવેલી નથી. ઉત્તરના મહાયાન સંપ્રદાયના સંસ્કૃત અને ટીબેટીયન સાહિત્યમાજ આ હકીકત મળી આવે છે. દિવ્યાવદાન સિવાય, ક્ષેમેન્દ્રના અવદાન કલ્પલતા[1] નામક ગ્રંથમાં પણ રુદ્રાયણાવદાન આવેલું છે. અવદાનશતક હાલમાં મારી પાસે નહિ હોવાથી તેમાં એ વૃત્તાંત છે કે નહીં તે હું કહી શકતો નથી. બેજ. એ બીજા ગ્રંથોમાં હોય કે ન હોય તેની ચર્ચા કાંઈ અહીં પ્રસ્તુત નથી. આપણે એ જોવાનુ છે કે, યવનચંગ અને રુદ્રાણુયવદાનની હકીકતમાં કેટલી બધી સમાનતા મળી આવે છે. યવનચંગ અને હો–લો–લો–કિય નગરના નાશની અને આ અવદાનમા જણાવેલી રો–રુ–ક નગરના નાશની હકીકતમાં જરાએ તફાવત નથી. તેથી હું ધારૂં છું કે આ બંને હકીકતોનું મૂળ એક જ હોવું જોઈએ, એટલું જ નહિ પણ મને તો યવનચંગનું હો–લો–લો–કિય એ અવદાનમાંના રો–રુ–ક નામનું જ ચીની ઉચ્ચારણ હોય એમ સ્પષ્ટ જણાય છે. થોમસ્ વૉટર્સ, એ નામની જોડણી o-lao-lo-ka (Rallaka ?) આ પ્રમાણે કરે છે,[2] અને મિ. બીલ Ho-lo-lo-kia આ પ્રમાણે કરે છે. બીલ આનુ બીજું ઉચ્ચારણ (ફુટનોટમા) Ragha or Raghan, or perhaps Ouragha આ પ્રમાણે આપે છે[3] અને વૉટર્સ સંસ્કૃત ઉચ્ચારણ रल्लक આપે છે. પણ આ બંને ઉચ્ચારણો કરતાં મને અવદાનમાનું રો–રુ–ક એ ઉચ્ચારણ વધારે સંગત અને ભાષાશાસ્ત્રને મળતુ લાગે છે. તેથી આ બંને સ્થાનો એક જ હોવાનું મારૂં અનુમાન મને સપ્રમાણ જણાય છે.

પણ, અહીં એક બીજો ભૌગોલિક પ્રશ્ન ઉપસ્થિત થઈ શકે તેમ છે દીઘનિકાય નામના પ્રાચીન પાલી આગમના મહાગોવિંદ નામના સુત્તંતમાં[4] તથા જાતકટ્ઠકથામાં[5]

---

૧. બિબ્લીઓથિકા ઇન્ડિકામા પ્રકાશિત થએલ अवदानकलपलता ભાગ ૧, પાન ૯૭૦ થી ૧૦૨૭.

૨. જુઓ, થોમસ્ વૉટર્સનુ On Yavan Chwang's "Travels in India," પુસ્તક ૨ જુ, પાન ૨૯૮.

૩. બીલનું, Buddhist Records of the western World, પુસ્તક ૨ જુ, પાન ૩૨૨.

૪. दंतपुरं कलिंगान अस्सकानं च पोतनं।
माहीस्सती अवंतीन सोवीरान च रोरुकं॥
मिथिला च विदेहानं चंपा अंगेसु मापिता।
वाराणसी च कासीनं, एते गोविंद्दमापिता ति॥

પાલી ટેક્સ્ટ સોસાયટીએ છપાવેલ, દીઘનિકાય, ભાગ ૨, પૃ૦ ૨૩૫, મહાવસ્તુ ભાગ ૩, પાન ૨૦૮–૨૦૯, મા પણ આ એ ગાથાઓ સંસ્કૃતમા આપેલી છે.

૫. જાતકટ્ઠકથા ભાગ ૩, પા. ૪૭૦–'अतीते सोवीररट्ठे रोरुवनगरे'।

રોરૂકને સૌવીર દેશનું એ પાટનગર જણાવ્યું છે, અને સૌવીરદેશનું સ્થાન, હિન્દુસ્થાનના નકશામાં, પ્રસિદ્ધ બૌદ્ધ વિદ્વાન્ રીસ ડેવિડસ્ ઘણા ભાગે કચ્છના અખાતના નાકા ઉપર મુકે છે[1] ત્યારે બીજી બાજૂ યવનચંગે વર્ણવેલું Ho-lo-lo-kia અગર o-lao-lo-ka એ ખોતાનના પ્રદેશમાં (મધ્ય એશિયામાં) આવેલું હતું તેથી એ બંને સ્થાનોના ઐકયના અનુમાનમાં આ પ્રમાણ બાધક રૂપે ઉભુ રહે છે એના સમાધાનમાં ઘણા સાધક બાધક પ્રમાણો ઉપસ્થિત થાય છે પ્રથમ તો એ કે દીઘનિકાય આદિમાં જણાવેલો સૌવીર દેશ કયાં આવેલો હતો તેનો હજી કાંઈ ચોક્કસ પત્તો લાગ્યો નથી વૈદિક પુરાણો અને જૈન સાહિત્યમાં પણ સૌવીર દેશનું નામ આવે છે અને ઘણી વખતે સિંધુ સૌવીરના ભેગા સામાસિક નામ વડે પણ તેનો ઉલ્લેખ થએલો મળી આવે છે એ સૌવીર દેશ એ જ બૌદ્ધોનો સૌવીર હોય તો તે સિંધુ નદીની આસપાસ આવેલો હોવો જોઈએ પણ જૈન અને બૌદ્ધ બંનેના સૌવીર એક હોય તેમ જણાતું નથી કારણ કે બૌદ્ધ જેટલા જ જૂના જૈન ગ્રંથોમાં સૌવીરના પાટનગર તરીકે, જેમ આપણે ઉપર જોયું, તથા વળી આગળ જોઈશું તેમ, વીતિભય કે વીતભય નામે પત્તન જણાવ્યું છે, ત્યારે બૌદ્ધો તેના ઠેકાણે રોરુવ અગર રોરુક નામ લખે છે વળી એ નામના પાઠમાં પણ જૂદા જૂદા દેશના બૌદ્ધ હસ્તલેખો જૂદા જૂદા પાઠભેદો આપે છે ઉદાહરણાર્થ જાતકટ્ઠકથામાં रोरुवनगर અને रोरुवमनगर એવા બે પાઠો મળે છે, ત્યારે દીઘનિકાયમાં સિંહલીવાચનામાં रोरुव, અને બર્મી વાચનામાં रोरुण પાઠ છે એટલું જ નહી પણ દેશના નામમાં પણ પાઠફેર છે દીઘનિકાયમાં सोवीर ના બદલે એક પાઠાન્તર सोचिर છે અને જાતકટ્ઠકથામાં તો તેના બદલે સ્પષ્ટરૂપે 'शिविरट्ठे' પાઠાન્તર છે જે ખાસ વિચારણીય છે લેખકોના પ્રમાદ અને અજ્ઞાનથી આવા પાઠભેદો થવા સુલભ છે[2] પણ એ પાઠભેદોથી ઐતિહાસિકોને પરંપરા ગોઠવવી કેટલી દુર્લભ થઈ પડે છે એ કયો પુરાતત્ત્વજ્ઞ નથી જાણતો? ટીબેટિયન સાધનો ઉપરથી વળી રોરુક એ, પાલીસાહિત્યપ્રસિદ્ધ કોલિય ક્ષત્રિયોનું ગમગ્રામ હોય એવી શંકા

---

૧ જુઓ 'Buddhist India' પાન ૨૮ તથા છેવટે આપેલો નકશો

૨ આવી જાતના પાઠભેદો અને પાઠફેરો જૈન ગ્રંથોમાં પણ ઘણા થાય છે અને તેથી કેટલીક વખતે તે બહુ ગુંચવાડો ઉભો કરે છે એક ઉદાહરણ આપુ ઉપરની નોટમાં જેમ દીઘનિકાયની ગાથામાં અમુક દેશોની અમુક રાજધાની જણાવેલી છે એવી જ કેટલીક ગાથાઓ જૈનગ્રંથોમાં પણ મળે છે હાલમાં જે આગમો આગમોદયસમિતિ નામે સંસ્થા તરફથી છપાયા છે તેમાંથી પ્રજ્ઞાપનાસૂત્ર (પાન ૫૫) માં કૌશાંબી જેની રાજધાની છે એ દેશ માટે પણ 'વચ્છ' (વત્સ) એ શબ્દ લખ્યો છે અને વૈરાટ જેની રાજધાની છે એ દેશ માટે પણ વચ્છ એ જ શબ્દ આપ્યો છે એની એ જ ગાથાઓ સૂત્રકૃતાગસૂત્ર ની ટીકામાં (પાન ૧૨૩) આપેલી છે જ્યાં वच्छ कोसंबी અને 'वइराड मच्छ' એવા શબ્દો છે જેનો તાત્પર્ય ક્રમથી 'વત્સદેશમાં કૌશાંબી' અને 'મત્સ્યદેશમાં વૈરાટ' નગર મુખ્ય શહેર છે એવો થાય છે ખરો પાઠ આ પાછળના ગ્રંથનો છે ત્યારે પહેલાનો ખોટો છે લેખક અને શોધકના ભ્રમ અગર અજ્ઞાનથી આવા ઘણા પાઠોમાં ગરબડ થઈ જાય છે અને પછી શોધકોને યથાસ્થિત પાઠો જોઈ તેના ઉપરથી અનેક તર્કવિતર્કો કરવા પડે છે

રૅકહીલને થાય છે.[1] આ ઉપરથી એમ ફલિત થાય છે કે પ્રથમ તો રોરુક અને સોવીરનો સંબંધ અને સ્થાનાદિ નિશ્ચિત નથી અને જો તેમ નિશ્ચિત થાય તો પણ, દિવ્યાવદાનવાળું રોરુક અને દીઘનિકાયાદિવાળું રોરુક-બંને જૂદાં જૂદાં માની લેવામાં પણ કાંઈ વધારે બાધ હું જોતો નથી. એક નામનાં અનેક સ્થાનો હતા અને હોય છે. બીજું દિવ્યાવદાનવાળુ રોરુક એ હિંદુસ્થાનની હદની બ્હાર હતું એ બાબતના તેમા કેટલાક ચોક્કસ પુરાવાઓ પણ મળે છે. રોરુક નગરનો નાશ થયા પછી કાત્યાયન ભિક્ષુ જ્યારે પાછો મધ્ય દેશમાં આવવા નિકળ્યો ત્યારે તે લંપાક, સ્યામાક અને વોક્કાણાદિ દેશોમાં થઇ સિંધુ નદીના કાઠે આવ્યો હતો અને પછી એ નદીને પાર કરી ફરતો ફરતો કેટલાક દિવસે શ્રાવસ્તિએ પહોચ્યો હતો. બીજાં બીજાં પ્રમાણો ઉપરથી આપણને જણાય છે કે લંપાક, સ્યામાક અને વોક્કાણ વિગેરે દેશો હિંદુસ્થાનની બ્હાર હોઈ તે અનાર્ય મુલ્કો ગણાતા હતા. સિંધુનદીની પેલીપાર હોવાની બાબત પણ એ વિચારને વધારે મજબ બનાવે છે. તેમ જ અવદાનના વર્ણન ઉપરથી આપણે એ પણ જોઇએ છીએ કે રોરુકમાં જ્યારે રત્ન વિગેરેની ખૂબ પેદાશ થતી ત્યારે વસ્ત્રાદિ ચીજો ત્યા નહોતી થતી[2] હવે, હિંદુસ્થાનના બધા ભાગો તરફ જ્યારે આપણે નજર કરીએ છીએ ત્યારે એમાં એક ભાગ એવો નથી જણાતો કે જ્યાં આગળ રત્નો વિગેરે તો ખૂબ નિપજતાં હોય અને વસ્ત્રાદિ ચીજો ન થતી હોય એનાથી ઉલટુ મધ્યએશિયાના પ્રાંતોમા આવી સ્થિતિ પ્રાચીનકાળથી ચાલી આવતી હતી એ હકીકત પ્રસિદ્ધ જ છે. આ બધા કારણો અને પ્રમાણોથી આપણે માનવુ જોઇએ કે અવદાનવાળું રોરુક નગર હિંદુસ્થાનની બ્હાર હતું, અને, તેમા આપેલી હકીકત સાથે યવનચંગે આપેલી હો-લો-લો-કની હકીકત મળતી આવતી હોવાથી તે બંને સ્થાનો એક જ હતા.

બૌદ્ધ અને જૈનકથામાં સમાનતા.

યવનચંગની અને અવદાનમાંની હકીકતનું સામ્ય તો આપણે ઉપર જોયુ છે પણ એ કરતાયે વધારે સામ્ય બૌદ્ધ અને જૈનકથામાં જણાઇ આવે છે જે એક ખરેખર વિસ્મય ઉપજાવે તેવી બાબત છે. યવનચંગ અને અવદાનમાંની હકીકતમાં તો ફકત રોરુક નગરના નાશવાળી હકીકત સાથે જ સામ્ય રહેલું છે પણ જૈનકથામા વળી અવદાન-માંની બીજી પણ કેટલીક બાબતો સાથે સામ્ય રહેલુ છે, જેનો વિચાર ક્રમથી કરવાની આવશ્યકતા છે.

રોરુક નગરના નાશની અને જૈનકથાવાળા વીતિભય નગરના નાશની હકીકત યવનચંગ, અવદાન અને જૈનકથામાં સમાન છે. ત્રણેમાં ધૂળની વૃષ્ટિ થવાને લીધે નગ-

---

[1] જુઓ-'Rockhill's Life of the Buddha', પાન ૧૪૫

[2] રાજગૃહના વ્યાપારિઓ રોરુકના રાજા રુદ્રાયણને કહે છે કે **देवो रत्नाधिपति, स राजा वस्त्राधिपति, तस्य रत्नानि दुर्लभानि।** રાજગૃહના રાજા બિંબિસાર આગળ વ્યાપારિઓ કહે છે કે-**देवो वस्त्राधिपतिः स राजा रत्नाधिपति, तस्य वस्त्राणि दुर्लभानि। (દિવ્યાવદાન** પાન ૫૪૫)

ગનો નાશ થએલો જણાવ્યો છે જૈનકથામાં ઉદાયન અને અવદાનમાં રુદ્રાયણ રાજા ભિક્ષુ થાય છે તેનું મૃત્યુ તેના ઉત્તરાધિકારીની અનુમતિથી, દુષ્ટ અમાત્યો નિપજાવે છે એકમાં વિષપ્રયોગથી તે કરવામાં આવે છે અને બીજામાં શસ્ત્રાઘાતથી ઉત્તરાધિકારીના સંબંધમાં ફરક છે જૈનો તેને વૃદ્ધ રાજાનો ભાણેજ કહે છે, ત્યારે બૌદ્ધ પુત્ર કહે છે એક ઔરસ પુત્ર દ્વારા પોતાના જ જન્મદાતા પિતાનું આવું જઘન્ય કૃત્ય થાય તેના કરતા ભાણેજ દ્વારા તે કૃત્ય થાય તેમાં મનુષ્ય જાતિના રોજના વ્યવહારને વધારે બંધબેસતું લાગે ખરું (આ માત્ર એક સામાન્ય કથન છે, બાકી આવા દાખલાઓ જગતના ઇતિહાસમાં ઘણાએ મળી આવે છે તેથી એ કથન ઉપર ભાર મુકવાની આવશ્યકતા નથી) આ હકીકતને લગતો જે ઉલ્લેખ બન્ને પક્ષવાળાઓ કરે છે તેનું ભાવસામ્ય ખાસ જોવા જેવું છે રુદ્રાયણ રાજાને આવતો સાંભળીને શિખંડીના દુષ્ટ અમાત્યો તેને કહે છે કે—

देव श्रूयते वृद्धराजा आगच्छतीति। स कथयति प्रव्रजितोऽसौ किमर्थं तस्यागमन प्रयोजनमिति। तौ कथयतः-देव यन्नेदृशमपि राज्यं त्यक्तुं न शक्नोति स चिरं राज्यमभि रम्यत इति मृत पतत्। पुनरप्यसौ राज्यं कारयितुकाम इति।

शिखण्डी कथयति—यद्यसौ राजा भविष्यत्यहं स एव कुमारः को नु विरोध इति। तौ कथयतः -देव अप्रतिरूपमेतत्, कथं नाम समारामारब्धौ जनपदः अस्मिन्नर्क्षिणमस्यमानः राज्यं कारयित्वा पुनरपि कुमारवासेन वस्तव्यम्। स ताभ्यां विप्रलब्धः कथयति-किमत्र युक्तं देव प्रतिपत्तव्यमिति। तौ कथयतः देव प्रघातयितव्योऽसौ, यदि न प्रघातयसि नियतं कुशामात्यविप्रलब्धो देव प्रघातयतीति। न श्रुतं श्रुतम्—

पिता वा यदि वा भ्राता पुत्रो वा स्यादनिष्टकृत् ।
प्रयत्नेनापि तं हन्यात् वनस्था भूमिपधर्मः ॥[1]

એ જ ભાવને આચાર્ય હેમચંદ્ર પોતાના મહાવીરચરિત્રમાં આ પ્રમાણેના શબ્દોમાં પ્રકટ કરે છે—

ज्ञात्वोदायनमायान्तं केशिमाप्तमभणिष्यत।
निर्विण्णस्तपसामेष नियतं तव मातुलः ॥
ऋद्धं राज्यं समभ्येत्य तस्यैवानुगृह्य दधत्।
मर्म राज्यायमायातोऽभिध्यमीमां स्म मर्यथा ॥[2]

---

१ दिव्यावदान, પાન ૫૬૪

૨ આ બે શ્લોકો સાથે ક્ષેમેન્દ્રની અવદાનકલ્પલતામાના આ નીચેના શ્લોકો સરખાવવા જેવા છે—

प्रवाद प्रवृत्ते तस्मिन्नमात्यौ दण्डमुद्गरौ।
अतीतमूलागमनव्रती मूलनिभृतम् ॥ ८३ ॥
सचन भूपत देव प्रवाद माधुनिन्दित ।
वृद्धप्रव्रजितो राजा राज्यार्थी पुनरागत इति ॥ ८४ ॥

(અવદાનકલ્પલતા, ભાગ ૧ પાન ૯૯૫)

केशी वल्यन्यतो राज्य गृह्णात्वद्यापि कोऽन्यदम ।
गोपालस्य हि क. कोपो धन गृह्णाति चेद्गवी ॥
वक्ष्यन्ति मन्त्रिण पुण्यैस्तव राज्यमुपस्थितम् ।
प्रदत्त न हि केनापि राजधर्मोऽपि नेदृश ॥
पितुर्भ्रातुर्मातुलाद्वा सुहृदो वापरादपि ।
प्रसह्याप्याहरेद्राज्यं तदत्तं को हि मुञ्चति ॥[१]

रुद्रायणनी स्त्रीनुं नाम चन्द्रप्रभा छे त्यारे उदायननी स्त्रीनु नाम प्रभावती छे 'प्रभा' शब्द बन्नेमा जे अनुगत छे ते ध्यान खेंचे तेवो छे. पण ते करताये विशेष ध्यान खेंचवा लायक बाबत तो ए छे के-बन्ने कथाओमां राणीना नामनी अने राजानी वीणा वगाडवानी हकीकत तथा राजाने दुश्चिन्ह जोई राणीना आसन्न मरणनी वात जाणी लेवानी. राणीए पछी प्रव्रज्या लई लेवानी अने मरी गया पछी स्वर्गमांथी आवीने, करेली प्रतिज्ञा प्रमाणे, राजाने दर्शन देवानी ए विगेरे हकीकत अक्षरेअक्षर मळती आवे छे. सरखाववा माटे बन्नेनां संस्कृत अवतरणो आपु छु—

रुद्रायणो राजा वीणायां कृतार्थी चन्द्रप्रभा देवी नृत्ये । यावदपरेण समयेन रुद्रायणो राजा वीणां वादयति चन्द्रप्रभा देवी नृत्यति । तेन तस्या नृत्यन्त्या विनाशलक्षणं दृष्टं, स तामितश्चामुतश्च निरीक्ष्य सलक्षयति । सप्ताहस्यात्ययात् काल करिष्यति । तस्य हस्ताद् वीणा स्रस्ता भूमौ निपतिता । चन्द्रप्रभा देवी कथयति—देव मा मया दुर्नृत्यम् । देवि न त्वया दुर्नृत्यं, अपि तु मया तव नृत्यन्त्या विनाशलक्षण दृष्ट सप्तमे दिवसे तव कालक्रिया भवतीति । चन्द्रप्रभा देवी पादयोर्निपत्य कथयति-देव यद्येवं कृतोपस्थानाऽहं देवस्य, यदि देवोऽनुजानीयाद् अहं प्रव्रजेयमिति । स कथयति-चन्द्रप्रभे समयतोऽनुजानामि यदि तावत प्रव्रज्य सर्वक्लेशप्रहाणाद अर्हत्त्वं साक्षात्करोषि एष एव ते दुःखान्त. । अथ सावशेषसयोजना कालं कृत्वा देवेसूपपद्यसे देवभूतया ते ममोपदर्शयितव्यमिति ।[२]

आ ज हकीकत उदायन अने प्रभावतीना संबंधमां थएली जेनुं वर्णन हेमचंद्रना शब्दोमा जोईए.

तामन्यदार्चामर्चित्वा प्रमोदेन प्रभावती । पत्या समेता सगीतमविगीतं प्रचक्रमे ॥
तानोग्रामगतश्रव्य व्यक्तव्यञ्जनधातुकम् । व्यक्तस्वरं व्यक्तराग राजा वीणामवादयत् ॥
तीव्रव्रतपरिक्लिष्टः सभोगाभिमुखादर । लज्जां प्रव्रज्यया सार्द्ध त्यक्त्वा स पुनरेष्यति ॥
व्यक्तांगहारकरण सर्वांगाभिनयोज्ज्वलम् । ननर्त देव्यपि प्रीता लास्य तांडवपूर्वकम् ॥
राजाऽन्यदा प्रभावत्या न ददर्श शिरः क्षणात् । नृत्यन्त्त तत्कबन्ध तु ददर्शाजिकबन्धवत् ॥
अरिष्टदर्शनेन प्राक् क्षुभितस्य महीपते. । तदोपसर्पन्निद्रस्येवागलत् कंबिका करात् ॥
अकांडतांडवच्छेदकुपिता राज्ञ्यथावदत् । तालच्युतास्मि किमह वादनाद्विरतोऽसि यत् ॥
इत्य पुन पुन पृष्ट कंबिकापातकारणम् । तत्तथाख्यत् महीपालो बलीयान् स्त्रीग्रह खलु ॥

१ महावीरचरित्र, पान १५८ २ दिव्यावदान, पान ५५३.

હોય એમ લાગતું નથી. મૂળ એ શબ્દ પ્રાકૃત હોઇ उद्दायण જ હશે જેનું સંસ્કૃત રૂપ બૌદ્ધોએ उद्रायण કલ્પ્યુ અને જૈનોએ તેને વધારે સંસ્કૃત કરી તેની જગ્યાએ उदायन મુક્યું

આ રીતે આપણે બૌધ્ધ અને જૈન કથામા કેટલું બધું સામ્ય છે તે જોયું છે આ વિલક્ષણ સામ્યનુ મૂળ ખોળી કાઢવું કઠિણ છે જૈનોની હકીકત ઉપરથી બૌધ્ધોએ પોતાના કથા ઘડી કહાડી છે કે બૌધ્ધોની હકીકત ને જૈનોએ બધબેસ્તી કરી લીધી છે કે વળી આ બને સંપ્રદાયોએ કોઇ ત્રીજી જ હકીકતના મૂળ ઉપરથી પોતાની કથા-કલ્પના ઉપજાવી કાઢી છે, એનો નિર્ણય થઇ શકે તેમ નથી (પુરાતત્ત્વ, પુસ્તક ૧ લું અંક ૩ માંથી ઉધ્ધૃત.)

ર્ણિની હસ્તલિખિત પ્રતિ છે તેમા એ જ પાઠ છે. એ પ્રતિ અમદાવાદના ડહેલાના ઉપાશ્રયના ભંડારમાની છે અને સંવત્ ૧૫૧૮ ની સાલમા લખાએલી છે એ પ્રતિ લખાવનારની પ્રશસ્તિ પણ છેવટે આપેલી છે જેમા કેટલીક ઐતિહાસિક હકીકત નોંધેલી હોવાથી હુ તેને અહીં પુરી ઉતારી લઉછુ

॥ सो० माणिक । सो० मांडव । मो० बीजा लेखितग्रत (थ) प्रशस्तिलिख्यते । यथा ।

श्रीओसवंशांवरपूर्णचन्द्र मद्वृत्तशोभागुणदीप्यमान ।
श्रीसांगणो मन्त्रिवरो वभूव ढीलीपतेर्ग्यासधराधिपस्य ॥

सो० सांगणसुत सो० पदम (?) श्रीशत्रुजयादितीर्थे सघपतिकार्यकर्ता । सो० पदम (?) सुत सो० धर्ण (?) महानुभावो वभूव तदन्वये सो० धर्णसुत सो० भोजा मो० भोजाभार्या वाई राजलदेड तस म (सु)त मो० श्रीमाणिक सुते सो० मांडण सो० भीमाभिधे । सो० माणिकभार्या श्रा०.... मो० मांडवभार्या श्राव(वि)का सहज । सो० भीमा भार्या श्रा० अहवदे सो० भीमासुत सो०.. . प्रमुख कुटुवपरिवारयुक्तै सरस्वतीकोशे लेषि(खि)त सगृहीतानेकग्रथै सघपतीभूय श्रीशत्रुजयगिरिनारश्रीसोपारकश्रीजीरपलीशपार्श्वनाथश्रीअर्बुदाचलवडवाणीश्रीअभिनदनप्रमुखतीर्थयात्रादिदानपुण्यकारकै सवत १५१८ वर्षे वडातपागच्छनायक भट्टा० श्री० रत्नसिंहसूरि । भट्टा० श्री उदयवल्लभमूरि । भट्टा० श्री० ज्ञानसागरसूरि । भट्टा० श्री चारित्रसुदरसूरि । भट्टा० उदयसागर उपाध्याय उदयमंडनगणीनामुपदेशेन स्वश्रेयसे श्रीआवश्यकचूर्णि समाप्तमिति ॥ छ ॥ छ ॥ ब्राह्मणजीवालिखितं करकृतमपराधं क्षंतिमर्हत सन्तु ॥ (આમા જેટલા ગૃહસ્થોના નામો આવેલા છે તે બધા ઉપર કોણ જાણે કોઇએ શાહી ફેરવી તેમને ભુસી નાખવાનો પ્રયત્ન શા હેતુથી કર્યો હશે?) પ્રશસ્તિ પછી બીજા અક્ષરોમા એક શેરો મારેલો છે જેમા જણાવ્યું છે-यह प्रति सवत् १७४३ वर्षे चैत्रशुदि ७ दिने श्री ६ आचार्यजी ऋषि श्री ६ तेजसिंघजीये वृद्धिभंडारी मुकी छे ॥

॥ अर्हम् ॥

नमोऽस्तु श्रमणाय भगवते महावीराय ।

श्रीमेरुतुङ्गाचार्यविरचिता

विचारश्रेणिः-अपरनाम-स्थविरावलिः

' जं रयणि कालगओ ' इति गाथाकल्पवृक्षे ।
श्रीमेरुतुङ्गसूरीन्द्रैर्व्याख्यालेशो विधीयते ॥

इहागमे

चन्दे चन्दे अभिवड्ढियम्मि चन्देऽभिवड्ढिए चेव ।
पञ्चसरिसेहिं[1] जुगमिण पन्नत्तं वीयरागेहिं ॥

इति गाथोक्तयुक्त्या पञ्चवर्षयुगमुच्यते । तत्रादौ द्वादशमासैः प्रथमश्चन्द्रसंवत्सरः । पुनर्द्वादशमासैर्द्वितीय[1]श्चन्द्रसंवत्सरः । तृतीयवर्षे पौषमासस्य वृद्धिः, अनन्तरं त्रयोदश[3]मासैस्तृतीयोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः ततो द्वादश[4]मासैः पुनश्चतुर्थश्चन्द्रसंवत्सरः । पञ्चमे वर्षे आषाढमासस्य वृद्धिः, अनन्तरं त्रयोदश[5]मासैः पुनः पञ्चमोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः । एवं च व्यवहारनयेन त्रिंशता मासैरभिवर्द्धितमासो लभ्यते । यत —

सावणबहुलपडिवए बालवकरणे अभीइनक्खत्ते ।
सव्वत्थ पढमसमए जुगस्स आइं वियाणाहि ॥

ज्योतिषागमे[8]वचनाज्जैने श्रावणादिः संवत्सरः । तत्र प्रथमे चन्द्रवर्षे [illegible] मासाः, द्वितीयेऽपि १२ एवं २४ । ततोऽभिवर्द्धितवर्षस्य श्रावणस्य पट् । एवं ३० मासैः पौषवृद्धिः । ततोऽभिवर्द्धितस्यैव दो मासा[9] माघादय पञ्च । ततश्चतुर्थे चन्द्रवर्षे १२ पञ्चमेऽपि वर्षे १२ एवं ३० । अत्राषाढवृद्धिः अतोऽसौ पञ्चमोऽभिवर्द्धित इति । उक्तं च —

---

1 पञ्च सरिसेहिं । 2 १२ [illegible] । 3 १ मासैः । 4 १२ [illegible] । 5 १३ मासैः 6 १ मासैः । 7 [illegible] मासे । 8 ज्योतिषागम । 9 नास्ति ।

जइ जुगमज्झे तो दो पोसा, जइ जुगअंते दो आसाढा ।

एवं रूपस्य च [1]युगस्य द्वितीये चन्द्रसंवत्सरे कार्तिकवदि आमावास्या[2] श्रीवीरनिर्वाणम् । उक्तं च—श्रीकल्पे—' चंदे नाम से दुच्च संवच्छरे[3] ।' अतं आह—

जं रयणिं कालगओ अरिहा तित्थंकरो महावीरो ।
तं रयणिमवंतिवई अहिसित्तो पालगो राया ॥

यस्या रजन्या श्रीअर्हन् तीर्थंकरो महावीर कालात मुक्तिं प्राप्त, तस्या रजन्यामुज्जयिन्या[4] चण्डप्रद्योते मृते तस्यैव पुत्र पालको राजा अवन्तिपतिस्तस्य पट्टेऽभिषिक्त ।

(' वीरनिव्वाणरयणीओ चंडपज्जोयरायपट्टम्मि ।
उज्जेणीए जाओ पालयनामा महाराया ॥ ')[5]
' सट्ठी पालगरन्नो पणवन्नसयं तु होइ नन्दाणं ।
अट्ठसयं मुरियाणं तीसच्चिय पूसमित्तस्स ॥
बलमित्त-भाणुमित्ताण सट्ठि वरिसाणि चत्त नहवहणे ।
तह गद्दभिल्लरज्जं तेरस वासे सगस्स चऊ ॥[6]

पालकस्य राज्ञ षष्ठि (६०) वर्षाणि[7] राज्यमभूत् । तावता पाटलीपुत्रेऽपुत्रे कूणिक[8]पुत्रे उदायिनृपे उदायिनृपमारकेण हते पञ्चदिव्यान्तरिताधिवा[9]सितगजेन्द्रेण नापितो गणिकाङ्गजो नन्दो[10] राज्येऽभिषिक्त । उक्त च परिशिष्टपर्वणि—

अनन्तरं वर्द्धमानस्वामिनिर्वाणवासरात् ।
गतायां षष्ठिवत्सर्यामेष नन्दोऽभवन्नृपः ॥

नन्दाश्च नव पाटलीपुरे क्रमादभुवन् । तेषां च राज्यं पञ्चपञ्चाशदधिकं शत (१५५) वर्षाणि बभूव । एवं द्वे शते पञ्चदशाधिके (२१५) । यच्च परिशिष्टपर्वण्युक्तम्—

' एवं च श्रीमहावीरमुक्तेर्वर्षशते गते ।
पञ्चपञ्चाशदधिके चन्द्रगुप्तोऽभवन्नृपः ॥ '

तच्चिन्त्यम् । यत —एव ६० वर्षाणि त्रुट्यन्ति, अन्यग्रन्थैः सह विरोधश्च । तदनु, अष्टोत्तरशतं (१०८) वर्षाणि[11] मौर्याणा राज्यम् । मौर्यास्तु नवम नन्दमुत्थाप्य चाणाक्येन[12] पाटलीपुत्रे स्थापिता- चन्द्रगुप्तादय । एवं ३२३ । ततो मौर्यराज्यादनुपुष्यमित्रराज्ञास्त्रिंशत्[13] (३०) वर्षाणि । ततो बलमित्र—

---

1 नास्ति । 2 अमावास्याया । 3 सवत्सरे । 4 नास्ति । 5इय गाथा प्रत्यन्तरे नास्ति । 6 सगह । 7 ६० वर्षाणि । 8 कौणिक० । 9 ०न्तराधिवासित० । 10 नापितो गणिकाङ्गजो नन्दो राजा राज्ये । 11 १०८ वर्षाणि । 12 चाणिक्येन । 13 ३० वर्षाणि ।

भानुमित्रौ राजानौ षष्टि (६०) वर्षाणि[1] राज्यमकाष्टाम् । यौ तु कल्पचूर्णौ चतुर्थीपर्वकर्तृकाल-काचार्यनिर्वासकौ उज्जयिन्या बलमित्र[3]भानुमित्रौ तावन्यावेव । ततश्चत्वारिंशत् [4] (४०) वर्षाणि नभोवाहने राज्यं जातम् । एष क्वापि नरवाहनो राजेत्युच्यते । एवं वीरनिर्वाणात् वर्षे ४९३ । अस्मिंश्च वर्षे गर्दभिल्लोच्छेदकस्य श्रीकालकाचार्यस्य सूरिपद[5] प्रतिष्ठाऽभूत् । तथा नभोवाहनराजानन्तरं गर्दभिल्ल राज्यं द्विपञ्चाशदधिक शत (१५२) वर्षाणि [6] ज्ञातव्यम् । अय भाव —गर्दभिल्लप्रभृतीनां राज्यं गर्दभिल्लराज्यम् । इह यत्र यो राजा ख्यातिमानभूत्, तत्र तस्य राज्यं गण्यते, न तु पट्टानुक्रम । ततो नभोवाहनात्तु गर्दभिल्लेनोज्जयिन्यां १३ वर्षाणि राज्यं कृतम् । तावता श्रीकालकाचार्येण स्वसु सरस्वत्या प्रग्रहे गर्दभिल्लमुच्छेद्य उज्जयिन्यां शकराजा स्थापिता । तै ४ वर्षाणि[7] तत्र राज्यं चक्रे । एवं वर्षे १७ । तत्तु गर्दभिल्लस्यैव सुतेन विक्रमादित्येन राज्ञोज्जयिन्यां राज्यं प्राप्य सुवर्ण[8]पुरुषसिद्धिबलात् पृथिवीमनृणां कुर्वता विक्रमसंवत्सरं प्रवर्तित । स च वार्षिकस्नानवर्षोज्जातश्रीवीरसंवत्सरात् द्वादशाधिकपञ्चशतवर्षस्योऽस्तु ज्ञेय । विक्रमस्य राज्यं ६० वर्षाणि ततस्तत्पुत्रस्य विक्रमचरित्रापरना म्नो धर्मादित्यराजस्य राज्यं ४० वर्षाणि । ततो भाइल्लराजराज्यं वर्षं ११ । तत श्रीभाइल[9] राज्यं वर्षं १४ । तत श्रीनाहडराज्यं १० वर्षाणि जातम् । यस्य वारके नवनवतिलक्षधनपतिभिरभ्यर्थनिवासे जाल्उरपुरसमीपस्थे सुवर्णगिरिशृङ्गे श्रीमहावीरनाथ श्रीयक्षवसत्याख्यो[10] महाप्रासादो निष्पन्न । उक्तं च—

नवनवइलक्खधणवइ-अलद्धवासे सुवनगिरिसिहरे ।
नाहडनिवकालीण थुणि वीर जक्खवसहीए ॥[11]

विक्रमादित्यादनुवर्षे १३५, तन्मध्ये १७ वर्षेषु क्षिप्तेषु सर्ववर्षे १५२ । एतदेवाह—

विक्रमरज्जाणतरसतरसवासेहिं वच्छरपवित्ती ।
सेसं पुण[12] पणतीससयविक्कमकालम्मि य पविट्ठ ॥

सप्तदशवर्षैर्विक्रमराज्यानन्तरं वत्सरप्रवृत्ति । कोऽर्थ ? । नभोवाहनराज्यात् १७ वर्षैर्विक्रमा दित्यस्य राज्यम् । राज्यानन्तरं च तत्रैव वत्सरप्रवृत्ति । ततो द्विपञ्चाशदधिकशत (१५२) मध्यात् १७ वर्षेषु गतेषु शेष पञ्चत्रिंशदधिकशत (१३५) [13] विक्रमकाले प्रविष्टम् । विक्रमादित्याङ्कित संवत्सरात् शाकसंवत्सरं यावत् य काल स विक्रमकाल । स च पूर्वोक्तयुक्त्या १३५ वर्षमान इति । तत्र प्रविष्टं तत् स्थितमिति । एवं च सति किं जातमित्याह—

विक्कमरज्जारंभा परओ सिरिवीरनिव्वुई भणिया ।
सुन्न-मुणि-वेय-जुत्तो विक्कमकालाउ जिणकालो ।

---

1 ६० वर्षाणि । 2 ०कालिका० । 3 बल्भी० । 4 ४० वर्षाणि । 5 सूरपद । 6 गर्दभिल्लराज्य १ २ वर्षाणि । 7 शकराजा स्थापित तत ४ वर्षाणि । 8 स्वर्णपु० । 9 नाहल० । 10 ०यक्षवसत्यादिकमहा० ।
11 नवनवति लक्षधणवइ अलद्धवासे सुवनचेइहरे । नाहडनिवकालीणं वीरं नक्खवइयसहीए ॥
12 नास्ति । 13 'नेम १३५' इत्येव ।

विक्रमकालाज्जिनस्य वीरस्य कालो जिनकाल—शून्य (०) मुनि (७) वेद (४) युक्त । चत्वारिंशतानि सप्तत्यधिकवर्षाणि[1] श्रीमहावीरविक्रमादित्ययोरन्तरमित्यर्थ. । नन्वयं काल: श्रीवीर—विक्रमयो: कथं गण्यते , इत्याह— विक्रमराज्यारम्भात्परत पश्चात् श्रीवीरनिर्वृतिरत्र भणिता । को भाव ? —श्रीवीरनिर्वाणदिनादनु ४७० वर्षैर्विक्रमादित्यस्य राज्यारम्भदिनमिति । तथा हि—

पालक	६०	तदनु विक्रमादित्य	६०
नन्दा	१५५	धर्मादित्य	४०
मौर्या.	१०८	भाइल्ल	११
पुष्यमित्र	३०	नाइल्ल	१४
बलमित्र-भानुमित्रौ	६०	नाहड	१०
नभोवाहन	४०		
गर्दभिल्ल	१३	एव . .	१३५
शका	४		
एव	४७०	उभय . .	६०५

तदनु शाकसवत्सरप्रवृत्ति. । उक्त च—

श्रीवीरनिर्वृतेर्वर्षैः षड्भिः पञ्चोत्तरैः शतैः ।
शाकसंवत्सरस्यैषा प्रवृत्तिर्भरतेऽभवत् ॥

अत्राधिकारात् स्थविराणा पट्टप्रातिष्ठाकालो भण्यते ।

सिरिवीराउ सुहम्मो वीसं, चउ चत्तवास जंबुस्स ।
पभवेगारस, सिज्जंभवस्स तेवीस वासाणि ॥
पन्नास जसोभद्दे, संभूइस्सट्ठ, भद्दबाहुस्स ।
चउदस, य थूलभद्दे पणयालेवं दुपन्नरस्स ॥

श्रीवीरनिर्वाणात् सुधर्मस्वामिपट्टवर्ष २० । तदनु जम्बुस्वामिन पट्टवर्ष ४४ । एव ६४ । उक्त च परिशिष्टपर्वणि—

श्रीवीरमोक्षदिवसादपि हायनानि चत्वारिषष्टिमपि च व्यतिगम्य जम्बूः ।
कात्यायिनं प्रभवमात्मपदे निवेश्य कर्मक्षयेण पदमव्ययमाससाद ॥

तत प्रभव ११, शय्यभवस्य २३. यशोभद्रे ५०. सम्भूतिविजयस्य ८. भद्रबाहो १४ एव श्रीवीरनिर्वाणात् १७० । उक्त च परिशिपष्टर्वणि—

श्रीवीरमोक्षाद्वर्षशते सप्तत्यग्रे गते सति ।
भद्रबाहुरपि स्वामी ययौ स्वर्गं समाधिना ॥

1 ' ४७० वर्षाणि' इत्येव ।

स्थूलभद्रे ४९, एव 'दुमलरस त्ति' द्वे शते पञ्चदशाधिके (२१९)। श्रीवीरनिर्वाणात् पाल्क-नृप-सर्वनन्दराज्यकालोप्येतावानेव।

अज्जमहागिरी तीस, अज्जसुहत्थीण वरिस छायाला।
गुणसुदर चउआला, एव तिसया पणचीसा॥

आर्यमहागिरि ३०, आर्यसुहस्तीना ४६, गुणसुन्दर ४४, एव त्रीणि शतानि पञ्चविंशत्यधिकानि (३२५)।

तत्तो इगचालीस निगोय वक्खाय[1] कालिगायरिओ[2]।
अट्ठत्तीसं खदिल, एवं चउसय चउद्दस य॥

तत ३३५ अनुनिगोदव्याख्याता [3]कालकाचाय । 'निगोदव्याख्यातेति' श्रीसीमधरवाच श्रुत्वा वृद्धविप्ररूपेणेन्द्र कालकाचार्यपार्श्वे तथैव निगोदव्याख्याश्रवणादनु निजमायुरपृच्छत्। तैश्च श्रुतोपयोगादिन्द्रोऽसाविति ज्ञात । भिक्षागतयतीना स्वागमनज्ञप्त्यै वसतिद्वार परावृत्त्य स्वस्थानमगमदिति। अय च प्रज्ञापनोपाङ्गकृत् सिद्धान्ते श्रीवीरान्त्वेकादशगणभृद्भि सह त्रयोविंशतितम पुरुष श्यामाय इति व्याख्यात ।

[उक्त चोत्तराध्ययने, परीषहाध्ययननिर्युक्तौ परीषहाधिकारे

उज्जेणि कालखमणा सागरखमणा सुवन्नभूमीसु।
पुच्छा आउ य सेसं इदो सा दिव्वकरण च॥

इति गाथाचूर्णो–' उज्जेणीए कालगायरिया जाव सक्को निगोयजीवे पुच्छइ सा दिव्व ति शालमु सपरावत ।' ततोऽसौ श्यामार्योऽन्यो वेति चिन्त्यम्।[4]]

असौ वर्ष ४१, स्कन्दिलसूरि ३८, एव चत्वारि शतानि चतुर्दश च (४१४)[5]। अत्र चाय वृद्धसम्प्रदाय –स्थूलभद्रस्य शिष्यद्वयम्–१ आर्यमहागिरि, २ आर्यसुहस्ती च । तत्र आर्यमहागिरेर्या शाखा सा मुख्या। सा चैव स्थविरावल्यामुक्ता—

सूरिबलिस्सह साई सामज्जो संडिलो य जीयधरो।
अज्जसमुद्दे मगू नन्दिलो नागहत्थी य॥
रेवइ सिंहो खन्दिल[6] हिमव नागज्जुणा य गोविंदा।
सिरिभूइदिन्न–लोहिच्च–दूसगणिणो य देवड्ढी॥

असौ च श्रीवीरान्नुसप्तविंशतितम पुरुषो देवर्द्धिगणि सिद्धान्तान् अव्यवच्छेदाय पुस्तकाधिरूढा नकार्षीत्। द्वितीयशाखा तु श्रीकल्पसूत्रोक्ता एवम्–

---

1 विक्खाय। 2 कालिगा०। 3 कालिगा०। 4 कोष्ठकान्तर्गतपाठ प्रति पुस्तके नास्ति। 5 ' एव ४१४ ' इत्येव पाठ । 6 रेवइ सिंह खदक।

अज्जसुहत्थी य सुद्विय तहिंदादिन्ने य अज्जादिन्ने य ।
सीहगिरि वइरसामी सोपारग वइरसेणे य ।

एव चात्र शाखाद्वयेऽप्यार्यसुहस्तिनोऽनु गुणसुन्दर , श्यामार्यादनु स्कान्दिलाचार्यश्च न दृश्यत; तथाप्यत्र सम्प्रदाये दृष्टावतस्तावेव प्रोक्तौ[1]। एवमग्रेऽपि रेवतिमित्रादौ ज्ञेयम् ।

रेवइमित्ते छत्तीस[2] अज्जमंगू अ वीस एवं तु ।
चउसय सत्तरि चउसय तिपन्ने कालगो जाओ ॥
चउवीस अज्जधम्मे, एगुणचालीस भद्दगुत्ते य ।
सिरिगुत्ति पनर· वइरे छत्तीसं एव पण[3] चुलसी ॥
तेरस वासा सिरिअज्जरक्खिए, वीस पूसमित्तस्स[4] ।
इत्थ य पणहिय छसएसु सागसंवच्छरुप्पत्ती ॥

स्कंदिलादनुरेवतिमित्रे ३६. आर्यमङ्गु २०, एव श्रीवीरमोक्षात् चत्वारि शतानि सप्ततिश्च (४७०)। अत्र ४५३ वर्षेषु गर्दभिल्लोच्छेत्ता कालकसूरि[5]र्जात । आर्यधर्मे २४ । इह केऽपि मङ्गुधर्मयोर्नाम्नैव भेदमाहु ।तन्मते आर्यधर्मस्य वर्ष ४४, भद्रगुप्ते ३९, श्रीगुप्ते १५.श्रीवज्र[6]स्वामिनि ३६ एव वीरमोक्षात् पञ्च शतानि चतुरशीति (५८४)। तदनु श्रीआर्यरक्षिते १३ ।पुष्यमित्रस्य २०. येन मूत्रार्थौ प्रतिवल्लवटतुल्य आर्यरक्षितो[7]ऽकारि । एवं वीराद्वर्ष ६१७ । अत्र च ६०५ वर्षेषु शाकसंवत्सरोत्पत्ति । इह चाय संप्रदाय —पूर्वं चन्द्रगुप्तवारके द्वादशवार्षिकदुर्भिक्ष उत्कृष्टलब्धीनां प्रकीर्णकसहस्राणा च विच्छेद । बहुलस्स सरिव्वयेति, बलिस्सहेति नैकस्यैव नाम । स्थविरावल्या तु, आर्यमङ्गो परोऽनु आर्यधर्मभद्रगुप्त–वज्रस्वामि–आर्यरक्षिता भिन्नशाखोद्भवा अपि तस्मिन् समये प्रधानपुरुषा इत्युपात्ता। रेवइसिंहेति–रेवतिसूरि:, ब्रह्मद्वीपकसिंहश्च । तथा वज्रस्वाम्यवसाने १२ वार्षिके दुर्भिक्षे सिद्धान्तानुयोग. प्रणष्ट· । ततः पुन· सुभिक्षे जाते मथुराया स्कन्दिलाचार्येण श्रमणसंघमेलयित्वा प्रवर्तित । उक्तं च—

' जेसि इमो अणुओगो ' इत्यादि ।

द्वितीयशाखाया तु–सुट्ठिय त्ति आर्यसुहस्तिनो द्वादशशिष्यान्तरवर्ती पञ्चम., कल्पे– 'सुट्ठियसुप्पडिवद्धि त्ति ' ख्यात सुस्थितसूरि । यस्मात् · कोडियगणो गणो मे ' इति पठ्यमान कौटिकगणो निर्गत. । तथा कल्पसूत्रे इत्युक्तम्–'थेरस्स ण अज्जमहागिरिस्स एलावच्चसगुत्तस्स इमे अट्ठ थेरा अतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया होत्था । तंजहा–थेरे उत्तरे· इत्यादि जाव. थेरे छलुए रोहगुत्ते कोसियगुत्तेण । थेरेहिंतो णं छलुएहिंतो ण रोहगुत्तेहिंतो तेरासिया साहा निग्गया ' इत्युक्तम् । आवश्यके तु

चउदस सोलस वासा चउदस विसुत्तराय दुन्निसया ।
अट्ठावीसा य दुवे पंच सया चेव चउयाला ॥
पंचसया चुलसीया छ च्चेव सया नवुत्तरा हुंति ।

---

1 न दृश्यते तयाऽप्यत्र सप्रदाये दृष्ट· , अतस्तथैव प्रोक्त· । 2 छत्तीय । 3 पुण । 4 पुव्वमित्तस्स । 5 कालिकाचार्यो । 6 श्रीवज्रे । 7 आर्यरक्षितेना०

इत्यत्र—

पंचसया चोयाला तइया सिद्धिंगयस्स वीरस्स ।
पुरिमतरजियाए तेगसिया दिट्ठि उप्पन्ना ॥

इत्युक्तम् । ततो यदि षडुलूको रोहगुप्त आर्यमहागिरिशिष्य, तत श्रीवीरात् ५४४ वर्षाणि कथं स्युः? । यत—आर्यमहागिरि स्थूलभद्रशिष्य, स चोक्तयुक्त्या वीरमोक्षात् २४५ वर्षान्तर्जात । तच्छिष्यश्चेत् षडुलूक तत ५४४ वर्षे कथमिति सन्देह । ततोऽत्र बहुश्रुता प्रमाणम्। तथा १२ वार्षिके दुर्भिक्षे श्रीवज्रेण वज्रसेनशिष्यो ' यदा लक्षमूल्या रसवतीं लभसे तदनु सुभिक्ष जानीया ' इत्युक्त्वा विहारित । सोपारके जिनदत्तेभ्यभार्यया ईश्वरीति नाम्न्या विषमिश्रीक्रियमाणा[1] तादृशीं[2] रसवतीं ज्ञात्वा प्रात सुभिक्ष भावीति तौ सवंशौ तत्र सुख तस्थौ। तस्य च क्रमेण इन्द्र—चन्द्र—निर्वृति—विद्याधराख्या ४ शिष्या जाता । तेषु चन्द्रकुल वटवृक्षवद्बहुशाखमद्य यावत् प्रसरद्विजयते । तदन्वये नेपा शिष्य[3] उप स्थाप्य ' कोडीगणो गणो मे, वइरसाहा साहा मे, चंदकुल कुल मे ' इति दिग्बन्ध कार्यते इति ।

तथा, भृगुक्षेत्रे आर्यखपुटाचार्यो वृद्धवादी च, आर्यधर्मस्य शिष्य सिद्धसेन प्रभावक । तथा, वज्रस्वामिनोऽनु वज्रसेनो वर्ष ३, नागहस्ति ६९, रेवतिमित्र ५९, ब्रह्मद्वीपकसिंह ७८, एवं २३९। तदनु, स्कन्दिल हिमवत्सूरि-नागार्जुना ७८[4] । एषा मध्ये २२ वर्षातिक्रमे वलभीभङ्ग । उक्तं च—

पणसयरी वासाइं तिन्निसयसमन्नियाइ अइकमिउ ।
विक्कमकालाओ तओ वल्भीभगो समुप्पन्नो ॥

यत श्रीविक्रमात् ११४ वर्षैर्वज्रस्वामी, तदनु २३९ वर्षे स्कन्दिल, २२[5] वर्षैर्वलभीभङ्ग । एवं ३७५ । तथा विक्रमात्तु ५१०—श्रीवीरमोक्षात्तु ९८० वर्षैर्देवर्द्धिगणिभिर्ग्रन्थानुद्धृत्य[6] पुस्तकेषु निवेशित । तदा च ते श्रीकल्पान्तर्निवेशितम्—' समणस्स भगवओ महावीरस्स कालगयस्स० नववाससयाइ वइक्कताइ दसमस्स वाससयस्स अय असीइमे गच्छइ त्ति ।' तत १३ वर्षैश्चतुर्थ्यां पर्युषणा पर्व । तदुक्तम्,

नवसय तेणउएहिं समइक्कतेहिं वद्धमाणाओ ।
पज्जोसवणचउत्थी कालगसूरिहिं सठाविया ॥

श्रीवीरमोक्षात् दशभि शतैः पञ्चपञ्चाशदधिकै (१०५५) श्रीहरिभद्रसूरे स्वर्ग । उक्त च—

पचसए पणसीए विक्कमकालाओ झत्ति अत्थमिओ ।
हरिभद्दसूरिसूरो भवियाण दिसउ कल्लाण ॥

ततो जिनभद्रक्षमाश्रमण ६५, पुष्यमित्र ६०। स्वातिसूरिभि ७५ वर्षे पाक्षिक चतुर्दश्यामानीतम्[7] । उक्त च—

बारसवाससएसु पन्नासहिएसु वद्धमाणाओ ।
चउदासि पक्खपरेसो पकप्पिओ साइसूरीहिं ॥

---

1 विषमिश्रात्पूर्वं दीयमाना । 2 तादृशू । 3 ' अत शिष्य ' इत्येव पाठ । 4 २८ । ७ ३५३ 6 देवर्द्धिगणिभि पुस्तकेषु । 7 पाक्षिक १४ आनीत ।

पुष्यमित्रः क्वापि स्वातिसूरे. पश्चादुक्तोऽस्ति तच्चिन्त्यम. गाथयामहामेलत्वात् ।[1]

तेरसवास सएसु वीराउ समन्निएसु मट्ठीए ।
सिरिवप्पभट्टीसूरी वीउसाण सिरोमणी जाओ ॥

मुल्यप्रतौ तु श्रीवीरात् १३०० वर्षैरित्यस्ति । एतदपि शोध्यं बहुश्रुतैः. यतस्तत्रैव स्वातेस्तु सम्भूतयति ९०, माढरसम्भूतिगुप्तं ६०. ततो बप्पभट्टिसूरिरित्युक्तमस्ति । अतो बहुश्रुता प्रमाणम् ।

अथ, सुधर्म्मादीनां[2] पुष्यमित्रान्तानां क्रमेण गृहस्थपर्याय–सामान्ययतिपर्याय–युगप्रधानत्वपर्याय-सर्वायूंषि प्राह—

पंचास सोल तीसा वीसय पणवीस तह य [3]बायाला ।
पणयाल तीस तीसा तीसा चउवीस वीसा य ॥
बावीस चउद चउदासि-गवास पणतीस अह य बावीसा[4] ।
सतरस गिहि परियाओ, सामन्नजईण अह एवं ॥
तीसा वीसा चउ चत्ति गार चउवीस चत्त सत्तरसा[5] ।
चउवीस चत्त चउवीस दुतीस पणतीस अडवन्ना ॥
अड चत्ता चउ चत्ता पण चत्ता पन्न तह य चउ चत्ता ।
चालीस तीस, अह जुगपहाणवरिसे भणिस्सामि ॥
वीस चउ चत्तिगारस तेवीस वीस अट्ठ चउदस य[6] ।
पणयाल तीस छत्तालीसा चउ चत्त इगयाला ॥
अडतीसा छत्तीसा चउ चत्तिगयाल पनर छत्तीसा ।
तेरस वीसं, सव्वाउयं च एगं सयमसीई ॥
पणसीई बासट्ठी छासी नवई छहुत्तरी चेव ।
नवनवइ तओ तिण्हं एगसयं छन्नवइ चेव ॥
अट्ठारसुत्तरं सयमट्ठनवइ[7] दुगहिय सयं च नायव्वं ।
पणहिय सय सयमडसी पणहत्तरि तह य[8] रागसट्ठी ॥
तिन्नि पुण दुन्नि चउरो पंच य सग पण छ एग तह तिन्नि ।
दो पंच चउ ति सग सत्त सत्त य मासा कमेणुवरिं ॥*

तथा श्रीवीरमोक्षात् १६२९ विक्रमात् १२६९ वर्षे श्रीविधिपक्षमुख्याभिधान श्रीमदञ्चलगच्छ श्रीआर्यरक्षितसूरयः स्थापयामासु ।

---

1 पश्चादुक्त सचेति गाथाया सह मेलत्वात । 2 सुमित्रादीनां । 3 तीसट्ठ वीस बावीस तहय० । 4 पणतीस अट्ठ बावीसा । 5 चउदस य सत्त सत्तरसा । 6 तेवीस पन्न अट्ठ चउदस य ।

7 अद्धनवइ 8 तय० । * प्रत्यन्तरे एतादृश पाठ —ति पण दुन्नि चउर पंच य सग पण पण छ इग तिन्नि दो पंच । चउ ति सग सत्त सत्त य सत्त मासा कमेणुवरिं ॥

श्रावीरोपासकश्रेणिकपुत्र[1]कूणिकपुत्रोदायिनोऽनन्तरं[3] पाटलिपुत्रे नवनन्दै राज्यं कृतम्। तानुत्थाप्य[4] चाणिक्यश्चन्द्रगुप्त[5]भूपमस्थापयत । तत्पुत्रो बिन्दुसार, तत्पुत्रोऽशोकश्री, तत्पु०[6] कुणाल—अन्ध, तत्पुत्र सम्प्रतिराज[7]उज्जयिन्या जात । तद्वंशे एव गर्दभिल्लो राजा, तदुच्छेदे शको राजा। तावता गर्दभिल्लस्यैव पुत्रो विक्रमादित्य शकमुच्छेद्य तत्रैवोपविष्ट । तेन श्रीवीरमोक्षात् ४७० वर्षे[8] सवत्सरोऽङ्कित, ।

। तदनु सवत् ८२१ वर्षे वैशाख सुदि[9] २ सोमे चाउडावशोत्पन्न श्रीवनराज श्रीअणहिल्लपुरम स्थापयत्, तत्र वर्ष ६० वर्षाणि राज्यमभुक्त। तत्पुत्रेण योगराजेन वर्ष ९ राज्य कृतम् । तत सवत् ८९१ वर्षोपविष्टश्रारत्नादित्येन वर्ष ३ राज्य कृतम् । ततो वैरिसिंहस्य[10] राज्य व०११। तत स० ९०५ उप० तत्सुतक्षेमराजस्य राज्य वर्ष ३९। तत ९४४ वर्षोप० सुतचामुण्डराजराज्य[11] व० २८। तत स० ९७१ वर्षोप० सुतघाघडस्य राज्य व० २७। ९९८ वर्षोप० सुतपूभडराज्य[12] व० १९। इत्थमत्र १०१७। इत्थ चाउडावशे अष्टभि १९६ वर्ष राज्य कृतम्।

तदनु स० १०१७ वर्ष चोलुक्यवशोपविष्टस्य दौहित्र श्रीमूलराजस्य राज्य व० ३५। तत स० १०५२ वर्षोप० सुतवल्लभराजराज्य व० १४। तत स० १०६६ वर्षोप० भ्रातृदुर्लभराजराज्य व० १२। स० १०७८ वर्षोप० भ्रातृनागिलसुतभीमदेवराज्य ४२। स० ११२० वर्षोप० सुतश्रीकर्णदेवराज्य व० ३०। स० ११५० वर्षोप० सुतश्रीजयसिंहदेवराज्य व० ४९। स० ११९९ वर्ष कार्तिकसुदि ३ निरुद्ध दिन ३ पादुकाराज्यम्। तत्रैव वर्ष मार्गसुदि ४ उपविष्ट भीमदेवसुत—खमराजसुत—देवराजसुत—त्रिभुवनपालसुत—श्रीकुमारपालस्य स० १२२९ पौष सुदि १२ निरुद्ध राज्य व० ३, मास १, दिन ७। तत तस्यामेव तिथौ उपवि० भ्रातृमहिपालदेवसुत—अजयपालदेवस्य स० १२३२ वर्ष फा० सु० १२ निरुद्ध राज्य व० ३, मास २। तदनन्तरं उपविष्टलघुमूलराजस्य स० १२३४ चैत्र सुदि १४ निरुद्ध राज्य वर्ष २, मास १ दिन २। ततस्तदेव उपविष्टश्रीभीमदेवराज्यम्।

। इति राजावली ।

ततो गज्जनकराज्यम्। उक्त च —

[1]हुय थप्पिय [2]वणराय पत्तम अनउप्पि [3]जल्लीय। नामि-थडिय नागडिण रयणि [4]वइर वरनिवाय। मत्थिय [5]भीमडि अगाडि तह य भूयडि [7]जयवनीय। मूलराइ चागमि(डि) वइ टुल्लहि णम इत्थिय।
[8]तुय भीमि करणि जयसिंह पहु कुअरि अजय मूल रमिय। सत्तावन्निड इणि भीमदेवि गज्जणवइ घरि नीगमिय॥

तत श्रीवीरधवलपुत्र श्रीवीसलदेव स० १३०० वर्षे। तत १३१८ श्रीअर्जुनदेव। १३३१ सारङ्गदेव। १३५३ लघुकर्ण। १३ ० यवना माधवनागरविप्रेण [10]आनीता।

श्रीकुमारपालामात्यवाहडेन १२११ वर्ष ० [11]कोटि ९७ लक्ष कुमारपालप्रियव्ययेन श्रीसमय प्रासाद पाषाणमय कारित। तत १३११ यवनापद्रवाज्जावडिबिम्ब गते सा० समराकेन नव्यबिम्ब स्थापितम्।

[इति श्रीमेरुतुङ्गाचार्यविरचिता विचारश्रेणि समाप्ता]

1 कोणिक। 2 दायनो। 3 नवर। 4 चणाक्य चन्द्र। 5 गुप्त। 6 तत्पुत्रा० च कुणालो। 7—राजा। 8 वर्षे। 9 सुदि। 10 वैरसिंह-। 11 चामुण्डराज्यम्। 12 सुतपूराज्य। 1 हु। 2 वणरायकमराजे। 3 बल्ली। 4 जमि वाय ओयरिय। 5 वरराइ सग। 6 वमण। 7 नयवन्त। 8 भूय। 9 नागमील। 10 नीता। 11 वर्षे कोटि।

॥ परिशिष्टम् ॥

[एकस्मिन् लिखितादर्शे स्थविरावलिसमाप्त्यनन्तरं समदृशा केचन अन्यान्तर्गता उल्लेखाः समुल्लिखिताः संप्राप्ता अस्माभिः । ते च संग्रहणीयत्वात् परिशिष्टरूपेण अत्रस्थाने समवतार्यन्ते—संपादकः ।]

महागिरि-सुहस्ती च सूरि. श्रीगुणसुन्दरः । श्यामार्यः स्कन्दिलाचार्यो रेवतीमित्रसूरिराट् ॥
श्रीधर्मो भद्रगुप्तश्च श्रीगुप्तो वज्रसूरिराट् । युगप्रधानप्रवरा दशैते दशपूर्विणः ॥

वज्रस्वामिनो गृहवासे वर्ष ८, व्रतपर्याये वर्ष ४४, युगप्रधानत्वे व० ३६, सर्वायु व० ८८, मास ७ दिन ७ ।

दस पुव्वा संपुण्णा वोच्छिन्ना थुलभद्दम्मि सपत्ते । वयरम्मि महासत्ते संघयणं अद्धनारायं ॥
पंच सएसुं नरिस्माण अइगएसुं जिणाओ वीराओ । वयरो सोहग्गनिही सुनंदगब्भे समुप्पण्णो ॥
दसपुव्वविच्छेओ वयरे संघयणमद्धनारायं । पंचहिं वाससएहिं चउरासीए समहिएहिं ॥

पंचसए पणतीए सूरी सिरिअज्जरक्खिओ जाओ । वयरसामी वि आसी दसपुव्वधरो तस्सकाले ॥

तह अज्जरक्खियम्मि वोच्छिन्ना एत्थ सड्ढनवपुव्वा ।
कालक्कमेण हाणी दूसमसमयाणुसारेण ॥

पाठान्तरेण—पुव्वगयं वोच्छिन्नं वाससहस्सेहिं वीराओ ॥

थेरे अज्जवयरसेणिएत्ति

वज्रसेनस्य सोपारं नाम पत्तनमभ्यगात् । जिनदत्तप्रिया तत्रेश्वरीत्याख्या चतुस्सुताः ॥
दुर्भिक्षे जाते विषं वर्तयन्ती निषिद्धा ।

सुभिक्षं तत्क्षणं जज्ञे ततः सा सपरिच्छदा । अचिन्तयदहो मृत्युरभविष्यदरी ततः ॥
जीवितव्यफलं किं न गृह्यते संयमग्रहात् । वज्रसेनमुनेः पार्श्वे जैनबीजस्य सद्गुरोः ॥
ध्यात्वेति सा सपुत्राऽपि व्रतं जग्राह साग्रहम् । नागेन्द्रो निर्वृतिश्चन्द्रः श्रीमान् विद्याधरस्तथा ॥
अभूवंस्ते किञ्चिदूनदशपूर्वविदस्ततः । चत्वारोऽपि जिनाधीशमतोद्धारधुरंधराः ॥
अद्यापि गच्छास्तन्नाम्ना जयिनोऽवनिमण्डले । वर्तन्ते तत्र तीर्थे तन्मूर्तयोऽद्यापि सार्हणाः ॥

आदौ चत्वारो गणाः, एकास्मिन् एकास्मिन् गच्छे एकविंशति आचार्याः स्थापिताः, एवं क्रमेण श्रीवीरात् ६११ वर्षे ८४ गच्छा संजाताः । श्रीवीरनिर्वाणात् ३३५ वर्षे कालकाचार्य प्रथमः—उमास्वातिवाचकशिष्यः श्यामाचार्याऽपरनाम्ना प्रज्ञापनोपाङ्गकारकः । १ । श्रीवीरात् ४५३ वर्षे कालकाचार्यः सरस्वतीभ्राता गर्दभिल्लोच्छेदकारी । २ । वीरात् ३२० वर्षे कालकाचार्य निगोदविचारकर्ता । ३ । वीरात् ९९३ वर्षे कालकाचार्यः श्रीपर्वकर्ता चातुर्थ्याम् । ४ । यत.—

सिरिवीरजिणिंदाओ वरिससया तिन्नि वीस (३२०) अहियाओ ।
कालयसूरी जाओ सक्को पडिबोहिओ जेण ॥ १ ॥
तह गद्दभिल्लरज्जस्स छेअगो कालगारिओ होही ।
तेवन्नचउसएहिं (४५३) गुणसयकलिओ पहाजुत्तो ॥ २ ॥

तेणउयनवसएहिं (९९३) समइक्कंतेहि वद्धमाणाओ ।
पज्जोसवण चउत्थी कालगसूरीहिं ता ठविआ ॥ ३ ॥

—दशाश्रुतस्कन्धचूर्णौं ।

निव्वाणरयणीओ चंडपज्जोअपट्टम्मि ।
उज्जेणीए जाओ पालयनामो महाराया ॥ १ ॥
सट्ठी ६० पालगरन्नो, पणवन्नसय च १५५ होइ नंदाणं।
अट्ठसय मुरियाण १०८, तीसिच्चिय पूसमित्तस्स ॥ २ ॥
वलमित्त–भाणुमित्ता सट्ठी वासाण ६० चत्त नहवहण ४० ।
तह गद्दभिल्लरज्ज तेरसवासे सगस्स चऊ ॥ ३ ॥
विक्कमरज्जारंभा परओ सिरिवीरनिव्वुई भणिया ।
सुन–मुणि–वेद (४१०) जुत्तो विक्कमकालाउ जिणकालो ॥ ४ ।
विक्कमरज्जाणतर तेरसवासेसु वच्छरपवित्ती ।
सिरिवीरमुक्खओ वा चउसयतेसीसवासाओ ॥

—तित्थुग्गालीप्रकीर्णके ॥

"मह मोक्खगमणाओ पालय नंद चंदगुत्ताइराइसु वोलीणसु चउसयसत्तरिहिं वासेहिं विक्कमाइच्चो राया होही । तत्थ सट्ठी वरिसाणं पालयस्स रज्ज । पणपन्नसय नंदाण । अट्ठुत्तरसय मोरियाण । तीसं पूसमित्तस्स । सट्ठी वलमित्त–भाणुमित्ताण । चालीस नरवाहणस्स । तेरस गद्दभिल्लस्स । चत्तारि सगस्स । तओ विक्कमाइच्चो सो साहिअसुवण्णपुरिसो पुहविं अरिणं काउ नियसवच्छर पवत्तेही ॥"

—जिनप्रभकृत तीर्थकल्पग्रन्थे ।

तहा गद्दभिल्लस्स रज्जच्छयगो कालगायरिओ ।
होही तेवण्णचउसएहि गुणसयकलिओ सुओवउत्ता ॥

'दिनतो मम मोक्षस्य गते वर्षशतत्रये । उज्जयिन्या महापुर्यां भावी सम्प्रतिभूपति ॥ १०७ ॥
श्रीमदार्यसुहस्त्याह्व–सूरीणामुपदेशत । जातिस्मरणमासाद्य जैनधर्मं विधास्यति' ॥ १०८ ॥

—जिनसुन्दरसूरिकृते दीपालिकाकल्पे ।

अथ सप्तनिह्नवस्वरूप व्यवस्था लिख्यते—

श्रीवीरकेवलात् १४ वर्षैर्जमालि "क्रियमाणे कृत" एतद्वचनोत्थापक । १ ।
श्रीवीरकेव० १६ वर्षे तिष्यगुप्त —अन्त्यप्रदेशी जीवस्थापक । २ ।
श्रीवीरनिर्वाणात् १२ वर्षे श्रीगोतमनिर्वाणम् ।
वीरनि०२० व० सुधर्मगणधरनिर्वाणम् ।
श्रीवीरनि० ६४ व० जम्बूस्वामिनिर्वाणम् ।
श्रीवीरनि० ९८ वर्षे श्रीप्रभवस्वामिस्व० ।
श्रीवीरनि० ९८ व० शय्यभवसूरि जिनप्रतिमा दर्शनात् प्रतिबोध पाम्या–दशवै० कर्ता ।
वीरनि० १०० व० श्रीयशोभद्रसूरि ।

श्रीवीरनि० १७० व० भद्रबाहुस्वामी १० निर्युक्तिकर्ता ।
वीरनि० २१४ व० अव्यक्तवादी निह्नव. । ३ ।
वीरनि० २१५ व० स्थूलभद्रः १० पूर्वधर. श्रुतकेवली ।
वीरनि० २२० व० शून्यवादी निह्नवः । ४ ।
वीरनि० २२८ व० एकस्मिन् समये द्विक्रियावेदकः । ५ ।
वीरनि० ३३५ व० प्रथमः कालकाचार्य. निगोदविचारकर्ता—अविनीतशिष्यपरिहारकः ।
वीरनि० ४५३ व० द्वितीयः कालकाचार्यः सरस्वतीबालकः—गर्दभिल्लोच्छेदी ।
वीरनि० ४७० व० विक्रमादित्य. संवत्सरप्रवर्तक ।
वीरनि० ५४४ वर्षेनोजीवस्थापकः रोहगुप्त. । ६ ।
वीरनि० ५८४ व० वज्रस्वामिस्वर्गमनम् ।
वीरनि० ५८४ व० गोष्टामाहिलनिह्नवः । ७ ।
वीरनि० ६०९ व० दिगम्बरा' ।
वीरनि० ६२० व० नागेन्द्र—चन्द्र—निर्वृति—विद्याधर—शाखाचतुष्क जातम् ।
वीरनि० ८८२ व० चैत्यवासी थया ।
वीरनि० ९८० व० सिद्धात पुस्तकि चडिओ ।
वीरनि० ९९३ व० पञ्चमीतश्चतुर्थ्यां पर्युषणापर्व आनीतम् ।
श्रीगुणधरशिष्येण कालकाचार्येण चतुर्दश्यां चतुर्मासिक भावडरायगच्छे ।
वीरनि० १ सहस्रवर्षे. पूर्वश्रुतविच्छित्ति सर्वथा ।
वीरनि० १००८ व० पौषधशालास्थिति ।
वीरनि० १४६४ व० वृद्धगच्छात ८४ गच्छा ।
वीरनि० १६१४ वर्षे खरतराः संजाता ।
वीरनि० १६२९ व० पूर्णिमापक्ष ।
वीरनि० १६८४ आचलीआ ।
वीरनि० १७५५ व० तपागच्छः ।
वीरनि० २०३२ व०लुंका जाता. ।
वीरनि० २०४० व० कटुकमतिन ।
वीरनि० २०८० व० पार्श्वचन्द्रीया ।
वीरनि० २१२० व० ब्रह्मामतीया ।

॥ इति संवत्सराः मतोत्पत्तीनाम् ॥

———————

॥ ॐ अर्हम् ॥

॥ नमोऽस्तु श्रमणाय भगवते श्रीमहावीराय ॥

यापनीय यतिग्रामाग्रणिभदन्त शाकटायनाचार्य विरचित

स्त्रीमुक्ति केवलिभुक्ति प्रकरणयुग्मम्

॥ स्त्रीमुक्तिप्रकरणं ॥
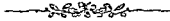
प्रणिपत्य भुक्तिमुक्तिप्रदममलं धर्ममर्हतां दिशतः ।
वक्ष्ये स्त्रीनिर्वाणं केवलिभुक्तिं च संक्षेपात् ॥ १ ॥

अस्ति स्त्रीनिर्वाणं पुंवत्, यदविकलहेतुकं स्त्रीषु ।
न विरुध्यति हि रत्नत्रयसंपद् निर्वृतेर्हेतुः ॥ २ ॥

रत्नत्रय विरुद्धं स्त्रीत्वेन यथाऽमराग्निभावेन ।
इति वाङ्मात्रं नात्र प्रमाणमाप्ताऽऽगमो ऽन्यद् वा ॥ ३ ॥

जानीते जिनवचनं, श्रद्धत्ते, चरति चाऽऽर्यिकाऽशबलम् ।
नाऽस्याऽस्त्यसंभवोऽस्या नाऽदृष्टविरोधगतिरस्ति ॥ ४ ॥

सप्तमपृथिवीगमनाद्यभावमन्याप्तमेव मन्यन्ते ।
निर्वाणाऽभावनाऽपश्चिमतनवो न ता यान्ति ॥ ५ ॥

विषमगतयोऽप्यधस्तात् उपरिष्टात् तुल्यमासहस्रारम् ।
गच्छन्ति च तिर्यञ्चस्तदधोगत्यूनताऽहेतुः ॥ ६ ॥

वादविकुर्वणत्वादिलब्धिविरहे श्रुते कनीयसि च ।
जिनकल्पमनःपर्ययविरहेऽपि न सिद्धिविरहोऽस्ति ॥ ७ ॥

प्रतिगतपाठा — १ विकुर्वाण

वादादिलब्ध्यभाववद् अभविष्यद यदि च सिद्ध्यभावोऽपि ।
तासामवारयिष्यद् यथैव जम्बूयुगादारात् ॥ ८ ॥
'स्त्री'ति च धर्मविरोधे प्रव्रज्यादोपवर्जितो 'स्त्री'ति ।
बालादिवद् वदेयुर्न 'गर्भिणी बालवत्से' ति ॥ ९ ॥
यदि वस्त्राद् अविमुक्तिः, त्यजेत तद्, अथ न कल्पते हातुम् ।
उत्सङ्गप्रतिलेखनवद् अन्यथा देशको दूष्येत ॥ १० ॥
त्यागे सर्वत्यागो ग्रहणेऽल्पो दोष इत्युपादेशि ।
वस्त्रं गुरुणाऽऽर्याणां परिग्रहोऽपीति चुत्यादौ ॥ ११ ॥
यत् संयमोपकाराय वर्तते प्रोक्तमेतदुपकरणम् ।
धर्मस्य हि तत् साधनमतोऽन्यद् अधिकरणमाहाऽर्हन् ॥ १२ ॥
अस्तैन्यबाहिर(-अस्त्यैर्यव्याहार) व्युत्सर्गविवेकैषणादिसमितीनाम् ।
उपदेशनमुपदेशो ह्युपधेरपरिग्रहत्वस्य ॥ १३ ॥
निर्ग्रन्था   शास्त्रे सर्वत्र नैव युज्येत ।
उपधेर्ग्रन्थत्वेऽस्याः पुमानपि तथा न निर्ग्रन्थः ॥ १४ ॥
संसक्तौ सत्यामपि चोदितयत्नेन परिहरन्त्यार्या ।
हिंसावती पुमानिव न जन्तुमालाकुले लोके ॥ १५ ॥
वस्त्रं विना न चरणं स्त्रीणामित्यर्हतोच्यत, विनाऽपि ।
पुंसामिति न्यवार्यत (नाऽवार्यत), तत्र स्थविरादिवद् मुक्तिम् (मुक्तिः) ॥१६॥
अर्शो-भगंदरादिषु गृहीतचीरो यतिर्न मुच्येत ।
उपसर्गे वा चीरे ग्दादिः संन्यस्यते चात्ते ॥ १७ ॥
उत्सङ्गमचेलत्वं नोच्येत तदन्यथा नरस्याऽपि ।
आचेलक्या(क्यं)योग्यायोग्याऽसिद्धेरदीक्ष्य इव ॥ १८ ॥
इति जिनकल्पादीनां युक्त्यङ्गानामयोग्य इति सिद्धेः ।
स्याद् अष्टवर्षजातादिरयोग्यो ऽदीक्षणीय इव ॥ १९ ॥
संवर-निर्झररूपो बहुप्रकारस्तपोविधिः शास्त्रे ।
योगचिकित्साविधिरिव कस्याऽपि कथंचिदुपकारी ॥२० ॥

१ उत्सग । २ देसको । ३ ल्पो । ४ धेग्र । मुत्यग ।
* ( ) एतच्चिह्नान्तर्गता पाठा सपादककल्पिताः ।

वस्त्राद् न मुक्तिविरहो भवतीयुक्त, सगग्रमन्यच्च ।
रत्नत्रयाद न वाऽपद् युक्त्यङ्ग शिष्यैते सद्भि ॥ २१ ॥
प्रव्राजना निषिद्धा'ऽराचित्तु रत्नत्रयस्य योगेऽपि ।
धर्मस्य हानि वृद्धी निरुपयद्विविद्वन्त्यर्थम् ॥ २२ ॥
अप्रतिव्रत्यात् चेत् सयतवगण नाऽऽयिरासिद्धि ।
वन्द्यतां (वद्यता) ता यन्ति ते, नोनत्व कल्प्यत तासाम् ॥ २४ ॥
सन्त्यूनापुरुषेभ्यस्ता स्मारण चारणादिराभिभ्य ।
तीर्थकराऽऽकारिभ्यो न च जिनकल्पादिरिति गणधरादीनाम् ॥ २५ ॥
अर्हन् न वन्दते न तारताऽसिद्धिरङ्गगते ।
प्राप्ताऽन्यथा निमुक्ति, स्थान स्त्री पुंसयोस्तुल्यम् ॥२६ ॥
आकृष्यते श्रिया स्त्री पुस सत्र कि न तमुक्ता ।
इत्यमुना क्षेप्यन्त्री पुसां सिद्धि (सिद्ध) समम्रकत्वम् ॥ २७ ॥
मायादि पुरुषाणामपि नैशाधि (द्वेषादि) प्रसिद्धैभावत्र ।
षण्णा मस्थानानां तुल्या वर्णत्रयं यापि ॥ २८ ॥
'स्त्री 'नाम मन्दसत्त्वा उत्सङ्गसमग्रता न तेनाऽत्र ।
तद् कथमनल्पवृत्तय सन्ति हि शीलाम्बुधेर्वेला ॥ २९ ॥
ब्राह्मी सुन्दर्याऽऽर्या राजीमती चन्दना गणधराऽन्या ।
अपि देव-मनुज-महिता विख्याता शील-सत्त्वाभ्याम् ॥ ३० ॥
गार्हस्थ्यऽपि सुसत्त्वा विख्याता शीलवतितमा जगति ।
सीताद्यैं कथ तास्तपसि विसत्त्वा विशीलाश्च ॥ ३१ ॥
सत्यज्य राज्यलक्ष्मी पति पुत्र भ्रातृ बन्धुसम्बन्धम ।
पारिव्राज्यवहाया क्रिमसत्त्व सत्यभामादे ? ॥ ३२॥
महता पापेन स्त्री मिथ्यावसहायेन न सुदृष्टिम् ।
स्त्रीत्व चिनाति, तद् न, तदङ्ग क्षपणेऽपि निर्मानम् ॥ ३३ ॥
अन्त कोटिकोटीस्थितिकानि भवन्ति सर्वकर्माणि ।
सम्यक्त्वलाभ एवाऽर्द्धोऽप्यपथयन्त्रा मार्ग ॥३४ ॥

---

१ सिध्यते । २ सन्त्यूना । ३ ज्ञा । ४ मुमग । ५ वेला । ६ रत्न हिता । ७ शीता । ८ शेषा

अष्टशतमेकसमये पुरुषाणामादिरागमः (माहुरागमे) सिद्धिः (सिद्धम्) ।
स्त्रीणां न मनुष्ययोगे गौणार्थो मुख्यहानिर्वा ॥३५ ॥
शब्दनिवेशनमर्थः प्रत्यासत्त्या क्वचित् कयाचिद्तः ।
तदयोगे योगे साति शब्दस्याऽन्यः कथं कल्प्यः ॥ ३६ ॥
स्तन-जघनादिव्यङ्ग्ये 'स्त्री'शब्दोऽर्थे. न तं विहायैषः ।
दृष्टः क्वचिदन्यत्र त्वग्निर्माणवकवेद गौणः ॥ ३७ ॥
'आ षष्ठ्या स्त्री' त्यादौ स्तनादिभिस्त्री स्त्रिया इति च वेदः ।
स्त्रीवेद स्त्र्यनुबन्धास्तुल्यानां (बन्धः पल्यानां) शतपृथक्त्वोक्तिः ॥ ३८ ॥
न च पुंदेहे स्त्रीवेदोदयभावे प्रमाणमङ्गं च ।
भावः सिद्धौ पुंवत् पुंसां अपि (पुंसोऽपि) न सिध्यतो वेदः ॥ ३९ ॥
क्षपकश्रेण्यारोहे वेदेनोच्येत भूतपूर्वेण ।
'स्त्री'ति नितरामसुख्ये मुख्येऽर्थे युज्यते नेतराम् ॥४० ॥
मनुषीषु मनुष्येषु च चतुर्दशगुणोक्तिराजि (र्यि)कासिद्धौ ।
भावस्तवोपरिक्षप्य नवस्थो नियत उपचारः ॥ ४१ ॥
पुंसि स्त्रियां, स्त्रियां पुंसि--अर्तश्च तथा भवेद् विवाहादिः ।
यतिषु न संवासादिः स्यादगतौ निष्प्रमाणेष्टिः ॥ ४२ ॥
अनडुह्याऽनड्वाही दृष्टाऽनड्वाहमनडुहाऽऽरूढम् ।
स्त्रीपुंसेतरवेदो वेद्यो नाऽनियमतो वृत्तेः ॥ ४३ ॥
नाम-तदिन्द्रियलब्धेरिन्द्रियनिवृत्तिमिव प्रमाद्यङ्गम् ।
वेदोदयाद् विरचयेद् इत्यतदङ्गेन तद्भेदः ॥ ४४ ॥
या पुंसि च प्रवृत्ति, पुंसि स्त्रीवत्, स्त्रिया स्त्रियां च स्यात् ।
सा स्वकवेदात् तिर्यग्वदलाभे मत्तकामिन्या ॥ ४५
विगतानुवादनीतौ सुरकोपादिषु चतुर्दश गुणाः स्युः ।
नव मार्गणान्तर इति प्रोक्तं वेदे ऽन्यथा नीतिः ॥ ४५ ॥
न च बाधकं विमुक्तेः स्त्रीणामनुशासकं प्रवचनं च ।
संभवति च मुख्येऽर्थे न गौण इत्यार्यिका सिद्धिः ॥४६ ॥

॥ इति स्त्रीनिर्वाणप्रकरण समाप्तम् ॥

---

१ अमृ- । २ कल्प्या । ३ व्यगे । ४ व्दा । ५ वहौण. । ६ त्तश्च । ७ अनदुगुह्याऽनद्राहीं । ८ नद्राहमनदूगुहा
९ तिर्यक् । १० अनुशोसकम् ।

॥ केवलिभुक्तिप्रकरणम् ॥

अस्ति च केवलिभुक्तिः समग्रहेतुर्यथा पुरा भुक्तेः ।
पर्याप्ति-वेद्य-तैजस-दीर्घायुष्कोदयो हेतुः ॥ १ ॥

नष्टानि न कर्माणि क्षुधो निमित्तं विरोधिनो न गुणाः ।
ज्ञानादयो जिने किं सा संसारस्थितिर्नास्ति ॥ २ ॥

तम इव भासो वृद्धौ ज्ञानादीनां न तारतम्येन ।
क्षुध् हीयतेऽत्र न च तद् ज्ञानादीनां विरोधगतिः ॥ ३ ॥

अविकलकारणभावे तदन्यभावे भवेदभावेन ।
इदमस्य विरोधीति ज्ञाने न तदस्ति केवलिनि ॥ ४ ॥

क्षुद् दुःखमनन्तसुखं विरोधि तस्येति चेत् कुतस्त्यं तत् ।
ज्ञानादिवन्न तज्ज्ञं विरोधि न परं ततो दृष्टम् ॥ ५ ॥

आहारविषयकाङ्क्षारूपा क्षुद् भवति भगवति विमोहे ।
कथमुपकल्पनाऽस्या न लक्ष्यते येन जायेत ॥ ६ ॥

न क्षुद् विमोहपाको यत् प्रतिसंख्यानभावनानिवर्त्या ।
न भवति विमोहपाकः सर्वोऽपि हि तेन विनिवर्त्यः ॥ ७ ॥

शीतोष्णबाधतुल्या क्षुत् तत्र न मतिविधानकाङ्क्षा तु ।
मूढस्य भवति मोहात् तथा भृशं बाध्यमानस्य ॥ ८ ॥

तैजससमुद्धृतस्य द्रव्यस्याऽभ्यवहृतस्य पर्याप्त्या ।
अनुसारपरिणामे क्षुत् श्रमणे भगवति च तत् सर्वम् ॥ ९ ॥

ज्ञानावरणीयादिज्ञानावरणादि कर्मणः कार्यम् ।
क्षुत् तद्विलक्षणाऽस्या न तस्य सहकारिभावोऽपि ॥ १० ॥

पाठान्तराणि — १ विराधना । २ कर्माणि । ३ काम । ४ बाध्यमानस्य । ५ तैजसमुद्ध ।

क्षुद्‌बाधिते 'न जाने, न चेक्ष' इत्यस्ति न तु विपर्यासः ।
तद्‌ वेद्यं सहकारि तु, तस्य न तद्‌ वेद्यसहकारि ॥ ११ ॥

ज्ञानावरणादीनामशेषविगमे¹ क्षुधि प्रज्ञानायाम् ।
अपि तद्‌ ज्ञानादीनां हानिः स्यादितरवत्‌ तत्र ॥ १२ ॥

नष्टविपाका² क्षुदिति प्रतिपत्तौ भवति चागमविरोधः ।
शीतोष्ण-क्षुद्-उदन्याऽऽद्दयो हि ननु वेदनीय इति ॥ १३ ॥

उदये³ फलं न तस्मिन्‌ उदीरणेत्यफलता न वेद्यस्य ।
नोदीरणा फलात्मा तथा भवेदायुरप्यफलम्‌ ॥ १४ ॥

अनुदीर्णवेद्य इति चेद्‌ न क्षुद्‌ वीर्यं किमत्र नहि वीर्यम्‌ ।
क्षुदभावे क्षुदभावेन स्थित्यै क्षुधि तनोर्विलयः ॥ १५ ॥

अपवर्तते कृतार्थं नायुर्ज्ञानादयो न हीयन्ते⁴ ।
जगदुपकृतावनन्तं⁵ वीर्यं किं गततृषो भुक्ति ॥ १६ ॥

ज्ञानाद्यलयेऽपि जिने मोहेऽपि स्याद्‌ क्षुद्‌ उद्भवेद्‌ भुक्तिः ।
वचन-गमनादिवच्च प्रयोजनं स्व-परसिद्धि⁶ स्यात्‌ ॥ १७ ॥

ध्यानस्य समुच्छिन्नक्रियस्य चरमक्षणे गते सिद्धि ।
सा नेदानीमस्ति स्वस्य परेषां च कर्तव्या ॥ १८ ॥

रत्नत्रयेण मुक्तिर्न विना तेनाऽस्ति चरमदेहस्य⁷ ।
भुक्त्या तथा तनो स्थितिरायुषि न त्वनपवर्त्येऽपि ॥ १९ ॥

आयुरिवाऽभ्यवहारो⁸ जीवनहेतुर्विनाऽभ्यवहृतेः ।
चेत्‌ तिष्ठत्वनन्तवीर्ये विनाऽयुषा कालमपि तिष्ठेत्‌ ॥ २० ॥

न ज्ञानवदुपयोगो वीर्ये कर्मक्षयेण लब्धिस्तु ।
तत्राऽऽयुरिवाऽऽहारोऽपेक्ष्येत⁹ न तत्र बाधा¹⁰ऽस्ति ॥ २१ ॥

---

१ विगमा । २ नष्टविपाक । ३ उदय । ४ हीयन्ते । ५ न्त । ६ द्धि । ७ स्या ८ । अत्यभ्यवहारो ।
९ -पेक्षेत्त । १० बाधा ।

मास वर्ष वाऽपि च तानि शरीराणि तेन भुक्तेन ।
तिष्ठति न चाऽऽकाल नान्यथा पूर्वमपि भुक्ति ॥ २२ ॥
असति क्षुद्बाधेऽङ्गे लये न शक्तिक्षयो न सक्लेश ।
आयुश्चानपवर्त्य नाश-लयो मागृवन्धुनाऽपि ॥ २३ ॥
देशोनपूर्वकोटीविहरणमेव सतीह केवलिन ।
सूत्रोक्तमुपापादि न, मुक्तिश्च न नियतकाला स्यात् ॥ २४ ॥
अपवर्तहेत्वभावेऽनपवर्तनिमित्तसपन्नायुष्क ।
स्याद अनपवर्त इति तत् केवलिभुक्ति समर्थयते ॥ २५ ॥
न्यायस्तथाविधोऽसौ जिनस्य यन्भोजनस्थितिरितीदम् ।
वाङ्मात्रं नाऽत्रार्थे प्रमाणमाप्तागमोऽन्यद् वा ॥ २६ ॥
अस्वेदादि मागपि सर्वाभिमुखादि तीर्थकरपुण्यात् ।
स्थितनखतादि सुरेभ्यो न क्षुद् देहान्यता वाऽस्ति ॥ २७ ॥
भुक्तिदापो यदुपाप्यते, न न्योपन भवति निर्ग्रंथे ।
इति निगन्तो निपन्नाऽर्हति न स्यान योगादि ॥२८ ॥
रोगादिवत् क्षुधो न व्यभिचारो वेन्नीयजन्माया ।
प्राणिनि "एकान्श जिन" इति जिनसामान्यविषय च ॥ २९ ॥
तद्धेतुकर्मभावात् परीपहोक्तिर्न जिन उपस्कार्य ।
नश्चाऽभावासिद्धेरित्यादेर्न क्षुदादिगति ॥ ३० ॥
तैलक्षये न दीपो न जलागममन्तरेण जलधारा ।
तिष्ठति तथा तनो स्थितिरपि न निर्नोऽऽहारयोगेन ॥ ३१॥
परमाणवेर्युक्तैस्य छद्मस्थस्येव नान्तरायोऽपि ।
सर्वार्थदर्शनेऽपि स्याद् न चान्यथा पूर्वमपि भुक्ति ॥ ३२ ॥
इन्द्रियविषयप्राप्तौ यद्भिनिवेशैर्मसन्जन भुक्तौ ।
तन्छब्द-गन्ध रूप-स्पर्शप्राप्त्या मतिप्यूक्तम् ॥ ३३ ॥

---

१ तिष्ठति । २ चान्यथा । ३ क्षुद्बाधेगे । ४ श्चातपवन्य त्नाथ । ५ न्यो । ६ क्पो । ७ माणा । ८ दि सुरेत्यो । १० दोषो । ११ क्षु । १२ मन्तरेण । १३ ष्ठ । १४ नित्ता । १५ यु १६ वो ।

छद्मस्थे तीर्थकरे विप्रवणनानन्तरं च केवलिनि ।
चित्तामलप्रवृत्तौ व्यासैवाऽत्रापि भुक्तवति ॥ ३४ ॥

विग्रहगतिमापन्नाद्यागमवचनं च सर्वमेतास्मिन ।
भुक्तिं ब्रवीति तस्माद् द्रष्टव्या केवलिनि भुक्तिः ॥ ३५ ॥

नाऽनाभोगाहारः सोऽपि[1] विशेषितो नाऽभूत् ।
युक्त्याऽभेदे नाङ्गास्थिति-पुष्टि-क्षुन्छमास्तेन ॥ ३६ ॥

तस्य विशिष्टस्य स्थितिरभविष्यत् तेन सा विशिष्टेन ।
यद्यभविष्यादिहैषां [2]शाली-तरभोजनेनेव ॥ ३७ ॥

॥ इति केवलीभुक्तिप्रकरणं ॥

॥ इति स्त्रीनिर्वाण[3]-केवलीर्य[4]भुक्ति-प्रकरणम् ॥
॥ कृतिरियं भगवदाचार्य-शाकटायनभदन्तै[5]पादानामिति ॥

---

१ सो । २ साली । ३ श्रीनिर्वाण । ४ केवलीर्ये । ५ वृदन्त-

॥ णमो समणस्स भगवओ महावीरस्स ॥

सिरि-जिणभद्द-खमासमण विरइओ

जीयकप्पो

—>> <<—

कयपवयण-प्पणामो वोच्छं पच्छित्तदाण-संखेवं ।
जीयव्ववहारगयं जीवस्स विसोहणं परमं ॥ १ ॥

संवर विणिज्जराओ मोक्खस्स पहो, तवो पहो तासिं ।
तवसो य पहाणंगं पच्छित्तं, जं च नाणस्स ॥ २ ॥

सारो चरणं, तस्स वि निव्वाणं, चरण सोहणत्थं च ।
पच्छित्तं, तेण तयं नेयं मोक्खत्थिणा'वस्सं ॥ ३ ॥

तं दसविहं —आलोयण १ पडिकमणोभय २ ३ विवेग ४ वोस्सग्गे ५ ।
तव ६ छेय ७ मूल ८ अणवट्ठया ९ य पारंचिए १० चेव ॥ ४ ॥

१ करणिज्जा जे जोगा तेसु'वउत्तस्स निरइयारस्स ।
छउमत्थस्स विसोही जइणो आलोयणा भणिया ॥ ५ ॥

आहाराई-गहणे तह बहिया निग्गमेसु'णेगेसु ।
उच्चार विहारावणि-चेइय-जइ वंदणाईसु ॥ ६ ॥

जं च'न्नं करणिज्जं जइणो हत्थ-सय-बाहिरायरियं ।
अवियडियम्मि असुद्धो, आलोएंतो तयं सुद्धो ॥ ७ ॥

कारण विणिग्गयस्स य स-गणाओ पर-गणा गयस्स वि य ।
उवसंपया विहारे आलोयण निरइयारस्स ॥ ८ ॥

२ गुत्ती-समिइ पमाए गुरुणो आसायणा विणय भंगे ।
इच्छाईणमकरणे लहुस मुसा'दिन्न मुच्छासु ॥ ९ ॥

अविहीय कासि जंभिय-छुय-वायासंकिलिट्ठ कम्मेसु ।
कन्दप्प-हास विगहा-कसाय विसयाणुसंगे य ॥ १० ॥

खलियस्स य सव्वत्थ वि हिंसमणावज्जओ जयंतस्स ।
सहसा'णाभोगेण व मिच्छाकारो पडिक्कमणं ॥ ११ ॥

आभोगेण वि तणुएसु नेह भय-सोग-बाउसाईसु ।
कन्दप्प-हास विगहा'इए य नेयं पडिक्कमणं ॥ १२ ॥

३ संभम भया'उरा वइ सहसा अणाभोग णऽप्प-वसओ वा ।
सव्व-व्वयाइयारे तदुभयमासंकिए चेव ॥ १३ ॥

दुच्चिंतिय दुब्भासिय दुच्चेट्ठिय एवमाइयं बहुसो ।

उवउत्तो वि न जाणइ जं देवसियाइ-अइयारं ॥ १४ ॥
सव्वेसु वि बीय-पए दंसण-नाण-चरणावराहेसु ।
आउत्तस्स तदुभयं सहसक्कारा'इणा चेव ॥ १५ ॥
४ पिण्डोवहि-सेज्जाई गहियं कडजोगिणोवउत्तेणं ।
पच्छा नायमसुद्धं, सुद्धो विहिणा विगिञ्चन्तो ॥ १६ ॥
काल'द्धाणाइच्छियं अणुग्गयत्थमिय-गहियमसढो उ ।
कारण-गहि'उव्वरियं भत्ताइ विगिञ्चियं सुद्धो ॥ १७ ॥
५ गमणागमण-विहारे सुयम्मि सावज्ज-सुविणयाईसु य ।
नावा-नइ-सन्तारे पायच्छित्तं विउस्सग्गो ॥ १८ ॥
भत्ते पाणे सयणासणे अरहन्त-समण-सेज्जासु ।
उच्चारे पासवणे पणुवीसं होन्ति ऊसासा ॥ १९ ॥
हत्थ-सय-बाहिराओ गमणा'गमणा'इएसु पणुवीसं ।
पाणवहाई-सुमिणे सय'मट्ठसयं चउत्थम्मि ॥ २० ॥
देसिय राइय पक्खिय चाउम्मास वरिसेसु परिमाणं ।
सयमद्धं तिन्नि सया पंच-सयट्ठुत्तरसहस्सं ॥ २१ ॥
उद्देस-समुद्देसे सत्तावीसं अणुन्नवणियाए ।
अट्ठेव य ऊसासा पट्ठवण-पडिक्कमण-माई ॥ २२ ॥
६ १ उद्देसे'ज्झयण-सुयक्खन्धंगेसु कमसो पमाइस्स ।
काल_क्कमणाइसु नाणायाराइयारेसु ॥ २३ ॥
निव्विगइय पुरिमड्ढ'गभत्तमायंबिलं चणागाढे ।
पुरिमाई खमणन्तं आगाढे, एवमत्थे वि ॥ २४ ॥
सामन्नं पुण सुत्ते मय'मायामं चउत्थम'त्थम्मि ।
अप्पत्तापत्तावत्त वायणुद्दे'सणा'इसु य ॥ २५ ॥
कालाविसज्जणा'इसु मण्डलि-वसुहा-'पमज्जणा'इसु य ।
निव्विइयं अ-करणे, अक्ख-निसेज्जा य'भत्तट्ठो ॥ २६ ॥
आगाढ-मणागाढे सव्व-भंगे य देस-भंगे य ।
जोगे छट्ठ-चउत्थं चउत्थ'मायम्बिलं कमसो ॥ २७ ॥
२ संका'इएसु देसे समणं मिच्छोववूहणाए य ।
पुरिमाई खमणन्तं भिक्खु-प्पभिईण व चउण्हं ॥ २८ ॥
एवं चिय पत्तेयं उववूहाईणमकरण जईण ।
आयामन्तं निव्वीयगाइ पासत्थ-सड्ढेसु ॥ २९ ॥
परिवाराइ-निमित्तं ममत्त-परिपालणाएँ वच्छल्ले ।
साहम्मिओ त्ति संजम-हेउं वा सव्वहिं सुद्धो ॥ ३० ॥
३ एगिन्दियाण घट्टण'मगाढ-गाढ-परियावणुद्दवणे ।
निव्वीयं पुरिमड्ढं आसण'मायामगं कमसो ॥ ३१ ॥
पुरिमाई खमणन्तं अणन्त विगलिन्दियाण पत्तेयं ।
पञ्चिन्दियम्मि एगासणाइ कल्लाणग'महे'गं ॥ ३२ ॥
मोसाइसु मेहुण-वज्जिएसु दव्वाइ-वत्थु-भिन्नेसु ।

निव्वीइय-पुरिमे'गासणाइ, सव्वेसु चायामं ॥ ५२ ॥
अकप्पसुं पुरिमा'सणमायामं, सव्वसो चउत्थं च ।
पुव्वमपेहिय थण्डिल निसि वोसिरणे दिवा सुवणे ॥ ५३ ॥
कोहे बहुदेवसिए आसव-कक्कोलगाइएसुं च ।
ल्हसुणाइसु पुरिमड्ढं, तन्नाई-पंच-मुयणे य ॥ ५४ ॥
अज्झुसिर-तणेसु निव्वीइयं तु, सेस-पणएसु पुरिमड्ढं ।
अप्पडिलेहिय-पणए आसणयं तस-वहे जं च ॥ ५५ ॥
ठवणमणापुच्छाए निव्विसणे विरिय-गूहणाए य ।
जीएणे'क्कासणयं, सेसिय-मायासु खमणं तु ॥ ५६ ॥
दप्पेणं पञ्चिन्दिय-वोरमणे संकिलिट्ठ-कम्मे य ।
दीह'द्धा'णासेविय गिलाण-कप्पावसाणे य ॥ ५७ ॥
सव्वोवहि-कप्पम्मि य पुरिमत्ता'पेहणे य चरमाए ।
चाउम्मासे वरिसे य सोहणं पञ्च-कल्लाणं ॥ ५८ ॥
छेयाइमसद्दहओ मिउणो परियाय-गव्वियस्स वि य ।
छेयाईए वि तवो जीएण गणाहिवइणो य ॥ ५९ ॥
जं जं न भणियमिहइं तस्सावत्तीय दाण-संखेवं ।
भिन्नाइयाय वोच्छं छम्मासन्ताण जीएणं ॥ ६० ॥
भिन्नो अविसिट्ठो च्चिय मासो चउरो य छच्च लहु-गुरुया ।
निव्वीइगाइ अट्ठमभत्तन्तं दाणमेएसिं ॥ ६१ ॥
इय सव्वावत्तीओ तवसो नाउं जह-कमं समए ।
जीएण देज्ज निव्वीइगाइ-दाणं जहाभिहियं ॥ ६२ ॥
एयं पुण सव्वं चिय पायं सामन्नओ विणिद्दिट्ठं ।
दाणं विभागओ पुण दव्वाइ-विसेसियं जाण ॥ ६३ ॥
दव्वं १ खेत्तं २ कालं ३ भाव ४ पुरिस ५ पडिसेवणाओ ६ य ।
नाउमियं चिय देज्जा तम्मत्तं हीणमहियं वा ॥ ६४ ॥
१ आहाराई-दव्वं बलियं सुलभं च नाउमहियं पि ।
देज्जा हि, दुब्बलं दुलभं च नाऊण हीणं पि ॥ ६५ ॥
२ लुक्खं सीयल साहारणं च खेत्त'महियं पि सीयम्मि ।
लुक्खम्मि हीणतरयं; ३ एवं काले वि तिविहम्मि ॥ ६६ ॥
गिम्ह-सिसिर-वासासुं देज्ज'ट्ठम-दसम-बारसन्ताइं ।
नाउं विहिणा नवविह-सुयववहारोवएसेणं ॥ ६७ ॥
४ हट्ठ-गिलाणा भावम्मि, देज्ज हट्ठस्स, न उ गिलाणस्स ।
जावइयं वा विसहइ तं देज्ज, सहेज्ज वा कालं ॥ ६८ ॥
५ पुरिसा गीया'गीया सहा'सहा तह सढा'सढा केइ ।
परिणामा'परिणामा अइपरिणामा य वत्थूणं ॥ ६९ ॥
तह धिइ-संघयणोभय-संपन्ना तदुभएण हीणा य ।
आय-परोभय-नोभयतरगा तह अन्नतरगा य ॥ ७० ॥
कप्पट्ठियादओ वि य चउरो जे सेयरा समक्खाया ।

सावेक्खेयर भेयाद्ओ वि जे ताण पुरिसाणं ॥ ७१ ॥
जो जह-सत्तो बहुतर-गुणो व्व तस्साहिय पि दज्जा हि ।
हीणस्स हीणतरगं, झासेज्ज व स व-हीणस्स ॥ ७२ ॥
एत्थ पुण बहुतरा भिक्खुणो त्ति अकयकरणा'णभिगया य ।
ज तेण जीय अहममत्त ते निव्वियाइय ॥ ७३ ॥

६ आउट्टियाय दप्प-प्पमाय-कप्पेहि वा निसेवेज्जा ।
दव्व खेत्तं कालं भावं वा सेवओ पुरिसो ॥ ७४ ॥
जं जीय-दाणमुत्त एय पाय पमायसहियस्स ।
एत्तो च्चिय ठाण तरमेगं वड्ढेज्ज दप्पवओ ॥ ७५ ॥
आउट्टियाएँ ठाण तर च सट्ठाणमेव वा देज्जा ।
कप्पेण पडिक्कमण तदुभयमहवा विणिद्दिट्ठं ॥ ७६ ॥
आलोयण-कालम्मि वि सकेस विसोहि भावओ नाउं ।
हीणं वा अहिय वा तम्मत्त वा वि देज्जा हि ॥ ७७ ॥
इति दव्वाइ-बहु-गुणे गुरु-सेवाए य बहुत्तर देज्जा ।
हीणतरे हीणतरं हीणतरे जाव झास त्ति ॥ ७८ ॥
झोसिज्जइ सुबहु पि हु जीएण'न्नं तवारिह वहओ ।
वेयावच्चकरस्स य दिज्जइ साणुग्गहतरं वा ॥ ७९ ॥

७ तव-गव्विओ तवस्स य असमत्थो तवमसद्दहन्तो य ।
तवसा य जो न दम्मइ अइपरिणामप्पसगी य ॥ ८० ॥
सुबहु'त्तर-गुण भंसी छेयावत्तिसु पसज्जमाणो य ।
पासत्थाइ जो वि य जइण पडितप्पिओ बहुसो ॥ ८१ ॥
उक्कोस तव-भूमि समइओ सावसेस चरणो य ।
छय पणगाइयं पावइ जा धरइ परियाओ ॥ ८२ ॥

८ आउट्टियाएँ पञ्चिन्दिय घाए, मेहुणे य दप्पेण ।
सेसेसु'क्कोसाभिक्ख-सेवणाइसु तीसु पि ॥ ८३ ॥
तवगव्वियाइएसु य मूलुत्तर-दोस-वइयर-गएसु ।
दंसण-चरित्तव त चियत्त किच्चे य सेहे य॥ ८४ ॥
अच्च तोसन्नेसु य परलिंग दुवे य मूलकम्मे य ।
भिक्खुम्मि य विहिय-तवे'णवठ पारञ्चियं पत्ते ॥ ८५ ॥
छेएण परियाए'णवट्ठ-पारञ्चियावसाणेसु ।
मूलं मूलावत्तिसु बहुसो य पसज्जणे भणिय ॥ ८६ ॥

९ उक्कोस बहुसो वा पउट्ठ-चित्तो व्व तेणिय कुणइ ।
पहरइ य जो स पक्खे निरवेक्खो घोर परिणामो ॥ ८७ ॥
अभिसेओ स नेसु वि बहुसो पारञ्चियावराहेसु ।
अणवट्ठप्पावत्तिसु पसज्जमाणो य'णेगासु ॥ ८८ ॥
कीरइ अणवट्ठप्पो सो लिंग १ क्खेत्त २ कालओ ३ तवओ ४ ।
१ लिंगेण दव्व भावे भणिओ प व्वावणाणरिहो ॥ ८९ ॥
अप्पडिविरओ'सन्नो न भावलिंगारिहो'णवट्ठप्पो ।
२ जो जेण जत्थ दूसइ पडिसिद्धो तत्थ सो खेत्ते ॥ ९० ॥

३. जत्तिय-मेत्तं कालं: ४. तवसा उ जहन्नएण छम्मासा ।
संवच्छरमुक्कोसं आसाई जो जिणाईणं ॥ ९१ ॥
वासं बारस वासा पडिसेवी, कारणे य सव्वो वि ।
थोवं थोवतरं वा वहेज्ज, मुच्चेज्ज वा सव्वं ॥ ९२ ॥
वन्दइ न य वन्दिज्जइ, परिहार-तवं सुदुचरं चरइ ।
संवासो से कप्पइ, नालवणाईणि सेसाण ॥ ९३ ॥
१० तित्थगर पवयण सुयं आयरियं गणहरं महिड्ढियं ।
आसायन्तो बहुसो आभिणिवेसेण पारंची ॥ ९४ ॥
जो य स-लिंगे दुट्ठो कसाय-लिंगेहि राय वहओ य ।
राय'ग्गमहिसि-पडिसेवओ य बहुसो पगासो य ॥ ९५ ॥
थीणद्धि-महादोसो अन्नो'न्नासेवणापसत्तो य ।
चरिमट्ठाणावत्तिसु बहुसो य पसज्जए जो उ ॥ ९६ ॥
सो कीरइ पारञ्ची लिंगओ १. खेत्त २ कालओ ३. तवओ ४. ।
१. संपागड-पडिसेवी लिंगाओ थीणगिद्धी य ॥ ९७ ॥
२. वसहि-निवेसण वाडग साहि नियोय पुर देस रज्जाओ ।
खेत्ताओ पारञ्ची कुल-गण-संघा'लयाओ वा ॥ ९८ ॥
जत्थु'प्पन्नो दोसो उप्पज्जिस्सइ य जत्थ नाऊणं ।
तत्तो तत्तो कीरइ खेत्ताओ खेत्त-पारञ्ची ॥ ९९ ॥
३. जत्तिय मेत्तं कालं; ४. तवसा पारञ्चियस्स उ स एव ।
कालो दु-विकप्पस्स वि अणवट्ठप्पस्स जो'भिहिओ ॥ १०० ॥
एगागी खेत्त-बहिं कुणइ तवं सु-विउलं महासत्तो ।
अवलोयणमायरिओ पइ-दिणमेगो कुणइ तस्स ॥ १०१ ॥
अणवट्ठप्पो तवसा तव-पारञ्ची य दो वि विच्छिन्ना ।
चोद्दस पुव्वधरम्मी, धरन्ति सेसा सया कालं ॥ १०२ ॥
इय एस जीयकप्पो समासओ सुविहियाणुकम्पाए ।
कहिओ, देओ सो पुण पत्तेसु परिच्छिय-गुणेसु ॥ १०३ ॥

॥ इय सिरि-जिणभद्द-खमासमण-विरइओ जीय-ववहार-कप्पो समत्तो ॥

पाली, प्राकृत, संस्कृत, गुजराती, हिन्दी भाषाना

केटलांक उत्तम पुस्तको

जैन साहित्य संशोधक कार्यालय

[सहायक-सज्जन]

संरक्षक.

श्रीयुत सेठ नरोत्तमदास रामजी, मलुंड (मुंबई)

पेट्रन

श्रीयुत हीरालाल अमृतलाल शाह. बी. ए. मुंबई.

वार्षिक-पेट्रन.

श्रीयुत केशवलाल प्रेमचंद मोदी बी ए एल्एल् बी वकील अमदावाद.
श्रीयुत अमरचंद घेलाभाई गांधी, मुंबई
श्रीयुत सेठ चिरंजीलालजी बडजात्या वर्धा (सी पी.)

सहायक कर्ता.

शेठ परमानंददास रतनजी, मुंबई.
सद्गत श्रीयुत मनसुखलाल रवजीभाई महेता. मुंबई
शेठ कान्तिलाल गगलभाई हाथीभाई, पूना
शेठ केशवलाल मणीलाल शाह, पूना
शेठ बाबूलाल नानचंद भगवानदास झवेरी, पूना

आजीवन-सभासद.

श्रीयुत बाबू राजकुमार सिंहजी बद्रीदासजी. कलकत्ता.
श्रीयुत बाबू पूरणचंदजी नाहार एम् ए एल्एल् बी कलकत्ता.
शेठ लालभाई कल्याणभाई झवेरी, वडोदरा. मुंबई.
शेठ नरोत्तमदास भाणजी, मुंबई
शेठ दामोदरदास त्रिभुवनदास भाणजी, मुंबई.
श्री त्रिभुवनदास-भाणजी जैन कन्याशाला, भावनगर.
शेठ केशवजीभाई माणेकचंद, मुंबई
शेठ देवकरणभाई मूळजीभाई, मुंबई.
शेठ गुलाबचंद देवचंद झवेरी, मुंबई.
श्रीयुत मोतीचंद गिरधरलाल कापडिया, बी ए एल्एल् बी. सोलीसीटर, मुंबई.
श्रीयुत केसरीचंदजी भंडारी. इंदोर.
शाह अमृतलाल एण्ड भगवानदास कुं० मुंबई
शाह चंदुलाल वीरचंद कृष्णाजी, पूना
शेठ लाधाजी मोतीलाल, पूना
शाह धनजीभाई वखतचंद, साणंदवाळा, (अमदावाद)
शाह वालुभाई शामचंद, तळेगांव (ढमढेरे).
शाह चुनीलाल झवेरचंद, मुंबई.
श्रीयुत जीवराज नरसी मैसरी, मुंबई.
श्रीयुत मोहनलाल दलीचंद देशाई, बी. ए. एल्एल्. बी. मुंबई